# भूमिका

इसमे कोई सन्देह नही है कि यह आपके करकमलोमे विराजमान ग्रन्थराज अपूर्व गुणोंसे विभूषित है। श्रीआचार्यवर्यने इसका नाम भी "यथा नामा तथा गुण." वाली किम्वदन्तीको यथार्थमे चरितार्थ करते हुए रखा है; अर्थात् इस ग्रन्थराजका नाम "रत्नकरण्ड श्रावकाचार" है, और इसका अर्थ यह है कि श्रावकोंके आचाररूपी रत्नोका पिटारा जिसमे श्रावकोकी चरित्र सम्बन्धी क्रियाओका भण्डार भरा हो! वात भी ठीक है क्योकि इसमे आदिसे लेकर अन्ततक श्रावकाके आचारोका विशद रीतिसे वर्णन किया गया है। सबसे प्रथम श्री १००८ श्री महावीर स्वामीको नमस्कार करते हुए प्रतिज्ञारूपमे कहा कि मैं उस धर्मका वर्णन करूंगा जो कर्मोंका नाश करनेवाला है और—

"संसारदुःखतः सत्वान् यो धरत्युत्तमे सुखं"

अर्थात् जो संसारके दुःखोंसे छुटाकर श्रेष्ठसुखमे स्थापन करता है, वह धर्म आपने सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र ही बताया है और यही मोक्षमार्ग है क्योंकि मोक्षशास्त्रके प्रणेता श्री उमास्वामी महाराजने भी 'सम्यग्दर्शनज्ञान चारित्राणिमोक्षमार्ग" इसे सर्व प्रथम सूत्रमे सम्यग्दर्शन] सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्रको मोक्षका मार्ग प्रतिपादन किया है। इससे यह निर्विवाद सिद्ध होता है कि, सुख आत्माका धर्म है और कहीं न कहीं वह प्राप्त अवश्य होता है, और उस सुखकी खोजमे संसारके भोले प्राणी कपोल कल्पितमार्ग एवं धर्माचरणोमे पड़कर चतुर्गतियोमे परिभ्रमण किया करते है, दुःख सहते हैं, जन्म लेते हैं, मरते हैं सांसारिक यातनाओको सहते हैं, पर सुखकी प्राप्ति नही होती, और हो भी कहासे? जब उन्हें श्रेष्ठ सर्वोच्चतम आचार रत्नोका भण्डार प्राप्त हो तब वे उन रत्नोको प्राप्त कर चिर सुखी हो सकते हैं। फिर उनके सुखमे कोई बाधा डालनेवाला नही। किन्तु ऐसा नहीं होता, वे सुखाभासको सुख समझे हुए हैं, असद्धर्माचरणरूप घोंघोंको रत्न समझे वैठे हुए हैं, उनको अज्ञान तिमिरको नाश करनेवाला ज्योतिर्मय यह श्रावकाचार रत्न प्रगट होता है, और इसलिये श्रीसमंतभद्राचार्यने इस ग्रन्थराजका प्रणयन किया है। आपके ग्रन्थोंका उद्देश्य जीवोंपर अनुकम्पा, सुखप्राप्ति, अज्ञाननाश, सत्पक्षता, न्यायमार्गानुसरणता, सच्चारिता और अन्तमे मोक्षलक्ष्मीसे पाणिग्रहण, इत्यादि इत्यादि है।

## इस ग्रन्थराजमें क्या है?

— :o:—

इस बातकी शङ्का हमारे पाठकोंको नही होगी, क्योकि इसके नामसे ही उक्त प्रश्नका समाधान हो जाता है। तथापि संक्षेपमे लिखते हैं। यह ग्रंथ उपासकाध्ययनाङ्गका है अथवा अनुयोगोमे चरणानुयोगका कहलाता है। इसका नाम "रत्नकरण्डक" है जिसे अब "रत्नकरण्डश्रावकाचार" विषयिक समुपलब्ध ग्रंथोमें यह सर्वप्राचीन, सर्वोत्तम और सुप्रसिद्ध ग्रथ है। श्रीवादिराजसूरने इसे "अक्षय्य सुखावह" और प्रभाचन्द्राचार्यने सागारमार्गका सूर्य वतलाया है। जो कि इस पदसे मालूम होता है "सम्यग्ज्ञानमहाशुत्रि प्रकटित सागारमार्गोखिलः

अर्थात् सागारमार्गको प्रकाशित करनेवाला निर्मल सूर्य" है। इस ग्रंथकी एक संस्कृत टीका है जो प्रभाचन्द्राचार्यद्वारा प्रणीत है। तथा इस ग्रंथपर 'रत्नकरण्डक विषमपद व्याख्यान' नामक संस्कृत टिप्पण भी मिलता है।

इस ग्रंथमे सात परिच्छेद हैं, जिसमे प्रथम परिच्छेद्मे सम्यग्दर्शनका वर्णन है। सम्यग्दृष्टीजीविका क्या कर्त्तव्य है इसपर गवेषणा-पूर्वक प्रकाश डाला गया है। सम्यग्दर्शनका लक्षण कहते हुए सच्चे देव, गुरु, शास्त्र तथा सम्यग्दर्शनके अष्ट अङ्गोका सविस्तार वर्णन है।

गृहस्थो मोक्षमार्गस्थो निर्मोहो नैव मोहवान् अनगारो गृहीश्रेयान् निर्मोहो मोहिनो मुनेः ॥ ३ ॥

सम्यग्दृष्टी गृहस्थ अर्थात् दर्शनमोह रहित गृहस्थो मोही मुनिसे अच्छा है। यर्थार्थमे यह बात सबके समझमे आ गयी होगी कि मुनिका वेश धारण करनेपर भी यदि उस मुनिके भाव मोह सहित है तो वह मुनि मुनि नहीं हैं, परन्तु उस मुनिसे सम्यग्दृष्टी गृहस्थ अच्छा है। द्वितीय परिच्छेदमे सम्यग्ज्ञान और तृतीय परिच्छेदमे चारित्रका वर्णन किया है जिसमे श्रावकोका पंचाणुव्रत व उनके अतीचारोका वर्णन है, चतुर्थमें तीन गुणव्रत और उनके भेद प्रभेद, चार शिक्षाव्रत सामायिक दान तथा भिन्न २ क्रियाओका फल बताया है। जैसे—

उच्चैर्गोत्र प्रणतेर्भोगो दानादुपासनात्पूजा। भक्तेः सुन्दररूप स्तवनात्कीर्त्तिस्तपोनिधिषु ॥

अर्थात् मुनियोको नमस्कार करनेसे उच्च गोत्र, दानसे भोग, उपासनासे प्रतिष्ठा, भक्तिसे सुन्दर रूप, स्तुतिसे कीर्त्ति प्राप्त होती है। ठीक ही है भगवान्की भक्तिसे क्या २ नहीं मिलता है। और ६ ठे परिच्छेदमें संल्लेखना—समाधिमरण धारण करनेकी आवश्यकता बतलाई है। तथा मोक्षका स्वरूप भी बताया है ७ वे परिच्छेदमें प्रतिमाये हैं जिन्हें श्रावकोंको अवश्य धारण करना चाहिये, यह जीव इन्हीं प्रतिमाओंको धारणकर उत्कृष्ट श्रावक होता हुआ मोक्ष सुखको प्राप्त करता है। यहा हमने संक्षेप रीतिसे इस ग्रन्थका परिचय दिया है।

**समाज सेवक—**

*सतीशचन्द्र जैन न्यायतीर्थ,*

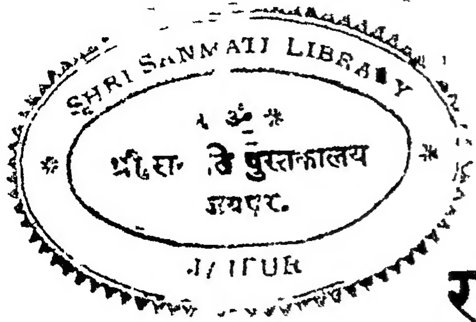
## प्रकाशकीय निवेदन।

पाठको !

मेरा यह प्रथम प्रयास है जो में इतने बडे ग्रंथको समाजके सामने रखनेके लिये तैयार हुआ हू मुझे स्वप्नमे भी ऐसी आशा नही थी कि इतना बड़ा ग्रंथ इतने अल्प कालमें प्रकाशित हो जायगा इस शीघ्रताके लिये हमारे परम मित्र प० जगदीशनारायण जीने प्रूफादि देखनेमे तथा बा० रामकुमार जीने छापनेमें सारी शक्ति लगा दी थी इसी लिये हम सफलीभूत हो सके हैं इसके लिये मैं अनेक धन्यवाद देता हूं। शीघ्रताके कारण दृष्टिदोषसे अशुद्धिया रही ही होंगी, इसके लिये विज्ञ पाठक क्षमा ही करेंगे।

फाल्गुण शुक्ल ५ सं० १९८२
कलकत्ता

**निवेदक—**
दयाचन्द परवार।






॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

# रत्नकरण्ड श्रावकाचार ।

इहां इस ग्रन्थकी आदि में स्याद्वादविद्याके परमेश्वर परमनिर्ग्रन्थ वीतरागी श्रीसमंतभद्रस्वामी जगतके भव्यनिके परमोपकारके अर्थि रत्नत्रयकी रचणाको उपायरूप श्रीरत्नकरंड नाम श्रावकाचारकूं प्रगट करनेके इच्छुक विघ्नरहित शास्त्रकी समाप्तिरूप फलकूं इच्छाकरता इष्ट विशिष्ट देवताकूं नमस्कार करता सूत्र कहे हैं :—

नमः श्रीवर्धमानाय निर्द्धूतकलिलात्मने । सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्या दर्पणायते ॥ १ ॥

अर्थ—श्रीवर्धमान तीर्थंकरके अर्थि हमारा नमस्कार होहू । श्री कहिये अंतरंग स्वाधीन जो अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतवीर्य अनंतसुखरूप अविनाशीक लक्ष्मी अर बहिरङ्ग इन्द्रादिक देवनिकरि वंदनीक जो समवसरणादि लक्ष्मी तिसकर वृद्धिकूं प्राप्त होय सो श्रीवर्द्धमान कहिए है । अथवा सव समंतात् कहिये समस्त प्रकार करि ऋद्ध कहिये परम अतिशयकूं प्राप्त भया है केवलज्ञानादिक मान कहिये प्रमाण जाका सो श्रीवर्द्धमान कहिये ॥ इहां "अवाप्योरल्लोपः" इस सूत्रकरि अकारका लोप भया है । कैसाक है श्रीवर्द्धमान निर्द्धूतकलिल है आत्मा जाका, निर्द्धूत कहिये नष्ट किया है आत्मातैं कलिल कहिये ज्ञानावरणादि पापमल जानै, ऐसा है । बहुरि जाकी केवल ज्ञानलक्षण विद्या अलोक सहित समस्त तीन लोकनकूं दर्पणवत् आचरण करे है । भावार्थ-जाकी केवल ज्ञानविद्यारूपदर्पणविषै अलोकाकाश सहित षट्द्रव्यनका समुदाय रूप समस्तलोक अपनी भूतभविष्यत वर्तमान समस्त अनंतानंत पर्यायनिकरि सहित प्रतिबिंबित होय रहे हैं ऐसा अर जाका आतमा समस्त कर्ममलरहित भया ऐसा श्रीवर्द्धमानदेवाधिदेव अंतिम तीर्थंकर ताकूं अपने आव-

र्णकषायादि मलरहित सम्यकज्ञानप्रकाशके अर्थि नमस्कार किया ॥ अब आगे धर्मके स्वरूपकूं कहनेकी प्रतिज्ञारूप सूत्र कहैं हैं ॥

देशयामि समीचीनं धर्मं कर्मनिवर्हणं । संसारदुःखतःसत्वात् यो धरत्युत्तमे सुखे ॥ २ ॥

अर्थ—मैं जो ग्रन्थकर्ता हूं सो इस ग्रंथविषै तिस धर्म्मकूं उपदेश करूं हूं जो प्राणीननै पंच परिवर्तनरूप संसारके दुःखतै निकाल स्वर्ग मुक्तके बाधारहित उत्तम सुखनिमें धारण करै सो धर्म है । बहुरि कैसेक धर्मकूं कहूं हूं जो समीचीन कहिये । जामें बादी प्रतिवादी करि तथा प्रत्यक्ष अनुमानादिककरि बाधा नहीं आवै, अर जो कर्म बंधनकूं नष्ट करनेवाला है तिसधर्मकूं कहू हूं । भावार्थ—संसारमें धर्म ऐसा नाम तो समस्त लोक कहैं हैं परन्तु धर्म शब्दका अर्थ तो ऐसा है जो नरक तिर्यंचादिक गतिनमें परिभ्रमणरूप दुःखनतैं आत्माकूं छुड़ाय उत्तम आत्मीक अविनाशी अतिंद्रिय मोक्ष सुखमें धारण करै सो धर्म है । सो ऐसा धर्म मोल नही आवै जो धन खरच दान सन्मानादिकतैं ग्रहण करिये तथा किसीका दिया नही आवै, जो सेवा उपासनातैं राजी कर लिया जाय तथा मंदिर पर्वत जल अग्नि देवमूर्ति तीर्थादिकनमैं नहीं धरा है जो वहां जाय ल्याइये । तथा उपवास व्रत कायक्लेशादि तपमें हू शरीरादि कृश करनेतैं हू नहीं मिलै । तथा देवाधिदेवके मंदिरनिमें उपकरणदान मंडल पूजनादिककरि तथा ग्रह छोड़ वन श्मसानमें वसनेकरि तथा परमेश्वरके नाम जाप्यादिककरि नहीं पाइये है। धर्म तो आत्माका स्वभाव है । जो परमें आत्मबुद्धि छोड़ अपना ज्ञाता दृष्टारूपस्वभावका श्रद्धान अनुभवन तथा ज्ञायक स्वभावमें ही प्रवर्तनरूप जो आचरण सो धर्म है तथा उत्तम क्षमादि दशलाक्षणरूप अपना आत्माका परिणमन तथा रत्नत्रयरूप तथा जीवनकी दया रूप आत्माकी परिणति होय तदि आत्मा आप ही धर्मरूप होयगा । परद्रव्य क्षेत्र कालादिक तौ निमित्तमात्र हैं । जिस काल यह आत्मा रागादिरूप परणति छाड़ वीतरागरूप हुवा देखै है तदि मंदिर, प्रतिमा,तीर्थ,दान,तप,जप, समस्त ही धर्मरूप है । अर अपना आत्मा उत्तम क्षमादि वीतरागरूप सम्यकज्ञानरूप नहीं होय तो वहां कहीं हू धर्म नहीं होय । शुभराग होय जनि पुण्यबंध होय है अशुभराग द्वेष मोह होय तहां पापबंध होय

है। जहां शुभश्रद्धान ज्ञान स्वरूपाचरण धर्म है तहां वंधका अभाव है। वंधका अभाव भये ही उत्तम सुख होय है, अब ऐसा उत्तम सुखका कारण जो आत्माका स्वभावरूप धर्म ताकूं प्रकट करनेको सूत्र कहैं हैं ॥

सद्दृष्टिज्ञानवृत्तानि धर्मं धर्मेश्वरा विदुः। यदीयप्रत्यनीकानि भवन्ति भवपद्धतिः ॥ ३ ॥

अर्थ—सम्यग्दशन,सम्यग्यान सम्यक्चारित्र इन तीनोंको धर्मके ईश्वर भगवान तीर्थंकर परमदेव धर्म कहैं है॥ अर इनतें प्रतिकूल जे मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान, मिथ्याचारित्र हैं ते संसार प्ररिभ्रमणकी परिपाटी होय है॥ भावार्थ॥ जो आपका अर अन्य द्रव्यनका सत्यार्थ श्रद्धान ज्ञान आचरण सो संसार परिभ्रमणतैं छ-ड़ाय उत्तम सुखमें धारण करनेवाला धर्म है। अर आपका अर अन्य द्रव्यनिका असत्यार्थ श्रद्धान ज्ञान आ-चरण संसारके घोर अनंतदुखनमें डवोवने वाले हैं। ऐसें भगवान वीतराग कहैं हैं ( हम हमारी रुचि विर-चित नहीं कहैं हैं ) अब प्रथम ही सम्यकदर्शनका लक्षण कहनेको सूत्र कहैं हैं।

श्राद्धानं पर्मार्थानामाप्तागमतपोभृतां। त्रिमूढापोढमष्टाङ्गं सम्यग्दर्शनमस्मयम् ॥ ४ ॥

अर्थ—सत्यार्थ जे आप्त आगम तपोभृत तिनका जो श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन होय है। आप्त तो समस्त पदार्थनको जान तिनका स्वरूपकूं सत्यार्थ प्रकट करनेहारा है। अर आगम आप्त का कहा पदार्थनिकी शब्दद्वारकरि रचनारूप शास्त्र है। अर आप्तका प्ररूप्या शास्त्रके अनुस्वार आचरणकूं आचरनेवाला तपो भृत कहिये गुरू है। इहां जो सांचा आप्त सांचा शास्त्र सांचा गुरूका श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन है। अर असत्य आप्त आगमगुरूका श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन नहीं है। सो सम्यग्दर्शन तीन मूढ़ताकरि रहित है। अर अपने अष्टअंगनिकरि सहित है। अर अष्टमद जामें नहीं है॥ भावार्थ—सत्यार्थ आप्त आगम गुरू का तीन मूढ़तारहित निशांकितादि अष्टअंगसहित अष्टमदरहित श्रद्धान होय सो सम्यग्दर्शन है॥ इहां कोऊ कहै जो सप्ततत्व नवपदार्थनिका श्रद्धानकूं आगममें सम्यग्दर्शन कहा है सो इहां कैसें नहीं कहा॥ ताका समाधान॥ जातें निर्दोष बाधारहित आगमका उपदेश विना सप्ततत्वनका श्रद्धान कैसें होय। अर निर्दोष आप्त बिना सत्यार्थ आगम कैसें प्रगट होय तातें तत्वनका श्रद्धान काहू मूल कारण सत्यार्थ आप्त ही है। अब सत्यार्थ आप्त हीका लक्षनकूं प्रगट करै हैं।

आप्तेनोच्छिन्नदोषेण सर्वज्ञेनागमेशिना। भवितव्यंनियोगेननान्यथा ह्याप्तता भवेत ॥ ५ ॥

अर्थ—धर्मका मूल भगवान् आप्त है ताके तीनगुण हैं। निर्दोषपणां, सर्वज्ञपणां, परमहितोपदेशकपणां, तिनमें जाके क्षुधा, तृषादिक अष्टादश दोष नष्टहोय गये, तातें निर्दोष, अर त्रिकालवर्ती समस्त गुण पर्यायनिकरि सहित समस्त जीव पुद्गल धर्म अधर्म काल आकाशनिकी अनंत परणति तिनकूं युगपत प्रत्यक्ष जाणै तातैं सर्वज्ञ अर परमहितोपदेशकपणांकरि आगन जो द्वादशांग ताका मूल कर्ता तातें आगम का स्वामी असें यह कहै जे तीन गुण तिनकरि संयुक्त होय सो निश्चयकरिआप्त होय है याहीकूं देव कहिये है अन्य प्रकार इन तीन गुणन विना आप्तपणा नही होय है जातें जो आप ही दोषनिकरि सहित है सो अन्य जीवनकूं निराकुल सुखित निर्दोष कैसें करेगा। जो क्षुधाकी बाधा तृषाकी बाधा कामक्रोधादिकदोष-सहित होय सो तो महा दुःखित है, ताकै ईश्वरपणां कैसें होय ॥ अर जो निरंतर भयवान भया शस्त्र आदिक ग्रहण कर्‍या रहै ताकैं वैरी विद्यमान है सो निराकुल कैसें होय। अर जाकें द्वेष चिंता खेदादिक निरंतर वर्तै सो सुखित नहीं होय। अर जो कामी रागी होय सो तो निरंतर परके वस है वाके स्वाधीनता नाहीं पराधीनतातै ताकै सत्यार्थवक्तापणा वणै नाहीं। अर मदांके वशीभूत निद्राके वशीभूत होय ताकै सत्यार्थवक्तापणां नहीं होय सकै है। अर जो जन्म मरण सहित है ताकै संसारपरिभ्रमणका अभाव नहीं संसारी ही है ताकैं आप्त पणां नहीं वणै तातें निर्दोष होय ताहीकैं सत्यार्थपणांकरि आप्त नाम वनै है। रागी द्वेषी तो आपका अर परका राग द्वेष पुष्ट करने रूपही कहै है यथार्थवक्तापणां तो वीतरागके ही संभवै है। बहुरि सर्वज्ञ नहीं होय तो इन्द्रियनके आधीन ज्ञानवाला पूर्वे भये जो राम रावणादिक तिनकूं कैसै जानै अर दूरवर्ती जे मेरु कुलाचल स्वर्ग नरक परलोकादिकनकूं कैसैं जानै अर सूक्ष्मपरमाणू इत्यादिकनिकूं कैसैं जानै इन्द्रियजनित ज्ञान तो स्थूल विद्यमान अपने सन्मुख होकूं स्पष्ट नहीं जानै है। इस संसार में पदार्थ तो जीवपुद्गल कालादिक अनंत हैं अर एक कालमें अपनी भिन्नभिन्न परणतिरूप परणिमैं हैं यातें एकसमयवर्ती अनंत पदार्थोंकी भिन्नभिन्न अनंत ही परणति है। अर इंद्रिय जनितज्ञान क्रमवर्ती

स्थूल पुद्गलकी अनेक समयमें भई जे एक स्थूल पर्याय ताकूं जाननेवाला अनेकपदार्थनको अनेकपर्याय रहै जो एक समयवर्ती ही जाननेकूं समर्थ नही तो अनंतकाल गया अर अनंत आवेगा तिनको अनंतानंत परणतिकूं इन्द्रियजनित ज्ञान कैसैं जानै ? तातैं सर्व त्रिकालवर्ती समस्तद्रव्यनिकी परणतिकूं युगपत् जाननेकूं समर्थ ऐसा सर्वज्ञ ही कै आप्तपणा संभवै है ॥ अर जो परम हितोपदेश करै सोई आप्त है। ए तीन गुण जामें होंय सो ही देव है यद्यपि अरहंतदेव मनुष्य पर्यायकूं धारणकरता मनुष्य है तोहू ज्ञानावरणादि चारिघातिया कर्मनिके नाशतैं प्रगट भया जो अनन्तज्ञान अनन्तदर्शन अनन्तवीर्य अनन्त सुखरूप निज स्वभाव जिसमें रमनेतें। तथा कर्मनिके विजयतें अप्रमाण शरीरको क्रांति प्रगट होनेतैं अनंत आनंदसुखमें मग्न होनैतें तथा इन्द्रादिक समस्त देवनिकरि स्तुति योग्य होनैतैं तथा अनंत ज्ञान दर्शन स्वभाव करि समस्त लोकालोकमें व्याप्त होनेतें अनंतशक्ति प्रगट होनेतैं अन्यदेव मनुष्यनितैं असाधारण आत्मरूपकर दिपै है। तातैं मनुष्य पर्यायहीमें अपने अनंत ज्ञानवीर्य सुखादि गुणनितैं याकूं देवाधिदेव कहिये है ॥ इहां कोऊ प्रश्न करै जो आप्तका लक्षण तीन काहेतैं कहा ? एक निर्दोष कहनेमें ही समस्त गुण लक्षण आवता ताकूं कहिये है निर्दोषपणां तो आकाश धर्म पुद्गल कालादिक केहू है इनके हू अचेतनपणांतैं क्षुधा तृषा रागद्वेषादिक नहीं है यातैं निर्दोषपणांतैं आप्तपणांका प्रशंग आता तातैं निर्दोष होय अर सर्वज्ञ होय ॥ अर निर्दोष सर्वज्ञ दोय ही गुण कहे तो भगवान सिद्धनके आप्तपणांका प्रसंग आवता तब सत्यार्थ उपदेशका अभाव आवता तातैं निर्दोष, सर्वज्ञ, परमहितोपदेशकता, इन तीन गुणनिकरिसहित देवाधिदेव परम औदारिक शरीरमें तिष्टता भगवान सर्वज्ञ वीतराग अरहंत ही के आप्तपणांका है ऐसे निश्चय करना योग्य है ॥ अब अरहंतदेव दोषनकूं नष्ट करि आप्त भये तिन दोषनिके नाम कहनेकूं सूत्र कहे हैं—

क्षुत्पिपासाजरातङ्क जन्मान्तकभयस्मयाः। न रागद्वेषमोहाश्च यस्याप्तः स प्रकीर्त्यते॥६॥

अर्थ—क्षुत् कहिये क्षुधा १ पिपासा कहिये तृषा २ जरा कहिये वृद्धि पणां जीर्णपणां ३ आतंक कहिये शरीरसंबंधी व्याधि ४ जन्म कहिये कर्मके वसतैं चतुर्गतिमें उत्पत्ति ५ अंतक कहिये मृत्यु ६ भय कहिये

इसलोक १ का भय परलोकका २ भय मरण ३ भय वेदना ४ भय अनरक्षा ५ भय अगुप्ति ६ भय ऐसे सप्त प्रकार भय । ७ स्मय कहिये गर्व, मद ८ राग ९ द्वेष १० मोह ११ च शब्द तें ग्रहण किये चिन्ता १२ रति १३ निद्रा १४ विस्मय कहिये आश्चर्य १५ विषाद १६ स्वेद कहिये पसेव ॥ १७ ॥ खेद व्याकुलता ॥१८॥ ए अष्टादशदोष जाकैं नहीं सो आप्त कहिये । अब यहां कोऊ श्वेताम्बर मतधारक प्रश्न करै है ॥ भो दिगम्बरधर्मधारक हो जो केवली भगवानके क्षुधा तृषाका अभाव है तो अहारादिकनिमैं प्रवर्तिका अभाव होतैं केवलीकै देहकी स्थित नहीं रही चाहिये अर देहकी स्थिति तुम्हारे मान्यही है तातैं केवलीकै अहार करनेकी सिद्ध भई । जैसैं आहार किये विना अपने देह नहीं रहै तैसैं केवलीकै भी आहार विना देह नहीं रहै अर देहकी स्थिति है तो अवश्य आहार करै ही है । तिसकूं उत्तर करैं हैं,—केवलीकै आहारमात्र साधिये है कि कवलाहार साधिये है । जो आहार मात्रही की सिद्धि चाहो तदि तो संयोगकेवलीपर्यन्त समस्त जीव आहारक ही हैं ऐसा परमागमका वाक्य हैं क्योंकि समस्त ही एकेंद्रियकूं आदिलेय संयोगी पर्यन्त जीव समय समयमैं सिद्धिराशिके अनंतवें भाग अर अभव्यराशितैं अनंतगुणा कर्मपरमाणु अरनोकर्मपरमाणूनकूं निरन्तर ग्रहण करै है । अर जो तुम या कहो हम तो केवलीकै कवलाहार कहिये ग्रासग्रास मुखमेलि अन्नजलादिक अपना भक्षण करने ज्यों आहार करना कहैं हैं । कवलाहार जो ग्रासरूप आहार तिस विना केवलीके देहकी स्थिति नहीं रहै । जैसैं अपना देह कवलाहार विना नहीं रहै । ताकूं कहैं हैं देवनका देह कवलाआहार विना सागरांपयन्त कैसै तिष्टै है ? समस्त देवनकै कवला हार कदाचित नहीं है अर देहकी स्थिति है ही तातैं तुम्हारा हेतु व्यभिचारी भया अर जो या कहो देवनके देहकी स्थिति तो मानसीक आहारतै है जो मनमैं आहारकी इच्छा उपजते ही कंठमैं अमृत झरै है तातैं तृप्तता होय सो मानसीक आहार है सो भवनवासी व्यंतर जोतिषी कल्पवासी चतुरनिकायके देवनिके कवलाहार विना मानसीक आहारतैंही देहकी स्थिति है तो तैसैं ही केवली भगवानके कर्मनोकर्म वर्गणाके आहारतें देहकी स्थिति है अर जो या कहो केवलीकी तो मनुष्य देहमें स्थिति है याते अपने देह की तुल्य

कवलाहारतैं ही देहकी स्थिति मानिये है तो अपनी देह ज्यों पशेव, खेद, उपसर्ग, परीषहादिक भी मानना चाहिये अर जो या कहोगे केवलीकै अतिशयके प्रभावतैं नहीं होय है तो भोजनका अभावरूप भी अतिशय कैसे नहीं मानो हो। बहुरि अपने देहमें देखिये तैसैं केवलीकै हू मानो हो तो जैसैं अपने इंद्रिय जनित ज्ञान है जैसे केवली केहू ज्ञान इन्द्रिय जीतन मानो। देखना, श्रवण करना, अस्वादना, चिन्तवना, इंद्रियनतैं भया। तदि केवलज्ञान रूप अतिन्द्रिय ज्ञानको जलांजलि दीनी। सर्वज्ञपणाका अभाव आया। अर जो या कहोगे ज्ञान करि समान होते हू केवलीकै अतिन्द्रिय ज्ञान ही है तो देहमें स्थिति समान होते हू कवलाहारका अभाव कैसे नहीं मानोगे? अरजो या कहोगे केवलीकै वेदनीयकर्मका सद्भाव है यातैं भोजनकी इच्छा उपजै है यातैं कवलाहारमें प्रवृत्ति होय है। ऐसैं कहना हू उचित नहीं। जातैं मोहनीयकर्मके सहाय सहित ही वेदनीय कर्मके भोजनकी इच्छा उपजावनेमें समर्थपणो है क्योंकि भोजनकी इच्छा सो बुभुत्ता है। इच्छा है सो मोहनीयकर्मको कार्य है यातैं नष्ट हुवा है मोहनीयकर्मजाके ऐसे भगवान केवलीकै भोजन करनेकी इच्छा काहेतैं उपजैं अर जो मोहनीय बिना हू इच्छा उपजै है तो मनोहर स्त्रीभोगनेकी इच्छा हू उपजनेका प्रसंग आया तथा सुंदर शय्यामें शयन, आभरण, वस्त्रादि भोगोपभोगकी इच्छाका प्रसंग आया तदि वीतरागताका अभाव भया जहां इच्छा तहां वीतरागता नहीं॥

बहुरि तुम्हारे केवली आहार करैं है सो एक दिनमें एकबार करैं हैं कि अनेकबार करैं हैं कि एक दिनके अन्तर कि दोय दिन, पांच दिन,पक्ष मासादि केता अन्तर करि भोजन करैं है॥ जेता अंतर कहोगे तितना प्रमाण ही शक्ति रही शक्ति घटे भोजन करे है भोजनके आश्रय वल भया तदि अनंतवीर्य भगवान केवलीकैं कहना असत्य भया। केवलीकै आहारके आधीन ही वल रहा। बहुरि केवली बुभुत्ताका उपशम करनेके अर्थि भोजनका अस्वादन करे है सो केवलज्ञानतैं भोजनका स्वाद लेहैं कि रसना इंद्रियतैं आस्वादै हैं? जो केवलज्ञानतैं आस्वादै हैं तो दूर क्षेत्रमें तिष्टता हू भोजनका आस्वादन कर ले तदि कवलाहार करि कहा प्रयोजन रहा? अर जो रसना इंद्रियतैं स्वाद ले हैं तो मतिज्ञानका प्रसंग आया क्योंकि इंद्रि-

यनकर देखना, स्वादना, श्रवणकरना, स्पर्शना, चिन्तवनकरना सो तो मतिज्ञान है। बहुरि जो तुम यह कहौ कि सर्वज्ञ पणांकै अर कवलाहारकै विरोध नहीं। जैसै इहां आहार करि मनुष्यनकै ज्ञानको हीनता नहीं देखिये। तैसै भोजन करते हू केवल ज्ञानकी हीनता नहीं होय है। ताकूं कहिये है जो हम पूछैं हैं द्रव्य, आभरण, वस्त्र, वाहन, काम, विषय भोगनेमें हूं सर्वज्ञपणांका विरोध नाहीं। अर जो तुम या कहो सर्वज्ञकै मोहके उदयका अभाव है यातें द्रव्य, आभरण-काम विषय भोगादिक ग्रहण करनेकी इच्छा नहीं है; अर असाता वेदनीयका उदय विद्यमान है तातैं आहार ग्रहण करें है। क्योंकि कर्मनकी शक्ति भिन्न भिन्न है। एक सी कर्म को शक्ति होय तो कर्मनिमें जुदा जुदा भेद नहीं होय। मोहके उदयका अभाव भया तातैं द्रव्यादिक नहीं ग्रहण करै है॥ ताकूं कहै है जो मोहका अभाव भया तदि ग्रास उठाय मुखमें देना चावना, निगलना यह इच्छा काहेतैं भई॥ जो यह कहोगे अन्तराय कर्मका अभाव भया तातैं इच्छा विना ही मुखमें ग्रास चपै हैं तो अन्तरायकर्मका अभाव ही भोगोपभोगकामसेवनादिककाहू ग्रहण क्यों नहीं करावै जो यह कहोगे द्रव्य आभरण काम विषयादिक ग्रहण करनेतैं व्रत भंग हो जाय दीक्षाका भंग होजाय साधू पणा नष्ट होजाय है। अर आहार करनेतैं व्रतका तथा दीक्षाका भंग नहीं होय है कवलाहार करनेतैं तो साधूके धर्म का कारण देहकी स्थिति रहै। ताका उत्तर करैं हैं—तुम्हारे श्वेताम्बरमतमें व्रतधारणतैं अर दीक्षा ग्रहण करनेतैं ही केवलज्ञान उपजनेका नियम नाहीं है। मल्लीकुमारीके गृहस्थ अवस्थाहीमें केवलज्ञानकी उत्पत्ति कहोहो तथा भरत चक्रवर्तीकै समस्त छहखंडका राज भोगतेसंते आरीसाका महलमें केवलज्ञान उपजा। कहो हो तथा मरुदेवी हाथी चढ़ी पुत्रके रुदन करतीकै केवलज्ञान कहो हो बांस चढ़ा नट कै केवलज्ञानकहो हो उपासरामें वुहारी देती दासीकै केवलज्ञान कहो हो तथा गृहस्थीकै वा स्त्रीकै तथा अन्यधर्मी कोऊ भेषधारी होहु दंडी त्रिदंडी संन्यासी कपाली फकीर जटाधारी मुण्डन करनेवाला मृगछाला वाघम्बर ओढ़नेवाला समस्त कुलिंगनकै मोक्ष कहो हो॥ समस्त नाई धोबी खटीक चांडालादिक समस्तकै मोक्ष कहो हो॥ हृषिकेश चांडालकै केवलज्ञान अर मोक्ष कहो हो तुम्हारे व्रततैं दीक्षातैं ही प्रयोजन नहीं। तुम्हारे केवलज्ञान

तो पहिले गृहस्तकै उपजावै अर दीक्षा पाछें होय यतीपणां पाछें होय ऐसे कहो हो। सर्वज्ञपणां पहले हो जाय अर दीक्षा पाछें होय तदि दीक्षातैं कौन प्रयोजन सध्या ? ॥ अर गृहस्तकै मोक्ष होय अर अन्य कुलिंगीनकै हू मोक्ष होजाय तदि तुम्हारा दीक्षाग्रहण मुंहपट्टीवंधन दंडग्रहण वोधा पात्रांका ग्रहण निरर्थक रह्या। इत्यादिक तुम्हारे हजारां दोष आवैं हैं। अर जो तुम कहो असाता वेदनीयकै उदयतैं केवलीके क्षुधा तृषा रोग मल मुत्रादिक होय सो नहीं है इसका उत्तर सुनहु क्षुधा तो असाता वेदनीय कर्मकी उदीर्णातैं होय है। सो असाताकी उदीर्णकी छठे गुणस्थानमें व्युच्छिति है तदि सप्तम गुणस्थानादिकनिमैं क्षुधादि वेदनाका अभाव है। वहुरि और सुनहु, जिसकाल मुनिश्रेणी चढ़ै तदि सातिशय अप्रमत्तगुणस्थानमैं आधःकरणके प्रारम्भमैं चार आवश्यक होय हैं एक तो प्रति समय अनन्तगुण विशुद्धिता १ अर दूजा स्थितिबंधका अपसरण कहिये घटना २ अर साता वेदनीयादिक पुन्य प्रकृतिनमैं अनन्त गुणाकाररूप रसका वर्द्धित होना ३ अर असातादिक अशुभ प्रकृतिनका रस अनंतगुणां घट निंवकाजीररूप दोयस्थान रूप रहै है॥ विषहलाहलरूप शक्ति घट जाय है ४ पाछें अपूर्वकरणमैं गुणश्रेणी निर्जरा १ गुणसंक्रमण २ स्थितिखंडन ३ अनुभाग खंडन ४ ये चार आवश्यक होय हैं। तातैं तिन करण परिणामनके प्रभावतैं असातादिक अप्रशस्त प्रकृतिनके रसकै असंख्यातवार अनन्तका भाग लाग घटनेतैं ऐसी मन्द शक्ति रही सो सर्वज्ञकै असाता वेदनीयपरीसह उपजायवेकूं समर्थ नहीं ॥ अर घातिया कर्मका सहाय रह्या नाहीं ॥ तातैं परीसह देनेमैं समथ नहीं है ॥ वहुरि उक्तंच ॥ गोमट्टसारे ( गाथा ) "समयट्ठिदिगो वंधो सादस्सुदयप्पगो जदो तस्स ॥ तेणासादस्सुदओसादसरूवेण परिणमदि ॥ १ ॥ एदेण कारणेण हु सादस्सेवहुणिरंतरो उदओ ॥ तेणासादणिमित्ता परीसहा जिणवरे णत्थि ॥ २ ॥ णट्ठायरायदोषाइंद्रिय णाणं चकेवलम्हि जदो ॥ तेण हु सादासादजुसुहदुक्खं णत्थि इन्द्रियजं" ॥ ३ ॥

अर्थ—पूर्वली बांधी जो असाता वेदनीयका असंख्यात वार अनन्तका भाग लाग रसघट अति मन्द रह गया ॥ अर नवीन असाताका वंध होय है नहीं। आगैं सप्तम गुणस्थानसैं एक सातावेदनीयका वंध

नवीन होय है अर असाताका बंध होय नहीं। अर केवलीकै साताकर्म बंधै सो एक समयकी स्थितिरूप बंधै
सो उदय होता ही होय तातैं असाताका उदय भी सातारूप ही परिणमै है। भावार्थ—साताका उदय तो
नवीन निरन्तर अनंतगुणा रसरूप सर्वज्ञके उदयमैं आवै अर असातावेदनीयका रस अनंतवें भाग, सो जैसे
अमृतके समुद्रकूं एक विषकी कणाका विषरूप करनेकूं समर्थ नहीं होय, तैसैं सर्वज्ञकै अति तीव्र अनन्त
गुणां साताकर्मके रसका उदयमैं अनन्तभागरूप अतिमन्द असाताका उदय कैसैं क्षुधाकी वेदना उप-
जावै या कारणतैं भगवान सर्वज्ञकै निरन्तर साताकर्मका ही उदय है यामैं किंचित असाताका उदय हू
साता रूप ही परिणमै है ता कारण असाताका उदयजनित परीसह जिनेन्द्रकै नहीं है। जातैं भगवान केव-
लीकै रागद्वेष नष्ट भया तथा इन्द्रियजनित ज्ञानका अभाव भया तातैं साता असातातैं उपज्या इन्द्रियज-
नित सुख दुःख हू केवलीकै नहीं है अर और हू कहैं हैं॥ अतिमंद उदयरूप असाता अपना कार्यकरनेमें
समर्थ नहीं है। जैसैं मन्दउदय रूप संज्वलन कषाय अप्रमत्तादि गुणस्थानमैं प्रमाद नहीं उपजाय सकै
तथा जैसैं अति तीव्र वेदके उदयतैं उपजी मैथुनसंज्ञा सो मन्दवेदका उदयरूप नवमैं गुणस्थानमैं नहीं है।
तथा निद्रा प्रचलाका उदय तो बारवैं गुणस्थानमैं द्विचरम समय पर्यन्त है परन्तु उदीरणा बिना निद्राकूं
नहीं कर सकै है तातैं जाग्रत अवस्था बिना आत्मानुभवनरूप ध्यान नहीं बन सकै, तैसैं असाताकी उदी-
रणा बिना असाता क्षुधा तृषादिक नहीं उपजाय सकै है। अर और भी समझो अप्रमत्त हू साधू आहार-
की इच्छामात्रतैं प्रमत्तपणानै प्राप्त होय है तो भोजन करता हू केवली प्रमत्त नहीं होय सो बड़ा आश्चर्य है।
बहुरि केवली भगवान त्रैलोक्यके मध्य मारण ताड़न छेदन ज्वालन मद्य मांसादि अशुचि द्रव्यनकूं प्रत्यक्ष
देखता कैसैं भोजन करै है। अल्पशक्तिका धारक गृहस्थ हू अयोग्य वस्तु निंद्य कर्म देख अन्तराय करै है।
अर केवली अन्तराय नहीं करै तो गृहस्तनतैं हू अधिक भोजनमैं लम्पटता रही अर शक्तिकी हीनता रही
तदि अनन्तशक्ति कहां रही? अर जाके क्षुधा वेदना ताके अनन्त सुख कहां रह्या॥ क्षुधा समान वेदना
जगतमैं अन्य नाहीं है। यातैं वेदना सर्वज्ञकै होते अनन्तवीर्य अनन्तसुख नहीं ठहरै। तथा ऋद्धिजनित

अतिशयवान मुनि विषै अन्य मनुष्यनमैं नहीं पाइये। ऐसा कार्य करनेका सामर्थ पाइये है। तो अनन्तवीर्यका धारक केवली भगवानकै आहार बिना देहकी स्थिति रहना कहा नहीं सम्भवै है ?। अर जो सर्वज्ञकै हू अन्य मनुष्यनकी ज्यों आहार, निहार, निद्रा, रोग, स्वेद, खेद, मल, मूत्र विद्यमान होय तो सामान्य आत्मामैं अर परमात्मामैं कहा भेद रह्या ? बहुरि जीवना कवलाहारतैं ही नहीं है आयुकर्मके उदयतें है ॥ ॥ उक्तंच गाथा,—"णोकमकम्माहारो कवलाहारो य लेपमाहारो। उज्जमणो वि य कमसो आहारो छव्विहो भणिओ ॥ १ ॥ णोकम्मं तित्थयरे कम्मं णारेयमाणसो अमरे। कवलाहारो णरपसु उज्जोपक्खीइगिलेपो" ॥ २ ॥ अर्थ—आहार छह प्रकार है ॥ कर्म आहार १ नोकर्मआहार २ कवलाहार ३ लेपआहार ४ उजाआहार ५ मानसीक आहार ६ ऐसे छह प्रकार हैं। भगवान अरहन्तकै तो अन्य जीवनकै असंभव ऐसै शुभ सूक्ष्म नोकर्मवर्गणाका ग्रहण सो ही आहार है ॥ अर नरकीनकै कर्मका भोगना सो ही आहार है ॥ अर चारप्रकारके देवनकै मानसीक आहार है मनमें वांछा होते ही कंठमैं तें अमृत झरै है ताकरि तृप्तता है। मनुष्य अर पशुवनकै कवलाहार है। अर पक्षीनकै अंडेमैं तिष्टतेनकै माताका उदरकी उश्मारूप उजाहार है। अर एकेंद्रिय पृथिव्यादिकनकै लेपआहार है। पृथिव्यादिकनका स्पर्श ही आहार है। बहुरि भोगभूमिके औदारिक देहके धारक मनुष्यनिका शरीर तीन कोस प्रमाण अर भोजन आंवला प्रमाण तीन दिनकै अन्तर गये ले है ॥ यातैं कवलाहार ही देहकी स्थितिका कारण नहीं है। अर जो आहारकपनातैं कवलाहारकी ही कलपना करो हो तो सयोगीपनांतें मनके माननेका अर प्राण माननेंतें पंच इन्द्रियनिका अर शुक्ललेश्यातें कषायका हू प्रसंग आवैगा ॥ अर एकादश परीसह जिनकै हैं ऐसे कहना तो उपचारमात्र है। वेदनीय कर्म विद्यमान है यातैं कहा है ॥ परन्तु जैसै मन्त्र औषधि आदिकके प्रभावकरि जाकी विषशक्ति नष्ट भई ऐसा विष मारनेकूं समर्थ नहीं तैसैं शक्तिरहित असातावेदनीय क्षुधा उपजावनेकूं समर्थ नहीं है। मणि मंत्र औषधि विद्या च्छादिकनिका अचिंत्यप्रभाव है ॥

श्वेताम्बरनिके कलिपत सूत्र तिनमैं अनेक कलिपत असम्भव रचना रची है ॥ कोऊ एक गौसाला नाम

विवाद करनेकूं समो-
गरोड्या महावीर स्वामीके निकट दीक्षित होय विद्याका मदकरि महावीर स्वामीसूं विवाद करनेकूं समो-
सरणमैं जाय विवाद कियो तदि विवादमैं हार गयो तदि क्रोधकरि भगवान ऊपरि तेजोलेश्या कोऊ ऋद्धि
अग्निमय प्रज्वलित चलाई। तिसकरि समोसरणमैं दोय मुनि सिंहासन नीचैं दग्ध भए। अर उस तेजस
ऋद्धितैं उपजी अग्निमयज्वाला भगवान ऊपर भी जाय पहुंची, भगवानकूं उपसर्ग भारी भया। तिस अग्नि-
की गरम बाधातैं भगवानके आंवरुधिरका पेचस ( अतीसार ) भया। सो छह महीना रह्या ॥ पीछैं केवल-
ज्ञानतैं जानकै शिष्यकूं कहि कोऊ सेठका घरतैं सुपक्षी जीवका पका मांसकूं मंगाय भक्षण करि व्याधि
मेटी। अर कही मैं ऐसे कुपात्रकूं बिना समझ्यां दीक्षा दोनी ऐसा अवर्णवाद लिखे हैं ॥ तथा तीन ज्ञान
लिये उपजे वीरजिनेन्द्रका चटशालामैं पढ़ना कहैं हैं। तथा तीर्थंकर तो पहले दीक्षित नग्न होय हैं पाछे
इन्द्र स्कन्ध ऊपरि वस्त्र धरि देव तवै बस्त्रकूं ढाव ( ग्रहण कर ) लेहैं। तथा वीर जिनकी बानी गणधर
बिना निष्फल खिरी कोऊ भी मानी नहीं तथा आदिनाथकूं जुगलिया कहैं हैं अर कोऊ एक अन्य जुग-
लिया मर गयो ताकी स्त्री विधवा भई। तिस विधवा स्त्रीको ऋषभदेव अंगीकार करी तदि दूजी सुनन्दा-
रानी नाताकी भई ॥ इन दुं ड्यादि स्वेताम्बरिनिकै ऐसे अनर्थरूप बचन कहनेका भय नहीं है। तथा ऐसी
विरुद्ध कहैं हैं वीर जिन पहिली देवनन्दा नाम ब्राह्मणीके गर्भमैं अवतार लेय अस्सी दिन पर्यन्त रहा।
पाछैं इन्द्रने विचारी के ऐसे नीच घरमैं इनका जन्म योग्य नहीं तातैं हरिणय गवेषी देवनै आज्ञा करी तदि
देव जाय देवनंदा नाम ब्राह्मणीके गर्भमैंतैं निकसि राजा सिद्धार्थकी रानी त्रिसला ताके गर्भमैं धरया ॥
विचारो अपने बांधे कर्मनिकरि कुलादिकमैं उपजै है देवन का किया जन्म कैसैं फिरै ? परंतु मिथ्यादर्श-
नका प्रभावकरि कहनेका ठिकाना नहीं। तथा तीर्थङ्कर केवलीको सामान्य केवली नमस्कार करै हैं ॥ बाहूवलीने
ऋषभदेवको नमस्कार किया कहैं हैं। सप्तम गुणस्थानसे ही वंद्य बंदक भाव नहीं। जहां आत्मस्वभावका
अनुभव तहां विभाव कैसैं कहैं हैं ? कृतकृत्य भगवान सर्वज्ञदेव तिनके नमस्कारकरि कहा साध्य है ? बंदने
योग्य परमेष्टी अर मैं वन्दना करनेवाला ऐसा भाव तो प्रमत्तनाम छट्ठा गुणस्थानपर्यन्त ही है। तथा ऐसे

कहैं हैं एक स्कंधक नाम त्रिदंडी कुलिंगी भेषीकूं अपने निकट आवता जान बीरजिन गौत्तमगणधरकूं कही स्कंधक संन्यासी आवै है। यह जवर है थारै इनकै मेल है सामै जाय याकूं ल्यावो। तदि गौत्तमगणधर बड़ी भक्तिसूं सन्मुख जाय ल्यावो। बड़ा अनर्थ है अव्रतसम्यकदृष्टी भी कुलिंगीका सन्मान नहीं करै तो महाव्रती गणधर कैसें भक्तिपूर्वक सन्मान करै ?। स्त्रीकै पंचमगुणस्थान सिवाय गुणस्थान ही नहीं आदिके तीन संहनन नहीं, अहमिंद्रलोक नहीं, अर सप्तमनर्कमैं गमन नहीं, ता स्त्रीके मुक्ति कैसें कहैं हैं॥ तथा मल्लिजिनकूं नारी कहैं हैं ताकी प्रतिमा पुरुषरूप बनाय पूजैं ऐसे महाअसत्यवादी हैं। तथा कोऊ एक हरिक्षेत्रका निवासी मनुष्य जाका दोय कोस ऊंचा काय तिसकूं कोऊ पूर्व जन्मका बैरी देव हर ल्याया अर दोय कोसके देहको छोटा करिकैं भरतक्षेत्रमैं ल्याय मथुरा नगरका राज देय अर मांस भक्षण कराय पापी कर नरक पहुंचाया। तासूं हरिबंसकी उत्पत्ति कहैं हैं तिन मूर्खनकी मिथ्या कल्पनाका कुछ ठिकाना नहीं। दोय कोसकी कायताकूं तो कैसें छोटी बनाई ऊपरसे छेद्या कि नीचैसें कि बीचमेंसें छेद्या, ताका कछु उत्तर नहीं। अर भोगभूमिका तो समस्त मनुष्य तिर्यञ्च देवगतिगामी है तथा भोगभूमिमैं तो पुरुष स्त्री प्रमाणीक हैं। माता पिता मरैं तिनकी एवज पहिले उपजैं हैं। जो अनंतकालगये भी एकएक घटै तो समस्त भोगभूमि रीती हो जाय। परंतु मिथ्यादृष्टीनिकै कुछ कुबुद्धिका ओड़ (अंत) नहीं है। तथा छह द्रव्य कहना अर मुख्य काल द्रव्यका अभाव कहना समयादिक विनाशीककूं ही काल जानना। तथा और कहैं हैं कि साधूकै निंदकके मारनेका पाप नहीं। जो देव गुरू धर्मका द्रोही चक्री हू होय तो चक्रवर्तीका कटककूं हू बिध्वंस करता साधूकै पाप नहीं। जो आपके ऋद्धादिककरि उपजी शक्ति होते नही मारै तो वह साधू अनंतसंसारी है ऐसे पापी साधूकै कहां साम्यभाव कहां वीतरागता रही तथा पापिष्ट महान शीलवंतीनिकै हू दोष लगाय निर्दोष कहैं हैं भरतनामा चक्रवर्ती तो ब्राह्मी नामा बहनकूं परणालीनी कहै हैं। अर द्रोपदीको पंचभर्तारी कहैं हैं अर पंच भर्तारी हीकूं सती कहैं हैं अर कोऊ पूछै तुम सती कहौ हो तो पंचभर्तारी मति कहो अर पंचभर्तारी कहो हो तो सती मत कहो। ताकूं ये कहैं हैं

कोऊ राजादिक सौ स्त्रीका नियम राखै ताके शीलवान पणा ही है। तैसें स्त्री हू कितनेक पुरुषनिका प्रमाण करै तातैं सिवाय ग्रहण नहीं करै ताकै शीलवती पणां ही है॥ तथा देवनकै अर मनुष्यनिकै कामभोगसे- वन कहैं हैं सो बैयक्तिक देहधारीकै अर सप्तधातमय मलीनदेहकै सँगम कदाचित नहीं होय है। बहुरि कोऊ साधुकै उपबास होय अर अन्य साधूकै आहार उबरजाय तो उपवासीक साधू भक्षण कर ले है गुरूकी आज्ञा तें व्रतभंग नहीं है॥ तथा उपबासमैं औषधि भक्षण करै तो दोष नहीं लागै तथा समोसरणमैं जिन नग्न बैठैं हैं अर बस्त्रसहित दीखता कहैं हैं। तथा साधु यती कै लाठो पात्र बस्त्रादिक चौदह उपकरण रखना ही धम है तथा चांडालादिकनकै मुक्ति कहैं हैं तथा बीरजिनका समोसरणमैं चंद्रमा सूर्य बिमानसहित आये कहैं हैं। सास्वती गतिकी मर्यादका भंग कहैं हैं तथा साधुका मन चल जाय तो श्रावक अपनी स्त्रीकूं देय कामवेदना मिटाय मन थिर करै॥ तथा गंगादेवीसे पचपनहजार वर्षपर्यंत भरत चक्रीने कामभोग कियो कहै हैं तथा भोगभूमिके युगल मलमूत्र धारण करैं हैं अर मर जांय तदि तीनकोसके मुरदेके शरीरकूं देवता उठाय भैरूंडादिक पक्षीनको खुवाय देय हैं जादव आदिक समस्त क्षत्रियनिकूं मांसभक्षी कहैं हैं॥ तथा गौत्तम नाम गणधर आनंद नाम श्रावककै घर शरीरकी कुशल पूछनै गया तदि झूंठ बोल्या। गणधर भी चूक कर झूंठ बोलैं हैं तथा जन्मके समयमैं बीरजिन मेरूकूं कंपायमान किया कहैं हैं॥ धर्मका नीर घृतादिक निर्दोष कहैं हैं॥ इत्यादि हजारां अनर्थरूप कथन करि कल्पितसूत्र बनाये हैं तिनकी विशेष कथा कहांतक कहिये?

इनही श्वेतांवरनिमें महाभ्रष्ट ढुंडिया भए हैं ते प्रतिमाके वंदनेका अभाव कहैं हैं अर भोले लोगनिकूं कहैं हैं ए प्रतिमा एकेंद्रिय पाषाण तिनके आगैं पंचेंद्रिय होय कैसे नाचो हो कैसें बंदना करो हो? तुमको क्योंकर शुभगति देयगो तातैं साधु ढुंढियनिकी वंदना दर्शन करो। तिनकूं कहिये है तुम्हारा चर्ममय मलीन चामकर ढक्या मलमूत्रादि करि भरया कफ लालकरि लिप्त देह ताका दर्शन करनैतैं कहा साध्य? तुम आत्मज्ञानकरि रहित समस्त जगतके अभक्ष वस्तुनिकूं भक्षण करनेहारे तुम्हारा दर्शन तो बंध हीकों

कारण है। अर तुम्हारा कल्पितसूत्रका श्रवन सम्यक्तका बिध्वंस करनेहारा बंधका कारण है अर जिनेन्द्रका धातु पाषाणका प्रतिबिम्ब, तिनका दर्शनमात्र परम बीतराग सर्वज्ञका ध्यान प्रगट होय जाय परमशांतता शुभोपयोग प्राप्त होय जाय अर तुम्हारे पापमय देहके दर्शनतैं पापका बन्ध होयजाय ॥ कैसे हो तुम महाबिट्रूप बिकारी रागद्वेष कषायादि पापमलसहित अयोग्य अभक्ष आहारके लंपटी हिंसादिक पाप तिनमें प्रवर्तन करनेवारे अन्य जीवनिकूं मिथ्यामार्गमें प्रवर्तावनेहारे तुम्हारे देखनेकरि पाप घोरबन्ध होय। सराहनेवालेके सत्तरकोड़ाकोड़ी सागरकी स्थितिलिये मोहनीकर्मका बंध होय है। इस कलिकालमें जैनधर्मका सत्यार्थ मार्गकूं स्वेताम्बरानै बिगाड्या है। यातैं इनका स्वरूप जाननेके अर्थि ऐसे प्रकरणपाय स्वेताम्बरनिकैं मतका स्वरूप दिखाया। इनके सत्यार्थप्राप्तता कैसे होय? और हू मतवाले जे प्रत्यक्ष भयभीत तथा असमर्थ होय चक्र त्रिशूल खड्ग ग्रहण कर राखे हैं और कामी होय स्त्रीनके आधीन होय रहे हैं अरु क्षुधा, तृषा, काम, राग, द्वेष, निद्रा, निहार, वैर, बिरोध प्रगट जाके प्रसिद्ध हैं तिनके निर्दोषपना कैसे होय? अरु जे इंद्रियज्ञानसहित ज्ञानी तिनके सर्वज्ञपना आप्तपना कहांसैं होय? तातैं सर्वज्ञ बीतराग परमहितोपदेशक ही कै आप्तपना बनै है। अब पूर्वापर बिरोधादि दोषन कर रहित सत्यार्थ पदार्थनका उपदेश देनेवाला जो शास्त्र ताका सत्यार्थ नाम प्रगट करता सूत्र कहैं हैं ॥

परमेष्ठी परंज्योतिर्विरागो विमलः कृती। सर्वज्ञो नादिमध्यांतः सार्वः शास्तोपलाल्यते ॥ ७ ॥

अर्थ—जो अर्थ सहित अष्ट नामनिकूं धारण करै है सो शास्ता कहिये है। परमेष्टी परंज्योतिः, विरागः विमलः कृती सर्वज्ञ अनादिमध्यांतः सार्वः एते सार्थक नाम जाके हैं सो शास्ता है याहीकूं आप्त कहिये है। परमेष्टी कहिये परम इष्ट जो इन्द्रादिकनि करि वंद्य जो परमात्मा स्वरूपमें तिष्टै सो परमेष्टी है। कैसा है परमेष्टी अंतरंग तो घातियाकर्मनिके नाशतैं प्रगट भया अनंतज्ञान दर्शनसुखवीर्जस्वरूप अपना निर्बिकार अविनाशी परमात्मस्वरूप तिसमैं तिष्टै है। अरबाह्य इंद्रादिक असंख्यात देवनिकर वंद्यमान समवसरण नाम सभाके मध्य तीन पीठके ऊपर दिव्यसिंहासनमैं चार अंगुल अंतरीक्ष (अधर) चौसठ चम-

रनिकरि युक्त बिराजमान छत्रत्रयादिक दिव्य संपदाकरि बिभूषित इन्द्रादिक देव तथा मनुष्यादिक निकट भव्यनिको धर्मोपदेशरूप अमृतपान कराय जन्मजरामरनका संतापकूं निराकरण करता तिष्टै। यातैं भगवान आप्तकूं परमेष्टी कहिये है। अर जो कर्मनिकी आधीनतातैं इन्द्रियनके काम भोगादि विषयनिमैं तथा बिनाशीक संपदारूप राज्यसंपदामैं लोनभये स्त्रीनके आधीन भये विषयांकी आताप सहित तिष्टै तिनिके परमेष्ठीपणा नहीं संभवै है। बहुर जो परंज्योति है जाका परं कहिये आवरणरहित ज्योतिः कहिये अतीन्द्रिय अनंतज्ञानमैं लोकअलोकवर्ती समस्त पदार्थ अपने त्रिकालवर्ती अनंत गुण परत्यायनिकरि सहित युगपति प्रतिबिंबित होय रहे हैं॥ सो भगवान परंज्योतिस्वरूप आप्त हैं॥ अन्य जे इन्द्रियजनितज्ञानकरि सहित अल्प क्षेत्रवर्ती मानस्थूल पदार्थनिकूं अनुक्रमकरि जानै ताकूं परंज्योति कैसैं कहा जाय। बहुरि जाके मोहनीकर्मके नाशतैं समस्त परवस्तुमैं रागद्वेषका अभावतैं बांछारहित परम बीतरागता प्रगट भई बस्तुका सत्यार्थस्वरूप जानै तदि कौनमैं राग करै कौनमैं द्वेष करै? जैसा बस्तुका स्वभाव है तैसा रागद्वेषरहित जानै ऐसा बिराग नामसहित अर्हंत ही, आप्त है॥ जो कामी विषयनिमैं आशक्त गीत नृत्य बादित्रनिमैं आशक्त जगतको स्त्रीनकूं राजी करनेमैं बैरीनकूं मार लोकनिमैं अपणां शूरपणा प्रगट करनेमैं बांछासहित होय तिसके बिरागपणा नहीं संभवै है। बहुरि जाके कामक्रोधमानमायालोभादिकभाव मल नष्ट भया अर ज्ञानाबरणादिक कर्ममल नष्ट भया अर मूत्र, पुरीष, पसेव, बात, पित्तादिक शरीरमल नष्ट होय निगोदरहित परम औदारिक छायारहित कांतियुक्त क्षुधा, तृषा, रोग, निद्रा, भय बिस्मयादिक रहित शरीरमैं तिष्टै सो आप्त भगवान अरहंत हो बिमल हैं। अन्य जे काम क्रोधादिमलसहित ते बिमल नहीं हैं। बहुरि जिनके कछु करना नहीं रह्या जो शुद्ध अनंत ज्ञानादिमय अपना स्वरूपकूं प्राप्त होय कृतकृत्य व्याधिउपाधिरहित भया सो भगवान आप्त ही कृती हैं। अन्य जे जन्ममरणादि सहित चक्र त्रिशूल गदादिक आयुध अर कनककामनीमैं आशक्त भोजनपानकाम भोगादिककी लालसा सहित शत्रुनिके मारनेकी आकुलता सहित हैं ते कृती नहीं हैं॥ बहुरि जो इंद्रियादिक परकी सहायरहित युगपत समस्त द्रव्यगुण-

पर्यायनिकूं क्रम रहित प्रत्यक्ष जानै सो भगवान आप्त ही सर्वज्ञ हैं ॥ अन्य इन्द्रियाधीन ज्ञानकरि सहित सो सर्वज्ञ नहीं हैं ॥ बहुरि जाका जीव द्रव्यकी अपेक्षा तथा ज्ञान दर्शन सुख वीर्यकी अपेक्षा आदि मध्य अन्त नहीं तातैं अनादिमध्यांत है । अथवा भगवान आप्त अनादि कालतैं हैं अर अन्तको प्राप्त नहीं होयगा तातैं अनादिमध्यांत है ॥ अर जिनके मतमैं आप्तके जन्म मरण तथा जीवका नवीन प्रगट होना तथा जीवके ज्ञानादि गुण नवीन प्रगट होना मानै है तिनके अनादिमध्यान्तपणा नहीं वनै है । बहुरि जिनके बचनकी अर कायकी वृत्ति समस्त जीवनके हितके अर्थि ही है सो भगवान आप्त सार्व कहिये है । अन्य जे काम क्रोध संग्रामादिक हिंसाप्रधान समस्त पापनिकरि अपना परका अहितमें प्रवर्तन करै हैं करावै हैं तिनके सार्व ऐसा नाम हू नहीं है ॥ ऐसे अष्टविशेषणसहित सार्थक नामनिकरि शास्ता जो आप्त जाका असाधारणस्वरूप कह्या ॥ शास्तीति शास्ता इस निरुक्तिका ऐसा अर्थ है । जो शिष्य जे निकट भव्य तिनै हितरूप शास्ति कहिये शिक्षा करै सो शास्ता कहिये । अब कहैं हैं जो शास्ता कहिये आप्त सत्पुरुषनिकूं स्वर्गमुक्तिके प्राप्तकरनेवाली शिक्षा करता आपके कुछ विख्यातता तथा लाभ तथा पूजादिक फलकूं बांछा नाहीं करै है ॥ ऐसा दिखावै है ॥

अनात्मार्थं विना रागैः शास्ता शास्ति सतोहितं ॥ ध्वनन् शिल्पिकरस्पर्शान्मुरज किमपेक्षते ॥ ८ ॥

अर्थ—शास्ता जो धर्मोपदेशरूप शिक्षा करनेवाला अरहंत आप्त सो अनात्मार्थं कहिये अपना ख्याति लाभ पूजादिक प्रयोजन बिना तथा शिष्यनिमैं रागभाव बिना सत्पुरुष जे निकट भव्य तिननै हितरूप शिक्षा करै हैं । जैसे शिल्पी जो बादित्र बजावनेवाला ताका हस्तका स्पर्शमात्रतैं नाना शब्द करता जो मृदंग, सो किंचित हू अपेक्षा नहीं करै है । भावार्थ—संसारीजन लोकमैं जितना कार्य करैं हैं । तितना अपना अभिमान लोभ यश प्रशंसादिकके अर्थि करै हैं अर भगवान अरहंत आप्त अपना प्रयोजन बिना इच्छा बिना ही जगतके जीवनिकूं हितरूप शिक्षा करैं हैं ॥ जैसैं मेघ प्रयोजन बिना ही लोकनिका पुन्य उदयका निमित्ततैं पुण्यदेशनिमैं गमन करै अर गर्जना करै अर प्रचुर जलकी वरषा करै है ॥ तैसैं भगवान

आप्तहू लोकनके पुन्यके निमित्ततैं पुन्य देशनमैं बिहार करै ॥ अर धर्म रूप अमृतकी बरषा करता उपदेश करै है। जातैं सत्पुरुषनकी चेष्टा जो आचरण सो परका उपकारके अर्थ ही है ॥ तथा जैसैं कल्पवृक्षादिक वृक्ष तथा धान्यादिक तथा आम्रादिक वृक्ष परजीवनका उपकारके अर्थ ही फलै है। पर्वतादिक सुवर्ण रत्नादिकननै तथा प्रचुर जलनै अनेक वृक्षादिकननै इच्छा बिना ही जगतका उपकारके अर्थ धारण करै है। तथा समुद्रहू रत्नादिकननै तथा गौ दुग्धनै परके उपकारके अर्थही धारण करै है। तथा दातार परके उपकार निमित्त धनकूं धारण करै है। तैसैं ही सत्पुरुष बचननै परोपकारके अर्थ ही इच्छा बिना धारण करै है। बहुत कहनेकर कहा जेते उपकारक पदार्थ हैं तितने इच्छा बिना ही लोकनके पुन्यके प्रभावतैं प्रगटैं हैं तैसैं ही भगवान आप्त इच्छा बिना ही लोकनका परमोपकारके निमित्त धर्मरूप हितोपदेशक करैं हैं ॥ ऐसैं आप्तका स्वरूप तो च्यार श्लोकनिमैं कहा ॥ अब एक श्लोकमैं सत्यार्थ आगमका लक्षन कहैं हैं ॥

आप्तोपज्ञमनुल्लंघ्यमदृष्टेष्टविरोधकं ॥ तत्त्वोपदेशकृत्सार्वं शास्त्रं कापथघट्टनं ॥ ९ ॥

अर्थ,—शास्त्र ताकूं कहिये है जो सर्वज्ञ वीतरागका कह्या होय अर किसी वादी प्रतिवादी करि उलंघन नहीं किया जाय। अर दृष्ट जो प्रत्यक्ष अर इष्ट जो अनुमान तिनकरि जामें विरोध नहीं आवै। अर तत्त्व कहिये जैसा बस्तुका रूप होय तैसा उपदेश करनेवाला होय अर सर्व जीवनिका हितरूप होय अर कुमार्ग जो मिथ्यामार्ग ताकूं निराकरण करै। ऐसैं छह विशेषण सहित शास्त्रका स्वरूप वर्णन किया ॥९॥

इहां ऐसा भाव जानना जो कालके निमित्तकरि मिथ्यामारगी बहुत पैदा भये हैं तिननै अपना अभिमान विषय कषाय पुष्ट करनेकूं अनेक खोटे शास्त्र रचि जगतकूं सत्यार्थ धर्मतैं भ्रष्ट किये हैं। जेते मत संसारमें प्रवर्तैं हैं तितने समस्त शास्त्रनतैंही प्रवर्तैं हैं ॥ शास्त्र बिना कोऊ मत है ही नाहीं ॥ ब्राह्मणादिक तो वेद स्मृति पुराण तिनमें हिंसाकी प्रधानताकरि अश्वमेध नरमेध गजमेधादिक यज्ञ अर जीवनका शिकार समस्त जलचारी थलचारीनकी हिंसा करनेमैं धर्म कहैं हैं ॥ तथा देवतानिके अर पित्र व्यंतरादिकनिकूं तृप्तताके अर्थि मांस पिंडका देना ही धर्म बतावै हैं ॥ अर भवानी भैरवादिक देव भैंसा बकरा इत्यादिककूं मार चढ़ावे भक्षण

किये ही प्रसन्न होय हैं ॥ तथा देवता मांस आहारी ही हैं॥ राजनका धर्म शिकार ही है इत्यादिक शास्त्रनके बचनतैंही प्रवर्त्तै है तथा हरिहर ब्राह्मादिक भगवान हैं परमेश्वर हैं ऐसे कहकरिकै हरोकूं तो निरंतर ग्वालनकी स्त्रीनिमैं आशक्त होय बांसुरी वजावना नाचना तथा गोवरधन अहीरकूं मार स्त्रीका हरना अनेक न्याय अन्याय लीला करना सो सब शास्त्रनिमैं लिखी ही जगत माने है तथा हर जो शिव ताके अर्द्धअंगमैं नारीका धसना अर भस्म लगावना, अनेक हत्या तथा सरापनै प्राप्ति होना त्रिशूलादिक आयुध रखना फिर लोकका संहार करना ए समस्त शास्त्रनिमैं लिखनेतैं ही जगतके लोक निश्चय करैं हैं ॥ तथा शिवका लिंग पार्वतीकी योनिमैं तिष्टतेकूं निरंतर जल सींचना आक धतूरा चढ़ावना, इत्यादिक समस्त शास्त्रनिमैं लिखनैतैं ही जगतमैं अनेक मनुष्य ऐसी प्रवृतिकूं ही धर्म जान सेवन करैं हैं.॥ तथा ब्रह्माकूं समस्त सृष्टिका कर्ता अर पितामह कहैं हैं तिस ब्रह्माकूं अति कामी होय अपनी पुत्रीसूं विषय करि भ्रष्ट हुआ हू कहैं हैं ॥ उर्वसी नाम अपछरामैं मोहित होय अपने चार हजार वर्षके तपके फलतैं चार मुख धारणकरि उर्वसीकूं अवलोकन करि तपतैं भ्रष्ट भया । अर उर्वसीका सरापकूं प्राप्त भया सो समस्त उनके शास्त्रनमैं ही लिखा है ॥ तथा जगतकी रचना करनेवाला अर पालना करनेवाला भगवान नारायण कच्छ मच्छ सूर सिंहादिक अनेक अवतार धारण करि दानवांका संहार करना तथा हनूमानकूं बांदरा गणेशकूं हस्तीरूप अर मूसापरि चढ्या । अर लाडूके (मोदकके) भक्षणमैं अतिरागी सो समस्त शास्त्रहीमैं लिखे हैं ॥ तथा जीव मारनेमैं जीव मार देवतानिकूं तृप्ति करनेमैं तलाव कूप वा बावड़ी खुदावनेमैं बड़ा धर्म होना शास्त्रहीमैं लिख्या है ॥ तथा स्वेतांबर अनेक कल्पित सूत्र रचे हैं । तिनका भ्रष्टाचार समस्त शास्त्रनतैं हो प्रवर्तै है॥ तथा कलिकालके भेषधारी कुलदेव्यांकी पूजा क्षेत्रपालादि व्यंतरांकी आराधना तथा पद्मावती चक्रेश्वरी इत्यादिक देवीनकी पूजा तथा अनेक मिथ्याप्ररूपणातर्पणादिक लिख दिये हैं ॥ तथा अन्य भील म्लेच्छ मुसलमानादिक समस्तके शास्त्र हैं ॥ शास्त्रां बिना मिथ्या कलपना कैसैं प्रवर्तै ? तातैं जगतमैं शास्त्र बहुत हैं शास्त्रनिके बलतैंही अनेक पाखंड भेष मिथ्या धर्म प्रवर्तै हैं । तातैं परीक्षा प्रधानी होय परीक्षा कर शास्त्रकूं ग्रहण करना पूर्वोक्त छह विशे-

षणकरि सहित ही आगम है ॥ प्रथम तो सर्वज्ञ बीतरागका कह्या होय जो सर्वज्ञ बिना इंद्रियजनित ज्ञानकरि जीव अजीव अतींद्रिय अमूर्तीक पदार्थनिकूं नहीं प्रगट कर सकैगा ॥ तथा पाप पुण्यादिक अदृष्ट पदार्थनिकूं तथा परमाणू इत्यादिक सूक्ष्म पदार्थनिकूं कैसैं प्ररूपण करैगा ॥ तथा स्वर्ग नर्ककी पर्यायकूं अर स्वर्ग नर्कमैं उपजे सुख दुखके कारण अनेक संबन्धनिकूं कैसैं जानैगा। तथा मेरु कुलाचलादिकनिका प्ररूपण कैसैं करैगा तथा जीवादिक द्रव्यनिके अनंत पर्याय होय गया अर अनंत होयगा। अर अनंत वस्तुके अनंत गुण अर अनंत पर्यायनिका एक समयमैं युगपतपरिणमन तिनको क्रमबर्ती इंद्रिय जनित ज्ञानका धारी कैसैं प्ररूपण करैगा ॥ तातैं सर्वज्ञ बिना इन्द्रिय जनित ज्ञानीकै आगमका कहना यथार्थ नहीं बनै है ॥ तातैं सत्यार्थ आगमका कहना सर्वज्ञकै ही बनै है। अर रागद्वेषका धारक अपना अभिमान पुष्ट करनेका इच्छुक अपनी विख्याततता करनेका इच्छुक तथा विषयांका लोभी होयगा सो सत्यार्थ नहीं कहैगा ॥ तातैं सर्वज्ञ बीतरागका कह्या हुआ ही आगमकै प्रमाणता है ॥ बहुरि जिस आगममैं बादी प्रतिबादी करि दिखाया अनेक दोष आजाय सो आगम प्रमाण नहीं। जातैं बादी प्रतिबादी जाकूं उलंघन नहीं कर सकै बाधा नहीं दे सकै ऐसा अनुलंघ्य ही आगम है। बहुरि जिस आगममैं प्रत्यक्ष अनुमानकरि बाधा नहीं आवै सो आगम है जिसमें प्रत्यक्ष प्रमाणतैं तथा अनुमान प्रमाणतैं बाधा आय जाय सो ही आगम प्रमाण नहीं है ॥ बहुर जिस आगममैं आपका अर परका निर्णय नहीं ॥ तथा हेयउपादेय कृत्यअकृत्य देवकुदेव धर्मअधर्म हितअहित ग्राह्यअग्राह्य भक्षअभक्षका निर्णय करि सत्यार्थ बस्तुका स्वरूप नहीं वृथा शब्दोंका आडंबररूप लोकरंजन असत्य कथा तथा देशकथा राजकथा स्त्रीकथा कामकथा इत्यादिक अनेक विकथा संसारमैं उरझावनेवाली हैं, अर आत्माका संसारतैं उद्धार करनेका उपायरूप कथन नहीं कहैं सो मिथ्या आगम है ॥ यातैं तत्त्वभूत जीवके हितका उपदेशरूप जामैं कथन होय सो तत्त्वोपदेश कृतही आगम है। बहुरि जो सर्व प्राणीनका हितरूप उपदेशकरनेवाला होय सो ही सार्व विशेषण सहित आगम है। जामैं प्राणीनकी हिंसाप्ररूपण करी तथा मांसभक्षण तथा जलथलआकाश-

गामी जीवनिके मारनेके उपाय तथा महा आरंभके तथा मारन उच्चाटन करनेका परधन हरनेका संग्राम करनेका सेन्याके विध्वंसकरनेका नग्र ग्राम विध्वंस करनेका परिग्रह परस्त्रीमें रचनेका उपाय बर्णन किया सो आगम सार्व कहिये समस्त प्राणीनका हित रूप नाहीं। बहुरि जो कुमार्गका निराकरण करि स्वर्गमोक्षके मार्गका उपदेश करनेवाला सो कापथ घट्टन विशेषण सहित आगम है। अर जो शृङ्गार बीर रसादिकका बर्णनकरि कुमार्गमैं प्रवर्तावनेवाला तथा जूवा मांसभक्षणादिक खोटे विसननिरूप मार्गमैं तथा संसारमैं डबोवनेके कारण जो रागी, द्वेषी, विषयी, कषाई देव तिनकी सेवा तथा पाषंडी भेषीनिकी उपासना मिथ्या धर्मरूप कुमार्ग तिनमैं प्रवर्तिरूप कथनी जामें होय सो खोटा आगम है। जो विशेष नहीं समझै तिनिकूं भी इतना समझ्या चाहिये जो वीतरागका आगम होयगा जामैं रागादिक विषय कषायका अभाव अर समस्त जीवनको दया होय तो प्रधान होय ही ऐसे एक श्लोकमैं आगमका लक्षण कह्या अब तपस्वी जो सत्यार्थ गुरु ताका स्वरूप कहै हैं॥

विषयाशावशातीतो निरारंभोऽपरिग्रहः। ज्ञानध्यानतपोरक्तस्तपस्वी स प्रशस्यते॥ १०॥

अर्थ—जो पांच इंद्रियनिका विषयनिकी जो आशा कहिये बांछा ताकरि रहित होय, अर छह कायके जीवनिका घात करनेवाला आरंभ करि रहित होय अर अन्तरङ्ग वहिरङ्ग समस्त परिग्रहकरि रहित होय अर ज्ञान ध्यान तपमें आशक्त होय ऐसे चारि विशेषण सहित जो तपस्वी कहिये गुरु सो प्रशंसा करिये है ॥१०॥

जो रसनाइन्द्रियका लंपटी होय, नाना रसनिके स्वादकी आशाके वशीभूत होय रह्या होय तथा कर्णइन्द्रिय मन इन्द्रियके वशीभूत होय अपना यश प्रशंसा सुनवाका इच्छक होय अभिमानी होय तथा नेत्रादिककरि रूप, महल मंदिर वन बाग नगर ग्राम आभरण बस्त्रादिक देखनेका इच्छक तथा कोमल शय्या कोमल ऊंचा आसन ऊपरि सोवने वैठनेका इच्छक सुगंधादिक ग्रहण करनेका इच्छक विषयांका लम्पटी होय सो औरनिकूं विषनितैं छुड़ाय वीतराग मार्गमैं नहीं प्रवर्तावे, सराग मार्गमैं लगाय संसार समुद्रमें डबोय देय है । तातैं विषयनिकी आशाकै वश नहीं होय सो ही गुरु आरांधन

करने वन्दने योग्य हैं ॥ जातैं विषयनिमैं जाकै अनुराग होय सो तो आत्मज्ञानरहित वहिरात्मा है ॥ गुरु कैसैं होय वहुरि जाकै त्रसस्थावर जीवनिका घातक आरम्भ होय तिसकै पापका भय नहीं तदि पापिष्ट कै गुरूपना कैसै सम्भवै ? वहुरि जो चौदह प्रकार अन्तरंग परिग्रह अर दस प्रकार बहिरङ्गपरिग्रहसहित होय सो गुरु कैसैं होय ? परिग्रही तो आपही संसारमैं फँस रह्या सो अन्यका उद्धार करनेवाला गुरु कैसैं होय ?

इहां मिथ्यात्व १ वेद जो स्त्री पुरुष नपुंसक २ राग ३ द्वेष ४ हास्य ५ रति ६ अरति ७ शोक ८ भय ९ जुगुप्सा १० क्रोध ११ मान १२ माया १३ लोभ १४ ऐसैं चौदह प्रकार अन्तरङ्ग परिग्रह हैं ॥ इनका स्वरूप कहिये है—यद्यपि मनुष्यादि पर्याय अर शरीर अर शरीरका नाम शरीरका रूप तथा शरीरकै आधार जाति कुल पदस्थ राज्य धन, कुटंब, जस, अपजस, उच्चनीचपना धनवानपना निर्धनपना मान्यता अमान्यता ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रादिक वर्ण स्वामी सेवक जती ग्रहस्तपना इत्यादिक वहुत प्रकार है ते पुद्गलीनकी रचनामय कर्मनिके किये हुये प्रत्यक्ष देखै है सुनै है अनुभवै है जो ये विनासीक है पुद्गलमय है मेरा स्वरूप नहीं है ऐसे आछीतरह वारंवार निर्णय करि राख्या है तोहू अनादिकालतैं मिथ्यात्वकर्मका उदयकरि ऐसा संस्कार दृढ़ होय रह्या है । जो इनका नाशतैं आपका नाश मानै है इनके घटनेतै अपना घटना, वढ़नैतैं अपना बधजाना, ऊंचापना नीचापना मान समस्त देहादिकूमय होय रहे हैं यद्यपि अपने वचनकरि इन समस्तकूं पररूप कहै हैं । हमारा नहीं पराधीन विनाशीक है तथापि अभ्यंतर इनका संयोग वियोगमें रागद्वेष सुखदुखरूप अपने आत्माका होना सो मिथ्यात्व नाम परिग्रह है ॥१॥ वहुरि स्त्री पुरुष नपुंसकादिकमैं कामसेवनरूपराग अंतरंगमैं होना सो वेदनाम परिग्रह है ॥२॥ पर द्रव्य जो देह धन स्त्री पुत्रादिकनिमैं रंजायमान होना सो राग परिग्रह है ॥३॥ परका ऐश्वर्य यौवन धन संपदा यश राज्य विभवादिकतैं वैर रखना सो द्वेष परिग्रह है ॥४॥ हास्यके परिणाम सो हास्यपरिग्रह है ॥५॥ अपना मरण होनेतैं बियोग वेदनादि होनेतैं डरपना सो भयपरिग्रह है ॥६॥ आपकै राग करनेवाला पदार्थमैं आशक्ततातैं लीन होना सो रतिपरि-

ग्रह है ॥७॥ आपकूं अनिष्ट लागै तिसमैं परिणाम नहीं लगाना सो अरतिपरिग्रह है ॥८॥ इष्टका वियोग होतैं क्लेशरूप परिणाम होना सो शोक परिग्रह है ॥९॥ घृणावान वस्तुको देख अथवा स्पर्शन चिंतवनादिक करि परिणाममैं ग्लानि उपजना सो जुगुप्सापरिग्रह है अथवा परका उदय देख सुहावै नहीं सो जुगुप्सा परिग्रह है ॥१०॥ रोषके परिणाम सो क्रोधपरिग्रह है ॥११॥ऊंच जाति कुल धन रूप ज्ञान विज्ञान ऐश्वर्य बल इनका मद करने करि आपकूं ऊंचा अर परकूं नीचा समझि कठोर परिणाम होना सो मानपरिग्रह है॥१२॥कपटलिये बक्रपरिणाम सो मायापरिग्रह है ॥१३॥ पारद्रव्यनिमैं चाहरूप परिणाम सो लोभपरिग्रह है॥१४॥ऐसैं संसार का मूल आत्माका घातक तीव्रबंधके कारण चतुर्दशप्रकार अभ्यंतर परिग्रह हैं ॥ अर क्षेत्र १ वास्तु २ हिरण्य ३ सुवर्ण ४ धन ५ धान्य ६ दासी ७ दास ८ कुप्प ९ भांड १० ऐसे दशभेदरूप बाह्यपरिग्रह हैं ॥१०॥ ऐसे अंतरंग बहिरंग चौवीस प्रकारके परिग्रह रहित निर्ग्रन्थ तिनकैं ही गुरुपना निश्चय करना ॥ संयम धारण करकै भी अंतरंग बहिरंग परिग्रह करि जिनका मन मलीन है तिनकै गुरुपना नहीं बनै है ॥ बहुरि जे निरंतर दिवस रात्रिविषै चालते हालते बैठते भोजन करते हू ज्ञानाभ्यासमैं धर्मध्यानमैं इच्छानिरोध नाम तपमैं आशक्त है ते गुरु प्रशंसायोग्य मान्य हैं। पूज्य हैं। वंद्य हैं। इन गुणनि विना अन्यकूं सम्यग्य दृष्टी वंदनादिक नहीं करै है अथवा 'ज्ञानध्यानतपोरत्न' ऐसा हू पाठ है याका अर्थ ऐसा है ज्ञान ध्यान तप ही है रत्न जाकै ऐसा गुरु होय हैं ॥ ऐसा गुरुका स्वरूप कह्या ॥ ऐसैं देव गुरु आगमका श्रद्धान है लक्षण जाका ऐसा सम्यगदर्शनताका निःसंकित नाम गुण कहनेकूं सूत्र कहैं हैं।

इदमेवेदृशमेव तत्त्व नान्यन्न चान्यथा ॥ इत्यकंपायसाम्भोवत्सन्मार्गे संशयारुचि. ॥११॥

अर्थ,—इदं कहिये यह आप्त आगम गुरुका लक्षण कह्या सो ही तत्वभूत सत्यार्थ स्वरूप हैं ईदृशं कहिये इस प्रकार ही है अन्यप्रकार नाहीं ॥ ऐसैं अकंप जो षड्गको जल तिसको ज्यों सन्मार्गमें संसयरहित जो रुचि कहिये श्रद्धान, सो निःसंकित गुण है ॥ ११ ॥

भावार्थ—संसारके जब अनेक प्रकारके गंदा चक्र त्रिशूलादिक आयुध अर स्त्रीनिमें अति आशक्त

क्रोधी मानी मायाचारी लोभी अपना कर्त्तव्य दिखावनेके इच्छाकनिकूं देव कहैं हैं अर हिंसा तथा काम क्रोधादिकनिमें धर्मका प्ररूपक आगमकूं आगम कहैं हैं, अनेक पाखंडी लोभी कामी अभिमानीकूं गुरु कहैं हैं सो कदाचित नहीं हैं। ऐसा जाके दृढ़ श्रद्धान है मूढ़निकी खोटी युक्तिकरि जाका चित्त चलायमान नहीं होय तथा खोटे देवतानिके बिकार करनेकरि मन्त्र तन्त्रादिक करि परिणाम नहीं बिकारी होय है ॥ जैसे खड्गका जल पवनकरि चलाययान नहीं होय तैसैं परिणाम सत्यार्थ देव गुरु धर्मके स्वरूपतैं मिथ्या दृष्टीनकै वचनरूप पवनकरि संसयकूं नहीं प्राप्त होंय तिसकै निशंकितगुण होय हैं॥ इहां औरहू विशेष कहिये है।

जो आत्मतत्वका स्वरूप निर्दोष आगममैं कह्या ताकूं स्वानुभवकरि आपकूं आप जान्या ॥ अर पर पुद्गलनिके संबंधकूं परसरूप जाणयां सो सम्यगदृष्टी सप्तभयकरिरहित होय निःसंकितगुणकूं प्राप्त होय है अब सप्तभयके नाम कहैं हैं॥ इसलोकका भय १ परलोकका भय २ मरणका भय ३ वेदनाभय ४ अनरक्षकभय ५ अगुप्तिभय ६ अकस्मातभय ७ तिनिमैं अपना परिग्रह कुटंबादिक तथा आजीवकादिक विगड़ जानेका भय सो इसलोकका भय है सो समस्त संसारी जीवनकैं है। बहुरि जो परलोकमैं कौन गति क्षेत्रकूं प्राप्त हूंगा ऐसा परलोकका भय है॥ बहुरि मरणहोनेका बड़ा भय जो मेरा नाश होयगा, नहीं जानिये कैसा दुःख होयगा मेरा अभाव होयगा ऐसा मरणभय है। बहुरि रोगादिक कष्ट आवनेका भय सो वेदनाभय है॥ बहुरि अपना कोऊ रक्षक नहीं जान भय करना सो अनरक्षकभय जानना॥ बहुरि अपनी वस्तुका चोरनेका भय सो अगुप्तिभय है बहुरि अकस्मात अचानक दुःख उपजनैका भय सो अकस्मातभय है॥ अपना अर परका स्वरूपकूं सम्यक जाननेवाला सम्यग्दृष्टीकै ये सप्त भय नहीं होय हैं। इस देहमैं पगके नखसे लगाय मस्तकपर्यंत यो ज्ञान है चैतन्य है सो हमारा धन है इस ज्ञानभावतैं अन्य एक परमाणु मात्रहू हमारा नहीं है। देह अर देहके संबन्धी जे स्त्री पुत्र धन धान्य राज्य विभवादिक हैं ते मोतैं भिन्न परद्रव्य हैं संयोगतैं उपजै हैं हमारा इनका कहा संबन्ध? संसारमैं ऐसे संबन्ध अनंतानंत होय वियोग भये हैं। जिनका संयोग भया है तिनका वियोग निश्चयतैं होयहीगा, जो उपजा है सो बिनसैगा, मैं ज्ञान-

स्वरूप आत्मा उपज्या नहीं, बिनसूंगा नहीं, ऐसा जाके दृढ़ निश्चय है तिसकै देह छूटनेका अर दश प्रकार परिग्रहका वियोगहोनेका भय नहीं, तदि इस लोकके भय रहित सम्यग्दृष्टी ( निशंक है। बहुरि सम्यग्दृष्टी )कै परलोकका भय हू नहीं है। जिसमें समस्त वस्तु अवलोकन करिये सो लोक है॥ जातैं हमारा लोक तो हमारा ज्ञान दर्शन है जिसमें समस्त प्रतिबिंबित होय रहे है। भावार्थ,—जो समस्त वस्तु झलकै हैं सो हमारा ज्ञानस्वभावमैं अवलोकन करूं हूं हमारे ज्ञानके बाह्य किसी वस्तुकूं मैं नहीं देखूं हूं, नहीं जाणू हूं। जो कदाचित हमारा ज्ञान है सो निद्राकरि मुद्रित होय जाय तथा रोगादिक करि मुर्छाकरि मुद्रित होय जाय तो समस्त लोक विद्यमान है तो हू अभाव रूपसा ही भया यातैं हमारा लोक तो हमारा ज्ञान ही है। हमारा ज्ञान बाह्य किसी बस्तुकूं देखने जाननेमैं आवै नहीं अर हमारे ज्ञानतैं बाह्य जो लोक है। जिसमें नाना प्रकार नर्क स्वर्ग सर्वज्ञकै प्रत्यक्ष हैं सो सब मेरा स्वभावतैं अन्य हैं पुन्यका उदय है सो देवादिक शुभगतिका देनेवाला है अर पापका उदय है सो नरकादिक अशुभगतिका देनेवाला है यातैं पाप पुण्य दोऊ ही बिनाशीक है अर स्वर्गनरकादिक पुण्य पापका फल हू बिनाशीक हैं अर मैं आत्मा ज्ञान दर्शनसुखवीर्यका अविनाशनै धारण करतौ अखंड हू अविनाशी हू मोक्षका नायक हू मेरा लोक मेरे माहीं ही है। तिसहीमैं समस्त वस्तूनकूं अवलोकन करता वसू हूँ ऐसे परलोकका भयकूं नहीं प्राप्त होता सम्य-ग्दृष्टी निस्संक है। बहुरि स्पर्शन रसना घ्राण नेत्र कर्ण ये पंच इंद्रिय अर मनवचनकायका बल अर आयु अर सासोस्वांस ये कर्मनकर रचे दस बाह्य प्राण हैं पुद्गलमय हैं। इन प्राणनका नाशकूं जगतमैं मरण कहैं हैं। अर आत्माका ज्ञान दर्शन सुख सत्तारूप भावप्राण हैं तिनका नाश कोऊ कालमैं हू नाहीं है यातैं जो उपजैगा सो मरैगा सो पुद्गल परमाणु संसयकूं प्राप्त होय इन्द्रयादिक प्राण स्वरूपकरि उपजैं हैं ये ही बिनसैं हैं मेरा स्वभावरूप दर्शन सुख सत्ता कदाचित तीन कालमैं बिनाशीक नाही हैं इंद्रियादिक प्राण पर्यायकी लार उपजैं हैं बिनसैं हैं मैं तो चैतन्य अविनाशी हूं ऐसा निश्चयका धारक सम्यग्दृष्टीकै मर-नके भयकी शंका नहीं है। बहुरि वेदना भयकूं जीत निःसंक हैं। वेदना नाम जाननेका है सो जानने-

वाला मैं जीव हूं सो अपना एक अचल ज्ञानकाही अनुभव करूं सो तो वेदना अविनाशीक है सो ज्ञानका अनुभवरूप वेदना तो शरीर विषै नाहीं है अर वेदनीय कर्मजनित सुख दुःख वेदना है सो मोहकी महिमातैं आपमैं ही दीखै है मेरा रूप नहीं है शरीरमैं है मैं इसतैं भिन्न ज्ञाता हूं ऐसे ज्ञानवेदनातैं देहकी वेदनाकूं भिन्नजानता सम्यग्दृष्टी निःसंक है। बहुरि अनरक्षकभय हू सम्यग्दृष्टीकै नहीं होय है जातैं जगतविषै जो सत्तरूप वस्तु है ताका त्रिकालहूमैं नाश नहीं है ऐसा हमारे दृढ़ निश्चय है तातैं मेरा ज्ञानस्वरूप आत्मा हू स्वयं किसीका सहाय बिना ही सत्त है। यातैं याका कोऊ रक्षा करनेवाला हू नहीं। अर कोई याका विनाश करनेवाला भी नहीं है जाका कोऊ विनाश करनेवाला होय ताका रक्षक हू कहूं देखना चाहिये यातैं सम्यग्दृष्टी अविनाशी स्वरूपकूं अनुभव करता अनरक्षाभयरहित निश्शंक है ॥ बहुरि अगुप्तिभय जो कपाटादिककी रक्षाविना हमारा धन नष्ट होय जायगा। ऐसा चोरका भय सोहू नहीं हैं। जो वस्तुका स्वरूप निजरूप अपने स्वरूपकै मांहि ही है। अपना रूप आपतैं वाहर नहीं है यातैं चैतन्य स्वरूप जो मैं आत्मा ताका चैतन्यरूप हमारे मांहि ही है। यामैं परका प्रवेश नहीं ॥ यो अनंत ज्ञान दर्शन हमारा रूप सोही हमारा अप्रमाण अविनाशी धन है यामें चोरका प्रवेश नहीं चोर हर सकै नहीं तातैं सम्यग्दृष्टी अगुप्तिभयरहित निःशंक है। बहुरि सम्यग्दृष्टीकै अकस्मात भय हू नहीं। जातैं मेरा आत्मा तो सदा काल शुद्ध है ज्ञाता है दृष्टा है अचल है अनादि है अनंत है स्वभावतैं सिद्ध है अलक्ष है। चैतन्य प्रकाशरूप सुखका स्थानक है इसमें अचानक कछु हू होना नाहीं है। ऐसैं दृढ़भावयुक्त सम्यग्दृष्टी निःशंक है। जाकै सम्यगदर्शन है ताके परिणाममें सप्त भय नहीं हैं सत्यार्थ अपना स्वरूप जाने विना सप्तभयरहित अपना आत्मा नहीं होय है। बहुरि सम्यग्दृष्टी अहिंसाकूं ही धर्म निश्चयरूप जानै है जाकै ऐसी शंका नहीं उपजै है जो यज्ञ होमादिक जीव घातके आरंभ इनमें हू धर्म कछु तो होयगा ऐसी शंकाका अभाव सो निःशंकित अंग है। अब एक श्लोक करि दूजे निःकांक्षित गुणकूं कहै है।

कर्मपरवशे सान्ते दुःखैरन्तरितोदये। पापबीजे सुखे नास्था श्रद्धानाकांक्षणास्मृता ॥१२॥

अर्थ—जो इंद्रियजनित सुखमैं सुखपनाकी आस्थारहित श्रद्धानभाव सो अनाकांक्षणा नामा सम्यक्तूका गुण भगवान कह्या है कैसाक है इंद्रियजनित सुख कर्मनिके परवसि है स्वाधीन नहीं है। पुण्य कर्मके उदयके आधीन है पुण्यकर्मका उदयके सहाय विना कोटां उपाय महान पुरुषार्थ करते हू सुखकी प्राप्ति नहीं होय है इष्टका लाभ नहीं होय है॥ बहुत अनिष्टको प्राप्त होय अर कदाचित पुण्यके उदयकरि सुखकूं प्राप्त भी होय तो सो सुख अन्तकरि सहित है पराधीन कितने काल भोगैगा? जातैं इंद्रियजनितसुख है सो अपने इष्ट बिषयकै आधीन है अर इष्टका समागम है सो बिनाशीक है॥ इंद्र धनुषवत् बिजुरीका चमत्कारवत् क्षणभंगुर है तथा पराधीन है शरीरकी निरोगताकै आधीन तथा धनकै आधीन स्त्रीकै आधीन पुत्रकै आधीन आयुकै आधीन जीवकाकै आधीन तथा क्षेत्रकै आधीन कालकै आधीन (इंद्रियनिकै आधीन) इंद्रियनके बिषयकै आधीन इत्यादिक हजारां पराधीनता करि सहित अर पतनकै सन्मुख केतेक काल भोगनेमैं आवै है तातैं इंद्रियजनित सुख है सो अवश्य अंतकरि सहित ही है॥ अर अन्तकरसहित है तोहू अखंड धारा प्रवाह रूप नहीं है बीच बीचमैं अनेक दुखनके उदय सहित है॥ कदै तो रोग आय जाय है। कदै स्त्री पुत्र मित्रका बियोग होना, कदै अपमानको होना, कदै धनकी हानि होना, कद्रै अनिष्ठनिके संयोग होना ऐसे अन्तसहित अनेक दुःखनसहित हैं। बहुरि पापका बीज है इंद्रियजनित सुखनिमैं लीन होते अपना स्वरूप भूलै ही अर महाघोर आरंभमैं तो प्रवर्तै ही अन्यायके विषय सेवन करै ही यातैं पापबंध होय ही तातैं इंद्रियजनित सुख नरक तिर्यंचादिक गतिनमैं परिभ्रमण करावनेवाला पापबंधका बीज है ऐसा पराधीन अंत सहित दुःखनिकरि व्याप्त जे इंद्रियजनित सुखतैं सम्यग्दृष्टीकूं नहीं दीखैं हैं तदि सुख आस्था रूपश्रद्धान कैसे होय? जब श्रद्धा नहीं तदि वांछा कैसे करै? भाव ऐसा जानना जो सम्यगदृष्टी है तिसकै आत्माका अनुभव होय ही अर आत्माका अनुभव भया तब आत्माका स्वभाव जो अतीन्द्रिय अनंत ज्ञान अर निराकुलता लक्षण अविनाशीक सुख तिसका अनुभव होय है॥ जातैं संसारीनकै जो इंद्रियनिकै आधीन सुख है सो तौ सुखाभास है॥ सुख नहीं है वेदनाका इलाज

है जाकै क्षुधाकी तीव्र वेदना उपजैगी सो भोजन करि सुख मानेगा तृषा उपजैगी सो शीतल जल पीया चाहैगा ॥ शीतकी वेदना व्यापैगी सो रुईका वस्त्र तथा रोमादिकका वस्त्र ओढ्या चाहैगा गरमीकी वेदना उपजैगी सो शीतल पवन चाहैगा जातैं वेदना विना इलाज कौन चाहै ? नेत्ररोग विना खपरयो नेत्रनिमैं कौन खेपै कर्णरोग विना बकराको मूत्र तथा तैलादिक कर्णमें कौन क्षेपै तथा शीतज्वरकी वेदना बिना अग्निको ताप तथा सूर्य्यको आताप आदरतैं कौन सेवन करै ? तथा वातरोग विना दुर्गन्ध तैलादिकका मर्दनादिक कौन आदरै तातैं ए संसारिक पांच इंद्रियनिके विषयनिकी तीव्र चाहरूप आताप उपजै है तदि विषयनिके भोगनेकी इच्छा उपजै है। तातैं विषय भोगना तो उपजी हुई वेदना कूं थोरे काल शांति करै है फिर अधिक अधिक वेदना उपजावै है याते इंद्रियनिके विषयनिकै भोगनेतैं उपजानेतैं उपज्या सुख है सो तो दुःख ही है बाह्यशरीर इंद्रियादिककूं ही आत्मा जाननेवाला वहिरात्मा है सो विषयनिका वेदनापूर्वक इलाजकूं सुख मानै है। सो नानना मोहकर्मजनित भ्रम है सुख तो वेदना ही नहीं उपजै ऐसा निराकुलता लक्षण है विषयनिके आधीन सुख मानना मिथ्याश्रद्धान है यातैं सम्यग्दृष्टीकूं अहमिंद्रलोकका हू सुख पराधीन आकुलतारूप विनाशीक.केवल दुःखरूप ही दीखै है तातैं सम्यग्दृष्टीकै इंद्रिय जनित सुखमें वांछा कदाचित नहीं होय है ॥ इस जन्ममैं तो धन संपदा विभवादिक नहीं चाहै है अर परलोकमैं इंद्रपना चक्रीपना इत्यादिक कदाचित हू नहीं चाहै है ए इंद्रियनके विषय तो अल्पकाल है अर आगैं याका फल असंख्यात काल नरकका दुःख तथा अनंत काल असंख्यातकाल तिर्यंचादिक गतिमैं तथा महादरिद्री महारोगी नीच कुलके धारक कुमानुषनिमें अनेक जन्म धारनकरि दुःख भोगवैहै इस जगतमें आशा अर शंका दोऊ मोहके उदय करि जीवकै निरंतर वर्तै हैं सो आशा किये कुछ प्राप्ति होय नहीं है ॥ समस्त जीव अपने नित्य ही धनकी प्राप्ति निरोगता कुटंबकी वृद्धि इंद्रियनिका बल अपनी उच्चता चाहैं हैं परंतु चाह किये कुछ होय नहीं है समस्त जीव चाह करि निरन्तर पापका बंध अर अंतरायका तीव्र बंध करैं है अर केतेक भोगाभिलाषी होय दान तप व्रत शील सयम करैं हैं परन्तु वांछा करि पुण्यका घात होय है। पुण्य

बंध तौ निर्वांछकके होय है। तथा शुभ अशुभ कर्मके दिये विषयनमैं संतोषी होय निराकुल होय विषयनमैं वांछा नहीं करै तिसके पुन्यका बंध होय है। बहुरि समस्त जीव नित उठ यह चाहैं हैं मेरे वियोग मरण हानि अपमान धनका नाश रोग वेदना मत होहु। निरन्तर इनकी शंका करै हैं बहुत भय करैं हैं तोहू मरण होय ही वियोग होय ही तथा धनहानि वलहानि अपमान रोग वेदना पूर्वकर्मबंध किये तिनकै अनुकूल होय ही। तिनकूं टालनेकूं इन्द्र जिनेंद्र मंत्र तंत्रादिक कोऊ समर्थ नहीं क्योंकि मरण होय सो आयु कर्मका नाशतैं होय। अलाभादिक अंतराय कर्मके उदयतैं होय रोग वेदनादिक असाताकर्मके उदयतैं होय है। अर कर्मकूं हरनेमैं अर देनेमैं अर पलटनेमैं कोऊ देव दानव इन्द्र जिनेंद्रादिक समर्थ हैं नहीं अपने भावनिकरि बन्ध नहीं किये कर्मनितैं अपने किये संतोष क्षमा तपश्चरणादिक भावनिकरि छुड़ावनेकूं आप ही समर्थ है अन्य नहीं ऐसैं दृढ़ निश्चयका धारक निशंक निर्वांछक सम्यग्दृष्टी ही होय है॥

इहां कोऊ प्रश्न करै है—जे सकल परिग्रहके त्यागी जे मुनीश्वर साधु तिनकै तथा त्यागी गृहस्थनिकै तो शंकारहितपना तथा वांछाका अभावपना होय सकै है परन्तु व्रतरहित गृहस्थनिकै निःशंकित निःकांक्षित कैसैं संभवै। अव्रतसम्यग्दृष्टी गृहस्थीके भोगनिकी इच्छा देखिये है। विणज व्यवहारमैं सेवा करनेमैं लाभ चाहै ही हैं अपने कुटुम्बकी वृद्धि धनकी वृद्धि वांछै ही हैं। तथा रोग की शंका कुटुम्बके वियोगकी शंका जीवके बिगड़नेकी धनके नाश होनेकी शंका निरन्तर वर्तै है॥ तदि निःशंकपना निर्वांछकपना कैसैं होय। अर निःशंकभाव अर निःकांक्षितभाव विना सम्यक्त्व कैसैं होय तातैं अव्रती गृहस्थीके सम्यक्त होना कैसैं संभवै? तिसका उत्तर ऐसा जानना॥

जो सम्यक्त होय है सो मिथ्यात्व अर अनंतानुबंधी कषायका हू अभाव भया तातैं मिथ्यात्वके अभावतैं तो सत्यार्थ आत्मतत्वका अर पर तत्वका श्रद्धान प्रगट होय है अर अनन्तानुबन्धी कषायके अभावतैं विपरीतरागभावका अभाव भया तदि ज्ञान श्रद्धानकी विपरीतताका अभावतैं इसलोक परलोक मरणभय आदिक सात भय अव्रतसम्यग्दृष्टीकै नहीं हैं याहीतैं अपने आत्माकूं अखंड अविनाशी टंकोत्कीर्ण ज्ञान दर्शन स्वभाव

श्रद्धान करै है ॥ अर विपरीत जो पर वस्तुमें वांछा ताका अभावतैं समस्त इन्द्रियनके विषयनमें वांछा रहित हैं। स्वर्गलोकमें उपजे इन्द्र अहमिंद्रनिके हू विषयभोगनकूं विष समान दाह दुःखके उपजावनेवाले-जान कदाचित स्वप्नमैं हूं वांछा नहीं करै है अपना आत्माधीन निराकुलता लक्षण अविनाशी ज्ञानानंद हीकूं सुख मानै है अर अपने देहकूं धनसम्पदादिकनिकूं कर्मजनित पराधीन विनाशीक दुःखरूप जान ये हमारा हैं ऐसा विपरीत झूंठा संकल्प हू नहीं करै है। यातैं अनन्तानुबन्धी कषायके उदयजनित विपरीत झूठा भय शंका पर वस्तुमें वांछा अव्रत सम्यग्दृष्टीके कदाचित् नहीं है। परन्तु अप्रत्याख्यानावरणकषाय प्रत्याख्यानावरणकषाय संज्वलनकषाय तथा हास्य रति अरति शोक भय जुगुप्सा स्त्रीवेद पुरुषवेद नपुन्सक वेद इन इकवीस कषायके तीव्र उदयतैं उपज्या राग भावका प्रभावकरि इन्द्रियनिका आतापका मारया त्यागतैं परिणाम कापै हैं। यद्यपि विषयनिकूं दुःख रूप जानै है। तथापि वर्तमानकालकी वेदना सहनेकूं समर्थ नहीं। जैसैं रोगी कड़वी औषधिकूं कदाचित पीवना भला नहीं जानै है तथापि वेदनाका मारया कड़वी औषधिकूं बड़ा आदरतैं पीवै है ॥ परन्तु अन्तरंगमें औषधि पीवना महा बुरा जानै है ॥ जो ऐसा दिन कब आवैगा जिस दिन औषधिका नाम भी ग्रहण नहीं करूंगा तैसैं अव्रतिसम्यग्दृष्टी हू भोगनिकूं भला कदाचित नहीं जानै है परन्तु तिन विना निर्वाह होता दीखै नाहीं। परिणामनिकी दृढ़ता दीखै नहीं ॥ कषायनिका प्रबल धक्का लग रह्या है इन्द्रियनिकी आताप सही जाय नहीं यातैं वेदनाका मारया वांछै है। संहनन कच्चो, कोऊ सहाई दीखै नहीं। कषायनिका उदयकरि शक्ति नष्ट हो रही है परवस पड़ा है। तथा जैसैं वन्दीगृहमें पड़्या पुरुष वन्दीगृहमैं अति विरक्त है तथापि पराधीन पड़्या महा दुःखका देनेवाला वन्दीगृहकूं ही लीपै है धोवै है भुवारै है। तैसैं सम्यग्दृष्टी हू वन्दीगृह समान देहकूं जानता क्षुधा तृषादिक वेदना सहनेकूं असमर्थ हुआ देहकूं पोषै है देहकूं अपना नहीं जानै है। वर्त्तमानकालकी वेदनाका ही याके भय है। अर वेदना मेटने मात्र ही अव्रत, सम्यग्दृष्टीके वांछा है ॥ कर्महीके उदयके जालमैं फँस्या है। निकला चाहै है। तथापि रागद्वेष अभिमान अप्रत्याख्यानका संबन्ध ही ऐसा है सो त्याग व्रतादिक चाहै है तो हू त्यागी

नहीं होने देहैं। उदयकी दशा बड़ी बलवान है संसारी जीव अनादितैं कर्मके उदयके जालमैंतैं निकल नहीं सकै है॥ देहका संयोग बनि रह्या तितनै देहका निर्वाहके अर्थि जीवका भोजन वस्त्रकूं वांछै ही है॥ तथा अप्रत्याख्यान कषायका उदयकरि लोकमैं अपनी नीचीप्रवृत्तिका अभावरूप उच्चप्रवृत्ति चाहै है। धन संपदा जीविका बिगड़नेका भय करै ही है॥ अपयश तिरस्कार होनेका भय करै ही है॥ इन्द्रियनिका संताप सहनेकूं असमर्थपनातैं विषयनिकूं वांछै ही है जातैं कषाय घटी नहीं, राग घट्यो नहीं। तातैं आगानैं बहुत दुःख उपजतो दीखै ताकूं टाल्या चाहै ही है॥ तथापि राज्यभोगसंपदानिकूं सुखकारो जान वांछा नहीं करै है ऐसे निःकांक्षित अंगका लक्षण कह्या अब निर्विचिकित्सा नाम तीसरा अंगका लक्षण कहनेकूं सूत्र कहैं हैं॥ ॥ ॥

स्वभावतोऽशुचौ काये रत्नत्रयपवित्रिते। निर्जुगुप्सागुणप्रीतिर्मता निर्विचिकित्सिता॥ १३॥

अर्थ—यो मनुष्य पर्यायको काय है सो स्वभावहीतैं असुचि है यामैं कोऊ उत्तम मनुष्यके रत्नत्रय प्रगट हो जाय तो असुचि भी काय पवित्र है॥ यातैं व्रतीनिका देह रोगादिकतैं मलिन हू देह देख इसमें जुगुप्सा जो ग्लानि ताका अभाव अर रत्नत्रयमें प्रीति सो निर्विचिकित्सा नाम अंग है॥१३॥

भावार्थ—ये देह तो सप्तधातुमय तथा मलमूत्रादिकमय है॥ स्वभावहीतैं असुचि हैं यो देह तो रत्नत्रय-स्वरूप प्रकट होनैंतैं पवित्र है तातैं रोग सहित तथा वृद्धता तथा तपश्चरण करि क्षीणता मलीनता देख ग्लानि जाकै नहीं होय अर गुणनिमैं प्रीति होय ताकै निर्विचिकित्सा नाम अंग है। यहां ऐसा विशेष जानना। जो सम्यग्दृष्टी है सो वस्तुका सत्यार्थ स्वरूप जानै है यातैं पुद्गलके नानास्वभाव जानि मल मूत्र रुधिर मांस राध सहित तथा दरिद्र रोगादिक सहित मनुष्य तिर्यंचनिका शरीरादिककी मलीनता दुर्गंधतादिक देखिकरि तथा श्रवणकरि ग्लानि नहीं करै है॥ जो कर्मनिके उदयकरि अनेक क्षुधा तृषा रोग दरिद्रादिककरि दुःखित होना तथा पराधीन बंदीगृहादिकमैं पड़ना नीच कुलादिकमैं उत्पन्न होना तथा नीचकर्मकरि मलीन भोजन करना महा मलीन वस्त्र धारणा खोटा रूप अंग उपंगादिकनकूं पावना होय है सम्यग्दृष्टी यामैं

ग्लानि करि अपने मनकूं नहीं बिगाड़ै है तथा कषायांके आधीन होय निंद्य आचरण करते देख अपने परिणाम नहीं बिगाड़ै हैं ताकै निर्विचिकित्सा अंग होय है तथा मलीन क्षेत्र मलीन ग्राम तथा ग्रहादिकनिमैं मलीनता दरिद्रता देख ग्लानि नहीं करै तथा अन्धकार वर्षा गीष्म शीत वेदना ताकरि सहित कालकूं देख ग्लानि नहीं करै। बहुरि आपकै दरिद्रता तथा रोग आवता तथा वियोग होता तथा अशुभकर्मके उदयकूं आवता परिणामकूं मलीन नहीं करै॥ जो मैं कर्मबन्ध किया ताके फलकूं मैं हो भोगूंगा॥ अशुभ कर्मका फल तो ऐसा ही होय है। ऐसे जानि अपना परिमाणकूं मलीन नहीं करै॥ तिस पुरुषके निर्विचिकित्सा अंग होय है जिसके निर्विचिकित्सा अंग है तिसहीके दया है तिसहीके वैयावृत्य होय, तिसहीकै वात्सल्य स्थिति करणादिक गुण प्रगट होय है ऐसे सम्यक्तका निर्विचिकित्सा नामा तीसरा अंग कह्या। अब अमूढ़ दृष्टि नामा सम्यक्तका चौथा अंग कहनेकूं सूत्र कहै हैं॥

कापथे पथि दु.खाना कापथस्थेप्यसम्मतिः॥ असंपृक्तिरनुत्कीर्तिरमूढा दृष्टिरुच्यते॥ १४॥

अर्थ—नरक तिर्यञ्च कुमानुषादि तिनका घोर दुःखनिका मार्ग ऐसा जो मिथ्यामार्ग तिस विषैं। अर कुमार्गी जो मिथ्यामार्गमैं तिष्टनेवाले पुरुषनिविषै जाकै मनकरि प्रशंसा नहीं, वचनकरि स्तवन नहीं तथा कायकरि प्रशंसा जो अंगुलिनिके नखादिकनिका मिलाप नहीं सराहनां सो अमूढ़ दृष्टी है॥ १४॥

इहां संसारी जीव मिथ्यात्वके प्रभावतैं रागीद्वेषी देवनिका पूजन प्रभावना देख प्रशंसा करैं है। देवीनिकै जीवनकी विराधनाकी प्रशंसा करैं हैं तथा दशप्रकारके कुदानकूं भला जानैं हैं तथा यज्ञ होमादिककूं तथा खोटे मंत्र तंत्र मारण उच्चाटनादिक कर्मनिकी प्रशंसा करैं हैं। तथा कुँआ बावड़ी तालाब खुदावनेकी प्रशंसा करैं हैं तथा कंदमूल शाक पत्रादिक भक्षण करनेवालेनिकूं उच्च जान प्रशंसा करैं हैं तथा पंचाग्निकरि तपनेवाला बाघम्बर ओढ़नेवाले भस्म लगावनेवाले अर्द्धबाहू रहनेवालेनिकूं महान उच्च जाने हैं तथा गेरु करि रंगे वस्त्र तथा रक्त वस्त्र तथा श्वेत वस्त्रादिकनिकूं धारण करते कुलींगीनिके मार्गनिकी प्रशंसा करैं हैं तथा खोटे तीर्थनिको अर खोटे रागी द्वेषी मोही वक्र परिणामी शस्त्रधारी देवनिकी पूज्य जानैं हैं तथा

जोगनी यक्षणी क्षेत्रपालादिकनिकूं धनके दातार मानै हैं ॥ तथा रोगादिक मेटनेवाले मानैं हैं तथा यक्ष क्षेत्रपाल पद्मावती चक्रेश्वरी इत्यादिकनिकूं जिनशासनके रक्षक मान पूजैं हैं तथा देवतानिके कवलाहार मान तेल लापसी पूवा बड़ा अतर पुष्पमाला इत्यादिककरि देवतानिकूं राजी करना मानै हैं। तथा देवतनिकूं रिसबत देनाकरि यह बिचारैं हैं जो मेरा अमुक कार्य सिद्ध होजाय तो तेरे छत्र चढ़ाऊं, तेरे मंदिर बनवाऊं तेरे रुपया चढ़ाऊं तथा जीव मार चढ़ाऊं तथा सवामणका चूरमाकरि चढ़ाऊं। तथा बालकनिके जीवनेके अर्थि चोटी जडूला उतराऊं इत्यादिक अनेक बोली बोलना सो समस्त तीव्र मिथ्यात्वका उदयका प्रभाव है ॥ जहां जीवनिकी हिंसा तहां महा घोर पाप है जातैं देवतानिके निमित्त गुरुनिके निमित्त हिंसा संसार समुद्रमें डबोवनेवाली है। कोऊ देवादिकनिके भयतैं तथा लोभतैं तथा लज्जातैं हिंसाके आरंभमैं कदाचित् मत प्रवर्ती दयावानकी तो देव रक्षा ही करै जो किसीका अपराध नहीं करै वैर नहीं करै ताकी विराधना देव हू नहीं कर सकैं हैं ॥ रागी द्वेषी शस्त्रधारी देव हैं ते तो आप ही दुखी हैं भयभीत हैं असमर्थ हैं समर्थ होय अर भयरहित होय सो शस्त्र कैसैं धारण करै? अर क्षुधावान होय सो ही भोजनादिककरि पूजा चाहै तातैं खोटे मार्ग जे संसारमैं पतनके कारण ऐसे मिथ्यादृष्टीनिके त्याग व्रत तप उपवास भक्ति दानादिक अर इनके धारण करनेवालेनिकी मन वच काय करि प्रशंसा नहीं करैं अमूढदृष्टि नामा सम्यक्तका अंग है ॥जातैं जाकै देव कुदेवका तथा धर्मकुधर्मका तथा गुरु कुगुरुका तथा पाप पुण्यका तथा भक्ष अभक्षका तथा त्याज्यात्याज्यका आराध्यअनाराध्यका तथा कार्यअकार्यका तथा शास्त्रकुशास्त्रका दानकुदानका पात्रअपात्रका तथा देनेयोग्य नहीं ग्रहणकरनेयोग्यका तथा युक्तिकुयुक्तिका तथा कहनेयोग्य नहीं कहने योग्यका अनेकान्तरूप सर्वज्ञ वीतरागका परमागमतैं आछीतरह जानि निर्णयकरि मूढतारहित होय पक्षपात छोड़ करकै व्यवहार परमार्थमैं बिरोधरहित होय तैसैं श्रद्धान करना सो अमूढदृष्टिनामा चौथा अंग है ॥ अब उपगूहन नामा सम्यक्तका पांचमां अंग प्ररूपण करनेकूं सूत्र कहैं हैं ॥

स्वयं शुद्धस्य मार्गस्य बालाशक्तजनाश्रयां ॥ वाच्यतां यत्प्रमार्जन्ति तद्वदंत्युपगूहनं ॥१५॥

अर्थ—यो जिनेंद्रभगवानका उपदेश्या हुआ रत्नत्रयरूप मार्ग है सो स्वयमेव शुद्ध है निर्दोष है इस रत्नत्रयमार्गके कोऊ अज्ञानीजनका आश्रय तथा कोऊ अशक्तजनकरि निंद्यता प्रगट भई होय ताहि जो दूर करै शुद्ध निर्दोष करै तानै उपगूहन कहिये है ॥ १५॥

इहां ऐसा जानना जो यो जिनेंद्र भगवानका उपदेश्य हुआ दशलक्षणरूपधर्म तथा रत्नत्रयधर्म है सो अनादिनिधन है ॥ जगतके जीवनिका उपकारकरनेवाला है ॥ समस्तप्रकार निर्दोष है कोऊ ही कार्यातैं अकल्याण नहीं होय है अर कोऊकरि बाधा नहीं दी जाय है। ऐसा धर्म विषै कोऊ अज्ञानीके चूकनेके निमित्ततैं तथा कोऊ शक्तिहीनके निमित्ततैं जो धर्मकी निंदा होती होय ताकूं दूर करै आछादन करै सो उपगूहन नामा अंग है ॥ भावार्थ—अन्य मिथ्या दृष्टी लोक सुनैंगे तो धर्मकी निन्दा करैंगे तथा एक अज्ञानीकी चूक सुनि समस्त धर्मात्मानिकूं दूषण लगावैंगे। कहैंगे इस जिन धर्ममैं तो जेते ये ज्ञानी तपस्वी त्यागी ब्रती हैं ते समस्त पाखंडी हैं गैरमार्गी हैं। एकका दोष देख समस्त धर्म अर समस्त धर्मात्मा दूषित होय जायंगे तातैं धर्मात्मापुरुष होय सो धर्मात्मामैं कोऊ दोष हू लग जाय तो धर्मसूं प्रीतिकरि धर्ममें परके निमित्ततैं आगया दोषकूं ढांकै ही ॥ जैसैं माताको पुत्रमैं ऐसी प्रीति है जो पुत्र कदाचित अन्याय खोट हू करै तो ताके खोटकूं आछादन करै ही तैसैं धर्मात्मापुरुषकी साधर्मीतैं तथा धर्मतैं ऐसी प्रीति है जो कर्मके प्रबलउदय करि कोऊ साधर्मीकै अज्ञानतातैं तथा अशक्ततातैं ब्रतमैं संयममैं शीलमैं दोष आजाय विगड़ि जाय तो आपका सामर्थप्रमाण तो आछादन ही करैं। इहां विशेष ऐसा और हू जानना जो सम्यग्दृष्टीका स्वभाव ही ऐसा है जो कोऊ ही जीवका दोष प्रगट नहीं करै अपवाद नहीं करै अर अपना उच्चकर्तव्य प्रकाश नहीं करै अपनी प्रशंसा परकी निन्दा नहीं करै है सम्यग्दृष्टीकै पर जीवनके दोष हू देख ऐसा विचार उपजै है जो इस संसारमैं जीवनिकै अनादि कालका कर्मनिके बशीभूतपना है यातैं जहां मोहनीयका उदय तथा ज्ञानावरण दर्शनावरणका उदय प्रवर्तै है तहां दोषमैं प्रवर्तनेका अर चूकनेका कहा आश्चर्य है॥ जीवनिकूं काम क्रोध लोभा-

दिक निरन्तर मारैं हैं भुलावैं हैं भ्रष्ट करै हैं हम हू संसारमैं रागद्वेषमोहके वशीभूत होय कौन २ अनर्थ नहीं किये हैं। अब कोऊ जिनेंद्रका परमागमका शरणका प्रसादतैं किंचित दोषकी अर गुणकी पहिचान भई है तो हू अनादिकालका कषायनिका संस्कारकरि अनेक दोषनिमें प्राप्त होय रह्या हूं तातैं अन्यजीवनिके कर्मके उदयकी पराधीनतातैं भये दोषनिकूं देख करुणा ही करनी॥ संसारी जीव विषयनिके अर कषायनिके बशीभूत होय पराधीन हैं ए कषाय अर विषय ज्ञानकूं बिगाड़ि नाना नाच नचावैं हैं॥ अर आपा भुलावैं हैं॥ तातैं अज्ञानीजनकृत दोषकूं देख आप संक्लेश नहीं करैं हैं॥ क्षेत्रपालादिकके निमित्ततैं जो भावी है। ताहि टालनेकूं कोऊ समर्थ नहीं है ऐसे उपगूहन नामा सम्यक्तका पंचम अङ्ग कह्या॥ अब स्थितिकरणनामा सम्यक्तका छठा अङ्ग कहनेकूं सूत्र कहैं हैं।

दर्शनाच्चरणाद्वापि चलतां धर्मवत्सलैः॥ प्रत्यवस्थापनं प्राज्ञैः स्थितीकरणमुच्यते॥ १६॥

अर्थ—कोऊ पुरुष सम्यकदर्शनकरि सहित दृढ़ श्रद्धानी था तथा चारित्रधारक व्रतसंयम सहित था फिर कोऊ प्रबल कषायके उदयकरि तथा खोटीसंगतिकरि तथा रोगकी तीव्र वेदनाकरि तथा दरिद्रताकरि तथा मिथ्याउपदेशकरि तथा मिथ्यादृष्टीनिके मंत्रतंत्रादिक चमत्कार देख सत्यार्थ श्रद्धान आचरणतैं चलायमान होता होय तिनिकूं चलते जानि जिनको धर्ममैं वातसल्यता है ऐसे धर्मात्मा प्रवीण पुरुष ताकूं उपदेशादिककरि फिर सत्यार्थ श्रद्धानमैं चरित्रमैं स्थापन करै सो स्थितिकरण कहिए है॥ यहां ऐसा जानना कोऊ धर्मात्मा अव्रत सम्यग्दृष्टी तथा व्रती पुरुषका परिणाम रोगकी वेदनाकरि तथा दरिद्रताकरि वियोगकरि धर्मतैं चिग जाय तो धर्ममैं प्रीतिके धारक प्रवीण पुरुष ताकूं धर्मतैं छूटता जानि ताकूं उपदेशकरि धर्ममैं स्थिर करै ताकै स्थीतिकरण अंग है। भो धर्मके इच्छक धर्मानुरागी होय मनुष्य भव अर यामैं उत्तम कुल इंद्रियनकी शक्ति धर्मका लाभ ये बहुत दुर्लभ मिल्या है। अर छूटे पाछै इनका पावनां अनंतकालमैं हू कठिन है तातैं कर्मका उदयकरि प्राप्त भया रोग वियोग दरिद्रादिक दुःख तिनकरि कायर होय आर्त्तपरिणामी होना योग्य नहीं॥ दुखित भये कर्मका अधिक बंध होयगा॥ कायर होय भोगोगे तो

कर्म नहीं छाड़ैगा ॥ अर धीरवीरपनाकरि भोगोगे तो हू नहीं छाड़ैगा ॥ तातैं दुर्गतिका कारण जो कायरता ताकूं धिक्कार होऊ ॥ अब साहस धारण करो मनुष्य जन्मका फल तो धीरता तथा संतोष व्रतसहित धर्मका सेवन कर आत्माका उद्धार करना है ॥ अर जो मनुष्यका देह है सो रोगनिका घर है ॥ इसमैं रोग उपजनेका कहा आश्चर्य है यामैं तो धर्म ही सरण है अर रोग तो उपजैहीगा अर संयोग है सो वियोगकरि सहित ही है कौन कौन पुरुषनिमैं दुःख नहीं आये तातैं अपना साहस धारण करि एक धर्मका ही अवलंबन करो ॥ बहुरि जे जे वस्तु उपजै हैं तेते समस्त बिनाशसहित हैं ॥ जो देह ही का वियोग होयगा तो अन्य अपने कर्मके आधीन उपजैं मरैं तिनका हर्षविषाद करना वृथा बंधका कारण है ॥ बहुरि इस दुःखमकालके मनुष्य हैं ते अल्पआयु अल्पबुद्धिलिये ही उपजै हैं इस कालमैं कषायकी आधीनता अर विषयनिकी गृद्धिता बुद्धिकी मंदता रोगकी अधिकता ईर्षाकी बाहुल्यता दरिद्रतालिये ही बहुधा उपजे है तातैं सम्यक ज्ञानकूं प्राप्त होय कर्मके जीतनेकूं उद्यम करना योग्य है ॥ कायर मति होहु ऐसे उपदेश देय परिणामकूं स्थिर करै तथा रोगी होय तो औषधि भोजन पथ्यादिक करि उपकार करै ॥ द्वादशभावनाका स्मरण करावैं शरीरकी टहल मलमूत्रादिक विक्रतिका दूर करनेकरि जैसैं तैसैं परिणामनिकूं धर्म विषै दृढ़ करना सो स्थितिकरण है ॥ तथा कोऊकै रोगकी अधिकताकरि ज्ञान चलायमान हो जाय व्रत भंग करने लगि जाय अकालमैं भोजन पानादिक जाचवा लगि जाय त्याग करी वस्तुकूं चाहने लगि जाय ताकूं दयाल होय ऐसा मधुर उपदेशादिक करै जाकरि फिर सचेत होजाय वाकी अवज्ञा नहीं करै कर्म बलवान है बातपित्तादिककरि ज्ञानका बिगड़नेका कहा प्रमाण है ॥ सो यहां बहुत उपदेश लिखनेकरि ग्रंथ बधि जाय तातैं थोरा ही करि बहुत समझना ॥ तथा दरिद्रादिकरि पीड़ित ताकूं अपनी शक्ति प्रमाण उपदेश तथा आहार पान वस्त्र जीविका रहनेका मकान तथा पात्र तथा जैसे स्थंभन हो जाय तैसैं दान सन्मान उपायकरि स्थिर करना सो स्थितिकरण नामा सम्यक्तका छठा अंग है ॥ जो अपना आत्मा हू नीतिमार्ग छाड़ता होय तथा काम मद लोभके बस होय अन्यायका विषय अन्याय धनकी चाहरूप हो जाय तथा अयोग्य बचनमैं प्र-

वृत्ति करने लग जाय ॥ तथा अभक्त भक्षणमैं प्रवृत्ति हो जाय अभिमानके वसि हो जाय संतोषतैं चिगि जाय अनेक परिग्रहोंमैं लालसा वधि जाय कुटंबमैं अतिराग वधि जाय तथा रोगमैं कायर होय जाय आर्तध्यान हो जाय बियोगमैं शोक सहित हो जाय ॥ तथा दरिद्रतातैं दीन हो जाय उत्साहरहितता आकुलता रूप होजाय ताकूं हू अध्यात्मशास्त्रका स्वाध्याय कराय भावनाको शरण ग्रहण कराय अपना आत्माका स्वभाव अजर अमर अविनाशी एकाकी अन्य परद्रव्यका स्वभावरहित चिंतवन कराय धर्मतैं नहीं छूटने देना ॥ तथा असातादिक कर्म अंतराय कर्म तथा अन्य हू कर्मका उदयकूं आपतैं भिन्न मान कर्मका उदयतैं अपना स्वभावकूं नहीं चलनै देना सो स्थीतिकरणनामा छठा अंग है ॥ अब वात्सल्यनामा सम्यक्तका सप्तम अङ्गके कहनेकूं सूत्र कहैं हैं ॥

स्वयूथ्यान् प्रतिसद्भावसनाथापेतकैतवा। प्रतिपत्तिर्यथायोग्यं वात्सल्यमभिलप्यते ॥ १७ ॥

अर्थ—सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र रूप धर्मके धारकनिका जो यूथ सो धर्मात्माकै अपना यूथ है। रत्नत्रयके धारकनिका यूथमैं भये ऐसे मुनि अर्जिका श्रावक श्राविका तथा अव्रत सम्यग्दृष्टी तिनतैं सत्यार्थभाव सहित अर कपटरहित यथायोग्य प्रतिपत्ति कहिये उठि खड़ा होना सनमुख जाना वंदना करना गुणनिका स्तवन करना अंजलि करना आज्ञा धारण करना पूजा प्रशंसा करना उच्चस्थान वैठाय आप नीचै वैठना तथा जैसैं कोऊ दरिद्रीकै महा निधानका लाभमैं हर्ष होय तैसैं हर्षका धारना ॥ महान्प्रीतिका उपजाना अर यथा अवसरमैं आहार पान वस्त्रका उपकरणादिक करि वैयावृत करि आनंद मानना ॥ सो वात्सल्य नामा अङ्ग कहिये है ॥ १७ ॥

बहुरि यहां और विशेष जानना ॥ जाकै अहिंसा धर्ममें प्रीति होय जे हिंसारहित कार्य होय तिनकूं प्रीति सहित करैं अर हिंसाके कारणनिकूं दूर हीतैं टाल्या चाहै तथा सत्यवचनमैं सत्यवचनके धारकनिमैं अर सत्यार्थधर्मकी प्ररूपणामैं प्रीति होय तथा परका धन परकी स्त्रीनिके त्यागमैं राग होय। परधन परस्त्रीका त्यागीनमैं जाकै प्रीति होय। तिसहीकै वात्सल्य अङ्ग है। तथा दशलक्षणधर्ममैं अर धरमके धारक

साधर्मीनमैं जाकै अनुराग होय ताकै वात्सल्यअंग होय है ॥ बहुरि जाकै धर्ममैं अनुरागकरि त्यागी संजमीनमैं महान् आदरपूर्वक प्रियबचनकरि प्रवर्त्तन होय ताकै वात्सल्य होय है। यद्यपि सम्यग्दृष्टीकै अंतरंग तो अपना शुद्ध ज्ञान दर्शनमैं अनुराग है अर बाह्य उत्तम क्षमादिधर्मके धारकनिमैं तथा धर्मके आयतनमैं अनुराग है तथापि अन्य मिथ्या धर्मीनितैं द्वेष नहीं करै है। जातैं प्रबचनसार सिद्धांतमैं ऐसैं कहा है जो रागद्वेषमोह ये बंधके कारण हैं तिनिमैं मोह जो मिथ्यात्व अर द्वेष ये दोऊं तो अशुभभाव ही हैं एकान्तकरके संसारपरिभ्रमणका कारण पापकर्मका ही बंध करै अर रागभाव है सो शुभ अर अशुभ दोयप्रकार है तिनिमैं अरिहंतादिक पंचपरमेष्ठीनिमैं तथा दशलक्षणधर्ममैं तथा स्याद्वादरूप जिनेंद्रका आगममें तथा बीतरागका प्रतिबिंब वीतरागप्रतिबिंबके आयतनमैं अनुरागरूप शुभराग है सो स्वर्गादिकका साधक पुण्यबंधका करनेवाला तथा परंपरायकरि मोक्षका कारण है ॥ अर विषयनिमैं अनुराग तथा कषायनिमैं अनुराग तथा मिथ्या धर्ममें मिथ्यादृष्टीनमैं परिग्रहादिक पंच पापनिमैं अनुराग है सो अर मोहभाव अर द्वेषभाव है ते नरकनिगोदादिकनिमैं अनंतकाल परिभ्रमणके कारण हैं ॥ यातैं सम्यग्दृष्टी है सो अन्य अज्ञानी मिथ्यादृष्टी पातकीनिमैं हू द्वेषभाव नहीं करै है ॥ जातैं समस्त जीव मिथ्यात्वकर्मके तथा ज्ञानावरणादिककर्मके बशीभूत हो आपा भूल रहे हैं अज्ञान हैं इनमैं वैर करि कहा साध्य है? इनकूं तो इनकी विपरीतबुद्धि ही मार राखै है यातैं सम्यग्दृष्टी दयाभावहो करै हैं रागद्वेष रहित मध्यस्थ रहै है जातैं सम्यग्दृष्टी है सो तो बस्तुका स्वभावनै सत्यार्थ जानकै इंद्रियादिक जीवनिमैं करुणाभावरूप प्रीति ही करै है तथा समस्त मनुष्यनिमे वैररहित होय किसी जीवकी विराधना अपमान हानि नहीं बांछै है तथा मिथ्यादृष्टीनिकरि किये जे देवनिके मन्दिर स्थान मठ तिनतैं बैर करि बिगाड़ना नहीं चाहै हैं तथा सराग देवनिकी मूर्ति तथा देवीनकी क्रूरमूर्त्ति तथा योगिनी यक्ष भैरवादिक व्यंतरनिकी स्थापना स्थान इनसूं कदाचित वैर नहीं करै जातैं ये देवनकी मूर्ति अर इनके स्थान तो अनेक जीवनिके अभिप्रायके आधीन पूजनेकूं आराधनेकूं बनाये हैं। अन्यका अभिप्रायकूं अन्यप्रकार करनेकूं कौन समर्थ है ॥ समस्त ही मनुष्य अपना

अपना धर्म मान देवतानिका स्थापन करै हैं जाकूं जैसा सम्यक् तथा मिथ्या उपदेश मिल्या तैसैं प्रवर्त्तन करै हैं ॥ तातैं वस्तुका यथावत्स्वरूपकूं जानता समस्तमैं साम्यभाव करता सम्यग्दृष्टी किसी मनुष्य ही कूं रैकारो तूकारो नहीं देहै तो अन्यके धर्म अन्यके देवनिकूं अन्यके मन्दिरनिकूं गाली अवज्ञाके वचन कैसैं कहै, नहीं कहै। समस्त जीवनिमैं मैत्रीभाव धारता सम्यग्दृष्टी है सो अचेतन जे स्थान पाषाण ग्रहादिक अन्यके विश्रामस्थानतैं स्वप्नामैं हू वैर नहीं करै है ॥ अर अन्य जे दुष्ट वलवान् होयकरि अपना धन धरती आजीविका तथा कुटंवका घात अर आपका मरण करै तिसनैं हू वैर नहीं करै ऐसा विचार करै जो हमारा पूर्वोपार्जित कर्मके उदय करि मोतैं बैर विचार वलवान शत्रु उपज्या है सो अव मैं जेता सामर्थ्य है तिस प्रमाण साम्य जो प्रियवचन दाम जो धन देना तथा अपना वलप्रमाण दंड देना इनमैं परस्पर भेद करना इत्यादिक उपायनितैं रोकि अपनी रक्षा करूं अर जो नहीं रुकै तो आप विचारै जो मेरे पूर्व उपजाये कर्मनिका उदय आया सो याकूं वलवान उपजाया ॥ मोकूं निर्वल उपजाय मोकूं दंड दिया है। सो मैं कौनसूं बैर करूं ? मेरा वैरी कर्म निर्जर जाय तैसैं साम्यभाव धारणकरि कर्मका विजय करूं अन्य सूं वैर करि वृथा कर्मवन्ध नहीं करूं। सम्यग्दृष्टीकै वात्सल्य समस्तमैं है कोऊसै वैर नहीं करै है ॥ वहुरि कोऊ दुष्ट जीव धर्मसूं वैर करि मन्दिर प्रतिमाका विघ्न कर्या चाहै तो ताकूं आपका सामर्थसूं रोक्या जाय तो रोकै अर प्रवल होय तो विचार करै जो कालनिमित्तसूं धर्मका घातक प्रगट होय अपना वैर साधै है सो प्रवल कैसैं रुकै ? हमारे उत्तम क्षमादिक तथा सम्यग्ज्ञान श्रद्धानादिक कोऊ घातनेकूं समर्थ नहीं है अर मन्दिरादिक दुष्ट बिगाड़ैं ही है अर धर्मात्मा फिर करावैं ही है कालके निमित्तसूं अनेक दुष्ट उपजैं हैं उनके रोकनेको कौन समर्थ है भावी वलवान है आछी होनी होय तो दुष्ट मिथ्या दृष्टी प्रवल वलके धारक नहीं उपजते तातैं वीतरागता ही हमारे परम शरण होहू ऐसैं वात्सल्य नामा सम्यक्तका सप्तम अंग वर्णन किया ॥ अब प्रभावना नामा सम्यक्तका अष्टमअंग कहनेकूं सूत्र कहैं हैं ॥

अज्ञानतिमिरव्याप्तिमपाकृत्य यथायथं। जिनशासनमाहात्म्यप्रकाशः स्यात्प्रभावना ॥ १८ ॥

अर्थ—संसारी जीवनिके हृदयविषै अज्ञानरूप अन्धकारकी व्याप्ति होय रही है॥ ताहि सत्यार्थ स्वरूपके प्रकाशतैं दूरिकरिकैं जिनेंद्रके शासनका महात्म्यका प्रकाश करना सो प्रभावना नामा सम्यक्तका आठवां अङ्ग है॥ १८॥

इहां ऐसा विशेष है अनादिकालका संसारी जीव सर्वज्ञ वीतरागका प्रकाश्य धर्मकूं नहीं जानै है याहीतैं ऐसा हू ज्ञान नहीं है जो मैं कौन हूं मेरा स्वरूप कैसा है मैं यहां जन्म नहीं लिया तदि कैसा था कौन था इहां मोकूं कौन उपजाया अब रात्रि दिन व्यतीत होय आयु विनसै है मेरे कहा करनेयोग्य है मेरा हित कहा है आराधनेयोग्य कौन है जीवनकै नानाप्रकार नानाजीवनिके सुख दुःख कैसैं है तथा देवका गुरुका धर्मका स्वरूप कैसा है तथा मरणका जीवनका कहा स्वरूप है तथा भक्ष्य अभक्ष्यका स्वरूप कहा है इस पर्यायमें मेरे कौन कार्य करनेयोग्य है मेरा कौन है मैं कौन हूं इत्यादि विचाररहित मोहकर्मकृत अन्धकारकरि आच्छादित होय रहे हैं॥ तिनका अज्ञानरूप अन्धकारकूं स्याद्वादरूप परमागमका प्रकाशतैं दूरकरि स्वरूप पररूपका प्रकाश करना सो प्रभावनानामा अंग है बहुरि सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्र करि आत्माका प्रभाव प्रगट करना सो प्रभावना है तथा दानकरि तपकरि शील संयम निर्लोभता विनय प्रियवचन जिनेंद्रपूजन गुणप्रकाशनकरि जिनधर्मका प्रभाव प्रगट करना सो प्रभावना है। जिनका उत्तम परिणामकरि उत्तमदानकूं तथा घोरतप निर्वांछकताकूं देखि करि मिथ्यादृष्टी हू प्रशंसा करै अहो जैनीनकै वात्सल्यता सहित बड़ा दान है यह निर्वांछक ऐसा तप जैनीनतैं ही बनै अहो जैनीनका बड़ा व्रत है जो प्राणजाते हू व्रतभंग जिनके नाहीं। अहो जैनीनकै बड़ा अहिंसाव्रत जो प्राण जाते हू अपने संकल्पतैं जीव हिंसा नहीं करैं हैं तथा जिनकै असत्यका त्याग तथा चोरीका त्याग परस्त्रीका त्याग परिग्रहका परिमाण करि समस्त अनीततैं पराङ्मुख है अर अभक्ष्य नहीं खावना प्रमाण सहित दिवसमैं देखि सोधि भोजन करना इन जिन धर्मीनिका बड़ा धर्म है। जिनकै नहीं बिनयवंतपना है अर प्रियहित मधुरवचन ही करि समस्तकै आनंद उपजावै है। तथा अतिशयकारी जिनकै बड़ी क्षमा है। अपना इष्ट देवमैं अतिशयकारी

भक्ति है आगमकी आज्ञाका बड़ा दृढ़ श्रद्धानी जिनकै बड़ी प्रबल विद्या जिनकै महान् उज्ज्वल आचरण है ॥ बैरभाव रहित हुआ समस्त जीवनिमैं जिनकै मैत्रीभाव है ऐसा आश्चर्यरूप धर्म इनतैं ही बनै ऐसी प्रशंसा जिनधर्मकी जिनके निमित्ततैं मिथ्या धर्मीनिमैं हू प्रगट होय तिनकरि प्रभावना होय है ॥ जो अनीतिका धन कदाचित नहीं वांछै हैं अर अन्याय विषय भोग स्वप्नामैं हू अंगीकार नहीं करैं हैं जो हमारा निमित्तसूं जिनधर्मकी निंदा हो जाय तो हमारा जन्म दोऊं लोकका नष्ट करनेवाला भया तातैं सम्यग्दृष्टी अपना तथा कुलका तथा धर्मका तथा साधर्मीनिका तथा दानशीलतपव्रतका अपवाद नहीं होय तैसैं प्रवर्तन करै है। धर्मके दूषण लगवाका बड़ा भय करै है। धर्मकी प्रशंसा उच्चता उज्जलता ही प्रगट होय तैसैं प्रवर्तन करै। तिसके प्रभावना नामा अष्टम अङ्ग होय है। ऐसैं सम्यक्त्वके अष्ट अङ्गनिका संक्षेपतैं वर्णन किया इन अष्ट अङ्गनिका समुदाय सो ही सम्यग्दर्शन है अंगनितैं अंगी भिन्न नहीं अंगनिका समूहकी एकता सो ही अङ्गी है तैसैं ही निशंकितादिक गुणनिका समुदाय सो ही सम्यकृदर्शन होय है अर इन अंगनिका प्रतिपक्षी जे शंका कांक्षा ग्लानि मूढ़ता अनुपगूहन अस्थीतिकरण अवात्सल्य अप्रभावना इत्यादिक करि धर्मकूं दूषित नहीं करै हैं ॥ अब निःशंकितादिक अङ्गनिका पालनेमैं जे आगममैं प्रसिद्ध भये तिनका नाम दोय श्लोकन मैं कहै हैं,—

तावदञ्जन चौरोऽङ्के ततोऽनन्तमतिः स्मृता। उद्दायनस्तृतीयेऽपि तुरीये रेवती मता ॥ १९ ॥
ततो जिनेन्द्रभक्तोऽन्यो वारिषेणस्ततः परः। विष्णुश्च वज्रनामा च शेषयोर्लक्ष्यतां गतौ ॥ २० ॥

अर्थ—तावत् अंगे कहिये प्रथम अंग जो निःशंकित अंग तिसविषै अंजनचोर आगम विषै कह्या है। द्वितीय अंगविषै अनंतमतीनामा सेठकी पुत्री कही। तृतीय अंगविषैं उद्दायननामा राजा अर चतुर्थ अङ्गविषै रेवतीनामा राणी कही। पंचम अङ्ग विषै जिनेन्द्रभक्ति नामा श्रेष्ठी हुआ छटा अंगविषै वारिषेण नामा राजपुत्र हुआ। बहुरि शेष जे सप्तम अर अष्टम अंग विषै विष्णुकुमार मुनि अर वज्रकुमार मुनि दृष्टान्तपनानैं प्राप्त होते भये। ऐसैं सम्यक्तके अष्टअंगनिमैं प्रसिद्ध भये तिनकी कथा प्रथमानुयोगके आगममैं

प्रसिद्ध है तहां तैं जाननी ॥ अब अंगहीन सम्यक्तकै संसारपरपाटीके छेदनेमें असमर्थता दिखावनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

नाङ्गहीनमलं छेत्तुं दर्शनं जन्मसन्ततिं । न हि मन्त्रोऽक्षरन्यूनो निहंति विषवेदनां ॥ २१ ॥

अर्थ—अंगकरिहीन जो सम्यग्दर्शन सो संसारकी परिपाटीके छेदनेकूं समर्थ नहीं होय है ॥ जैसे अक्षर करि हीन जो मंत्र सो विषकी वेदनाकूं नहीं हनै है। जातैं जाकै परिणाममें निःशंकितादिक अंग प्रगट होय है सोही सम्यग्दृष्टी संसार परिभ्रमणकूं हनै है। अर जाकै एक भी अंग नहीं भया होय ताकै संसारका अभाव नहीं होय है। अक्षर करि हीन मंत्र जैसैं सर्पादिकनिका विष दूर नहीं करै ॥ अब तीन प्रकार मूढ़ता है ते सम्यक्तके घातक हैं यातें तीन प्रकार मूढ़ताका स्वरूप जानि सम्यग्दर्शनको शुद्ध करना योग्य है ॥ अब तिनमैंतैं लोकमूढ़ताके स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहैं है।

आपगासागरस्नानमुच्चय: सिकताश्मनां ॥ गिरिपातोऽग्निपातश्च लोकमूढं निगद्यते ॥ २२ ॥

अर्थ—जो लौकिक जे मिथ्याधर्मी जन तिनकी रीति देख जे नदीस्नानमें धर्म मानै हैं समुद्रके स्नानमें धर्म मानैं हैं बालू रेतका पुञ्ज करै हैं तथा पाषाणका ढेर करनेमें धर्म मानै हैं धर्ममान पर्वततैं पड़ना अग्नि विषै पड़ना ताहि लोकमूढ़ कहिये है। सो लोकमूढ़ताकरिरहित सम्यग्दर्शन होय है ॥ २२ ॥

इहां मिथ्यात्वके उदयतैं देशकालके भेदतैं लौकिक अज्ञानी परमार्थरहित जन अनेकप्रकारकी प्रवृतिकरि अपने धर्म होना पवित्रता होना लाभ होना वियोग नहीं होना दीर्घजीवना मानै है सो लोकमूढ़ताकूं प्रगट अज्ञानता जान याका त्याग करि सम्यक्तभावकी विशुद्धिता करो। इहां केते एकांती जन हैं ते स्नान करि आपकूं पवित्र मानै हैं सो ज्ञानीनिकूं आगमज्ञानपूर्वक विचार करना जो आत्मा है सो तो अमूर्तीक है तिसपर्यंत तो स्नान पहुंचै नहीं अर काय है सो महा अपवित्र है जाका संगमतैं पवित्र हू चंदन गंगाजल पुष्पादिक स्पर्शने योग्य नहीं रहै अर जो हाड़ मांस रुधिर चाम इत्यादिक अशुचि सामिग्रीकरि-रच्या अर जो दुर्गंध विष्टा मूत्रादिक अशुचि द्रव्यनिकरि भरया अर जाके मुखके द्वार होय तो महा अशुचि कफ अर लाल अर दंतमल जिव्हामल निरंतर वहै है अर नेत्रनिमें सचिक्कण दुर्गंध गीड स्रवै है। अर कर्णनिमैंतैं

वहै है अर अधोद्वार मल मूत्र दुर्गन्ध
कर्णमल स्रवै है अर नासिकातैं निरन्तर दुर्गंध घ्रणां योग्य सिणक वहै है अर समस्त शरीरके रोम रोमतैं महा दुर्गन्ध मलीन पसेव स्रवै है ऐसैं जाके आंव कृमनिको निरन्तर वहै है अर समस्त शरीरके रोम रोमतैं महा दुर्गन्ध मलीन पसेव स्रवै है ऐसैं जाके
जैसैं मलकरि बनाया घड़ा आंव कृमनिको निरन्तर वहै है ऐसा शरीर जलका स्नानतैं कैसैं शुद्ध मानिये ? जैसैं मलकरि बनाया घड़ा
नवद्वार निरन्तर मल स्रवै है ऐसा शरीर जलका स्नानतैं कैसैं शुद्ध मानिये ? सो जल करिकैं धोवनेतैं कैसैं शुद्ध होय। इसलोक-
अर मलकरि भरचा अर समस्त तरफ मल हीकूं वहै। सो जल करिकैं धोवनेतैं कैसैं शुद्ध होय। इस शरीरके संगमतैं ही अप-
मैं जो कोऊ बस्तु तथा भूम्यादिक क्षेत्र अशुचि अपवित्र कहिये है ते समस्त इस शरीरके संगमतैं ही अप-
वित्र होय है। कोऊ चाम पड़नेतैं कोऊ केश पड़नेतैं कोऊ उच्छिष्ट ( ओठ ) पड़नेतैं तथा रुधिर मांस हाड़
वसा ( चरवी ) राध मल मूत्र थूक लाल कफ नाशिकामल इनका स्पर्श होनेतैं ही तथा स्नानके जलके छांटे-
निके कुरलेनिके स्पर्शतैं ही अपवित्र अशुचि देखिये है सुनिये है यातैं आछीतरह विचारो जो देहका संग
बिना कोऊ अशुचि है ही नहीं। ऐसा देह जलके स्नानतैं कैसैं शुद्ध होय। अर जो जलके स्नानादिकतैं
शुद्ध होय गया तो फिर कोऊकै स्नानका छांटा लग जायगा तो अपवित्र हुआ ही मानैगा। तथा गंगा पुष्क-
रादिकमैं हजारवार स्नान कुरला करि फिर कोऊ बस्तु उपर कुरला करैगा तो महा अपवित्रता मानैगा।
जल करि तो देहके उपर मैल लाग्या होय तथा वस्त्रादिक मलीन होय तो धोवनेतैं उज्जल होय है अर दे-
हकूं उज्जल पवित्र नहीं करै है। जैसैं कोयलाकूं धोवो तो ज्यों धोवो त्यों कालिमाही निकलै है। तैसैं ज्यों
ज्यों देहकूं धोइये त्यों त्यों महा मलीनता प्रगट होय है। तातैं स्नानतैं पवित्र होना मानना सो तीव्र मि-
थ्यात्व है। अर और हू विचारो जगतमैं जल बराबर कोऊ अपवित्र ही नहीं है। जामैं निरन्तर मींडका,
काछिवा, सर्प उंदरा बिसमरा मांखी मांछरादिक अनेक जीव नित्य मरै है। अर जामैं चम हाड़ समस्त
गल जाय है अर अनेक त्रसनिका घात जामैं होय है ऐसा महा निंद्य अपवित्र जल तिसके स्पर्श होनेतैं
कैसैं पवित्र होय ? अर गंगादिक नदीनमैं कोट्यां मनुष्यनिके मल मूत्र रुधिर मांस कर्दम तथा मनुष्यनि-
तिर्यंचनिके मृतक कलेवर घुल रहे तिस गंगाका जल कैसैं पवित्र करै ? जलका सूतक कदेही मिटै नहीं
बाहिर लाग्या मैल दूर होजाय यातैं मनकी ग्लानि मिट जाय अर यातैं पवित्र होना तथा स्नानमैं धर्म

माननां सो तो मिथ्या दर्शन है जो गंगाका जलतैं ही पवित्र हो जाय वा स्नान करि धर्म होजाय वा स्नान करि मुक्ति होजाय तो कीर धीवरनिके पवित्रता ठहरै वा मुक्ति होय अन्य दान पूजादिक समस्त निष्फल हुआ। मिथ्यात्वका प्रभावतैं विपरीत श्रद्धानी होय रहे हैं। जे अष्टप्रकार लौकिक सुचि कही हैं ते व्यवहार आचार कुलाचारके उज्जल करनेकूं तो समर्थ है परन्तु देहकूं पवित्र नहीं करै है। ए तो मनमैं ग्लानि आप मान राखी है। सो संकलपतैं दूरि करले है जो मैं स्नान कर लिया है सो ही श्रीराजवार्तिकजीमैं अशुचिभावनामैं कही हैं ॥

सुचि पना है सो दोयप्रकार है एक लौकिक एक लोकोत्तर ताहि अलौकिक हू कहियेहे ॥ तहां जिसके कर्ममल कलंक दूर भया ऐसा आत्माका अपने स्वभावविषै स्थित रहना सो लोकोत्तर शुचिपना है अर तिसका साधारन सम्यग्दर्शन है अर सम्यग्दर्शनादिकका धारक साधु है अर तिनका आधार निर्वाण भूम्यादिक हू सम्यग्दर्शनादिकका उपाय तातैं शुचिनामके योग्य है। अर लौकिक सौचपना है सो अष्टप्रकार है॥ कालशौच १ अग्नि शौच २ भस्मशौच ३ मृतकाशौच ४ गोमयशौच ५ जलशौच ६ पवनशौच ७ ज्ञानशौच ८ ये अष्ट शौच शरीरके पवित्र करनेकूं समर्थ नहीं हैं। लौकिक जनोंके व्यवहार छोड़े बड़ा अनर्थ होजाय हीन आचारकी ग्लानि जाती रहै तो समस्त एक होय जाय तदि परमार्थ हू नष्ट होय जाय यातें अनादिकालतैं बाह्य सुचिताकी मानता देखि मनकी ग्लानि मेट लेहे जातैं केती बस्तु तो जगतमैं काल व्यतीत भये शुद्ध मानिये है जैसैं रजस्वला स्त्री तीन रात्रि गये शुद्ध मानिये है परंतु शरीर तो कोऊ कालमैं हू शुद्ध नहीं होय है। बहुरि केतेक उच्छिष्ट धातुके पात्र भस्मकरि माजनेतैं शुद्ध मानिये है परंतु शरीर तो भस्मकरि शुद्ध नहीं होय है। बहुरि केतेक सुद्रादिकके धातुमय पात्र अग्निके संस्कार करि शुद्ध मानिये हैं परंतु शरीर तो अगनिका संसर्ग करे हू शुद्ध नहीं होय है। बहुरि मल मूत्रादिकका स्पर्श मृत्तिकातैं धोये शुद्ध मानिये हैं परंतु शरीर तो मृतिकातैं शुद्ध नहीं होय है। बहुरि गोमयकरि भूम्यादिककूं लीप सुद्ध मानै हैं परन्तु गोमयतैं शरीर तो शुद्ध नहीं होय है। बहुरि कर्दमादिक

लगनेतैं तथा अस्पर्शका स्पर्श होतें जलकरि धोवनेतैं तथा जलकरि स्नान करनेतैं शौच मानिये हैं परन्तु शरीर तो स्नानतैं शुद्ध नहीं होय है। स्नान किये पाछे हू चंदन पुष्पादिक पवित्र वस्तु हू शरीरके स्पर्श मात्रतैं मलीन होजाय हैं। बहुरि केतेक भूमि पाषाण कपाट काष्टादिक पवन करि ही शुद्ध मानिये हैं परंतु शरीर तो पवन करि शुचि नहीं होय है। बहुरि केतेक वस्तु अपने ज्ञानमैं जाका अशुद्धका संकल्प नहीं होनेतैं शुद्ध मानिये हैं परन्तु शरीरमैं तो शुद्धपनाका संकल्प हू नहीं उपजै है तातैं शरीर तो अष्टप्रकारका लौकिक शौच करि शुद्ध नहीं होय है। लौकिकशौच परिणामकी ग्लानि मेटै है व्यवहारमैं उज्जलता जानि कुलकी उच्चता जनावै है परंतु शरीरकूं तो शुचि नहीं करै है देह तो सर्वप्रकार अशुचही है। यामैं जो आत्मा परका धन अर परकी स्त्रीमें अभिलाषरहित होय अर जीव मात्रकी विराधनारहित होजाय तो हाड़मांसका मलीन देह हू देवनकरि पूज्य महा पवित्र होय जाय। इस देहकूं पवित्र करनेका और कारण ही नहीं है सो ही श्रीपद्मनन्दी नाम दिगम्बर बीतराग मुनि कह्या है सो जानहु ॥ जिसकी निकटतातैं सुगन्ध पुष्पमाला चंदनादि पवित्र द्रव्य हू स्पर्शताकूं प्राप्त होय है अर विष्टा मूत्रादिककरि भरया रुधिर रस हाड़ चामादिक करि रच्या अर महा सूगला अर महा दुर्गन्ध महा मलीन समस्त अशुचिका रहनेको एक संकेत गृह ऐसा मनुष्यका शरीर जलकरि स्नान करनेतैं कैसैं शुद्ध होय ॥ बहुरि आत्मा तो अपने स्वभावतैं ही अत्यंत पवित्र है अर अमूर्तीकताकूं जल पहुंचै ही नहीं ऐसा पवित्रमैं स्नान वृथा है अर यो काय है सो अशुचि ही है सो स्नानकरि कदाचित सूचिताकूं प्राप्त नहीं होय है यातैं स्नानके दोऊ प्रकारकरि विफलता भई अर जे फिर हू स्नान करैं हैं तिनकै पृथ्वी काय जल कायादिक अर अनेक त्रसनिका घात होनेतैं पाप बन्धके अर्थ अर रागभावके अर्थ ही है। भावार्थ—ग्रहस्तकै स्नान विना सरै नहीं परन्तु अज्ञानी गृहस्थ स्नानमैं धर्म मानै है अर स्नानतैं पवित्रता मानै है ऐसी मिथ्या बुद्धि लग रही है सो याका स्वरूपको समझै तो याकूं धर्म तो नहीं मानै अर यातै पवित्रपना नहीं मानै। यद्यपि गृहस्थकै स्नान बिना व्यवहार समस्त दूषित होय जाय अर व्यवहार दूषित होय जाय तदि परमार्थकी शुद्धता

नहीं कर सकै परंतु याकूं राग बधावनेतैं अर हिंसा होनेतैं पापरूप तो श्रद्धा न करै। बहुरि और शिक्षा जाननी चित्तके विषैपूर्वकालको कोटिनभवकरि संचय किया कर्मरूप रज ताका संबंध करि उपज्या जो मिथ्यात्वादिक मलताका नाश करनेवाला जो आपापरका भेद जाननेरूप बिवेक सो ही सत्पुरुषनकै मुख्य स्नान है सत्पुरुषनकै तो मिथ्यात्वमलका नाशकरनेवाला एक बिवेक ही स्नान है अर अन्य जो जल करि स्नान है सो तो जीवनिका समूहका घात करनेतैं पापका करने वाला है यातैं धर्म नहीं होय है। ताही कारणतैं स्वभाव ही तैं अशुचि जो काय तिस विषै पवित्रता नहीं है बहुरि कहै हैं,—भो ज्ञानी जन हो आपकी सुद्धिताके अर्थि परमात्मा नामा तीर्थमैं सदा काल स्नान करो वृथा खेद करि व्याकुल भये गंगादिक तीर्थन प्रति क्यों दौड़ो हो कैसाक है परमात्मानामातीर्थ सम्यग्ज्ञानरूप ही जामैं निर्मल जल है अर दैदीप्यमान सम्यग्दर्शन रूपजामैं लहरि हैं अर अविनाशी अनंत सुख करि शीतल है अर समस्त पापनिके नाश करनेवाला है ऐसा परमात्मस्वरूपतीर्थमैं लीन होहू। बहुरि जगतके पापिष्ट मिथ्यादृष्टी जननैं निर्मल तत्वनिका निश्चयरूप द्रह नहीं देख्या है अर कठै हू ज्ञानरूप रत्नाकर समुद्रहू नहीं देख्या अर समता नामा अति शुद्ध नदी हू नहीं देखा तिस कारणकरि पापके हरनेवाले सत्य तीर्थनिकूं छाड़ कर मूर्ख लोक हैं ते तीर्थ जिनकूं कहै अर संसारके तारने वाले नहीं ऐसे गंगादिक नदीनिमें डूब करि हर्षित होय है।

भावार्थ—जिन मूर्खनिनै तत्वनिका निश्चयरूप द्रहकूं नहीं देख्या अर ज्ञानरूप समुद्र नहीं देख्या अर समता नाम नदी नहीं देखी ते गंगादिक तीर्थभासनिमें दौड़ता फिरै हैं जो तत्त्वनिका निश्चयरूप द्रहकूं देखता अर ज्ञानरूपसमुद्रकूं देखता अर समतानामा नदीकूं देखता तो इनमैं गरक होय मिथ्यात्व कषायरूप मलकरिरहित होय आपकूं उज्जल कर लेता। बहुरि इस भुवनमैं ऐसा कोऊ तीर्थ नहीं है तथा ऐसा जल हू नहीं तथा और हू कोऊ द्रव्य नहीं है जिस करि यो समस्त अशुचि मनुष्यका शरीर साक्षात शुद्ध हो जाय। अर यह शरीर कैसा कहै आधिव्याधि जरा मरणादिक कर निरंतर व्याप्त अर निरंतर ताप करनेवाला ऐसा है। जातैं सत्पुरुषनिके याका नाम हूं सहनेयोग्य नहीं है बहुरि समस्त तीर्थनिके जलतैं नित्यस्नान

करिये अर चंदनकर्पूरादिकका बिलेपन करिये तो हू शुद्ध नहीं होय सुगंध नहीं होय रचा करते हू विनाशके मार्गमैं ही तिष्टै है जो नदीमैं स्नानतैं ही शुद्ध होजाय तो कोट्यां मच्छी मच्छ काछिबा कीर धीवरादिक शुद्ध होजाय तातैं यह लोकमूढ़ता त्यागनेयोग्य है।

अब इहां इतना विशेष और जानना जो स्नान करनेतैं पवित्र नहीं होय अर धर्म हू नहीं होय परंतु गृहस्थचारामैं मुनीश्वरनिकी ज्यौं स्नानका त्याग योग्य नहीं। क्योंकि जो पापिष्ट जीवनसूं स्पर्श होजाय अर स्नान नहीं करै तो अपना मनमैं पापकी ग्लानि जाती रहै। तदि तिनकी संगति स्पर्शन खान पान यथेच्छ करने लगि जाय तब व्यवहारधर्मका लोप होजाय यातैं जिनधर्मीनका आचार हैं ते व्यवहारके विरोधी नहीं। जो अति पापतैं आजीविकाके करनेवाला चांडाल कसाई चमार शिकारी भील धीवरादिक अति पापिष्ट तथा मुसलमान म्लेच्छनिको शरीर ऊपर छाया पड़ते हू महा मलीनता मानिये है इनका स्पर्श होनेतैं स्नान कैसैं नहीं करै? स्नान हू करै अर परमात्माका स्मरण हू करै। अर याकै नज़ीक बैठनेतैं बुद्धि मलीन होय है अर जो मुसलमान वेश्यादिकनसूं कान लगाय मुखके सनमुख अपना मुखकरि वचनालाप करैं हैं तिनको बुद्धि उत्तम धर्मादिक कार्यतैं विमुख होय विपरीति प्रवर्त्तन करै है तथा जीवनिके घातक कूकरा मार्जारादिक पशु अर काकादिक पक्षी इत्यादिक दुष्ट तिर्यञ्चनिका भोजनके स्थाननिमैं आगमन होजाय तथा भोजनका स्पर्शन होजाय तो भोजनका त्याग करना उचित है तो स्पर्शन होतैं स्नान बिना भोजन स्वाध्यायादिक करनेमैं ही नाचारपना होय है। पापतैं ग्लानि जातो रहै कुलका भेद नहीं ठहरै। अर स्त्रीकरि सहित संगम करै तहां अनेक जीवनिकी हिंसा अर महा अशुचि अङ्गनिका संघट्टन अर रुधिर वीर्यादिकनिका बाह्य स्पर्शनादिक अर महा निंद्य रागका उपजना है याका त्याग नहीं वन सकै तो इस पापकी ग्लानि करि आपको अशुद्धिमान स्नान तो करैं। जो मैं निंद्य कर्म किया है तातैं बाह्य शुद्धिता वास्तै स्नान किये विना पुस्तकनिका तथा जिनमंदिरके उपकरणनिका उत्तम वस्तुका कैसैं स्पर्शन करूं। यद्यपि देहमैं रुधिरमांस हाड़ चाम केश मल मूत्र भरे हैं परन्तु रुधिर राध चाम हाड़ मांस मल मूत्रादिकनिका बाह्य स्पर्श होजाय

तो अवश्य धोवना उचित है जातैं केश चामादिक शरीर तैं दूर हुआ पाछै स्पर्शनेयोग्य नहीं है। अर इनका हस्तादिककरि स्पर्श होजाय तो शीघ्र ही हस्त धोवना उचित है इनकी ग्लानि नहीं करै तो नीच चमार चांडाल कसाईनितैं एकता होने तैं आचरणमैं भेद नहीं रहै तदि समस्त जाति व्यवहारके लोप होनेतैं उत्तम कुलका अर नीचकुलका आचार समान होजाय तदि व्यवहारआचारके बिगड़नेतैं धर्मका मार्ग भ्रष्ट होजाय। निंद्यकर्मकरने की लज्जा छूटि जाय तदि कुलके मार्ग बिगाड़नेतैं महा पापका बन्ध होय है। परमार्थशौच तो व्यवहारकी शौचता करि ही शुद्ध होय है। जाका भोजनमैं पानमैं स्पर्शनमैं संगतिमैं प्रवृतिमैं मलीनता होजाय तदि परमार्थ धर्म मलीन हो ही जाय जिनधर्मी हैं सो चांडाल भील म्लेच्छ मुसल्मानादिककी शरीरकी छाया हीतैं मलीनता मानै है अर धोबी कलाल लुहार खाती सुनार भड़भूजा इत्यादिकनका स्पर्शनकूं हिंसा कर्म करनेतैं दूर ही छाड़िये हैं। मुनीश्वर तो नीच जातिके मनुष्यका स्पर्श होतैं दंड स्नान करैं। अर तिस दिन उपवास करैं। अर नहीं जाननेतैं नीच कुलके ग्रहनमैं प्रवेश होजाय तो भोजनका अंतराय करै हैं। अर मदिरा मांस अर शरीरतैं चार अंगुल बहता रुधिर राधि अर पंचेन्द्रिय जीव मृतकका कलेवर भोजन करते देखैं तो भोजनका अन्तराय करैं है। तो जिनधर्मी ग्रहस्थ हाड़ कौड़ी चाम केश ऊन इनके स्पर्शनतैं भोजनकैसैं नहीं छाड़ैं याहीतैं ग्रहस्थ है सो हस्तपाद प्रक्षालनकरि शुद्धभूमिमैं शुद्ध भोजन करै हैं। अधर्म जातिका स्पर्श्या भोजन नहीं करैं। बहुरि जिनेन्द्रका पूजन वास्तै स्नान करना योग्य ही है क्योंकि स्नान कर देवका स्पर्शन पूजन करना यह बड़ा विनय है यद्यपि स्नानतैं शुद्धता नहीं तोहू देवके उपकरणकूं स्नान करि स्पर्शना धोयाहुआ द्रव्य चढ़ावना सो देवविनय ही है। विनय है सो ही आराधना है। जातैं जिनमन्दिरके उपकरणका हू विनय करिये है तो जिनेन्द्रके आगमको वाणीका पूजनके द्रव्यका हू स्नान करि स्पर्शना हस्त धोय लगावना मन्दिरमैं हस्तपाद प्रक्षालन करि प्रवेश करना सो हू विनय ही है। यद्यपि पापमलकी शुद्धता करना प्रधान है तोहू भगवान जिनेन्द्रका आगममैं अष्टप्रकार लौकिकशुद्धि कही है लौकिकशौच बिना परमार्थ धर्मतैं भ्रष्ट होजाय है। मुनीश्वरनिका देह रत्नत्रयका

प्रभाव तैं महापवित्र है। तौहू बाह्य शौचके निमित्त कमंडल राखै हैं हस्तपाद धोय स्वाध्याय करैं अत्यंत मंद जलतैं पादप्रक्षालन कराय भोजन करैं हैं तातैं व्यवहार आचारकूं नहीं छाड़ैं हैं। यो भगवान जिनेंद्रका धर्म अनेकांतरूप है अर निश्चयव्यवहारका विरोध रहित हो धर्म है सर्वथा एकांतरूप जिनेंद्रधर्म नहीं है। लौकिक शुचिता रहित होय सो धर्मका निंदा करावै कुलकी निंदा करावै तदि अपना आत्मा मलीन होय ही है। बहुरि मैथुन सेवन किया होय अर मृतककूं दग्ध करि आया होय अर केश चौर कराया होय अर चांडाल म्लेच्छादिकनिका स्पर्श भया होय मृतक पंचेन्द्रीका स्पर्श भया होय रजस्वलादि अशुचिका स्पर्श भया होय इत्यादिक और कारण होय तहां अवश्य स्नान करना अर अन्य कारणनिमें जहां मल मूत्र हाड़ चामादिकका जिस अंगसों स्पर्श भया होय तिसकूं धोवना शीघ्र ही उचित है। अष्टप्रकार शौच लौकिकमें अनादिका प्रवर्तै हैं यातैं आगमकी आज्ञा मानना अपना हित है। बहुरि जगतमें प्रगट देखिये हैं कर्णके मलतैं नेत्र मलकूं, अर यातैं नाशिका मलकूं, यातैं कफ लालादिक मुखके मलकूं, यातैं मूत्रकूं, यातैं विष्टाकूं, अधिक २ अशुचिता मानिये है। अर जो समस्त मलकूं समानही मानिये तो समस्त आचार उपद्रित होय विपरीत होय जाय। यद्यपि द्रव्यार्थिकनयतैं समस्त एक पुद्गल जाति है तथापि बहुत भेद हैं। यद्यपि हाड़ मांस रुधिर मल मूत्रादिक समस्त पृथ्वीरूप जलादि रूप होजाय हैं अर पृथ्वी जलादिकनिका मांस रुधिर मलादिक रूप होजाय है तथापि पर्यायनिमें बड़ा भेद है। द्रव्यकै अर पर्यायकै सर्वथा ऐकता माननेतैं समस्त व्यवहार परमार्थका लोप होय तातैं द्रव्यके पर्यायके कथंचित् एकपना कथंचित् अनेकपना मानना ही श्रेष्ट है। बहुरि बालूके पिंड करनेमें तथा पर्वततैं पड़नेमें अग्निमें दग्ध होनेमें हिमालय गलनेमें पंचाग्नि तपनेमें धर्म मानै है सो लोक मूढ़ता है। तथा ग्रहणमें सूतक मानना स्नान करना चांडालादिककूं दान देना संक्रांति मान दान देना कुवा पूजना पीपल पूजना गायकूं पूजना रुपया महोरकूं पूजना लक्ष्मीकूं पूजना मृतक पितरकूं पूजना छीकपूजना मृतकनिके तृप्ति करनेकूं तर्पण करना श्राद्ध करना देवतानिका रतजगा करना गंगाजलकूं शुद्ध मानना तिर्यंचनिके रूपकूं देव मानना कुवा बावड़ी वापिका तलाव खुदावनेमैं

धर्म मानना बाग लगावनेमैं धर्म मानना मृत्युंजय आदिकके जाप करावनेतैं अपनी मृत्युका टलजाना मानना ग्रहां का दान देनेतैं अपने दुःख दूर होना मानना सो समस्त लोकमूढ़ता है। बहुत कहनेकरि कहा जो योग्य अयोग्य सत्य असत्य हित अहितका आराध्य अनाराध्यका विचाररहित लौकिक जनकी प्रवृत्ति देख जैसैं अज्ञानी अनादिके मिथ्यादृष्टी प्रवर्त्तैं तैसी प्रवृत्तिकूं सत्य मान वा बिचाररहित लौकिकजननिकी प्रवृत्ति देख प्रवर्त्तन करना सो लोकमूढ़ता है। अर केतेक जिनधर्मी कहाय करके हू आत्मज्ञानकररहित परमागमकी आज्ञाकूं नहीं जानते भेषधारीनिके कल्पेहुए अनेक क्रिया कांड तथा तीर्थंकरादिकनिका तर्पण कराना अपना पिता पितामहका तर्पण कराना। ता यज्ञादिकनिके अर्थि होम यज्ञादिकनिमें अपना कल्याण होना मानै हैं। शकलीकरणादिक विधान करना सो लोकमूढ़ता है। तथा केतेक स्नान करि रसोईकरनेमें तथा स्नानकरि जीमनेमैं तथा आला बस्त्र पहिर जीमनेमैं अपनी पवित्रता शुद्धता मानै है परम धर्म मानै हैं अर अभक्षभक्षण अर हिंसादिकका बिचार नहीं करै हैं सो समस्त मिथ्यात्वके उदयतैं लोकमूढ़ता है। अब देवमूढ़ता कहनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

वरोपलिप्सयाशावान् रागद्वेषमलीमसाः। देवता यदुपासीत देवतामूढमुच्यते ॥ २३ ॥

अर्थ—अपने बांछित होय ताकूं बर कहिये बरकी वांछा करिके आशावान् हुआ संता जो रागद्वेष करि मलीन देवताकूं सेवन करै सो देवतामूढ़ कहिये है ॥२३॥

संसारी जीव है ते इस लोकमैं राज्यसंपदा स्त्री पुत्र आभरण वस्त्र बाहन धन ऐश्वर्यनिकी बांछा सहित निरंतर वर्तै हैं। इनकी प्राप्तिके अर्थि रागीद्वेषी मोही देवनिका सेवन करै हैं सो देवमूढ़ता है। जातैं राज्यसुखसंपदादिक तो साताबेदनीयका उदयतैं होय है सो साताबेदनीय कर्मकूं कोऊ देनेकूं समर्थ है नहीं तथा लाभ है सो लाभांतरायका क्षयोपशमतैं होय है अर भोग सामग्री उपभोग सामग्रीका प्राप्त होना सो भोगोपभोग नाम अंतरायकर्मका क्षयोपशमतैं होय है अर अपने भावनिकरि बांधे कर्मनिकूं कोऊ देव देवता देनेकूं तथा हरनेकूं समथ है नहीं। बहुरि कुलकी वृद्धिके अर्थि कुलदेवीकूं पूजिये है। अर पूजते

पूजते हू कुलका विध्वंश देखिये है अर लक्ष्मीके अर्थी लक्ष्मीदेवीकूं तथा रुपया महोरनिकूं पूजते हू दरिद्री होते देखिये हैं। तथा शीतलाका स्तवन पूजन करते हू संतानका मरण होते देखिये हैं॥ पितरनिकूं मानते हू रोगादिक बधै है तथा व्यंतर क्षेत्रपालादिकनिकूं अपना सहाई मानै है सो मिथ्यात्वका उदयका प्रभाव है। बहुरि केतेक कहै हैं जो चक्रेश्वरी पद्मावती देवी ये शस्त्रधारण किये जिनशासनकी रक्षक हैं तथा सेवकनिकी रक्षा करनेवाली एक एक तीर्थंकरनिकै एक एक देवी है॥ एक एक यक्ष है इनका आराधन करने पूजनेतैं धर्मकी रक्षा होय है ये धर्मात्माकी रक्षा करैं हैं तातैं इन देवनिका और यक्षनिका स्तवन करना पूजन करना योग्य है देवी समस्त कार्यके साधने वाली तीर्थंकरनिकी भक्त है। इस बिना धर्मकी रक्षा कौन करै। याहीतैं मन्दिरनिके मध्य पद्मावतीका रूप जाके चार भुजा तथा बत्तीस भुजा अर नाना आयुधनिकरि युक्त अर तिनके मस्तक ऊपर पार्श्वनाथ स्वामीका प्रतिबिम्ब अर ऊपर अनेक फणनिका धारक सर्पका रूपकरि बहुत अनुराग करि पूजैं हैं सो अब परमागमतैं जानि निर्णय करो मूढ़ लोकनिका कहा कहिबो योग्य नाहीं प्रथम तो भवनवासी व्यंतर ज्योतिषी इन तीनप्रकारके देवनिमैं मिथ्यादृष्टी ही उपजै है॥ सम्यग्दृष्टीका भवनत्रिकदेवनिमैं उत्पाद ही नहीं अर स्त्रीपना पावै ही नहीं सो पद्मावती चक्रेश्वरी तो भवनवासिनी अर स्त्रीपर्यायमैं अर क्षेत्रपालादिक यक्ष ये व्यंतर इनमैं सम्यग्दृष्टीका उत्पाद कैसैं होय इनमें तो नियमतैं मिथ्यादृष्टी हू उपजै है। ऐसा हजारांवार परमागम कहै है। बहुरि जो इनकै जिनधर्मसूं प्रीति है तो जिनधर्मके धारीनतैं अपनी पूजा बन्दना नहीं चाहैं जैनी होय सो आपकूं अव्रती जानता सम्यग्दृष्टीसे बन्दना पूजा कैसैं करावैं साधर्मीनका उपकार बिना कहे ही करैं बहुरि भगवानका प्रतिबिम्ब तो अपने मस्तक ऊपरि है अर भगवानके भक्तनतैं अपनी पूजा करावै ऐसा अविनय धर्मात्मा होय कैसैं करै। बहुरि अनेक आयुध धारण करि अपना वीतराग धर्ममैं प्रवृत्तिकूं बिगाड़ै हैं। अर अपना असमर्थपना प्रगट दिखावै है तथा जिन शासनके रक्षक एक एक यक्ष यक्षणी ही कैसैं कहो हो भगवानके शासनके तो सौधम इन्द्रकूं आदि लेय असंख्यात देव देवी समस्त सेवक हैं अर जिनका हृ-

दर्शमैं सत्यार्थ धर्मतैं पूर्व कृत अशुभकर्म निर्जर गया होय ताके समस्त पुद्गल राशि अचेतन है सो हू देवतारूप होय उपकार करैं हैं। देव मनुष्य उपकार करैं सो कहा आश्चर्य है। अर शासनमैं हू ऐसी केई कथा हैं। जो शीलवान तथा ध्यानी तपस्वीनके धर्मके प्रसादतैं देवनिके आसन कंपायमान भये अर देव जाय उपसर्ग टाले अर नाना रत्ननि करि पूजा करी ऐसी कथा तो शासनमैं बहुत हैं अर ऐसी तो कहूं कथा भी नहीं जो धर्मात्मा पुरुष देवनकूं पूजैं अर पद्मावती चक्रेश्वरीकी भी केई कथा हैं जो शीलवंती व्रतवंतिनीकी देवदेवियोंने पूजा करी। अर शीलवंती व्रतवंती तो जाय कोऊ देव देवीकी पूजा करी नहीं लिखी है तथा कार्तिकेय स्वामी कही है॥ गाथा॥ ण य कोवि देदि लच्छीण कोवि जीवस्स कुणइ उवयारं। उवयारं अवयारं कम्मं पि सुहासुहं कुणदि॥१॥ भत्तीए पुज्जमाणो विंतरदेवो वि देदि जदि लच्छी। तो किं धम्मं कीरए एवं चिंते हि सद्दिट्ठी॥२॥ अर्थ—इस जीवकूं कोऊ लक्ष्मी नहीं देवे है अर जीविका कोऊ उपकार अपकार हू नहीं करै है जो जगतमैं उपकार अपकार करता देखिये है सो अपना किया शुभअशुभकर्मकरि करै है बहुरि जो भक्तिकरि पूजे व्यंतरदेव ही लक्ष्मी देवें तो दान पूजा शील संयम ध्यान अध्ययन तप रूप समस्त धर्म काहेकूं करिये। बहुरि जो भक्तिकरि पूजे वंदे कुदेव ही संसारके कार्य सिद्ध करैंगे तो कर्म कछु बात ही नाहीं ठहरे॥ व्यंतर ही समस्त सुखका दायक रहे धर्मका आचरण निष्फल रह्या। भावार्थ—जगतविषे इसजीवका जो देवदानव देवी मनुष्य स्वामी माता पिता बांधव मित्र स्त्री पुत्र तथा तिर्यंच तथा औषधादिक जो उपकार तथा अपकार करैं हैं सो समस्त आपने किये पुण्यकर्म पापकर्म तिनके उदयके आधीन करैं हैं। ये तो समस्त बाह्यनिमित्त मात्र हैं देखिये हैं भला करा चाहै है। उपकार किया चाहै है अर अपकार होय जाय है अर अपकार किया चाहै है अर उपकार होजाय है। यातैं प्रधान कारण पुण्य पाप कर्म है बहुरि शास्त्रनिमैं कहा है चांडालके अहिंसा व्रतका प्रभावतैं देवता सिंहासनादिक रचे अर नीलीका शीलके प्रभावतैं देवता सहाई भये। अर सीताके शीलका प्रभावतैं अग्नि कुंड जलरूप होगया अर सेठ सुदर्शनका देव आय उपसर्ग टाल्या अर और हू केते-

कनिके सहाई देवता भये उपसर्ग टाले अर देवांका आसन कंपायमान भये। अर देव आय सहाई भये। ऐसी हजारां कथा प्रसिद्ध हैं अर भगवान आदीश्वरकै छह महीना अंतराय भोजनका भया तदि कोऊ देव आय कहीकूं आहार देनेकी बिधि नहीं जनाई पहली तो गर्भमैं आनेके छहमांस पहली इन्द्रादिक समस्त देव भगवानकी सेवामैं तथा स्वर्गलोकतैं आहार वस्त्र वाहनादिक लावनेमैं सावधान भये हाजिर रहते थे। ते सब देव कैसैं भूल गये॥ तथा भरतादिक सौ पुत्रनिकूं अर ब्राह्मी सुन्दरी पुत्रीनिकूं मुनिश्रावकका समस्त धर्म पढ़ाया तेहू बिचार नहीं किया जो भगवान हू मुनि होय आहारके अर्थि चर्या करैं हैं सो अन्तराय कर्मका मन्द हुआ बिना कौन सहाई होय तथा युधिष्ठिर भीम अर्जुन नकुल सहदेव ये महा बीतरागी होय बनमैं ध्यान करिते तिनकूं दुष्ट वैरी आय लोहके आभरण अग्निमें लाल करि पहराय दीये। अर जिनका चाम मांसादिक भस्म होते हू कोऊ भी देव सहाई नहीं भया। तथा सुकुमाल महा मुनि तिनकूं तीन दिन पर्यन्त स्यालनी अपने बच्चानिसहित भक्षण करवो किया। तहां कोऊ देव सहाई नहीं भये अर जाकी माताका इतना ममत्व था जो शोकरुदनादिक संताप ही मैं लगी रही अर पुत्र कहां गया ऐसी खबर भी नहीं मँगाई। तथा पांचसै मुनिनिकूं घानीमैं पेल दिया तहां कोऊ देव सहाई नहीं भया। तथा पद्म नाम बलभद्र अर कृष्ण नाम नारायण जिनकी पूर्व हजारां देव सेवा करैं थे जब हीन कर्म उदय आया अर पुण्य क्षीण भया तदि कोऊ देव पानी प्यावा वाला एक मनुष्य हू नहीं रह्या तथा जो सुदर्शनचक्रसूं नहीं मरया अर भीलका एक बाणतैं प्राण रहित होगया ऐसे अनेक ध्यानी तपस्वी व्रती संयमी घोर उपसर्ग भोगे तिनका तो देव सहाई कोऊ नहीं भये। अर हरेकनिके सहाई भये तातैं ऐसा निश्चय है॥ अशुभकर्मका उपशम हुआ बिना अर शुभकर्मका उदय बिना कोऊ देवादिक सहाई नहीं होय है। अपना देह ही बैरी होय जाय है तथा खरदूषणका पुत्र संबुकुमार महा पुरुषार्थकरि द्वादशवर्ष-पर्यन्त बांसका बीड़ामैं सूर्यहांस खड़ग सिद्धि किया। अर लक्ष्मण सहज ही लिया अर उसही खड़गसूं खरदूषणका पुत्र संबुकुमारका मस्तक छेदा गया। अपना हितके अर्थि साधन करी बिद्या आपहीका घात

किया तातैं पूर्वकर्मका उदयकरि अनेक उपकार अपकार प्रवर्तै हैं। कोऊ देवादिक आराधन किये हुये धन आजीविका स्त्रीपुत्रादिक देनेमें समर्थ नहीं है। बहुरि यहां प्रत्यक्ष ही देखो नगरका राजा समस्त देव देवी पीर पैगम्बर स्वामी फकीर समस्त मतका भेषी अर समस्त वेद पुराणके पाठी नित्य यज्ञ होम पाठ करनेवाले ब्राह्मणनिको बहुत आजीवका देवें हैं अर बड़ा सत्कार अर लक्षां रुपयांका दान देहै। अर बड़ी पूजा बलिदान सबकै पहुंचै है तो हू संयोगवियोग हानि वृद्धि जीत हारके टालनेकूं कोऊ समर्थ है नहीं। तातैं ऐसा निश्चय जानता हू जो श्रद्धान नहीं करकें अर अनेक देव देवीनकूं आराधैं हैं पूजैं हैं सो सब देव मूढ़ता है। बहुरि जो मंत्रसाधन विद्याराधन देवआराधन समस्त पुण्यपापके अनुकूल फल हैं तातैं जे सुखका अर्थी हैं ते दया क्षमा संतोष निर्वांछकता मन्दकषायता वीतरागता करि एक धर्म ही का आराधन करो अन्य प्रकार वांछा करि पापबन्ध मत करो। अर जो देवनिका समागममें ही प्रीति करो हो तो उत्तम सम्यग्दृष्टी सौधर्म इन्द्र तथा सची इन्द्राणी तथा लोकांतिकदेवनिका ही संगममें बुद्धि करो अन्य अधम देवनिका सेवन करि कहा साध्य है। बहुरि मिथ्या बुद्धिकरि स्थापन करैं हैं और नित्य पूजन करें तदि प्रथम तो क्षेत्रपालका पूजन करै है अर क्षेत्रपालका पूजन किया पाछैं जिनेन्द्रका पूजन करै हैं अर ऐसी कहैं हैं जैसी पहली द्वारपालका सन्मान करकें पाछैं राजाका सन्मान करना द्वारपाल विना राजा सों कौन मिलावै तैसैं क्षेत्रपाल विना भगवानका मिलाप कौन करावै। जिन मूढ़निके ऐसा विचार नहीं जो भगवान तो मोक्षमें हैं भगवान परमात्माका स्वरूपको यो मिथ्यादृष्टी अज्ञानी कैसैं जानैगा अर कैसैं मिलावैगा अर विघ्नको कैसैं विनाशैगा आपका विघ्न ही नाश करनेकूं समर्थ नहीं। सो विचाररहित मिथ्यादृष्टी लोक क्षेत्रपालका महा विपरीत रूप बनाय वीतरागके मन्दिरमें प्रथम स्थापन करे हैं जाका हस्तमें मनुष्यका कटा मूंड़ अर गदा खड्ग अर कूकराका वाहन करि सहित स्थापनकरि तैल गुड़का भक्षणतैं क्षेत्रपाल प्रसन्न होय है ऐसैं लोकनिकूं बहकाय पूजैं हैं अर इनका पहिली दर्शन पूजन स्तवन करै हैं सो मिथ्यादर्शन अर कुज्ञानका प्रभाव जान हू। बहुरि पार्श्व जिनेन्द्रकी प्रतिमाका मस्तक ऊपरि फण विना बनावे ही

नहीं अर भगवान पार्श्व अरिहंतके.समवसरणमैं धरनेन्द्रका फण मस्तक ऊपर कैसैं सम्भवै है धरनेन्द्रता भगवानके तपके अवसरमें फणा मंडप किया था सो फेर फणा मंडपका प्रयोजन नहीं अर पार्श्व जिनेन्द्र अरहंत भये अर इन्द्रकी आज्ञातैं कुवेर समोसरण रच्यो तहां भगवान फणसहित नहीं विराजे चारनिकायके देव मनुष्य तिर्यञ्च धर्म श्रवण स्तवन वंदना करते ही तिष्टै यातैं स्थापना अर्हन्तकी प्रतिविंबनिके फण कैसैं संभवै बीतराग मुद्रा तो ऐसे संभवै नहीं परंतु कालके प्रभावतें धरणेंद्रकी पूजा प्रभावनां प्रकट करनेकूं लोक विपरीत कल्पना करने लग गये सो कौन दूर कर सकै जैसैं पाषाणमय भगवानका प्रतिविंव महा अंगोपांग सुन्दरताके कर्णनिकूं मस्तककी रक्षाकैं अर्थ लंबा करि स्कंधसौं जोड़ देहैं तिनको देखि समस्त धातुके प्रतिबिंबनके भी कर्ण स्कंध सों जोड़ देहैं सों देखा देखी चल गई तैसैं ही अर्हंत प्रतिविंवके ऊपरि फणका आकार करते लोकनिकूं देख तत्त्वकूं समझे विना फण करने की प्रवृत्ति चल गई सो फणके कर देनेतैं प्रतिमा तो अपूज्य होय नहीं क्योंकि चार प्रकारके समस्त ही देव सर्व तरफतैं सदैव ही भगवानका सेवन करै हैं। अर जो फणांमंडप करनेतैंही जो धरणेंद्रको पूज्य मानै सो देवमूढ़ता है ऐसै अनेक प्रकारकरि देवमूढ़ता है तथा गणेश हनुमान योनि लिंग चतुर्मुख पट मुखका रूप देवत्वरहित प्रगट असंभव तिर्यंचरूपको देव मानना बड़ पीपलादि वृक्षनकूं नदीनकूं जलकूं अग्निकूं पवनकूं अन्नकूं देव मानना सो समस्त देवमूढ़ता है। बहुत कहा लिखिये अव आगैं गुरु मूढ़ता वर्णन करनेकूं सूत्र कहैं हैं॥

सग्रन्थारम्भहिंसानां संसारावर्त्तवर्त्तिनां। पाखण्डिनां पुरस्कारो ज्ञेयं पाखण्डिमोहनम्॥ २४॥

अर्थ,—परिग्रह आरम्भ अर हिंसाकरि जे सहित अर संसाररूप भवनमें प्रवर्तन करते ऐसे पाखण्डीनकी जो प्रधानता उनके वचनमैं आदर करि प्रवर्तन करना सो पाखण्डमूढ़ता है॥ भावार्थ,—जिनेन्द्र धर्मका श्रद्धान ज्ञानकरि रहित होय जो नाना प्रकारका भेष धारणकरिकैं आपकूं ऊंचा मान जगतके जीवनतैं पूजा वन्दना सत्कार चाहता जो परिग्रह राखैं हैं अर अनेक आरम्भ करैं हैं हिंसाके कार्यनिमैं प्रवर्तन करै है इन्द्रियनिके विषयनिका रागी संसारी असंजमी अज्ञानीनितैं गोष्टी करता अभिमानी होय आपकूं आ-

आचार्य पूज्य धर्मात्मा कहावता रागीद्वेषी हुआ प्रवर्ते है अर युद्धशास्त्र शृङ्गारके शास्त्र हिंसाके कारण आरम्भके शास्त्र रागके बधावनेवाले शास्त्रनकूं आप महंत भये उपदेश करें हैं ते पाखण्डी हैं जिनके नानाप्रकारके रसनिकरि सहित भोजनमें तत्परता याहीतैं कामादिककी कथामें लीन होय रहे अर परिग्रहके बधावनेके अर्थि दुर्ध्यानी होय रहे हैं । बहुरि जे मुनि साधु आचार्य महंत पूज्य नाम कहावें अर लोकनतें नमस्कार कराया चाहै अर विकथा करनेमें विषयनमें मंत्र; यंत्र, तंत्र, जप, होम, मारण, उच्चाटन, वशीकरणादिक निंद्य आचरण करें हैं ते पाखण्डी हैं । तिन पाखण्डीनका वचनकूं प्रमाण करना अर सत्कार करना धर्मकार्यमें प्रधान मानना सो पाखण्डमूढ़ता है अर सम्यक्तका नष्ट करनेवाले अष्ट मद हैं तिनके नाम कहनेकूं सूत्र कहैं हैं ॥

ज्ञानं पूजां कुलं जातिं बलमृद्धिं तपो वपुः । अष्टावाश्रित्य मानित्वं स्मयमाहुर्गतस्मयाः ॥ २५ ॥

अर्थ—नष्ट भये हैं मद जिनके ऐसे गणधर देव हैं ते ऐसे समय कहिये मद ताहि कहे हैं । जो ज्ञानने पूजाने कुलनै जातिने बलनें ऋद्धिने तपने शरीरके रूपादिक इन अष्टकूं आश्रय करि जो मानीपना सो स्मय कहिये है । भावार्थ—ज्ञानका मद १ पूजाका मद २ कुलका मद ३ जातिका मद ४ बलका मद ५ ऋद्धिका मद ६ तपका मद ७ शरीरका मद ८ ये अष्ट मद सम्यग्दृष्टीके नहीं होय हैं जिनके एक हू मद होय सो सम्यक्ती कैसें होय । सम्यग्दृष्टीके सत्यार्थ चिंतवन है सो विचारै है हे आत्मन् जो तू एकेन्द्रियनि कर उपजा ज्ञान पाया है । सो याका गर्व कैसें करै है ये ज्ञान तो ज्ञानावरण कर्मके क्षयोपसमके आधीन है विनाशीक है इन्द्रियनिके आधीन है । वातपित्तकफादिकके आधीन है याके विनशनेका प्रमाण मत जानो । याका गर्व कहा करो हो ? इन्द्रियांकूं नष्ट होते ही ज्ञान हू नष्ट हो जाय है तथा वातपित्तादिककी घटत बधत होते क्षणमात्रमें ज्ञान विपरीत हो जाय बावला हो जाय अर इन्द्रियजनित ज्ञान पर्यायकी लार ही विनसेगा अर केई वार एकेन्द्रिय भया तहां चार इन्द्रियही नहीं पाई एकेन्द्रियनिमें जड़रूप पाषाण धूल पृथ्वीरूप होय असंख्यात काल अज्ञानी भया अर केई वार विकलत्रयमें हित अहितकी शिक्षा रहित भया । तथा केई वार कूकर शूकर व्याघ्र सर्पादिक विसै विपरीत ज्ञानी होय भ्रमा । अर निगोदमें अक्षरके अनं-

तवैंभाग ज्ञानरहित भया। अर व्यन्तरादिक अधम देवनिमैंहू मिथ्यात्वके प्रभावतैं आपापरकूं नहीं जानता नष्ट होय एकेन्द्रियमैं उपजि अनन्तकाल परिभ्रमण किया। अर मनुष्यनिमैंहू कोऊ बिरले मनुष्यनिके ज्ञानावरणके क्षयोपसमकी आधिक्यतातैं तीक्ष्ण ज्ञान होय जाय तो कोई मनुष्य तो नीच कर्मनिमैं प्रबीण होय अनेक जलके जोव तथा थलके जीव तथा आकाशचारी जीवनिके मारनेमैं पकड़नेमैं बांधनेमैं अनेक यंत्र पिंजर जाल फांसो बनावनेमैं प्रबीण होय हैं। केई नानाप्रकारके खड्ग बंदूक तोप बाण जहर बिष आदिक विद्यामैं प्रबीणता पाय अपना चातुर्यका मद करि उन्मत्त भये ग्रामके देशके बिध्वंश करनेमैं प्रबीण होय हैं। केई सिंह व्याघ्र वराहादिक जीवनकी शिकारमैं प्रबीण होय हैं। केई ज्ञान पाय अनेक जीवनिके धन हरनेमैं लूटनेमैं मार्गमैं गमन करतेनिका धन हरनेमैं प्राण हरनेमैं प्रबीण होय हैं। केई ज्ञानकी तीक्ष्णता पाय भोले प्राणीनिका तिरस्कार करनेमैं तथा झूठेनिकूं सांचे कर देनेमैं अर सांचेनिकूं झूठे करदेनेमैं धन अर प्राण दोऊनिके हरनेमैं प्रबीण होय हैं। केतेक अपने ज्ञानकी तीक्ष्णता करिकैं अन्य मनुष्यनिकी चुगली करनेमैं लुटाय देनेमैं धन धरती आजीविकादिक विनष्ट करा देनेमैं राजादिकनका दंड करादेनेमैं मरण कराय देनेमैं प्रबीण होय हैं। केतेक मनुष्यनिके काष्ट पाषाण धातु रत्ननिके अनेक बस्तु बनावनेमैं केतेकनिके चित्र कर्मादिक अनेक आभरण वस्त्र महलादिक अनेक रचना बनाय देनेमैं प्रबीणता पाय गर्बके बस भये नष्ट होय हैं। अर केतेक मनुष्य ज्ञानकी प्रबलता पाय अनेक शृंगारशास्त्र युद्धशास्त्र मंत्रशास्त्र वैद्यकशास्त्रादिक बनाय राजानिकूं रिझावै हैं। अनेक छंद अलंकार व्याकरण विद्या एकांतरूप न्यायविद्या वेद पुराण क्रिया कांडादिककी प्ररूपणा करि गर्बिष्ट भये आत्मज्ञानरहित होय संसार परिभ्रमण करै हैं। अर केई बीतराग धर्मकूं पाय करकै हू मिथ्यात्वका तीव्र उदयतैं सत्यार्थज्ञानश्रद्धानकूं नहीं प्राप्त होय अपना अभिमान बचन पक्ष पुष्ट करनेकूं सूत्रविरुद्ध मार्गकूं प्रवर्तन कराय आपकूं कृतार्थ मानै हैं। ऐसे ज्ञानकी अधिकता पाय करके हू मिथ्यात्वके प्रभावतैं अधिक अधिक बंध करि नष्ट ही भया। तातैं अब बीतरागी सम्यग्ज्ञानी गुरुनिका उपदेश पाय ज्ञानका गर्ब मत करो भो आत्मन्

तेरा स्वभाव तो सकल लोकालोकका जाननेवाला केवलज्ञानरूप है। अव कर्मके क्षयोपसमतैं उपज्या इंद्रियांके आधीन शास्त्रनिका किंचित ज्ञान ताका कहा गर्व करो हो? जैसैं कोऊ प्रवल अपना वैरी मंडलेश्वर राजाकूं वांध वंदीखाने मेलि किंचित कुत्सित भोजन देय नाना त्रास देता राखे अर किसी कालमैं कोऊ किंचित् मिष्ट भोजन हू देवे तो तिस भोजनिकूं पाय मंडलेश्वर राजा कैसैं गर्व करे? तैसैं तुम्हारा अनंतज्ञान स्वरूप केवल ज्ञानकूं इन कर्मनिनैं लूट देहरूप वंदीगृहमैं पराधीन करि इंद्रिय द्वारे किंचित ज्ञान दिया ताकूं पाय कहा गर्व करो हो। यो ज्ञान विनाशीक पराधीन है पर्यायकी लार तो अवश्य नष्ट होयहीगा। अर इस पर्यायमैंहू रोगतैं वृद्धपनातैं इंद्रियनिकी विकलतातैं दुष्टनिकी संगततै कषाय विषयनिकी अधिकतातैं क्षणमात्रमैं विनाश होनेका भरोसा नहीं। तातैं विनाशीक ज्ञान पाय मद करोगे तो समस्त गुण नष्ट होय ज्ञानरहित एकेन्द्रियादिकनिमैं जाय उपजोगे। अर इस कालमैं तुम कोऊ कविता छन्द पद चरचा समझिके तथा नवीन काव्य श्लोक शास्त्र छन्द युक्ति वनाय करिके तथा जिनमतके सिद्धांतनिका किंचित ज्ञान पाय मदकूं प्राप्त होय रहे हो सो मदकूं प्राप्त होना योग्य नहीं पूर्वकाल मैं भये ज्ञानीवीतरागीनके रचे ग्रन्थनिके वाक्यनिकूं देख हू। जो अकलंकदेवकरि रचो लघुत्रयी वृहत्त्रयी चूलिका ये सात ग्रन्थ तिनिमैं प्रवेशके अर्थि माणिक्यनन्दी नामा मुनीश्वरां परीक्षामुख रच्या तिसकी बड़ी टीका प्रमेयकमलमारतंड बारह हजार प्रभाचंद्रजी रची। अर लघुत्रयी ऊपर न्यायकुमुदचंद्रोदय सोलह हजार श्लोकनिमैं प्रभाचंद्रजी रच्या॥ तथा तत्त्वार्थ सूत्रनिकी भाष्य तो चौरासी हजार श्लोकनिमैं रची सो इस अवसरमैं प्रसिद्ध नहीं है। तो हू तिसका मंगलाचरण जो देवागमनाम स्तोत्रके ऊपर विद्यानन्दी स्वामी आप्तमीमांसा नामा अष्टसहश्री रची॥ तथा अकलंक देवजी राजवार्तिक रच्या तथा विद्यानन्दी स्वामी अठारहहजार श्लोकनिमैं श्लोकवार्तिक जी रच्या। तथा आप्तपरीक्षा रची तिनिका निर्बाध वचनके प्रभावकूं देखते बड़े बड़े वादीनिके गर्व गलजाय तथा नाटक त्रय सारत्रय इत्यादिक अनेकांतरूप निर्बाध युक्ति बचनकूं जान करि कैसैं ज्ञानका मद करो हो। कदाचित श्रुतज्ञानावरणका क्षयोप-

समतैं किंचित ज्ञान पाया है। तो बड़ा दुर्लभ लाभ याका जान आत्माकूं विषयनतैं तथा अभिमानादिक कषायनतैं छुड़ाय परम समता धारण करि संसार परिभ्रमणका अभावमैं यत्न करो ॥ ज्ञानका मद करि आत्माकूं अनंन्त संसारी मत करहु। ऐसे ज्ञानके मदका अभावका उपदेश किया ॥१॥ अब पूजा पूज्यपनाका मद ऐश्वर्यका मद सम्यग्दृष्टो नहीं करै है। जातैं यो राज ऐश्वर्य आत्माका स्वभाव नहीं कर्मका किया है बिनाशीक है पराधीन है दुर्गतिका कारण है मेरा ऐश्वर्य तो अनन्त चतुष्टय मय अक्षय अविनाशी अखंड सुखमय है तथा अनन्तज्ञानदर्शनमय है अनन्तशक्ति रूप है। तातैं ये कर्मकृत महाउपाधिरूप आत्माकूं क्लेशितकरि दुर्गति पहुंचावनेवाले स्वरूपको भुलावनेवाले ऐश्वर्य आत्माका स्वरूप नहीं। कलहका मूल बैरका कारण क्षणभंगुर परमात्मस्वरूपकूं भुलावनेवाले महादाहके उपजावनेवाले दुखरूप हैं अनेक जीवनके घातक हैं। महाआरम्भ महापरिग्रहमैं अन्धकरि नरक पहुंचावनेवाले हैं। इस ऐश्वर्यकरि मैं केते दिन पूज्य रहूंगा। क्षणमैं विध्वंस होय रंक होजाऊंगा। जगतमैं धनके लोभी तथा अज्ञानी लोक मोकूं ऊंचा मानै है। सत्कार करै हैं। सो राजसंपदादिकनिका मेरे कै दिनका स्वामीपना है? मृत्युका दिन नजीक आवै है मुझसारिखे अनन्तानन्त जीव संपदाकूं अपनी मानते नष्ट होगये। परमाणुमात्र हू परद्रव्य मेरा नहीं है अन्य द्रव्य अन्यका कैसैं होय इस पर्यायमैं कर्मकृत परका संयोगरूप ऐश्वर्य है। सो दान सन्मान शील संयम परजीवनका उपकारकरि प्रशंसा योग्य है। ऐश्वर्य पाय गर्वरहित वांछारहित समतासहित विनयवंतपनाही शुभ गतिका कारण है अन्यप्रकार मिथ्यादर्शनजनित मिथ्याभाव जीवकूं आपाभुलाय ऐश्वर्यमैं उलझाय नरक पहुंचावै है। ऐसैं दृढ़ श्रद्धान करता सम्यग्दृष्टो पूज्यपनाका मद ऐश्वर्यका मद नहीं करै अर अन्य जीवनिकूं अशुभके उदय वसतैं दारिद्रकरि पीड़ित अशुभ सामग्री सहित देख अवज्ञा तिरस्कार नहीं करै है करुणा ही करै है ॥ २ ॥ अब सम्यग्दृष्टोके कुलका मद नहीं होय ऐसा दिखावै हैं, जगतमैं पिताके वंशकूं कुल कहैं हैं। सम्यग्दृष्टी विचारै हैं मेरा आत्मा कोऊ करि उपजाया नहीं है तातैं ज्ञान स्वरूप जो मैं ताकै कुलही नहीं है। ज्ञाता दृष्टा स्वभाव ही मेरा कुल है अर जो अनादिकालका कर्मकरि

पराधीनीमैं इस पर्यायमैं जो उत्तम कुल पाया तो इसका गर्व करना महा अनर्थ है। पूरव भवनिमैं मैं अनंतवार नारकी भया। अनंत वार सिंह व्याघ्र सर्पनके कुलनमैं उपज्या। अनन्त वार सूकर कूकर गधा ऊंट मींढ़ा भैंसा इत्यादिकनिके कुलमैं उपज्या। अनेकवार म्लेच्छनिके भीलनिके चांडाल चमारनिके धीवरनिके कसाईनिके कुलमैं उपज्या। अर अनेकवार नाई धोवी तेली खाती लुहार भड़भूजा चारन भाट डूम भांड़निके कुलमैं उपज्या हूं अर अनेक वार दरिद्रीनिके कुलमैं उपज्या हूं कदाचित कोऊ शुभ कर्मका उदयतैं ब्राह्मण क्षत्री वैश्यनिके कुलमैं आय उपज्या तो अव कर्मका किया कुलमैं आय गर्व करना सो वड़ा अज्ञान है। इस कुलमैं मेरा केता दिन वास है। अर अनादसूं इस कुल जातिमैं मेरा वास था नहीं नवीन उपज्या हूं अर विनशि करि अन्य कुलमैं पुन्य पापके आधीन उपजना होयगा। तातैं उत्तम कुल पावनेका फल तो ये है। जो मोक्षमार्गका साधक रत्नत्रयमैं प्रवर्तन करना तथा अधम आचरणका त्याग करना। वहुरि ऐसा विचार करो जो मैं पुन्यका प्रभाव करि उत्तम कुल पाया है सो मोकूं नीच कुलके मनुष्य ज्यों अभक्षण करना योग्य नहीं तथा कलह विसंवाद मारण तारन गाली भण्डवचन वोलना योग्य नहीं तथा जुवाकी क्रीड़ा वेश्या सेवन परधनहरणादिक करना योग्य नहीं तथा निंद्य कर्मकरि आजीविका करना अयोग्य है। तथा हास्य वचन असत्य वचन कपट छल करना योग्य नहीं। अर उत्तम कुलकूं पाय करिकै हू जो निन्द्य कर्म करूंगा तो इस लोकमैं धिक्कारयोग्य होय दुर्गतिका पात्र होऊंगा। ऐसैं कुलका मद सम्यग्दृष्टी नहीं करै है ॥३॥ वहुरि माताकी पक्ष जाति है सो सम्यग्दृष्टी जीव जातिका गर्व नहीं करै है जातैं अनेकवार नीच जातिमैं उपज्या वहुरि एकवार उच्च जातिमैं उपज्या वहुरि अनन्तवार नीचमैं अर एकवार उच्च जातिमैं उपज्या ऐसैं नीच जाति अनन्तवार पाई अर उच्च जाति हू अनन्तवार पाई है। अव उच्च जातिके पायेका कहा गर्व करो हो। अनेक वार निगोदमैं उपज्या तथा कूकरी सूकरी चांडाली भीलनी चमारी दासी वेश्यनिके गर्भमैं अनेक वार जन्म धारण किया। अव नीच जातिमैं उपज्या पुरुषका तिरस्कार तो कैसैं करो हो अर उच्चजातिकी माताकै जन्म लेय मदोन्मत्त कैसैं भये हो? या जाति

तो पुन्य पापकर्मका फल है। सो रस देय निर्जरैगा जातिकुलमैं ठहरना कै दिनका है। तातैं जातिकुलको विनाशीक अर कर्मके आधीन जानि उत्तम शील पालनेमैं क्षमा धारणमैं स्वाध्यायमैं परोपकारमैं दानमैं विनयमैं प्रवर्तन करि जातिका उच्चपणा सफल करो ॥ जातिका मद कर संसारमैं नष्ट मत हो हू ॥४॥ अब बलका मद हू सम्यग्दृष्टीकै नहीं होय है। सम्यग्दृष्टी विचारै है मैं आत्मा अनन्तबलका धारक हूं। सो कर्मरूप मेरा प्रबल वैरी मेरा बलकूं नष्ट करि बलरहित एकेन्द्रिय विकलत्रयादिकमैं समस्त बल आच्छादन करि मेरी बलरहित ऐसी दशा करी जो जगतकी ठोकरांतैं कुचल्या गया चींथा गया। अब कोऊ वीर्यांतरायनामकर्मका किंचित क्षयोपशमतैं मनुष्य शरीरमैं आहारके आश्रयतैं किंचित बलका उघाड़ हुआ है अब जो इस देहके आधार पराधीन बलतैं जो मैं तपश्चरण करि कर्मनिका नाश करूं तो बल पावना सुफल है। तथा इस बलके लाभतैं मैं व्रत उपवास शील संयम स्वाध्यायकायोत्सर्ग करूं। तथा कर्मके प्रबल उदयहोतैं आयेहुये उपसर्ग परीसहनितैं चलायमान नहीं होऊं, रोगदरिद्रादिक कर्मनिके प्रहारतैं कायर नहीं होऊं। दीनताकूं प्राप्त नहीं होऊं तो मेरा बल पावना सुफल है। तथा दीन दरिद्री असमर्थनिके दुर्वचन श्रवण करके हू क्षमा ग्रहण करूं तो मेरो आत्माकी विशुद्धताका प्रभावतैं दुर्जय कर्मनिकूं मारि क्रम करि अनन्तवीर्यकूं प्राप्त होय अविनाशी पद पाऊं। अर जो बलवान होय निर्बलनिका घात करूं अर असमर्थनकी धनधरतीस्त्रीनिकूं हरण करूं तथा अपमान तिरस्कार करूं तो सिंह व्याघ्र सर्पादिक दुष्ट तिर्यञ्चनिकी ज्यों परजीवनिके घातके अर्थही मेरे बल पावना रह्या ताका फल दीर्घकाल नरकनिके दुख तिर्यञ्चनिके दुख भोग निगोदमैं अनन्तानंत काल परिभ्रमण करूंगा। तातैं बलका मद समान मेरी आत्माका घात नहीं है ॥ ५ ॥ बहुरि ऋद्धि जो धन संपदा पावनेका ज्ञानीकै गर्व नहीं होय है सम्यग्दृष्टी तो धनादिकके परिग्रहका महाभार मानै हैं। ऐसा दिन कदि आवै जो समस्त परिग्रहका भारकूं छांड़ि करि मेरा आत्मीकधनकी संभाल करूं। यो धन परिग्रहको भार महा बंधन है अर रागद्वेष भय संताप शोक क्लेश वैर हानिकूं कारण है। मद उपजावनेवाला है। महा आरंभादिका कारण है। दुखरूप दु-

गतिका बीज है। परंतु करिये कहा ? जैसैं कफमैं पड़ी मच्छिका आपकूं छुड़ावनेकूं समर्थ नहीं अर कर्दमके समूहमैं फंस्या वृद्ध अशक्त बलध निकलनेकूं समर्थ नहीं अर कर्दमके द्रहमैं पड़्या हस्ती आपकूं निकासनेकूं समर्थ नहीं होय है तैसैं मैं हूं इस धन कुटंबादिकके फंदमैंसूं निकस्या चाहूं हूं तोहू आशक्तपनातैं तथा रागादिकका प्रबल उदयतैं तथा निर्वाहहोनेकी कठिनताके देखनेतैं कंपायमान हूं। ऐसैं अपमान भयादिकका करनेवाला परिग्रहतैं निकसनेका इच्छुक सम्यग्दृष्टी पराधीन बिनाशीक दुखरूप संपदाका गर्व नहीं करै। याका संगमकी वड़ी लज्जा है जो मैं मेरी स्वाधीन अविनाशी आत्मीकलक्ष्मीकूं छाड़ि ज्ञानी होय करके भी इस खाक समान लक्ष्मीकूं नहीं छाड़ूं हूं इस समान मेरी निरलजता और कहा होयगी और हीनता कहा होयगी ॥ ६ ॥ अब सम्यग्दृष्टीकै तपका मद नहीं होय है। मद तो तपका नाश करनेवाला है अर जे तपके प्रभावकरि अष्टकर्मरूप वैरीनकूं नष्ट करि परमात्मपनाकूं प्राप्त भये ते धन्य हैं। मैं संसारी आशक्त हुआ इंद्रियनकूं भी विषयनितैं रोकनेकूं समर्थ नहीं। कामका विजय किया नहीं। निद्रा, आलश, प्रमादकूं हू जीता नहीं। इच्छा रोकनेमैं समर्थ नहीं पर्यायमैं लालसा घटी नहीं जीवनेकी बांछा मिटी नहीं मरनेका भय दूर हुआ नाहीं। स्तवनमैं निंदामैं लाभमैं अलाभमैं समभाव हुवा नहीं। तितने हमारे काहेका तप। तप तो वह है जातैं कर्म वैरीनिके उदयकूं जीत शुद्धात्मदशामैं लीन होय जाय। धन्य है जिनकै वीतरागता प्रगट हुई है। ऐसा विचार करि संयुक्त सम्यग्दृष्टीकै तपका मद कैसैं होय ॥ ७ ॥ बहुरि सम्यग्दृष्टीके शरीरके रूपका गर्व नहीं है। जातैं सम्यग्दृष्टी तो अपना रूपकूं ज्ञानमय देखै है। जिसमैं समस्त बस्तुकूं यथावत् अवलोकन करिये और यो चामड़ामय शरीरको रूप हमारो नहीं है। यो देहको रूप चण चणमैं विनाशीक है। एक दिन आहार पान नहीं करै तो महा विरूप दीखै है इस देहका रूप समय समय विनाशीक है अर जरा आजाय तदि महा सूंगला भयंकर दीखने लगि जाय है। अर रोग तथा दरिद्र आजाय तदि कोऊकै देखनैयोग्य स्पर्शने योग्य नहीं रहै। इस रूपका गर्व कौन ज्ञानी करै ? एक चणमैं अंध होजाय एक चणमैं काणा कूबड़ा लूला टूंटा बकमुख

बक्रग्रीव लंबउदरादिक बिड़रूप हो जाय। इहां रूपका गर्व करना वड़ा अनर्थ है। सुन्दर रूप पाय शीलकूं मलीन मत करो। दरिद्री दुखी रोगी अंगहीन कुरूप मलीन देख तिनका तिरस्कार मत करो ग्लानि मत करो॥ संसारमैं महा कुरूप मनुष्य तिर्यंचनिमैं महासूँगला भयंकररूप अनेक बार पाया है तातैं रूपका गर्व मत करो॥ ८॥ ऐसैं सम्यग्दर्शनका नाश करनेवाले अष्ट मदनिका स्वप्नमैं भी जैसैं संसर्ग नहीं होय तैसैं निरंतर करना योग्य है। अब जो पुरुष मदोन्मत्त होय अन्य धर्मात्माजनका तिरस्कार करैं है तिसके दोपका उपजना दिखावता संता सूत्र कहैं हैं—

स्मयेन योऽन्यानत्येति धर्मस्थान गर्विताशयः। सोऽत्येति धर्ममात्मीयं न धर्मो धार्मिकैर्विना॥ २६॥

अथ—गर्व रूप है अभिप्राय जाका ऐसा जो कोऊ पुरुष गर्वकरि धर्मके धारक अन्य धर्मात्मा पुरुषनिनै तिरस्कार करै है सो आपका धर्मका तिरस्कार करै है जातैं धर्मात्मा पुरुष विना धर्म नहीं पाइये है। जातैं जो धन ऐश्वय रूपादिकका मद करिकैं धर्मात्माको तिरस्कार करै सो आपका धर्महीका तिरस्कार किया। क्योंकि धर्म तो कोऊ पुरुषकै आधार है पुरुष बिना है नहीं॥२६॥

भावार्थ—संसारमैं धन ऐश्वर्य आज्ञाका बड़ा मद है। मद करि गर्विष्ट होय जाय तदि देवगुरुधर्मका हू बिनय भूलैहै। ऐसा बिचार करैहै जो मंदिर कहा वस्तु है? मैं अन्य नवीन बनाय लूंगा वा हमारा ही बनाया है अर जो ए तपस्वी त्यागी हैं सो हू हमारे ही आधीन भोजन वस्त्र करि जीवै हैं अर यो धर्म हू धन खरचनेतैं ही होय है धन खरचेसूं ठाकुरजीकी पूजा प्रभावना होय है। ऐसैं अवज्ञा करै है तथा अनेक पापाचरण करता हू कोऊ अभिमानके बसी होय दान पूजा प्रभावनामैं पांच रुपया लगाय आपकूं धन्य मानै है धर्मात्मा मानै है तथा धन आज्ञा ऐश्वर्यका मद करि अंध होय ऐसा मानै है जो जगतमैं धन ही बाड़ है जो धनवानके घर बड़े बड़े ज्ञानी शास्त्रनिके पारगामी काव्य श्लोकनिके बनावनेवाले नित्य आवै हैं बड़े बड़े ज्ञानी शास्त्रनिके अर्थि धनवाननिकूं घरमैं आप श्रवण कराता फिरै है। तथा अनेक कला चतुराईवाला धनवानके घर नित्य आवै है। तथा पूजन करनेवाला प्रभावनाकरनेवाला तथा भजनकरनेवाला अ-

नेक धनवानका आश्रय लेय धनवानकूं अत्रण कगावता फिरै है तथा उपवास व्रत वेला तेला करनेवाला त्यागी तपस्वी धनवाननिकै ही घर भोजनकूं आवै है। तथा मंत्र जापादिक हू धनवंत पुरुषनिके भले होनेकूं करैं हैं। तातैं समस्त धर्म और समस्त गुण हमारे धनके आधीन हैं ऐसैं धन ऐश्वर्य करि अपना आत्माकूं ऊंचा मानता कृतकृत्य भये धर्मात्मनिकी अवज्ञा करै है जातैं आत्मज्ञानी परमार्थी परम सन्तोषीनिकूं तो देखै नहीं। जिनकूं चक्रीकी संपदा अर इन्द्रलोककी संपदा हू दुःखरूप दीखै है वे पुरुष धनवंतनिका समागम स्वप्न हूमैं नहीं चाहै हैं अर जगतके अल्पपुण्यवाले निर्धन लोक गृह कुटंबका पालनेकी आशा करि संतप्त भये अपना अभिमान छांड़ि धनवानकै घर आय दयावान उपकारी जानिकरिकै तथा धर्मसूं प्रीत अर धन पावनेका फललेनेवाला जानि धनवानके द्वारै आवै है परन्तु धनका मदकरि अंध होय ताकै तो दान नहीं होय है उपकार नहीं करै है दयारहित निर्दयी होय है। केवल हमारा मान मत छीजो मत बिगड़ो ऐसैं मानता मरण करि बहुत ममता कृपणताका प्रभावकरि नरक तिर्यंच गतिमैं बहुतकाल परिभ्रमण करै है। बहुरि जे धन संपदा पाय करिकैं मदरहित हैं तिनकै ऐसा बिचार है जो या धनसंपदा हमारा रूप नहीं हमारी नहीं कोऊ पूर्वकृत पुण्य फला है सो विनाशीक है अब इस संपदाकरि किसीका उपकार करूं दरिद्री लोगनिका संताप दूर करूं करुणाकरि दुःखित जीवनिका उपकार करूं। तथा जिनधर्मके श्रद्धानी ज्ञानी तिनका दरिद्रादिक संताप मेट निराकुल करूं। समस्त जन धनवानकी आशा करैं हैं मैं दरिद्री होता तो मोतैं कौन उपकार चाहता तातैं मेरे शुभ कर्म फल्या है तो आश्रितनिका भरण पोषण करूं बालक वृद्ध रोगी अनाथ विधवा अशक्तनिका उपकार करिहो मेरा धन पावना सूफल है तथा ऐसा कार्यमैं लगाऊं जातैं जिनधर्मकी परिपाटी बहुत काल प्रवर्तै। ज्ञानाभ्यासकी परंपरा चली जाय नित्यपूजन ध्यान अध्ययन तप करि संसारके उद्धार करनेवाला कार्य प्रवर्त्ते बो करै ये धन पायेका फल है लाभ है जो पर उपकार मैं धन नहीं लागैगा तो अवश्य विनाश होसी ही किसीकी लार संपदा परलोक गई नहीं। दान बिना केवल पाप दुर्ध्यान कराय यह संपदा संसारमैं डबोय देगी। इस संपदा पाइबेको तो

दान करना ही फल है। कोट्यां मनुष्य पूर्व दान नहीं दिया ते घर घर द्वार अन्न मांगता फिरै उदर भर
भोजन नहीं मिलै है। शरीर ऊपरि कपड़ा नहीं मिलै है। दरिद्री दीन हुआ परकी उच्छिष्टादिकनिमैं
आशा करता फिरै है सो दान रहितताका तथा कृपणताका फल है। मनुष्यनिका पशुवनिका दासपना क-
रता हू उदर नहीं भर सकै है दान बिना मोकूं आगामी कालमैं संपदा नहीं प्राप्त होयगी दानमैं धर्मके
स्थाननिमैं जो लगाऊंगा तो पावना सूफल है मरण हुवा परलोक साथि जायगी नहीं जहां धरी है तहां
ही धरी रहैगी। तातैं कोऊ जीवनिके उपकारमैं खरच होय तो सूफल है वाही संपदा हमारी है ऐसा वि-
चार सहित सम्यग्दृष्टी है। सो परोपकारके कार्यनिमैं लगावनेमैं उद्यमी रहै है। यद्यपि धर्मात्मा पुरुषनिके
तो या संपदा ग्रहण करने योग्य ही नहीं मोहकरि अंध करनेवाली आत्माकूं भुलावनेवाली है यामैं सम्य-
ग्दृष्टी अपनास ही नहीं करै तथापि चारित्रमोहके उदयतैं राग नहीं घटै तो परजीवनिके उपकारमैं तो
अवश्य लगावनी। बहुत कष्टतैं उपजाई ताकूं उत्तम कार्यमैं लगावना छाड़ि करि मरजानेमैं अपना कहा
भला होयगा? या विचारि जे पापरहित जन अर निर्धन रोगी दुःखित जनको देखि अवज्ञा नहीं करै है
धन देय दुःख मेटै है धर्ममैं प्रवर्त्तावनेवाले शुभ कार्यमैं खरचि करावनेवालेनिको देखि बड़ा आनंद मानै
है। धर्म साधन करनेवालेनिके सामिल होय धनके भोगनेमैं आनंद मानै है ते संपदा पावनेका फल लिया
है अर आगैं परलोकमैं देवनिकी संपदा चक्रीनिकी संपदाकूं दानी ही प्राप्त होय है। अर आगैं जे संप-
दामैं रागी हैं तिनकूं संपदाका स्वरूप दिखावनेकूं सूत्र कहैं हैं—

यदि पापनिरोधोऽन्यसंपदा किं प्रयोजनं। अथ पापास्रवोस्त्यायसंपदा किं प्रयोजनं ॥ २७ ॥

अर्थ—सम्यग्दृष्टी बिचारै है जो ज्ञानावरणादि अशुभ पाप प्रकृतिनिका आस्रव होना मेरे रुक गया
तो इसतैं अन्य संपदा करि मेरे कहा प्रयोजन है अर जो हमारे पापका आस्रव होय है अर संपदा आवै
तो इस संपदा करि कहा प्रयोजन है ॥२७॥

भावार्थ—इस जीव के जो त्यागरूप संयमरूप प्रवृतिकरि पापका आस्रव होना रुक गया तो अन्य जो

इंद्रियनिके विषयनिकी संपदा राज्य ऐश्वर्य संपदा नहीं प्राप्त भई तो इस संपदातैं कहा प्रयोजन है आस्त्रव रुकनेतैं तो निर्वाणसंपदा अहमिंद्रलोककी स्वर्गलोककी संपदा प्राप्त होय है या खाक धूलि समान क्लेशकी भरी क्षणभंगुर संपदाकरि कहा प्रयोजन है। अर जो इस जीवकै त्यागरूप संयमरूप प्रवृत्तिकरि पापका आस्त्रव नहीं है सो निर्वंध नाम संपदा वड़ी विभूति महालक्ष्मी है अर जो अन्याय अनीति कपट छल चोरी इत्यादिककरि मेरे पापका आस्त्रव निरंतर होय है अर धन संपदा प्राप्त होगई तो इस करि कहा प्रयोजन है। शीघ्र ही मरणकरि अंतर्मुहूर्तमैं नरकका नारकी जाय उपजैगा। तातैं सम्यग्दृष्टीकै तो पाप कर्मके आस्त्रव आवनेका वड़ा भय है अर पापका आस्त्रव रुक जानैकूं ही महासम्पदाका लाभ मानै है। अर इस संसारकी संपदाकूं तो पराधीन दुःखकी देनेवाली जानि यामैं लालसा नहीं करै है अर कदाचित लाभांतराय भोगांतराय कर्मका क्षयोपशमतैं प्राप्त होय ताकूं पराधीन विनाशीक वंध करनेवाली जानि इस संपदामैं लिप्त नहीं होय है। वर्तमानकी किंचित वेदनाकूं मेटनेवाली मानि उदासीन भया कड़वी औषधि ज्यों ग्रहण करै है संपदाकूं अपना हित जानि वांछा नहीं करै है। अब छह अनायतनिका ऐसा स्वरूप जानना, कुदेव, कुगुरु कुशास्त्र अर कुदेवका श्रद्धान सेवन करनेवाला अर कुगुरुको सेवा करनेवाला अर कुशास्त्रका पढ़नेवाला ऐसैं छहप्रकार ये धर्मके आयतन कहिये स्थान नहीं। इनतैं कदाचित अपना भला होना नहीं यातैं ये छहूं अनायतन हैं इनका संक्षेप स्वरूप ऐसा जानना, जामैं सर्वज्ञपना नहीं वीतरागपना नहीं जाकूं कामी क्रोधी तथा चोरनिका अर जारनिका शिरोमणि कहिये। तथा ताकूं भोजनका इच्छक मांसका भक्षक क्रोधी लोभी अपनी पूजा करावनेका इच्छक जीवनिका संघारकरनेवाला अपने भक्तनिका उपकारक अभक्तनका विनाशक कहै जिनको वहुत मूढ़ लोग देव बुद्धि कर पूजै हैं अर देवपनाका आयतन नहीं उसमैं देव बुद्धि करना मिथ्या है। वै देवपनाका आयतन नहीं है। वहुरि जो व्रतसंयमरहित अनेक पाखंड भेषका धारक तिनिमैं, व्रत त्याग विद्या ध्यानादिक परिग्रह त्याग देख करकै तथा मंत्र जंत्रतंत्र विद्या ज्योतिष वैद्यक तथा शुकनविद्या तथा इन्द्रजालादिक विद्यानिकरि

पूज्य गुरुपना नहीं जानना ।
अनेक मूढ़ लोगनिकै मान्य पूज्य देख करि पाखंडी जिन आज्ञाबाह्य भेषीनिमें
बहुरि खोटे मिथ्याशास्त्र हिंसाके पोषक तिनिमें आत्महित नहीं सो शास्त्र सम्यग्ज्ञानका आयतन नहीं है ।
अर कुदेव कुगुरु कुशास्त्रनिके सेवन करनेवाले इनकी उपासनातें अपना कल्याण माननेवालेनिकूं सम्यग्दृष्टी
प्रशंसा नहीं करै है। ऐसे सम्यग्दर्शनके घात करनेवाले तीन मूढ़ता अष्ट मद अष्टशंकादिक दोष छह अना-
यतन इन पचीस दोषनिका परिहार करि व्यवहार सम्यक्दर्शनके धारणतें निश्चयसम्यग्दर्शनकूं प्राप्त होहू।
अर जाके पचीस दोषरहित आत्माका श्रद्धानभाव है ताहीकै निश्चय सम्यग्दर्शन होनेका नियम है । जाकै
बाह्यदोष ही दूर नहीं होय ताकै अंतरंग हू सम्यग्दर्शन शुद्ध नहीं होय है अब सम्यक्त्वके भेद अर
उत्पत्ति कैसैं होय है सो कहै हैं । सम्यक्त्व तीनप्रकार है—उपसम्यक्त्व १ क्षयोपशम सम्यक्त्व २ क्षा-
यिकसम्यक्त्व ॥३॥ संसारीजीवकैं अनादिकालतें अष्टकर्मनिका बंधन है तिनमें मोहनीकर्मका भेद जो
दर्शनमोहनी ताका तीन भेद है। मिथ्यात्व १ सम्यग्मिथ्यात्व २ सम्यक्त्व प्रकृति मिथ्यात्व ३ अर चा-
रित्र मोहनीका भेद जो अनन्तानुबंधी क्रोध मान माया लोभ ऐसें सात प्रकृति सम्यक्त्वका घात करनेवाली
हैं। इन सप्त प्रकृतिनिका उपसमतें उपशमसम्यक्त्व होय है। अर इन सप्त प्रकृतीनिका क्षयतें क्षायिकसम्य-
क्त्व होय है। इन ही सप्त प्रकृतिनिका क्षयोपसमतें क्षायोपशमिक सम्यक्त्व होय है याहीकूं वेदक सम्यक्त्व
कहिये है। तहां अनादिमिथ्यादृष्टी जीवकैं पहली उपशम सम्यक्त्व ही होग है अर मिथ्यादृष्टीके मिथ्या-
त्व छूटि सम्यक्त्व होय ताकूं प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहिये है। अर जो उपशम श्रेणीको आदिमें क्षयोप-
शमसम्यक्त्वतें उपशमसम्यक्त्व होय सो द्वितीयोपशमसम्यक्त्व है। अब मिथ्यादृष्टीकैं मिथ्यात्वगुणस्थानतें
उपशमसम्यक्त्व कैसैं होय ताकूं श्रीलब्धिसारजीके अनुसार किंचित लिखिये है ।

सम्यग्दर्शन उपजै है सो चारों गतिहीमें अनादिमिथ्यादृष्टी वासादि मिथ्यादृष्टीकै उपजै है परंतु संज्ञीहीकै
उपजै है असंज्ञीकै नहीं उपजै ॥ पर्याप्त केही उपजै अपर्याप्तकै नहीं उपजै है ॥ मंद कषायी हीकै उपजै तीव्र
कषायीकै नहीं उपजै भव्यही कै उपजै अभव्यकै नहीं उपजै गुण दोषनका विचार सहित साका रोप योग जो

ज्ञानोपयोग युक्तहीकै उपजै दर्शनोपयोगीकै नहीं उपजै जाग्रत अवस्थाहीमैं उपजै निद्राकर अचेतकै नहीं उपजै सन्मूर्च्छनकै नहीं उपजै अर पंचमी करण लब्धिमैं उत्कृष्ट जो अनिवृति करण तिसका अन्त समयमैं प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्रगट होय है। अब पंच लब्धिके नाम ऐसे हैं,—क्षायोपसम लब्धि १ विशुद्धिलब्धि २ देशनालब्धि ३ प्रायोगलब्धि ४ करणलब्धि ५ ये पांच लब्धि बिना सम्यक्त्व नहीं उपजै। तिनमैं चार लब्धि तो कदाचित संसारी भव्य तथा अभव्यकै भी होय जाय है परन्तु करणलब्धि तो जाकै सम्यक्त्व तथा चारित्रकूं अवश्य प्राप्त होना होय तिसहीकै होय है अब क्षयोपसमलब्धिकूं आगममैं ऐसैं कहैं हैं,—जिस कालमैं ऐसा योग आमिलै जो अष्ट कर्मनिमैं ज्ञानावरणादिक समस्त अप्रसस्त प्रकृतीनकी शक्ति जो अनुभाग सो समय समय प्रति अनन्तगुणा घटता अनुक्रम करि उदय आवै तिसकालमैं क्षयोपसमलब्धि होय है। जातैं उत्कृष्ट अनुभागका अनन्तवां भाग प्रमाण जे देशघातिस्पर्द्धक तिनिका उदय होतैं हू उत्कृष्ट अनुभागका अनन्त बहु भाग मात्र जे सर्वघातीस्पर्द्धक तिनकी सत्तामैं अवस्थिति सो उपशम ऐसा संयोगकी प्राप्ति जिस कालमैं होय सो क्षयोपसमलब्धि जाननी। प्रथम भई जो क्षयोपशमलब्धि तिसकै प्रभावतैं उपज्या जो जीवकै सातावेदनीय आदि शुभप्रकृतिके बंधकूं कारण धर्मानुरागरूप शुभपरिणामनिकी प्राप्ति होय सो विशुद्धलब्धि है। सो ठीक ही है अशुभकर्मनिका रस देय घटि जाय तदि जीवकैं संक्लेश परिणामकी हानि होजाय तदि विशुद्धिपरिणामनिकी वृद्धि होनी युक्ति ही है। ऐसैं दूजी विशुद्धिलब्धि कही। अब देशनालब्धिका ऐसा स्वरूप जानना छहद्रव्य नवपदार्थनिके उपदेश करनेवाला आचार्यादिकनिका लाभ अर तिनिका उपदेशकी प्राप्ति अर तिनकरि उपदेश्या पदार्थनिका धारण करनेकी प्राप्ति सो देशनालब्धि है। नरकादिकनिमैं उपदेशदाता जहां नहीं हैं तहां पूर्व जन्ममैं धार्‍या जो तत्वार्थ तिसके संस्कारका बलतैं सम्यग्दर्शन होय है। अब चौथी प्रायोग्यलब्धिका स्वरूप आगममैं जैसा है सो कहै हैं, एक ही जे तीन लब्धिकरि संयुक्त जे जीव समय समय विशुद्धताकी वृद्धिकरि आयुकर्म बिना सात कर्मनिकी अन्तःकोटाकोटिसागर मात्र स्थिति अवशेष राखै तिसकाल विषय जो पूर्व स्थिति थी ताको एक कांडक।

घात करि छेदि, तिस कांडकके द्रव्यको अवशेष रहो स्थिति विषै निक्षेपण करै है अर घाति कर्मनिका जो अनुभाग कहिये रस सो तो दारू अर लतारूप अवशेष रहै है। अर शैलस्थितिरूप नहीं रहै है अरु अघातियानिका अनुभाग निम्ब कांजीर रूप रहै है। विष अर हलाहल रूप नहीं रहै है। पूर्वै जो अनुभाग था ताके अनंतका भाग दीयें बहुभाग मात्र अनुभागकूं छेदि अवशेष रह्या अनुभाग विषै प्राप्ति करै है। तिस कार्य करनेकी योग्यताकी प्राप्ति सो प्रायोग्यलब्धि है सो भव्यकै वा अभव्यकै भी समान होय है। बहुरि संक्लेशपरिणामी संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्तकै जो संभवै ऐसा उत्कृष्टस्थितिबंध अर उत्कृष्टस्थिति अनुभाग प्रदेशका सत्व होतैं जीवकै प्रथमोपशम सम्यक्त्व नहीं ग्रहण होय है अर विशुद्ध क्षयकश्रेणीविषै संभवता ऐसा जघन्यस्थितिबंध अर जघन्यस्थिति अनुभाग प्रदेशका सत्त्व होते हू प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी प्राप्ति नहीं होय है। प्रथमोपशम सम्यक्त्वके सन्मुख भया जो मिथ्यादृष्टी जीव सो विशुद्धताकी बृद्धि करि वधता संता प्रायोग्यलब्धिका प्रथम समयतैं लगाय पूर्व स्थितिके संख्यातवें भाग मात्र अन्तः कोटाकोटिसागरप्रमाण आयु विना सात कर्मनिका स्थितिबंध करै है। तिस अन्तःकोटाकोटिसागरस्थितिबंधतैं पल्यका संख्यातवां भाग मात्र घटता स्थितिबंध अंतर्मुहूर्तपर्यंत समानता लीये करै है। बहुरि तातैं पल्यका संख्यातवां भाग मात्र घटता स्थितिबंध अंतर्मुहूर्तपर्यंत समानता लिये करै। ऐसैं क्रमतैं संख्यातस्थितिबंधापसरणनिकरि प्रथक्त्व सौसागर घटै पहला प्रकृतिबंधापशरणस्थान होइ। बहुरि इस ही क्रमतैं ( तिसतैं हू प्रथक्त्व सौसागर घटै दूजा प्रकृति बंधापशरणस्थान होय ऐसैं ही क्रमतैं ) इतना स्थितिबंध घटै एक एक स्थान होय ऐसैं प्रकृतिबंधापशरणके चौतीस स्थान होय हैं॥ यहां प्रथक्त्व नाम सात आठका है तातैं इहां प्रथक्त्वसौसागर कहनेतैं सातसै वा आठसै सागर जानना। अब यहां कैसी कैसी प्रकृतीनका बंधमैं तेव्युच्छेद होय है यहांतैं लगाय प्रथमोपशमसम्यक्त्वपर्यंत वन्ध नहीं होय। ऐसे बंधापशरण हैं। तिन चौतीस बंधापशरणका वर्णन किये कथनी बहुत हो जाय जो विशेष जान्या चाहै सो श्रीलब्धिसारग्रन्थतैं जान हू और हू विशेष प्रायोग्यलब्धिमैं में जानना। अब पंचमी कर-

णलब्धि सो भव्य हीकै होय अभव्यक नहीं होय हैं। अधःकरण १ अपूर्वकरण २ अनवृत्तिकरण ३ ऐसैं तीन करण हैं। इहां करण नाम कषायनिकी मन्दतातैं विशुद्धरूप आतमपरिणामनिका है । तिनमैं अल्प-अंतमुहूर्तप्रमाण काल तो अनिवृत्तिकरणका काल है। यात संख्यात गुणा अपूर्वकरणका काल है यातैं सं-ख्यात गुणा अधःप्रवृत्तिकरणका काल है सो हू अंतमुहूर्तप्रमाण ही है। जातैं इस अंतमुहूर्तके असंख्यात भेद हैं। बहुरि इस अधःप्रवृत्तिकरणकालकै विषै अतीत अनागत वर्तमान त्रिकालवर्ती नानाजीवसम्बन्धी इस करणके विशुद्धितारूप परिणामका असंख्यात लोक प्रमाण हैं, ते परिणाम अधःप्रवृत्तिकरणके जेते स-मय हैं तितनेमैं समान वृद्धि लिये समय समय वृद्धि लिये हैं। जातैं इस करणके नीचले समयके परिणा-मनिकी संख्या अर विशुद्धता ऊपरले समयवर्ती किसी जीवके परिणामनतैं मिलै है ॥ तातैं याका नाम अधःप्रवृत्तिकरण नाम है याका परिणामनिकी संख्या विशुद्धताके लौकिकदृष्टान्त अलौकिकसंदृष्टि गोमट-सारमैं तथा लब्धिसारमैं है तहांतैं विशेष जानना। इहां एता बड़ा बिस्तार कैसैं लिखा जाय ग्रन्थ बहुत बड़ा हो जाय। बहुरि अधःप्रवृत्तिकरणके परिणामनिकै प्रभावतैं चार आवश्यक होय हैं एक तो समयसमय-प्रति अनन्तगुणी विशुद्धताकी वृद्धि होय है । दूजा स्थितिबन्धापसरण होय है पूर्वैं जेता प्रमाण लिये कर्मनिका स्थितिबन्ध होता था तिसतैं घटाय घटाय स्थितिबन्ध करै है। बहुरि साता वेदनीयकूं आदि दे-कर प्रशस्तकर्मप्रकृतीनिका समय समय अनन्तगुणा बधता गुड़ खांड़ सर्करा अमृत समान चतुस्थान लिये अनुभागबंध होय है। बहुरि असाता वेदनीयादि अप्रशस्तकर्मप्रकृतीनिका अनन्तगुणा घटता निंब कांजीर समान द्विस्थानलिये अनुभागबंध होय है। विपहलाहलरूप नहीं होय है । ऐसैं अधःप्रवृत्तिकरणके परिणामनितैं चार आवश्यक होय हैं । अधःप्रवृत्तिकरणका अन्तमुहूर्तकाल व्यतीत भये दूजा अपूर्वकरण होय है । अधःकरणके परिणामनितैं अपूर्वकरणके परिणाम असंख्यात लोकगुणे हैं सो नाना जीवनकी अपेक्षा है। एक जीवकी अपेक्षा एक समयमैं एक ही परिणाम होय है। एक जीवकी अपेक्षा तो जेते अपूवकरणके अंतमुहूर्तकालके समय हैं ते ते परिणाम हैं। ऐसैं ही अधःक-

रणके भी एक जीवके एक समयमैं एक परिणाम ही होय है। नाना जीवनकी अपेक्षा एक समयके योग्य असंख्यात परिणाम हैं ते अपूर्वकरणके परिणाम भी समय समय सदृश चय करि वर्द्धमान हैं। इस अपूर्वकरणके परिणाम हैं ते नीचले समय संबंधी परिणामनितैं समान नहीं हैं। प्रथमसमयकी उत्कृष्ट विशुद्धतातैं द्वितीयसमयकी जघन्य विशुद्धता हू अनंतगुणी है ऐसैं परिणामनिका अपूर्वपणां है। तातैं दूसरा-करणकूं अपूर्वकरण कह्या है। अपूर्वकरणका प्रथम समयतैं लगाय अन्तसमयपर्यन्त अपने जघन्यतैं अपना उत्कृष्ट अर पूर्वसमयका उत्कृष्टतैं उत्तरसमयका जघन्य क्रमतैं परिणाम अनंतगुणी विशुद्धतालिये सर्पकी चालवत् जानने। इहां अनुकृष्टि नाहीं है। अपूर्वकरणके पहले समयतैं लगाय यावत् सम्यक्त्वमोहनी मिश्रमोहनीका पूर्ण काल जो जिसकालमैं गुण संक्रमण करि मिथ्यात्वको सम्यक्त्वमोहनी मिश्रमोहनी रूप परिणमावै है तिसकालका अन्तसमयपर्यंत गुणश्रेणी १ गुणसंक्रमण २ स्थितिखंडन ३ अनुभागखंडन ४ ये चार आवश्यक होय हैं। बहुरि स्थितिबंधापसरण है सो अधःकरणका प्रथम समयतैं लगाय तिस गुणसंक्रमण पूर्ण होनेका कालपर्यन्त होय है। यद्यपि प्रयोग्यलब्धितैं ही स्थितिबंधापसरण होय है तथापि प्रायोग्यलब्धिके सम्यक्त्व होनेका अनवस्थितिपना है नियम नाहीं तातैं नहीं ग्रहण किया। बहुरि स्थितिबंधापसरणका काल अर स्थितिकांडकांडोत्करणका काल ए दोऊ समान अंतर्मुहूर्त्तमात्र हैं। तहां पूर्वैं बांध्या था ऐसा सत्तामैं कर्मपरमाणुरूप द्रव्य तामैंसूं काढ़ि जो द्रव्यगुण श्रेणीमैं दिया ताका गुणश्रेणीका कालमैं समय २ प्रति असंख्यात गुणां अनुक्रमलिये पंक्तिबंध जो निर्जराका होना सो गुणश्रेणीनिर्जरा है ॥१॥ बहुरि समय समयप्रति गुणकारका अनुक्रमतैं विवक्षित प्रकृतिके परमाणु पलट करि अन्यप्रकृतिरूप होय परिणमैं सो गुणसंक्रमण है ॥ २ ॥ बहुरि पूर्वैं बांधी थी ते सत्तामैं तिष्टती कर्मप्रकृतीनकी स्थितिका घटावना सो स्थितिखंडन है ॥ ३ ॥ बहुरिपूर्वबांधा था ऐसा सत्तामैं तिष्टता अशुभ प्रकृतीनिका अनुभागका घटावना सो अनुभागखंडन कहिये ॥ ४ ॥ ऐसैं चार कार्य अपूर्वकरणविषै अवश्य होय हैं। अपूर्वकरणके प्रथमसमयसंबंधी प्रशस्त अप्रशस्त प्रकृतीनका जो अनुभागसत्व है तातैं ताके अन्तसमय वि-

षय प्रशस्तप्रकृतीनका अनन्तगुणां वधता अर अप्रशस्तप्रकृतीनका अनंतगुणां घटता अनुभाग सत्व होय है। इहां समय समय प्रति अनंतगुणी विशुद्धता होनेतैं प्रशस्तप्रकृतीनका अनंतगुणा अर अनुभाग कांडकका महातमकरि अप्रशस्तप्रकृतीनका अनंतवें भाग अनुभाग अन्त समय विषै संभवै है इन स्थिति खंडादि होनेके विधानका कथन बहुत विस्ताररूप लब्धिसारतैं जानना इहां संक्षेपमात्र प्रकरणके वशतैं जनाया है ऐसे अपूर्वकरण विषै कहे जे स्थितिखंडादि कार्य विशेषतैं तीसरा अनिवृत्तिकरण विषय भी जानना। विशेष इतना इहां समान समयवर्ती नाना जीवनिके सदृशपरिणाम ही है जातैं जितने अनिवृत्तिकरणके अंतर्मुहूर्तके समय हैं तितने ही अनिवृत्तिकरणके परिणाम हैं तातैं समय२ प्रति एक २ ही परिणाम है अर इहां जो स्थितिखंड अनुभाग खंडादिकका प्रारंभ और ही प्रमाणलिये होय है। जातैं अपूर्वकरण संवन्धी जे स्थितिखंडादिक जिनका ताकैं अन्त समयविषैं ही समाप्तपना भया। इहां अंतरकरणादिविधि हैं सो लब्धिसारजीतैं जाननी। इहां प्रयोजन ऐसा है जो अनिवृत्तिकरणका अन्तसमयविषै दर्शनमोहनीय अर अनंतानुबंधीचतुष्क इनके प्रकृतिस्थिति प्रदेशअनुभागनिका समस्तपने उदय होनेकी अयोग्यतारूप उपशम होनेतैं तत्वारथनिका श्रद्धानरूप सम्यग्दर्शनकूं पाय उपसमिकसम्यग्दृष्टी होय है। तहां प्रथम समयविषै द्वितीय स्थितिविषै तिष्टता मिथ्यात्वके द्रव्यकूं स्थितिकांड अनुभागकांडक घात विना गुणसंक्रमणका भाग देय मिथ्यात्व सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्वमोहनी रूपकरि मिथ्यात्वके द्रव्यकूं तीनप्रकार करै है। भावार्थ,—अनादिकालका दर्शनमोहनी एकरूप था तिसका द्रव्यकरणनिके प्रभावतैं तीन प्रकार शक्तिरूप न्यारे२ होय तिष्टै हैं। ऐसे मिथ्यादृष्टीकै संम्यक्त्व होनेका कारण पंचलब्धिनिका संक्षेपतैं स्वरूप जनाया इस उपशमसम्यक्त्वका जघन्य तथा उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त ही काल है। अंतरमुहूरत पूर्ण भये पाछै नियमतैं तीन दर्शनमोहनीकी प्रकृतीनमैं एकका उदय होय है। तहां जो सम्यक्त्व मोहनीका उदय होय तो उपशमसम्यक्त्व छूटि जीवकै वेदकसम्यक्त्व होय है सो सम्यक्त्व मोहनीका उदयतैं वेदक सम्यग्दृष्टी चलमल अगाढ़रूप तत्वकूं श्रद्धान करै है। सम्यक्त्व मोहनीका उदयतैं श्रद्धानविषै चलपना होइ है तथा मल जो अतिचार सहित होय है वा सिथल श्रद्धान रहै है।

इस बेदकसम्यक्त्वहीकूं त्तयोपशम सम्यक्त्व कहिए है। जातैं दर्शनमोहनीके सत्वघाती स्पर्द्धकनिका उदयका अभाव सो ही इहां त्तय है। अर देशघातिस्पर्द्धक रूप सम्यक्त्व प्रकृतिका उदय होतैं। बहुरि तिस सम्यक्त्वमोहनी हीके बर्तमानसमयसंबंधीते ऊपरके निषेक उदयकूं नहीं प्राप्त भये तिनसंबंधी स्पर्द्धकनिका सत्तामैं अवस्थितरूप है लत्तण जाका ऐसा उपशम होतैं त्तायोपशमसम्यक्त्व होय है इसहीकूं सम्यक्त्वप्रकृतिके उदयका बेदन जो अनुभवन तातैं वेदक सम्यक्त्व कहिये है। वहुरि जो इस उपशमसम्यक्त्वका अन्तर्मुहूर्त काल बीतै पाछैं जो सम्यग्मिथ्यात्वका उदय होय तो मिश्रगुणस्थानी होजाय ताकै तत्व अतत्व दोऊनका मिल्या हुवा श्रद्धान होय है। अर जो मिथ्यात्वका उदय होय जाय तो मिथ्यादृष्टी बिपरीतश्रद्धानी होइ। जैसैं ज्वरकरि पीड़ित पुरुषकूं मिष्टभोजन नहीं रुचै, तैसैं ताकूं अनेकांतरूप बस्तुका सत्यार्थस्वरूप तत्व नहीं रुचै। तथा रत्नत्रयरूप मोत्तका मार्ग नहीं रुचै। तथा दसलत्तणरूप स्वपरकी दया रूप धर्म नहीं रुचै अर जो उपशमसम्यक्त्वका अन्तरमुहूर्तकालमैं ते जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली अवशेष रहै जो अनंतानुबंधी क्रोध मानमायालोभमैंतैं कोऊ एक कषायका उदय होय जाय तो सम्यक्त्वतैं छूटि सासादन नाम गुणस्थानपाय जघन्य एकसमय उत्कृष्ट छह आवली सासादन नाम पाय नियमतैं मिथ्यादृष्टी होय है। ऐसैं उपशम सम्यक्त्वका अन्तरमुहूर्तकाल पूर्ण भये पीछैं चार मार्ग हैं। जो सम्यक्त्वमोहनीका उदय होय जाय तो त्तयोपशम सम्यक्त्वी होय। अर मिश्रप्रकृतिका उदय होय तो मिश्रगुणस्थानी होय। अर मिथ्यात्वका उदय होय तो नियमतैं मिथ्यात्वी होय। अनंतानुबंधी चार कषायमैंतैं कोऊ एकका उदय होय तो सासादनगुणस्थानी नाम पाय पाछैं मिथ्यादृष्टी होय है। अब त्तायिकसम्यक्त्व होनेका संत्तेप कहैं हैं,—दर्शनमोहके त्तयतैं त्तायिक सम्यक्त्व होय है अर दर्शनमोहका त्तपावनेका आरंभ करै सो कर्मभूमिका मनुष्य ही करै भोगभूमिका मनुष्य नहीं करै। समस्त देव नारकी अर तिर्यंचनिकै त्तायिकसम्यक्त्वका आरम्भ नहीं होय है। अर कर्मभूमिका मनुष्य आरंभ करै सो हू तीर्थंकर वा अन्य केवली वा श्रुतकेवलीके पादमूलके नजीक तिष्टता होय सो ही दर्शनमोहकी त्तपणाका आरंभ

करै है। जातैं केवली श्रुतकेवलीकी निकटता बिना ऐसी बिशुद्धता नहीं होय है। यहां अधःकरणका प्रथम समयसों लगाय जेते मिथ्यात्वका अर मिश्रमोहनीका द्रव्यकूं सम्यक्त्व प्रकृति रूप होय संक्रमण करै तावत् अन्तर्मुहूर्तकालपर्यन्त दर्शनमोहनीकी क्षपणाका आरंभ कहिये है। तिस आरंभककालके अनन्तरवर्ती समयतैं लगाय क्षायिक सम्यक्त्वके ग्रहणके प्रथम समयतैं पहिले निष्ठापक होय हैं सो जहां प्रारंभ किया था कर्मभूमिका मनुष्य वैही निष्ठापक होय तथा सौधर्मादिक कल्प वा कल्पातीत अहमिंद्रनविषै वा भोगभूमिके मनुष्य तिर्यंचनिविषै वा धर्मानाम नरक पृथ्वीविषै भी निष्ठापक होय हैं। जातैं पूर्वै बांधी है आयु जानैं ऐसा कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टी मरकरि च्यारों गतिनविषै उपजै है। तहां क्षपणाकूं पूर्ण करै है। अब अनन्तानुबन्धी क्रोधमान मायालोभ अर मिथ्यात्व सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व इन तीनकी कैसैं क्षपणा करै है सो कहैं हैं। कोऊ मनुष्य वेदकसम्यग्दृष्टी असंयत वा देशसंयत वा प्रमत्त वा अप्रमत्त इन चार गुणस्थाननिमैंतैं कोऊ एक गुणस्थानमैं तिष्टता पूर्वै तीन करणकी विधि करकैं अनन्तानुबन्धी क्रोधमानमायालोभके उदयावलीमैं तिष्टते निषेकनिकूं छांड़ि अर उदयावली वाह्य तिष्टते समस्त निषेकनिकूं विसंयोजन करता अनिवृत्तिकरणके अन्तके समयविषै समस्त अनन्तानुबन्धीके द्रव्यकूं द्वादश कषाय अर नवनोकषाय रूप परिणमन करावै है सो अनन्तानुबन्धीका विसंयोजन है। यहां हू विसंयोजनमैं गुणश्रेणी अर स्थिति कांडघातादिक बहुत विधि हैं। अनन्तानुबन्धीका विसंयोजन किये पीछैं अन्तरमुहूर्तकाल विश्रामकरि अन्य किया नहीं करिता पीछै बहुरि तीन करणकरि अनिवृत्तिकरणका काल विषै मिथ्यात्वमिश्रसम्यक्त्वमोहनीको क्रमतैं नष्ट करै है। सो इन करणनिके सामर्थ्यतैं जो जो कर्मनिका अस्थिति अनुभागनिका घात होनेका विधान है सो लब्धिसारतैं जानहु। ऐसैं सप्त प्रकृतिनका नाशकरि क्षायक सम्यक्त्व होय है। ऐसैं तीनप्रकार सम्यक्त्व होनेका विधान संक्षेपतैं वर्णन किया। अब सम्यग्दृष्टीके अन्यहू अष्ट गुण प्रकट होय हैं तिनकरि आपके वा अन्यकै सम्यक्त्व जाना जाय है। संवेग १ निर्वेद २ आत्मनिन्द ३ गर्हा ४ उपशम ५ भक्ति ६ वात्सल्य ७ अनुकंपा ८ जाकै सम्यग्दर्शन होय ताकै संवेग कहिये धर्ममैं अनुराग

होयही जातैं संसारी मिथ्यादृष्टीका अनुराग तो देहसूं लगि रह्या है । जो मेरा देह उज्जल रहै बलवान रहै पुष्ट रहै तथा देहसूं ममता करि अभक्ष भक्षण करि आनंद मानै है । अन्यायके विषै शृंगारादिक करि देहहीकूं भूषित करै है । पापीनका संबंधमैं आनन्द मानै है तथा विकथामैं राग करै हैं तथा स्त्रीपुत्रधनसंपदामैं नगरदेशराज्यऐश्वर्यमैं अनुराग करै है । सम्यक्‌दृष्टीकै देहादिकनिमैं आत्मबुद्धि नहीं तातैं दशलक्षणधर्ममैं अनुराग करै है अर सम्यग्दृष्टीका अनुराग तो धर्मात्मा पुरुषनिमैं धर्मकी कथामैं धर्मके आयतनिमैं होय है । ऐसा संवेग गुण है सो सम्यग्दृष्टीके होय ही है ॥ १ ॥ बहुरि सम्यग्दृष्टीके पंच परिवर्तन रूप संसारतैं अर कृतघ्नदेहतैं अर दुर्गतिके लेजानेवाले भोगनितैं विरक्तपना नियमतैं होय ही सो दूजा गुण निर्वेद प्रगट होय है ॥ २ ॥ बहुरि अपना प्रमादीपना करि तथा असंयम भाव करि तथा संसारीक पापमैं प्रवृत्तिकरि निरंतर परिणाममैं निंद्यपनाका चिंतवन जो ऐसा दुर्लभ मनुष्यपनाकी एक क्षण भी धर्मका आश्रय बिना जाय है सो बड़ा अनर्थ है । ऐसैं अपने परिणामनिकरि अपना दोष सहित प्रवर्त्तनकूं विचारि अपने मनमैं अपनी निंदा करना सो तीजा आत्मनिंदानाम गुण है ॥ ३ ॥ बहुरि जो अपने गुरु होंय तथा बहुज्ञानी साधर्मी होय तिनके निकट विनय सहित अपने निंद्य दोषादिक प्रगट करना सो चौथा सम्यग्दृष्टी का गर्हानाम गुण है ॥ ४ ॥ बहुरि जो क्रोधमान मायालोभकी सम्यग्दृष्टीकै मंदता होय ही है । राग द्वेष काम उन्माद वैरादिक सम्यग्द्रष्टीकै अपना घातक जानि मंद होय ही है सो ही उपशम गुण है ॥५॥ बहुरि सम्यग्दृष्टीके पंच परमेष्टीमैं तथा जिनवाणीमैं जिनेंद्रके प्रतिविंबमैं दशलक्षणधर्ममैं धर्मके धारक धर्मात्मानमैं तपस्वीनमैं अनेक गुण स्मरणकरि गुणनमैं अनुराग करना सो सम्यग्दृष्टीके भक्ति नाम छठा गुण होयही है ॥ ६ ॥ बहुरि सम्यग्दृष्टीकै धर्मात्मामैं प्रीति होय ही जैसैं दरिद्रीनिके धनकूं देखि प्रीति आनंद प्राप्त होय तैसैं धर्मात्माकूं सम्यग्दृष्टी सम्यग्ज्ञानीकूं धर्मके व्याख्यानकूं श्रवण करि देखने करि सम्यग्दृष्टीकै अत्यन्त आनंद प्रगट होना सो वात्सल्य नामा सप्तम गुण है ॥ ७ ॥ बहुरि सम्यग्दृष्टीकै षट्कायके जीवनिकी दया प्रगट होयही है । परजीवनिके दुःख देखि अपना परिणाम कंपायमान होजाय

जातैं आपम दुःख आया तथा ताके दुःख मेट जानै प्रति परिणामका होना सो सम्यग्दृष्टीक अनुकंपागुण प्रगट होय है ॥ ८ ॥ ऐसैं और हू अप्रमाण गुण सम्यग्दृष्टीकै स्वयमेव प्रकट होय हे जातैं जिनके सत्यार्थ श्रद्धान ज्ञान प्रगट हो गया तिनकै समस्त बाह्य अभ्यंतर गुण ही होय परिणमै हैं ॥ अब जो जीव सम्यग्दर्शनसंयुक्त है ताहीकै महान् पना है ऐसा कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

सम्यग्दर्शनसपन्नमपि मातङ्गदेहजं। देवादेवं विदुर्भस्मगूढाङ्गारान्तरौजसं ॥ २८ ॥

अर्थ—सम्यग्दर्शनकरि संयुक्त चांडालके देहतैं उपजा जो चांडाल ताहिहू देवा कहिये गणधर देव जे हैं ते देव कहैं हैं। जैसैं भस्मकरि दबा जो अंगार ताकै अभ्यंतर तेज है ॥

भावार्थ—सम्यग्दर्शनकरि सहित चांडाल हैं ताकूं हू भगवान गणधर देव हैं ते देव कहैं हैं। जातैं यो हाड़मांसमय देह चांडालतैं उपज्या तातैं देह चांडाल है। परंतु सम्यग्दर्शन जाकै हुआ ऐसा आत्मा तो दिव्य गुणनिकरि दिपै है। तातैं मनुष्य शरीरकूं भी उत्तमगुणका प्रभावकरि देव कह्या है। जैसैं भस्मकरि आच्छादित अंगारा अभ्यंतर झकझकाट करता तेजकूं धारण करै है तैसैं सम्यग्दृष्टी हू मलीनदेहके अभ्यंतर गुणनिकरि दिपै है। तातै स्वामी श्रीसमंतभद्र जो कहैं हैं जो सम्यग्दृष्टीकी महिमा हमारी रुचिकरि नहीं कहैं हैं भगवानका द्वादशांगरूप आगममैं गणधर देव सम्यग्दृष्टी चांडालकूं हू देव कहैं हैं। जातैं यह देह तो महा मलीन मलमूत्रका भरया हाड़मांसचाममय जाके नवद्वारनितैं निरंतर दुर्गंध मल झरैं हैं ऐसा अपवित्र मलीन हू साधुनका देह है सो रत्नत्रयका प्रभावकरि इंद्रादिक देवनिके दर्शन करनेयोग्य स्तवन करनेयोग्य नमस्कारकरनेयोग्य होय है। गुण बिना चामड़ाका कफमलमूत्रका भरया मलीनकूं कौन बन्दना करै, पूजै, अवलोकन करै। यातै सम्यग्दर्शनहीतैं बंदने पूजने योग्य है। अब धर्मअधर्मका फल प्रगट करता सूत्र कहैं हैं—

श्वापि देवोऽपि देवः श्वा जायते धर्मकिल्विषात्। कापि नाम भवेदन्या संपद्धर्माच्छरीरिणा ॥ २९ ॥

अर्थ—धर्मके प्रभावतैं श्वान जो कूकरो सोहू स्वर्गलोकमैं देव जाय उपजै है। अर पापके प्रभावतैं स्व-

र्गलोकका महान् ऋद्धिधारी देवहू पृथ्वीमैं कूकरो आय उपजै है। अर प्राणीनिकै धर्मका प्रभावतैं और हू बचनद्वारै नहीं कही जाय ऐसी अहिमिंद्रनिकी संपदा तथा अविनाशी मुक्तिसंपदा प्राप्त होय है।

भावार्थ—मिथ्यात्वका प्रभावतैं दूजा स्वर्गपर्यंतका देव एकेंद्रियनमैं आय उपजै है अनंतानंत काल त्रसस्थावरनिमैं परिभ्रमण करता फिरै है। अर बारमां स्वर्गपर्यंतका देव मिथ्यात्त्वके प्रभावतैं पंचेंद्री तिर्यंचनिमैं आय प्राप्त होय है। तातैं मिथ्यात्वभाव महाअनर्थकारी जानि सम्यक्तहीमैं यत्न करना योग्य है। अब कुदेवादिक सम्यग्दृष्टीके वंदनेयोग्य नहीं हैं ऐसा दिखावता सूत्र कहैं हैं।

भयाशास्नेहलोभाच्च कुदेवागमलिंगिनां। प्रणामं विनयं चैव न कुर्युः शुद्धदृष्टयः ॥३०॥

अर्थ—शुद्ध सम्यग्दृष्टी हैं ते भयतैं आशातैं स्नेहतैं लोभतैं कुदेवनिकूं कुआगमकूं कुलिंगीनकूं प्रणाम नहीं कर विनय नहीं करै। जे काम, क्रोध, भय, इच्छा, क्षुधा, तृषा, रागद्वेष, मद, मोह, निद्रा, हर्ष, बिषाद, जन्म, मरणादि दोषनिकरि संयुक्त हैं ते समस्त कुदेव हैं ॥ * ॥ तिनकी व्यक्ति जगतमैं पञ्चमकालके प्रभावतैं प्रगट बहुत हैं। एक सर्वज्ञ वीतराग बिना समस्त कुदेव हैं।* अर हिंसाके पोषक रागीद्वेषी मोहीनकरि प्रकाश्य पूर्वापरदोषसहित विषयकषाय आरंभकूं पुष्ट करनेवाले प्रत्यक्ष अनुमान प्रमाणकरि दूषित ऐसे शास्त्र कुआगम हैं। अर जो हिंसादिक पंचपापनिका त्यागी आरंभपरिग्रहरहित देहके संबंधमैं निर्ममत्व उत्तम क्षमादि दशकर्मके धारी दोष टारि अजाचीकवृत्तिसहित दीनतारहित निर्जनस्थानमैं बसते। ध्यान अध्ययनमैं निरन्तरप्रवर्त्ते ते पांच इंद्रियनिके विषयांका त्यागी षट्कायका जीवांकी विराधनाका त्यागी एकबार मौनतैं परका दिया रसनीरस आपके निमित्त नहीं किया ऐसा भोजन रत्नत्रयका सहकारी कायकी रक्षाके निमित्त ग्रहण करता ऐसा नग्न मुनिराजका भेष तथा एक वस्त्रका धारक तथा कोपीनधारक क्षुल्लकका भेष तथा तीजा अर्जिकाका लिंग (भेष) एकवस्त्रका धारक इन तीन लिंग बिना जो अन्य अनेक लिङ्ग भेष धारण करैं हैं ते समस्त कुलिंगी हैं एक

* उक्त चिन्हौंके बीच की वाक्यावली हस्त लिखित प्रतिमें नहीं है।

मुनिका लिङ्ग तथा कोपीन धारक क्षुल्लक तथा एक वस्त्रको धारनहारी अर्जिका इन तीन भेष सिवाय समस्त भेषीनकूं सम्यग्दृष्टी विनय नमस्कार नहीं करै ऐसैं कुदेव कुशास्त्र कुलिंगीनकूं भय आशा स्नेह लोभतैं सम्यग्दृष्टी नमस्कार नहीं करै विनय नहीं करै। भावार्थ, सम्यग्दृष्टी है सो कुदेवकूं भयतैं नमस्कार नहीं करै जो यो देव है याकूं राजादिक हजारां मनुष्य पूजैं हैं जो याकूं वंदना नहीं करूंगा तो यो देव रोस करि मेरा विगाड़ करैगा सम्पदा हरैगा तथा स्त्रीपुत्रादिकको घात करैगा तथा कदाचित् याका द्वेषतैं मेरे रोग विद्यमान है दुःख विद्यमान है तथा द्वेषकरि अब मेरे हानि करैगा रोग करैगा तथा इस क्षेत्रमैं समस्त लोक पूजे हैं तथा हमारे कुलमैं बड़ा पिता तथा पिताका पिता माता भाई बंधु पूजते आवैं हैं अब मैं इनकी वन्दना पूजा उठादूंगा अर कदाचित् मेरा घर अनेक पुत्रपौत्रादिक लक्ष्मीकरि भस्या है जो किसीका मरण वा धनहानि तथा रोगादिक होजाय तो मोकूं दूषण आवै अर मेरे बड़ा दुःख खड़ा होजाय तो बड़ा अनर्थ है अर सारा लोकहू ऐसे कहैं है यो देवता आगैं नहीं माननेवालेनिकूं अन्धा कर दिया था। याकी पूजा बोलारी सत्कारतैं अनेकनिके रोग दूरि करि दिये। तथा यो जगन्नाथ स्वामी है याकी पुरीमैं नाई धोबी मीणा खटीक चमार परस्पर सामिल होय औठि [उच्छिष्ट] भक्षण करै हैं याकी अवज्ञा करै ताकै कोढ़ निकाल देहै ऐसा भय दिखावैं तथा अन्धेनिकूं आखें दी हैं संपदा दी है याकी निंदाकरि सम्पदा भ्रष्ट होगई थी तथा आगैं यह शनीसर देव रोषकरि विक्रमादीत राजानैचोरंग्यो करा दियो छो ऐसैं अनेक देवीभैरों क्षेत्रपाल हनूमान गणेश दुर्गाचंडो सूर्यादिक ग्रह योगनी जक्ष इत्यादिकनिका भय मानि सम्यग्दृष्टी इनकूं नमस्कार विनयादिक नहीं करै बहुरि कुछ पुत्र संपदा आजीवका राज्य धन ये देवता देगा ऐसी आशा करहू वंदना नहीं करै तथा हमारे माहिं इस देवताका स्नेह है हमारै तो दुःख आजाय तदि हमारा रक्षक तो देवताही है ऐसा स्नेहतैं हू बंदना नहीं करै बहुरि लोभतैंहूं कुदेवनिका सत्कार वन्दना नहीं करै जो मैं तो जिस दिनतैं आराधना या देवताकी करूं हू तिस दिनतैं मेरे लाभ है उच्चता है॥ ऐसैं लाभका कारण संकल्प करि कुदेवनिका आराधना नहीं करै तथा राजाका भयतैं पिता माताका भयतैं कुटुम्बका भयतैं

तथा लोकलाजतैं कुदेवनिकूं बंदना नहीं करै ऐसैं ही जो शास्त्र रागी द्वेषी हिंसाका पुष्ट करनेवाला तथा शृंगार कथा युद्ध कथा स्त्री कथादिक विकथाका प्ररूपक एकांत, रूप वस्तुकूं कहै यज्ञ होम मंत्र यंत्र तंत्र बशीकरण मारण उच्चाटनादिक तथा महाहिंसाके आरंभके कहनेवाले तथा कुदेव कुधर्मकी आराधना करावनेवाले संसारमैं उलझावनेवाले शास्त्रनिकूं सम्यग्दृष्टी बन्दना सत्कार नहीं करै है।तिसके कथनकूं रचनाकूं प्रशंसा नहीं करै संसारमैं उलझावनेवाला शास्त्रका व्याख्यानादिकर प्रकाश नहीं करै भय अर आशास्नेह लोभतैं खोटा आगमका प्रकाश नहीं करैं जो मैं मेरा बाप दादाआदिक करि मेरे इन शास्त्रनिकरि बहुत द्रव्यका उपार्जन हुआ है तथा इस शास्त्रतैं मैं हू बहुत धन उपार्जन करूं। तथा मेरी प्रतिष्ठा बधाऊं तथा जगतके मान्य होजाऊं तथा सबके ऊपरि होय राजादिकनै अपने सेवक करूं। ऐसा लोभतैं कुशास्त्रनिका सेवन सम्यग्दृष्टी नहीं करै तथा जो शास्त्र सेवन नहीं करूंगा तो मेरी आजीविका नष्ट होजायगी। तथा समस्त लोकनिमैं मेरी मान्यता पूज्यता घट जायगी। ऐसा भयतैं कुशास्त्रसेवन नहीं करै। तथा इस शास्त्रके वांचने पढ़नेमैं बड़ा रस है मन रंजायमान होजाय है बड़ी रसीली कथा है। तथा लोकननै रंजायमानकरनेवाला है। ऐसा स्नेह करि हू कुशास्त्रनिका आराधन सम्यग्दृष्टी नहीं करै है। बहुरि कोउ आशा करकै हू सम्यग्दृष्टी कुशास्त्र-निका सेवन नहीं करै है। जो इसतैं देवता बस होजायगा वा विद्या सिद्ध होजायगी। इत्यादिक इस लोकसंबंधी आशा करकै हू कुशास्त्रनिकी प्रशंसा बन्दना नहीं करै है। बहुरि सम्यग्दृष्टी है सो कुलिंगी-नकूं हू भय आशा स्नेह लोभतैं प्रणाम बन्दना प्रशंसा नहीं करै है। जो यो तपस्वी है वा विद्यावान है तथा राज्यमान्य है लोकमान्य है तथा इसमैं दृष्टि मुष्टि मारण उच्चाटनादिक अनेक शक्ति हैं मेरा बि-गाड़ मत कदाचित् करयो ऐसा भयतैं प्रणामादि नहीं करै। तथा यो करामाती है वा विद्यावान है यातैं कोऊ विद्या सीखनी है तथा यो राज्यमान्य है यातैं हमारा कार्य लेना है। ऐसा लोभतैं हू पाखंडीनकूं ब-न्दना नमस्कार सम्यग्दृष्टी नहीं करै। तथा यो भेषधारी मोकूं रसायण देनी करी है तथा एक औषधि यासूं वाकिफ करनो ( सीखनी ) है तथा यामैं व्याकरण विद्या तथा न्याय तथा ज्योतिषविद्या मोकूं सो-

खनी है। यातैं याका सेवन है इत्यादिक आशा तथा लोभ करि पाखंडी विषयी आरंभी परिग्रहधारीकूं सम्यग्दृष्टी नमस्कार नहीं करै ताकी प्रशंसा नहीं करै ताकूं सत्यवादी नहीं कहै धर्म रूप जानै नहीं। अब यहां कोऊ कहै जो कोऊ बलवान जबरीतैं नमावै तथा आप नहीं नमै तो बड़ा उपद्रव करै तदि कहा करै ताका उत्तर कहै हैं॥ जो परकी जबरीतैं नमस्कार किये श्रद्धान नहीं बिगड़ै है जातैं देवतादिकनिके भयतैं तथा आशातैं स्नेहतैं लोभतैं जो नमस्कार करै तदि श्रद्धान बिगड़े है अर जबरीतैं दुष्ट मलेच्छादिक व्रतीके मुखमैं अभक्ष दे देवै तो व्रत नहीं बिगड़ैगा तथा अन्यमतीनके ग्रंथनिमें तथा वाक्यनिमें कुदेवनिकूं नमस्कार लिखा है। तथा कुदेवनिकी स्तुति लिखी है तो उनके बांचनेमात्रतैं तो कुदेवनिकूं नमस्कार स्तुति नहीं हो जायगी। सम्यग्दर्शन तो आतमाका भाव है अपने भावनितैं जो कुदेवादिकनिमैं वंदना योग्य अर आपकूं बंदनेवाला मानि नमस्कार स्तवन वंदना करै कुछ इनतैं अपना भला होना जानै तिसके सम्यक्त्वका अभाव है। बहुरि इस कालमैं म्लेच्छ मुसलमान राजा भये अब वे कुछ पूछै अर आप कुछ उनसूं कहा चाहै तदि हाथ जोड़ ही अर्ज करी जाय इसमें अपना श्रद्धान ज्ञान नहीं नष्ट होय है। चारित्रधारी त्यागी साधूजन होय सो हाथ हू नहीं जोड़े अर अपना खंड २ करै तो हू धर्मकार्य बिना बचन नहीं कहै अर त्यागीनतैं दुष्ट मनुष्य म्लेच्छ राजादिक महापापी हू प्रणाम नहीं चाहै हैं। तातैं संयमी तो राजाकूं चक्रीकूं देवनिकूं माताकूं पिताकूं विद्या गुरुकूं कदाचित ही नमस्कार नहीं करै हैं। ये द्विजन्मा हैं। अर अव्रत सम्यग्दृष्टी हू अपना वशतैं कुदेव कुगुरु कुधर्मकूं नमस्कार नहीं करै। अन्य व्यवहारीनकूं यथायोग्य विनय सत्कारादि करै हैं। अर परकी जबरीतैं देश त्यागै आजीविका त्यागै धन त्याग जाय परन्तु कुधर्मका सेवन कुदेवादिककी आराधना नहीं करै हैं। अब रत्नत्रयमैं हू सम्यग्दर्शनकै श्रेष्ठपना देखावनेकूं सूत्र कहैं हैं।

दर्शनज्ञानचारित्रात् साधिमानमुपाश्नुते। दर्शनं कर्णधारं तन्मोक्षमार्गे प्रचक्षते॥ ३१॥

अर्थ,—ज्ञान और चारित्रतैं सम्यग्दर्शन जो है ताहि अतिशय करके साधिमान कहिये सर्वोत्कृष्ट है ऐसा

जानि सेवन करै है। तिस ही कारणतैं मोक्षके मार्गविषै सम्यग्दर्शनकूं कर्णधार कहिये है। जैसैं समुद्रके विषै जहाजकूं खेवटिया पार करै है तैसैं अपार ऐसा संसार समुद्रविषै रत्नत्रयरूप जहाजको पार करनेमैं सम्यग्दर्शन खेवटिया है। भावार्थ,—रत्नत्रयमैं सम्यग्दर्शनही अति उत्कृष्ट है। अब सम्यग्दर्शनकै उत्कृष्टपनाका हेतु कहनेकूं सूत्र कहैहैं।

विद्यावृत्तस्य संभूतिस्थितिवृद्धिफलोदयाः। न सन्त्यसति सम्यक्त्वे बीजाभावे तरोरिव ॥३२॥

अर्थ,—विद्या कहिये ज्ञान अर व्रत कहिये चारित्र इसकी उत्पत्ति अर स्थिति अर वृद्धि अर फलका उदय यह सम्यक्त्व नहीं होतै संतै नहीं होय है। जैसैं बीजका अभाव होतै वृक्षकी उत्पत्ति स्थिति वृद्धि फलका उदय नहीं होय है। भावार्थ,—बीज ही नहीं तद वृक्ष कैसैं उपजैगा अर वृक्षही नहीं उपज्या तदि स्थिति कौनकी होय अर वृद्धि कौनकी होय अर फलका उदय कैसैं होय? जातैं सम्यग्दर्शन नहीं होय तदि ज्ञान चारित्र हू नहीं होय। सम्यक्त्व विना ज्ञान है सो कुज्ञान है अर चारित्र है सो कुचारित्र है तदि सम्यक्त्व बिना ज्ञानचारित्रकी उत्पत्ति ही नहीं तदि स्थिति कहांतै होय अर ज्ञानचारित्रकी वृद्धि कैसैं होय अर ज्ञान चारित्रका फल जो सर्वज्ञ परमात्मारूप होना कैसैं होय? तातैं सम्यक्त्व विना सत्यश्रद्धान ज्ञान चारित्र कदाचित ही नहीं होय। सो ही भगवान गुणभद्राचार्य महाराजनैं आत्मानुशासनमैं कह्या है।

शमबोधवृत्ततपसां पाषाणस्येव गौरवं पुंसः पूज्यं महामणेरिव तदेव सम्यक्त्वसंयुक्तं ॥१॥

अर्थ,—सम कहिये कषायनिकी मंदता अर बोध कहिये अनेक शास्त्रनिका प्रबल ज्ञान होना अर व्रत कहिये त्रयोदशप्रकार दुर्द्धरचारित्रका पालना अर कायरनितैं नहीं बणि सकै ऐसा बारहप्रकारका घोर तप ये चारोंही पुरुषकै बड़े भारी हैं परन्तु पुरुषकै इनका बड़ाभारी पणा पाषाणका भारीपणाके तुल्य हैं अर एही समभाव ज्ञान चारित्र तप जो सम्यक्त्व संयुक्त होय तो महामणि चिन्तामणि ज्यों पूज्य होजाय। भावार्थ,—जगतमैं अनेक पाषाण हू हैं अर मणि हू हैं। मणि भी पाषाण ही हैं अर झाझड़ा पत्थर हू पाषाण ही है परन्तु कांति करि बड़ा भेद है पाषाण पाषाण समान नहीं। जो झाझड़ा पत्थर तीन मण हू

लेजाय तो एक पैसा मिलै अर मणि जो पद्मरागमणि तथा वज्रमणि रत्यां मासा हू हाथ लगि जाय तो लक्ष्यां धन उपजै हैं। अपने पुत्र पौत्रादिकताईका दरिद्र नष्ट हो जाय। तैसैं सम्यक्त्व सहित अल्प हू समभाव अल्प हू ज्ञान अल्प हू चारित्र तप भाव इस जीवकूं कल्पवासी इंद्रादिकनिमैं उपजाय जन्म मरणके दुःखरहित परमात्मा कर देहै। अर सम्यक्त्व विना बहुत हू समभाव तथा बहुत हू ग्यारा अंग पर्यंत ज्ञानका अभ्यास बहुत हू उज्जल चारित्र घोररूप हू तप किया हुआ सो कषायनिकी मंदता होय तो भवनबासी व्यंतर ज्योतिषीनिमैं तथा अल्पऋद्धिधारी कल्पवासीनमैं उपजाय फिर चतुर्गति संसारमैं भ्रमण करावे है। तातैं सम्यक्त्वसहित ही समबोध चारित्र तप धारण जीवका कल्याण है। अब कोऊ आशंका करै जो सम्यक्त्व नहीं होय अर चारित्र तप ग्रहण करै ऐसा मुनि है सो आरम्भादिकमैं लीन ऐसा ग्रहस्थतैं तो उत्तम होयगा तिसकूं उत्तर करता सूत्र कहै हैं।

गृहस्थो मोक्षमार्गस्थो निर्मोहो नव मोहवान्। अनगारो गृही श्रेयान् निर्मोहो मोहिनोमुनेः ॥ ३३ ॥

अर्थ,—जाके दर्शनमोह नाहीं ऐसा गृहस्थ है सो मोक्ष मार्गमें तिष्टै है अर मोहवान् ऐसा अनगार कहिये गृहरहित मुनि सो मोक्षमार्गी नहीं है याहीतैं मोहवान जो मुनि तातैं दर्शनमोहरहित गृहस्थ है सो श्रेयान कहिये सर्वोत्कृष्ट है। भावार्थ,—जाकै मोह जो मिथ्यात्व सो नहीं ऐसा अव्रत सम्यग्दृष्टी हू मोक्षमार्गी है। जाकै सात आठ भव देव मनुष्यनिके ग्रहण होय नियमतैं मोक्ष होजायगा अर जाके मिथ्यात्व है अर मुनिके व्रतधारी साधु भया तोहू मरि भवनत्रिकादिकमैं उपजि संसारहीमैं परिभ्रमण करैगा सो ही कुन्दकुन्दस्वामी दर्शन पाहुड़मैं कह्या है। गाथा,—

दंसणभट्टा भट्टा दंसणभट्टाण णत्थि णिव्वाणं। सिज्झंति चरियभट्टा दंशणभट्टा ण सिज्झंति ॥१॥
सम्मतरयणभट्टा जाणंता बहुविहाइ सत्थाइं। आराहणाविरहिया भमंति तत्थेव तत्थेव ॥ २ ॥
सम्मतविरहियाणं सुद्धविओगां तवं चरंताणं। ण लहंति वोहिलाहं। अवि वाससहस्सकोडिहिं ॥ ३ ॥
जे दंसणेसु भट्टा णाणे भट्टा चरित्तभट्टा य ॥ एदे भट्टविभट्टा सेसं वि जणं विणासंति ॥ ४ ॥

जह मूलम्मि विणट्ठ दुमस्सपरिवारणत्थि परिवड्डी तह जिणदंशणभटठा मूलविणट्ठाण सिज्झंति ॥५॥
जेदंसणेसु भट्टा पाए पाडंति दंशणधराणं। तेहुंति लुल्लमूया वोही पुण दुल्लहा होसिदि ॥ ६ ॥
जे विपडंति च तेसिं जाणंता लज्जगारवभयेण। ते सिंपि णत्थि वोही पावं अणुमोदमाणाणं ॥७॥
जिणवयण मोसहमिणंविसयसु हविरे पणंअमियभूदं। जरमरणवाहिवेयणसुयकरणं सव्वदुक्खाणं ॥८॥
एक्कंजिणस्सरूवं वीयं उक्कस्ससावयाणं च। अवरट्ठियाण तिदयं चउत्थं पुण लिंग दंशण णत्थि ॥६॥
जं सक्काइ तं कीरइ जं च ण सक्केइ तं च सद्दहई। केवलजिणेहिं भणयं सद्दहमाणस्स संमत्तं ॥ १० ॥
ण वि देहो वंदिज्जइ ण वि य कुलो ण वि य जाइ संपणो को वंदमि गुणहीणो णहुसवणुण सावहुहोई ॥

अर्थ—जो सम्यग्दर्शनकरि भ्रष्ट है ते भ्रष्ट हैं क्योंकि सम्यग्दर्शनतैं भ्रष्ट हैं तिनके अनन्तकालहूमें निर्बाण नहीं होय है। अर जिनकै सम्यग्दर्शन नहीं छूट्या अर चारित्रतैं भ्रष्ट भए हैं ते तो तीजे भवमें निर्वाण पाय जाय हैं अर सम्यक्त्व छूटि जाय तो अनन्त भवमैं हू संसार भ्रमणतैं नहीं छूटै हैं ॥ १ ॥ जो सम्यक्त्व रत्नकरि भ्रष्ट हैं ते बहुतप्रकार शास्त्रनिकूं जानते हू च्यार आराधनारहित भये संसारहीमें भ्रमण करै हैं ॥ २ ॥ जो सम्यक्त्व रत्नकरि रहित हैं ते हजार कोटि वर्ष आछीतरह उग्रतपकूं आचरण करता हू रत्नत्रयका लाभकूं नहीं पावै है ॥ ३ ॥ जो सम्यग्दर्शनरहित है ते ज्ञानके बिषै हू विपरीतज्ञानी भए भ्रष्ट ही हैं अर जाका आचरण भी भ्रष्ट है ते तो भ्रष्टनितैं हू भ्रष्ट हैं इनकी संगति करैं हैं तिनकूं हू धर्म-रहित कर बिनाश करैं हैं ॥ ४ ॥ जैसैं जिस वृक्षका मूल कहिये जड़ ताका नाश भया तिसके डाहला पत्र पुष्प फलादिक परिवारकी वृद्धि नहीं होय है तैसैं सम्यग्दर्शनकरि भ्रष्ट हैं ते मूल भ्रष्ट हैं तिनके ज्ञान चा-रित्रादिककी कैसैं सिद्धि होय है ॥५॥ जो सम्यग्दर्शनकरि भ्रष्ट हैं अर सम्यग्दर्शनके धारकनिकूं अपने पगनिमैं पड़ावनेकूं चाहै हैं ते परलोकमैं लूला और वचनरहित चरणरहित गूंगा होय हैं ॥ भावार्थ,—सम्यग्दर्शनरहित होय सम्यग्दृष्टीनितैं बंदनानमस्कार करावै है तथा करावा चाहै है ते वहुत काल एकेंद्रिय होय है॥६॥अर जे पुरुष लज्जा करकैं तथा गौरव जो अपना बड़ापणा करकैं भय करकैं मिथ्यादृष्टीनिके चरणनिमैं बंदना करै है

तिनके हू पाप जो मिथ्यात्व ताकी अनुमोदनातैं रत्नत्रयकी प्राप्ति दुर्लभ है ॥७॥ सम्यग्दृष्टीकै यो जिनेंद्रको वचन ही अमृतरूप औषधि है अर बिषयनिका सुखरूप आमाषयका बिरेचन करनेवाला है अर जरा मरणरूप बेदनाके क्षय करनेका कारण है अर समस्त संसारके दुखनिका क्षयका कारण है सम्यग्दृष्टीके ऐसा निश्चय है जो जन्म जरामरणादिक समस्तदुखरूप रोगकूं दूर करनेवाला अमृतरूप तो जिनेन्द्रका बचनही है इस बचन बिना अनादिकालका विषयनिकी चाहरूप दाहका करनेवाला आमाशयकूं काढ़ ज्ञान सुखादिक अंगनिकूं अमृतवत पुष्ट करनेवाला अन्य उपाय है ही नहीं ॥ ८ ॥

एक लिंग तो जिनेन्द्रका धारण किया सो नग्न स्वरूप समस्त वस्त्रशस्त्रादिरहित है अर दूजा उत्कृष्ट श्रावकका एक कोपीन तथा षंडवस्त्र सहित है तीजा अर्जिकाका है चौथा लिंग भेषी जिनमतमैं नहीं जिन धर्म बाह्य है वंदने योग्य नहीं ॥ ९ ॥ जिनेन्द्रकी जो आज्ञा है तिसका पालनेका सामर्थ्य होय सो तो आप आचरण करै अर जाका करनेका सामर्थ्य नहीं होय तो ताका श्रद्धान ही करै श्रद्धान करता जीवकै केवलीजिन सम्यक्त्व कह्या है ॥ १० ॥ सम्यग्दृष्टीकै रत्नत्रयरहित देह वंदनीक नहीं है जातिसंयुक्त कुल हू वंदने योग्य नहीं है जातैं सम्यग्दर्शनादिक गुणरहित श्रावक हू वंदनीक नहीं अर मुनि हू बंदनीक नहीं रत्नत्रयके प्रभावतैं देह वंदनीक हो जाय हैं कुल जात्यादिक हू वंदनीक होय है अब इस जीवका सर्वोत्कृष्ट उपकार करनेवाला अर अपकार करनेवाला कौन है सो कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

न सम्यक्त्वसमं किंचित् त्रैकाल्ये त्रिजगत्यपि ॥ श्रेयोऽश्रेयश्च मिथ्यात्वसमं नान्यत्तनूभृताम् ॥ ३४ ॥

अर्थ—इन प्राणीनिके सम्यग्दर्शन समान तीन कालमैं अर तीन जगतमैं अन्य कोऊ कल्याण है नहीं अर मिथ्यात्वसमान तीनकालमैं तीन जगतमैं अन्य कोऊ अकल्याण है नाहीं ॥

भावार्थ—अनंतकाल तो व्यतीत होगया अर वर्त्तमानकाल एक समय अर अनन्त काल आगैं आसी ऐसैं तीन कालमैं अर अधोभवनलोक अर असंख्यात द्वीप सागरपर्यंत मध्यलोक अर स्वर्गादिक उर्द्धलोक इन तीन लोकमैं सम्यक्त्व समान अन्य कोऊ सर्वोत्कृष्ट उपकार करनेवाला जीवनिका है नहीं, हुआ नहीं,

होसी नहीं जो उपकार इस जीवका सम्यक्त्व करै है ऐसा उपकार तीन लोकमैं भये ऐसे इंद्र अहमिन्द्र भुवनेन्द्र चक्री नारायण बलभद्र तीर्थंकरादिक समस्त चेतन अर मणिमंत्र औषधादिक समस्त अचेतन द्रव्य कोऊ सम्यक्त्व समान उपकार नहीं करै अर इस जीवका सर्वोत्कृष्ट अपकार मिथ्यात्व करै है तैसा अपकार करनेवाला तीन लोकमैं तीनकालमैं कोऊ चेतन द्रव्य अचेतनद्रव्य है नहीं हुआ नहीं होसी नहीं तातैं मिथ्यात्वका त्यागहीमैं परम यत्न करो। समस्त संसारका दुःखकूं मेटनेवाला आत्मकल्याणकी परम हद एक सम्यक्त्व है तातैं इसका उपार्जनमैं हो उद्यम करो अब सम्यग्दर्शनका प्रभाव वर्णन करनेकूं सूत्र कहैं हैं॥

सम्यग्दर्शनशुद्धा नारकतिर्यङ्नपुंसकस्त्रीत्वानि। दुष्कुल विकृताल्पायुर्दरिद्रतां न व्रजति नाप्यव्रतिकाः॥ ३५॥

अर्थ—जो जीव सम्यग्दर्शन करि शुद्ध हैं ते व्रतरहित हू नारकीपणा तिर्यञ्चपणा नपुंसकपणा स्त्रीपणा-कूं नहीं प्राप्त होय है। अर नीच कुलमैं जन्म अर निकृत कहिये आंधा काणां बहरा टूंटा लूला गूंगा कूबड़ा बावना हीनअंग अधिकअंग मांजरा बिट रूप नहीं होय तथा अल्पआयुका धारक अर दरिद्रीपनाकूं नहीं प्राप्ति होय है। बहुरि व्रत रहित अव्रत सम्यग्दृष्टीकै एक तो इकतालीस कर्मप्रकृतिका तो बंध होय नहीं ऐसा नियम है। मिथ्यात्व १ हुंडकसंस्थान २ नपुन्सकवेद ३ असंप्राप्तिसृपाटिकसंहनन ४ एकेन्द्री ५ स्थावर ६ आताप ७ सूक्ष्मपना ८ अपर्याप्त ९ बेंद्री १० त्रीन्द्री ११ चतुरिंद्री १२ साधारण १३ नरकगत १४ नरकगत्यानुपूर्वी १५ नरकआयु १६ ए षोडसप्रकार प्रकृति तो मिथ्यात्वभावतैंही बंधे हैं अर अनंतानुबंधीके प्रभावतैं बन्धकूं प्राप्त होय ऐसी पचीस प्रकृति ऐसे हैं। अनंतानुबंधी क्रोध १ मान २ माया ३ लोभ ४ स्त्यानगृद्धि ५ निद्रानिद्रा ६ प्रचलाप्रचला ७ दुर्भग ८ दुःस्वर ९ अनादेय १० न्यग्रोधपरिमंडलसंस्थान ११ स्वातिसंस्थान १२ कुब्जकसंस्थान १३ वामनसंस्थान १४ वज्रनाराचसंहनन १५ नाराचसंहनन १६ अर्द्धनाराचसंहनन १७ कीलितसंहनन १८ अप्रशस्तविहायोगति १९ स्त्रीपनां २० नीचगोत्र २१ तिर्यंगति २२ तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी २३ तिर्यञ्चआयु २४ उद्योत २५ इसप्रकार इकतालीसकर्मकी प्रकृति मिथ्यादृष्टी ही बंध करै

है अर सम्यग्दृष्टीके मिथ्यात्व अनंतानुवंधीका अभाव भया तातैं अव्रतिसम्यग्दृष्टीकै इकतालीसप्रकृतिका नवीनबंध ही नहीं होय है और जो सम्यक्त्व-ग्रहण नहीं हुआ तदि मिथ्यात्वअवस्थामें बन्ध करी ते प्रकृति सम्यक्त्वके प्रभावतैं नष्ट होजाय है परन्तु आयुबंध किया सो नहीं छूटै तो हू सम्यक्त्वका ऐसा प्रभाव है जो पूर्वैं सप्तमनरककी आयु बांधी होय और पाछैं सम्यक्त्व होजाय तो प्रथमनरक ही जाय द्वितीयादिकनिमैं नहीं जाय और जो तिर्यञ्चमैं निगोदका एकेन्द्रीका आयु बांधी होय तो सम्यक्त्वका प्रभावतैं उत्तम भोगभूमिको पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च ही होय एकेन्द्रियादिक कर्म भूमिको नहीं होय और जो पूर्वे लब्धिपर्याप्त मनुष्यकी आयु बांधी होय तो सम्यक्त्वके प्रभावतैं उत्तम भोगभूमिको मनुष्य होय है अर व्यन्तरादिकनिमैं नीचदेवका आयु बन्धन किया होय तो कल्पवासी महर्द्धिक देव ही होय है। अन्य भवनत्रिकदेवनिमैं तथा चारदेवनिकी स्त्रीनिमैं समस्त मनुष्यणी तिर्यञ्चणीनिमैं नहीं उपजै है ऐसा सम्यक्त्वका प्रभाव है नीचकुलमैं दरिद्रीनिमैं अल्पआयुका धारक नहीं होय है। अब जो सम्यग्दर्शनका प्रभावतैं कैसा मनुष्य होय सो कहनेकूं सूत्र कहैं हैं,

ओजोस्तेजोविद्यावीर्ययशोवृद्धिविजयविभवसनाथाः। महाकुलामहार्था मानवतिलका भवंति दर्शनपूताः ॥ ३६ ॥

अर्थ—सम्यग्दर्शनकरि पवित्र पुरुष हैं ते मनुष्यनिका तिलक कहिए समस्त मनुष्यनिका मंडन करनेवाला वा समस्त मनुष्यनिके मस्तक ऊपरि धारण करने योग्य ऐसा मनुष्यनिका तिलक होइ है। कैसेक होय है ओजः कहिए पराक्रम अर तेजः कहिये प्रताप अर विद्या कहिये समस्त लोकमैं अतिशयरूप ज्ञान अर अतिशयरूप बीर्य कहिये शक्ति अर उज्जल यश अर वृद्धि कहिये दिनदिनप्रति गुणनकी अर सुखकी वृद्धि विजय कहिये समस्तप्रकारकरि जीतनेरूप अर अतिशयकारी विभव ऐसैं ओज, तेज, विद्या, बीर्य, यश, विजय, विभव इन समस्त गुणनिका स्वामी होय है। बहुरि महानकुलका स्वामी होय है अर जे महान धर्म महाअर्थ महाकाम महामोक्षरूप चार पुरुषार्थका स्वामी होय है। सम्यग्दर्शनके धारणतैं ऐसैं अप्रमाण प्रभावका धारक मनुष्य होय है। अब सम्यक्त्वके प्रभावतैं देवनिका विभव प्राप्त होय है ताकै कह-

नेकूं सूत्र कहैं हैं,

अष्टगुणपुष्टितुष्टा दृष्टिविशिष्टाः प्रकृष्टशोभाजुष्टाः। अमराप्सरसां परिषदि चिरंरमंते जिनेन्द्रभक्ताः स्वर्गे ॥ ३७॥

अर्थ,—जिनेंद्रके भक्त ऐसे सम्यग्दृष्टी जेहैं ते देवनिमैं अप्सरानकी सभाविषै चिरकालपर्यन्त रमैं हैं कैसे भये संते रमैं हैं। अणिमा महिमा लघिमा गरिमा प्राप्ति प्राकाम्य ईशित्व वशित्वादि जो अष्ट गुण तिनकी पुष्टता जो अन्य असंख्यात देवनिमैं नहीं पाइये अधिकता करि संतोषित भये तथा सर्व देवनितैं उत्कृष्ट ऐसी कांति तेज यश तिनकरि युक्त ऐसे हुये स्वर्गलोकमैं तिष्टै हैं।

भावार्थ,—अव्रतसम्यग्दृष्टी स्वर्गलोकमैं देव होय हैं सो हीण पुन्नी नहीं होय। इन्द्रतुल्य विभव कांति ज्ञान सुख ऐश्वर्यका धारक महर्द्धिक होय सामानिक वा त्रायस्त्रिंशत् वा लोकपालादिकनिमैं उपजै हैं अन्य असंख्यात देवनिकै ऐसी अणिमादिक ऋद्धि तथा देहकी कांति आभरण विमान विक्रया नहीं होई ऐसा उत्कृष्ट विभव पाय असंख्यातकालपर्यन्त कोट्यां अप्सरांकी सभामैं रमैं है। अब स्वर्गका सागरांपर्यंत इन्द्रियनितैं उपजे सुख भोग मनुष्य लोकमैं आय कैसा होय सो कहनेकूं सूत्र कहै हैं।

नवनिधिसप्तद्वयरत्नाधीशाः सर्वभूमिपतयश्चक्रं। वर्तयितुं प्रभवंति स्पष्टदृशः क्षत्रमौलिशेखरचरणाः ॥ ३८॥

अर्थ,—जिनकै उज्जल सम्यग्दर्शन है ते स्वर्गलोकमैं आयु पूर्ण करकै यहां मनुष्यलोकमैं आय अर नवनिधि चौदहरत्ननिका स्वामी समस्त भरतक्षेत्रके वत्तीसहजार देशनिका पति अर वत्तीस हजार मुकटबंध राजानिके मस्तक ऊपरि मुकटरूप है चरण जिनका ऐसा चक्रकूं प्रवर्तन करनेकूं समर्थ चक्रवर्ती होय है। भावार्थ—सम्यग्दृष्टी स्वर्गतैं मनुष्य भवमैं आप नवनिधि चौदहरत्ननिका स्वामी समस्त राजनका मस्तक ऊपरि आज्ञा प्रवर्तन करता षट षंड पृथ्वीका पति चक्रवर्ती होय है। अब सम्यक्त्वका प्रभावतैं तीर्थंकर होय है ऐसे सूत्र कहैं हैं।

अमरासुरनरपतिभिर्यमधरपतिभिश्च नूतपादाम्भोजाः। दृष्ट्या सुनिश्चितार्था वृषचक्रधरा भवन्ति लोकशरण्याः ॥ ३९॥

अर्थ—जे पुरुष सम्यग्दर्शनकरि सम्यक निर्णय किये हैं पदार्थ जिननै ते अमरपति असुरपति नरपति

अर संयमीनका पति गणधर तिन करि वन्दनीक हैं चरण कमल जिनका अर लोकनिके शरणमैं उत्कृष्ट ऐसे धर्मचक्रके धारक तीर्थङ्कर उपजै हैं। भावार्थ,—सम्यग्दृष्टी तीर्थंकर होय अनेक जीवनिके संसार दुःखके छेदन करनेवाला धर्मचक्रकूं प्रवर्तन करावै है जिनकूं इन्द्र असुरेंद्र गणधरादिक नित्य वन्दना करं हैं। जीवनकूं परम शरण है। अब सम्यग्दृष्टीके ही निर्वाण होय है ऐसा सूत्र कहैं हैं।

शिवमजरमरुजमक्षयमव्याबाधं विशोकभयशंकं। काष्ठागतसुखविद्याविभवं विमलं भजंति दर्शनशरणाः॥ ४०॥

अर्थ--जिनके सम्यग्दर्शन ही शरण है ते पुरुष शिव जो निराकुलता लक्षण मोक्ष ताहि अनुभवै है कैसा कहै शिव जामैं जरा नहीं अनंतानंतकालहूमैं आत्मा जहां जीर्ण नहीं होय है अर अरुज कहिये जामैं रोग पीड़ा व्याधि नहीं है अर अक्षय कहिये जामें अनंत चतुष्टय स्वरूपका नाश नहीं है अर जहां कोऊ प्रकार बाधा नहीं है अर नष्ट हुआ है शोकभयशंका जातैं ऐसा शोक भय शंका रहित है बहुरि परम हद्दकूं प्राप्त भया है सुखका अर ज्ञानका विभाव जामैं ऐसा है अर द्रव्यकर्म तो ज्ञानावरणादिक अर भावकर्म रागद्वेषादिक अर नो कर्म शरीरादिक इसप्रकार कर्ममलका अभावतैं विमल है ऐसा अद्वितीय स्वरूप मोक्षकूं सम्यग्दृष्टी ही अनुभवै है। ऐसैं सम्यक्त्वका प्रभाव वर्णन करि अब दर्शनाधिकारको समाप्त करता दर्शनकी महिमाकूं उपसंहार करता सूत्र कहैं हैं।

देवेन्द्रचक्रमहिमानममेयमानं राजेन्द्रचक्रमवनीन्द्रशिरोर्चनीयं। धर्मेन्द्रचक्रमधरीकृतसर्वलोकं लब्ध्वा शिवं च जिनभक्तिरुपैति भव्यः॥४१॥

अर्थ—जिन जो परमात्मा तिसका स्वरूपमैं है भक्ति कहिये अनुराग जाकै ऐसा सम्यग्दृष्टी भव्य है सो इस मनुष्यभवतैं चय करि स्वर्ग लोकमैं अप्रमाण है ऋद्धि शक्ति सुख विभवका प्रभाव जामैं ऐसा देवेंद्रनिका समूहकी महिमा पायकरि पाछैं पृथ्वीमैं आय अर बत्तीस हजार राजानिका मस्तककरि पूजनीय ऐसा राजेंद्र जो चक्रवर्ती ताका चक्रकूं पाय करके फिर अहिमिंद्रलोकका महिमाकूं पाय नीचै किया है समस्त लोक जानै ऐसा भगवान तीर्थंकरनिका धर्मचक्र ताहि प्राप्त होय करि निर्वाणकूं प्राप्त होय है। सम्यग्दर्शनका धारी इस अनुक्रमकरि निर्वाणकूं प्राप्त होय है। ऐसें दर्शनमोहनीका अभावतैं सत्यार्थज्ञान

प्रगट होय है अर अनन्तानुबंधीके अभावतैं स्वरूपा चरण चारित्र सम्यग्दृष्टीकै प्रगट होय है यद्यपि अप्रत्याख्यानाबरणके उदयतैं देशचारित्र नहीं भया है अर प्रत्याख्यानाबरणका उदयतैं सकलचारित्र नहीं प्रगट भया है तो हू सम्यग्दृष्टीकै देहादिक परद्रव्य तथा राग-द्वेषादिक कर्मजनित परभाव इनमैं दृढ़ भेदविज्ञान ऐसा भया है जो अपना ज्ञानदर्शनरूप ज्ञानस्वभावहीमैं आत्मबुद्धि धारनेतैं अर पर्यायमें आत्मबुद्धि स्वप्नमैं हू नाहीं होनेसे ऐसा चिंतवन करै है—हे आत्मन्! तू भगवानका परमागमका शरण ग्रहण करकैं ज्ञानदृष्टितैं अवलोकन कर अष्टप्रकारका स्पर्श पंचप्रकारका रस दोयप्रकार गंध पंचप्रकार वर्ण ये तुम्हारा रूप नाहीं है पुद्गलका है ये क्रोध मान माया लाभ तुम्हारा स्वरूप नाहीं है कर्मका उदयजनित ज्ञानदृष्टितैं विकार है तथा हर्ष विषाद मद मोह शोक भय ग्लानि कामादिक कर्मजनित विकार हैं ते तुम्हारे स्वरूपतैं भिन्न हैं बहुरि नरक तिर्यञ्च मनुष्य देव ये चार गति आत्माका रूप नाहीं कर्मका उदयजनित है विनाशीक है। देव मनुष्यादिक तुम्हारा रूप नाहीं सम्यग्ज्ञानीके ऐसा चिंतवन होय है जो मैं गौरा नाहीं, मैं श्याम नाहीं, मैं राजा नाहीं, मैं रंक नाहीं, मैं बलवान नाहीं, मैं निर्बल नाहीं, मैं स्वामी नाहीं, मैं सेवक नाहीं, मैं रूपवान नाहीं, मैं कुरूपा नाहीं, मैं पुण्यवान नाहीं, मैं पापी नाहीं, मैं धनवान नाहीं, मैं निर्धन नाहीं, मैं ब्राह्मण नाहीं, मैं क्षत्रिय नाहीं, मैं वैश्य नाहीं, मैं शूद्र नाहीं, मैं स्त्री नाहीं, मैं पुरुष नाहीं, मैं नपुंसक नाहीं, मैं स्थूल नाहीं, मैं कृष नाहीं, मैं नीच जाति नाहीं, मैं ऊंच जाति नाहीं, मैं कुलवान नाहीं, मैं अकुलीन नाहीं, मैं पंडित नाहीं, मैं मूर्ख नाहीं, मैं दाता नाहीं, मैं जाचक नाहीं, मैं गुरु नाहीं, मैं शिष्य नाहीं, मैं देह नाहीं, मैं इन्द्रिय नाहीं, मैं मन नाहीं, ये समस्त कर्मका उदय जनित पुद्गलका विकार है मेरा स्वरूप तो ज्ञाता है दृष्टा है ये रूप आत्माका नाहीं, पुद्गलका है। मुनिपना क्षुल्लकपना हू पुद्गलका भेष है। ये लोक हमारा नाहीं यो देश यो ग्राम यो नगर समस्त परद्रव्य हैं। कर्म उपजाय दिया कौन २ क्षेत्रमैं अपना संकल्प करूं सम्यग्दृष्टिकै ऐसा दृढ़ विचार होय है अर मिथ्यादृष्टि परकृत पर्यायमैं आपामानै है। मिथ्यादृष्टिका आपा जातिमैं कुलमैं

देहमैं धनमैं राज्यमैं ऐश्वर्यमैं महल मकान नगर कुटुम्बनिमैं है। याकी लार हमारी घटी, हमारी बढ़ी, हमारा सर्वस्व पूरा हुआ, मैं नीचा हुआ, मैं ऊंचा हुआ, मैं मरा, मैं जीया, हमारा तिरस्कार हुआ, हमारा सर्वस्व गया इत्यादिक परवस्तुमैं अपना संकल्प करि महा आर्त्तध्यान रौद्रध्यान करि दुर्गतिको पाय संसार परिभ्रमण करै है। बहुरि मिथ्यादृष्टि जीव किंचित् जिनधर्ममैं अधिकार पाय अर नवीन नवीन अपना परिणाममैं युक्ति बनाय लोकनिकै भ्रम उपजाय आप पांच आदम्यांमैं महान् ज्ञानीपनाका अभिमानकरि सूत्रविरुद्ध अनेक कथनी करै है। कृतघ्न भया जिनसूत्रनिकी हू निंदा करै है। बहुज्ञानिनिकी निंदा करै है। दुष्ट अभिप्रायी पांच आदम्यांमैं मान्यता वा पक्षपात ग्रहण करि निराधार रहित हुआ हठग्राही आप थापी एकांती स्याद्वादरूप भगवानकी वाणीतैं पराङ्मुख हुआ कलह विसंवाद परकी निंदाहीकूं धर्म मानता तिष्टै है। तथा केतेक मिथ्यादृष्टि किंचित् मात्र बाह्यत्याग ग्रहण करकै तथा स्नानकरि भोजन करते तथा अन्य देवादिकी वंदनाका त्यागकूं कृत्यकृत्य मानता जगतके जीवनकी निंदा करि आपकूं प्रशंसा योग्य मानै है अर अन्यायतैं आजीविका अर हिंसादिकके आरंभमैं निपुण होय अन्यधर्मीनिके छिद्र हेरते फिरै है। तथा निर्दोष पुरुषनिके दोष विख्यात करि मदमैं छके फिरै है आपकूं ऊंचा मानै है अन्यकूं अज्ञानी भ्रष्ट मानै है पापिष्ठ आपकी प्रशंसा कराय फूलो फूलो फिरै है अपना स्वरूपकी शुद्धताकूं नाहीं देखता नाना चेष्टा करै है भोले जीवनिकूं मिथ्या उपदेश देय एकांतके हठकूं ग्रहण करावे है। अर कुगुरु कुदेवनिकूं नमस्कारके त्याग करनेतैं अर अन्य देवनिकी निंदा करके अर सभामैं बैठ मिथ्या भेषधारीनिकी निंदा करकै ही आपकूं सम्यग्दृष्टि मानै है। तथा लोग हमकूं दृढ़ श्रद्धानी धर्मात्मा मानैंगे ऐसा अनंतानुबंधीमानके उदयतैं परकी निंदा करनेतैं ही आपकूं उच्च जानतैं जगतकूं अधर्मी मानै है जातैं कुदेव कुगुरुकूं नमस्कार तो समस्त तिर्यंच भी नाहीं करै हैं अर नारकी नाहीं करै हैं। भोगभूमिके कुभोगभूमिके हू नमस्कार नाहीं करै हैं अर समस्त देवता हू नाहीं पूजै हैं। नमस्कार पूजा नाहीं करनेतैं ही सम्यग्दृष्टि होय तो समस्त नारकी मनुष्य तिर्यंचादिक सम्यग्दृष्टि होय जाय सो है नाहीं। बहुरि जगतके

समस्त मिथ्यादृष्टि मनुष्य देवादिकनिकी निंदा करनेतैं ही सम्यक्त्व नाहीं होयगा। जगतकी निंदा करनेवाला अर पापीनतैं वैर करनेवाला तो कुरीतिहीका पात्र होयगा। जातैं मिथ्याभाव तो जीवनिके अनादिका है सम्यग्दृष्टि तो इनकी हू करुणा करै अर समस्तमैं साम्यभाव ही करै है। यातैं सम्यग्दर्शन तो आपापरका सत्य श्रद्धान ज्ञान विनय सहित स्याद्वादरूप परमागमके सेवनतैं ही होयगा।

इति श्रीस्वामीसमंतभद्राचायविरचित रत्नकरंडश्रावकाचार्यके सूत्रनिकी देशभाषामयवचनिकाविषै सम्यग्दर्शनका स्वरूपवर्णन नामवाला प्रथम अधिकार समाप्त भया ॥१॥

## अब सम्यग्ज्ञानरूप धर्मकूं प्रगट करनेकूं सूत्र कहै हैं—

[। आर्या छन्द। ]

अन्यूनमनतिरिक्तं याथातथ्यं विना च विपरीतात्। निस्सन्देहं वेद यदाहुस्तज्ज्ञानमागमिन. ॥ ४२ ॥

अर्थ—आगमके जाननेवाले श्रीगणधर देव तथा श्रुतकेवली हैं ते ताकूं ज्ञान कहै हैं जो वस्तुका स्वरूपकूं परिपूर्ण जानै न्यून नाहीं जानै अर वस्तुका स्वरूप जैसा है तातैं अधिक नाहीं जानै अर जैसा वस्तुका सत्यार्थस्वरूप है तैसा ही जानै अर विपरीतपनाकरि रहित जानै अर संशयरहित जानै ताहि भगवान ज्ञान कहै हैं। इहां सम्यग्ज्ञानका स्वरूप कह्या है, सो जो वस्तुका स्वरूपकूं न्यून जानै सो मिथ्याज्ञान है। जैसैं आत्माका स्वभाव तो अनंतज्ञानस्वरूप है अर आत्माकूं इंद्रियजनित मतिज्ञानमात्र ही जानै सो न्यूनस्वरूप जाननैतैं मिथ्याज्ञान भया। अर वस्तुके स्वरूपकूं अधिक जानै सो हू मिथ्याज्ञान है। जैसैं आत्माका स्वभाव तो ज्ञान दर्शन सुख सत्ता अमूर्त्तीक है ताकूं ज्ञान दर्शन सुख सत्ता अमूर्त भी जानना अर पुद्गलके गुणरूप स्पर्श गंध वर्ण रस मूर्तीक हू जानना सो अधिक जाननैतैं मिथ्याज्ञान है। अर सीपकूं सुपेद अर चिलकता देख वामैं रूपाका ज्ञान होना सो विपरीतज्ञान हू मिथ्याज्ञान है। अर यह सीप है कि रूपो है ऐसैं दोऊमैं संशयरूप एकका निश्चयरहित जानना सो संशयज्ञान है सो हू मिथ्याज्ञान है अर जो

वस्तुका जैसा स्वरूप है तैसैं जानना सो सम्यग्ज्ञान है अथवा जैसैं सोलाकूं पांचगुणा करिये तो अस्सी होय ताकूं अठहत्तर जानै सो न्यून ज्ञान भया अर अस्सीका वियासी जानिये सो अधिकका जानना भया अर अस्सी होय ताकूं सोलह जानना वा पांच जानना सो विपरीतज्ञान भया अर सोलहकूं पांचगुणा किये अस्सी भये कि अठहत्तर भये ऐसा संदेहरूप ज्ञान सो संशयज्ञान है। ऐसैं न्यून जानना तथा अधिक जानना तथा विपरीत तथा संशयरूप जानना ऐसैं चारप्रकारका मिथ्याज्ञान है अर जो वस्तुका स्वरूपकूं न्यून नाहीं जानै अधिक नाहीं जानै विपरीत ( अंवली ) नाहीं जानै संशयरूप नाहीं जानै जैसा स्वरूप है तैसा संशयरहित जानै ताहि सम्यग्ज्ञान कहिये है। अब सम्यग्ज्ञान है सो प्रथमानुयोगकूं जानै है ऐसा सूत्र कहै हैं—

प्रथमानुयोगमर्थाख्यानं चरितं पुराणमपि पुण्यं। बोधिसमाधिनिधानं बोधति बोधः समीचिनिः ॥४३॥

अर्थ-सम्यग्ज्ञान है सो प्रथमानुयोगनै जानै है, कैसाक है प्रथमानुयोग-अर्थ जे धर्म अर्थ काम मोक्ष रूप चार पुरुषार्थ तिनका है कथन जामें बहुरि चरित कहिये एक पुरुषके आश्रय है कथा जामें, बहुरि त्रिषष्ठिशलाका पुरुषनिकी कथनीका संबंधका प्ररूपक यातैं पुराण है। बहुरि बोधिसमाधिको निधान है सो सम्यग्दर्शनादिक नाहीं प्राप्त भए तिनकी प्राप्ति होना सो बोधि है अर प्राप्ति भए जे सम्यग्दर्शनादिकनकी जो परिपूर्णता सो समाधि है। सो यो प्रथमानुयोग रत्नत्रयकी प्राप्तिको अर परिपूर्णताको निधान है उत्पत्तिको स्थान है अर पुण्य होनेका कारण है तातैं पुण्य है। ऐसा प्रथमानुयोगकूं सम्यग्ज्ञान ही जानै है। भावार्थ—जामें धर्मका कथन अर धर्मका फलरूप कहे जे धन संपदा रूप अर्थ काम जो पंच इंद्रियनिका विषय अर संसारतैं छूटनेरूप मोक्ष ताका कथन है अर एक पुरुषका आचरणका है कथन जामें ऐसा चरित्ररूप है। अर त्रिषष्ठिशलाका पुरुषनिका है वर्णन जामें तातैं पुराणरूप है। अर वक्ता श्रोतानिके पुण्यके उपजावनेका कारण है तातैं पुण्यरूप है। अर चार आराधनाकी प्राप्ति होनेका अर चार आराधनाकी पूर्णता करनेका निधान है ऐसा प्रथमानुयोगकूं सम्यग्ज्ञान ही जानै है। अब करणानुयोगका जाननेवाला हू सम्यग्ज्ञान है ऐसा सूत्र कहै हैं—

लोकालोकविभक्तेर्युगपरिवृत्तेश्चतुर्गतीनां च। आदर्शमिव तथामतिरवैति करणानुयोगं च ॥४४॥

अर्थ—तैसैं ही मति कहिये सम्यग्ज्ञान जो है सो करणानुयोग जो है ताहि जानै है। कैसाक है करणानुयोग लोक अर अलोकके विभागको अर उत्सर्पिणीके छह काल अर अवसर्पिणीके षटकालके परिवर्तन कहिये पलटनेका अर चार गतिनिके परिभ्रमणका आदर्शमिव कहिये दर्पणवत् दिखावनेवाला है। भावार्थ—जामैं षटद्रव्यका समुदायरूप तो लोक अर केवल आकाश द्रव्य ही सो अलोक अपने गुणपर्यायनिसहित प्रतिबिंबित होय रहे हैं। अर छहूकालके निमित्ततैं जैसे जैसे जीवपुद्गलनिकी परणति है ते प्रतिबिंबरूप होय जामैं झलकै हैं अर जामैं चार गतिनिका स्वरूप प्रगट दिपै है सो दर्पण समान करणानुयोग है। तिनै यथावत् सम्यग्ज्ञान ही जानै है। अब चरणानुयोगका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

गृहमेध्यनगाराणां चारित्रोत्पत्तिवृद्धिरक्षाङ्गम्। चरणानुयोगसमयं सम्यग्ज्ञानं विजानाति ॥४५॥

अर्थ—गृहमें आसक्त है बुद्धि जिनकी ऐसे गृहस्थी अर गृहतैं विरक्त होय गृहका त्यागी ऐसा अनगार कहिये यति तिनकै चारित्र जो सम्यक् आचरण ताकी उत्पत्ति अर वृद्धि अर रक्षा इनकी अंग कहिये कारण ऐसा चरणानुयोग सिद्धांत ताहि सम्यग्ज्ञान ही जानै है। भावार्थ—मुनिका अर गृहस्थका जो निर्दोष आचरण ताकी उत्पत्तिका अर दिन दिन वृद्धि होनेका अर धारण किया तिनकी रक्षाका कारण चरणानुयोगरूप ज्ञान ही है। अब द्रव्यानुयोगका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

जीवाजीवसुतत्त्वे पुण्यापुण्ये च बन्धमोक्षौ च। द्रव्यानुयोगदीपः श्रुतविद्यालोकमातनुते ॥४६॥

अर्थ—यो द्रव्यानुयोग नाम दीपक है सो जीव अर अजीव ये दोय जे निर्बाध तत्व तिननै अर पुण्य पापनै अर बंध मोक्ष जे हैं तिननै भावश्रुतज्ञानरूप प्रकाश होय जैसैं होय तैसैं विस्तारता है। भावार्थ—द्रव्यानुयोगनामा दीपक ऐसा है जो बाधारहित जीव अजीवका स्वरूपकूं अर पुण्यपापकूं अर कर्मके बंधकूं अर कर्मतैं छूट जानेकूं आत्मामें उद्योत हो जाय तैसैं विस्तार करि दिखावै है। ऐसैं चार अनुयोगरूप श्रुतज्ञानका स्वरूप वर्णन किया। ज्ञानके बीस भेद अर अंग तथा पूर्वरूप वर्णन किये ग्रंथ बहुत हो जाय।

इति श्रीस्वामीसमंतभद्राचार्यविरचित रत्नकरंडश्रावकाचारके मूल सूत्रनिकी देशभाषामय वचनिका विषै सम्यग्ज्ञानका स्वरूप वर्णन करनेवाला द्वितीय अधिकार समाप्त भया ॥२॥

अब सम्यक्चारित्रनामा तृतीय अधिकारकूं वर्णन करते चारित्रस्वरूप धर्मके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

मोहतिमिरापहरणे दर्शनलाभादवाप्तसंज्ञानः । रागद्वेपनिवृत्यै चरणं प्रतिपद्यते साधुः ॥४७॥

अर्थ—दर्शनमोहरूप तिमिरको दूर होते संते सम्यग्दर्शनका लाभतैं प्राप्त भया है सम्यग्ज्ञान जाकै ऐसा साधु जो निकटभव्य है सो रागद्वेषका अभावके अर्थि चारित्र है ताहि अङ्गीकार करै है। भावार्थ—इस संसारी जीवकै अनादिकालका दर्शनमोहनीयका उदयरूप तिमिरकरि ज्ञाननेत्र ढकि रह्या है तिस मोह तिमिरतैं अपना अर परका भेदविज्ञानरहित हुआ चारों गतिनमें पर्यायहीकूं आपा जानता अनन्तकालतैं भ्रमण करै है। कोऊ जीवकै करणलब्धादिक सामग्रीतैं दर्शनमोहका उपशमतैं तथा क्षयतैं तथा क्षयोपशमतैं सम्यग्दर्शन होय है तदि मिथ्यात्वका अभावतैं ज्ञान हू सम्यक्पनाकूं प्राप्त होय है तदि कोऊ सम्यग्ज्ञानी रागद्वेषका अभावके अर्थि चारित्र अङ्गीकार करै। अब रागद्वेषका अभावतैं ही हिंसादिकका अभाव होनेका नियमके अर्थि सूत्र कहै हैं—

रागद्वेपनिवृत्तेर्हिंसादिनिवर्तना कृता भवति । अनपेक्षितार्थवृत्तिः कः पुरुषः सेवते नृपतीन् ॥ ४८ ॥

अर्थ—रागद्वेषका अभावतैं हिंसादिक पंच पापनिकी निवृत्ति कहिए अभाव परिपूर्ण होय है। पंचपापनिका अभाव सो ही चारित्र है। अभिलाषरूप नाहीं है प्रयोजनकी प्राप्ति जाकै ऐसा कौन पुरुष राजानिनै सेवन करै? भावार्थ—जाकै अर्थ जो प्रयोजन तथा धनादिक फलके प्राप्त होनेकी अभिलाषा नाहीं ऐसा कौन पुरुष राजानिनै सेवन करै? नाहीं करै। राजानिकी महाकष्टरूप सेवा तो जाकै भोगनिकी चाह तथा धनकी तथा अभिमानादिककी अभिलाषा होय सो करै। जाकै कुछ अपेक्षा चाहना नाहीं सो राजाका सेवन नाहीं करै जाकै रागद्वेषका अभाव भया सो पुरुष हिंसादिक पंच पापनिमें प्रवृत्ति नाहीं करै। अब चारित्रका लक्षण रागद्वेषका अभाव कह्या सो इसहीका विशेष कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

हिंसानृतचौर्येभ्यो मैथुनसेवापरिग्रहाभ्यां च । पापप्रणालिकाभ्यो विरतिः संज्ञस्य चारित्रं ॥ ४९ ॥

अर्थ—हिंसा अनृत चौर्य मैथुनसेवन परिग्रह ये पाप आवनेके प्रनाला हैं इनतैं जो विरक्त होना सो सम्यग्ज्ञानीके चारित्र है। भावार्थ-निश्चय चारित्र तो वहिरंग समस्त प्रवृत्तितैं छूटे परमवीतरागताके प्रभावतैं परमसाम्यभावकूं प्राप्त होय अपना ज्ञायकभावरूप स्वभावमैं चर्या सो स्वरूपाचरण नामा सम्यक्चारित्र है तौ हू पंच पापनितैं विरक्त होय अंतरङ्ग वहिरङ्ग प्रवृत्तिकी उज्ज्वलतास्वरूप व्यवहार चारित्र विना निश्चयस्वरूप चारित्रकूं प्राप्त नाहीं होय है। तातैं हिंसादिक पंच पापनिका त्याग करना ही श्रेष्ठ है। पंच पापका त्याग करना ही चारित्र है। अव इस चारित्रकैं दोय प्रकारका कहनेकूं सूत्र कहै हैं।

सकल विकलं चरणं तत्सकलं सर्वसंगविरतानां । अनगाराणां विकलं सागाराणां ससंगानां ॥ ५० ॥

अर्थ—सो चारित्र समस्त अंतरंग परिग्रहतैं विरक्त जे अनगार कहिए गृह मठादि नियत स्थानरहित वन खंडादिकमें परम दयालु हुआ निरालंब विचरै ऐसे ज्ञानी मुनीश्वरनिके सकलचारित्र है अर जे स्त्री पुत्र धनधान्यादिक परिग्रहसहित घरमें तिष्ठैं ते जिनवचनके श्रद्धानी न्यायमार्गकूं नाहीं उल्लंघन करिकैं पापतैं भयभीत ऐसे ज्ञानी गृहस्थीनिकै विकलचारित्र है। भावार्थ-गृहकुटुंवादिकके त्यागी अपने शरीरमें निर्ममत्व साधूनिकै सकलचारित्र होय है। गृहकुटुंवधनादिकसहित गृहस्थीनिके विकलचारित्र होय है। अव गृहस्थीनिकै विकलचारित्र कहनेकूं सूत्र कहै हैं।

गृहिणां त्रेधा तिष्ठत्यणुगुणाशिक्षाव्रतात्मकं चरणं । पञ्चत्रिचतुर्भेदं त्रेयं यथासंख्यमाख्यातं ॥५१॥

अर्थ—गृहस्थनिकै चारित्र है सो अणुव्रत गुणाव्रत शिक्षाव्रतस्वरूप तीन प्रकारकरि तिष्ठै है। सो यो तीन प्रकार चरित्र है सो यथासंख्य पांच भेदरूप तीनभेदरूप च्यार भेदरूप परमागममें कह्या है। भावार्थ—जो गृहवास छोड़नेकूं समर्थ नाहीं ऐसा सम्यग्दृष्टि गृहमें तिष्ठता ही पंच प्रकार अणुव्रत तीन प्रकार गुणाव्रत च्यार प्रकार शिक्षाव्रत धारण करि चारित्रकूं पालै है। अव पंच प्रकार अणुव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

प्राणातिपातवितथव्याहारस्तेयकाममूर्छाभ्य. । स्थुलेभ्यः पापेभ्यो व्युपरमणमणुव्रतं भवति ॥ ५२ ॥

अर्थ—प्राणनिका जो अतिपात कहिये वियोग करणा सो प्राणातिपात कहिये हिंसा अर वितथ असत्य ऐसा व्यवहार कहिये वचन कहना सो वितथव्याहार कहिये असत्य वचन अर स्तेय कहिये चोरी और काम कहिये मैथुन अर मूर्छा कहिये परिग्रह ये पांच पाप हैं। इनमें स्थूलपापनितैं विरक्त होना सो अणुव्रत है। भावार्थ—मारनेका संकल्प करकैं जो त्रसकी हिंसाका त्याग सो स्थूलहिंसाका त्याग है बहुरि जिस वचन कर अन्य प्राणीका घात होजाय तथा धर्म विगड़ जाय अन्यका अपवाद हो जाय कलह संक्लेश भयादिक प्रगट होजाय ऐसा वचनका क्रोध अभिमान लोभके वश होय कहनेका त्याग कर सो स्थूल असत्यका त्याग है। अर विना दिया अन्यके धनका लोभके वशतैं छलकरि ग्रहण करनेका त्याग सो स्थूल चोरीका त्याग है। बहुरि अपनी विवाही स्त्री विना समस्त अन्यस्त्रीनिमैं कामका अभिलाषका त्याग सो स्थूल कामत्याग है। बहुरि दशप्रकार परिग्रह परिमाण करि अधिक परिग्रहका त्याग सो स्थूल परिग्रहका त्याग है। ऐसैं पाप आवनेके प्रनाले ये पांच हिंसादिक तिनका त्याग सो ही पंच अणुव्रत है। अब अहिंसा अणुव्रतका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहे हैं—

संकल्पात्कृतकारितमननाद्योगत्रयस्य चरसत्वान्। न हिनस्ति यत्तदाहुः स्थूलवधाद्विरमणं निपुणाः॥ ५३॥

अर्थ—जो गृहस्थ मनवचनकायके कृतकारित अनुमोदनारूप संकल्पतैं वरवाणी द्विन्द्रियादिक त्रसप्राणीनका घात नाहीं करे ताही निपुण जे गणधर देव हैं ते स्थूलहिंसातैं-विरक्त कहे हैं। इहां ऐसा जानना जो गृहस्थ सम्यग्दर्शन संयुक्त दयावान हिंसातैं भयभीत होय त्यागके सम्मुख हुआ तो गृहस्थके एकेन्द्रिय जे पृथ्वीकायादिक तिनकी हिंसाका त्याग तो वन सकै नाहीं गृहका त्यागी योगीश्वरनिकै ही त्रसस्थावर दोऊनका हिंसाका त्याग बने अर प्रत्याख्यानावरणादिक कषायका उदयतैं गृहतैं ममता छूटी नाहीं तिस गृहस्थके त्रसजीवनका संकल्पीहिंसाके त्यागतैं भगवान अहिंसा अणुव्रत कह्या है। संकल्पीहिंसाका त्याग ऐसे जानना—दयावान गृहस्थ अपने परिणामनिकर मारनेरूप संकल्पतैं तो त्रस जीवका घात करै नाहीं करावै नाहीं घात करनेका मनवचनकायतैं प्रशंसा करै नाहीं ऐसा परिणाम रहे। जो कोऊ दुष्ट वैर ईर्षादि-

ककरि आपकूं मार्‍या चाहै तथा आजीविका धनादिक हर्‍या चाहै तिसका भी घात करनेकूं नाहीं चाहै तथा कोऊ आपकूं बहुत धन देकर मरावै तो कीड़ीमात्रकूं मारनेका संकल्पकरि कदाचित् नाहीं मारै। तथा एक जीव मारनेतैं अपना रोग आपदा दूर होय तो जीवनकै लोभतैं त्रसजीवकूं नाहीं मारन करै। हिंसातैं अत्यंत भयभीत है तो हू गृहस्थके आरम्भमैं त्रसजीवनिका घात हुआ विना रहै नाहीं याहीतैं गृहस्थके मारनेका संकल्पकरि त्रसको हिंसाका त्याग है अर आरम्भी हिंसाका त्याग करनेकूं समथ नाहीं है केवल आरम्भमैं यत्नाचारसहित दयाधर्मकूं नाहीं भूलता प्रवर्तै है क्योंकि गृहस्थके आरम्भ विना निर्वाह नाहीं। केते आरम्भ नित्य होय है चूल्हा बालना चाकी पीसना ओंखलीमें कूटना बुहारी देना जलका आरम्भ करना उपार्जन करना ये छह पापके कर्म तो नित्य ही हैं बहुरि केतेक और हू नित्य भी कदाचित् अन्य कारणतैं हू आरम्भ बहुत हैं अपने पुत्र पुत्रीका विवाह करना मकान बनाना लीपना धोवना झाड़ना होय ही। रात्री गमनादि आरम्भ करना धातुका पाषाणका काष्टका आरम्भ करना शय्या बिछावना उठाना पात्र पसारना समेटना जातिकूं जीमावना दीपकादिक जोवना इत्यादिक पापहीके कार्य हैं। तथा गाड़ी रथ ऊपरि चढ़ि चालना हस्थी घोड़ा ऊंट बलद इत्यादिक ऊपर चढ़ि चालना गाय भैंस इत्यादिक राखना तिनमें त्रस जीवका घात होय ही तथा जिन मन्दिर करावना दानका देना पूजन करना इनमें हू आरम्भ है तो कैसे त्रसहिंसाका त्याग होय? ताका उत्तर करै है,जो आपका परिणाम तो जीव मारनेका है नाहीं अर जीव मारने वास्ते आरम्भ करै नाहीं इस कार्य करनेमैं जीव मर जाय तो भला है ऐसा राग हू नाहीं आप तो जीव विराधनातैं भयभीत हुआ गृहचाराका कार्य करनेको आरंभ करै है। जीव मारनेके वास्ते नाहीं करै है। अपने परिणाममैं तो मेलता धरता उठता बैठता लेता देता जीवनिकी रक्षा करनेहीका संकल्प करै है, मारनेका संकल्प नाहीं करै, तिसके पापबंध कैसें होय? जीव अपने आयुकर्मके आधीन उपजैं अर मरे हैं अपने हाथ नाहीं आप तो जेता आरम्भ करै तितना दयारूप हुआ यत्नाचार्यतैं करै यत्नाचारीके भगवानका परमागममें हिन्सा होते हू बन्ध होना नाहीं कह्या है। समस्त लोक जीवनिकरि भर्‍या है जीवनिके मरने जीवनिके आधीन अपना उपयोग विना हिन्सा अहिंसा

नाहीं है। अपने परिणामके आधीन हिंसा अर अहिंसा है। जातैं सिद्धान्तमें ऐसा कह्या है जो मुनिराज चार हस्त परमाण आगेको सोधता गमन करै है अर जो पगको उठाय धरबो होय तहां जीव उछलकरि आय पड़ै अर जीव मर जाय तो मुनीश्वरनिके किञ्चित हू बन्ध नाहीं होय है क्योंकि साधुके परिणामनिमें तो इर्यासमिति पालना चित्त-विषैं तिष्ठै था तातैं बंध नाहीं। आहार प्रासुक जानि देखि सोधि करिये है अर सूक्ष्म जीव आय पड़ै तो कौन जानैं? भगवान् केवलज्ञानी ही जाने। आप प्रमादी होय यत्नतैं देखे सोधे बिना भोजन करै तो दोषतैं लिपै। याहीतैं श्रावक प्रमादि छांड़ि बड़ो सावधानीतैं प्रवर्तन करता दोषकूं कैसैं प्राप्त होय? चूल्हाकूं दिनमें सोधि बुहारि ईंधन झड़काय यत्नतैं अग्नि जलावै है ऐसे ही चाकी ओखली भी सोधि झाड़ि अन्नकूं सोधि पीषण षोटणका आरम्भ करै है बीधा अन्नकूं नाहीं ग्रहण करै है। अर बुहारि हू दिवसमें देखि कोमल कूंची गूंज इत्यादिकतैं जीव विराधनाका भयसहित हुआ देवै हैं कजोड़ा बुहारै हैं तथा जलकूं दोहरा दृढ़ वस्त्रतैं छानि जतनपूर्वक वरतै है तथा द्रव्यका उपार्जन हू अपना कुलके योग्य सामर्थ्य सहायादिकके योग्य जैसैं यश अर धर्म नीति नाहीं बिगड़ै तैसैं यत्नतैं असि मसि कृषी विद्या वाणिज्य शिल्प इन षट् कर्मनिकरि करै हैं क्योंकि श्रावकका व्रत तो चारों वर्णोंमें होय है आपके उज्वल हिंसा रहित कर्मसूं आजीवका होती हो तो निंद्य कर्म करि संक्लेश कर्मकरि लोभादिकके वश होय पापरूप आजीवका करै नाहीं अर आपकूं अन्य आजीविकाको उपाय नाहीं दीखै तो घटायकरि पापतैं भयभीत हुआ न्यायतैं करै। क्षत्रिकुलका शस्त्र धारक होय तो दीन अनाथकी रक्षा करता दीन दुःखित निर्बलको घात नाहीं करै शस्त्र रहितकूं नाहीं मारै गिर पड्या ऊपरि घात नाहीं करै पीठ देया भाग जाय दीनता भाषै तिन ऊपरि घात नाहीं करै है अर धनके लूटनेको घात नाहीं करै अभिमानतैं वैरतैं घात नाहीं करै अपने ऊपर घात करता आवै ताकूं तथा दीननिकूं मारनेकूं आवै तिनकूं शस्त्रतैं रोकै जो शस्त्रतैं जीविका करता होय सो केवल स्वामिधर्मतैं तथा अनाथनिका स्वामीपना आपके होय सो शस्त्र धारण करै जाके शस्त्रसंबंधी सेवा नाहीं अर प्रजा-

का स्वामीपना नाहीं ताकै वृथा शस्त्र धारण नाहीं होय है। अर स्याही तैं आमद खरच लिखनेकी जीविका होय तो मायाचारादिक दोष रहित स्वामीके कार्यकूं यथावत् सही लिखता जीविका करै। और माली जाट इत्यादिक कुलमैं अन्य जीविका नाहीं होय तो कृषि जो खेती करि आजीविका करता हू दयाधर्मको छांडै नाहीं जो खेत पहली वहता आया होय तिसकूं परिमाण करि अधिकका त्यागी हुआ खेती करे है अधिक तृष्णा नाहीं करै यामें हू बहुत घटाय आपाकूं निंदता खेती करै है। बहुत जल सींचै है तो हू आप अनछाण्या जल एक चल्लू मात्र हू नाहीं पीवै है कोऊ आय वहुत धन भी देवै अर कहै तुम यहां धान्यके बहुत वृक्ष छेदो हो हमतैं एक मोहर लेय हमारे एक वृक्षको एक डाहली काट आवो तो लोभके वशि होय कदाचित् नाहीं छेदै है तथा खेतीमें बहुत जीव मरै हैं तो भी इसके जीव मारनेका अभिप्राय नाहीं केवल आजीविकाका अभिप्राय है कोऊ सौ मोहर देवै तो लोभके वशि होय अपना संकल्पतैं एक कीडी हू मारै नाहीं ऐसा व्रतमैं दृढ़ता है। अर उत्तम कुलवाला खेती करै नाहीं। बहुरि विद्याकरि आ-जीविका करै ऐसा ब्राह्मणादिक श्रावक हैं सो मिथ्यात्व भावका पुष्ट करनेवाला तथा हिंसाका प्रधानता लिये रागद्वेषका बधावनेवाला शास्त्रनिकूं त्याग करि उज्वलविद्या पढ़ावै सो ही दया है। बहुरि श्रावक है सो बहुत हिंसाके खोटे वाणिज्य त्याग न्यायपूर्वक तीव्र लोभकूं त्याग आपकी निंदा करता संतोष सहित घटाय प्रमाणीक सांचसूं व्यौहार करे दयाधर्मकूं नाहीं भूलता समस्त जीवनिकूं आप समान जानता वाणिज्य करै है। बहुरि शिल्पकर्म करनेवाला शूद्र हू श्रावकका व्रत ग्रहण करै है सो बहुत निंद्यकर्मनिकूं तो टालै ही अर टालवेकूं समर्थ नाहीं तामैं बहुत हिंसा टालि दयारूप प्रवर्तै है संकल्पतैं याकूं मारना या जाणि घात नाहीं करै। अर मंदिर वनवाना पूजन करना दान देना इन कार्यनिमैं तो निरंतर बड़ा यत्ना-चारतैं केवल दयाधर्मके निमित्त ही प्रवर्तन करै है। हिंसाका भाव काहेतैं होय जातैं पुरुषार्थसिद्ध्युपाय नामा ग्रंथमें श्रीअमृतचन्द्रस्वामी ऐसैं कह्या है—

यत्खलु कषाययोगात्प्राणानां द्रव्यभावरूपाणां। व्यपरोपणस्य करणंसुनिश्चिता भवति सा हिंसा ॥ ५४ ॥

अर्थ—जे कषायके संयोगतैं द्रव्यप्राण जे इंद्रिय कायादिक अर भावप्राण जे ज्ञानदर्शनादिक तिनके वियोग करवो सो निश्चितहिंसा होय है। भावार्थ—जो कषायके वशि होय परके द्रव्यप्राण भावप्राणनिको वियोग करवो सो निश्चितहिंसा होय है। कषायरहितके प्राणीका मरणमात्रतैं हिंसा नाहीं होय है आप परजीवके मारनेकी कषायसहित होय ताकैं हिंसा होय है।

अप्रादुर्भावः खलु रागादीनां भवत्यहिंसेति। तेषामेवोत्पत्तिर्हिंसेति जिनागमस्य संक्षेपः ॥ ५५ ॥

अर्थ—जो रागद्वेषादिको आत्माके नाहीं प्रगट होवो सो अहिंसा है अर आत्माके परिणाममें रागद्वेषादिकनिकी उत्पत्ति होय सो ही हिंसा है। जिनेंद्रभगवानके आगमका संक्षेप तो इस प्रकार है प्राणीनिका हिंसा होहू वा मत होहू जो परिणाम रागद्वेषादि कषायसहित होय सो ही अपना ज्ञानदर्शनादिरूप भावप्रप्राणनिका घात है सो ही आत्महिंसा है जाकै आत्महिंसा है ताकै परकी हिंसा भी होय ही है॥

युक्ताचरणस्य सतो रागाद्यावेशमन्तरेणापि। न हि भवति जातु हिंसा प्राणव्यपरोपणादेव ॥५६॥

अर्थ—योग्य आचरण करता सत्पुरुषकै रागद्वेषादि कषाय विना प्राणनिका घाततैं ही हिंसा कदाचित नाहीं होय है। भावार्थ—यत्नतैं दयासहित प्रवर्तन करता पुरुषकै जीवघात होतै हू हिंसाकृत बंध नाहीं होय है।

व्युत्थानावस्थायां रागादीनां वशप्रवृत्तायां। म्रियतां जीवो मा वा धावत्यग्रे ध्रुवं हिंसा ॥ ५७ ॥

अर्थ—रागद्वेषादिकनिके आधीन प्रवृत्ते जे गमन आगमन उठना बैठना धरना मेलना ऐसे आरंभ तिनमें जीवनिका मरण होहू वा मत होहू हिंसा तो निश्चयतैं आगैं दौड़ती है। यत्नाचाररहित होय आरंभ करै है ताकै जीव अपने आयुके आधीन मरण करौ वा मत करौ आप तो अपने परिणामतैं निर्दय भया ताकै हिंसाकृत बंध आगैं आगैं दौड़ै है॥

यस्मात्सकषायः सन् हन्त्यात्मा प्रथममात्मनात्मानं। पश्चाज्जायेत न वा हिंसा प्राण्यन्तराणां तु ॥५८॥

अर्थ—जातैं आत्मा कषायसहित हुवो संतो प्रथम ही आप करिकै आपनै हनै है पाछैं अन्य प्राणीनि-

को हिंसा उत्पन्न होय वा नाहीं होय। जिस काल कषायसहित आत्मा भया तिस ही कालमें अपना ज्ञानानंद वीतरागस्वरूपका घात तो अवश्य करि हो चुका।

हिंसायामविरमणं हिंसापरिणमनमपि भवति हिंसा। तस्मात्प्रमत्तयोगे प्राणव्यपरोपणं नित्यं ॥ ५९ ॥

अर्थ—जातैं हिंसाके विषै विरक्त होय त्याग नाहीं करना सो भी हिंसा है अर हिंसामें प्रवर्तन है सो हू हिंसा है तातैं प्रमत्तयोग होतैं प्राणनिका घात नित्य है। भावार्थ—अपना अर परका घात होनेकी सावधानीरहित प्रवर्तते जे मनवचनकायके योग सो प्रमत्तयोग है जहां प्रमत्तयोग है तहां सासती हिंसा है जो कोऊ हिंसा तो नाहीं करै परन्तु हिंसातैं विरक्त होय हिंसाका त्याग नाहीं करै सो सूते विलाव समान सदाकाल हिंसक ही है अर हिंसामें प्रवर्तन करै है सो हू हिंसक ही है। भावनितैं तो दोऊ हिंसक हैं बाह्यनिमित्त हिंसाका मिलो वा मति मिलो ॥

सूक्ष्मापि न खलु हिंसा परवस्तुनिबन्धना भवति पुंसः। हिंसायतननिवृत्तिः परिणामविशुद्धये तदपि कार्या ॥६०॥

अर्थ—अन्यवस्तु है कारण जाकूं ऐसी तो सूक्ष्म हू हिंसा नाहीं है जातैं पुरुषकै जो हिंसा होय है सो तो अपना परिणाममें हिंसा करनेका भाव होतैं हिंसा होय है। इहां कोऊ पूछै जो परद्रव्यके निमित्ततैं सूक्ष्महिंसा नाहीं होय है तो बाह्यवस्तुका त्याग व्रत संयम किसवास्तै करिये हैं? ताका उत्तर करै हैं। यद्यपि हिंसकपरिणाम होय तदि ही जीवकै हिंसा होय परंतु हिंसा होनेके स्थाननिमें प्रवर्तैगा ताकै हिंसाके परिणाम कैसैं नाहीं होयगा? तातैं परिणामकी विशुद्धताके अर्थि जहां हिंसा होय ऐसे खान पान ग्रहण आसन वचन चिंतवनादिक त्याग करने योग्य है।

निश्चयमवुद्ध्यमानो यो निश्चयतस्तमेव संश्रयते। नाशयति करणचरणं स बहिःकरणालसोबालः ॥ ६१ ॥

अर्थ—जो जीव निश्चयनयका विषय रागादि कषायरहित शुद्धात्मा रूपकूं तो जाण्या नाहीं अर मेरा भाव कषायरहित है मेरे समस्त प्रवृत्तिमें हिंसा नाहीं ऐसा वृथा निश्चय करता निरर्गल यथेच्छ प्रवर्तै है सो अज्ञानी बाह्य आचरणमें प्रवृत्ति छांडि प्रमादी हुआ करणचरणरूप चारित्रका नाश करै है। भावार्थ-

जाका परिणाम रागद्वेषरहित भया ते अयोग्य भोजन पान धन परिग्रह आरम्भादिकमें कसैं प्रवर्तन करैगा जो हिंसासूं विरक्त है सो हिंसा होनेके कारण दूरहीतैं छांडैगा। अब और हू पुरुषार्थसिद्ध्युपायमें कहै हैं कोऊ तो हिंसा नाहीं करकैं अर हिंसाके फलका भोगनेवाला होय है जैसैं आयुध बनावनेवाले लुहार सिकलीगर हिंसा नाहीं करिकैं हू तंदुलमच्छकी ज्यों हिंसाके फलकूं प्राप्त होय हैं। अर कोऊ दयावान होय यत्नाचारतैं जिनमंदिर बनावनेवाला बाह्यहिंसा होते हू हिंसाके फलकूं नाहीं प्राप्त होय है। कोऊ पुरुष हिंसा तो अल्प करी परन्तु तीव्र रागद्वेषरूप भावनितैं करने करि उदयकालमें महाफलकूं प्राप्त होय है। बहुरि केई अनेक पुरुष मिलि करकैं एक हिंसा करी परन्तु उस हिंसा करनेमें कोऊ तो तीव्र रागवाला सो तीव्रफलकूं प्राप्त होय है मन्दकषायवाला मन्दफलकूं प्राप्त होय है मध्यमकषायवाला मध्यमफलकूं प्राप्त होय है। तथा कोऊ पुरुषकैं हिंसा तो पाछैं काल पाय बनेगी परंतु हिंसाके परिणाम करनेतैं हिंसाको फल पहले हो उदय होय रस दे है। अर कोऊकै हिंसा करतां करतां फल है जैसैं कोऊ पुरुष अन्य कोऊकूं मारण करै तिस कालमें ही उसका प्रहारतैं आपहू मारचा जाय है। कोऊकै पूर्वै करी पाछैं फलै है। कोऊ हिंसाका आरम्भ तो किया अर पाछैं बन सकी नाहीं सो हू फलै है जैसैं कोऊका घात करनेका उपाय किया सो तो बणि सक्या नाहीं अर पाछैं वै जानि आपका घात किया ही। बहुरि हिंसा तो एक करै अर हिंसाका फल अनेक पुरुष भोगैं जैसैं चोर तथा हत्याराकूं मारै वा सूली चढ़ावै तो एक चांडाल अर देखनेवाले अनेक तमासगीर पापबंधकरि फल भोगवै हैं। अर संग्राममें हिंसा करनेवाला तो बहुत योद्धा होय हैं अर फल भोगनेवाला एक राजा होय है तातैं करै एक अर भोगै अनेक हैं अर करै अनेक भोगै एक है। बहुरि कोऊकै तो हिंसा करी हुई हिंसाहीका फल देहै अर अन्यकै सो ही हिंसा अहिंसाका फल देहै जैसैं कोऊ पुरुष किसी जीवकी रक्षा करनेकूं यत्न करै छा यत्न करते हू उसका मरण होय गया तो वाकै रक्षाका अभिप्रायतैं अहिंसाहीका फल होयगा अर कोऊका परिणाम तो किसीके मारनेका था आपदाकूं प्राप्त करनेका था अर उसका पुण्यका उदयतैं आपदा हू नाहीं भई अर मरण हू नाहीं

भया अनेक लाभ भया तो मारनेके अर्थीकौं तो पापहीका बंध होय है। अर कोऊका परिणाम किसीकूं दुःख देनेका नाहीं था सुख देनेका वा रक्षा करनेका था अर उसके दुःख हो गया वा मरण हो गया तो सुख देनेका परिणामकरि वाकै पुण्यबंध ही होयगा। इसप्रकार अनेक भंगनिकरि गहन यो जिनेन्द्रका मार्ग है यामें एकांती मिथ्यादृष्टिनिका पार होना अतिकष्टतैं हू नाहीं होय। अनेकांतके प्रभावतैं नयसमूहके जाननेवाला गुरु ही शरण है। यो जिनेन्द्रभगवानको नयचक्र तीक्ष्णधाराकूं धारण करता एकांती दुष्टआग्रहसहित मिथ्यादृष्टिनिका मिथ्यायुक्तिनिकी हजारां खण्ड करनेवाला है। यातैं भो ज्ञानीजन हो! भगवान वीतरागकी आज्ञातैं प्रथम ही हिंसा होने योग्य जे जीवनिके स्थान इंद्रियकायादिक जीवनिके कुलकोड तिनकूं जानो। बहुरि हिंसा करनेवाला भाव ताकूं जानो। बहुरि हिंसाका स्वरूप कहा है ताकूं जानो। बहुरि हिंसाका फलकूं जानो। ऐसें हिंस्य हिंसक हिंसा हिंसाका फल इन चारकूं यत्नतैं जानि करिके पाछैं देशकाल सहाय अपना परिणाम अर निर्वाह होना जानि अपनी शक्तिकूं नाहीं छिपाय गृहस्थपणामें हू अपने पदके योग्य हिंसाका त्याग हो करो तथा त्रसजीवनिकी संकल्पी हिंसाका तो त्याग करो अर समस्त आरम्भमें दयावान हुआ यत्नाचारतैं प्रवर्तन करो अर पंचस्थावरनिका आरम्भमें घटाय करि दयावान होय प्रवर्तो। ऐसैं अहिंसा अणुव्रतका स्वरूप कह्या अब अहिंसाणुव्रतका पंच अतीचार जनावनेकूं सूत्र कहै हैं—

छेदनबंधनपीडनमतिभारारोपणं व्यतीचाराः। आहारवारणापि च स्थूलवधाद्व्युपरतेः पंच ॥ ६३ ॥

अर्थ—ये स्थूलहिंसाका त्याग नामक व्रतके पंच अतीचार हैं ते गृहस्थके त्यागने योग्य हैं। छेदन कहिये अन्य मनुष्यतिर्यंचनिके कर्ण नासिका ओष्ठादिक अंगनिका छेदना सो छेदन नाम अतीचार है॥१॥ अर मनुष्यनिकूं बंधनादिककरि बांधना तथा बंदीगृहमें रोकना तथा तीर्यञ्चनिकूं दृढ़बन्धनकरि बांधना पक्षीनिकूं पींजरेमें रोकना इत्यादिक बन्धन नाम अतीचार है॥ २ ॥ अर मनुष्यतिर्यञ्चनिकूं लात धमूका लाठी चाबुक आदिका घातकरि ताडना करना सो पीडन नाम अतीचार है ॥३॥ बहुरि मनुष्यतिर्यञ्च गाडा

गाड़ी इत्यादिक ऊपरि बहुत बोझका लादना सो अतिभारारोपण नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ अर मनुष्य-तिर्यञ्चनिको खावने पीवनेको रोकना सो अन्नपानका निराकरण नामा अतीचार है ॥ ५ ॥ ये पांच अतीचार स्थूलहिंसाका त्यागीकूं त्यागने योग्य है। अब सत्य नाम अणुव्रतके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

स्थूलमलीकं न वदति न परान् वादयति सत्यमपि विपदे। यत्तद्वदन्ति सन्तः स्थूलमृषावादवैरमणं ॥ ६४ ॥

अर्थ—जो स्थूल असत्य नाहीं बोलै अर परकूं असत्य नाहीं बुलावै अर जिस वचनतैं आपकै अन्यकै आपदा आवै ऐसा सत्य हू नाहीं कहै ताहि सत्पुरुष स्थूलभूंठका त्याग कहै हैं। भावार्थ—सत्य अणुव्रतका धारक होय सो क्रोधमानमायालोभके वशीभूत होय ऐसा वचन नाही कहै जाकरि अन्यका घात होजाय अन्यका अपवाद होजाय अन्यकै कलंक चढि जाय सो वचन निंद्य है। जिस वचनतैं मिथ्याश्रद्धान होजाय तथा धर्मसूं छूटि जाय व्रत संयम त्यागतैं शिथिल होजाय श्रद्धा बिगड़ि जाय सो बचन नाहीं कहै तथा कलह विसंवाद पैदा हो जाय विषयानुराग बधि जाय महाआरंभमैं प्रवृत्ति हो जाय अन्यके आर्त्तध्यान प्रगट होजाय कामवेदना प्रगट होजाय परके लाभमें अन्तराय होजाय परकी जीविका बिगड़ि जाय अपना परका अपयश होजाय ऐसा निंद्यवचन योग्य नाहीं तथा ऐसा सत्य वचन हू नाहीं कहै जाकरि आपको अन्यको बिगाड़ होजाय आपदा आजाय अनर्थ पैदा होजाय दुःख पैदा होजाय मर्म छेद्या जाय राजका दंड होजाय धनकी हानि होजाय ऐसा सत्यवचन हू झूठ ही है। बहुरि गालीके वचन भंडवचन नीचकुलवालेनिके बोलनेके वचन तथा मर्मछेदके वचन परके अपमानके वचन परके तिरस्कारके वचन अहंकारके वचनकूं कदाचित् नाहीं कहै। जिनसूत्रके अनुकूल तथा आपका परका हितरूप अर बहुत प्रलाप रहित प्रमाणीक संतोषका उपजानेवाला धर्मका उद्योत करनेवाला वचन कहै जातैं न्यायरूप आजीविका सधै अनीतिरहित होय ऐसे वचनको कहता गृहस्थके स्थूल असत्यका त्यागरूप द्वितीय अणुव्रत होय है। अब सत्याणुव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

परिवादरहोभ्याख्या पैशून्यं कूटलेखकरणं च न्यासापहारितपि च व्यतिकमाः पंच सत्यस्य ॥ ६५ ॥

अर्थ-इहां परिवाद तो मिथ्याउपदेश है जो स्वर्गमोक्षका कारण जो चारित्र तिस चारित्रकूं अन्यथा उपदेश करना सो परिवाद नाम अतीचार है ॥ १ ॥ अर कोऊ आपकूं छानी बात कही होय सो किसीकूं कह देना विख्यात करि देना तथा कोऊ स्त्रीपुरुषादिकनिका एकांतमें गुह्य चेष्टा देख करिकैं तथा गुह्यवचन श्रवण करि किसीकूं प्रगट करना सो रहोभ्याख्यान नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि अन्यका छिद्र जानि बिगाड़ि करानेके अर्थि कोऊकूं छिपकरि कह देना चुगली करना सो पैशून्यनाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि अन्यके विना कह्या तथा विना आचरण किया झूठा लिख देना जो इसने ऐसा कह्या है ऐसा आचरण किया है सो कूटलेखकरण नामा अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि कोऊ आपको धन सौंपि गया तथा वस्त्र आभरणादिक मेलि गया फिर संख्या भूलि अल्प मांगने आया ताकूं कहै तुम्हारा है सोही लेजावो सो न्यासापहारिता अतीचार है ॥५॥ ऐसैं स्थूल असत्यका त्याग नाम अणुव्रतके पांच अतीचार त्यागने योग्य हैं। इहां ऐसा विशेष जानना जो अनादितैं अनन्तकाल तो यो जीव निगोदमें ही बास किया फिर कदाचित् निगोदिमेंतैं निकसि करिकैं फिर पंच स्थावरनिमें असंख्यकाल परिभ्रमणकरि बहुरि निगोदमें अनन्तकाल बारंबार अनन्तानन्त परिवर्तन एकेन्द्रियमें किये तहां तो वचन पाया नाहीं जिह्वा इन्द्रिय ही नाहीं भई बहुरि द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय असैनी सैनी पंचेन्द्रियमें उपज्या तहां जिह्वा पाई तो अक्षरात्मक कहने सुननेरूप वचन नाहीं पाया। कदाचित् अनन्तानन्तकालमें मनुष्य जन्ममें वचन बोलनेकी शक्ति पाई तो नीच कुलनिमें अयोग्य वचन हिंसाके बचन असत्य वचन परकै अर आपकै संताप करनेवाला वचन बोलि महापापबंध करि दुर्गतिका पात्र भया अपने वचन करि अपना घातक भया। कदाचित् कोऊ पूर्वपुण्यके उदयकरि मनुष्यजन्म पाया है तो यामैं वचन बोलनेमें बड़ा यत्न करो। भोजनपान करना कामसेवन करना नेत्रनितैं देखना काननितैं श्रवण करना तो शूकर कूकर गधा कागलाकैं भी होय हैं क्योंकि आंख नाक कान जीभ कामेन्द्रिय ये तो समस्त ढोरनिके भी होय हैं। इस मनुष्यजन्ममें तो एक वचन ही सार है करामाति है जो इस बचनकूं बिगाड़्या सो अपना समस्त जन्म बिगाड्या। बचनतैं ही जानि-

ये है यो पंडित है यो मूर्ख है यो धर्मात्मा है यो पापी है यो राजा है वा राजाका मंत्री है यो रंक है यो कुलीन है यो अकुलीन है यो हीणाचारी है यो उत्तमाचारी है यो संतोषी है यो तीव्रलोभी है यो धर्मवासनासहित है यो धर्मवासनारहित है यो मिथ्यादृष्टि है यो सम्यग्दृष्टि है यो संस्कृती है यो संस्कृत रहित है यो उत्तम संगतिको राजसभामें रह्यो हुवो है यो ग्राम्यजन गंवारनिमें रह्यो है यो लौकिकचतुर है यो लौकिकमूढ है यो हस्तकलासहित है यो कलाविज्ञानरहित है यो उद्यमी पुरुषार्थी है यो आलसी प्रमादी है यो शूर है यो कायर है यो दातार है यो कृपण है यो दयावान है यो निर्दय है यो दीन याचक है यो महंत है यो क्रोधी है यो क्षमावान है यो मदोद्धत है यो मदरहित है यो विनयवान है यो कपटो है यो निष्कपट है यो सरल है यो वक्र है इत्यादि क आत्माके गुणदोषादिक समस्त वचनद्वारै ही प्रगट होय है, यातै मनुष्य जन्म पावना सफल किया चाहो तो एक वचनहीकी उज्वलता करो। इस वचनहीतैं सत्यार्थ उपदेश करि भगवान अरहंत त्रैलोक्यकरि वंदनीक होय जगतको मोक्षमार्गमें प्रवर्तन कराया है वचनहीतैं अनेक जीवनिका मिथ्यात्वरागादिक मल दूरकरि अजर अमर अविनाशी पद दिया है। पंचपरमेष्ठीमें भी वचनकृत उपकारके प्रभावतैं प्रथम अरिहंतनिकूं ही नमस्कार किया है ज्ञानी वीतरागीके वचनकरि स्वर्ग नरकादिक तीन लोक प्रत्यक्षकी ज्यौं दीखै है। वचन हीकी सत्यताके प्रभावकरि पंचमकालमें धर्म प्रवर्तै है। अर उज्वल वचन विनयका वचन प्रियवचनरूप पुद्गलनि करि समस्त लोग भर्या है मोल नाहीं लागै तथा किसीकूं जीकारो देनेमें अपना अंगमें दुःख नाहीं उपजै है जीभ तालु कण्ठ नाहीं भिदै है यातैं समस्त प्राणीनिकै सुख उपजावे ऐसा प्रिय वचन ही कहो अर असत्यवचनके प्रभावकरि ही मिथ्यादेवनिकी आराधना तथा यज्ञादिक हिंसाके प्ररूपक वेदादिक ग्रन्थनिमें मांस भक्षणादिक कुकर्मनिमें प्रवृत्ति हू असत्य वचनतैं ही भई है तथा खोटे शास्त्रनिकी रचना नाना प्रकारके मिथ्यात्वरूप मत नरक तिर्यञ्चनिमें परिभ्रमण करानेवाला समस्त दुष्ट आचार इस असत्य वचनके प्रभावकरि ही प्रवृतै है अर अयोग्यवचनतैं ही घर घरमें कलह विसंवाद परस्पर वैर परस्पर ताड़न मारन प्राणापहार क्रोधभय संतापभय अपमानादिक

देखिये है अर अप्रतीत अविश्वास खेदका कारण एक असत्य वचनहीकूं जानो। अर असत्यका प्रभावकरि परलोकमें नरकतिर्यंचगतिकूं प्राप्त होय अरु कुमानुषनिमें तथा नीच चाडाल चमार भील कषायी इत्यादिक कुलमें हू असत्य ही उपजावै तथा अनेक भवनिमें दरिद्री रोगी गूंगो बहरो हीण दीन असत्यका प्रभावतैं होय है तातैं समस्त दुःखका मूल एक असत्यवचन है सो शीघ्र ही त्याग करि एक सत्यवचन प्रियवचनहीमें प्रवृत्ति करो। तातैं तुम्हारावचन समस्तके आदरके योग्य अनेक देव मनुष्यनिके ऊपर आज्ञा करने योग्य होय तथा समस्तश्रुतका परिगामी श्रुतकेवलीपना गणधरपना सत्यहीका प्रभावतैं प्राप्त होय है यातैं असत्यका त्याग ही जीवका कल्याण है। बहुरि पुरुषार्थसिद्ध्युपायमें कहे हैं—

हेतौ प्रमत्तयोगे निर्दिष्टे सकलवितथवचनानां। हेयानुष्ठानादेरनुवदनं भवति नासत्य ॥ १०० ॥
भोगोपभोगसाधनमात्रं सावद्यमक्षमा मोक्तुं। ये तेऽपि शेषमनृतं समस्तमपि नित्यमेव मुञ्चंतु॥१०१॥

अर्थ—समस्त असत्यवचनको कारणप्रमत्तयोग भगवान कह्यो है कषायके आधीन होय जो वचन कहै है सो असत्य है यातैं कषाय विना देना मेलना धरना त्यागना ग्रहण करना इत्यादिका कहना सो असत्य नाहीं है अर जो गृहस्थ अपना भोग उपभोगका साधनमात्र सदोष वचन त्यागनेकूं समर्थ नाहीं हैं ते गृहस्थ अन्य निरर्थक पापबन्ध करनेवाला समस्त असत्यवचनकूं तो त्याग अवश्य ही करो। भावार्थ—अपना भोग उपभोगका साधनमात्र सदोषवचनका त्याग नाहीं होय सकै तो ताका त्याग करनेमें बड़ा उद्यम राखणा अर वृथा बहु आरम्भ बहुपरिग्रहका कारण दुर्ध्यानका कारण अन्यके आपकै संतापका कारण ऐसा सदोष निन्द्यवचनका तो त्याग अवश्य करना ही श्रेष्ठ है। ऐसैं स्थूलअसत्यका त्याग नामा दूजा अणुव्रतकूं कह्या है। अब स्थूलचोरीका त्याग नामा तीजा अणुव्रतकूं कहे हैं—

निहितं वा पतितं वा सुविस्मृतं वा परस्वमविसृष्टं। न हरति यन्न च दत्ते तदकृशचौर्यादुपारमणं ॥५६॥

अर्थ—जो किसी पुरुषका जमींमें गड्या हुआ धन होय वा कोऊ स्थानमें महल मन्दिर गृहादिकमें स्थापन किया हुआ धन होय अथवा आपकूं अमानत सौंपि गया होय वा अपने मकानमें तथा परके

स्थानमें आपकूं नाहीं जनाया घर गया होय अथवा ग्राममें नगरमें वनमें बागमें पटकि गया होय अथवा आपको सौंपि भूलि गया होय वा हिसाब लेखामें चूक गया होय वा आपके स्थानमें भूलिकरि पटकि गया होय अथवा लेनेदेनेमें गिनतीमें विस्मरण हुआ पैसा रुपया मनोहर आभरण वस्त्रादिक बहुत वा अल्प द्रव्य बिना दिया नाहीं ग्रहण करै अर परका द्रव्य उठाय किसीकूं देवे भी नाहीं सो स्थूल चोरीका त्यागरूप अणुव्रत है। अर कार्तिकेयस्वामी ऐसैं कह्या है।

जो बहुमुल्लं वत्थुं अप्पमुल्लेण णेय गिण्हेदि। वीसरियं पि ण गिण्हेदि लाहे थूवेहि तूमेदि ॥६३५॥

अर्थ—जाके स्थूलचोरीका त्याग होय सो बहुत मोलकी वस्तु अल्पमोलमें नाहीं ग्रहण करै जैसैं कोऊ पुरुष आपको वस्तुको चौकसि करि बेचै तो सवारुपयामें बिक जाय अर आपकूं आय सौंपी जो इसकी कीमत होय सो आप देवो तो तहां सवारुपयाका वस्तुकूं प्रगट जानता लोभके वशि हो एक रुपयामें हू नाहीं लेवै। अन्यकी भूली हुई वस्तु ग्रहण नाहीं करै तथा ऐसा परिणाम नाहीं करै जो कोऊ निर्धन तथा अज्ञानीकी वस्तु हमारे थोड़े मोलमें आजाय तो भला है अर अल्प लाभहीमें बहुत संतोष राखै। भावार्थ—बनजके व्यवहारमें तथा सेवामें लाभ थोरा होय तो संतोष ही करै अधिकमें लालसा नाहीं करै तिसकै स्थूलचोरीका त्याग जानना। अब अचौर्य नामा अणुव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहे हैं।

चौरप्रयोगचौरार्थादानविलोपसदृशसन्मिश्राः। हीनाधिकविनिमानं पंचास्तेये व्यतीपाताः ॥६७॥

अर्थ—अचौर्य नाम अणुव्रतके ये पंच अतीचार हैं आप तो चोरी नाहीं करै परन्तु अन्यकूं प्रेरणा करै तथा चोरी करनेका प्रयोग ( उपाय ) बतावै सो चोरप्रयोग नामा अतीचार है ॥ १ ॥ अर चोरका ल्याया धनको ग्रहण करणा सो चौरार्थादान नामा दूसरा अतीचार है ॥ २ ॥ अर उचित न्यायतैं छांडि अन्यरीतितैं ग्रहण करना अथवा राजाकी आज्ञासूं जाका निषेध होय तिस कार्यका करना विलोप नामा अतीचार है ॥ ३ ॥ अर बहुत मोलकी वस्तुमें अल्पमोलकी वस्तु मिलाय चला देना सो सदृशसन्मिश्र नामा अतीचार है जैसैं घृतमें तेल मिलाय देणा शुद्धसुवर्णमें कृत्रिमसुवर्ण मिलाय देना सो सदृशसन्मिश्र है

॥ ४ ॥ बहुरि देनेके बांट ताखड़ी घाटि परिमाण राखना लेनेकूं वधती राखना सो ही नाधिकामानोन्यान नामा अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं स्थूल चोरीका त्याग नामा अणुव्रतके पंच अतीचार त्यागने योग्य हैं। इस चोरी समान जगतमें अपराध नाहीं है समस्त उच्चना कुलकर्म धर्मविनाश करनेवारी समस्त प्रतीति बड़ापनाका विध्वंस करनेवाली है अर चोरीका धन हू वेश्यासेवनमें परस्त्रीमें व्यसननिमें अभक्ष्में खरच होय है वा अन्य किसीमें रही जाय है संतोष नाहीं आवै हैं क्लेशित होय रहे हैं अर प्रगट होय तो राजा तीव्र दंड देहैं समस्त लोक मारे है हस्तनासिकाका छेदन सर्वस्वहरणादिक दण्ड यहां ही प्राप्त होय है परलोकमें नरकादिक कुयोनिनमें परिभ्रमण होय है। अब स्थूल ब्रह्मचर्य नामा अणुव्रतका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

न च परदारान् गच्छति न परान् गमयति च पापभीतेर्यत्। सा परदारनिवृत्तिः स्वादारसंतोषनामापि ॥ ६८ ॥

अर्थ—जो पापका भयतैं परकी स्त्री प्रति आप नाहीं प्राप्त होय अर परकी स्त्री प्रति अन्य पुरुषनिनैं गमन नाहीं करावै सो स्वदारसंतोषनामधारक परस्त्रीका त्याग नामा चौथा अणुव्रत है। भावार्थ—जो अपने जाति कुलकी साखातैं विवाही स्त्री तिसविषैं संतोष धारण करके तिसतैं अन्य समस्त स्त्री मात्रमें रागभावका त्यागी होय परस्त्री तथा वेश्या दासी तथा कुलटा तथा कन्या इत्यादिक स्त्रीनिमें विरागताकी प्राप्त होय स्त्रीनिसूं रागभावकरि संगमवचनालाप अवलोकन स्पर्शनका त्याग करै ताकूं परस्त्रीका त्यागी कहिये तथा स्वदारसंतोषी हू कहिये है। अब स्वदारसंतोषव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

अन्यविवाहाकरणानङ्गक्रीडाविटत्वविपुलतृषाः। इत्वरिकागमनं चास्मरस्य पंच व्यतीचाराः ॥ ६९ ॥

अर्थ—ये अस्मर जो स्थूल ब्रह्मचर्य ताके पंच अतीचार हैं ते त्यागने योग्य हैं। अपने पुत्र पुत्री विना अन्यके पुत्रपुत्रीनिका विवाहकूं आ समंतात् कहिये आप रागी होय करवो सो अन्य विवाहकरण नाम अतीचार है ॥ १ ॥ अर कामके अंग छांडि अन्य अंगनितैं क्रीडा करिवो सो अनंगक्रीडा नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि भंडिमारूप पुरुषकूं स्त्रीका रूप स्वांगादिक वनाय मनवचनकायकी प्रवृत्ति सो विटत्व नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि कामकी अतितृष्णा कामकी तीव्रता सो अतितृष्णा नाम अतीचार है ॥ ४ ॥

बहुरि इत्वरिका जे व्यभिचारिणी स्त्री तिनके घर जावना व्यभिचारिणीकूं आपके घर बुलावना देन लेन रखना परस्पर बार्ता करना रूप शृंगार देखना सो इत्वरिकागमन नाम अतीचार है ॥५॥ ये स्थूल ब्रह्मचर्यव्रतके पांच अतीचार त्यागने योग्य हैं। जो देवनिकरि पूज्य यो ब्रह्मचर्यव्रत ताकी रक्षा किया चाहै सो अपनी विवाही स्त्री विना अन्य माता भगिनी पुत्री पुत्रबधूके नजीक हू एकांतस्थानमें नाहीं रहै अन्य स्त्रीका मुख नेत्रादिककूं अपना नेत्र जोड़ नाहीं देखै। शीलवंतपुरुषनिका नेत्र अन्यस्त्रीकूं देखत प्रमाण मुद्रित हो जाय हैं। अब परिग्रहपरिमाण नामा अणुव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

धनधान्यादिग्रन्थंपरिमायततोऽधिकेषु निस्पृहता। परिमितपरिग्रहः स्यादिच्छापरिमाणनामापि ॥७०॥

अर्थ—अपने परिणामनिमें जेतामें सन्तोष आजाय तितना धन धान्य द्विपद चतुष्पद गृहक्षेत्र वस्त्र आभरणादि परिग्रहका परिमाण करकैं अधिक परिग्रहमें निर्वांछकपनो सो परिमितपरिग्रह नाम व्रत है याहीकूं इच्छापरिमाण नाम कहिये है। बहुरि कोऊकै वर्तमानमैं परिग्रह अल्प है अर बांछा अधिक करि बहुत धनमें परिमाण करि मर्याद करै है सो हू धर्मबुद्धि है ब्रती है, परन्तु अन्यायतैं लेवाका त्याग दृढ़ राखै जैसैं कोऊकै परिग्रह तो सौ रुपयाका है परिमाण हजारका करै जो हजार सिवाय नाहीं ग्रहण करूं यो भी व्रत है परन्तु हजार अन्यायतैं नाहीं ग्रहण करूंगा ऐसा दृढ़ नियम करै जातैं परिग्रहका परिमाण बिना निरन्तर परिणाम अनेक वस्तुनिमें परिभ्रमण करै है। समस्त पापनिका मूलकारण परिग्रह है समस्त दुर्ध्यान याहीतैं होय है जातैं भगवान मूर्छाकूं परिग्रह कह्या है। बाह्यपरिग्रह अन्य वस्त्रमात्र तथा रहनेकूं कुटीमात्र नाहीं होतैं हू परवस्तुमें ममता (बांछा) करिसहित है सो परिग्रही ही है परमागममें अंतरङ्ग परिग्रह चौदह प्रकार कह्या है—मिथ्यात्व १ वेद २ राग ३ द्वेष ४ क्रोध ५ मान ६ माया ७ लोभ ८ हास्य ९ रति १० अरति ११ शोक १२ भय १३ जुगुप्सा १४। तहां मिथ्यात्व तो देहादिक परद्रव्यनिमें अनादिकालतैं ममतारूप परिणाम है यह देह है सो मैं हूं जाति मैं हू कुल मैं हूं इत्यादिक परपुद्गलनिमें आत्मबुद्धि अनादितैं लाग रही है सो मिथ्यात्व है तथा रागद्वेषभाव क्रोधादिकभाव मोहकर्मकरि किए भावनिमैं

आत्मपनाको संकल्प सो मिथ्यात्वपरिग्रह है। तथा कामतैं उपज्या विकारमें लीन हो जाना तथा राग द्वेष क्रोध मान माया लोभ हास्यादिक छह नोकषायनिमें आपा धारन सो अन्तरंग परिग्रह है जाकैं अंतरंग-परिग्रहका अभाव है ताकैं बाह्यपरिग्रहमें ममता नाहीं होय है समस्त अनीति परिग्रहकी ममतासूं करै है परिग्रहकी बांछातैं हिंसा करै झूठ बोलै ही चोरी करै ही कुशीलसेवन करै ही परिग्रहके वास्ते मरजाय अन्यकूं मारै महा क्रोध करै परिग्रहका प्रभावतैं महाअभिमान करै परिग्रहवास्ते अनेक मायाचार करै परिग्रहकी ममतातैं महालोभ करै बहुत आरंभ बहुत कषायको मूल परिग्रह ही है समस्त पापनितैं छूट्या चाहै सो परिग्रहतैं विरक्त होय है सो हो कार्तिकेयस्वामी कह्या है।

कोण वसो इत्थिजणे कस्स ण मयणेण खंडियं माणं। को इंदिएहिं ण जिओ को ण कसाएहि संतत्तो॥२८१॥
सो ण वसो इत्थिजणे सो ण जिओ इंदिएहिं मोहेण। जो ण य गिएहदि गंथं अब्भंतरबाहिरं सव्वं॥२८२॥
जो लोहं णिहणित्ता सन्तोसरसायणेण सन्तुट्ठो। णिहणादि तिएणा दुट्ठा मएणांतो विणस्सरं सव्वं ॥३३९॥
जो परिमाणं कुव्वदि धणधाणसुवएणखित्तमाईणं। उवओगं जाणित्ता अणुव्वयं पंचमं तस्स ॥३४०॥

अर्थ—इस जगतमें स्त्रीनिके वश कौन नाहीं है अर कामविकारनें कौनका मान खंडन नाहीं किया अर इंद्रियनिकरि कौन नाहीं जीत्या गया अर कषायनिकरि तप्तायमान कौन नाहीं है? समस्त संसारी जीव हैं ते स्त्रीनिके वश होय रहे हैं अर कामविकार समस्त संसारीनिका अभिमान खंडन करै है अर समस्त संसारी इन्द्रियनिके वश पराधीन होय रहे हैं अर चार प्रकार कषायनिका समस्त प्राणी दग्ध होय रहे हैं जो पुरुष अभ्यंतर अर बाह्य समस्त परिग्रहकूं ग्रहण नाहीं करै है सो हो स्त्रीनिके वश नाहीं सो हो इन्द्रियनिके आधीन नाहीं तिसहीकूं मोह नाहीं जीतै सो ही कामकरि नाहीं खंडन होय है सो ही कषायकरि दग्ध नाहीं होय है। जो पुरुष लाभको नष्टकरि संतोषरूप रसायणकरि आनंदित हुआ समस्त धन संपदादिकनिनैं विनाशीक मानि दुष्ट तृष्णाकूं आगामी बांछाकूं छांड़िकरि धन धान्य सुवर्ण क्षेत्र स्था-नादिकनिको अपना अभिप्राय जानि परिणाम करै है जो इतना परिग्रहसूं मेरा निर्वाह करना अधिकमें मेरा

प्रवृत्ति करनेका त्याग है ऐसे पापरूप जानि वांछा छांडै ताकै परिग्रहपरिमाण नामा अणुव्रत होय है। बहुरि परमागममें परिग्रहका लक्षण मूर्छा कह्या है जीवकै जो परपदार्थनिमें ममता बुद्धि सो ही मूर्छा है जातैं पर वस्तुमें ऐसा अपना मानकरि राग है जो आत्माका मरण जीवन हित अहित योग्य अयोग्यके विचारमें अचेत होय रह्या है मोहकी उदीरणातैं म्हारो ऐसो परद्रव्यमें परिणाम सो ही मूर्छा है। मूर्छा हीकूं भगवान परिग्रह कह्या है याहीतैं बाह्यपरिग्रह अल्प होहु वा मति होहु समस्त परिग्रहरहित है तो हू मूर्छावान परिग्रही है सो ही कहै हैं।

बाहिरगथविहीणा दलिदमणुआ सहावदो हुति। अब्भंतरगंथं पुण ण सक्कदे को वि छंडंदु ॥ ३८७ ॥

अर्थ—बाह्य परिग्रह रहित तो दरिद्री मनुष्य स्वभावहीते होय है सो देखिये हो है हजारां लाखां मनुष्य ऐसे हैं जिनकूं जन्मलिये पीछे पीतल तांबा कांसाका पात्र मिलया हो नाहीं जे जन्मतैं घृत भक्षण किया नाहीं मोदकादिक खाया नाहीं पाग अंगरखी जामा कदे पहरह्या ही नाहीं स्त्री विवाही ही नाहीं कदे उदर भर भोजन मिल्या नाहीं सुवर्णादिक देख्या नाहीं समस्त जन्ममें दोय चार दिनके खावने योग्य अन्नमात्रका हू संग्रह हुआ नाहीं अन्य सुवर्णरूपादिकनिका तो दर्शन ही नाहीं पैसा रुपया एक भी जिनकूं कदे प्राप्त हुआ नाहीं रहनेकूं कुटीमात्र हू अपनी भई नाहीं ऐसैं अनेक मनुष्य देखिये हैं परन्तु अभ्यंतर ममता छोड़नेकूं कोऊ सामर्थ नाहीं तातैं मूर्छा ही परिग्रह है। यहां कोऊ पूछै जो मूर्छा ही परिग्रह है तो बाह्य धनधान्यवस्त्रादिक बाह्यवस्तुका संगमके परिग्रहपना नाहीं ठहरया ताकूं उत्तर करै हैं—ये बाह्यपरिग्रह अन्तरङ्गपरिग्रहके निमित्त हैं इन बाह्यपरिग्रहका देखना श्रवण करना चिन्तवन करना शीघ्र ही परिग्रहमें लालसा उपजावै है ममता उपजावै है अचेत करे है तातैं बहिरङ्गपरिग्रह मूर्छाका कारण त्यागने योग्य है अर अन्तरंग बहिरंग दोऊ प्रकार परिग्रहके ग्रहणकूं भगवान हिंसा कही है अर दोय प्रकारका परिग्रहका त्याग सो अहिंसा है ऐसैं परमागमके जाननेवाले कहै हैं। जातैं मिथ्यात्वकषायादिक अन्तरंगपरिग्रह तो हिंसाहीके दूजे पर्यायनाम हैं अर बाह्यपरिग्रहमें मूर्छा सो ही हिंसा है। बहुरि ये कृष्णा-

दिक लेश्याके अशुभपरिणाम हू परिग्रहमें रागकरि ही होय हैं क्योंकि परिणामनिकी शुद्धता मंदकषायकरि होय है कषायनिकी मंदता होय सो परिग्रहके अभावतैं होय अर महान आरंभ भी परिग्रहका अधिकतातैं ही होय है ऐसैं जानि समस्त परिग्रह छांड़नेका राग नाहीं घट्या तो परिग्रहमें उपयोग माफिक परिणाम करिकैं तो रहो। अर जो परिग्रह तो अल्प है अर अधिककी वांछा बनि रही है सो इस वांछातैं प्राप्त नाहीं होयगा लाभ तौ अन्तरायकर्मका क्षयोपशमतैं होयगा वांछातैं तो अर पाप कर्मका बंध हो होयगा तातैं पापका कारण परिग्रहकी ममता छांड़ि जेता प्राप्त भया तितनामें संतोष धारण करि ही रहो। यहां ऐसा विशेष जानना, यद्यपि समस्त परिग्रह त्यागने योग्य हैं परंतु जो गृहस्थपनामें रहि धर्मसेवन कर्या चाहै सो अपने पुण्यके अनुकूल परिग्रह राखै हो जो परिग्रह गृहस्थके नाहीं होय तो काल दुकालमें रोगमें वियोगमें व्याहमें मरणमें परिणाम ठिकाने रहै नाहीं परिणाम बिगडि जाय तातैं गृहस्थधर्मकी रक्षावास्ते परिग्रह संचय करै ही अर आजीविकाको उपाय न्यायमार्गत करै ही क्योंकि साधु तो परिग्रह अल्प हू राखै तो दोऊ लोकतैं भ्रष्ट होजाय अर गृहस्थ परिग्रह नाहीं राखै तो भ्रष्ट हो जाय जातैं गृहस्थाचारमैं रहैं तो ताके अल्प तथा बहुत परिग्रह विना परिणाममैं समता नाहीं रहै अर आजीविका नाहीं होय तो निराधारका परिणाम धर्मसेवनमें ठहर सकै नाहीं परिणाममैं तीव्र आर्ति मिटै नाहीं भोजनपान मिलने योग्य आजीविका बिना स्वाध्यायमैं पूजनमैं शुभभावनामें परिणाम ठहरि सकै नाहीं आकुलताकरि संक्लेश बधतो जाय संतोष रहै नाहीं। जातैं रोग आवतैं वृद्धपना आवतैं वियोग होतैं अन्न वस्त्रका आधार विना अपना परिणाम कोऊ देशमैं कोऊ कालमैं थिरता पावै नाहीं देहकी रक्षा आजीविका बिना नाहीं, देह बिना अणुव्रत शील संयम काहेतैं होय? यातैं अपना पुण्यकी अनुकूलता अर उद्यम सामर्थ्य सहाय साधनादिक देशकालके योग्य विचारि न्यायमार्गतैं आजीविका करि धर्म सेवन करौ। अहिंसातैं सत्यप्रवृत्तितैं अदत्त परके धनका त्याग करि आपकूं जगतकै लोकनिकै विश्वास आवनेयोग्य पात्र बनो। तथा विद्या कला चातुर्य करि आजीविका होने योग्य आपकूं करौ। पाछैं लाभांतरायका क्षयोपशम प्रमाण लाभ अलाभ अल्पलाभ होय ताहीमैं संतोष करो। अर कु-

टुंबका पोषण देहका पोषण पुण्यके उदयतैं लाभ भया तिस परिणाम करो। ऋणवान मत होहू ऋण हुआ पाछैं समस्त धीरज प्रतीतका अभाव हो जायगा दीनता प्रगट हो जायगी एक बार अपनी प्रतीति बिगड़ै पाछैं आजीविका होना कठिन है बहुरि आजीविकाकै अनुकूल खरच राखो पुण्यवाननिकूं देख अधिक खरच करोगे तो जस अर धर्म अर नीति तीनों नष्ट हो जायंग अर अन्य पुण्यवानोका खरच देख बराबरी करोगे तो दरिद्री होय दोऊ लोकतैं भ्रष्ट हो जावोगे अर या जानो हो जो हमारी बडी आबरू है पूर्वै हमारे बड़ा २ कार्य भया है अब कैसैं घटावैं जो घटावैं तो हमारा समस्त बडापना बिगडि जाय ऐसो बुद्धि मति करो पुण्य अस्त होजाय तब बडापना कैसैं रहेगा अब बडापना तो सांच संतोष धारणाकरि शीलकरि विनयकरि दीनता रहितपनाकरि इंद्रियनिके विषयनिकी चाह घटावनेकरि है। जातैं दोऊ लोकमें उज्वलता होय पुण्यको उदय आजाय तदि जीवकूं स्वर्गलोकका महर्द्धिक देव बना दे चक्रवर्ती करदे अर पापका उदय आवै तदि नरकका नारको तथा एकेन्द्रिय बनादे तथा भार बहनेवाला रोगी दरिद्री मनुष्य करदे तिर्यञ्च करदे इसही भवमें राजा होय रंक हो जाय कौनसा बडापनाकूं देखो हो अर अपने धन तो अलप अर अभिमानी होय बहुत धन खरच करोगे तो दरिद्री अर ऋणवान दीन होय समस्ततैं नीचे हो जावोगे निंद्यताकूं प्राप्त होय आर्तध्यानतैं दुर्गतिके पात्र हो जावोगे तातैं आजीविका होय तातैं अलप खरच करो यो ही प्रवीणपणो है पंडितपणोहै जो आंवदनीतैं अलप खरच करै सो ही कुलवानपणो है सो ही उत्तम धर्म है क्योंकि आंवदनीतैं खरच बधावोगे तो अपनी ही बुद्धितैं दरिद्री होय मूर्खता दिखावोगे अर ऋणवान हो जावोगे तदि उत्तम कुल योग्य आदर सत्कार आचरण समस्त नष्ट होजायगा अर मलीनता प्रगट होजायगी अर पूजन स्वाध्याय शुभ भावनामें बुद्धि निर्धन हुआ पीछैं ऋणवान हुआ पीछैं नाहीं तिष्ठैगी। तातैं आजीविकातैं अलप खरच करना ही गृहस्थकी परम नीति है अर अभिमानी होय अधिक खरच करै ताकैं अन्यका बिना दिया धन ऊपरि चित्त चलि जाय है अनेक असत्य कपटादिक पापमैं प्रवृत्ति होय संतोष धर्म नष्ट हो जाय है। कोऊ या कहै जो आजीविका तो पूर्वकर्मके आधीन है धर्मसेवन अपने

आधीन है ताकूं कहिये है जो—यहां आजीविका पुण्यके आधीन ही है परन्तु धर्मग्रहण होजाना हू पुण्यकर्मका सहाय बिना नाहीं होय है। धर्मग्रहणकी योग्यतामैं हू एती सामग्री मिले होय है उत्तमकुलमें जन्म पावना, जातैं चांडाल चमार भील शूद्रादिकके कुलमें धर्मका लाभ कैसैं होय? बहुरि सुदेशमें उपजना, इंद्रियांकी पूर्णता पावना, रोगरहित देह पावना, शुभ संगति पावना, आजीविकाकी स्थिरता पावना सम्यक्धर्मका उपदेश पावना, इत्यादिक पुण्यका उदयजनित बाह्यसामग्री पाये विना धर्मग्रहण वा धर्मका सेवन नाहीं होय है। तातैं जाकैं पूर्वपुण्यका उदयतैं आजीविकाकी स्थिरता होय ताकै धर्मसेवनमें योग्यता होय है। बहुरि जाके इंद्रियनकी पूर्णता निरोगता होजाय अर न्याय अन्यायका विवेक तथा धर्म अधर्म योग्य अयोग्यका विवेक होय तथा प्रियवचन विनय अन्यके धन अर अन्यकी स्त्रीसूं पराङ्गमुखता अर आलस्य प्रमादरहितता धीरता कालदेशके योग्य वचन होय ताकै आजीविकाका लाभ अर धर्मका लाभ होजाय। गुणवानके निर्लोभीके आलस्यरहित उद्यमीकै विनयवानकै जीविका दुर्लभ नाहीं है। आप जीविका योग्य पात्र बन जाय तो जीविका कदाचित् दूर नाहीं लोभान्तराय कर्मका क्षयोपशम प्रमाण आजीविका थोडी वा बहुत नियमतैं बन ही जाय तिसमैं संतोष करि अधिकमैं वांछाका त्याग करि परिग्रहपरिमाणव्रत धारण करो। अर पुण्यका उदयके आधीन आजीविका प्राप्त होजाय तो अनीतिमैं प्रवृत्ति करि आजीविकाकूं नष्ट मत करो आजीविका नष्ट हो जायगी तो धर्म अर जस नष्ट होजायगा अर अपने भावनिकरि जो नीति धर्म नाहीं छांडोगे न्यायमार्ग चालोगे फिर हू असाताका उदयतैं अग्नितैं जलतैं चोरनितैं राजाके उपद्रवतैं आजीविका बिगड़ जाय तथा धन बिगडि जायगा तो धर्म नाहीं बिगड़ैगा यश नाहीं बिगड़ैगा जगतमें अप्रतीतका पात्र नाहीं होवोगा, अर प्रबल लाभांतरायका उदयतैं न्यायरूप उद्यम करते हू जो लाभ नाहीं होय तो समता ही ग्रहण करो। जो आयुकर्म बाकी है तो भोजनादिककी विधि कर्म मिलाय देगो कर्म बलवान है। वनमैं पहाड़मैं जलमैं नगरमैं अन्तरायका क्षयोपशम प्रमाण सबकूं मिलै है। कोऊका पुण्य तो ऐसा है जो बहुत लोकनिकूं भोजनादिक देय आप भोजन करै है अर कोऊके अं-

तरायका ऐसा उदय है जो अपना उदर हू नाहीं भरै है। कोऊकूं आधा उदर भरनेलायक मिलै है। कोऊकूं एक दिन मिलै एक दिन नाहीं मिलै। कोऊकूं दिनके आंतरै तीन दिनके आंतरै नीरस भोजन मिलै तो हू धर्मात्मा समताकूं नाहीं छांडै। जो पूर्वै तिर्यञ्चनिके भवमैं कदे उदरभर भोजन मिल्या नाहीं तथा क्षुधा तृषाके मारे अनेक बार मरे हैं तातैं अब धैर्य धारण करि जैसैं हमारे धर्म नाहीं छूटै तैसैं यत्न करना जिनका परिणाममैं ऐसा गाढ प्रगट होय तो स्वर्गलोकमैं महर्द्धिक देव होय है। बहुरि कोऊ या कहे जो आप तो गाढ़ पकडि समता राखै परंतु कुटुम्ब जाकी गैलि होय तो कहा करै? तो ऐसे कुटुम्बकूं कहै भो कुटुम्बके जन हो! आपां पूर्व जन्ममैं दान दिया नाहीं व्रत पाल्या नाहीं अभक्ष भक्षण किये अन्यायतैं परका धन ग्रहण किया तिस पापके उदयकरि ऐसे दरिद्री भये जो उदरकूं भोजन अर वस्त्र भी नाहीं सो अपना किया पापका फल है जो अब अन्य पुण्यवाननिके आभरण भोजनादिक देखि क्लेशित होवोगे तो केवल आंगानै हू तिर्यञ्चगतिके घोर दुःखनिका कारण पापकर्म तथा कोटनि भवपर्यन्त दरिद्रादिकके कारण पापबंध करोगे परको सम्पदा आपकै नाहीं आवैगी। क्लेश दुर्ध्यान तृष्णादि कियेतैं दुःख नाहीं मिटैगा अर दुःख बधैगा अर जो अल्प मिल्या मैं सन्तोष करि निर्वाञ्छक होओगे तो वर्तमानमैं तो दुःख ही नाहीं व्यापैगा अर समस्त पापकर्मकी निर्जरा ऐसी होयगी जो घोर तपश्चरणतैं हू नाहीं होय। अर अल्प भोजन वस्त्रादिक मिलै अर परिणाममैं आकुलतारहित समतासूं रहै तो बडा तप है। अर कर्म मुझे थांकै सामिल उपजायो सो अब मैं दैव पुरुषार्थ दोऊनिके अनुकूल द्रव्य उपार्जनमैं उद्यम करूं हूं परन्तु लाभांतरायका क्षयोपशम प्रमाण न्यायमार्गतैं प्राप्त हो जायगा सो तुम्हारे निकट लाऊं हूं। अब यामेसूं हमारे विभागका बांटा होय सो हमकूं द्यो अर तुम्हारा होय सो तुम विभागकरि भोजनादिक करो परन्तु अब हम भगवान का उपदेश्या दुर्लभ धर्म ग्रहण किया है सो अब तुम्हारे वास्तै अनीति कपट घोर पापकरि धन नाहीं ग्रहण करैंगे न्यायनीतितैं जैसैं धर्म नाहीं बिगडै तैसैं उद्यमकरि उपार्जन करैंगे। तुम भी जैसैं हमारा धर्म बिगड़ि जाय तैसैं प्रवर्तन मत करो। अपना अपना पुण्यपापका फल भोगो। आकुलता

छांड़ि जेता मिलै तितनाम सन्तोष धारि सुखतैं रहो ऐसा जाके निश्चय है ताके परिग्रहपरिमाण नाम स्थूल व्रत होय है। और जो कुटुम्बका पोषणके अर्थि पाप क्रियामें प्रवर्तै है असत्य चोरी कपट हिंसा इत्यादिक पापनिमैं प्रवर्तै है तिनके घोरपापका बंध होय पापतैं दुर्गतिका पात्र होय है तातैं अल्प जीतव्यमें व्रत शील संयममैं ही दृढता करो। केतेक लोक कहै हैं जो धन तो पापहीतैं आवै है पाप बिना धन आवै नाहीं त्यागी व्रती हुयां धन कैसैं आवै ? ताकूं कहिये है—ऐसा तो तुम्हारी भ्रांति है जो पाप बिना धन आवै नाहीं ऐसा कहना अयुक्त है। जो पापहीतैं धन आवै तो इस जगतमें लाखां भील चांडाल चोर चुगुल मनुष्यनिकूं मारनेवाले ग्राम दग्ध करनेवाले मार्ग लूटनेवाले समस्त ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र समस्त जाति समस्त कुल पापीनि करि भर्‌या है समस्त पुरुष स्त्री बालकादि हिंसाके करनेकूं असत्य बोलनेकूं चोरी करनेकूं तय्यार हैं परन्तु जो पूर्वजन्ममें कुपात्र दान दिया है कुतपकरि खोटा पुण्य बांध्या है तिनकै कुमार्गतैं धन आवै है पुण्यहीन तो मार्‌या जाय पूर्वपुण्य विना पापतैं ही तो नाहीं आवै है अर जो पुण्यबांध्या ते यहां चोरी चुगुलो कर्‌यां बिना हो सम्पदाकूं प्राप्त होय है। राजाके घर जन्म ले है तातैं कोटधनके धणीनिकै घर जन्म ले है। बहुत कहा कहिये समस्त पुण्यका फल है खोटे पुण्यकी लक्ष्मी भोगि नरक तिर्यञ्चमें जाय डूबै है।

अब परिग्रहपरिमाण व्रतके पंच अतीचार वर्णन करनेकूं सूत्र कहै हैं—

अतिवाहनातिसंग्रहविस्मयलोभातिभारवहनानि। परिमितपरिग्रहस्य च विक्षेपाः पंच लक्ष्यन्ते ॥ ७२ ॥

अर्थ—परिमितपरिग्रह नाम व्रतके ये पंच अतीचार जानिये है जो घोड़ा ऊंट बैल इत्यादिक तिर्यंचनिकूं तथा दासी दास सेवकादिकनिकूं अतिलोभके वशतैं मर्यादारहित अति दूरका मंजल करावै बहुत चलावै सो अतिवाहन नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि अपने गृहमैं प्रयोजनरहित हू बहुत वस्तुनिका संग्रह करै भोजनवस्त्रपात्र इत्यादिक थोरेका प्रयोजन होय अर बहुतका संग्रह करै तथा धान्यादिक अर वस्त्रादिक तथा औषधादिक तथा काष्ट पाषाण धातु इत्यादिकनिका संग्रहमैं बहुत परिणाम रहै सो अतिसंग्रह नामा दूजा अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि अन्यके बहुत संपदा बहुत परिग्रह तथा अनेक देशांतरनिकी वस्तु

वा कदे नाहीं देखे ऐसे वस्तुका देखनेकरि श्रावक आश्चर्य करना सो विस्मय नाम तीजा अतीचार है ॥३॥ बहुरि कोऊ बनिजमैं तथा सेवामैं तथा कलाहुन्नरतैं आपके अन्तरायके क्षयोपशम परिमाण लाभ होय तो हू तृप्त नाहीं होना संतोष नाहीं आवना सो अतिलोभ नामा चौथा अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि तिर्यंचनि ऊपरि लोभके वशतैं अधिक भार लादि चलावना सो अतिभारवाहन नामा पांचमा अतीचार है ॥ ५ ॥ जो गृहस्थ परिग्रह परिमाण करै सो इन पांच अतीचारका हू परित्याग करै। ऐसैं गृहस्थनिके धारण करनेयोग्य पंच अणुव्रत कह करिके अब अणुव्रतनिके फल कहनेकूं सूत्र कहै हैं।

पञ्चाणुव्रतनिधयो निरतिक्रमणाः फलन्ति सुरलोकं। यत्रावधिरष्टगुणा दिव्यशरीरं च लभ्यन्ते ॥ ७२ ॥

अर्थ—अतीचारनिकरि रहित ये पूर्वोक्त पंच अणुव्रतरूप निधि हैं सो देवलोकरूप फलकूं फलै हैं जिस देवलोकमैं अवधिज्ञान अर अणिमा महिमा लघिमा गरिमा प्राप्ति प्राकाम्य ईशित्व वशित्व ये अष्ट महागुण हैं अर धातु उपधातुरहित दिव्यशरीर पाइये है। भावार्थ। अणुव्रतनिके धारण करनेवाला मरकरि स्वर्गलोकमैं महान् अणिमादिक ऋद्धिके धारक देव ही होय अन्य पर्याय नाहीं पावै ऐसा नियम है। स्वर्गमैं धातु उपधातुरहित रोग वृद्धत्वादिकरहित दिव्यशरीरकूं प्राप्त होय असंख्यात वर्षपर्यंत सुखसंपदामैं लीन हुआ तिष्ठै है। अब जे पंच अणुव्रतनिकूं धारण करि इस लोकमैं विख्यात महिमाकूं प्राप्त भये तिनके नाम प्रगट करनेकूं सूत्र कहै हैं।

मातङ्गो धनदेवश्च वारिषेणस्ततः परः। नीली जयश्च संप्राप्ताः पूजातिशयमुत्तमं ॥ ७३॥

अर्थ—अहिंसा नाम अणुव्रतकरि मातंग जो चांडाल अर सत्य अणुव्रतकरि धनदेव नाम वणिकपुत्र अर अचौर्यव्रत करि वारिषेण नाम राजपुत्र अर ब्रह्मचर्यव्रतकरि नीली नाम श्रेष्ठीकी पुत्री अर परिग्रह परिमाणकरि जयकुमार ये व्रतके माहात्म्य करि उत्तम पूजाके अतिशयकूं प्राप्त भये इस ही भवमैं देवनिकरि पूज्य भये। यद्यपि इन व्रतनिके प्रभावतैं अनेक भव्य इस लोकमैं महिमा पाय देवलोकमैं गये तथापि आगमप्रसिद्ध इनकी ही कथा है। अब पंच पापनिके प्रभावतैं जे इस लोकमैं घोर क्लेश पाय दुर्गति गये

तिनका नाम कहनेकूं सूत्र कहै हैं।

धनश्रीसत्यघोषौ च तापसारक्षकावपि। उपाख्येयास्तथा श्मश्रु नवनीतो यथाक्रमम् ॥ ६४ ॥

अर्थ—हिंसा करि तो धनश्री असत्य करि सत्यघोष चोरीकरि तापसी कुशीलकरि कोतवाल परिग्रहकरि श्मश्रु नवनीत ये इस लोकमैं राजानितैं तीव्र दंड पाय दुर्गतिकूं प्राप्त भये इनका यथाक्रम दृष्टांत जानना अब अष्टमूल गुणनिकूं कहै हैं—

मद्यमांसमधुत्यागैः सहाणुव्रतपञ्चकं। अष्टौ मूलगुणानाहुर्गृहिणा श्रमणोत्तमाः ॥ ७५ ॥

अर्थ—श्रमणोत्तम जे गणधर तथा श्रुतकेवली हैं ते गृहस्थके मद्यमांसमधूके त्याग सहित जे पंच अणुव्रत ताहिअष्टमूलगुण कहे हैं। भावार्थ—जीव मारनेके संकलपकरि त्रस जीवनके मारनेका त्याग॥१॥अन्यके अर आपके क्लेश उपजावनेवाला अर सांचा श्रद्धान ज्ञान आचरणका घातकरनेवाला वचनका त्याग ॥ २ ॥ बिना दिया धर्या गड्या पड्या भूल्या परके धनके ग्रहण करनेका त्याग ॥ ३ ॥ अपना कुलके योग्य विवाही स्त्री बिना अन्य समस्त स्त्रीनिमें रागका त्याग ॥ ४ ॥ न्यायकरि उपजाया परिग्रहके मांहि परिमाणकरि अधिक परिग्रहका त्याग ॥ ५ ॥ ये पांच तो अणुव्रत अर जिसतैं परिणाम मोहित होय अर अपना हित अहितकी सावधानी बिगडि जाय सो मद्य है ताका त्याग ॥६॥ अर द्वींद्रियादिक जीवनिके देहतैं उपज्या मांसका त्याग ॥ ७ ॥ अर मक्षिकानिकरि संचय किया मधु छत्तातैं उपज्या मधूका त्याग ॥ ८ ॥ इन अष्टका त्याग सो अष्टमूलगुण हैं। जातैं गृहस्थके पंच पाप अर तीन मकारका त्यागमैं दृढता हो जाय तदि समस्त गुणरूप महलकी नीव लग गई। अनादिकालतैं संसारमें परिभ्रमणका कारण मिथ्यात्व अन्याय अर अभक्ष था तिनका अभाव हुआ तब अनेक गुण ग्रहणका पात्र भया तातैं ये अष्ट त्याग है तैं ही मूलगुण हैं। बहुरि अन्य ग्रंथनिमें पंच उदम्बरफल अर तीन मकारका त्यागतैं अष्टमूलगुण कहै हैं। इहां उदुम्बर ॥ १ ॥ कठूम्बर ॥ २ ॥ पीलू ॥ ३ ॥ पीपलका गोल ॥ ४ ॥ बडका बडवाल्या ॥ ५ ॥ ये पांच उदंबर फल कहिये हैं इनमें बहुत त्रस जीवनिकूं प्रगट देखिये है तातैं इन फलनिका भक्षण मांसके समान है और हू

केतेक फल जिनमैं काल पाय त्रस मरि जाय तिनका भक्षणमैं हू रागभावकी अधिकतातैं महा हिंसा होय है ज्ञाकैं ऐसा परिणाम होय जो याकूं मैं सुकाय खाऊंगा तिसकैं अभक्षमैं तीव्र अनुरागतैं बहुत बंध होय है। मदिरा है सो मनकूं मोहित करै है अचेत करै है अर मन मोहित होय जाय सो धर्मकूं विस्मरण होजाय अर धर्म भूलि जाय सो पुरुष निःशंक हिंसाकूं आचरण करै है ऐसा विशेष जानना जो— मनकूं उन्मत्त करै स्वरूपकी सावधानी भुलाय विषयांमैं आसक्तता उपजावै रसना इन्द्रिय अर उपस्थ इन्द्रियके विषयमैं अतिराग उपजावै सो ही मद्य है यातैं भंग पीवना तथा अमल (अफीम) पोस्त आदिक नशाकी वस्तु तथा इनके संयोगतैं उपजे पाक माजूम इन समस्त मदकारी वस्तुके भक्षण करनेतैं धर्मबुद्धिका नाश होय है अर अभक्ष्य भक्षणमैं रक्त होजाय बुद्धिकी उज्वलता परमार्थका विचार नष्ट होजाय है तातैं जिनेन्द्रकी आज्ञाकूं धारण कर्‌या चाहै तो अवश्य अमलकारी वस्तुका भक्षणका त्याग करै है। बहुरि भांगमैं त्रस जीव बहुत उपजै हैं अर मदिरामैं तो अपरिमाण त्रस जीवनिकी उत्पत्ति है महा दुर्गन्ध है। उत्तमकुलके पुरुष मदिराको धारा दूरतैं हू भोजन करते देख लें तो भोजनका शीघ्र त्याग करैं अर स्पर्शनतैं वस्त्र सहित स्नान करैं। मदिराकरि उन्मत्त होय सो माताकूं पुत्रीकूं स्त्रीरूप आचरण करै है अर अपनी स्त्रीकूं मातापुत्रीरूप आचरण करै है। भय ग्लानि क्रोध काम लोभ हास्य रति अरति शोक ये समस्त दोष हिंसाहीतैं हैं ते समस्त मद्यपायीकै होय हैं तातैं धर्मका अर्थी मद्यपानका दूरहीतैं त्याग करै। बहुरि द्विइंद्रियादिक प्राणीनिके घातकरनेतैं मांस उपजै है अर जाकी आकृति महाघृणा उपजावै है मांसका स्पर्शन अर दुर्गन्ध अर नाम ही परिणाममैं महाग्लानि उपजावै है जे धर्मरहित नरकादिकके जानेवाले महा निर्दय परिणामी होय ते मांस भक्षण करै हैं अर जो स्वयमेव मरे हुए बलध भैंसा अजा मृगादिकनिका मांस है ताके आश्रय अनन्त तो बादर निगोदिया जीव अर असंख्यात त्रसजीव तिनका घात होय है बहुरि कच्चा मांसमैं अर अग्निकरि पक्या मांसमैं अर जिस काल नीचैं अग्नि लाग करि सीझै है तिस काल पकता हुआ मांसमैं हू अनन्त जीव निरन्तर उपजै हैं तैसो ही जातिका समय समय उपजै हैं

तातैं कच्चा मांस पक्या हुआ मांस वा पकता हुआ मांस सूका हुआ मांसकूं जो खाय हैं तथा मांसकी डलीको स्पर्शन करै हैं ते मनुष्य निरन्तर संचय किया ऐसा बहुत जीवनिका घात करै हैं। बहुरि चांडालनिका उच्छिष्ट कषायीनिका म्लेछनिका कूकरानिका उच्छिष्ट तो मांस होय ही है मांस भक्षीनिके दया नाहीं आचार नाहीं जाति कुल धर्म दया क्षमादिक समस्त गुणनिकरि भ्रष्ट हैं। दुर्गतिगामी महापापी महानिर्दयीनिनैं मांस भक्षणकूं शास्त्रनिमैं धर्म कह्या है। मांसकरि देवता तथा पितरनिकूं तृप्त होना कहैं देवतानिकूं मांसभक्षी कहैं श्राद्धनिमैं ब्रह्मणनिकूं मांसपिंड भक्षण कराय देवनिका पितरनिका तृप्त होना कहै हैं सो ये समस्त मिथ्यादर्शनका प्रभाव है। बहुरि मधु समान कोऊ अधम नाहीं मक्षिकानिका वमन भीलचडांलनिका उच्छिष्ट अनन्तजीवनिका स्थान है बहुत मक्षिकानिकूं मारि भील चांडाल ल्यावैं वा स्वयमेव मरै हैं तिनमैं ; असंख्यात त्रसजीवनिकी उत्पत्ति है याकूं पवित्र मानना पंचामृतनिमैं कहना याकूं शुद्ध कहना इस समान विपरीत और नाहीं। सहतका एक कणमात्र हू जो औषधादिकनिकैं अर्थि ग्रहण करै हैं रोगके दूर करनेकूं भक्षण करै हैं सो नरकनिके घोर दुःख भोगि असंख्यात वा अनन्त जन्मनिमैं अनेक रोगनिका पात्र हाय है। मधु मद्य मांस नवनीत (मगवल) ये चार महाविकृति भगवानके परमागममैं कहै हैं जो जिनधर्म ग्रहण करै सो मद्य माखन मांस मधु इन चार विकृतिनका प्रथम ही परित्याग करै। इन चारनिकूं भगवान महाविकृति कही है इनका परिहार विना धर्मका उपदेशका पात्र ही नाहीं होय है। धर्म है सो अहिंसारूप है ऐसैं जिनेंद्रनकी आज्ञा वारंवार श्रवण करते हू जो स्थावरनिको हिंसाकूं छाडनेकूं असमर्थ हैं ते त्रस जीवनिकी हिंसाकूं तो शीघ्र ही छोड़ो। हिंसाका त्याग नव प्रकार करि है मनकरि हिंसा करै नाहीं अन्यकरि हिंसा करावै नाहीं अन्य हिंसा करै ताकूं सराहै नाहीं। ऐसैं ही वचनकरि हिंसा करै नाहीं करावै नाहीं करतेकूं प्रशंसा करै नाहीं। ऐसैं ही कायकरि हिंसा करै नाहीं परकूं हिंसा करनेकूं प्रेरणा करै नाहीं करनेवालेकूं प्रशंसा करै नाहीं। ऐसैं मनवचनकायद्वारै कृतकारितअनुमोदनाकरि हिंसाकूं छाडै है तिसके औत्सर्गिक त्याग कहिये उत्कृष्ट त्याग है। अर नव भंग विना जो त्याग सो अपवादि-

कल्याण कहिये सो अनेक प्रकार है। या अहिंसाधम मोक्षको कारण अर समस्त संसारके परिभ्रमणका दुःखरूप रोगके मेटनेकूं अमृत समान पाय करके अज्ञानी मिथ्यादृष्टिनिका अयोग्य आचरण देखि अपने परिणाममैं आकुल मत हो हू। संसारमैं कर्मके प्रेरे अनेक प्रकारके जीव हैं। केई हिंसक हैं कई अभक्ष्य भक्षण करनेवाले हैं कई क्रोधी लोभी मानी मायावी महाआरंभी महापरिग्रही हैं अन्यामार्गी हैं तिनकी अनीति देखि अपने परिणाम मत बिगाडो कर्मके प्रेरे जीव आपा भूल रहे हैं आप तो साम्यभाव ही ग्रहण करो। कोऊ या कहै भगवानका धर्म सूक्ष्म है धर्मके अर्थि हिंसा होनेमैं दोष नाहीं ऐसैं धर्ममूढ़ होय करिकैं प्राणीनिकी हिंसा नाहीं करिये। बहुरि जो देवके निमित्त गुरुके कार्य करनेके निमित्त करी हुई हिंसा हू शुभ नाहीं है हिंसा तो पाप ही है। धर्म तो दयारूप है जो देवगुरुके कार्य करनेके निमित्त हिंसाका आरम्भ ही धर्म होय तो हिंसारहित धर्म है ऐसा जिनेंद्रका वाक्य असत्य होजाय यातैं हिंसाकूं धर्म कदाचित् श्रद्धान मत करो। कोऊ कहै धर्म तो देवतानितैं होय है, देवतानिके निमित्त समस्त देना योग्य है ऐसी विपरीत बुद्धिकरि प्राणीनिकी हिंसा करना योग्य नाहीं। बहुरि केतेक कहै हैं देवी कहिए कात्यायनी चंडिका भवानी दुर्गा पारवती इत्यादिक नाम करिकैं प्रसिद्ध हैं ताकै बकरा तथा भैंसा मारि चढ़ाइए या भवानी इनतैं ही प्रसन्न है सो मिथ्यादृष्टिनिके वाक्यतैं चलायमान नाहीं होना। एक तो यह विचार करो जो देवी जीवनिका मांसकूं भोगना चाहै है तो आप अनेक भुजानिमैं शस्त्रधारण करि भौंह वक्र करि खडी है आप ही जीवनिकूं मारि करि भक्षण क्यों नाहीं करै है? अपने भक्तनितैं दीन अनाथ जीवनिकूं भयभीतनिकूं क्यौं मरावै है? आप ही सिंह व्याघ्रादिक ज्यों सिंहादिकांनै मारि क्यों नाहीं भक्षण करै है? और आप देवता होय करि हू कागला कूकरा भील चांडालकी ज्यों मांस भक्षणमैं रत है क्षुधातुर है दुःखी है ताकै काहेका देवपना? जो आपही दुःखी आसक्त सो भक्तनिकूं कैसैं सुखी करैगा? महादुर्गंध तिर्यचनिके दुर्गंधमय घृणा देनेवाला मांसका इच्छुक महा पापीनिके देवपना नाहीं होय है। पापीनिनै झूठे शास्त्र बनाय आपके मांस भक्षण करनेकूं अर मूढ़लोकनिकूं देवीनिका प्रसादके संकल्पतैं मांस भक्षणमैं प्रवृत्ति

कराय जगतके जीवनिकूं अपनी इन्द्रियनिके पुष्ट करनेकूं नरकमैं डबोवै है । जिनेंद्रके परमागममैं तो भवनवासी व्यन्तर ज्योतषी कल्पवासी चार प्रकारके देवनिकै कवलाहार नाहीं है मानसीक आहार कह्या है। कोऊ कालमैं इच्छा उपजते प्रमाण अपने कंठहीमैं अमृत झरै है तिसकरि लेशमात्र क्षुधावेदना रहै नाहीं। तिनकै दिव्य वैक्रियिक देह सातधातु उपधातुरहित महादिव्यरूप सुगंध शरीर है । देवनिके मांस भक्षण कहना महाविपरीतबुद्धि है । जो देवता मांसभक्षी है तो कागला कूकरा गीध स्यालतैं हू देवता नीच ठहरया तातैं देवनाके अर्थि हिंसा करना योग्य नाहीं अर कोऊ मांसभक्षी गुरुके अर्थि मांसका दान मत करो। जो पापी मांसादिक अभक्ष्य भक्षण करै मदिरा पीवै वह पापी काहेका गुरु ? वो तो मांसादिक भक्षण कराय नरक पोहचावनेका गुरु है । ताके स्पर्शने देखनेतैं घोर पापका बंध होय है । बहुरि कोऊ कहै अन्नादिकके भक्षणमैं तो बहुत जीवनिका घात है तातैं एक जीवकूं मारि भक्षण करना श्रेष्ठ है ऐसा विचार करि बड़ा प्राणीकूं मारि खावना योग्य नाहीं जातैं एकेंद्रिय प्रत्येक वनस्पती पृथ्वी जल अग्नि पवन समस्त त्रैलोकमैं भरे हुए अर समस्त विकलत्रय अर समस्त देव मनुष्य तिर्यंच इन समस्तनिकूं इकट्ठा करि गिणिए तो समस्त असंख्यात परिमाण हैं अर मनुष्य तिर्यंचनिके मांसका एक कणामैं एते वादर निगोदिया जीव हैं जो त्रैलोक्यके एकेंद्री वेंद्री तेइन्द्री चतुरिंद्रिय पंचेंद्रिय समस्त मनुष्य तिर्यंच देव नारकानितैं अनंतगुणा भगवान सर्वज्ञ देखि परमागममैं कह्या है तातैं अन्न जलादिक असंख्यात वरस भक्षण करै तिसमैं जो एकेंद्रीकी हिंसा होय तातैं अनंतगुणे जीवनिकी हिंसा सूईकी अणीमात्र मांसके भक्षण करनेमैं है। बहुरि एकेंद्रीकी हिंसा अर त्रसहिंसा बराबर नाहीं है दुःखमैं हू बड़ा अंतर है ज्ञानमैं बड़ा अंतर है एकेंद्रीका शरीर रस रुधिर हाड मांस चामादिक धातुकरि रहित है अर मांसभक्षणमैं तीव्र परिणाम तीव्र निर्दयपना है तैसा अन्नके भक्षणमैं नाहीं है । जैसैं अपनी स्त्रीकूं स्पर्श करनेमैं अर अपनी पुत्रीके माताके स्पर्श करनेमैं परिणाम कैसैं समान होय बड़ा अन्तर है तातैं बहुत कहनेकरि कहा त्रसजीवका घात करना घोर पाप जानना । बहुरि एसी आशंका हू मत करो जो यह सिंह व्याघ्र सर्पादिक बहुत प्राणीनिका घातक हैं

इनकूं मारे बहुत जीवनिकी रक्षा होयगी ऐसी मिथ्याबुद्धिकरि हिंसक जीवनिकी हिंसा हू मत करो। जातैं कौन कौन हिंसककूं मारोगे? चिडी कागला सूवा मैना तीतर इत्यादिक समस्त पक्षी हिंसक हैं तथा कीडा कीडी लट मकडी माखी सर्प बीछू इत्यादिक तथा ऊंदरा कूतरा बिलाव स्याल सिंह अनेक तीर्यंच मनुष्यादिक समस्त जीव पापकर्मके संतापतैं हिंसक ही हैं। तुम कौन कौनकी हिंसा करोगे? और तुम्हारे हिंसक जीवनिके मारनेका विचार भया तब तुम समस्त हिंसकनिके घात करनेवाले महाहिंसक भये। तुमारे समान पापी कौन रह्या तातैं हिंसक जीवनिकी हिंसाके परिणाम कदाचित् मत करो। हिंसक कौननैं किया? पूर्वं उपजाये अपने कर्मके आधीन समस्त जीव उपजे हैं पापका संतान अनंतकालतैं चल्या आया है कौन दूर करि सकै। पाप जीव कौननैं किया पुण्यवान कौननैं किया? समस्त कर्मकी विचित्रता है। कालके प्रभावतैं पापी जीवनिको पापके फल देनेकूं अनेक पापी जीव उपजै हैं कौन दूरि करनेकूं समर्थ है तातैं दयावान होय समस्त जीवनिकी करुणा ही करो। बहुरि ऐसा विचार हू मत करो जो यो बहुत जीवैगा तो पापका बंध करैगा जो इस पापरूप पर्यायतैं छूटि जाय तो याकै बहुत पापका बंध नाहीं होय ऐसी करुणा करकैं हू पापी जीवनिकूं मत मारो जातैं तुम तो समस्तको दया ही करो। बहुरि ये जीव बहुत दुःख करि पीड़ित है जो मरण करि जाय तो शीघ्र ही दुःखसों छूटि जाय सो ऐसा मिथ्या विचार हू मत करो जातैं मरण करि जो जायगा तो वर्त्तमानकी पर्याय ही छूटैगी असाताकर्म नाहीं छूटैगा जो यहांतैं छूटि अन्य पर्याय तिर्यञ्च नरक मनुष्यादिक पावैगा तहां बहुतगुणा रोग दरिद्र प्राप्त होयगा बहुतकाल दुःख भोगैगा बहुत कहने करि कहा है जो कदाचित् सूर्यका उदय पश्चिम दिशामैं होजाय अर अग्नि शीतल हो जाय चंद्रमाकी किरण उष्ण होजाय अर सूर्यका आताप शीतल होजाय और समस्त पृथ्वी जगतके ऊपरि होजाय अर पाषाणमय भारी गोला जलतैं तिर जाय अर अग्निमैं कमल उपजि जाय अर सूर्यकूं अस्त होतैं दिनका प्रारंभ होजाय सर्पका मुखमैं अमृत होजाय कलहतैं यश होजाय अजीर्णतैं रोग नष्ट होजाय कालकूट जहरके भक्षणतैं जीवना बधि जाय विवादतैं प्रीति बधि जाय तो हू हिंसातैं तो धर्म नाहीं उपजैगा

जगतमैं एते नाहीं होने योग्य कार्य होजांय तो हो हू परंतु हिंसाके परिणामतैं तो कोऊ देश कोऊ कालमैं धर्म नाहीं हुआ नाहीं होय है अर नाहीं होयगा। अब यहां कोऊ आशंका करै जो गृहस्थ जिनमंदिर करावै है उपकरण करावै है जिनपूजा करै है इनमें हू आरंभ ही है अर आरंभ है तहां हिंसा होय ही तातैं जिनमन्दिरादिक बनावनेमैं धर्म कैसैं संभवै है ? ताकूं उत्तर कहिये है जो गृहस्थ आरंभादिकका त्यागी है अर जाका परिणाम वीतरागतारूप होय धनका उपार्जनादिकसूं विरक्त होयगा ताकूं मन्दिरादिक बनावना योग्य नाहीं अर जाका राग धन परिग्रहसूं आरंभसूं घट्या नाहीं अभिमान घट्या नाहीं अपनी जाति कुलादिकमैं ऊंचे होनेके अर्थि अभिमानतैं विख्याततताके अर्थि अपने भोगनिके अर्थि हवेली महल चित्रशालादिक बनावै है बाग बनावै है अनेक अपने विहार करनेके स्थान बनावै है संतानादिकके विवाहादिकमैं बहुत धन लगावै है जाति कुल नगर निवासीनिकूं जिमावै है तिनकूं कोऊ धर्मात्मा शिक्षा करै है जो तुम्हारा राग आरंभादिकतैं नाहीं घट्या तो ये केवल पापबंधके कारण अभिमानादिक पुष्टकरनेवाले पापके आरंभनिकूं त्याग करि जिनमंदिर बनावनेका आरंभ करो। जिसके प्रभावतैं तुम्हारा अशुभ राग घटि जाय अर आगेकूं तुम्हारे परिणाम वीतरागके सम्मुख होजायँ अर अहिंसाधर्मका प्रवर्तन बधि ।य अनेक जीव स्वाध्याय करि शास्त्रश्रवणकरि वीतरागका दर्शन भावना पापाचारका रोकना शील संयम ज्ञानकी वृद्धि करना इत्यादिक उत्तम कार्य करि धर्मकी वृद्धि करै। जिनमंदिर हैं सो अहिंसाधर्मका आयतन है जिनमंदिरका निमित्तसूं अनेक जीव पापाचार छांड़ि जिनमंदिरमैं आवै तदि जिनधर्मके शास्त्रश्रवण करै तदि अपना अर परद्रव्यनिका भेदविज्ञान उपजै तदि मिथ्यादेव मिथ्यागुरु मिथ्याधर्मकी उपसना छांड़ि सर्वज्ञ वीतरागके धर्ममैं प्रवर्तन करै तदि हिंसादिक पापनितैं सप्तव्यसनतैं अन्यायतैं अभक्ष्यतैं विरक्त होय वीतरागके ध्यानमैं पूजनमैं कायोत्सर्गमैं सामायिकमैं संयममैं उपवास शील संयम दान व्रत प्रभावनामैं लीन होय मोक्षमार्गमैं प्रवर्तन करै तातैं ऐसा निश्चय जान हू जिनमंदिरका निमित्त विना मोक्षमार्ग नाहीं प्रवर्तै तातैं जा पुरुषनै जिनमंदिर कराया सो बहुत जीवनिका उपकार किया। बहुरि आपका हू बड़ा उपकार है आप कराव-

नेवालेका परिणाम सुलटे मार्गमैं लगि जाय है जो म जिनेन्द्र वीतरागका मन्दिर कराया है अब जो मैं अन्यायमार्ग चलूंगा तो जगतमें निन्द्य हो जाऊंगा। मैं अभक्ष्य भक्षण कैसैं करूं झूठ कैसैं बोलूं व्यसनिमैं प्रवृत्ति कैसैं करूं कलह करना गाली देना लोकनिंद्यकर्म करना ये अयोग्य दुराचार तो लोकलाजतैं ही अति दूर जाता रहै है अर परिणाम ऐसा हो जाय जो मंदिरमैं मैं मंदिर करानेवाला ही प्रवर्तन नाहीं करूंगा तो और कौन प्रवर्तैगा ऐसा विचार करि अभिषेकमैं जिनपूजनमैं शास्त्रश्रवणमैं जापमैं व्रतमैं जागरण भजनमैं प्रवर्तन लगि जाय तदि आपके धर्ममैं अतिप्रीति वधि जाय शास्त्रके वाचनेवालेनितैं शास्त्रश्रवण करनेवालेनितैं धर्ममैं प्रीति करनेवाले साधर्मीनिसूं सिद्धांतकी चर्चा कथनी करनेवालेनिमैं अनुराग बधता चलया जाय पढ़नेवालेनिसूं अतिहर्ष बधै। बहुरि आज मंदिरमैं पूजन कौन कौन किया दर्शनमैं कौन कौन आवै है यहां व्याख्यानमैं कौन कौन बैठे हैं आज उपवासवाले केतेक हैं अबकैं बेला तेला कौन कौन किया प्रोषधोपवासवाले केतेक हैं जागरणमैं केतेक लोग लुगाई प्रवर्तै हैं भजन गान बहुत सुन्दर भये ऐसैं धर्मकी प्रवृत्ति देखि बहुत आनन्द बधै समस्त साधर्मीनिमैं वात्सल्यता दिन दिन बधै अर हजारां लोग लुगाईनिमैं प्रभाव जैसैं जैसैं प्रगट होय तैसैं तैसैं धर्मानुराग बधता चलया जाय। बहुरि गृहचारका नुकता व्योहार विवाह करना वस्त्र वनावना आभरणवनावना अपने रहनेका जायगामैं मकान वनावना चित्राम करावना सुवर्ण लगावना इत्यादि रागके बधावनेवाले पाप कार्यनिमैं तो प्रीति घटि जाय है जो इनकरि कहा प्रयोजन है कौनकूं दिखवना है पापका कारण है निंद्य है ऐसा विराग आजाय है लज्जा आजाय जो पाप कार्यकूं कहा दिखाऊं? जो एता धन मन्दिरमैं लगाऊं तो बहुत जीवनिकै बहुत कालपर्यंत धर्ममैं अनुराग बधै ऐसा विचार जो धन लगावै सो मन्दिरके उपकरणनिमैं सिंहासन छत्र चामर भामंडल घण्टा ठोणा कलश तथा थाल रकाबी झारी धूपदहनादिक समवशरणादि अनेक उपकरण सुवर्ण रूपाके कांसीके पीतलके उपकरणनिमैं धन लगाय आपके धर्मात्माजननिकै धर्ममैं अनुराग बधावै तथा गदेला चांदनी पडदा सायवान इत्यादिकनिकरि साधर्मी धर्म-

सेवन करनेवालेनिका बड़ा वैयावृत्य होय है तथा विवाहादिकमैं लगाया धनतैं ऐसी कीर्ति उच्चपना प्रकट नाहीं होय जैसा मन्दिर करानेवालेका बहुत कालपर्यन्त कीर्ति यश प्रकट हो जाय अपने देशके समस्त लोक पूजन प्रभावना दर्शन धर्मश्रवण करि महान पुण्य उपार्जन करै हैं। यहां कोऊ कहै मन्दिर करावना उपकरण कराय जिनमन्दिरमैं मेलना अपना अर अन्यका उपकार तो करै हैं परन्तु मन्दिर करावनेमैं छह कायके जीवनिकी हिंसा तो धर्मके घात करनेवाली होय ही। ऐसैं कहनेवालेकूं उत्तर करिए है-यामैं हिंसा नाहीं होय है हिंसा तो अपना जीवघात करनेकी परिणाम होयगा तदि होयगी। मन्दिर करानेवालेके हिंसा करनेका परिणाम नाहीं है अहिंसाधर्ममैं प्रवृत्ति करनेका परिणाम है जैसैं मुनीश्वरनिकूं यत्नाचारतैं आहार देता गृहस्थके हिंसा नाहीं तथा जैसैं साधुनिकी बंदनाके अर्थि वा धर्मश्रवणके अर्थि गमन करता गृहस्थके हिंसा नाहीं होय है तथा जैसैं नित्य विहार करता ईर्यापथ सोधि गमन करता मुनीश्वरनिके हिंसा नाहीं है तथा मुनीश्वर नित्य उपदेश करै हैं गमन करै हैं शयन करै हैं उठै हैं बैठै हैं आहार करै हैं निहार करै हैं वन्दना करै हैं कायोत्सर्ग करै हैं तीर्थ वन्दनागुरुवन्दनाकूं जाय हैं तिन कार्यनिमैं हिंसक परिणामविना जीवकी विराधना होते हू हिंसा नाहीं है जीवनि करि तो समस्त धरती आकाश समस्त वस्तु भया है परन्तु कषायके वशि होय दयाभाव रहित होय प्रवर्तन करैगा तिसकै जीव मरो वा मत हिंसा ही है। जातैं अपना परिणाममैं दया नाहीं। हिंसा भाव अर अहिंसाभाव तो जीवके परिणाम है बाह्यमैं जीवका घात अघातके आधीन नाहीं सो पूर्वैं बहुत वर्णन किया है। अब यहां मन्दिर बनावनेवालेका परिणाम विचारो जाकूं हवेली बनावनेमैं बाग बनावनेमैं कूआ बावड़ी बनावनेमैं महाहिंसा दीखै है अर जिसकै लाभ घट्या है धनसूं ममता टूटी है पापतैं भयभीत भया है सो मन्दिर करावै है। पहिले गृहस्थकै व्यापारनिमैं तो प्रवर्तनि करै था तदि दयाधर्मकूं याद हू नाहीं करै था अब सब काममैं धर्महोसूं परिणाम जोड़ै है जो यत्नसूं करो यो मन्दिरको काम है जल दोहरा नातणासूं छान २ लगावै है। कली चूना तगार दो दिन ाय नाहीं राखै दो दिनमैं उठावनेमैं यत्न करै है अर उठावना मेलना धरना इनमैं अपना परिणाम तो

यही राखै है जो यत्नसूं करो विरधनाकूं टालो। इत्यादिक कार्यनिमैं हिंसाका परिणाम तो नाहीं करै है अपना परिणाम तो धर्मके आयतन बनावनेका है जो धर्मका स्थान बनि जायगा तो यामें अखण्ड अहिंसा धर्म प्रवर्तेगा अर यो मन्दिर है सो महान धर्मको आयतन है गृहसंबधी बहुत हिंसा आरम्भ घटाय परिणामनिमैं दयारूप प्रवर्तनमैं यत्न किया है मन्दिरमैं पग धरतां प्रमाण ईर्यापथ सोधि चालो यो मन्दिर है मत विराधना हो जाओ। मन्दिरमैं प्रवेश किये पीछैं जैनीनिकै इतने त्याग तो बिना करै ही है—भोजनका त्याग जलपानका त्याग विकथाका त्याग गालीका त्याग शयनका त्याग पवनलेनेका त्याग वनज करनेका त्याग इत्यादिक पापबंधके कारण समस्त दुराचारका त्याग होय है तातैं जिनमन्दिर तो समस्त प्रकार अहिंसा धर्महीका प्रवर्तक जानना जामैं आरम्भ विषय कषायनिका त्याग करनेकी ही महिमा है। ऐसै मांसादिका त्यागरूप मूलगुण कहि अब तीन प्रकार गुणव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

दिग्व्रतमनर्थदण्डव्रतं च भोगोपभोगपरिमाणं। अनुबृंहणाद्गुणानामाख्यान्ति गुणव्रतान्यार्याः ॥ ७६ ॥

अर्थ—आर्य जे भगवान गणधरदेव हैं ते दिग्व्रत अनर्थदण्डव्रत भोगोपभोगपरिमाण ये तीन व्रत हैं ते तीन अणुव्रतनिकूं गुणकाररूप बधावनेतैं गुणव्रत कहै हैं। दश दिशानिमें गमन करनेकी मर्यादा करना सो दिग्व्रत है ॥ १ ॥ अर जिनके कुछ कार्य तो सधै नाहीं अर जिनतैं सासतो पाप होय विना प्रयोजन दण्ड भुगतना पड़ै सो अनर्थदण्ड है, अनर्थदण्डनिको त्याग सो अनर्थदण्डविरति नामका गुणव्रत है ॥ २ ॥ अर एकबार भोगनेमैं आवै सो भोग अर बारम्बार भोगनेमें आवै सो उपभोग कहिये है, भोग उपभोगनिका परिमाण करना सो भोगोपभोगपरिमाणव्रत है ॥ ३ ॥ अब दिग्व्रत नाम गुणव्रतका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

दिग्वलयं परिगणितं कृत्वातोऽहं वहिर्न यास्यामि। इति संकल्पो दिग्व्रतमामृत्यणुपापविनिवृत्त्यै ॥ ७७ ॥

अर्थ—दश दिशानिका समूहमैं परिमाण करिकै अर परिमाण करी तातैं बाहरमैं नाहीं गमन करूंगा अणुमात्र हू पापतैं निवृत्तिके अर्थि इस प्रकार मरणपर्यन्त संकलप करना सो दिग्व्रत नाम गुणव्रत है। भा-

वार्थ—गृहस्थ है सो अपना प्रयोजन जानै जो हमारे इस दिशामैं एता क्षेत्रतैं अधिक बनज व्यौहारका प्रयोजन नाहीं तथा इस दिशामैं एता क्षेत्र सिवाय मोकूं व्यौहार नाहीं करना लोभनाशके अर्थि अहिंसाधर्मकी वृद्धिके अर्थि ऐसा विचारि करि मरणपर्यन्त दश दिशानिमैं मर्यादा करि बाहर जावनेका कोऊको बुलावनेका भेजनेका वस्तु मंगावनेका त्याग करि लोभकूं जीतना सो दिग्व्रत नाम गुणव्रत है। अब दश दिशानिकी मर्यादा कौन परिमाणतैं करिये यातैं सूत्र कहै हैं—

मकराकरसरिदटवीगिरिजनपदयोजनानि मर्यादाः। प्राहुर्दिशां दशानां प्रतिसंहारे प्रसिद्धानि ॥७८॥

अर्थ—दश दिशानिकी मर्यादारूप संकोचविषै प्रसिद्ध विख्यात मर्यादा परमागमविषै समुद्र नदी पर्वत वन देश योजन कहै हैं। मरणपर्यन्त मर्यादाबाह्यक्षेत्रमैं गमनागमनादि नाहीं करै समुद्रादिक लोक विख्यात चिह्नतैं मर्यादा करै। अब दश दिशाकी मर्यादा धारण करनेवालेकै कहा होय सो कहै हैं।

अवधेर्बहिरणुपापं प्रतिविरतेर्दिग्व्रतानि धारयताम्। पञ्चमहाव्रतपरिणतिमणुव्रतानि प्रपद्यन्ते ॥७९॥

अर्थ—दिग्व्रतनिनै धारण करते गृहस्थनिकै मर्यादा बाहर अणुमात्र हू पापप्रवृत्तिकी विरक्ततातैं अणुव्रत हैं ते ही पंच महाव्रतनिकी परणतिकूं प्राप्त होय हैं। भावार्थ—जो गृहस्थ दश दिशानिकी मर्यादा करिकै रहै हैं ताकै मर्यादामांहि तो अणुव्रत रह्या अर मर्यादाबाहर समस्त त्रसस्थावरनिकी हिंसादिक पंच पापनिके त्यागतैं अणुव्रत ही महाव्रतपनाकी परणतिकूं प्राप्त होय हैं। अब या कहै हैं जो सम्वर कियो तितना क्षेत्र बाहर अणुव्रत हैं ते महाव्रतका परणतिकूं प्राप्त होना ही कैसैं कहो हो? मर्यादा बाहर साक्षात् महाव्रती कहो, ताकूं उत्तर करनेरूप सूत्र कहै हैं—

प्रत्याख्यानतनुत्वान्मन्दतराश्चरणमोहपरिणामाः। सत्त्वेन दुरवधारा महाव्रताय प्रकल्प्यन्ते ॥८०॥

अर्थ—अणुव्रती गृहस्थकै सकलसंयमका विरोधी जो प्रत्याख्यानावरणका उदयका मंदपनातैं मंदतर चारित्र मोहका परिणाम सत्त्वेन दुरवधारा कहिये अस्तिपनाकरि महा कष्ट करिकै हू धारण नाहीं किया जाय तातैं महाव्रतके अर्थि कल्पना करिये है। भावार्थ-जाकै चारित्रमोहकर्मकै मंदउदयका परिणाम संज्व-

लनकषाय रूप होय ताकै तिसकालमैं महाव्रत होय है अर गृहस्थ देशव्रतीकै प्रत्याख्यानावरणका उदय विद्यमान है तातैं संज्वलन कषायका मंदउदयरूप परिणाम कष्टतैं हू होना दुर्लभ है तातैं समस्त पापनिका त्याग होते हू महाव्रत नाहीं होय है। महाव्रतकी कल्पना ही करिये है। महाव्रत तो प्रत्याख्यानावरण कषायका उदयका अभावतैं होय हैं। अब महाव्रत कैसैं होय सो कहै हैं—

पञ्चानां पापानां हिंसादीनां मनोवचःकायैः। कृतकारितानुमोदैस्त्यागस्तु महाव्रतं महतां ॥८१॥

अर्थ--हिंसादि पंच पापनिका मनवचनकायकरि कृतकारित अनुमोदनाकरि त्याग सो महंत पुरुषनिके महाव्रत होय हैं। अब दिग्व्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

ऊर्ध्वाधस्तात्तिर्यग्व्यतिपाताः क्षेत्रवृद्धिरवधीनां। विस्मरणं दिग्विरतेरत्याशाः पञ्च मन्यन्ते ॥८२॥

अर्थ—दिशानिकी मर्यादा करी तिनमैं अज्ञानतैं वा प्रमादतैं पर्वतादिक ऊपरि चढ़ावना सो उर्द्ध्वातिपात अतीचार है। कूप बावड़ी इत्यादिकनिमैं नीचैं उतरवो सो अधःअतिक्रम है। तिर्यक् गुफादिकनिमैं प्रवेश करना सो तिर्यग्व्यतिक्रम है। बहुरि क्षेत्र बधाय लेना सो क्षेत्रवृद्धि अतीचार है। त्याग किया तिसका विस्मरण हो जाना सो विस्मरण नाम अतीचार है। ये दिग्व्रतके पञ्च अतीचार हैं। अब अनर्थदण्डत्यागव्रत कहनेकूं अष्ट सूत्र कहै हैं-

अभ्यन्तरं दिगवधेरपार्थकेभ्यः सपापयोगेभ्यः। विरमणमनर्थदण्डव्रतं विदुर्व्रतधराग्रण्यः ॥८३॥

अर्थ—आप जो दिशानिकी मर्यादा करी ताके मांहि वृथा जे मनबचनकायके योगनिकी प्रवृत्ति तिनतैं बिरक्त होना ताहि व्रतधरनिमैं अग्रणी जे भगवान ते अनर्थदंडवृत कहै हैं। भावार्थ-मर्यादा करि लीनी तहां हू ऐसा कर्म करै जातैं अपना प्रयोजन हू नाहीं सधै अर वृथा पापका बंध होय दण्ड भुगतना पड़ै सो अनर्थदण्ड है सो अनर्थदण्ड त्यागने योग्य है जातैं जिसके करनेतैं अपना विषयभोग हू नाहीं सधै कुछ लाभ हू नाहीं होय यश हू नाहीं होय धर्म हू नाहीं होय अर पापका बंध निरंतर होय जाका फल कडवा दुर्गतनिमैं भोगना पड़ै सो अनर्थदण्ड त्यागने ही योग्य है। अब अनर्थदण्ड पांच प्रकार है तिनकूं कहै हैं-

पापोपदेशहिंसादानापध्यानदुःश्रुतीः पंच । प्राहुः प्रमादचर्यामनर्थदण्डानदण्डधराः ॥७५॥

अर्थ—पापका उपदेश हिंसादान अपध्यान दुःश्रुति प्रमादचर्या ए पंच अनर्थदण्ड हैं तिनैं अदंडधर जे गणधरदेव हैं ते कहे हैं। भावार्थ-अशुभ मन वचन कायके योग तिनकूं दंड कहिये है, जातैं समस्त जीवनिकूं अपने अपने अशुभ मनवचनकायके योग ही दुर्गतिनिमैं नानाप्रकार दंड दे हैं तातैं अशुभ मनवचनकायकूं दण्ड कहिये, ताकूं अदण्डधर जे अशुभ योगनिकूं नाहीं धारैं ऐसैं गणधरदेव हैं ते पांच प्रकार अनर्थदंड कह्या है। पापका उपदेश देना सो पापोपदेश ॥१॥ हिंसाके उपकरणनिका दान सो हिंसादान ॥ २ ॥ खोटा ध्यान सो अपध्यान ॥ ३ ॥ खोटा श्रवण करना सो दुःश्रुति ॥ ४ ॥ प्रमादरूप चर्या करना सो प्रमादचर्या ॥ ५ ॥ ऐसे पंच प्रकार अनर्थदंड हैं। पापोपदेश नाम अनर्थदंड कहनेकूं सूत्र कहे हैं-

तिर्य्यक्क्लेशवणिज्याहिंसारम्भप्रलम्भनादीनाम् । प्रसवः कथाप्रसंगः स्मर्तव्यः पाप उपदेशः ॥८५॥

अर्थ-जे तिर्यचनिके क्लेश उपजनेकी तथा बनज कहिये वेचनेकी खरीदनेकी अर हिंसाकी अर आरंभकी अर प्रलंभ कहिये कपट ठगपनाकी इत्यादिक पाप उपजनेकी कथामैं वारंवार प्रवृत्तिरूप उपदेश करनेतैं पापोपदेश नामा अनर्थदण्ड है। भावार्थ—तिर्यंचनिकूं मारनेका डाहनेका दृढ़ वांधनेका मर्मस्थानमैं पीड़ा करनेका बहुत बोझ लादनेका बाधी करनेका नाशिका फोड़नेका तिर्यंचनिको पकड़नेका पिंजरेनिमैं रोकनेका जो उपदेश सो तिर्यक्क्लेश नाम पापोपदेश है, तथा अनेक वस्तुनिमैं पाप उपजानेवाला बनजका उपदेश तथा जिनतैं छहकायके जीवनिकी हिंसा होय ऐसा उपदेश सो हिंसोपदेश है, अर बाग वनावना जायगा वनावना विवाह करना इत्यादि पापके आरंभका उपदेश सो आरंभोपदेश, अर कपट छल करनेका उपदेश सो प्रलंभनोपदेश है, अनेक प्रकार पापरूप उपदेशकी कथा करना पापमैं प्रेरणा करना, सो पापोपदेश नाम अनर्थदंड है। अब हिंसादान नामा दूजा अनर्थदंड कहनेकूं सूत्र कहे हैं—

परशुकृपाणखनित्रज्वलनायुधशृङ्गिशृङ्खलादीनां वधहेतूना दानं हिंसादानं ब्रुवन्ति बुधा. ॥८६॥

अर्थ—हिंसाका कारण जे फरसी खडग कुदाल अग्नि आयुध विष वेड़ी सांकल इत्यादिकनिका दान ताहि ज्ञानी हैं ते हिंसादान नाम अनर्थदंड कहै हैं। जिनतैं हिंसा ही उपजैं ऐसा वस्तुका अन्यकूं देना फावडा कुदाल खुरपा कुशि हथोड़ा तरवार छूरी कटारी तमंचा भाला बाण धनुष बदूंक तोप दारू गोला गोली चाबुक दांतला दतीला बेड़ी सांकल जहर अग्नि इत्यादिक वस्तुकूं दान करना मांगी देना वेचना भाडै देना सो समस्त हिंसादान नाम अनर्थदंड है। अब अपध्यान नामा अनर्थदंडकूं कहै हैं—

वधबन्धच्छेदादेर्द्वेषाद्रागाच्च परकलत्रादे। आध्यानमपध्यानं शासति जिनशासने विशदाः ॥८७॥

अर्थ—जो वैरतैं वा अपने विषय साधनेके रागतैं परकी स्त्री पुत्रादिकनिका वंधन मारण वा छेदनादिकका चिन्तवन ताहि जिनशासनविषैं प्रवीण हैं ते अपध्यान नामा अनर्थदंड कहै हैं। भावार्थ—जाकै रागद्वेषतैं ऐसा परिणाममैं चिंतवन रहै जो याका पुत्र मर जाय याकी स्त्री मर जाय याकै दंड होजाय याका हस्त नाक कर्ण छेद्या जाय याका धन लुट जाय याकी आजीविका नष्ट होजाय याकी इन्द्रियां नष्ट होजायं याका लोकमैं अपवाद होजाय यो स्थानभ्रष्ट होजाय बुद्धिभ्रष्ट होजाय ऐसा चिंतवन वारंवार करै ऐसैं अन्यके दुःख आपदा चाहना अपने कुछ लाभादिक होय नाहीं आपका चिंतवनतैं कुछ होय नाहीं अपने वृथा महापापका वंध होय अन्यका बुरा भला आपका पापपुण्यके अनुकूल होय है वृथा दुर्ध्यान करै ताकै अपध्यान नामा अनर्थदंड कहिये है। अब दुःश्रुति नामा अनर्थदंड कहनेकूं सूत्र कहै हैं।

आरम्भसंगसाहसमिथ्यात्वद्वेषरागमदमदनै। चेतः कलुषयतां श्रुतिरवधीनां दुःश्रुतिर्भवति ॥८८॥

अर्थ—आरम्भ कहिए असि मसि कृषि विद्या वाणिज्य शिल्प अर संग कहिए धन धान्यादिक परिग्रह अर साहस कहिए आश्चर्यकारी वीरकर्मादिक अर मिथ्यात्व कहिए ब्रह्माद्वैत ज्ञानाद्वैत क्षणिक याज्ञकादिक विरुद्ध अर्थका प्रतिपादक शास्त्र अरु राग कहिये आसक्तता द्वेष कहिये वैर अष्ट मद अर कामवेदनाकृत विकार इनकरि चित्तकूं कलुषित करनेवाले ऐसे अवधि जे शास्त्र तिनको जो श्रवण सो दुःश्रु

ति नामा अनर्थदंड है। भावार्थ—जो मिथ्यात्व राग द्वेषका उपजानेवाला पदार्थनिका विपर्यय स्वरूप ग्रहण करावनेवाला शास्त्रका विकथाका शृंगार वीर हास्यका प्ररूपक तथा मारण उच्चाटन वशीकरण कामका उत्पादक शास्त्रनिका श्रवण करना तथा जांगलिक सर्पनिका भूतनिका रसकर्म इन्द्रजाल रसायण मायाचारादिके प्ररूपक यज्ञादिक हिंसाके प्ररूपक दुष्टशास्त्र दुष्टकथा दुष्टराग दुष्ट चेष्टा दुष्टक्रिया दुष्टकर्मनिका श्रवण करना सो दुःश्रुति नामा अनर्थदण्ड है। अब प्रमादचर्या नामा अनर्थदण्डकूं कहै हैं।

क्षितिसलिलदहनपवनारम्भं विफलं वनस्पतिच्छेदं। सरणं सारणमपि च प्रमादचर्यां प्रभाषन्ते ॥८०॥

अर्थ—पृथ्वी खोदनेका पाषाणादिक फोडनेका आरम्भ, जलपटकनेका सींचनेका छिडकनेका जल विलोवनेका अवगाह करनेका आरम्भ, विना प्रयोजन अग्नि वधावनेका बालनेका बुझावनेका दावनेका आरम्भ, पवन धालनेका पवनके यंत्र रोकनेका अग्निमें धमनेका वृथा आरम्भ, तथा प्रयोजन विना वनस्पतिका छेदना तथा विना प्रयोजन गमन करना विना प्रयोजन गमन करावना ते समस्त प्रमादचर्या नामा अनर्थदंड कह्या है। यहां ऐसा विशेष जानना, गृहस्थकै गृहाचारामैं अनेक पापहीके आचरण हैं जो गृहाचाराके पापतैं निराला नाहीं हुआ जाय तो जिनसूं कुछ प्रयोजन तुम्हारा सिद्ध नाहीं होय ऐसैं विना प्रयोजन पापबंधका कारण जिनका फल दुर्गतिनिमैं असंख्यातकाल अनंतकाल दुःख भोगो ऐसे निंद्यकर्म तो छोड़ो जो उत्तम कुलमैं जिनेंद्रको उपदेश उत्तमधर्म अतिदुर्लभ पायो है तो विना प्रयोजनके पाप बंधतैं भयभीत होना योग्य है पशुका ज्यों जन्म वृथा मन व्यतीत करो आपका घरका पापतैं नाहीं छूटया जाय तो अन्यकूं ऐसा पापका उपदेश मत करो गृह जायगा वणावनेमैं महा हिंसा होय है, यातैं गृह बनावनेका जायगा धवल करावनेका जायगाको मरम्मत करावनेका बागबगीचा बनावनेका रोडीखुदावनेका गली खुदावनेका कुआ बावडी बनावनेका तालाव खुदावनेका जल निकासनेका तालावकी पाल वन्धावनेका तालावको पाल फुडावनेका नदीकी पाल वन्धावनेका वना हुआ मकान गृह डहावनेका बागबगीचा डहावनेका वृक्ष कटावनेका बनकटी करावनेका कोयला बनावनेका घास

खुदावनेका दाह लगावनेका मिथ्या देवनिका मकान बनावनेका मिथ्या देवतानिका मन्दिर तथा मूतिका बिगाड़नेका खेती करनेका सुन्दर मकानकूं मलीन करनेका कदाचित् उपदेश मत करो। तथा तिर्यञ्चनिकै दुःख होनेका मारनेका दृढ़ बांधनेका बाधी करनेका डाह देनेका नाशिका फोडनेका उपदेश मत करो मनुष्य तिर्यञ्चनिके भोजनपानके रोकनेका बंदीगृहमें धरनेका संताननितैं वियोग करनेका पत्तीनिकूं पिंजरानिमें धरनेका सर्प बीछू सिंह व्याघ्र मूसा न्योला कूकरा इत्यादिक हिंसक जीवनिके मारनेका जूवां लीखां मारनेका उटकण खटमल मारनेका खाट तावड़ै देनेका छिडकाव करावनेका जीवनिके पकड़ने मारनेके यंत्र जाल बनावनेका उपदेश मत करो। खोटे पापरूप शास्त्र पढनेका जिन शास्त्रनिमें श्रृंगार मायाचारादिककी अधिकता मिथ्या श्रद्धान करानेवाले जिनग्रन्थनिमें मारणक्रिया विष बनावनेकी क्रिया मारण उच्चाटन वशीकरण मन्त्र तंत्रादिक तथा इन्द्रजालादिक अनेक कपटनिका उपदेश तथा रसनिका दग्ध करना रसायण करना इत्यादिक पापके शास्त्र वीररसके शास्त्र हिंसाप्रधान क्रियाके शास्त्र मत पढ़ो अन्यकूं उपदेश मत करो तथा अभक्ष्य भक्षण करनेका रात्रिभोजन करनेका झूठ बोलनेका चुगली करनेका चोरी करनेका खोटी साख भरनेका व्यभिचार करावनेका व्यवहारादिक महाआरम्भ करनेका रोशनी प्रज्वलित करनेका (बारूदके) छुडावनेके तथा बागबागीचा देखवेकूं प्रेरणा करनेका उपदेश मत करो।

तथा इस देशतैं दूसरे देशमें व्यौपार बहुत है वहां जावो ऐसा उपदेश मत करो। तथा परिणामनिमें दुर्ध्यानके कारण ऐसा मेला ख्याल कौतुक व्यभिचारादिक कर्म मनुष्यतिर्यञ्चनिको गडिकलहादिक देखनेका उपदेश मत करो। तथा युद्धादिक करनेका गाली देनेका परकी आजीविका बिगाड़ि देनेका उपदेश मत करो। तथा खोटे गीत गान नृत्य वादित्र कलह बिसंवाद श्रवण करनेका उपदेश मत करो। तथा इस देशमें दासी दास सुलभ हैं इनकूं अमुक देशमें लेजाय बेचै तो बहुत लाभ होय ऐसा उपदेश क्लेशवणिज्या है तथा गाय भैंस अश्वादिक अमुक देशतैं ग्रहण करि अन्य देशमें बेचै तो बहुत धनका लाभ होय सो तिर्यक्वणिज्या है तथा चिडीमार शिकारानिकूं शाकुनीनिकूं ऐसैं कहै जो अमुक देशमें मृग सूकर

पत्ती इत्यादिक जीव बहुत हैं ऐसा कहना सो वधकोपदेश है तथा खेती करनेवालेनिकूं पृथ्वीके आरम्भका जल अग्नि पवन वनस्पति छेदनादिकका उपदेश देना सो आरम्भोपदेश है ये समस्त पापोपदेश त्यागने योग्य हैं। तथा हुक्का जरदा तमाखू भांग अमल छोंतरादिक पीवनेका सूंघनेका खावनेका उपदेश महापापका कारण है सो मत करो जातैं हुक्को जर्दो तो उत्तम कुलके योग्य ही नाहीं जिसतैं जाति कुल भ्रष्ट होजाय धुवांका अर जलका संयोगतैं बहुत जीव हुक्काके जलमें उपजैं अर जल महादुर्गन्ध होजाय अर जहां पड़ै तहां छहकायके जीवनिकी विराधना हो करै अर चूना ईंट पकावनेका उपदेश मत करो। बहुरि बहुत पापके वनिजका उपदेश मत करो। गाय भैंस बलद ऊंट गाडा गाडोनिका राखनेका उपदेश मत करो। कोऊ दातार मनुष्य तिर्यञ्चनिकूं भोजन वस्त्र धनादिक देता होय ताके अन्तराय मत करो। कुपात्र दानका उपदेश मत करो देतेमैं विघ्न मत करो। व्रत भङ्ग करनेका उपदेश मत करो। इत्यादि बहुत कहा कहिये अपने धर्म अर्थ कामना कुछ भी सिद्ध होय नाहीं केवल आपके पापहीका बन्ध होय ऐसा पापरूप उपदेश मत करो। बहुरि जिनतैं हिंसा बहुत होय ऐसे उपकरण किसीकूं मत द्यो मांगे मत द्यो भाड़े मत द्यो प्रीतिकरि मत द्यो मोलकरि मत द्यो जिनके देनेमैं किंचित लाभ ही होय तो हू महापापके कारण जानि देना योग्य नाहीं जिनकूं हस्तमें लेते ही दुष्ट परिणाम होजाय घातहीका विचार रहै ऐसे खड़ग छूरी भाला वाण धनुष बन्दूक कटारी इत्यादिक आयुध देना योग्य नाहीं। बहुरि भूमि खोदनेके कारण जिनकरि गलोनिमैं रोडोनिमैं खेतिनमैं बड़े बड़े जीव सर्प बीछू गिंडोला लट कीडा मूसा इत्यादिक जीव कटि जांय छिद जांय कोटनि जीवनिकी हिंसा होजाय ऐसा फावड़ा कुदाल कुस खुरपा हल मूद्गर हथोड़ा किसीकूं मत द्यो। तथा अनेक त्रसस्थावरनिकूं चीरनेवाला मारनेवाला परसी कुल्हाडा बसोला करोंत दातला दतीला किसीकूं मत द्यो। तथा तिर्यञ्च मनुष्यनिके मारनेके कारण लाठी घोटा चाबुक चामड़ालोढा किसीको मत द्यो। बहुरि अग्नि विष वेड़ी सांकल पिंजरा जाल जीव पकड़नेका यन्त्र किसीको मत द्यो। मार्जार कूकरा इत्यादिक हिंसक जीवनिकूं अपनाकरि मत पालो। सूआ तीतर बुलबुल कूकड़ा मैना

कबूतर बाज इत्यादिक पक्षीनिकूं पींजरामें रखना पालना मत करो। बहुरि केतेक बहुत पापके उपकरण घरमें हू मत राखो घरमें रहे देखते हू हिंसाके उपकरण परिणाम हो बिगाड़े हैं। बहुरि एते निंद्य बनिज हू महापापके कारण जिनमें किंचित लाभ होय तो हू पापसूं भयभीत होय त्याग करो लोहा नील मैण लवण लकडा साजी सण सावण लाख चामडा ऊनकेश कसूंभा गुड खांड अन्न चावल सिंहाडा शस्त्र दारू गोला सीसा लहसन कांदा आदो जमीकंद तथा घृत तैल आंम नीवू इत्यादिक वनस्पतिकाय भांग तमाखू जर्दा तिल खल काकडा पिंजरा फांसी गांजा चरस दासी दास घोड़ा ऊंट बलध भैंसा गाडागाडी ईंट इनके बेचनेमें खरीदनेमें संचयमें महा हिंसा होय है यातैं त्याग करो। समस्तका त्याग नाहीं बन सके तो यामैं महापाप जानि कोऊ अन्नादिकमैं अलप संग्रह अलप प्रमाण राखि अन्य समस्तका तो त्याग करो। बहुरि केतीक खोटी आजीविका महापापबन्धकरि दुर्गति लेजाय ते परिहार करो। कटिवालो करनेकी कोटवालका पियादापनाकी बनकटी करानेको गाडा गाडी ऊंट बलध भाड़ै देनेकी ऊंट बलध गाडा गाडी भाडै करानेवाला दलाल यो नाहीं देखै है जो याका कांधा गल गया है कि नासिका गल गई है कि पीठ गल गई है कि पग दूखै है कि याका अङ्गमैं कीडा पढि रह्या है कि वृद्ध है कि रोगी है ऐसा विचार भाड़ाकी दलालीवालाकै नाहीं है चतुर्मासमें भी बहुत बोझ लदाय दे अर भाड़ाकी आजीविका अर भाड़ाकी दलाली दोऊ महापाप हैं अर लोभकै वश होय वृद्ध पुरुषका व्याह सगाई मत करावो। राजका हासिल मत चुरावो।

तथा अन्य अपराधीकी चुगली खानेकी झूठी साखि भरनेकी गवाही होजानेकी वैद्यपनाकी आजीविका मत करो जंत्र मन्त्र भूत भूतणी डाकनिके इलाज करनेकी रसायणादिक धूर्त्ताई तैं दिखाय ठग लेनेकी आजीविका मत करो। यह दुर्गतिको ले जानेवाली है तथा काठ बेचनेवाला मदिरा करनेवाला कलाल कषायी धोबी चमार ईंट चूना पकावनेवाला नीलगर जुवारी घसियारा घास खोदनेवाला इनकूं व्याजपर धन मत दो। मांसभक्षीनिकूं वेश्यानिकूं निंद्यपापकी आजीविका करनेवालेनिकूं व्याजपर रुपया मत दो

अपना मकान भाड़े मत दो। बहुरि अशुभ परिणामके धारक अन्य मार्गी मांसभक्षी मद्यपायी वेश्यामें आसक्त परस्त्रीलंपटी अधर्मीनितैं मित्रता प्रीति करनेका हू त्याग करो। परके दोष ग्रहण मत करो। अन्यकी लक्ष्मीमें वांछा मत करो अन्यकी लक्ष्मीकूं देखि आश्चर्य मत करो अपना दीनपना मत चिन्तवन करो अन्यकी स्त्रीके देखनेमें अभिलाषा मत करो। अन्य मनुष्य तिर्यंचनिकी कलह मत देखो। अन्यके पुत्रका स्त्रीका वियोगकी वांछा मत करो। परका अपमान अपयश अपवाद सुनि हर्षित मत होहू। अन्यके लाभ देख विषाद मत करो। अन्यके रससहित भोजन आभरणादिक देखि अपने परिणाममें दुःखित मत होहू। आपके दारिद्र वियोग रोग होते आर्तपरिणामकरि क्लेशित मत होहू धनवाननिसूं ईर्षा मति करो। बहुरि कोऊ सिंघ व्याघ्र सर्पादिकनिकी शिकार चिंतवन मत करो। कोऊका संग्राममें जय पराजय मत चाहो। परकी स्त्रीका संसर्ग वचनालाप करनेमें वेश्यादिकनिका हावभाव नृत्यका विलास देखनेमें अभिलाषा मत करो। गाली भंडवचन लिए गीत मत सुनो। खोटे राग सांग कौतूहल परिणाम मलिन करनेका कारणका श्रवण देखना दूरहीतैं छांड़ो। दारिद्र आवते हू नीच प्रवृत्तिकरि आजीविका मत करो किसीतैं याचना मत करो दीनता मत भाखो निर्धनपणाकूं होते हू प्रवृत्ति विकाररूप मत करो। नीच कुलवालेनिके करनेयोग्य वस्त्र रंगणा धोवना इत्यादिक निंद्यकर्म करनेका परिहार करो। बहुरि जिनालय आदिक धर्मके स्थाननिमें स्त्रीनिकी कथा राजकथा चोरकथा देशकथा महापापबन्ध करनेवाली कथा कदाचित् मत करो। बहुरि लेन देन व्याह सगाईका झगड़ा तथा न्याय पंचायती जिनमंदिरमें बैठि जाति कुलका विसंवाद कदाचित् मत करो। मंदिरमें बैठि करोगे तो धर्मस्थानकी मर्यादा तोड़नेतें नरक निगोदका कारण घोरकर्मका बन्ध होयगा तातैं धर्मायतनमें पापका बधावनेवाला कर्म दूरहीतैं त्याग करो। बहुरि जिनमंदिरमें भोजनपान तांबूल गंध पुष्प विषयादिक तथा शयन उच्चासन वनिज सगाई झगड़ा गालीके वचन हास्यके वचन अविनयके वचन आरम्भके वचनादिकमें कदाचित् प्रवर्तन मत करो। बहुरि मिथ्याश्रुतका श्रवण मत करो जिनके श्रवणतें विषयनिमें राग बधे हास्य कौतुक उपजै काम जाग्रत होजाय भोजनके नाना स्वादनिमें चित्त चलि जाय ऐसी कथनी

श्रवण मत करो। तथा स्त्रीपुरुषनिके पापरूप चारित्रकी कथा तथा भूतप्रेतनिकी असत्य कथा तथा हिंसाकी प्रधानताके धारक वेद स्मृत्यादिककी कथा तथा कपोल कल्पित अनेक कहानी तथा फारसी किताबनिका लिख्या तिनकूं किस्सा कहै हैं ते महा दुर्ध्यानके करनेवाले श्रवण मत करो तथा भारत रामायणादिकनिकी कल्पित कथा कदाचित् श्रवण मत करो। बहुरि कषायनिके उत्पन्न करनेवाले क्रोधीनिके वचन अभिमानीनिके मदके भरे वचन मायाचारीनिके कुटिल वचन लोभीनिके लालसा उपजावनेवाले वचन मद्यमांस अभक्ष्यके स्वादकी प्रशंसा करनेवालेनिके वचन मद्य अमल भांग तमाखू हुक्कनिकी प्रशंसा करनेवालेनिके वचन मत श्रवण करो। बहुरि धर्मके अभाव करनेवाले परलोकादिकके अभाव कहनेवाले नास्तिकनिके वाक्य पापबन्धके कारण मत श्रवण करो। बहुरि वृथा आरम्भ विसंवादकूं छोड़ो तथा माटी कजोडी कर्दम कांटा ठीकरा मल मूत्र कफ उच्छिष्ट जल अग्नि दीपक इत्यादिक भूमिकूं देखे विना मत पटको तथा शीघ्रतासूं पाषाण काष्ठ आसन शय्या पल्यंक धातुका पात्र चरवा चरी तवला परात चौकी पाटा वस्त्रादिकनिकूं जमीन ऊपरि घींसकरि रगडकरि प्रमादतैं मत सरकावो यामैं बहुत जीवनकी हिंसा होय है यत्नाचारका अभाव है तातैं देखि यत्नतैं उठावो मेलो। बहुरि विना प्रयोजन भूमिका कुचरना वृक्षकी डाहलीनिका मोडना हरित तृणादिककूं छेदना मर्दन करना वृक्षनिके पत्र पुष्पादिकनिकूं चीरना तोड़ना वृथा जल पटकना इत्यादिक पापतैं भयभीत होय मत करो। बहुत कहा कहिये गृहाचारामैं जेता वस्तु पात्र अन्न जलादिक हैं तिनकूं देख करि धरो जैसैं धर्म नाहीं बिगडै उजाड़ बिगाड नाहीं होय तैसैं करो। प्रमाद छाडि भोजनपान औषधि पकवानादिक नेत्रनितैं देखि सोधि भक्षण करो। शीघ्रतासूं प्रमादी होय विना सोध्या भोजन मत करो। गमनमैं आगमनमैं उठनेमैं देखे विना सोधे विना प्रवर्तन मत करो। जातैं दया पलै अर अपना शरीरकै बाधा नाहीं होय हानि नाहीं होय तथा प्रमादी होय हित अहितका विचार किये विना सुपात्र कुपात्रका विचार विना किसीकूं वार्ता मत कहो कहनेमैं गुणदोषका विचार करि कहो। अर कोई आपकूं पूछै तो शीघ्रतासे उत्तर मत द्यो याही कहो मैं समझ करि वि-

चार करि आपकूं जवाब देस्यों पाछैं अवकाश पाय धर्मअर्थकामसूं अविरुद्ध विचार विनयसहित उत्तर करो शीघ्रतातैं उत्तर देनेमें उस कालमैं क्रोधमानमायालोभके वशतैं वचन निकसनेका ठिकाना नाहीं कषायके उदयतैं योग्य अयोग्य कहनेका विचार नाहीं रहै है अन्यका वाक्य हू परिपूर्ण श्रवण करि लेवे तथा कहनेका समस्त अभिप्राय जाननेमैं आजाय तदि उत्तर करना योग्य है तातैं प्रमाद जो असावधानतातैं वचन मत कहो। एकांतरूप हठग्राही पक्षपाती मत होहु धर्म विगडि जायगा तातैं दोऊ लोकके हितके अर्थी हो तो प्रमादचर्या नामा अनर्थदण्ड छोड़ो ऐसैं पंच प्रकार अनर्थदण्डनिकूं समझ करि त्याग करै तातैं अनर्थदण्ड त्याग नामा व्रत होय है।

बहुरि अनर्थदंडनिमैं महा अनर्थकारी द्यूतक्रीड़ा है जुवा समस्त व्यसननिमैं प्रधान है समस्त पापनिका संकेत स्थान है महान आपदाका कारण है समस्त अनीतिनिमैं महा अनीति है याका परिणाम ही महादुष्ट है जो अपना समस्त घर संपदा जूवामें संकल्प करिकैं हू अन्यका धन लिया चाहै है जुवारीके एता बड़ा लोभ है जो कोऊ प्रकार परका धन मेरे आजाय ऐसैं रात्रि दिन चिंतवन करता रहै है मेरा धन जाय तो जावो अपयश होहु मरण होहु दरिद्रता होहु कोऊप्रकार परका धन मैं जीत ल्यूं तदि मेरा जीवतव्य सफल है लोभकषायकी तीव्रता सो ही महाहिंसा है। जुवारीका महा निर्दयी परिणाम होय है परका घात ही चिंतवन करै है। जो जुवामैं धन हारि जाय तो चोरी करै धनवास्तैं मनुष्यनिकूं मारै ही जुवारीनिके परस्पर महाक्लेश होय ही मारामारी होय हो मायचारी होय ही जिनसूं महाप्रीति होय तिनसूं भी महाकपट अनेक छल करि धनग्रहण कर्या ही चाहै जुवा कपटका तो स्थान ही है हजारा छल रचै है अपनी स्त्रीनैं जुवामैं संकल्प करदे पुत्र पुत्रीनै संकल्प करदे स्त्रीनै हारजाय पुत्रीनै हारजाय जुवारीनै देदे है जुवारी दरिद्री व्यसनीकूं पुत्री परणाय देहै जुवामैं अपना मकान रहनेका बेच देहै दावपर लगाय देहै तथा पुत्रकूं बेच देहै लक्ष धनका धनी एक क्षणमैं समस्त धन हार दरिद्री हो जाय है तदि महाआर्तध्यान रौद्रध्यानतैं मरि दुर्गतिमैं भ्रमण करै है अर धन जीत ल्यावै तो मद उपजै है कुमार्गमैं ही जोका धन खर्च

होय है महा रौद्रध्यानके प्रभावतैं मरि महा कुयोनि पाय भ्रमण करै है जुवारी मद्पानादिक करै है वेश्यामैं आसक्त होय जाय है सुमार्गमैं धन लगै नाहीं जुवारीतैं न्यायरूप अन्य आजीविका नाहीं करी जाय है जुवारीकी प्रतीति जाती रहै है याकूं कोऊ धन नाहीं दीजै है जुवारीके सत्य वचन कदाचित् नाहीं होय है। जुवारीकै शुभपरिणाम होय नाहीं अपना पूर्वोपार्जित कर्मका दिया न्यायका धनमैं संतोष कदाचित् आवै नाहीं। एकान्तमें एकाकीकूं मारि धन खोस ले जाय है अपना घना नातादार भाई होय ताकूं एकान्तमैं मारि आभरणादि ले ही जाय है। जुवारीकी प्रीति मूरख होय सो हू नाहीं करै है परधनकी अति तीव्र तृष्णाकरि कुदेवनिकी बोलारी बोले है मिथ्याधर्म सेवन करै है संतोष शील निराकुलताकूं जलांजली देहै अति लोभके परिणामतैं विपरीत बुद्धि हो जाय है। परमार्थ जानै नाहीं है। धर्मको श्रद्धान स्वप्नमें हू नाहीं होय है। समस्त पापनिका मूल जुवाकूं जानि दूरहीतैं त्याग करो। जुवारीकी बुद्धि कोट उपायकरि हू विपरीतता नाहीं छाडै है परलोकमें दुर्गति ही जाय है। जुवारी तौ तीव्रलोभकरि अपना आत्माकूं घात्या है।

बहुरि केतेक अज्ञानी जुवामैं हार जीत धनकी तो नाहीं करै परंतु मनुष्य जन्मकूं वृथा व्यतीत करनेका इच्छुक धन संकल्प कर तो जुआ नाहीं करै है अर क्रीडाके निमित्त चौपड़ शतरंज गंजफा इत्यादिक अनेक अविद्या करै है तिनके हारमें अर जीतमैं रागद्वेषकी बड़ी तीव्रता है हरष विषाद बहुत होय है कपट बहुत करै हैं पिता पुत्र हू परस्पर विसंवाद कलह करै ही हैं परिणाममैं जीत हारमैं तीव्रतानै प्राप्त होय है। या ऐसी अविद्या है जो इस क्रीडामैं रचै है ताका इस लोक सम्बन्धी सेवा बनिज लिखना इत्यादिक समस्त कार्य बिगडि जाय तो हू छाड नाहीं सकै है जाकै द्यूतक्रीड़ा है ताकै अन्य उद्यमका अभाव होय है दरिद्रता नजीक आवै है। हीन नीच मलिन जातिके बरोबर बैठ द्यूतक्रीड़ा करै है यो नाहीं देखै है यो म्लेच्छ है नाई कलाल धोबी समस्त द्यूतक्रीड़ामैं सामिल प्रत्यक्ष देखिये हैं जिनकी महादुर्गन्ध आवै है वस्त्रनिमैंतैं जूंवां झड़ झड़ पड़ै हैं तिनके बरोबर बैठ रमिये है। अन्य अधर्मनिका स्थानमैं आप जाय बैठै हैं मार्गमैं खेलते देखकर खड़ा रहजाय बैठनेकूं स्थान नाहीं होय तो आप खड़ा खड़ा ही देखै है ऐसा व्यसन है खावना

पीवना देन लेन सब छांड़ि खड़ा हुआ देखै है मनियार नीलगर कमनीगर बिसायती समस्त मांस भक्षी नीच कर्मीनिके सामिल ख्याल खेलै देखै है बहुत कहा कहिये अपना सर्व कार्य बिगडि जाय तथा माता पितादिकका मरण हो जाय तौ हू इस ख्यालमैंतैं उठ्या नाहीं जाय है ऐसा तीव्र परिणामतैं नरक तिर्यंच बंध होय ही ! जामैं धन कुछ नाहीं आवै बड़ा विसंवाद होय तिस क्रीड़ामैं तीव्र राचनैतैं धनकी हारजीतवालेतैं हू तीव्र पापका बन्ध करै है जाकै धनको हारजीत होय सो तो अल्पकाल राचै है याका परिणाम समस्त कालमैं राचै है इस व्यसनमैं लागे हैं ताकूं धर्मका नाम नाहीं सुहावै है ताकै बुद्धि विपरीत होय पापक्रियामैं अन्यायमैं असत्यमैं विकथाहीमैं राचै है देखहु यह मनुष्यजन्म अर उत्तमकुल अर निरोग शरीर उत्तमधर्म ए अनंतकालमैं नाहीं पाया सो संयोग मिलि गया याका एक एक घड़ी कोड धनमैं नाहीं मिलै ऐसा अवसर सिद्धांतनिका स्वाध्याय जीवादिक द्रव्यनिकी चर्चा अनित्यादिक द्वादश भावना षोडशकारण भावना पञ्च परमगुरुका नमस्कार जाप स्मरणादिककरि सफल करनेका था तानै चौपड़ गंजफो शतरंज ये महा अविद्यामैं राचि समस्त धर्मके मार्गतैं पराङ्मुख होय महापाप उपजाय मर जाना यो फल ग्रहण करि तिर्यंच नरकादिकमैं जाय उपजै है। बहुरि ऐसा जानना भगवानका परमागममैं तो सप्त व्यसनका त्याग जाकै होयगा सो ही जिनधर्म ग्रहण करनेका पात्र होयगा जाके ए व्यसन ग्रहण हो जायं तिसको बुद्धि ही विपरीत होजाय है पाप कार्यनिमैं प्रवीण होजाय है अनीतिमैं तत्पर होजाय है। इस लोकका कार्य तो न्यायमार्गतैं अपने कुलके योग्य षट्कर्मकरि आजीविका करना अर खानपानादिक शरीरका संस्कार तथा न्यायरूप लेना देना धरना जाना आना प्रयोजनरूप करना अर परलोकके अर्थि धर्मकार्यमैं प्रवर्तन करना यही गृहस्थके दोय करने योग्य कार्य हैं इन दोय कार्य विना जो प्रवृत्ति सो ही व्यसन है ते सप्त व्यसन हैं। द्यूतक्रीडा ॥ १ ॥ मांसभक्षण ॥ २ ॥ मद्यपान ॥ ३ ॥ वेश्यासेवन ॥ ४ ॥ शिकार करना ॥ ५ ॥ चोरी करना ॥ ६ ॥ परस्त्रीसेवन करना ॥ ७ ॥ ये महाघोरपापबंधके कारण सप्त व्यसन हैं। इन व्यसननिमैं उलझना सहज है छूटकरि सुलझना बड़ा कठिन है। इन व्यसननितैं पापबंध ही ऐसा होय है जो बुद्धि ही विपर्ययमैं होजाय है नि-

कस नाहीं सकै है। यहां द्यूत व्यसन वर्णन किया याहीमैं होड लगावना है। अब दस बीस बरससे अफीमके फाटकाको व्यौपार हू तीव्रतृष्णाकरि युक्त पुरुषके संतोषका बिगाडनेवाला प्रवर्त्या सो हू जुवाहीमैं गर्भित जानना। बहुरि मांस मद्य शिकार जैनीनिके कुलमैं है ही नाहीं ये लगे पीछैं महा व्यसन हैं परंतु आगै अभक्ष्यनिमैं कहैंगे तथा बीध्या अन्नादिकनिका समस्त भोजन अर चमड़ाका स्पर्श्या समस्त जल घृत तेल रसादिक रात्रि भोजन इत्यादिक समस्त अभक्ष्य मांसके दोष समान जानि त्यागै हो। बहुरि भांग तमाखू जर्दा ( अफीम ) हुक्का ये समस्त पराधीन करनेतैं अर ज्ञानके नष्ट करनेतैं परमार्थरूप बुद्धिकूं नष्ट करनेतैं मदिरा समान ही हैं यातैं त्याग ही करना। बहुरि अन्य जीवनिकी दया नाहीं करिके आजीविका बिगाड देना धन लुटाय देना तीव्रदंड कराय देना सो समस्त शिकार ही है अन्यका मानभंग कराय देना स्थान छुडाय देना सो समस्त शिकारतैं अधिक अधिक है सो त्याग ही करना। बहुरि वेश्यासेवन किया जाका समस्त आचार भोजनपान भ्रष्ट है वेश्याकूं चांडाल भील म्लेच्छ मुसलमान इत्यादिक समस्त सेवन करै हैं जो वेश्या मांसमद्यका खानपान नित्य ही करै है धनहीतैं जाके प्रीति है ऐसी वेश्याकी मुखकी लाल पीवै है जातिकुल आचार समस्त भ्रष्ट है तातैं त्याग ही श्रेष्ठ है वेश्याका संगम किया तिसके चोरी जुवा मद्यपानादिक समस्त व्यसन होय हैं। समस्त धनकी हानि होय है धर्मतैं पराङ्मुखता होजाय है बुद्धि विपरीत होजाय है मायाचारमैं झूठमैं छलमैं तत्परता होजाय है निंद्यकर्मकी ग्लानि जाती रहै है लज्जा नष्ट होजाय है वेश्याका देखनेमैं हाव भाव विलास विभ्रमादिक देखने चिंतवन करनेतैं अतिरागी होय कुलमर्यादा समस्त भंग करै है वेश्यामैं,आसक्त हुआ पुरुष कफविषै पड़ी मक्षिकाकी ज्यों आपकूं नाहीं छुडाय सकै है महा अनीत है। बहुरि चोरपनाका महा व्यसन है। चोर आप भी निरंतर भयरूप रहै है अर चोरका अन्य जीवनिकै वड़ा भय रहै है माताकै भी चोरपुत्रका भय रहै है। चोर इस लोकमैं आपकी समस्त प्रतिष्ठा बिगाडि महाकलंकित होय है। राजासूं तीव्रदंड पावै है हस्तनाशिकादिक च्छेद्या जाय है। चोरका परिणाम संतोषरूप कदाचित नाहीं होय है। चोरके योग्य अयोग्य करने योग्यका

विचार ही नाहीं रहै है। याहीतैं धर्मध्यान स्वाध्याय धमकथातैं पराङ्मुख रहै है। अर जिनशास्त्रनिका श्रवण पठन करता हू अन्यके धन ऊपर चित्त चलावे है सो ठग है जगतके ठगनेकूं शास्त्ररूप शस्त्र ग्रहण किया है तिसके धर्मकी श्रद्धा कदाचित् नाहीं जानना जाके जिनधर्मकी प्रधानता होय है ताकै चारित्रमोहका उदयतैं त्याग व्रत संयम नाहीं होय तो हू अन्यायके धनमें तो बांछा नाहीं चालै है चोरीतैं दोऊ लोक भ्रष्ट होना जानि विना दिया परका धनमैं बांछा मत करो। बहुरि परस्त्रीकी बांछा नाम व्यसन समस्त अनर्थनिमैं प्रधान है परस्त्रीलंपटकै इसलोक परलोकमैं जो घोरपाप आपदा अकीर्ति अपयश मरण रोग अपवाद धनहानि राजदंड जगतका बर दुर्गतिगमन मारन ताड़न बंदीगृहमें वंदनादिक होय हैं तिनकूं वचन द्वारे कौन कहनेकूं समर्थ है? ऐसे सप्तव्यसन दूरतैं ही त्यागो इनके त्यागनेमैं कुछ हानि नाहीं है जानै सप्तव्यसन त्याग किया सो आपका समस्त दुःख अकीर्ति नरकादिक कुगति समस्त आपदाका निराकरण किया। अब अनर्थ दंडव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

कंदर्पं कौत्कुच्यं मौखर्यमतिप्रसाधनं पञ्च। असमीक्ष्य चाधिकरणं व्यतीतयोऽनर्थदण्डकृद्विरतेः ॥६०॥

अर्थ—चारित्र मोहनीयकर्मका उदयतैं रागभावकी अधिकतातैं हास्यतैं मिल्या हुआ भंडवचन बोलना सो कंदर्प नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि तीव्ररागका उदयतैं हास्यरूप भंडवचनकरि सहित जो कायकी खोटी चेष्टा शरीरकी निंद्यक्रिया करना सो कौत्कुच्य है ॥ २ ॥ अर विनाप्रयोजन बहुत साररहित बकवाद सो मौखर्य कहिये है ॥ ३ ॥ अर प्रयोजन रहित अधिकताकरि मनवचमनकायको प्रवर्तावना सो असमीक्ष्याधिकरण कहिये है। रागद्वेषकरनेवाला काव्य श्लोक कवित्त छंद गीतनिका चिंतवन सो मन असमीक्ष्याधिकरण कहिये है। बहुरि पापकथाकरि अन्यके मनवचनकायकूं बिगाडनेवाली खोटी कथा कहना सो वचन असमीक्ष्याधिकरण है। बहुरि प्रयोजन बिना गमन करना उठना बैठना दौड़ना पटकना फेंकना तथा पत्र फल पुष्पादिकनका छेदन भेदन विदारण क्षेपणादिक करना तथा अग्नि विष क्षारादिकका देना सो काय असमीक्ष्याधिकरण नामका अतीचार है ॥ ४ ॥ जेता भोग-उपभोगकरि प्रयोजन सधै तातैं

अधिक विना प्रयोजनका अतिसंग्रह करे सो अति प्रसाधन नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ऐसैं अनर्थ दंडव्रतके पांच अतिचार कहे ते त्यागने योग्य हैं अब भोगोपभोगोपरिमाणव्रत अष्ट सूत्रनिकरि कहै हैं—

अक्षार्थानां परिसंख्यानं भोगोपभोगपरिमाणम् । अर्थवतामप्यवधौ रागरतीनां तनूकृतये ॥६१॥

अर्थ—प्रयोजनवान हू पंचइंद्रियनिके विषयनिका जो रागभाव करिकैं आसक्तताकौं घटावनेके अर्थि जो परिमाण करना सो भोगोपभोगपरिमाण नामा व्रत है । भावार्थ—संसारी जीवनिकै इंद्रियनिके विषयनिमैं अतिराग वर्तै है रागतैं व्रत संयम दया क्षमादिक समस्त गुणनितैं पराङ्मुख होय रह्या है यातैं अणुव्रतका धारक गृहस्थ है सो हिंसा असत्य चोरी पर स्त्रीसेवन अपरिमाणपरिग्रहतैं उपजी जो अन्यायके विषयनिमैं प्रीति तिसका त्याग करकै तो व्रती भया अब न्यायके विषयनिकूं हू तीव्ररागके कारण जानि जाकै अति अरुचि भई होय सो रागकी आसक्तता घटावनेके अर्थि अपने प्रयोजनवान हू इंद्रियनिके विषयनिमैं परिमाण करै सो भोगोपभोगपरिमाण नामा गुणव्रत है । व्रतीनिकूं इंद्रियनिके विषयनिमैं निरर्गल प्रवृति रोकि भोगोपभोगका परिमाण करना महान संवरका कारण है । अब भोग तो कहा होय है अर उपभोग कहा तिनका लक्षण कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

भुक्त्वा परिहातव्यो भोगो भुक्त्वा पुनश्च भोक्तव्यः । उपभोगोऽशनवसनप्रभृतिः पाञ्चेन्द्रियो विषयः ॥ ६२ ।

अर्थ—जो एकवार भोग करकैं फिर त्यागनेयोग्य होय सो भोग है बहुरि भोग करकैं फिर भोगने योग्य होय सो उपभोग है । भोग तो भोजनादिक पंच इंद्रियनिके विषय हैं अर उपभोग वस्त्रादिक पंच इंद्रियनिके विषय हैं । भावार्थ—जो एकवार ही भोगनेमें आवै फिर भोगनेमें नाहीं आवै ते भोग हैं । अर जो वारवार भोगनेके अर्थि आवै ते उपभोग हैं जैसैं भोजन नानारूप एकवार ही भोगनेमें आवै है तथा कपूर चंदनादिकका विलेपन तथा पुष्प माला अतर फुलेल तथा मेला कौतुक इन्द्रजालादिकस्तवनके गीतके शब्दादिक एकवार ही भोगनेमें आवै हैं ते पंच इन्द्रियनिके विषयभोग कहावै हैं । अर जैसे वस्त्र आभरण स्त्री सिंहासन पर्यंक महल वाग वादित्र चित्राम इत्यादिक वारंवार भोगनेमें आवैं ते उपभोग हैं

भोगोपभोग दोऊंनिका परिमाण करै ताकै व्रत होय है । अब जे परिमाण करनेयोग्य नाहीं यावज्जीवन त्याग करने योग्य हैं तिनके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

त्रसहतिपरिहरणार्थं क्षौद्रं पिशितं प्रमादपरिहृतये । मद्यं च वर्जनीयं जिनचरणौ शरणमुपयातैः ॥ ८३ ॥

अर्थ—जिनेन्द्रभगवानके चरणनिका शरणकूं प्राप्त भये ऐसे सम्यग्दृष्टि हैं तिननैं त्रसनिकी हिंसाका परित्यागके अर्थि क्षौद्र जो मधु अर पिशित कहिये मांस वर्जन करनेयोग्य है अर प्रमाद जो हित अहितमैं असावधानी ताका वर्जनके अर्थि मद्यका त्याग करना योग्य है । भावार्थ—जे पुरुष जिनेंद्रका चरणनिकी आज्ञाका श्रद्धानी हैं ते त्रसजीवनिकी हिंसाका त्यागके अर्थि मधुका अर मांसका त्याग ही करैं अर प्रमोद जो अचेतपना ताका त्यागके अर्थि मदिराका त्याग करैं ही जाकै मधुमांसमद्यका त्याग नाहीं सो जिन आज्ञात पराङ्मुख है जैनी नाहीं है । बहुरि त्यागने योग्यनिकूं कहै हैं—

अल्पफलबहुविघातान्मूलकमार्द्राणि शृङ्गवेराणि । नवनीतनिम्बकुसुमं कैतकमित्येव मवहेयम् ॥ ८४ ॥

यदनिष्टं तद्व्रतयेद्यच्चानुपसेव्यमेतदपि जह्यात् । अभिसन्धिकृता विरतिर्विषयाद्योग्याद् व्रतं भवति ॥ ८५ ॥

अर्थ—जिनके सेवनतें फल जो अपना प्रयोजन सो तो अल्प सिद्ध होय अर जिनके भक्षणतैं घात अनंत जीवनिका होय ऐसे मूल कंद आदो श्रंगवेर इत्यादिक कंद मूल अर नवनीत जो माखन निंबका फूल केवडा केतकीका फूल इत्यादिक जे अनंतकाय ते त्यागने योग्य हैं । एक देहमैं अनंत जीव ते अनंतकाय हैं जो आपके अनिष्ट होय ताका व्रत करना-त्याग करना अर जो सेवन योग्य नाहीं ते अनुपसेव्यनिका त्याग ही करना योग्य है । यद्यपि अनिष्ट अनुपसेव्यके सेवनेका प्रयोजन नाहीं है तो हू अपने अभिप्रायकरि योग्य विषयका हू त्याग सो व्रत है जातैं जाका फल तो एक जिह्वाका आस्वादनमात्र अर जाका एक बालमात्र कणहूमैं अनंतानंत बादरनिगोदजीवनिका घात होय ऐसे कंदमूलादिक अर निंबका पुष्प अर केतकी केवडाका पुष्प त्यागने योग्य हैं तथा अन्य हू पुष्प प्रत्यक्ष त्रस जीवनिकर भरे हैं ते जिन धर्मीनिके त्यागने योग्य हैं। बहुरि जो वस्तु शुद्ध हू है अर भक्षण करनेतैं अपना देहमें वेदना उपजावै

उदरशूलादिक उपजावनेवाला वाय पित्त कफादिक दोष तथा रुधिरविकार उदरविकारादिककूं उत्पन्न करनेवाला भोजनादिक तथा अन्य हू दुःखके कारण इंद्रियविषयनिका सेवन मत करो। जातैं जो अति तीव्ररागी इंद्रियनिका लंपटी होयगा सो ही अनिष्टसेवन करैगा। जो अपना मरण होजाना तथा तीव्रवेदना भोगना ऐसैं तीव्र दुःखहूकूं नाहीं गिणता भक्षण करै है ताकै जिव्हाकी तीव्र विकलतातैं महापापका बंध होय है। अनेक मनुष्य भोजनके आस्वादनमैं अनुराग करकै अनिष्ट भोजनतैं रोग बधाय आर्तध्यानकरि दुर्गतिकूं जाय हैं तातैं अनिष्टका त्यागही श्रेष्ठ है। बहुरि केते हो वस्तु अपने कुलकूं तथा व्यवहारकूं धर्मकूं मलीन करनेवाले हैं ते सेवन योग्य नाहीं ते अनुपसेव्य हैं। संख हस्तीका दांत केश मृगमद गोलोचन इत्यादिकका स्पर्श्या हुआ भोजन जल सेवन योग्य नाहीं तथा ऊंटनीका दुग्ध तथा गधीका अर गायका मूत्र तथा मल मूत्र तथा कफ लाल उच्छिष्ट भोजन ये सेवने योग्य नाहीं तथा म्लेच्छ भील अस्पर्श्यशूद्रानिका स्पर्शन किया हुआ भोजन तथा अशुद्ध भूमिमैं पड्या चर्मका स्पर्श्या मार्जार श्वानादिक करि तथा मांसभक्षी मद्यपायीनिकरि बनाया हुआ स्पर्शन किया हुआ समस्त भोजन लोकनिंद्य भोजन अनुपसेव्य है। जिनधर्मीनिके भक्षण करने योग्य नाहीं। बुद्धिकूं विपरीत करै है। मार्गतैं भ्रष्ट करनेवाला धर्मतैं भ्रष्ट करनेवाला है। इहां ऐसा विशेष जानना, श्रीराजवार्तिकमैं हू पंच प्रकार भोग संख्या कही है तहां त्रसका घात जामैं होय ॥ १ ॥ प्रमाद उपजावनेवाला होय ॥ २ ॥ बहुबध कहिये जामैं अनन्त जीवनिका घात होय ॥ ३ ॥ अनिष्ट होय ॥ ४ ॥ अनुपसेव्य होय ॥ ५ ॥ ये पांच प्रकार त्यागने योग्य हैं यावज्जीवन त्यागने योग्य हैं अर जिसका यावज्जीवन त्याग करनेकूं समर्थ नाहीं तो वाका त्याग कालकी मर्यादाकरि करना। यहां केतेक वस्तूनिमैं तो प्रगट त्रसनिका घात है अर केतेक वस्तूनिमैं अनन्त जीवनिके संघट्ट इकट्ठे होय घात होय है बीधा अन्न है तामैं ईली घुन प्रगट हजारां फिरै हैं बीधे अन्न खानेवालेकै अप्रमाण त्रसनिका घात होय है जो गृहस्थ धान्यका संग्रह राखै है ताकै नित्य बीधा अन्नके भक्षणतैं महापाप प्रवर्तै है याहीतैं पापतैं भयभीत जैनी होय सो अबीधा अन्न खरीदै अर

दोय महीनाका खरच प्रमाण राखै दोय महीना भक्षण करि चुकै तदि और अबीधा अन्न देखि ग्रहण करै थोड़ा संग्रहमैं अच्छी तरह सोधनेमैं आजाय थोड़ाका जाबता यत्नाचारतैं बनि सकै बीधता देखि तदि बदलाय मंगावै अन्य पांच जायगा अबीधा देखि लावै बहुत धान्य होय तो देय सकै नाहीं फटकि सकै नाहीं बदल्या जाय नाहीं बहुत बीधा होजाय अर खावना पड़ै तदि नित्य छांणि छांणि ईली लट घुणनिकूं पात्र भर भर मार्गमैं पटकै तहां मनुष्यनिके तथा पशुनिके पगतलैं खुंदजाय मरजाय पशु चर जाय बहुरि धान्यमैं जीव पडने लगैं हैं तदि दिन प्रति दूना चौगुना सौगुना हजारगुना छोटा बड़ा वधता चल्या जाय है अर समस्त घरके मकाननिमैं अर रसोईमैं परींडा ऊपर दीवारपर चांकीपर फैलते खानपानकी वस्तुनिमैं जमीमैं छतनिमैं लाखां कोड्यां जीव विचरने लग जायं हैं तातैं लोभके वशतैं प्रमादके वशतैं अभिमानके वशतैं बहुत संग्रह मत करो बहुरि मूंग मोठ उडद तथा अन्य हू फंजादिक जिनकै ऊपरि सुफेद फूली प्रगट हो जाय तामैं त्रसजीव जानि भक्षण मत करो। बहुरि वर्षाकालके चार महीनेमैं केतीक वस्तुका संग्रह मत राखो नगर शहरमैं वसनेका सुख तो ये ही है कि जिस अवसरमें चाहैं तिस अवसरमैं दश पांच दो चार दिनके खरचमैं आवै तितनी दश पांच जायगांमें आछी निर्दोष दीखै सो खरीदो। वर्षाऋतुमैं गुडमैं शक्करमैं खांडमैं बहुत चींटी लट सुलसुली पडै हैं तथा सूंठ अजवायणि इलायची डोडा सुपारी बहुत बीधै हैं दाख पिस्ता चारोली छिंवारा खोपरा इत्यादिकनमैं परिमाण रहित लट कीडा इल्यां बहुत हजारां लाखां उत्पन्न होय हैं। पुरवाई पवनका संयोगतैं ही गुडादिकमैं परिमाणरहित जीव उपजैं हैं तथा मर्यादारहित वस्तु लाडू पेड़ा घेवर बरफी इत्यादिकमैं बहुत जीव प्रगट लट उपजैं हैं। बहुरि हलदी धणां जीरा मिरच अमचूर कोथोडी इनमैं वर्षाऋतुमें बहुत त्रसजीव उपजै हैं तातैं अल्प संग्रह करो नित्य देख सोधि प्रवर्त्तो यो यत्नाचार ही धर्म है। चून शीत ऋतुमैं सात दिनका ग्रीष्मऋतुमैं पांच दिनका वर्षाऋतुमैं तीन दिनका सिवाय भक्षण मत करो चुनका संग्रह मति करो चूनमैं बहुत लट पैदा होजाय हैं दाल चावल इत्यादिक जब रांधो तदि दोय तीन वार सोधि रांधो। बहुरि प्रश्नोत्तर श्रावकाचारमैं ऐसा लिख्या है। श्लोकार्द्ध—

"सर्वाशनं च न ग्राह्यं दिनद्वययुतं नरैः" अर्थ—समस्त भोजन दोय दिनकर युक्त नाहीं भक्षण करना। यातैं एक रात्रि गयां सिवाय दूजी रात्रि व्यतीत होजाय सो भक्षण योग्य नाहीं। यामैं जलका संसर्ग युक्त पक्वान्नादिक हू आगये। बहुरि पुवा मालपुवा सीरो इत्यादिक तथा बड़ा कचोरी रात्रिवास्याको रस चलि जाय है। जातैं यामैं जलका संसर्ग बहुत रहै है। बहुरि रोटी खिचड़ी तरकारी लोंजी रात्रिवासी तो भक्षण ही नाहीं करना अर स्वादसों चलि जाय तो उस दिनमैं भी भक्षण नाहीं करना। बहुरि रात्रिका बनाया समस्त भोजनका भक्षण नाहीं करना बहुरि दही पहला दिनका जमाया दूजा दिन पर्यंत खावौ अधिक नाहीं। बहुरि दोय दालका अन्नकूं दही छाछके सामिल भक्षण मत करो जो मिलायकरि खावोगे तो यामैं बिदलका दोष लागेगा जीभ नीचे कंठमें उतरते ही संमूर्छन जीव उपजै हैं याकूं विदल कहिए है। बहुरि दुग्ध दूह्यां पाछैं छानि दोय घड़ी पहली तप्त करो पाछैं सम्मूर्च्छन त्रसनिकी उत्पत्ति होय है। घृत हू छाछमैंसूं निकस्यां पाछैं शीघ्र ही तपाय छानि भक्षण करना योग्य है ताया छान्यां विना मत भक्षण करो बहुरि घृत तेल जल इत्यादिक रस चामका पात्रमैं घाल्या हुआ भक्षण योग्य नाहीं यामें असंख्यात त्रस जीव उपजै हैं। सींघड़ा ( कुप्पा ) बनै हैं ते मांसकूं गाडि पाछैं कूटि माटीके सांचे ऊपरि बनावे हैं इनका स्पर्श्या घृत तेल जल मांसके समान हैं। इनको प्रवृत्ति मुसलमानांका राज्य हुआ तदि मुसलमानां चलाई है। जो चामका विना स्पर्श्या घृतादि नाहीं मिलै तो रूक्ष भोजन करो अर फागुन पीछैं तिलनिमैं तथा सिंघाड़ेनिमैं बहुत त्रसजीव उपजे हैं यातैं फागुन पीछैं तेल अथवा सिंघाडा कदाचित् मत भक्षण करो। बहुरि जलकूं गाढ़ी दोहरा कपड़ासूं छाणिकरि पीवो अन्यकूं छाणिकरि प्यावो छाणिकरि ही पशनिकूं हू प्यावो अणछाण्यां जलतैं स्नान भोजन वस्त्रधोवन इत्यादि कोई भी क्रिया मत करो जलमैं यत्ना-चार क्रियातैं दयावानपनाकी हद्द बनी रहै है। पात्रका मुखतैं तिगुना लांबा दोहरा वस्त्र नवीन होय तातैं छाणा अजवाणया (विलछन) अन्य पात्रमें करि जलके स्थानमें पहुंचावो जलमें यत्नाचारकी याही मर्यादा है छाणया पाछैं दोय घड़ीकी मर्यादा है फिरि काम पडे तो फिरि छाणा करि वर्तो। तप्तजल दोय पहर वर्त्तो

बहुत उकलतो तप्त कियो हुवो आठ पहर वर्तो पाछैं निकाम है। बहुरि केतेक वस्तूनिकूं त्रसनिको घात जानि सर्वथा भक्षण मति करो जैसैं-बोर लटांको प्रत्यक्ष स्थान है भिंडीनिमैं बहुत लट उपजै हैं बैंगण तरबूज कोहला पेठा जामुन आडू बडवाला गोल अंजीर कठूमर ऊमरफल पीलू आलू जामफल टींडू अज्ञातफल सूक्ष्मफल बीधाफल चलितरस तथा साराफल तथा पत्र शाक कन्दमूल आदो श्रृंगवेर सलगम प्याज लहसन गाजर किशोय्या इत्यादिक तथा कचनार महुवा चीरवृक्षका फल खिरनीकूं आदि लेय नीमका फल इत्यादिक अनेक फल हैं केवडा केतकी इत्यादिक फूल हैं तिनका तो प्रगट दोष आगमतैं वा प्रत्यक्षतैं है ही परन्तु परमागमतैं वनस्पतीका ऐसा स्वरूप जानना—वनस्पती दोय प्रकार है एक प्रत्येक दूजी साधारण प्रत्येक तो एक देहमें एक जीव है अर देह एक जामैं जीव अनंतानन्त सो साधारणवनस्पती है यातैं साधारण भक्षण करै तामैं अनन्तानन्त जीवनिका घात जानि त्याग करना योग्य है। अब साधारण प्रत्येककी पहिचानके ऐसे लक्षण जानने—जिस वनस्पतीमैं लीक प्रगट नाहीं भई होय रेखसी नाहीं दीखी होय कली प्रगट नाहीं भई होय अर जामैं पैली प्रगट नाहीं भई होय अर जाका तोडता ही समभङ्ग हो जाय वा कांटे फूटे नाहीं तथा जाके माहीं तांतू तूतडो प्रगट नाहीं भयो होय सो साधारण वनस्पती है यामैं एक अणुमात्रमैं अनन्तानन्त जीव हैं अर जिस वनस्पतीमैं धार तथा कला तथा रेखा तथा पैली प्रगट दीखै सो साधारण नाहीं प्रत्येकवनस्पती है तथा जाकूं तोडिये तो टेढा वांका टूटै सूधा शस्त्रसे बनाय्या जैसा साफ बरोबर नाहीं टूटै तथा जाकै माहीं तार तूतड़ा प्रगट होगया होय सो प्रत्येक वनस्पती है परन्तु कोऊ वनस्पती पहली साधारण होय वाही एक अन्तमुहूर्तमैं प्रत्येक होजाय है कोऊ साधारण ही बनी रहै पान फूल बीज डाहली कूंपल इत्यादिक समस्तमैं साधारण प्रत्येककी याही पिछाण जानना। पत्रमैं समभङ्गादिक होय तो पत्र साधारण है अन्य समस्त वृक्ष साधारण नाहीं। बीज कूंपल समभङ्ग सहित होय रेखादिक प्रगट नाहीं होय तेते बीज कूंपल साधारण हैं अन्य साधारण नाहीं ऐसैं इस वनस्पतिमैं कोऊ साधारण मिल जाय कोऊ प्रत्येक होजाय इत्यादिक दोषरूप तथा वनस्पतिमैं अनेक त्रस जीवनिका संसर्ग

उत्पत्ति जानि जे जिनेन्द्रधर्म धारणकरि पापनितैं भयभीत हैं ते समस्त ही हरितकायका त्याग करो जिह्वा इन्द्रियकूं वश करो अर जिनका समस्त हरितकायके त्याग करनेका सामर्थ्य नाहीं है ते कंदमूलादिक अनन्तकायका तो यावज्जीवन त्याग करो। अर जे पंच उदंबरादिक प्रगट त्रस जीवनिकरि भय्या है ऐसा फल पुष्प शाक पत्रादिकनिकूं छांडि करिकैं त्रसघातकरिरहित दीखै ऐसी तरकारी फलादिक दश वीशकूं अपने परिणामनिके योग्य जानि नियम करो। इन सिवाय अट्ठाईस लाख कोड कुल वनस्पतीकाय हैं तिनका तो त्याग करि भार उतारो। हरितकाय प्रमाणीकका निश्चम करै ताकै कोड्यां अभक्ष टलै है तिसमैं पत्रजात भक्षण योग्य नाहीं। त्रसकी उत्पत्ति टालि अन्य बहुत घटाय नियम करो विना घटायां निरर्गल रह्यां असंयमीपना होय आस्रव होय है तातैं हरितकायका भक्षणमैं नियम व्रत करना योग्य है। बहुरि जिस भोजन ऊपरि ऊलण आजाय ऊपर फूलसा नीला हरा लाल आजाय सो भोजन मत करो यामैं अनन्त जीवनिका घात है यातैं जिस ऊपर फूलो आजाय सो दूरतैं ही त्यागो। बहुरि मोहके कारण प्रमादके उपजावनेवाले ज्ञानकूं बिगाड़ने वाले जिह्वा इन्द्रिय अर उपस्थइंद्रियकूं विकल करनेवाली ऐसी भांग तमाखू छोंतरा अमल हुक्का जरदा इत्यादिक अभक्ष्यनिका खावना पीवना जिनधर्मीनिकै त्यागने योग्य हैं। ये अमल पराधीन करै हैं इनमैं अफीमका भक्षण करनेवालेकूं एक घड़ी अफीम नाहीं होय तो जमीमैं बेहोश होय पड़ि जाय है वेदनाका अर्त्तपरिणामतैं पशुका ज्यों पग जमीमैं पड्या पड्या रगडै है निर्लज्ज हुआ याचना करै है नेत्रनितैं नीर पडै है और अफीम मिलि जाय तदि अमलमैं आया भूला हुआ ऊंगवो करै है जिह्वा इंद्रियकी लोलुपता बधि जा है स्वाध्याय धर्मश्रवण व्रत संयम उपवासादिकनिकूं दूरहीतैं त्यागै है बुद्धि धर्मतैं परांमुख होजाय है उत्तम आचार नष्ट होजाय है। बहुरि हुक्काकी महामलीनता दुर्गन्ध तमाखू और धुवांका योगतैं पानीमैं जीवनिकी उत्पत्ति होय है जहां हुक्काका जल पड़ै तहां छहकायके जीवनिका घात होय है। अर याकी दुर्गन्धतैं उत्तम आचारके धारक नजीक बैठ नाहीं सकै हैं अर बारम्बार घरघरमैं अग्नि हेरतो फिरै है घरमैं राखको ठीकरो धर्योही रहे है नीचकुलवाले नीचजननिके पीवने योग्य है।

हुक्का पीवनेवालेकूं गाडीवान घोड़ाका चाकर मीणा गूजर मुसलमान इत्यादिकनिकी संगति रुचै है उत्तम कुलवालेनिके योग्य नाहीं है अर हुक्का नाहीं मिलै तो नाई धोबी गूजर मीणा तेली तमोली मुसलमाननिकी चिलम याचना करि पीवै है अर नाहीं पीवै तो बड़ा रोग पैदा होजाय उदरमैं आफरो चढि जाय नींद्र बंद होजाय महान दुःख गले बांध्या है तातैं व्रत संयम उपवास स्वाध्यायादिक समस्त उत्तम कार्यनिकूं जलांजलि देहै। बहुरि जरदा महा अशुचि द्रव्य है याकूं मुखमैं राखि मलमूत्र मोचन करै है रास्तामैं मार्गमैं मलमूत्रादिक ऊपरि पगरखी पहरे जरदा खाय है मांसभक्षी मद्यपायीनीका तथा नीच जातिका घरका पानी मिल्या कत्था चूना खाय है नीच जानि अपना हस्तादिक विना धोये अंग खुजावते जरदा मसल देहै उच्छिष्टकी ग्लानि नाहीं करै है समस्त शय्या आसन खूणा बारी जाली समस्त जायगां उच्छिष्टसूं लिप्त करिदेय है पशु हू रस्तै चालता सोता मुख नाहीं चलावै है याकै पशुतैं हू अधिक विकलता है। मुखमैं महादुर्गंध रहै है जरदाका पीका जहां पडै तहां माछी माछर डांस मकड़ी कीडा कीडी वडा वडा त्रस ही मरि जाय तहां पंचस्थावरनिका घात होय ही। व्रत संयम उपवास स्वाध्याय जाप्य शुभ भावनाका नाश होय है जरदा खानेवालेनिकी बुद्धि आत्माके हितमैं प्रवर्तन नाहीं करै है संयमके योग्य नाहीं होय है तामैं दया क्षमा शील संतोष इंद्रियविजय परिणाम कदाचित् नाहीं प्रवर्तैं हैं अनेक पापाचार कपट छलमैं बुद्धि प्रवीण होजाय है। अनेक व्यसननिमैं प्रवृत्ति होजाय है जरदा खानेवालेके मांगनेकी लाज नाहीं रहै है। समस्त नीच जातिसूं भी मांगि करि खाय है। मद्य मांस खानेवाले जिसकाल मद्य पीवै हुक्का पीवै है उसका हस्ततैं दीया जरदा वीडी मांगि मांगि खाय है जरदा खानेवाले बहुत मनुष्यनिकूं नीकेकरि देखिए है एककै हू परमार्थमैं बुद्धि परलोक शुद्ध करनेकी बुद्धि नाहीं होय है इस जरदेके प्रभावकरि हीन आचारकी वृद्धि होय तदि परमार्थतैं बुद्धि भ्रष्ट होय लौकिक जनमैं व्यभिचारमैं लोभमैं प्रबल होय है सांचा धर्म याकै नाहीं होय है ऐसा आपका परिणाममैं आप अनुभव करो। अर परका जरदा खानेका स्वरूप प्रत्यक्ष देखि जरदा खानेका त्याग करो। अर जरदा एक दिन हू नाहीं खाय तो परिणाममैं उपाधि उदरमैं व्याधि

अनेक रोगव्याधि उपजावै है तातैं जरदा खाना महारोगकूं महाव्याधिकूं सूगलापनाकूं अङ्गीकार करना है बहुरि भांग पीवना हू अपना बडापना शोभितपना नष्ट कर देहै भंगेराका दरजा घटि जाय है भंगेराके जिह्वा इंद्रियकी लंपटता बधि जाय है। विकलीपना होइ जाय है प्रमादी हुवा ऐश करना बहुत निद्रा लेना बहुत घृत खांडका भोजन करना चाहै है। पांचो इंद्रियां विषयांकी लंपटताने प्राप्त होजाय हैं ज्ञान शिथिल होजाय है वैमी होजाय है भांग पीवनेवालेके मीठा भोजनमैं ऐसी लम्पटता होजाय है जो मीठा मिलै कृत कृत्य होजाय है आत्मज्ञान धर्मका ज्ञान कदाचित् नाहीं होय है बाह्यआचरण भ्रष्ट होय ही है अर भांगमैं हजारा त्रसजीव चालता दौड़ता उपजै है वर्षाऋतुमैं भांगमैं अपरिमाण त्रसजीव उपजै हैं भंगेरा भांग सोधै नाहीं घोटिकरि पीजाय है। ऐसैं हू अफीम खाना जरदा खाना हुक्का पीवना भांग पीवना अर और हू छोंतरा पीवना तमाखू सूंघना ये देहके तो महारोग ही हैं अमल करनेवालेकी आकृति बिगडि जाय है धर्म बिगडि जाय आचार बिगडि जाय ऐसा नियम है। ये नसा सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रका हू महाघातक है ये अमल अनर्थदंडनिमैं हू हैं अर व्यसननिमैं हू हैं यातैं मनुष्य जन्म अर जिनधर्म उत्तम कुलादिक पायाकूं सफल किया चाहो हो तो अमल नसा करनेका त्याग ही करो।

बहुरि रात्रिके अवसरमैं भोजन करना त्यागने योग्य ही है रात्रिभोजन करै ताकै यत्नाचार तो रहै ही नाहीं अर जीवनकी हिंसा होय ही। रात्रिविषै कीडी मांछर मांखी मकडी कसारी अनेक जोव आय पडै हैं अर दीपक जोय भोजन करै तो दीपकके संयोगतैं दूरदूरके जीव दीपककने शीघ्र आय भोजनमैं पडै हैं। अर रात्रिभोजन जिनधर्मी होय करै तो आगांने मार्ग भ्रष्ट होजाय अर रात्रिमैं चूल्हा चाकी परीडाका आरंभ करना मेलना धोवना मांजना ये घोरकर्म प्रगट होजांय तदि महान हिंसा अर महान दुःख प्रगट होजाय तदि घोर आरंभीके जिनधर्मका लेश हू नाहीं रहै है। बहुरि कोऊ कहै जो आरंभ तो नाहीं करै सीधा भोजन लाडू पेडा पूडी पूवा बरफी दुग्धादिक भक्षण करनेमैं रात्रि आरम्भ नाहीं भया ताकूं ऐसा समझना जो दिवसकूं छांड रात्रि भोजन करै ताकै तीव्ररागरूप महान हिंसा होय है जैसैं अन्नके ग्रासका

अनुराग समान नाहीं होय है तैसैं रात्रि भोजनका अनुराग है सो दिनके भोजनका अनुरागके समान नाहीं है। दिवसमैं ही भोजन बहुत है रात्रिदिवस दोऊनिमैं भोजन करै ताके ढोर समान संवररहित प्रवृत्ति रही तथा रात्रिभोजन करनेवालेके व्रत-तप नाहीं होय है ऐसा विशेष जानना जो अनादिकालतैं विदेहनिमैं एकबार वा दोयबार ही भोजन है रात्रिमैं कदाचित हू भोजन नाहीं जो रात्रि भोजन करै तो चूल्हा चाकी बुवारी जलादिकका समस्त आरम्भ रात्रिमैं होजाय तदि भोजन करनेमैं तरकारी बनावनेमैं तथा पुरुषनिके भोजन करनेमैं स्त्रीनिके कुटुंब सेवकादिकनिके भोजन करनेमैं धोयबेमैं बुहारिवैमैं मांजनेमैं दोय पहर रात्रि व्यतीत हो जाय है अनेक,जीवनिका संहार होजाय समस्त यत्नाचारका अभाव होय जाय अर कीडा कीडी ईली कसारी मकडी इत्यादिक वडे वडे जीवनिका भोजनमैं पतन तथा ईंधनमैं चूल्हामैं तरकारीमैं जलमैं पात्र-निमैं पतन होय है अर दीपकादिक तथा चूल्हाका निमित्तकरि माखी माछर डांस पतंगादिक अनेक जीव-निका नितप्रति होम होजाय अर दिनमैं भी आरम्भ अर रात्रिमैं हू घोर आरम्भ करि समस्त कुटुंबजन-निके महा दुःख पैदा होजाय। रात्रिमैं घोर धंधातैं समता नाहीं आसके तामैं धर्मसेवन तथा शास्त्रका पठन श्रवण तत्वार्थकी चर्चा सामायिक जाप्य शुभध्यानका तो अवसर हो रात्रिभोजन करनेवालेके नाहीं रहै है। यातैं जिनेंद्रधर्मके धारक रात्रिभोजन कदाचित् हू नाहीं करै हैं ऐसी सनातनरीति अब ताईं चली आवै है अर जिनधर्मी रात्रिभोजन नाहीं करै हैं ऐसैं कोट्यां मनुष्यनिमैं प्रसिद्धता अर उज्वलता अर प्रभावना अर उच्चता अर भोजनकी शुद्धताकूं बिगाड कोऊ विषयनिकरि प्रमादी अन्ध भया रात्रिमैं दुग्ध कलाकंद पेड़ा खाय हैं तथा औषधि जलादिक पीवे हैं सो अपने उत्तम आचार धर्मनै अर कुल मर्यादानै अर जैनी-पनानै जलांजलि देय सन्मार्गतैं भ्रष्ट हुआ उन्मार्गी हैं, उनका मार्ग तो बाह्य अभ्यंतर भ्रष्ट है अर आगानै अधर्मकी परिपाटी चलावै हैं। बहुरि रात्रिका किया भोजन दिनमैंहू भक्षण करना योग्य नाहीं है। बहुरि मिथ्याधर्मके धारकनिकै मांसभक्षीनिकै संग बैठि भोजन मत करो। नीचजातिकेसूं मित्रता मति करो देव-ताके चढ्या भोजन मत भक्षण करो। दांतका चूढा रोमका वस्त्र कामली पहिर भोजन बनावै तो भक्षण

योग्य नाहीं मांसभक्षीनिके घरमें भोजन नाहीं करना नीचजातिके घरमैं भोजन नाहीं करना। बहुरि अत्तारनिका अर्क तथा माजूम तथा सरबत अन्य हू समस्त वस्तु भक्षण करना योग्य नाहीं। अत्तारके बिलायतका बणयां म्लेछनिके जलकर बनाया उच्छिष्ट अर्कनिकी भरी हुई बोतलां आवै हैं अर समस्त वस्तु अज्ञात हैं अर अर्कादिकनिमैं अनेक जलचर थलचर नभचर पंचेन्द्रियादिक जीवनिके मांसके कई अर्क हैं अर बहुत जातिकी मदिरा बनाय अर्क संज्ञा करै हैं बहुत जीवनिके अण्डानिका रसकी बोतलां भरी हैं। अर मधु जो सहत सो समस्त सरबत मुरब्बा माजूम जवारसादिकनिमैं है अर अनेक जीवनिका अनेक अंग इंद्रियां जिव्हा कलेजा इत्यादिक शुष्क हुआ मांसनिकूं अत्तार बेचै है यहांके समस्त उत्तमकुलनिकी बुद्धि भ्रष्ट करनेकूं मुसलमान लोक अपनी उच्छिष्ट भक्षण करावनेकूं समस्त हिंदुस्थानके लोकनिकूं भ्रष्ट करनेकूं अत्तारनिकी दुकानां करवाई हैं करोड कषायनिकी दुकान समान एक अत्तारकी दुकान है। यहां इस देशमैं राजालोक हिंदूधर्मकी रक्षावास्ते अठारासै बाईसका संबत तांई तो अत्तारका वसना दुकान करना नाहीं होने दिया फिर कालके निमित्ततैं पापकी प्रवृत्ति फैली ही अब उत्तम कुलवाले हू इनका अर्कादिक खावने लगे हैं सो मुसलमाननिका झूंठन अर मांस मदिरादिक भक्षण करने लगे तदि ब्राह्मणपना महाजनपना वैश्यपना कहां रह्या सब कुल भ्रष्ट भये अर अभक्ष्य भक्षण करनेहीतैं सत्यार्थधर्मतैं रहित लोकनिकी बुद्धि हो गई है अर अत्तारनिकी औषधिहीतैं रोग मिटै है ऐसा नियम नाहीं। अत्तारनिका अर्क पीवा करि धर्मभ्रष्ट होय बहुत लोक मरते देखिये हैं जिनके दुर्गतिका बंध होगया है तिनके ही इनकी भ्रष्ट औषधिसे आराम होय है। जैसैं राजा अरबिन्दके दाहज्वरका अनेक इलाज किया तो हू दाहज्वर शांत नाहीं भया अर पाछैं अपना महलकी छाति ऊपर लड़ते विसमरानिका शरीरतैं रुधिरका बूंद अपने शरीर ऊपरि पड़ा तातैं शीतलता भई तदि पापी पुत्रनिसूं कही मोकूं रुधिरकी बावड़ी भराय द्यो जो मैं वामैं क्रीडा करि आतापरहित होहूं तब पुत्र पापतैं भयभीत होय लाखका रंगकी बावडी भराई तदि राजा बावडीकूं देखि बडा आनंद मानि बावडीमैं गर्क होय अर कपटके लोहीकी बावडी जानि पुत्र ऊपर क्रोधित होय पुत्रकूं मारनेकूं

छुरी लेय दौड्या सो मार्गमैं पडि अपना हाथकी छूरीतैं आप मरि नरक जाय पहुंच्या। ऐसैं ही जिनकी दुर्गति होनी है तिनकै अत्तारनिकी औषधिसूं आराम होय है तदि उनके पापरूप अत्तारी वस्तूनिमैं प्रवृत्ति होय है यातैं प्राणनिका नाश होते हू छह महीनेके बालकहूकूं अत्तारकी औषधि देना योग्य नाहीं। धर्म बिगड्यां पाछैं यो जिनधर्म अनंतकालमैं हू नाहीं मिलेगा तातैं जैनधर्मके धारकनिकूं हजारां खंड हो जाय तो हू अभक्ष्यभक्षण नाहीं करना बहुरि वजारकी दुकाननिका चून कदाचित् मति भक्षण करो वेचनेवालेनिकै समस्त चमारी खटीकनी और मुसलमानिनी धोबिन इत्यादिक तो पीसै हैं मुसलमान धोबी षलाईनिकै राजाका तबेला तोपखानानितैं चून मिलै सो वजारवाले मोल लेय लेवै हैं अर मनीनाका छह महीनाका पीस्याको प्रमाण नाहीं हजारां सुलसुल्यां पडि जाय हैं। घणा जणा बीधो नाज लेय मोदी लोग पिसावै हैं अर मुसलमान म्लेच्छ समस्त उसहीमैं हस्त घालि तुला लेजाय हैं मुसलमानांके नुकता विवाहमैं काम नाहीं आवै सो आधा ओसरण आधो फेर जाय हैं बहुरि सरायका दुकानदारांका पीतलका कांसीका लोहेका पात्र भोजन करनेकूं लेना योग्य नाहीं समस्त मांसभक्षी दुराचारीनिकूं भी वेही पात्र देहैं तातैं अपना आचारकी उज्वलता चाहै हैं सो तीन चार पात्र अपने निकट राखि विदेशमैं गमन करै हैं अर जहां जाय तहां दमडी बधती देय चून तराय भक्षण करै चूनकी नाहीं विधि मिलै तो खिचड़ी तथा घूघरी रांधि खाय। बहुरि वजारकी मिठाई लाडू बरफी घेवरादिक मत भक्षण करो। इनका चूनका घृतका जलका कुछ परिमाण नाहीं है। लोभी निंद्यकर्मीनिकै आचार नाहीं होय है बहुरि मैदाका खमीरा वाडिकरि सडावै हैं खट्टा पड़ते ही तामैं अनंतानंत जीव पडै हैं पाछैं कढाईमैं पकै हैं भुनै हैं सो जलेवी करै हैं साबूनी करै हैं सो भक्षण करने योग्य नाहीं तथा दहीमैं खांड बूरा मिलाय बहुतकालपर्यंत मति राखो दोय महूरततांईं खाना योग्य है अपना मित्र भाई पुत्रादिकके सामिल एक पात्रमैं भोजन करना योग्य नाहीं। मनुष्य कूकरा बिलाई इत्यादिकनिका उच्छिष्ट भोजन त्यागना योग्य है तथा गाय भैंस गधा इत्यादिक तिर्यंचनिका उच्छिष्ट जलादिकमैं स्नान मति करो पान तो कदाचित् हू मत करो तथा अन्नका खांडका लापसीका बना-

या मनुष्य तिर्यंचनिका आकार ताकूं मत भक्षण करो तथा देवी दिहाडी व्यंतरादिकनिकी पूजाके वास्तै संकल्प किया भोजन त्यागने योग्य है तथा मांसभक्षीनिका भोजनमैं भाजन मत भक्षण करो। भाजन मांसभक्षीको मांग्या मत द्यो। नाईका भाजनका जलसौं छौर मत करावो रजस्वलाका स्पर्शन किया पात्र भोजन योग्य नाहीं। बहुरि अनुपसेव्य जानि विकाररूप वस्त्र आभरण मत पहरो जो उत्तम कुलके योग्य नाहीं ऐसा नीचकुलनिके पहरनेके वेश्या तथा विटपुरुषनिके पहरनेके तथा म्लेच्छ मुसलमाननिके पहरनेके तथा स्वामी योगी फकीर भांडनिके पहरनेके वस्त्र आभरण परिणाम बिगाड़ै है अपने तथा परके विकार उपजावनेवाला तथा अपना पदस्थके योग्य लोकतैं अविरुद्ध ऐसा आभरण वस्त्र भेष धारना योग्य है वहुत करनेकरि कहा संक्षेपतैं जानना जो समस्त संसार परिभ्रमणके कारण पंचइंद्रियनिका विषयनिमैं लालसा है तिन इंद्रियनिमैं हू जिह्वा इंद्रिय अर उपस्थइंद्रिय दोय इंद्रियनिकी लालसा इसलोक परलोक दोऊनिकूं बिगाड़देनेवाली है इन दोय इन्द्रियनिके विषयकी लोलुपता जिनके अधिक है ते मनुष्यजन्ममैं हू पशुके समान हैं। पशुयोनिमैं हू इन दोऊ इंद्रियांका विषयकी चाहकरि परस्पर लडि लडि मरजाय है अर मनुष्यजन्ममैं हू कलह करना मारना मरना निर्लज्ज होना उच्छिष्ट खावना दीनता भाषण पुण्यदान लेना अभक्ष्य भक्षण करना इत्यादिक समस्त नीचकर्मनिमैं प्रवृत्ति रसना इंद्रियके विषयनिकी लालसातैं ही होय है। अरु देखहू भोगभूमिके अर देवलोकके नानाप्रकारके भोगनितैं हू तृप्तता नाहीं भई अब ये किंचित् जिह्वाका स्पर्शमात्रका स्वाद अति अल्पकालमैं हैं भोजन गिल्यां पाछैं नाहीं अर पहली नाहीं ऐसा तृष्णाका बधावनेवाला आहारमैं लुब्धताका त्याग करि समस्त इंद्रियांको विजय करि रस नीरसको कर्म जैसी विधि मिलाई तीसमैं संतोष धरि अभक्ष्यनिका त्याग करि देहका धारणमात्रके अर्थि भोजन करै है सो समस्त पापरहित होय देवलोकका पात्र होय है। अब यहां ऐसा जानना जो भोगोपभोगपरिमाण करै सो अपना परिणामनिकी दृढ़ता देखै जो मेरे ऐता राग घट्या है ऐता हाल नाहीं घट्या है अर सामर्थ्य देखै जो ऐसा योग्य बनैगा तो मेरा देहका तथा परिणामका इसकूं निर्वाह क-

रनेका सामर्थ्य है कि नाहीं है ऐसा विचार करि व्रत धारण करना अर देशकी रीति निर्वाह योग्य देखनी अर कालकूं अवसरकूं देखना अवस्था देखना अपना कोऊ सहायी है कि त्यागव्रतके बिगाडनेवाला है ऐसा हू विचार करना शरीरका रोगरहितपना (नीरोगपना) देखना भोजनादिक मिलनेका नाहीं मिलनेका संयोग देखना तथा भोजनादिक मेरे आधीन है कि पराधीन है ऐसे त्यागव्रततैं हमारे तथा स्त्री पुत्र स्वामी इत्यादिकनिके परिणाममैं संक्लेश होयगा कि संक्लेश नाहीं होयगा अपना स्वाधीनपना पराधीनपना जानि जैसैं परिणामनिकी उज्वलता सहित व्रतका निर्वाह होय तैसैं नियमरूप त्याग करो तथा यम कहिये यावज्जीव त्याग करो। केतेक तो यावज्जीवन ही त्यागने योग्य हैं-जामैं प्रगट त्रसनिका घात होय तथा अनंत जीवनिका घात होय अपने कुलमैं सेवने योग्य नाहीं होय तथा मद करनेवाला होय तथा मांस मद्य माखन मदिरा अचार महा विकृति अर रात्रिविषै भोजन द्यूतक्रीड़ादिक सप्तव्यसन विना दिया परधनका ग्रहण अर त्रसहिंसा अर स्थूल असत्य अन्यायका परिग्रह विनाछान्या जल अनर्थदंड ये तो यावज्जीवन ही त्यागने योग्य हैं। इनमैं नियम कहा करिये ये तो महा अनीति हैं इनके त्याग करनेमैं शरीर ऊपरि कुछ क्लेश भार दुःख नाहीं आवै है अपयश नाहीं होय है इनका त्यागमैं धन चाहिये नाहीं बल चाहिये नाहीं स्वामीका तथा स्त्रीका पुत्र कुटम्बादिकनिका सहाय चाहिये नाहीं किसीकूं पूछनेका वाकिफ करनेका हू काम नाहीं अपने परिणामके ही आधीन है कोऊ प्रकार इनका त्यागमैं शीत उष्ण क्षुधा तृषादिककी बाधा पीड़ा भोगना पड़ै नाहीं स्वाधीन है परिणामनिमैं देहमैं सुख करनेवाला है यातैं दुर्लभ सामग्री पाय भोगोपभोगका परिमाण करना श्रेष्ठ है। बहुरि कदाचित् प्रबलकर्मके उदयतैं यो मनुष्य कुदेशमैं पराधीनतामैं जाय पडै तथा प्रबल रोगतैं पराधीन होजाय तथा प्रबल जराके आवनेतैं उठने बैठने चालनेकी सामर्थ्य घटि जाय तथा कोऊ स्त्री पुत्रादिक सहायी नाहीं होय तथा नेत्रनिकरि अंध होजाय बधिर होजाय तथा लंबा रोग आजाय तथा बंदाखानामैं दुष्ट म्लेच्छादिक अपना भोजन जलादिक बिगाड़ि दे तथा जबरीतैं समस्तके सामिल बैठाय खान पान करावै ऐसा उपद्रव आजाय तो तहां अंतरंगमैं तो व्रतसंयमकूं छांडै नाहीं बाहिर श्रीपंचनमोकार मंत्रको

ध्यान करिही शुद्ध है क्योंकि बाह्यदेहादिक पवित्र हो हू वा अपवित्र होहू मलमूत्र रुधिरादिक करि लिप्त हो हू समस्त कुत्सित ग्लानियोग्य अवस्थाकूं प्राप्त हुआ जो पुरुष परमात्माकूं स्मरण करै है सो बाह्यहू पवित्र है अर अभ्यन्तर हू पवित्र है जातैं देह तो सप्तधातुमय मलमूत्रादिकी भरी हुई अर रोगनिका स्थान है एक क्षणमैं समस्त शरीरमैं कोढ झरने लगि जाय है हजारां फोडा फुनसी गुमडी लोहू राध स्रवणे लगि जाय मलमूत्र अबुद्धिपूर्वक स्रवणे लगि जाय है ऐसा अवसरमैं बाह्य व्यवहार शुद्धता कैसैं होय अर निर्धन एकाकीका सहायक कौन होय ? तहां धर्मात्मा पुरुष अशुभ कर्मका उदयमैं ग्लानि त्याग करके धीरता धारण करि आर्तपरिणाम करि संक्लेश नाहीं करै हैं अशुभकर्मके उदयकूं निर्जरा मानता अंतरंग वीतरागताकरि संसार देह भोगनिका स्वरूप चिंतवन करता बारह भावना भावता कर्मके उदयतैं अपना आत्मस्वरूपकूं भिन्न ज्ञाता दृष्टा शुद्ध चितवन करता वीतरागताकरि ही राग द्वेष हर्ष विषाद ग्लानि भय लोभ ममतारूप आत्माके मलकूं धोय आपकूं शुद्ध मानै है ताकै समस्त शुद्धता होय हैं। अब भोगोपभोगपरिमाण व्रतकै दोय प्रकारता कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

नियमो यमश्च विहितो द्वेधा भोगोपभोगसंहारात्। नियमः परिमितकालो यावज्जीवं यमो ध्रियते ॥ ८६ ॥

अर्थ--भगवान है सो भोग अर उपभोगका घटावनेतैं नियम अर यम ऐसैं दोय प्रकार भोगोपभोग परिमाण व्रत कह्या है। तिनमैं कालका परिमाणकरि त्याग करना सो नियम कह्या है अर इस देहमैं जीवन है तितने तक तो त्याग करि रहना सो यम कह्या है। भावार्थ–जो एकवार भोगनेमैं आवैं ऐसे आहारादिक तो भोग हैं अर जे बारंबार भोगनमैं आवैं ऐसे वस्त्र आभरणादिक हैं ते उपभोग हैं। तिन भोग उपभोगनिका परिमाण यम नियम करि दोय प्रकार हैं तिनमैं जिस भोग उपभोगका एक मुहूर्त्त तथा दोय मुहूर्त्त तथा पहर तथा दोय पहर एक दिवस दोय दिवस पांच दिन पंद्रह दिन एक मास दोय मास चार मास छह मास एक वर्ष दोय वर्ष इत्यादिक कालकी मर्यादा करि त्याग करै सो नियम नामका परिमाण है। जातैं जो आपके उपयोगी होय शुद्ध होय ताका त्यागमैं तो कालकी मर्यादाकरि ही नियमका

त्याग करना। अर जो आपके प्रयोजनरूप हू नाहीं होय तथा परिणामनिकूं बिगाडनेवाला होय अथवा सदोष होय ताकूं यावज्जीवन त्याग करि यमनामा परिमाण करना योग्य है इस भोगोपभोग परिमाणतैं अनेक पापके आश्रव रुक जाय हैं। इंद्रियां वशीभूत हो जाय हैं राग अतिमन्द होजाय है व्यवहार शुद्ध होजाय है। मन वश होजाय व्यवहार परमार्थ दोऊ उज्वल हो जाय तातैं भोगोपभोग परिमाण व्रत ही आत्माका हित है विरुद्ध भोग तो त्यागिये ही और अविरुद्ध भोग होय तिनमें हू अपनी शक्ति परिमाण देश काल देखि दिवस रात्रिके कालकी मर्यादा करो तामैं हू फिर दोय घडीकी चार घडीकी मर्यादा करि रहना यातैं कर्मनिकी बड़ी निर्जरा है। अब और हू भोगोपभोगनिमैं परिमाण कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

भोजनवाहनशयनस्नानपवित्रांगरागकुसुमेषु। ताम्बूलवसनभूषणमन्मथसंगीतगीतेषु ॥ ८७ ॥

अर्थ-भोगोपभोग परिमाणनाम व्रतमैं नित्य हू नियम करै आजका दिन मैं एक वार भोजन करूंगा वा दोय बार भोजन करूंगा वा तीन चार बार इत्यादिक भोजन करनेका परिमाण करै अथवा आजका दिन मैं एती जातिका अन्न तथा एते रस एते व्यंजन भक्षण करूंगा अधिक प्रकार भक्षण नाहीं करूंगा ऐसैं भोजनका नियम करै। बहुरि वाहन जे हस्ती घोडा ऊंट बलध पालकी रथ बहली नाव जहाज इत्यादिक बाहन ऊपरि चढनेका नियम करै। बहुरि पलंग खाट इत्यादिकविषै शयनका नियम करै जो आज मैं पलंगादिकमैं शयन करूंगा वा भूमिमैं ही शयन करूंगा। बहुरि आज एक बार स्नान करूंगा वा दोय बार स्नान करूंगा वा स्नान नाहीं करूंगा इत्यादिक नियम करै। बहुरि पवित्र जो अंगराग कहिये चंदन केसर कर्पूरादिकके विलेपन करना वा नाहीं करना इनमैं नियम करै बहुरि पुष्प तथा पुष्पनिकी माला आभरणादिक धारण करनेमैं नियम करै। बहुरि तांबूल इलाची सुपारी लवंगादिक भक्षण करूंगा वा नाहीं करूंगा ऐसा नियम करै। बहुरि वस्त्रनिका नियम करै जो आज एते वस्त्र पहरूंगा अधिक नाहीं पहरूंगा ऐसैं वस्त्रनिमैं नियम करै। बहुरि आज एते ही आभरण पहरूंगा अधिक नाहीं ऐसैं आभरण पहरनेमैं नियम करै। बहुरि काम सेवनेका नियम करै। बहुरि नृत्य देखनेका नियम करै

बहुरि गीत गावनेका वा अन्य वेश्या कलावंतादिकतैं गवावनेका नियम करै। बहुरि और हू हरितकायके भक्षणमैं नियम करै। बहुरि षटरसके भक्षणमैं जल पीवनेमैं नियम करै। बहुरि सिंहासन कुरसी चौकी इत्यादिक आसनमैं बैठनेका नियम करै। इत्यादिक अपने योग्य हू भोग उपभोगनिमैं नित्य नियम करै है ताकै भोजनपनादिक करनेतैं हू निरंतर संवर होय है। अब नियमके अर्थि कालकी मर्यादा कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

अद्य दिवा रजनी वा पक्षो मासस्तथर्तुरयनं वा। इति कालपरिच्छित्या प्रत्याख्यानं भवेन्नियमः ॥ ६८ ॥

अर्थ—अद्य कहिये एक घड़ी मुहूर्त प्रहर अर दिवा कहिये दिवस तथा रात्रि पक्ष तथा एक मास तथा दोय मासका ऋतु अर अयन कहिये छह मास इत्यादिक कालका परिमाण करि त्याग करना सो नियम है। ऐसैं भोगोपभोगका परिमाण वर्णन किया। अब भोगोपभोगपरिमाण व्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

विषयविषतोऽनुपेक्षाऽनुस्मृतिरतिलौल्यमनिततृषानुभवौ:। भोगोपभोगपरिमाव्यतिक्रमाः पञ्च कथ्यन्ते ॥६६॥

अर्थ—ये भोगोपभोग व्रतके पांच अतीचार त्यागने योग्य हैं। विषय है ते संताप वधावै हैं अर विषयांका निमित्ततैं मरण होय है यातैं ये पंचइंद्रियनिके विषय विष हैं इनमैं परिणामका राग नाहीं घटना सो अनुपेक्षा नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि जे विषय पूर्वकालमैं भोगे थे तिनकूं बारंबार याद करया करै सो अनुस्मृति नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि विषय भोगै तिस कालमैं अतिगृद्धितातैं अति आसक्त हुआ भोगै सो अतिलौल्य नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि विषयनिकूं आगामी कालमैं भोगनेकी अति तृष्णा लगी रहै सो अतितृष्णा नाम अतीचार है ॥४॥ बहुरि विषयनिकूं नाहीं भोगै तिस कालमैं भी जानै भोगूं ही हूं ऐसा परिणाम सो अनुभव नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं भोगोपभोगपरिमाण व्रतके पांच अतीचार छांडि व्रतकूं शुद्ध करना ॥

इति श्रीस्वामीसमंतभद्राचार्यविरचित रत्नकरंडश्रावकाचारके मूल सूत्रनिकी देशभाषामय वचनिकाविषै तृतीय अधिकार समाप्त भया ॥३॥



अब च्यार शिक्षाव्रतनिके स्वरूपका निरूपण करनेकूं सूत्र कहै हैं—

देशावकाशिकं वा सामयिकं प्रोषधोपवासो वा । वैय्यावृत्त्यं शिक्षाव्रतानि चत्वारि शिष्टानि ॥ १०० ॥

अर्थ—देशावकाशिक ॥ १ ॥ सामायिक ॥ २ ॥ प्रोपधोपवास ॥ ३ ॥ वैयावृत्य ॥ ४ ॥ ऐसैं चार शिक्षाव्रत कहै हैं ।। भावार्थ—ए चार व्रत हैं ते गृहस्थपनामैं मुनिपनाकी शिक्षा करै हैं । अब देशावकाशिक व्रतके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

देशावकाशिकं स्यात्कालपरिच्छेदनेन देशस्य । प्रत्यहमणुव्रतानां प्रतिसंहारो विशालस्य ॥ १०१ ॥

अर्थ—अणुव्रतनिके धारक पुरुषनिकै दिन दिन प्रति विस्तीर्ण देशकूं कालकूं कालकी मर्यादा करि घटावना सो देशावकाशिक नाम शिक्षाव्रत है । भावार्थ—जो पूर्वकालमैं दश दिशानिमैं जावना मंगावना भेजना बुलावना इत्यादिकनिकी मर्यादा यावज्जीवन दिग्व्रतमैं करी थी सो तो बहुत थी तासैंतैं अब रोजीना क्षेत्रकूं घटाय कालकी मर्यादा करि व्रत करै सो देशावकाशिक व्रत है जैसैं पूर्वदिशामैं दोयस कोसका परिमाण यावज्जीवन किया सो तो दिग्व्रत है फिर यामैंतैं रोजीना मर्यादा रूपकरि राखै जो आज चार कोसहीका म्हारै परिमाण है वा इस नगरका ही परिमाण है वा आज अपने घर बाहिर नाहीं जाऊंगा सो देशावकाशिक व्रत है अब देशावकाशिक व्रतमैं क्षेत्रकी मर्यादा प्रगट करै हैं—

गृहहारिग्रामाणां क्षेत्रनदीदावयोजनानां च । देशावकाशिकस्य स्मरंति सीम्ना तपोवृद्धाः ॥ १०२ ॥

अर्थ— तपोवृद्ध जे गणधर देव हैं ते देशावकाशिक व्रत करनेकूं सीमा मर्यादा कहै हैं । गृहकूं कटककूं ग्रामकूं क्षेत्रकूं नदीकूं वनकूं योजनकूं देशावकाशिक व्रतमैं मर्यादा करै हैं। इनकूं उल्लंघनका हमारे इतने काल त्याग है ! अब देशावकाशिकमैं कालकी मर्यादा कहै हैं—

संवत्सरमृतुमयनं मासचतुर्मासपक्षमृक्षं च । देशावकाशिकस्य प्राहुः कालावधिं प्राज्ञाः ॥ १०३ ॥

अर्थ—प्रवीण पुरुष हैं ते एक वर्ष छह महीना दोय मास चार मास एक पक्ष एक नक्षत्र इस प्रकार देशावकाशिक व्रतके कालकी मर्यादा कहै हैं । अब देशावकाशिकका प्रभाव दिखावै हैं—

सीमान्तानां परतः स्थूलेतरपंचपापसंत्यागात्। देशावकाशिकेन च महाव्रतानि प्रसाध्यंते ॥ १०४ ॥

अर्थ—रोजीना जेता क्षेत्रका परिमाण किया ताके बारैं स्थूल अर सूक्ष्म जे पंच पाप तिनका त्यागतैं देशावकाशिक व्रत करकैं महाव्रतनिकूं सिद्ध करिये हैं। भावार्थ-मर्यादा करी तैं बारैं समस्त पंचपापनिका त्यागतैं महाव्रत तुल्य भया। अब देशावकाशिक व्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

प्रेषणशब्दानयनं रूपाभिव्यक्तिपुद्गलक्षेपौ। देशावकाशिकस्य व्यपदिश्यन्तेऽत्यया पञ्च ॥ १०५ ॥

अर्थ—आपके जेता क्षेत्रकी मर्यादा थी तिस बार प्रयोजनके अर्थि अपना सेवककूं वा मित्र पुत्रादिककूं कहै तुम जावो तथा या काम करदो ऐसैं कहना सो प्रेषण नाम अतीचार है ॥ १ ॥ वहुरि मर्यादाबाह्य क्षेत्रमैं तिष्ठतेनितैं वचनालाप करना तथा अन्य शब्दकी समस्या करि समझाय देना सो शब्द नाम अतीचार है ॥ २ ॥ वहुरि मर्यादाबाह्य क्षेत्रमैं कोऊकूं बुलावना वा वस्त्रादिक वांछित वस्तुकूं शब्द कहि मंगावना सो आनयन नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बाह्य क्षेत्रमैं तिष्ठतेनिकूं समस्या वास्ते अपनारूप दिखावना सो रूपाभिव्यक्ति नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ वहुरि मर्यादाके क्षेत्रके बाह्य क्षेत्रमैं वस्त्रादिक तथा कंकरी पाषाण काष्ठखंड आदिक फेंकि आपाकूं जितावना सो पुद्गलक्षेप नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं देशावकाशिकव्रतके पंच अतीचार त्यागने योग्य हैं ऐसैं देशावकाशिक व्रत कह करि अब सामायिकका स्वरूप कहै हैं—

असमयमुक्तमुक्तं पञ्चाघानामशेषभावेन। सर्वत्र च सामयिकाः सामयिकं नाम शंसन्ति ॥ १०६ ॥

अर्थ—सामायिक कहिये परम साम्यभावकूं प्राप्त भये ऐसे गणधर देव हैं ते सामायिक नाम करि ताकी प्रगट प्रशंसा करै हैं जो सर्वत्र कहिये मर्यादा करी तिस क्षेत्रमैं अर मर्यादाबाह्य क्षेत्रमैं हू समस्त मनवचनकाय कृतकारितअनुमोदनाकरि कालकी मर्यादारूप जो समस्त पंचपापनिका त्याग सो सामायिक है। भावार्थ—समस्त पंचपापनिका कालकी मर्यादाकरि समस्तपनाकरि त्याग सो सामायिक है। अब सामायिकमैं पंचपापनिका त्याग करि कैसैं तिष्ठै सो कहै हैं—

मूर्धरुहमुष्टिवासोबन्धं पर्यङ्कबन्धनं चापि । स्थानमुपवेशनं वा समयं जानन्ति समयज्ञाः ॥१०७॥

अर्थ—समयज्ञ जे परमागमके जाननेवाले हैं ते मूर्द्धरुह जे केश तिनका बंधन अर मुष्टिबंधन अर वस्त्रबंधन अर पर्यंकासनबंधन हू जैसैं होय तैसैं स्थान कहिये खडा तथा उपवेशन कहिये बैठा समय कहिये रागद्वेषादि रहित शुद्धात्मा जो है ताहि जानता रहै। भावार्थ। सामायिक करनेवाला कालकी मर्यादा परिणाम समस्त प्रकार पापनिका त्याग करि खडा होय करि तथा पर्यंकासन कर बैठै। अर पर्यङ्कासनमैं अपना वाम हस्ततल ऊपरि दक्षिण हस्ततलकूं स्थापन करै। अर अपना मस्तकका केश वा वस्त्र हलता होय तो परिणामके विक्षेप करै यातैं मस्तकके चोटी इत्यादिकके केश होय तिनकू बांधिले अर वस्त्र हू बिखरि रह्या होय ताकूं हू गांठ देय दांधि करि सामायिक खडा हुआ करै वा बैठा हुआ करै। अब सामायिकके योग्य स्थानकूं कहै हैं—

एकान्ते सामयिकं निर्व्याक्षेपे वनेषु वास्तुषु च। चैत्यालयेषु वापि च परिचेतव्यं प्रसन्नधिया ॥१०८॥

अर्थ—जिस स्थानमैं चित्तकूं विक्षेप करनेके कारण नाहीं होय अर बहुत असंयमीनका आवना जावना नाहीं होय अर अनेक लोकनिकरि वादविवादादिकका कोलाहल नाहीं होय स्त्रीनिका नपुंसकनिका आगमन प्रचार नाहीं होय अर जहां गीत नृत्य वादित्रादिकनिका प्रचार नजीक नाहीं होय अर तिर्यंचनिका अर पक्षीनिका संचार नाहीं होय और जहां बहुत शीतकी तथा उष्णताकी प्रचंड पवनकी वर्षाकी बाधा नाहीं होय तथा डांस माछर मक्षिका कीडा कीडी जवा मधुमक्षिका टांट्या सर्प बीछू कनसला इत्यादिक जीवनकृत बाधा नाहीं होय ऐसा विक्षेपरहित स्थान एकांत होय वा वन होय जीर्ण बागके मकान होय वा गृह होय वा चैत्यालय होय वा धर्मात्माजननिका प्रोषधोपवास करनेका स्थान होय ऐसा एकान्त विक्षेपरहित वन होहु वा जीर्ण बाग तथा सूना गृहादिक चैत्यालयादिकमैं प्रसन्नचित्त हुआ सामायिकमैं परिचय करो। अब सामायिककी और हू सामग्री कहिये है।

व्यापारवैमनस्याद्विनिवृत्यामन्तरात्मविनिवृत्त्या। सामयिकं बध्नीयादुपवासे चैकभुक्ते वा ॥ १०९ ॥

सामयिकं प्रतिदिवसं यथावदप्यनलसेन चेतव्यं । व्रतपञ्चकपरिपूरणकारणमवधानयुक्तेन ॥ ११० ॥

अर्थ—कायकी चेष्टारूप व्यापार तामैं विरक्तपनातैं बाह्य आरंभादिकतैं छूटि अर अन्तरात्मा जो मन ताकूं विकल्परहित करिकैं अर उपवासके दिनविषै अथवा एकभुक्तिके दिनविषै सामायिकरूप तिष्ठै तथा आलस्यरहित पुरुष दिवस २ प्रति नित्य रोजीना यथावत् सामायिक जो है ताहि एकाग्र चित्तकरि युक्त हुवा परिचय करने योग्य है वृद्धि करने योग्य है। कैसाक है सामायिक अहिंसादिक पंचव्रतनिकी परिपूर्णताका कारण है। भावार्थ—सामायिक करनेमैं उद्यमी श्रावक है सो समस्त आरंभादिक कायकी क्रियाकूं त्याग करि अर मनका विकल्प छांडि सामायिक करै तिनमैं कोऊ तो पर्वका निमित्त पाय उपवास जिस दिन करै तिसही दिनमैं सामायिक करै कोऊ एक ठाणाके दिन सामायिक करै कोऊ नित्यप्रति सामायिक करै कोऊ एक दिवसकी आदि अन्तमैं दोय बार नित्यप्रति सामायिक करै अथवा पूर्वाह्न मध्याह्न अपराह्न तीनकालविषै दोय दोय घड़ीका नियम करि साम्यभावकी आराधना करै सो एक स्थानमैं निश्चल पर्यंकासन तथा कायोत्सर्ग नाम निश्चल आसन धरि अङ्गउपंगनिका चलायमानपना छांडि काष्ठपाषाणकरि गढ्या प्रतिबिंबतुल्य अचल होय दशदिशनिकूं नाहीं अवलोकन करता अपने अङ्गउपंगनिकूं नाहीं देखता किसीतैं वार्ता नाहीं करता समस्त पंच इंद्रियनके विषयनितैं मनकूं रोकि समस्त चेतन अचेतन द्रव्यनिमैं राग द्वेष हर्ष विषाद वैर स्नेहादिकनिकूं छांडि सामायिकमैं तिष्ठै है सामायिकमैं तिष्ठता समस्त जीवनिमैं मैत्री धारण करता परम क्षमा धारण करै है मैं सर्व जीवनिमैं क्षमा धारण करूं हूं कोऊ जीव मेरा वैरी नाहीं है मेरा उपार्जन किया मेरा कर्म ही वैरी है मैं अज्ञानभावतैं क्रोधी अभिमानी लोभी होय करिकै विपरीत परिणामी हुआ जाकी प्रवृत्तिसूं मेरा अभिमानादिक पुष्ट नाहीं भया तिसकूं ही वैरी मान्या कोऊ मेरा स्तवन बड़ाई नाहीं करी मेरे कर्तव्यकी प्रशंसा नाहीं करी ताकूं वैरी समझ्या मेरा आदर सत्कार उठना स्थान देना इत्यादिकमैं मंद प्रवर्त्या ताकूं वैरी जान्या तथा कोऊ मेरा दोष छो ताकूं जनाया ताकूं वैरी जान्या तथा कोऊ मेरे आधीन नाहीं प्रवर्तन किया तथा मोकूं कुछ भोजन वस्त्र धनादिक

नाहीं दिया ताकूं बैरी मान्या सो ये समस्त मेरी कषायतें उपजी दुर्बुद्धितें अन्य जीवनिमें वैर बुद्धि नाहि छांडि क्षमा अङ्गीकार करूं हूं अर अन्य समस्त जीव हैं ते हू मेरा अज्ञानभाव विषयकषायांके आधीन जानि मेरे ऊपरि क्षमा करो मोकूं माफ करो ऐसैं वैर विरोधकी बुद्धिकूं छांडि मैं समस्तमैं समभाव धारि सामायिक अंगीकार करूं हूं जेते दोय घटिका परिमाणमें मनकरि वचनकरि कायकरि समस्त पंच इंद्रियनिका विषयनिकूं समस्त आरम्भ परिग्रहकूं त्यागकरि भगवान पंचपरमेष्ठीका स्मरण करता तिष्ठू हूं ऐसें सामायिकका अवसरमैं प्रतिज्ञाकरि पंचनमस्कारके अक्षरनिका ध्यान करता तथा पंच परमेष्ठीके गुणनिकूं स्मरण करता तथा जिनेन्द्रका प्रतिबिंबकूं चिंतवन करता सामायिकमें तिष्ठे तथा अपणा आत्माका ज्ञाता दृष्टा स्वभावकूं रागद्वेषतैं भिन्न अनुभव करता तिष्ठै तथा चार मंगल पद चार उत्तम पद चार शरण पदनिकूं चिंतवन करता तिष्ठै तथा द्वादशभावना षोड़शकारणभावना चिंतवन करे अर चतुर्विंशति तीर्थंकरनिका स्तवनमैं तथा एक तीर्थङ्करकी स्तुति तथा पंच परम गुरुनिका स्तवनमें इनके अर्थमें एकाग्रचित्त धारणकरि सामायिक करे तथा प्रतिक्रमण करनेकूं समस्त दिवसमें किये दोषनिकूं दिनका अन्तमें चिंतवन करें अर समस्त रात्रिमें जे दोष किये तिनकूं प्रभात समय चिंतवन करै जो यो मनुष्य जन्म अर तामें भगवान सर्वज्ञ वीतरागका उपदेश्या धर्म अनन्तकालमैं बहुत दुर्लभ प्राप्त भया है इस जन्मकी एक घडी हू धर्म विना व्यतीत मत होहू ऐसा विचार करे जो आजका दिनमें तथा रात्रिमें जिनदर्शन पूजन स्तवनमैं केता काल व्यतीत किया अर स्वाध्याय सत्संगति तत्वार्थनिकी चर्चा तथा पंच परमेष्ठीनिका जाप ध्यानमें तथा पात्रदानमैं केता काल व्यतीत किया अर बहुत प्रारम्भमैं अर इंद्रियनिके विषयनिमें अर व्यवहारादिक विकथामैं अर प्रमादमैं निद्रामैं काम सेवनमें भोजनपानादिकमें आरम्भादिकनिमें केता काल व्यतीत किया तथा मेरा मनवचनकायकी प्रवृत्ति तथा रागादिक संसारके कार्यनिमें अधिक भई कि परमार्थमें अधिक भई ऐसे समस्त दिवसका किया कर्तव्यकूं दिनका अन्तमें चिंतवन करे अर रात्रिका कियाकूं प्रभात समय चिंतवन करै जातैं जो पांच रुपयाकी पूंजी लेय वनिज करे है सो हू नित्य रोजाना अपना ठगावना

कुमावना टोटा नफाकी संभाल करै है तो पूर्व पुण्यके प्रभावतें इस जन्म लाया जो उत्तम मनुष्य जन्म वीतराग धर्म सतसंगति इन्द्रियपरिपूर्णतादिक धन तिसमैं व्यवहार करता ज्ञानी अपनी आत्माके हानि वृद्धि नाहीं संभालि करै कहा? जो टोटा नफाकी संभाल नाहीं करे तो परलोकतें ल्याया धर्मधनादिकनकूं नष्ट करि घोर तिर्यंच गतिमैं वा नारकीनिमैं निगोदनिमैं जाय नष्ट होजाय तातें धर्मरूप धनका वधावनेका अर्थि एक दिनमैं दोय वार तो संभाल करै ही अर जो कपायनिके वशतें जो अपने मनवचनकायकी दुष्ट प्रवृत्ति भई ताकूं वारंवार निंद्या करे हाय मैं दुष्ट चिंतवन किया तथा कायतें दुष्ट क्रिया करी हाय मैं वचनकी प्रवृत्ति वहुत निंदा करी यामैं महा अशुभकर्मका वंध किया धर्मकूं दूषित किया अपयश प्रगट किया अव इस निंद्यकर्मकूं चिंतवन करते मेरे परिणाम पश्चात्तापकरि दग्ध होय हैं अहो! मोहकर्म वडा वलवान है जो मैं मेरे दुष्ट परिणामनिकी दुष्टताकूं अर पापके करनेवाले अर दुर्गतिके ले जानेवाले हमारे निंद्य परिणामनिकूं नीकै मेरा घात करनेवाले जानू हूं अर प्रयोजनरहित जानू हूं अर अपनी जीवितव्यकूं वहुत अल्प जानू हूं अर परलोकमें मेरे किये कर्मका फलकूं मैं हो अकेला ही भोगूंगा ऐसा अच्छी तरह वारंवार परिणामामैं निश्चय करूं हूं चिंतऊ हूं चिंतवन करते करते हू मेरा परिणाम जो अन्य जीवनितैं वैर अर विषयनिमैं राग नाहीं घटे है सो यो प्रवल मोहकर्मकी महिमा है याहीतैं मोहकमका नाश करि विजयकू प्राप्त भये ऐसे पंच परमेष्ठीनिकूं स्मरण करूं हूं जो मोहकर्मके जीतनेवाले जिनेन्द्रका प्रभावकरि मेरे मोह कर्मतैं उपजे रागभाव द्वेषभाव कामादि विकारभाव तथा क्रोधभाव अभिमान भाव मायाचारके भाव लोभभाव मेरा नाशकूं प्राप्त होहू जैसी वीतरागता जिनेन्द्रभगवान पाई तैसी मेरे भी हो हू इस अभिप्रायतैं मैं कायतैं ममत्व छांडि पंचपरमेष्ठीका ध्यान सहित कायोत्सर्ग करूं हूं तथा अज्ञानभावतैं जो पूर्वकालमैं पृथ्वीकायका खोदना कुचरना कूटना इत्यादिक करि घात किया होय तथा अवगाहनेकरि विलोवनकरि छिडकनेकरि स्नानादिककरि जलकायका जीवांकी विराधना करि तथा दावना बुझावना कसेरना कूटना इत्यादिककरि अग्निकायके जीवनिको बिराधना करी तथा वीजणां इत्यादिककरि पवनकायका जीवांकी विराधना

करी तथा जड कंद मूल छाल कूपल पत्र फूल फल डाहला डाहली सीव तृण घास वेल गुल्म वृक्षादिकनि-का तोडना छेदना वनारना उपाडना चबाना रांधना बांटना इत्यादिककरि वनस्पतिकायकी विराधना करी तिनतैं उत्पन्न भया पापकर्म तिनका नाश परमेष्ठीके जाप्यके प्रभावतें मेरे हो हू अर परमेष्ठीके ध्यानका प्रभावतें अब मेरा परिणाम छह कायनिके जीवनिकी घाततें पराङ्मुख हो हू संयमभावकी प्राप्त हो हू। बहुरि जो मेरे गमनमें आगमनमें उठनेमें पसारनेमें संकोचनेमें भोजनमें पानीमें आरंभमें उठावनेमें मेलनेमें तथा चाकी चूल्हा ओखली बुहारी जलका परीडा अर सेवा कृषी विद्या वाणिज्य लिखना शिल्पकर्म जीविकामें तथा गाडी घोड़ा इत्यादिक वाहननिमें प्रवर्तन करि जो मेरी यत्नाचाररहित प्रवृत्ति ताकरि जो द्विइंद्रिय त्रिइंद्रिय चतुरिन्द्रिय पंचेंद्रिय जीवनिकी विराधना भई होय सो मिथ्या हो हू। मैं बुरी करी ये आरंभादिक भला नाहीं संसारमें डबोनेवाले हैं नरक देनेवाले हैं इन आरंभविषय कषायनिकरि ही यो जीव एकेन्द्रियादिक तिर्यंचनिमें अनन्तानन्तकाल क्षुधा तृषा मारन ताडना लादन बंधन चालन छेदन फाडन चीरन चाबन इत्यादिक घोर दुःख भोगता ते हिंसातें उपजाया कर्मको नाशके अर्थि अर आगाने हिंसारूप परिणामका अ-भावके अर्थि मैं पंच नमस्कार पदका शरण ग्रहण करूं हूं। बहुरि अज्ञान भावतें व प्रमादतें जो मैं असत्य वचन कह्या तथा गाली दीनी तथा भंडवचन कह्या तथा मर्मछेद करनेवाले कर्कश वचन व कठोर कह्या तथा किसी कूं चोरीका कलंक लगाया किसीकूं कुशीलका कलंक लगाया तथा धर्मात्मा ज्ञानी तपस्वी शीलवंतनिकूं दोष लगाया तथा धर्मात्मानिकी निंदा करी तथा सांचे देवधर्मगुरुकी निंदा करी तथा मिथ्याधर्मकी पोषणा करी हिं-साकी प्रवृत्तिका उपदेश किया तथा मिथ्याधर्मकी प्ररूपणा करी तथा स्त्रीनिकी कथा राजकथा भोजनकथा दे-शकथा इत्यादिक घोर पापनिमें मेरा वचन प्रवर्त्या ताका अब पश्चात्ताप करूं हूं। मैं घोर कर्मका बंध किया जाका फल नरकनिके दुःख तथा तिर्यंचगतिनिके घोर दुःख अनंतकाल भोगने हैं अर अनंतकाल गूंगा बहिरा आंधा नीच जाति नीच कुलमें महा दारिद्रसहित उपजावना है यातें अब दुष्ट वचनके बोलनेकरि उपजाया पापकर्मका नाशके अर्थि अर अब आगाने मेरे दुष्ट वचनमें प्रवृत्ति कदाचित मत होहु इस वास्ते मैं पंचनमस्कारपदका

शरण ग्रहण करूं हूं बहुरि अज्ञानभावतैं वा प्रमादतैं पूर्वकालमैं जो मैं परका विनादिया धन गिरया पड्या भूल्याग्रहण करनेमैं परिणाम किया कपटछलतैं ठग्या तथा जबर होय परका धन राखि मेल्या नाहीं दिया तो बहुत संक्लेश आपकै अर अन्यकै उपजाय दिया तातैं घोर पाप उपजाया ताका फल नरक तिर्यञ्चादि गतिनिमैं परिभ्रमण अनंतकालपर्यन्त दरिद्रादिक घोर दुःख होना है यातैं चोरीकरि उपजाया जो पाप कम ताका नाशके अर्थि अर आगानै मेरा पराया धन विना दिया ग्रहण करनेमैं परिणाम कदाचित मत होऊ इसवास्तै मैं पंचनमस्कारपदका शरण ग्रहण करूं हूं बहुरि परकी स्त्रीके रूप आभरण वस्त्र भाव विलासकूं राग भावतैं देखनेकी इच्छा करि तथा राग भावतैं देखी तथा संगमादिक किया तातैं उपार्जन किया घोर पाप जाका फल अनंतकालपर्यन्त नरकगतिनिमैं परिभ्रमण करि अनेक भवनिमैं हजारां रोगका पावना तथा दरिद्रादि दुःख भोगना तथा बहुत कालपर्यंत कामरूप अग्निकरि दग्ध भया असंख्यात भवनिमैं कामवेदनाकरि पीडित हुआ लडि लडि मर जाना है तातैं परस्त्रीकी बांछाकरि उपजाया पापकर्मका नाशके अर्थि अर आगामी कालमैं मेरा अन्यकी स्त्रीमैं अनुराग कदाचित् मत होऊ इसवास्ते मैं पंचपरमगुरुनिका पंचनमस्कारमंत्रका ध्यान करूं हूं। बहुरि मैं अज्ञानी परिग्रहमैं बड़ी ममता करि शरीरादिक पुद्गलकूं मेरा मानि यामैं ही आपा जान्या तथा रागादिकभाव मोहकर्मके उदयतैं भया तिनिकूं अपना भाव मानि परद्रव्यनिमैं बड़ी आसक्तता करि धनधान्य कुटुम्बादिककी बृद्धिकूं अपनी बृद्धि मानी इनकी हानिकूं अपनी हानि मानी अर अब हू जायगा हाट आजीविका स्त्री पुत्र धन धान्य आभरण वस्त्रादिक हजारां वस्तुरूप परिग्रहमैं हमारा हमारा ऐसो बुद्धिमैं विपरीतता लग रही है जो आपका ज्ञान परका ज्ञान पापपुण्यका ज्ञान परलोकका ज्ञान नष्ट होय रह्या है कण्ठगत प्राण हो जाय तो हू ममता नाहीं घटै है अर जगतमैं प्रत्यक्ष देखै है जो किसीकी लार परिग्रह गया नाहीं मेरी लार जायगा नाहीं तो हू दिन प्रति बधाया चाहै है यामैं मरण करूं तहां पर्यन्त किंचित् मत घट जावो इसप्रकार ही निरन्तर चिंतवन रहै है इस परिग्रहरूप दावाग्निकूं संतोषरूप जलकरि नाहीं बुझाया चाहै है समस्त पापनिका मूल एक परिग्रहमैं मूर्छा है मैं

अज्ञानी याहीका आरम्भमैं याहीमैं ममता धारण करनेकरि अनन्तकालमैं दुर्लभ ऐसा मनुष्य जन्म जिनधर्म पाया ताहि बिगाडि अनन्तभवनिमैं नरक तिर्यञ्च गतिनिके दुःखकूं अङ्गीकार किया ताका मरे बड़ा पश्चात्ताप है अब ऐसे घोर पापकर्मके नाश करनेका उपाय भगवान पंचपरमेष्ठीका शरण विना कोऊ दूजा है नाहीं अर आगामी कालहूमैं परिग्रहमैं विरक्तताका करानेवाला भगवान पंचपरमेष्ठी विना कोऊ है नाहीं यातैं मूर्छाका नाशके अर्थि परम संतोष उपजनेके अर्थि परिग्रहका त्यागके अर्थ पंचनमस्कारका ध्यानपूर्वक कायोत्सर्ग करूं हूं। अब सामायिकमैं तिष्ठता गृहस्थ कैसा है सो कहै हैं—

सामयिके सारम्भाः परिग्रहा नैव सन्ति सर्वेऽपि। चेलोपसृष्टमुनिरिव गृही तदा याति यतिभावं ॥ १११ ॥

अर्थ—गृहस्थ जे हैं तिनके सामायिकके अवसरविषै आरम्भकरि सहित समस्त ही परिग्रह नाहीं है यातैं सामायिक करता गृहस्थ जो है सो वस्त्रसहित मुनिकी ज्यों यतिका भावकूं प्राप्त होय है। भावार्थ—सामायिकके अवसरमैं समस्त आरम्भ अर समस्त परिग्रह नाहीं है परन्तु गृहस्थ है यातैं वस्त्र पहरै है तातैं वस्त्रविना अन्य प्रकार तो मुनितुल्य ही है मुनिकै नग्नपना होय है याकै वस्त्रधारण है एता ही अन्तर है तातैं मुनि नाहीं कह्या जाय है। बहुरि जो उपसर्ग परीषह आजाय तो मुनीश्वरनिकी ज्यों धीरता धारण करि सकै कायर नाहीं होय ऐसैं सूत्र कहै हैं—

शीतोष्णदंशमशकपरिषहमुपसर्गमपि च मौनधराः। सामयिकं प्रतिपन्ना अधिकुर्वीरन्नचलयोगाः ॥ ११२ ॥

अर्थ—सामायिककूं धारण करता गृहस्थ मौनकूं धारण करै है अर मनवचनकायकूं नाहीं चलायमान करता शीत उष्ण देशमशकादि परीषह अर चेतन अचेतनकृत उपसर्गनिकूं सहै है। भावार्थ—सामायिक करनेके अवसरमैं जो शीतका उष्णताका वर्षाका पवनका डांस मांछर दुष्टनिके दुर्वचन रोगपीडादिका परीषह आजाय तथा दुष्ट वैरीकरि किया तथा सिंह व्याघ्र सर्पादिक तथा अग्निजलादिकजनित उपसर्ग आजाय तो बडा धैर्य धारणकरि मनवचनकायकूं साम्यभावतैं नाहीं चलायमान करता मौनसहित समस्तकूं सहै है। अब सामायिक करता संसारका स्वरूपकूं अर मोक्षके स्वरूपकूं ऐसैं चिंतवन करै है—

अशरणमशुभमनित्यं दुःखमनात्मानमावसामि भवम् । मोक्षस्तद्विपरीतात्मेति ध्यायन्तु सामयिके ॥ ११३ ॥

अथ—सामायिक धारता गृहस्थ संसारकूं ऐसे चिंतवन करै यो चतुर्गतिमैं परिभ्रमणरूप संसार अशरण है यामैं अनंतानंत जन्म मरण करते अनंतकाल व्यतीत भयो अर समस्त पर्यायनिमैं क्षुधा तृषा रोग वियोग मारन ताड़न भोगतैं कहूं शरण नाहीं जो कोऊ कालमैं कोऊ क्षेत्रमैं कोऊ रक्षा करनेवाला नाहीं तातैं संसार अशरण है। बहुरि अशुभकर्मके बंधनकरि दुःखका देनेवाला अशुभदेहरूप पिंजरामैं फस्या हुआ अशुभ कषायनिरूप अशुभभावनिमैं लीन हुआ निरंतर अशुभका ही बंध करता अशुभहीकूं भोगै है तातैं यो संसार अशुभ है। बहुरि इस संसारमैं जीव अनंतानंतकाल परिभ्रमण करते करते कदाचित् सुक्षेत्रमैं वास उत्तमकुल इंद्रियपरिपूर्णता सुन्दररूप प्रबलबुद्धि जगतमैं पूज्यता मानता तथा राज्यसंपदा धनसंपदा सुन्दर मित्रनिका संगम आज्ञाकारी महाप्रवीण सुपुत्र मनोहर वल्लभाका संगम तथा पण्डितपना सूरपना बलवानपना आज्ञा ऐश्वर्यादिक मनोवांछित भोग नीरोग शरीरादिक कर्मके उदयकरि पा जाय तो क्षणमात्रमैं विजुलीवत् इंद्र धनुषवत् इन्द्रजालीका नगरवत् नियमत विलाय जाय हैं। फिर अनंतानंतकालमैं हू नाहीं प्राप्त होय हैं तातैं संसार अनित्य है अर समस्त कालमैं कर्मबंधनसहित देहपिंजरमैं फस्या अनंतानंत जन्ममरणादिकनिकरि सहित है अनंतकालहूमैं दुःखका अभाव नाहीं तातैं संसार दुःख ही है। बहुरि संसारपरिभ्रमणरूप मेरा आत्मा नाहीं तातैं संसार अनात्मा है ऐसैं सामायिकमैं तिष्ठता गृहस्थ चिंतवन करै है अहो परिभ्रमणरूप संसार है सो अशरण है अनित्य है दुःखरूप है अर मेरा स्वरूप नाहीं ऐसा संसारमैं मिथ्याज्ञानका प्रभावकरि मैं अनंतकालतैं वास करूं हूं। अब मोक्ष जो संसारतैं छूटना है सो मेरा आत्माकूं शरण है फिर अनंतानंत कालमैं हू संसारमैं आवनेकरि रहित है बहुरि शुभ है अनंत कल्याणरूप है बहुरि नित्य है अविनाशी है बहुरि अनंतानंतस्वरूप है जामैं अनंतज्ञानादि अर अनाकुलतारूप है अर मेरा आत्माका स्वरूप है पररूप नाहीं ऐसैं सामायिकमैं तिष्ठता गृहस्थ संसारका अर मोक्षका स्वरूप चिंतवन करै है। साम्यभाव सहित सामायिक दोय घडी मात्र हो जाय तो महान कर्मकी निर्जरा है सामायिककी

महिमा कहनेकूं इंद्र हू समर्थ नाहीं है सामायिकके प्रभावतैं अभव्य हू ग्रैवेयिकपर्यन्त उपजै हैं। सामायिक समान धर्म कोऊ हुयो न होसी यातैं सामायिक अंगीकार करना ही आत्माका हित है। अर जाकैं सामायिकादिकका पाठका ज्ञान नाहीं आवै नाहीं ते पंचनमस्कारमात्र ही एकाग्रतैं मनवचनकायकूं निश्चलकरि समस्त आरंभ कषायविषयनिका त्याग करि पंचनमस्कार मंत्रका ध्यान करता दोय घटिका पूर्ण करो अब सामायिकके पंच अतीचार कहैं हैं।

वाक्कायमानसानां दुःप्रणिधानान्यनादरास्मरणे। सामायिकस्यातिगमा व्यज्यन्ते पञ्च भावेन ॥ ११४ ॥

अर्थ—ए पांच सामायिकका भावनिकरि अतीचार हैं सामायिक करते वचनकी संसारसंबंधी प्रवृत्ति करना सो वचनदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि शरीरकी संयमरहित चलायमानपनाकी चेष्टा सो कायदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि मनमैं आर्तरौद्रादिक चिन्तवन करै सो मनोदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि सामायिककूं उत्साहरहित निरादरतैं करै सो अनादर नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि सामायिक करता देववंदनादिक पाठ भूलि जाय वा कायोत्सर्गादिक भूलि जाय सो अस्मरण नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं पंच अतीचारसहित सामायिकका वर्णन किया। अब प्रोषधोपवासकूं वर्णन करैं हैं—

पर्वण्यष्टम्यां च ज्ञातव्यः प्रोषधोपवासस्तु। चतुरभ्यवहार्याणां प्रत्याख्यानं सदिच्छाभि ॥ ११५ ॥

अर्थ—पर्वणि जो चतुर्दशी अर अष्टमीका दिवसरात्रिविषै चार प्रकारका आहारका जो सम्यक् इच्छा करि त्याग करना सो प्रोषधोपवास जानने योग्य है। एकमासविषै दोय अष्टमी अर दोय चतुर्दशी ये अनादितैं पर्व ही हैं इन पर्वनिमैं गृहस्थ व्रतसंयमसहित ही रहै जातैं धर्मात्मा संयमी हैं ते तो सदाकाल व्रती ही रहै हैं यातैं धर्मसैं अनुरागका धारक गृहस्थ एक महीनामैं चार दिन तो समस्त पापके आरंभ अर इंद्रियनिके विषयनिकूं नष्ट करि व्रतशीलसंयमसहित उपवास धारण करि चार प्रकारका आहारका त्याग करि संयम सहित तिष्ठै ताकै प्रोषधोपवास जानना। अब प्रोषधोपवासका विशेष कहै हैं। सप्तमीके

दिन वा त्रयोदशीके दिन मध्याह्नकाल पहली एक वार भोजनपानादिक करि समस्त आरंभ वणिज सेवा लेन देनका त्याग करि देहादिकमैं ममत्व त्यागि एकांत वस्तिका तथा जिनमंदिरमैं एकांतस्थान वा वनके चैत्यालय वा शून्य गृह मठादिक वा प्रोषधोपवास करनेका स्थानमैं जाय समस्त विषय कषायनिका त्याग करि मनवचनकायकी प्रवृत्तिकूं रोकि धर्मध्यान करिकैं वा स्वाध्याय करिकैं सप्तमी वा त्रयोदशीका अर्द्ध दिनकूं व्यतीत करै। पीछे संध्याकाल संबंधी देववंदनादिक करि रात्रिनै धर्मकथा वा जिनेन्द्रका स्तवनादिक करि रात्रि व्यतीत करै वा धर्मध्यान करता शोधित संथरामैं अल्पकाल प्रमाद टालि रात्रि व्यतीत करै अष्टमी चतुर्दशीका प्रातःकालमैं सामायिकादिक वंदना करि तथा प्राशुक द्रव्यनितैं पूजनकरि शास्त्रका अभ्यासकरि भावनाका चिन्तवन करि धर्मध्यानसहित अष्टमी चतुर्दशीका दिन अर समस्त रात्रिकूं व्यतीतकरि नवमी वा पूर्णिमाका प्रभातसंबंधी कर्म क्रिया करि पूजनादि वंदना करि उत्तम मध्यम जघन्य पात्रमैं कोऊ पात्रका लाभ होय ताकूं भोजन कराय आप पारनौ करै। ऐसैं षोडश प्रहर धर्मसहित व्यतीत करै ताकैं उत्कृष्ट प्रोषधोपवास होय है। तथा कार्तिकेयस्वामी कह्या है जो अष्टमी चतुर्दशीके दिन स्नान विलेपन आभूषण स्त्रीसंसर्ग पुष्प अतर फुलेल धूपदीपादिकनितैं त्याग जो ज्ञानी वीतरागतारूप आभरण करि भूषित हुआ दोऊ पर्वनिमैं सदा काल उपवास करै वा एक वार भोजन करै वा नीरस भोजन करै ताकै प्रोषधोपवास होय हैं तथा अमितगति श्रावकाचारमैं परवीका दिनमैं उपवास अनुपवास एकभुक्त ऐसैं तीन प्रकार कह्या है। तिनमैं चार प्रकार आहारका त्यागकूं उपवास कह्या अर एकवार जल ग्रहण करै ताकूं अनुपवास कह्या अर एक वार अन्न जल ग्रहण करता ताकूं एकभुक्त ऐसी संज्ञा है परंतु तात्पर्य ऐसा जानना जो अपनी शक्तिकूं नाहीं छिपाय करिकैं धर्ममैं लीन भया उपवास करै तथा आगैं प्रोषधप्रतिमा चतुर्थी कहसो तिसविषै तो षोड़शप्रहरका नियम जानना अर दूजी व्रतप्रतिमामैं यथाशक्ति व्रत तप संयम धारण करि परवीमैं धर्मध्यानसहित रहना ॥ अब उपवासमैं और हू वर्णन करै हैं—

पञ्चानां पापानामलंक्रियारम्भगन्धपुष्पाणां । स्नानाञ्जननस्यानामुपवासे परिहृतिं कुर्यात् ॥ ११६ ॥

अर्थ—उपवासके दिन हिंसादिक पंच पापनिका त्याग करि रहै अर अलंक्रिया कहिये आभरणादिक मंडनका त्याग करै अर गृहकार्यका आरंभ जीविकाका आरंभ छांडै अर सुगंधि केशर कपूरादिक तथा अतर फुलेलादिक गंधके ग्रहणका त्याग करै अर पुष्पनिका ग्रहण करनेका त्याग करै बहुरि स्नान करनेका नेत्रमैं अंजन अंजनेका अर नास लेनेका त्याग करे तथा और हू नृत्य वादित्रके वजावनेका देखनेका श्रवणका त्याग करै। तथा और हू पंच इंद्रियनिके भोगका त्याग करै जातैं उपवास करि है सो इंद्रियनिका मद मारनेकूं और इंद्रियनिका विषयांमैं गमन है ताके रोकनेकूं अर कामके मारनेकूं प्रमाद आलस्यादिकनिके रोकनेकूं नष्ट करनेकूं आरंभादिकतैं विरक्त होनेकूं परीषह सहनेमैं सामर्थ्य होनेकूं धर्मके मार्गतैं नाहीं चिगनेकूं जिह्वा इंद्रिय उपस्थइंद्रियके दण्ड देनेकूं उपवास करिये है अर अपनी प्रशंसा वा लाभ वा परलोकमैं राज्यसंपदादिक प्राप्त होनेकूं उपवास नाहीं करिये है। केवल विषयानुराग घटावनेकूं शक्तिबधावनेकूं उपवास करिये है। जातैं इंद्रियां खानपानादिकके नाना स्वादमैं निरंतर प्रवर्तैं हैं उपवास करनेतैं रसादिकके भोजनमैं लालसा नष्ट होजाय निद्राका विजय होजाय काम मार्या जाय तातैं उपवासका बडा प्रभाव जानि उपवास करिये है। अब उपवासका दिन कैसे व्यतीत करै सो कहै हैं—

धर्मामृतं सतृष्णः श्रवणाभ्यां पिबतु पाययेद्वान्यान्। ज्ञानध्यानपरो वा भवतूपवसन्नतन्द्रालुः ॥ ११७ ॥

अर्थ—उपवास करता गृहस्थ है सो निरालसी हुआ संता ज्ञानका अभ्यासमैं अर धर्मध्यानमैं तत्पर होहू अर अतितृष्णारूप हुआ धर्मरूप अमृतका पान कर्णइंद्रियकरि करि हू। अर अन्य भव्य जीवनिकूं धर्मरूप अमृतका पान करावो। भावार्थ—उपवासके दिन धर्मकथा श्रवण करो तथा अन्य धर्मात्मानिकूं धर्मश्रवण करावो ज्ञानका अभ्यास करि वा धर्मध्यानमैं लीनता करि ही उपवासका अवसर व्यतीत करो आलस्य निद्राकरि व्यतीत मत करो। तथा आरंभादिकमैं विकथामैं काल व्यतीत मत करो। उपवासका अर्थ कहै हैं—

चतुराहारविसर्जनमुपवासः प्रोषधः सकृद्भुक्तिः स प्रोषधोपवासो

अर्थ—असन पान खाद्य स्वाद्य ये चार प्रकारके आहार इनका त्याग सो उपवास है अर धारणाका दिन विषैं अर पारणाका दिन विषैं एकबार भोजन करना सो प्रोषध कहिये है ऐसैं षोड़श प्रहर भोजनादिक आरम्भ छांडि पाछैं भोजनादिक आरम्भ आचरण करै सो प्रोषधोपवास है ॥ अब उपवासके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

ग्रहणविसर्गास्तरणान्यदृष्टमृष्टान्यनादरास्मरणे । यत्प्रोषधोपवासे व्यतिलङ्घनपञ्चकं तदिदं ॥ ११९ ॥

अर्थ—जो प्रोषधोपवासके पंच अतीचार हैं ते ऐसैं जानने, नेत्रनितैं देख्यां बिना अर कोमल उपकरणतैं शुद्ध किये विना जो पूजाके तथा स्वाध्यायके उपकरण ग्रहण करना ॥ १ ॥ बहुरि देख्यां सोध्यां विना उपकरणनिका मेलना अथवा शरीरके हस्त पदादिक पसारना ॥ २ ॥ बहुरि देख्यां सोध्यां विना आस्तरण जो शयन करनेका उपकरण बिछावना बैठना ॥३॥ ऐसैं ए तीन अतीचार हैं। बहुरि उपवासमैं अनादर करना उत्साहित रहित करना सो अनादर नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि उपवासके दिन क्रिया पाठ करनेकूं भूल जाना सो अस्मरण नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं उपवासके पंच अतीचार कहे ते टालने योग्य हैं। अब वैयावृत्य नामा शिक्षाव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं इस व्रतकूं अतिथिसंविभाग नाम हू कहिये हैं—

दानं वैयावृत्यं धर्माय तपोधनाय गुणनिधये । अनपेक्षितोपचारोपक्रियमगृहाय विभवेन ॥ १२० ॥

अर्थ—यहां परमागममैं दानहीकूं वैयावृत्य कहिये है जाकै तपही धन है अर्थात् जो इच्छानिरोधादिक तपहीकूं अपना अविनाशी धन जानै है जातैं तप विना समस्त कर्मकलंकमलरहित आत्माका शुद्ध स्वभावरूप अविनाशी धन नाहीं पाइये तातैं रागादिक कषायमलका दग्ध करनेवाला ऐसा तपरूप धन ग्रहण किया अर जो संसारमैं नष्ट करनेवाला जड अचेतन विनाशीक सुवर्णादिकका त्याग किया ऐसा जो तपकी निधि जो परम वीतरागी दिगंबर यतिनकूं आप दातारके अर पात्रके धर्मप्रवृत्तिके अर्थि जो दान देना सो वीतरागी यतीनकी वैयावृत्य हैं, कैसे हैं दिगंबर यातैं सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्र इत्यादिक गुणनिका

निधान हैं बहुरि कैसे हैं यातैं नाहीं है अंतरंग बहिरंग परिग्रह जिनके ऐसैं मठ मकान उपासरा आश्रमादिकरहित एकाकी अथवा गुरुजनांकी चरणाकी लार कदे बनमें कदे पर्वतनिकी निर्जन गुफानिमैं कदे घोर वनमैं नदीनके तटनिमैं नियम रहित है नित्य विहार जिनका असंयमीनिका गृहस्थनिका संगमरहित आत्माकी विशुद्धता जो परम वीतरागताकूं साधता अर लौकिकजनकृत पूजा स्तवन प्रशंसादिककूं नाहीं चाहता परलोकमैं देवलोकादिकनिके भोगनिकूं तथा इंद्रपनाका अहिमिंद्रपनाका ऐश्वर्यकूं रागरूप अङ्गारेनिकरि तप्त महान् आताप उपजावनेवालो तृष्णाके बधावनेवाले जानि परम अतींद्रिय आकुलतारहित आत्मीक सुखकूं सुख जानता देहादिकमैं ममत्वरहित आत्मकार्य साधै है ऐसे साधुजनका वैयावृत्यका लाभ अनंतकालमें दुर्लभ है। कैसे हैं साधु यद्यपि इस देहतैं अत्यंत निर्ममत्व है तो हू देहकूं रत्नत्रयका सहकारो कारण जानि रस नीरस करडा नरम आहार देय रत्नत्रयका साधनकरि धर्मके अर्थि इस कृतघ्नदेहकी रक्षा करैं हैं जो अकालमैं देह नष्ट होय जायगा तो मरकरि देवादिक पर्यायमैं असंयमी जाय उपजूंगा तहां असंख्यातकालपर्यन्त असंयमी हुआ कर्मका बंध करूंगा तातैं जो आहारादिकका त्याग करि इस मनुष्यपनाका देहकूं मार्या तो कर्ममय कार्माण देह नाहीं मरैगा इस देहकूं मार्या तो नवीन और देह धारण करूंगा तातैं इन समस्त शरीरके उत्पन्न करनेका बीज जो कर्ममय कार्माणदेह है याके मारनेमैं यत्न करूं यातैं कषायनिकूं जीतता विषयनिका निग्रह करता छियालीस दोष टालि बत्तीस अन्तरायरहित चौदहमलका परिहार करिकैं आपके निमित्त नाहीं किया ऐसा शुद्ध आहारकी योग्यता मिल जाय तो अर्द्ध उदर तो भोजनतैं भरै चतुर्थभाग जलतैं भरै चतुर्थभाग ध्यान अध्ययन कायोत्सर्गादिकमैं सुखतैं प्रवृत्तिके अर्थि खाली राखै है। न्योत्या बुलाया जाय नाहीं याचना करै नाहीं हस्तादिककी समस्या करै नाहीं ऐसैं साधुनकूं जो आहारादिकका दान सो वैयावृत्य है। कैसाक है दान अनपेक्षितोपचारोपक्रिय जो प्रत्युपकार कहिये हमारा हू कुछ उपकार करैगा वा उपक्रिय कहिये हमकूं प्रसन्न होय विद्या मंत्र औषधादिक देगा तथा मुनीश्वरनिके अर्थि देनेतैं मेरी नगरमैं दातापनाकरि मान्यता हो जायगी वा राज्यमान्य हो जाऊंगा वा मेरे

घरमैं अटूट धन हो जायगा तातैं आगैं पंचाश्चर्य भये हैं मेरे हू लाभ होयगा ऐसा विकल्प अर बांछा नाहीं करता केवल रत्नत्रयका धारकनिकी भक्तिकरि आपकूं कृतार्थ मानि अपना मनवचनकायकूं तथा गृहचारा पायाकूं कृतार्थ मानता दान करै है आनंदसहित आपकूं कृतकृत्य मानै है सो वैयावृत्य है। वैयावृत्यका अन्य हू स्वरूप कहै हैं।

व्यापत्तिव्यपनोद पदयोः संवाहनं च गुणरागात्। वैयावृत्यं यावानुपग्रहोऽन्योऽपि संयमिनां ॥ १२१ ॥

अर्थ—संयमीनके जो व्यापत्तिव्यपनोद कहिये नाना प्रकारकी जे आपदा ताहि दूर करना अर संयमीनका चरणमर्द्दनादिक करना और हू जो संयमीनका गुणमैं अनुराग करि यावन्मात्र उपकार करना सो वैयावृत्य है। भावार्थ-साधुनिके ऊपरि काऊ देव मनुष्य तिर्यंच वा अचेतनकरि किया उपसर्ग आया होय तो अपनी शक्तिप्रमाण उपसर्ग दूर करै तथा चोर भील दुष्टादिक मार्गमैं खेदित किया होय अर परिणाम क्लेशित होय गया होय तिनकूं धैर्य धारण करावना तथा मार्गकरि खेदित भया होय ताका पादमर्दनादिक करना रोगी होय ताका संयम मलीन नाहीं होय तैसैं यत्नाचारतैं आसन शय्या वस्तिकाका सोधन यत्नाचारपूर्वक उठावना वैठावना शयन करावना मलमूत्रादिक कराय देना जो अबुद्धिपूर्वक मलमूत्रादिक अयोग्य स्थानमैं वा वस्तिकामैं भया होय तो यत्नतैं अविरुद्ध स्थानमैं क्षेपना तथा कफ नाशिका मलादिककूं पूंछना उठाय अविरुद्ध स्थानमैं क्षेपणा आहार औषधादिक संयमीके योग्य होय तिनकूं अवसरमैं देय वेदना दूर करना तथा कालके योग्य बाधारहित वस्तुका देना वेदना करि चलायमान चित्त हो गया होय तो उपदेश देय चित्तकूं थांभना धर्मकथा करना अनुकूल प्रवर्तना गुणनिका स्तवन करना ऐसैं संयमीनिका गुणनिमैं अनुराग करि जेता उपकार करना सो समस्त वैयावृत्य है। अब वैयावृत्यमैं प्रधान आहारदान है ताकूं कहिये हैं।

नवपुण्यैः प्रतिपत्तिः सप्तगुणसमाहितेन शुद्धेन। अपसूतारम्भाणामार्याणामिष्यते दानं ॥ १२२ ॥

अर्थ—सप्त गुणनिकरि सहित जो दातार है सो सून अर आरम्भ करि रहित जे आर्य कहिये सम्य-

ग्दर्शनके धारक मुनि तिनकूं नवपुण्य परिणामनिकरि जो प्रतिपत्ति कहिये गौरव आदर करि अंगीकार करना ताहि दान कहिये है। भावार्थ—दान करना सो तीन प्रकारके पात्रनिकूं करना तिनमैं जो चाकी चूल्हा ओखली बुहारी परींडा ये तो पंच सून अर द्रव्यका उपार्जनकूं आदि लेय समस्त आरंभ अर पंच सून करि रहित तो उत्तम पात्र दिगम्बर साधु है। अर व्रतनिका धारक श्रावक मध्यमपात्र है अर व्रतकरि रहित अर सम्यक्त्वकरि सहित जघन्य पात्र है तिनमैं उत्तमपात्रादिकनिकूं दानका देनेवाले दातारके सप्त गुण हैं। दान देय इस लोकसंबंधी विख्यातता लोकमान्यता राजमान्यता धनधान्यादिककी वृद्धि यशकीर्तनादिक इस लोकसंबंधी फल न चाहिये ॥ १ ॥ बहुरि दातार क्रोधकषायकूं नाहीं प्राप्त होय जो बहुत लेनेवाले हैं कौन कौनकूं देवैं ऐसा क्रोध नाहीं करै मुनि श्रावकादिकनिकूं दान देना ॥ २ ॥ बहुरि कपटकरि सहित दान नाहीं करै कहना और, करना और, लोकनिकूं भक्ति दिखावेमांहि संक्लेशित न होना ऐसा कपटकरि रहित दान करै ॥ ३ ॥ अन्य दातारतैं ईर्ष्यारहित होय दान करै जो इसने कहा दिया है मैं ऐसा दान करूं जो मेरा दानतैं इसका यश घटि जाय ऐसैं ईर्ष्या भावकरि दान नाहीं करै ॥ ४ ॥ अर दान देय विषाद करै नाहीं जो कहा करूं नैं समस्तमैं उच्चता राखूं हूं अर नाहीं दूं तो मेरी उच्चता घटि जाय ऐसैं त्रिषादी हुआ नाहीं देवै ॥ ५ ॥ बहुरि पात्रका संगम मिल जाय या निर्विघ्न दान हो जाय तिसका अपूर्व निधि पायेकासा आनंद मानना सो मुदितभाव जानना ॥६॥ दान देनेका मद अहंकार नाहीं करना सो निरहंकारता नाम गुण है॥७॥ ऐसैं पात्र दान करता दातार सप्तगुण सहित होय है। बहुरि पात्रकूं दान देवै सो मुनिश्रावकका जैसा पद होय तिस परिमाण नवधा भक्तिकरि देवै, नव प्रकार भक्तिके नाम-संग्रह ॥१॥ उच्चस्थान ॥ २ ॥ पादोदक ॥ ३ ॥ अर्चन ॥ ४ ॥ प्रणाम ॥ ५ ॥ मनःशुद्धि ॥ ६ ॥ वचनशुद्धि ॥ ७ ॥ कायशुद्धि ॥ ८ ॥ एषणाशुद्धि ॥ ९ ॥ तिनमैं मुनीश्वरनिकूं तथा क्षुल्लककूं तो तिष्ठ तिष्ठ तिष्ठ याका अर्थ खडा रहो खडा रहो खडा रहो ऐसैं तीन बार कहना जामैं अति पूज्यपनातैं अति अनुराग जाका चित्तमैं होयगा सो ही तीन बार आदरपूर्वक कहैगा अन्य हू श्रावकादिक

योग्यपात्र घर आवैं तो आइये पधारिए विराजिए इत्यादिक आदरके वचनका कहना सो संग्रह वा प्रतिग्रह है ॥ १ ॥ बहुरि उच्चस्थान देना ॥ २ ॥ अर प्राशुक प्रमाणकि जलसूं चरण धोवना ॥ ३ ॥ जैसा अवसर जैसा पात्र ताकै योग्य पूजन स्तवन पूज्यपनाके वचन कहना ॥ ४ ॥ अर मुनि वा श्रावकाकी योग्यता प्रमाण नमस्कार आदि करना ॥ ५ ॥ मनकी शुद्धता करनी ॥ ६ ॥ वचनकी शुद्धता करनी अयोग्य वचन नाहीं बोलना ॥ ७ ॥ कायशुद्धि यत्नाचार सहित चलना उठना इत्यादिक ॥ ८ ॥ अर भोजनशुद्धि पात्रके योग्य होय सो देना यो ऐषणा शुद्धि है ॥ ९ ॥ ऐसे जिन सूत्रके अनुसार पात्रके योग्य देशकालके योग्य आहार देना जातैं पात्रके गुणनिमैं हर्ष अनुराग विना देना निष्फल है अर जाकूं धर्म प्रिय होयगा ताकै धर्मात्मामैं अनुराग होयहीगा ऐसा नियम है । अर मुनीश्वरनिके जिनधर्मीकी नवधा भक्तिहीतैं परीक्षा होय है जाकै नवधाभक्ति नाहीं ताका हृदयमैं धर्म हू नाहीं धर्मरहितके मुनीश्वर भोजन हू नाहीं करै है । अन्य हू धर्मात्मा पात्र गृहस्थादिक हैं ते हू आदर विना लोभी होय धर्मका निरादर कराय दान वृत्तितैं भोजनादिक कदाचित नाहीं ग्रहण करै हैं जैनीपना ही दीनतारहित परम संतोष धारण करना है। अर दातार है सो ऐसा आहार औषधि शास्त्र वस्तिका वस्त्रादिक द्रव्यका दान करै जातैं रागद्वेष बधै नाहीं मद बधै नाहीं जातैं मोह काम आलस्य चिंता अरुंचन भय दुःख अभिमानका करनेवाला द्रव्यकूं देना योग्य नाहीं । जिसद्रव्यके देनेतैं स्वाध्याय ध्यान तप संतोषकी वृद्धि होय सो द्रव्य देने योग्य है । जातैं पात्रका दुःख मिटि जाय रोग नष्ट होजाय परिणामका संक्लेश नष्ट होजाय ऐसा द्रव्य देना योग्य है । इहां अन्य विशेष जानना, दानविषै पांच प्रकार जानना दाता ॥ १ ॥ देय ॥ २ ॥ पात्र ॥ ३ ॥ विधि ॥ ४ ॥ फल ५ दाता तो कैसाक होय सप्त गुणका धारक होय धर्ममैं तत्पर पात्रनिके गुणनिके सेवनमैं लीन भया पात्रकूं अंगीकार करै प्रमादरहित ज्ञानसहित शांतपरिणामी हुआ पात्रकी भक्तिमैं प्रवर्तै सो भक्तिक गुण दातारका है ॥ १ ॥ देनेमैं अति आसक्त हुआ पात्रका लाभकूं परम निधान लाभ मानै सो दातारका तुष्ट गुण है ॥२॥ साधुनिकूं दान होजाना इसलोक परलोकमैं परम कल्याण है ऐसा परिणाममैं गाढ सो दातारका श्रद्धा नाम गुण है ॥३॥ जो द्रव्य क्षेत्र काल

भावकूं सम्यक् विचार योग्य वस्तुका दान करै सो दातारका विज्ञान गुण है ॥ ४ ॥ दानकूं देय दानका प्रभावतैं संसारसंबंधी धन राज्य ऐश्वर्य विद्या मंत्र यश कीर्तनादि फलकूं नाहीं चाहै सो दातारका अलोलुप गुण है ॥ ५ ॥ जाकै अलप हू वित्त होय तो हू दान देनेमैं बडा उद्यम होय जाका दानकूं देखि धनाढ्य पुरुषनिके हू आश्चर्य उपजै सो दातारका सात्विकगुण है ॥६॥ कलुषताका महान कारण हू आजाय तो हू किसीके अर्थि रोष नाहीं करै सो दाताका क्षमा गुण है ॥७॥ और हू मुनि तथा श्रावक तथा अव्रत सम्यग्दृष्टी ये तीन प्रकारके पात्र तिनके अर्थि देनेवाले उत्तम दातारके अनेक गुण हैं। विनयवान होय विनयरहितका दान निष्फल है जातैं कुछ देनेकूं नाहीं होय तो विनय करना ही महादान है। सत्कार करना प्रिय वचन बोलना स्थान देना गुण स्तवन करना यो ही वडो दान है धर्ममैं प्रीति होय दानका अनुक्रमका ज्ञाता होय दानका कालकूं जाननेवाला होय जिनसूत्रका जाननेवाला होय भोगनिकी वांछारहित होय समस्त जीवनिका दयालु होय रागद्वेषकी मंदता जाकै होय सार असारका जाननेवाला होय समदर्शी होय इंद्रियनिकूं जीतनेवाला होय आया परीषहतैं कायरतारहित होय अदेखसका भावरहित होय स्वमत परमतका ज्ञाता होय प्रियवचनसहित होय व्रतीनिका पवित्र गुणकरि जाका चित्त व्याप्त होय लोकव्यवहार अर परमार्थ दोऊनिका जाननेवाला होय सम्यक्त्वादि गुणसहित होय अहंकारादि मदरहित होय वैयावृत्यमैं उद्यमी होय ऐसा उत्तम दातार प्रशंसायोग्य है। बहुरि जाका हृदयमैं निरन्तर ऐसो विचार रहै कि जो द्रव्य व्रतीनिकी सेवामैं लागै तथा साधर्मी जननिका उपकारसैं श्रावक जननिके आपदा दुःख निवारनमैं धर्मके बधावनेमैं धर्ममार्गके चलावनेमैं लागैगा सो धन मेरा है। अन्य संसारके कार्यनिमैं विषय भोगनिमैं कुटुंबके विषय कषाय साधनेमैं जो धन खर्च होय सो केवल बंधके करनेवाला संसारसमुद्रमैं डबोनेवाला है ये कुटुंबके धन खाय ते तो दायादार हैं धन बटावनेवाले हैं जवरीतैं धन लूटनेवाले हैं राग द्वेष क्रोधादि कषाय उपजाय व्रत संयमका घात करनेवाले हैं अर मोकूं पापमैं प्रेरणा करनेवाले हैं अर मेरे हू इनका संयोगतैं ऐसा अज्ञानरूप अंधकार छाया है जातैं धम अधम न्याय अन्याय यश अपयश कछू नाहीं दीखै है। स्त्री पुत्रादिकके विषय

साधनेकूं अन्य निर्बल तथा भोले अज्ञानी जीवनिका धनके ठगनेमैं लूट लेनेमैं परिणाम उद्यमी होय जाय हैं। इस कुटुंबके धन वस्त्र आभरण भोजनादिककरि तृप्ति करनेके अर्थि झूठमैं चोरीमैं निरन्तर परिणाम लग्या रहे हैं यातैं अब भगवान वीतरागका धर्मकूं पाय कुटुंबके अर्थि धनका उपार्जनके अर्थि अन्यायमैं अनीतिमैं तो नाहीं प्रवर्तन करना जो न्यायमार्गतैं धनका उपार्जन होइगा तिसमेंतैं मेरा कुटुंबका अर धर्मके अर्थि दानका विभाग करि जीवनका दिन व्यतीत करूंगा। धन यौवन जीतव्य क्षणभंगुर है अवश्य जायगा मरण अचानक आवेगा धन संपदा कुटुंबादि कोऊ लार नाहीं जायगा। मेरा दान शील तप भावनाकरि उपजाया पुण्य एक परलोकमैं मेरा सहायी होय लार जायगा जो इहां समस्त सामग्री मिली है सो पूर्वजन्ममैं जैसा दान दिया तैसी फली है। अब दानके देनेमैं धर्मात्मानिकी सेवामैं दुःखित बुभुक्षितनिके उपकारमैं प्रवर्तूंगा तो परलोकमैं समस्त सुखकूं प्राप्त हूंगा मोक्षमार्गकी सम्यग्ज्ञानादिक सामग्रीकूं प्राप्त हूंगा भोजन तो दानपूर्वक भक्षण करैं ताका भोजन करना सफल है अपना उदर भरना तो पशुके हू है। जाकै गृहमैं पात्रदान है ताका गृहाचार सफल हैं दान विना पशुनिके हू रहने योग्य बिल होय ही है। पक्षीनके घूंसला होय ही हैं। समुद्रमैं जल हू बहुत अर रत्न हू बहुत परन्तु जल तो महाक्षार अर रत्न मगर मच्छादिकन करि व्याप्त दोऊ उपकार विना निष्फल हैं। तैसैं धनवान कृपणका धन परके उपकार रहित है सो निष्फल है। जो गृहस्थ धन पाय साधर्मीनिका उपकारमैं दीन अनाथनिके सत्कारमैं नाहीं खरच किया सो यो धन याको नाहीं यो धन तो किसी अन्य पुण्यवानको है यो तो रखवालो भयो चोकसी करै है। धनका स्वामी तो अन्य ही पुण्यवान है। जो दान भोगमैं लगावेगा जाकै घरमैं पात्र आजाय अर देनेका सामग्री होय फिर नाहीं दिया जाय ताकैं हस्तमैं चिंतामणिरत्न नष्ट भया जान हू। जो धनकूं पाय दानमैं नाहीं प्रवर्तैं हैं सो मूढ़ अपने आत्माकूं ठगे हैं। धनकूं दानमैं लगावे है सो धनका स्वामी है जाका परिणाम दानका देनेमैं पात्रके हेरनेमैं निरंतर प्रवर्तै है तिनके दानका संयोग नाहीं होय तो हू निरन्तर दान ही है। जो द्रव्यकूं होते वा बहुत होते हू पात्रकूं पाय अतिभक्तितैं देवै है सो दातार है। भक्ति रहितके दातापना

नाहीं होय है।

बहुरि अवसर टालि अकालमैं दान देहै तिनकै अकालमें बोया बीजकी ज्यों निष्फल होय है अर जो अपात्रमैं दान देहै ताको दान खारडी भूमिमैं बोया बीजकी ज्यो निरर्थक है। अथवा दुष्टकूं दिया दान सर्पकूं पाया दुग्ध मिश्रीकी ज्यों दातारने संसारके घोर दुःख मरण आताप देनेकूं विष समान परिणमैं है बहुरि अपना भाग्यप्रमाण जेता धन मिलै तितनामैं दानका विभागमैं परिणाम करै ऐसा नाहीं विचारै जो मेरे पास अधिक धन होय तो अधिक दान करूं ऐसैं दान वास्ते अभिमानी होय धनकी बांछा मत करो। जेता आपके लाभांतरायका क्षयोपशमसूं लाभ भया तेतामैं संतोष करि अधिककी बांछा नाहीं करना सो ही वडा दान है। आपकूं जो न्यायपूर्वक द्रव्य प्राप्त भया तिसमैं जाका निरन्तर ऐसा परिणाम रहै जो मेरा धनमैंतैं कोऊके अर्थि आजाय तो कुमावना मेरा सफल है अपने गृहके खरचमैं लेनेमैं देनेमैं कोई मोतैं कुछ कुमाय ले तो ही हमारे बड़ा लाभ है ऐसा परिणाम दातारका रहै है अर जो दान देय सो हर्षित चित्त होय देवै। जो देवै भी अर क्रोधकरि देवै अपमानकरि देवै तिरस्कारके वचन कहि देवै रोषकरि देवै दूषण लगाय देवै तिस दातारके इसलोकमैं तो कलह अर अपयश होय है परलोकमैं अशुभकर्मका फलतैं दारिद्र अपमानादिक अनेक भवनिमैं प्राप्त होय है। अब देनेयोग्य नाहीं ऐसे खोटे दान कुदान ही हैं तिनिकूं देना योग्य नाहीं भूमिदान देना योग्य नाहीं जामैं हल फावडा खुरपादिकनिकरि भूमि विदारन करिये अर महान् हिंसा प्रवर्तै महा आरंभ पंचेन्द्रियादिक सर्प मूषा सूर हिरणादि बड़े बड़े जीवनिकूं धान्यादिक फलके बाधक मारियै हैं भूमिकी ममताकरि भाई भाई परस्पर मारि मरजाय तीव्ररागको कारण ऐसा भूमिदानतैं महाघोरपापका बंध जानि बहुरि महाहिंसाका कारण तातैं अनेक हिंसा होय ऐसा लोहका दान महा कुदान जानि छांडना। बहुरि सुवर्णदान त्यागना जाकरि पात्रका नाश होजाय मारया जाय सदाकाल भय उपजावे संयमका नाश करै तथा इस धनतैं राग द्वेष काम क्रोध लोभ भय मद आरंभादिककी प्रचुर उत्पत्ति होय आत्मस्वरूपका विस्मरण होजाय तातैं वीत-

राग धर्मका इच्छुक सुवर्णदानकूं पाप समझि त्यागना। बहुरि कोट्यां त्रसजीवनिका उत्पत्तिका कारण ऐसा तिलदान त्यागने योग्य है। बहुरि चाकी चूल्हा छाजला बुहारी मूसल फावडा दतीला अन्न तेल दीपक गुडादि रस इत्यादिक महापाप सामग्रीका भरया महा आरंभ मोहका उपजावनेवाला गृहका दानकूं धर्म मानि मिथ्याधर्मी दे हैं सो कुदान हैं बहुरि जिस गौकूं बांधनेमैं हरित तृणादिक चरनेमैं तथा जीया (जवा) बुग (वग) उपजनेमैं मलमैं मूत्रमैं असंख्यात जीव उपजैं सींगनतैं मारनेतैं खुर पूंछादिकनितैं जीवघात करनेवाला गौका दान सो कुदान है बहुरि संसारके बधावनेवाला महाबंधन करनेवाला जो कन्याका दान सो कुदान है इहां कहो जो कन्यादान तो गृहस्थकूं दिये विना कैसैं रह्या जाय सो ठीक है गृहस्थ है सो अपनी कन्याका विवाह योग्यकुलमैं उपज्या जो जिनधर्मी व्यवहारचातुर्यादिक वरके गुण देखि कन्या देवे है परंतु कन्यादानकूं धर्म तो श्रद्धान नाहीं करै जिनधर्मी तो कन्यादानकूं पाप ही श्रद्धान करै है जैसैं गृहचारका आरंभादिक अनेक पापका कारण है तैसैं कन्यादान हू पापका कारण है परंतु विषयनिका दंड है सो अंगीकार किया हो सरै। अन्यमतवाले तो कन्यादान देनेका बहुत बड़ा फल कहै हैं लक्षयज्ञ कियाका फल कहै हैं कोटि ब्राह्मणकूं भोजन करावनेतैं कोटि गऊनिका दान देनेतैं हू अधिक फल कहै हैं अन्यकी कन्याका विवाह कराय देनेका हू बड़ा धर्म कहै हैं सो जिनधर्ममैं तो याकूं संसारपरिभ्रमणका कारण कुदान कहै हैं। बहुरि और हू संसारसमुद्रमैं डबोवनेवाले मिथ्या दृष्टि लोभी विषयनिका लंपटनिकरि कह्या कुदान त्यागने योग्य है। सुवर्णकी गाय बनाय देवै हैं तिलकी गाय घृतकी गाय रूपाकी गाय बनाय देवे हैं अर लेनेवाला घृतकी गायकूं लापसीकी गायकूं तिलकी गायकूं खाय है सुवर्णरूपाकीकूं कटावै है गलावै है अर गायकी पूंछमैं तेतीसकोटि देवता अर अडसठ तीरथ कहै हैं तथा दासी दासका दान देहै रथदान देहै तथा संक्रांति मानि ग्रहण मानि व्यतीपातादि मानि दान देवे हैं ते समस्त मिथ्यात्वका प्रभाव है। बहुरि मृतककूं तृप्ति करनेके अर्थि ब्राह्मणादिकनिकूं भोजन करावै है देखहू ब्राह्मणनिके जीमनेतैं मृतककूं कैसैं पहुंचेगा दान तो पुत्र देवै अर पिता पापतैं छूटै, बहुत कालका मरया

हुआका हाड गंगामैं क्षेपणेतैं मृतकका मोक्ष होय। गयामैं जाय श्राद्ध करनेतैं इकबीस पीढीका उद्धार कहै हैं गयामैं पिंड देनेतैं दश पीढी पहली दश पाछली एक आप ऐसैं इकबीस पीढी संसारमैं कुगतिमैं पडी हुई निकस बैकुण्ठ वास करै हैं अगाऊ बेटा पोतानिका सन्तान चाहै जेता पाप करो गया श्राद्ध इकबीस पीढीमैं कोऊ एक हू पिण्डदान दिया तो सबकी मुक्ति होय जायगी तातैं कोऊ पापको भय मत करो। बहुरि जे श्राद्धमैं ब्राह्मणनिकूं मांसपिण्ड जिमावै हैं मांस करि देवतानिकूं तृप्ति करै हैं देवता दुर्गा भवानी जोवनिका राक्षसनिका तिर्यंचनिका रुधिर पावनेतैं बहुत तृप्ति होती मानै हैं देवीनिकै बकरा भैंसा काटि बलिदान करै हैं। पापी खोटा शास्त्र बनाय अपने मांसभक्षणके अर्थि महाघोर कर्मकरि नरकके मार्गकूं आप जाय है अन्यकूं नरक पहुंचावै हैं सो जिह्वाइन्द्रीका लोलुपी लोभी कौन घोरकर्म नाहीं करै ? वे पापी मनुष्यपनामैं भी ल्याली स्याल कागला कूकरा व्याघ्रकासा आचरण करै हैं जिनका ऐसे घोरपापके शास्त्र तिनके धर्ममैं अर म्लेच्छ धर्ममैं कुछ फरक नाहीं। ये अक्षर म्लेच्छनिके हैं वेदके अक्षरनितैं लोकनिके अज्ञान उपजाय शिकारमैं धर्म जनाया। जलचर थलचर नभचर जीवनिके मारनेमैं धर्म बताया जगतूकूं भ्रष्ट किया है अर करै हैं। अर जाका देवता तो मुंडमाला अर मांसभक्षक रुधिर पीवनेमैं अति लीन है तिनके सेवकनिके पापकी कहा कथा। तिन कुपात्रनिकूं दान देना सो महा दुःखका करनेवाला कुदान है। ऐसैं कुदानके बहुत भेद हैं कुदानके देनेतैं अर कुदानके लेनेतैं नरकतिर्यंचनिमैं बहुत जन्ममरणकरि निगोदमैं एकेन्द्रिय विकलत्रयमैं अनंतकाल पर्यंत असंख्यात परावर्तन करै है या जानि कुदान मत करो कुपात्रदान मत करो॥ अब यहां पहली सूत्रके अनुकूल दानका फल कहै हैं।

गृहकर्मणापि निचितं कर्म विमार्ष्टि खलु गृहविमुक्तानां। अतिथीनां प्रतिपूजा रुधिरमलं धावते वारि ॥ १२३ ॥

अर्थ—गृहरहित ऐसे अतिथि जे मुनि तिनको जो प्रतिपूजा कहिये दान सन्मानादिक उपासना है सो गृहस्थके षटकर्मकरि उपार्जन किया जो पापकर्मरूप मल ताहि शुद्ध करै है। जैसैं शरीर ऊपरि लग्या रुधिररूप मल तिनै जल धोवै है। भावार्थ—गृहस्थके नित्य ही आरम्भादिककरि निरन्तर पापका उपार्जन

होय है तिस पापकूं धोवनेकूं एक मुनिश्वरादिकनिकूं दिया दान ही समर्थ है जैसें रुधिर लग्या होय सो रुधिरतैं नाहीं धुवै है जलकरि धुवै है तैसें गृहचारके आरम्भतैं उपज्या पाप मल है सो गृहके त्यागी साधूनिके अर्थि दान देनेकरि धुवै है। अब दानका और हू प्रभाव कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

उच्चैर्गोत्रं प्रणतेर्भोगो दानादुपासनात्पूजा। भक्तेः सुन्दररूपं स्तवनात्कीर्तिस्तपोनिधिषु ॥ १२४ ॥

अर्थ—तपके निधान जे साम्यभावके धारक द्वाविंशति परोषहनिके सहनेवाले अपने देहमैं निर्ममत्व पंचइंद्रियनिके विषयनिमैं अत्यंत विरक्त अभिमान कषायादिरहित आत्मविशुद्धताके इच्छुक ऐसे उत्तम पात्र जो मुनि तिनके अर्थि नमस्कार प्रणत्ति करनेतैं उच्चगोत्र जो स्वर्गलोकमैं जन्म तथा स्वर्गतैं आय तीर्थङ्करपनामैं जन्म वा चक्रीपनामैं जन्मरूप उच्चगोत्रकूं तथा सिद्धनिकी सर्वोत्कृष्ट उच्चताकूं प्राप्त होय है अर उत्तमपात्रके दान देनेतैं भोगभूमिके भोग वा देवलोकके भोग भोगि राज्यादिकनिके भोग पाय अहमिंद्र लोकके भोग पाय तीर्थंकर चक्रीपना पाय निर्वाणके अनन्त सुखका भोगकूं पावै हैं। वहुरि साधुनिका उपासना जो सेवन ताकरि त्रैलोक्यमैं पूज्य केवली होय हैं वहुरि साधुनिकी भक्ति करनेतैं सुन्दररूप ताहि प्राप्त होय हैं। वहुरि साधुनिका स्तवन करनेतैं त्रैलोक्यव्यापिनी कीर्ति इन्द्रादिकनिकरि स्तवन कीर्तनकूं प्राप्त होय हैं। और हू दानके प्रभाव कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

क्षितिगतमिव वटवीजं पात्रगतं दानमल्पमपि काले। फलति च्छायाविभव बहुफलमिष्टं शरीरभृताम् ॥ १२५ ॥

अर्थ—अवसरविषै सत्पात्रविषै गया अल्प हू दान सुन्दर पृथ्वीमैं प्राप्त भया वड़का वीजकी ज्यों प्राणीनिके छाया जो माहात्म्य ऐश्वर्य अर विभव जे भोगोपभोगको संपदारूप वांछित वहुत फलकूं फलै है जातैं पात्रदानका अचिंत्य फल है पात्रदानके प्रभावतैं सम्यक्त्व ग्रहण होजाय है। वहुरि सम्यक्त्वरहित मिथ्यादृष्टि हू पात्रदानके प्रभावतैं उत्तम भोगभूमिविषै जाय उपजै है कैसाक है भोगभूमि जहां तीन पल्यका आयु तीन कोशका ऊंचा शरीर अमृतरूप समचतुरस्र संस्थान महाबल पराक्रमयुक्त मनुष्य होय है स्त्री पुरुषनिका युगल उपजै है तीन दिन गये कदाचित् किंचित् आहारकी इच्छा उपजै सो वदरीफल

प्रमाण आहार करनेकरि क्षुधाकी वेदनारहित होय है। दश जातिके कल्पवृक्षनितैं उपजे वांछित भोगनिकूं भोगै है। जहां शीत उष्णताकी वेदना नाहीं है जहां वर्षाका ताडनाका उपजना नाहीं दिन रात्रिका भेद नाहीं सदा उद्योतरूप अन्धकाररहित काल वर्तै है शीतल मन्द सुगन्ध पवन निरन्तर विचरै है जिस भूमिमैं रज पाषाण तृण कण्टक कर्दमादि नाहीं होय है स्फटिकमणि समान भूमिका है यावत् जीव रोग नाहीं शोक नाहीं जरा नाहीं क्लेश नाहीं जहां सेवक नाहीं स्वामी नाहीं स्वचक्रका भय नाहीं षटकर्मकरि जीवनोपाय करना नाहीं। दश प्रकारके कल्पवृक्ष हैं। तूर्याङ्ग ॥ १ ॥ पात्रांग ॥ २ ॥ भूषणांग ॥ ३ ॥ पानांग ॥ ४ ॥ आहाराङ्ग ॥ ५ ॥ पुष्पांग ॥ ६ ॥ ज्योतिरङ्ग ॥ ७ ॥ गृहाङ्ग ॥ ८ ॥ वस्त्रांग ॥ ९ ॥ दीपांग ॥ १० ॥ तूर्याङ्गजातिका कल्पवृक्ष तो वासुरी मृदंग इत्यादिक कर्ण इंद्रियनिकूं तृप्त करनेवाला वादित्र देहैं ॥ १ ॥ पात्रांगजातिका वृक्ष रत्नसुवर्णमय अनेक प्रकारके आनन्दकारी कलस दर्पण झारी आसन पयकादि समस्त जातिके पात्र देहैं ॥ २ ॥ भूषणांगजातिके अनेक आभूषण अनेक प्रकारके क्षण क्षणमैं पहरने योग्य हार मुकुट कुण्डल मुद्रिकादि अङ्गकूं भूषित करनेवाले वा महलकूं द्वारकूं तथा शय्या आसन भूमिकूं भूषित करनेवाले अनेक आभूषण देहैं ॥ ३ ॥ पानांगजातिके वृक्ष नाना प्रकार पीवने योग्य शीतल सुगन्ध पान लिये खरे हैं ॥ ४ ॥ आहाराङ्गजातिके कल्पवृक्ष अनेक स्वादरूप अनेक प्रकारके आहार धारै हैं परन्तु क्षुधाकी पीडा ही नाहीं तदि रोग विना इलाज औषध कौन अङ्गीकार करै भोगभूमिमैं उपजनेवालेके क्षुधा नाहीं तीन दिन गये वदरीफल मात्र भोजन करै है ॥ ५ ॥ पुष्पांगजातिके वृक्ष नानाजातिके महा कोमल सुगंध पुष्पमाला आभरणादिक अनेक पुष्प धारै हैं ॥ ६ ॥ ज्योतिरंग जातिके कल्पवृक्षनिकी ज्योतिकरि सूर्य चंद्रमा नजर ही नाहीं आवै हैं सूर्यके उद्योततैं वहुत गुणा उद्योत धारण करै हैं तातैं रात्रि दिनका भेद नाहीं है ॥ ७ ॥ गृहांगजातिके कल्पवृक्ष अनेक महल चौरासी खणनिपर्यंत विस्तीर्ण रत्ननिकरि चित्र विचित्र देहैं ॥ ८ ॥ वस्त्रांगजातिके कल्पवृक्ष नाना-प्रकारके वांछित पहरने योग्य वस्त्र तथा शय्या आसन विछायत आदि समस्त वस्त्र देहैं ॥ ९ ॥ वहुरि दीपां-

गजातिके अंधकार विना ही दीपमालिकाकी शोभाकूं विस्तरै हैं ॥ १०॥ बहुरि भोगभूमिमैं स्त्रीपुरुषनिका युगल मरण समयमैं पुरुषकूं छींक अर स्त्रीकूं जम्भाई आवै है तिस समयमैं संतान युगल उत्पन्न होय है संतानकूं तो माता पिता नाहीं दीखै अर माता पिताकूं संतान नाहीं दीखे तातैं इनके वियोगका दुःख नाहीं है अर मरण किये पाछैं इनका देह शरद कालका मेघपटलवत् विलाय जाय है। बहुरि युगलिया उत्पन्न हुआ पाछैं सप्त दिन तो अपना अंगुष्ठ चाटै है। अर पाछैं सप्त दिनमैं सूधा औंधा पलटना होय पाछैं सप्त दिनमैं अस्थिर गमन करै हैं पाछैं सप्त दिनमैं परिपूर्ण यौवनवान होय हैं। बहुरि सप्त दिनमैं समस्त दर्शन ग्रहण चातुर्य कला ग्रहण करै हैं । ऐसैं गुणचास दिनमैं परिपूर्ण होय अनेक पृथक् विक्रिया अपृथक् विक्रियासहित नानाप्रकारके महल मन्दिर वनविहार करते क्षणक्षणमैं अनेक कोटि नवीन नवीन विषय तिनकी सामग्री भोगतैं अनेक क्रीड़ा रागरंगादिक अनेक सुखरूप क्रीडा चेष्टाकरि तीन पल्य पूर्ण करि मरण समयमैं छींक जंभाई मात्रतैं प्राण त्याग सम्यग्दृष्टि होय सो तो सौधर्म ईशान स्वर्गमैं जाय है अर मिथ्यादृष्टि मरण करि भवनवासी व्यंतर जोतषी देवनिमैं उपजै है कषायके प्रभावतैं देवलोकविना अन्य गति नाहीं पावै है बहुरि सम्यग्दृष्टि होय तथा श्रावकके व्रतका धारक होय जो पात्र दान करै सो षोशडम स्वर्गपर्यंत महर्द्धिक देव ही उपजै है। आगममैं पात्र तीन प्रकार हैं अर्थात् उत्तम पात्र, मध्यमपात्र अर जघन्यपात्र। तिनमैं उत्तमपात्र तो महाव्रतनिके धारक अठाईस मूलगुण तथा उत्तर गुणनिके धारक देहमैं निर्ममत्व वीतरागी साधु हैं। मध्यम पात्र ग्यारा भेदरूप श्रावक सम्यग्दृष्टि व्रतनिकरि सहित है तथा स्त्रीपर्यायमैं व्रतनिकी हदकूं धारण करती तिनके एक वस्त्रतैं अन्य समस्त परिग्रहरहित परके घर एकवार याचनारहित मौनतैं भिक्षा भोजन करि आर्यिकानिका संगमैं धर्मध्यानसहित महातपश्चरण करती तिष्ठै ऐसी आर्यिका मध्यमपात्र है तथा अणुव्रत अर सम्यग्दर्शनसहित श्राविका मध्यमपात्र है अर व्रतरहित जिनेन्द्रवचनके श्रद्धानी सम्यग्दर्शनसहित पुरुष तथा सम्यग्दर्शनसहित व्रतरहित स्त्री जघन्यपात्र है। इन तीन प्रकारका पात्रनिमैं चार दान देना तथा सत्कार करना स्थानदान करना आदर करना तथा यथा योग्य

स्तवन पूजा प्रशंसादिकके वचन बोलना उठि खड़ा होना उच्च मानना सो समस्त दान है अब चार प्रकार दान कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

आहारौपधयोरप्युपकरणावासयोश्च दानेन । वैयावृत्यं ब्रुवते चतुरात्मत्वेन चतुरस्राः ॥ १२६ ॥

अर्थ—चतुरस्र जे प्रवीण ज्ञानी हैं ते आहार दान औषधि दान उपकरणदान अर आवासदान इन चार प्रकारके दान करके वैयावृत्यकूं चार स्वरूप करि कहै हैं । आहारदान औषधिदान उपकरणदान आवासदान । या प्रकार गृहस्थकै चार प्रकार दान कह्या जातैं अभयदानकी प्रधानता तो छहकायके जीवनिकी कृतकारितअनुमोदनाकरि विराधनाका त्यागी दिगंबर मुनीश्वरनिकै है अर श्रावकनिकै हू त्रसजीवनिका संकल्पीहिंसाका त्यागतैं अभयदान है ही परंतु अभयदानकी मुख्यता तो आरंभका त्यागतैं विषयनितैं अत्यंत पराङ्मुखतातैं होय है तातैं जेते गृहचारतैं संपदातैं तथा न्यायरूप विषयनितैं परिणाम नाहीं निराला होय तितने आहारादिक चार प्रकारका दान करि पापका नाश करहू । संपदा आयु काय अत्यंत अस्थिर है गृहचारा तो दानकरि ही पूज्य है । आहारादिक दान विना गृहस्थपना पाप आरंभके भारकरि पाषाणकी नाव समान केवल संसारसमुद्रमैं डबोवनेवाला है । बहुरि ज्ञानी गृहस्थ चिंतवन करै है जो यो धन मैं उपार्जन किया तथा पितादिकनिका धर्या हमारे विना खेद प्राप्त होगया तथा राज्य ऐश्वर्य देश नगर आभरण वस्त्र स्त्री सेवकनका समूह समस्त जो विना खेद प्राप्त होगया सो समस्त पूर्व जन्ममैं दान दिया दुःखितनिका पालनपोषण किया ताका फल है । तथा परके धनमैं स्वप्नमैं हू चित्त नाहीं चलाया परम संतोष धारण करि विषयनिसूं विरक्त होय निर्वांछकता धारण करी ताका फल है । तथा दीन दुःखित रोगी असमर्थ बाल वृद्धनिका दया धारण करि उपकार किया ताका फल यह संपदा है सो दोय दिन याका संयोग है परलोक लार जायगी नाहीं जमीनमैं गडी रहैगी तथा अन्य दशांतरमैं धरी रहैगी तथा अन्यमैं रह जायगी वा स्त्री पुत्र कुटुम्ब दायेदार मालिक बनैंगे तथा राजा लूट लेगा तथा अचानक मरि दुर्गति चल्या जाऊंगा यो धन सैंकडा दुर्ध्यानतैं महापापके आरंभतैं देश देशनिमैं परिभ्रमणकरि बड़ा कष्टतैं उपार्जन किया

था प्राणनिसूं हू आवै याकी रक्षा करी अब इस धनका फल छोडकरि मरि जाना ऐसा विचारना तो योग्य नाहीं जगतमैं देखो जो लाख धन होय भोगनेमैं तो आवै नाहीं जातैं भोगनेमैं तो आधा सेर अन्न आवै है अर तृष्णा ऐसी बधै है जो अब धन बधाऊं। अहो अन्यकै तो पचास लाख धन होगया मेरे पांच लाख ही है। अब कैसैं बधाऊं कौन आरम्भ करूं कौन ऊपाय करूं कौन राजनिकूं रिझाऊं तथा कौन व-निज करूं तथा कौनसूं मित्रता करूं जाकी बुद्धितैं मेरे धन उपायन होजाय तथा कौनसा सेवककूं अंगी-कार करूं जो मेरा अलप धन खाय अर मोकूं बहुत धन उपार्जन करदे ऐसैं हजारां दुर्ध्यान करतो संसार जीव समस्त संपदा राज्य ऐश्वर्य छांडि महा मूर्छातैं अतिरौद्र परिणामतैं मरि घोर नरकका घोर दुःख भोगै है। संसारमैं अनंत दुःखरूप परिभ्रमण करता क्षुधा तृषा रोग दारिद्रकूं भोगता अनंतकाल असंख्यातकाल व्यतीत करै है। अब इस घोर कालमैं कोऊ किंचित् मोहनिद्राके उपशमतैं जिनेंद्रभगवानके वचनतैं कोऊ अति विरले पुरुष सचेत होय अपना हितकूं चिंतवन करता चार प्रकारके दानमैं प्रवर्तन करै है। दानमैं आहारदान प्रधान है इस जीवका जीवन आहारतैं कोटि सुवर्णका दान आहारदानसमान नाहीं है। आ-हारहीतैं देह रहै है। देहतैं रत्नत्रय धर्म पलै है। रत्नत्रयधर्मतैं निर्वाण होय है निर्वाणमैं अनंत सुख है। त्यागी निर्वांछक साधुनिका उपकार तो एक आहारदानतैं ही है। आहार विना कोऊ तिलतुषमात्र वस्तु हू नाहीं अंगीकार करै आहार बिना देह रहै नाहीं आहार विना अनेक रोग उपजै हैं। आहार विना ज्ञाना-भ्यास नाहीं होय। आहार विना व्रत संयम तप एक हू नाहीं पलै। आहार विना सामायिक प्रतिक्रमण कायोत्सर्गध्यान एक हू नाहीं होय आहार विना परमागमको उपदेश नाहीं होय। आहार विना उपदेश ग्रहण करनेकूं समर्थ नाहीं होय आहार बिना कांति विनसि जाय मति विनसि जाय कीर्ति क्षांति नीति गति रति उक्ति शक्ति द्युति प्रीति प्रतीति नाशकूं प्राप्त होय है। आहार विना समभाव इन्द्रियदमन जीवदया मुनि श्रावकका धर्म विनयमैं प्रवृत्ति न्यायमैं प्रवृत्ति तपमैं प्रवृत्ति यशमैं प्रवृत्ति समस्त विनाशनै प्राप्त होय जाय आहार विना वचनकी प्रवीणता नष्ट होजाय है आहार विना शरीरका वर्ण विगडि जाय शरीरमैं

भा कार पूज व्यतरदव हा लच्छा दव ता दान पूजा शील संयम ध्यान अध्ययन तप रूप समस्त धर्म काहेकूं करिये ? बहुरि जो भक्तिकरि पूजे बंदे कुदेव ही संसारके कार्य सिद्ध करैंगे तो कर्म कछु बात ही नाहीं ठहरें ? व्यंतर ही समस्त सुखका दायक रहै धर्मका आचरण निष्फल रह्या । भावार्थ—जगतविषै इस

पूजा करावै ऐसा अविनय धर्मात्मा होय कैसें करै ? बहुरि अनेक आयुध धारण करि अपनी वीतराग धर्ममें प्रवृत्तिकूं विगाडे हैं। अर अपना असमर्थपना प्रगट दिखावै हैं तथा जिनशासनके रक्षक एक २ यक्ष यक्षणी ही कैसें कहो हो ? भगवानके शासनके तौ सौधर्म इन्द्रकूं आदि लेय असंख्यात देव देवी समस्त सेवक हैं अर जिनका हृदयमैं सत्यार्थ धर्मतैं पूर्वकृत अशुभकर्म निर्जर गया होय ताकै समस्त पुद्गल राशि अचेतन है सो हू देवतारूप होय उपकार करैं हैं देव मनुष्य उपकार करैं सो कहा आश्चर्य है। अर शासनमैं हू ऐसी कैई कथा हैं जो शीलवान तथा ध्यानी तपस्वीनिके धर्मके प्रसादतैं देवनिके आसन कम्पायमान भये अर देव जाय उपसर्ग टाले अर नाना रत्ननि करि पूजा करी ऐसी कथा तो शासनमें वहुत हैं अर ऐमी तो कहूं कथा भी नाहीं जो धर्मात्मा पुरुष देवनिकूं पूजे अर पद्मावती चक्रेश्वरीकी भी कैई कथा हैं जो शीलवंती व्रतवंतिनीकी देव देवियोंने पूजा करी अर शीलवंती व्रतवंती तो जाय कोऊ देव देवीकी पूजा करी नाहीं लिखी है। तथा कार्तिकेय स्वामी कही है,——

गाथा,—ण य का वि देदि लच्छी ण को वि जीवस्स कुणइ उवयारं।
उवयारं अवयारं कम्मं पि सुहासुहं कुणदि ॥ ३१९ ॥
भत्तीए पुज्जमाणो विंतरदेवो वि देदि जदि लच्छी।
तो किं धम्मं कीरदि एवं चिंतेहि सद्दिट्ठी ॥ ३२० ॥

अर्थ—इस जीवकूं कोऊ लक्ष्मी नाहीं देवै है अर जीवका कोऊ उपकार अपकार हू नाहीं करै है जो जगतमैं उपकार अपकार करता देखिये है सो अपना किया शुभ अशुभकर्म करि करै है। बहुरि जो भक्तिकरि पूजे व्यंतरदेव ही लच्छी देवैं तो दान पूजा शील संयम ध्यान अध्ययन तप रूप समस्त धर्म काहेकूं करिये ? बहुरि जो भक्तिकरि पूजे वंदे कुदेव ही संसारके कार्य सिद्ध करैंगे तो कर्म कछु बात ही

होना सो भोगोपभोग नाम अंतरायकर्मका क्षयोपशमतैं होय है अर अपने भावनिकरि बांधे कर्मनिकूं कोऊ देव देवता देनेकूं तथा हरनेकूं समर्थ है नाहीं। बहुरि कुलकी वृद्धिके अर्थि कुलदेवीकूं पूजिये है अर पूजते पूजते हू कुलका विध्वंश देखिये हैं अर लक्ष्मीके अर्थी लक्ष्मीदेवीकूं तथा रुपया मोहरानिकूं पूजते हू दरिद्र होते देखिये हैं। तथा शीतलाका स्तवन पूजन करते हू संतानका मरण होते देखिये हैं। पितरानिकूं मानते हू रोगादिक वधे है तथा व्यंतर क्षेत्रपालादिकानिकूं अपना सहायी माने है सो मिथ्यात्वका उदयका प्रभाव है। बहुरि केतेक कहै हैं जो चक्रेश्वरी पद्मावती देवी ये शस्त्रधारण किये जिनशासनकी रक्षक हैं तथा सेवकानिकी रक्षा करनेवाली एक एक तीर्थंकरानिकी एक एक देवी है। एक एक यक्ष है इनका आराधन करने पूजनेतैं धर्मकी रक्षा होय है ये धर्मात्माकी रक्षा करैं हैं तातैं इन देवीनिका और यक्षनिका स्तवन करना पूजन करना योग्य है। देवी समस्त कार्यके साधनेवाली तीर्थंकरनिकी भक्त हैं इस विना धर्मकी रक्षा कौन करै याहीतैं मन्दिरानिके मध्य पद्मावतीका रूप जाके चार भुजा तथा वत्तीस भुजा अर नाना आयुधनिकरि युक्त अर तिनके मस्तक ऊपर पार्श्वनाथस्वामीका प्रतिबिंब अर ऊपर अनेक फणानिका धारक सर्पका रूपकरि वहुत अनुरागकरि पूजै हैं सो सब परमागमतैं जानि निर्णय करो। मूढलोकनिका कहिबो योग्य नाहीं। प्रथम तो भवनवासी व्यंतर ज्योतिषी इन तीनप्रकारके देवनिमैं मिथ्यादृष्टि ही उपजै है। सम्यग्दृष्टिका भवनत्रिकदेवानिमैं उत्पाद ही नाहीं अर स्त्रीपना पावै ही नाहीं सो पद्मावती चक्रेश्वरी तो भवनवासिनी अर स्त्रीपर्यायमैं अर क्षेत्रपालादिक यक्ष ये व्यंतर इनमैं सम्यग्दृष्टिका उत्पाद कैसैं होय? इनमैं तो नियमतैं मिथ्यादृष्टि ही उपजै हैं ऐसा हजारांबार परमागम कहै हैं। बहुरि जो इनके जिनधर्मसूं प्रीति है तो जिनधर्मके धारीनतैं अपनी पूजा वन्दना नाहीं चाहै जैनी होय सो आपकूं अव्रती जानता सम्यग्दृष्टिसे बंदना पूजा कैसैं करावै? साधर्मीनिका उपकार बिना कहै ही करै। बहुरि भगवानका प्रतिबिंब तो अपने मस्तक ऊपरि है अर भगवानके भक्तनितैं अपनी

जलकूं शुद्ध मानना, तिर्यंचानिके रूपकूं देव मानना, कुवा बावडी वापिका तलाव खुदावनेमैं धर्म मानना बाग लगावनेमैं धर्म मानना, मृत्युंजय आदिके जप करावनेतैं अपनी मृत्युका टलजाना मानना, ग्रहांका दान देनेतैं अपने दुःख दूर होना मानना, सो समस्त लोकमूढता है। बहुत कहनेकरि कहा जो योग्य अयोग्य, सत्य असत्य, हित अहितका, आराध्य अनाराध्यका विचाररहित लौकिक जनकी प्रवृत्ति देख जैसैं अज्ञानी अनादिके मिथ्यादृष्टि प्रवर्तैं तैसी प्रवृत्तिकूं सत्य मानना, विचाररहित लौकिकजननिकी प्रवृत्ति देख प्रवर्त्तन करना सो लोकमूढता है। अर केतेक जिनधर्मी कहाय करके हू आत्मज्ञानकररहित परमागमकी आज्ञाकूं नहीं जानते भेषधारीनिके कल्पे हुए अनेक क्रियाकांड तथा तीर्थंकरादिकनिका तर्पण कराना अपना पिता पितामहका तर्पण कराना तथा यक्षादिकनिके अर्थि होम यज्ञादिकनिमैं अपना कल्याण होना मानैं हैं। शकलीकरणादिक विधान कराना सो लोकमूढता है। तथा केतेक स्नान करि रसोई करनेमैं तथा स्नानकरि जीमनेमैं तथा आला वस्त्र पहिर जीमनेमैं अपनी पवित्रता शुद्धता मानै हैं परम धर्म मानै हैं अर अभक्ष्यभक्षण अर हिंसादिकका विचार नाहीं करै हैं सो समस्त मिथ्यात्वके उदयतैं लोकमूढता है॥ अब देवमूढता कहनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

वरोपलिप्सयाशावान् रागद्वेषमलीमसाः। देवता यदुपासीत देवतामूढमुच्यते ॥ २३ ॥

अर्थ—अपने वांछित होय ताकूं वर कहिये वरकी वांछा करके आशावान् हुवा संता जो रागद्वेष करि मलीन देवताकूं सेवन करै सो देवतामूढ कहिये है॥ २३॥

संसारी जीव हैं ते इस लोकमें राज्यसंपदा स्त्री पुत्र आभरण वस्त्र वाहन धन ऐश्वर्यनिकी वांछा सहित निरंतर वर्तैं हैं। इनकी प्राप्तिके अर्थि रागी द्वेषी मोही देवनिका सेवन करैं सो देवमूढता है। जातैं राज्यसुखसंपदादिक तो सातावेदनीयका उदयतैं होय है सो सातावेदनीयकर्मकूं कोऊ देनेकूं समर्थ है नाहीं तथा लाभ है सो लाभांतरायका क्षयोपशमतैं होय है अर भोग सामग्री उपभोग सामग्रीका प्राप्त

जलतैं पादप्रक्षालन कराय भोजन करै हैं तातैं व्यवहार आचारकूं नाहीं छांडैं है। यो भगवान जिनेंद्रका धर्म अनेकांतरूप है अर निश्चयव्यवहारका विरोधरहित ही धर्म है। सर्वथा एकांतरूप जिनेंद्रधर्म नाहीं है। लौकिकशुचितारहित होय सो धर्मकी निंदा करावै कुलकी निंदा करावै तादि अपना आतमा मलीन होय ही है। बहुरि मैथुनसेवन किया होय अर मृतककूं दग्ध करि आया होय अर केश क्षौर कराया होय अर चांडाल म्लेच्छादिकनिका स्पर्श भया होय मृतक पंचेन्द्रीका स्पर्श भया होय रजस्वलादि अशुचिका स्पर्श भया होय इत्यादिक और कारण होय तहां अवश्य स्नान करना अर अन्य कारणनिमैं जहां मल मूत्र हाड चामादिकका जिस अंगसों स्पर्श भया होय तिसकूं धोवना शीघ्र ही उचित है। अष्टप्रकार शौच लौकिकमैं अनादिका प्रवर्तै हैं। यातैं आगमकी आज्ञा मानना अपना हित है। बहुरि जगतमैं प्रगट देखिये है कर्णके मलतैं नेत्र मलकूं, अर यातैं नासिका मलकूं, यातैं कफ लालादिक मुखके मलकूं, यातैं मूत्रकूं, यातैं विष्ठाकूं, अधिक २ अशुचि मानिये है। अर जो समस्त मलकूं समानही मानिये तो समस्त आचार उपद्रित होय विपरीत होय जाय। यद्यपि द्रव्यार्थिकनयतैं समस्त एक पुद्गल जाति हैं तथापि बहुत भेद हैं। यद्यपि हाड मांस रुधिर मल मूत्रादिक समस्त पृथ्वीरूप जलादिरूप होजाय है अर पृथ्वी जलादिकनिका मांस रुधिर मलादिकरूप होजाय है तथापि पर्यायनिमैं बडा भेद है। द्रव्यके अर पर्यायके सर्वथा एकता माननेतैं समस्त व्यवहार परमार्थका लोप होय तातैं द्रव्यके पर्यायके कथंचित् एकपना कथंचित् अनेकपना मानना ही श्रेष्ठ है। बहुरि बालूके पिंड करनेमैं तथा पर्वततैं पडनेमैं अग्निमैं दग्ध होनेमैं हिमालय गलनेमैं पंचाग्नि तपनेमैं धर्म मानै हैं सो लोकमूढता है। तथा ग्रहणमैं सूतक मानना, स्नान करना चांडालादिककूं दान देना, संक्रांति मानि दान देना, कुवा पूजना, पीपल पूजना, गायकूं पूजना, रुपया मोहरकूं पूजना, लक्ष्मीकूं पूजना, मृतक पितरकूं पूजना छींक पूजना, मृतकानिके तृप्ति करनेकूं तर्पण करना, श्राद्ध करना, देवतानिका रतजगा करना, गंगा-

। है तदि समस्त जाति व्यवहारके लोप होनेतैं उत्तम कुलका अर नीचकुलका आचार समान होजाय तदि व्यवहार आचारके बिगडनेतैं धर्मका मार्ग भ्रष्ट होजाय । निंद्यकर्म करनेकी लज्जा छुटि जाय तदि कुलके मार्ग बिगाडनेतैं महापापका बन्ध होय है । परमार्थशौच तो व्यवहारकी शौचता करि ही शुद्ध होय है । जाका भोजनमैं, पानमैं, स्पर्शनमैं, संगतिमैं, प्रवृत्तिमैं मलीनता होजाय तदि परमार्थ धर्म मलीन हो ही जाय । जिनधर्मी हैं सो चांडाल भील म्लेच्छ मुसलमानादिककी शरीरकी छायाहीतैं मलीनता मानै हैं अर धोबी कलाल लुहार खाती सुनार भडभूजा इत्यादिकनिका स्पर्शनकूं हिंसाकर्म करनेतैं दूर ही छाडिये हैं । मुनीश्वर तो नीच जातिके मनुष्यका स्पर्श होतैं दंड स्नान करैं अर तिस दिन उपवास करैं । अर नाहीं जाननेतैं नीच कुलके गृहनिमैं प्रवेश होजाय तो भोजनका अंतराय करै हैं । अर मदिरा मांस अर शरीरतैं चार अंगुल बहता रुधिर राधि अर पंचेंद्रिय जीव मृतकका कलेवर भोजन करते देखैं तो भोजनका अन्तराय करै हैं । तो जिनधर्मी गृहस्थ हाड कौडी चाम केश ऊन इनके स्पर्शनतैं भोजन कैसैं नाहीं छांडै याहीतैं गृहस्थ है सो हस्तपाद प्रक्षालनकरि शुद्धभूमिमैं शुद्ध भोजन करै हैं। अधम जातिका स्पर्श्या भोजन नाहीं करैं । बहुरि जिनेंद्रका पूजन वास्तैं स्नान करना योग्य ही है क्योंकि स्नानकरि देवका स्पर्शन पूजन करना यह बडा विनय है । यद्यपि स्नानतैं शुद्धता नाहीं, तो हू, देवके उपकरणनिकूं स्नानकरि स्पर्शना धोया हुआ द्रव्य चढावना सो देवविनय ही है । विनय है सो ही आराधना है । जातैं जिनमन्दिरके उपकरणका हू विनय करिये है तो जिनेंद्रके आगमकी बाणीका पूजनके द्रव्यका हू स्नानकरि स्पर्शना हस्त धोय लगावना मन्दिरमैं हस्त पाद प्रक्षालनकरि प्रवेश करना सो हू विनय ही है । यद्यपि पापमलकी शुद्धता करना प्रधान है तो हू भगवान जिनेंद्रका आगममैं अष्टप्रकार लौकिकशुद्धि कही है लौकिकशौचके विना परमार्थधर्मतैं भ्रष्ट होजाय है । मुनीश्वरका देह रत्नत्रयका प्रभावतैं महापवित्र है तो हू बाह्यशौचके निमित्त कमण्डलु राखैं हैं हस्तपाद धोय स्वाध्याय करैं हैं अत्यंत मंद

गृहस्थाचारमैं मुनीश्वरनिकी ज्यौं स्नानका त्याग योग्य नाहीं । क्योंकि जो पापिष्ठ जीवनसूं स्पर्श होजाय अर स्नान नाहीं करै तो अपना मनमैं पापकी ग्लानि जाती रहै । तदि तिनकी संगति स्पर्शन खान पान यथेच्छ करने लगि जाय तब व्यवहारधर्मका लोप होजाय यातैं जिनधर्मीनिका आचार हैं ते व्यवहारके विरोधी नाहीं । जो अतिपापतैं आजीविकाके करनेवाला चांडाल कषाई चमार शिकार भील धीवरादिक अतिपापिष्ठ तथा मुसलमान म्लेच्छनिकी शरीर ऊपर छाया पडते हू महामलीनता मानिये है तो इनका स्पर्श होनेतैं स्नान कैसैं नाहीं करै ? स्नान हू करै अर परमात्माका स्मरण हू करै । अर याकै नजीक बैठनेतैं बुद्धि मलीन होय है अर जो मुसलमान वेश्यादिकनिसूं कान लगाय मुखके सनमुख अपना मुखकरि बचनालाप करै हैं तिनकी बुद्धि उत्तम धर्मादिक कार्यतैं विमुख होय विपरीत प्रवर्त्तन करै है तथा जीवनिके घातक कूकरा मार्जारादिक पशु अर पक्षी इत्यादिक दुष्ट तिर्यंचनिका भोजनके स्थाननिमैं आगमन होजाय तथा भोजनका स्पर्शन होजाय तो त्याग करना उचित है तो इनका स्पर्शन होतैं स्नान विना भोजन स्वाध्यायादिक करनेमैं हीनाचारपना होय है पापतैं ग्लानि जाती रहै कुलका भेद नाहीं ठहरै । अर स्त्रीकरि सहित संगम करै तहां अनेक जीवनकी हिंसा अर महा अशुचि अंगनिका संघट्टन अर रुधिर वीर्यादिकनिका वाह्य स्पर्शनादिक अर महा निंद्य रागका उपजना है याका त्याग नाहीं बन सकै तो इस पापकी ग्लानि करि आपकी अशुद्धि मानि स्नान तो करै जो मैं निंद्यकर्म किया है तातैं वाह्यशुद्धिता वास्तै स्नान किये विना पुस्तकनिका तथा जिनमंदिरके उपकर्णनिका उत्तम वस्तुका कैसैं स्पर्शन करूं । यद्यपि देहमैं रुधिरमांस हाड चाम केश मल मूत्र भरे हैं परन्तु रुधिर राध चाम हाड मांस मल मूत्रादिकनिका वाह्यस्पर्श होजाय तो अवश्य धोवना उचित है जातैं केश चामादिक शरीरतैं दूर हुआ पाछैं स्पर्शनेयोग्य नाहीं है । अर इनका हस्तादिककरि स्पर्श होजाय तो शीघ्र ही हस्त धोवना उचित है । इनकी ग्लानि नाहीं करै तो नीच चमार चाण्डाल कसायीनितैं एकता होनेतैं आचरणमैं भेद नाहीं

परमात्मा नामा तीर्थमैं सदा काल स्नान करो। वृथा खेदकरि व्याकुल भये गंगादिक तीर्थनप्रति क्यों दौडो हो ? कैसाक है परमात्मानामा तीर्थ ? सम्यग्ज्ञानरूप ही जामैं निर्मल जल है अर देदीप्यमान सम्यग्दर्शनरूप जामैं लहरि है अर अविनाशी अनंतसुख करि शीतल है अर समस्त पापनिकै नाश करनेवाला है ऐसा परमात्मस्वरूप तीर्थमैं लीन होहू। बहुरि जगतके पापिष्ठ मिथ्यादृष्टि जननिनै निर्मल तत्त्वनिका निश्चयरूप द्रह नाहीं देख्या है अर कठै हू ज्ञानरूप रत्नाकर समुद्र हू नाहीं देख्या। अर समता नामा अतिशुद्ध नदी हू नाहीं देखी, तिसकारण करि पापके हरनेवाले सत्य तीर्थनिकूं छांडि करि मूर्ख लोक हैं ते तीर्थ जिनकूं कहै हैं ते संसारके तारनेवाले नाहीं ऐसे गंगादिक नदीनिमैं डूबकरि हर्षित होय हैं। भावार्थ—जिनमूर्खनिनै तत्त्वनिका निश्चयरूप द्रहकूं नाहीं देख्या अर ज्ञानरूप समुद्र नाहीं देख्या अर समता नाम नदी नाहीं देखी ते गंगादिक तीर्थाभासनिमैं दौडता फिरै हैं जो तत्त्वनिका निश्चयरूप द्रहकूं देखता अर ज्ञानरूप समुद्रकूं देखना अर समतानामा नदीकूं देखता तो इनमैं गरक होय मिथ्यात्वकषायरूप मलकरि रहित होय आपकूं उज्वल कर लेता। बहुरि इस भुवनमैं ऐसा कोऊ तीर्थ नाहीं है तथा ऐसा जल हू नाहीं तथा और हू कोऊ द्रव्य नाहीं है जिसकरि यो समस्त अशुचि मनुष्यका शरीर साक्षात् शुद्ध होजाय अर यह शरीर कैसाक है—आधिव्याधि जरा मरणादिक करि निरंतर व्याप्त अर निरंतर तापकरनेवाला ऐसा है जातैं सत्पुरुषनिके याका नाम हू सहनेयोग्य नाहीं है। बहुरि समस्त तीर्थनिके जलतैं नित्य स्नान करिये अर चंदनकपूरादिकका विलेपन करिये तो हू यह शुद्ध नाहीं होय सुगन्ध नाहीं होय रक्षा करते हू विनाशके मार्गमैं ही तिष्ठै है। जो नदीमें स्नानतैं ही शुद्ध होजाय तो कोट्यां मच्छी मच्छ काछिवा कीर धीवरादिक शुद्ध होजांय तातैं यह लोकमूढता त्यागने योग्य है।

अब इहां इतना विशेष और जानना जो स्नान करनेतैं पवित्र नाहीं होय अर धर्म हू नाहीं होय परंतु

रहित होय अर जीवमात्रका विराधनारहित होजाय तो हाडमांसका मलीन देह हू देवनकरि पूज्य महा पवित्र होय जाय। इस देहकूं पवित्र करनेका और कारण ही नाहीं है सो ही श्रीपद्मनंदी नाम दिगम्बर वीतराग मुनि कह्या है सो जानहु। जिसकी निकटतातैं सुगंध पुष्पमालाचंदनादिपवित्र द्रव्य हू अस्पर्श्यताकूं प्राप्त होय है अर विष्टा मूत्रादिककरि भऱ्या रुधिर रस हाड चामादिककरि रच्या अर महासूगला अर महा दुर्गंध महामलीन समस्तअशुचिका रहनेका एक संकेतगृह ऐसा मनुष्यका शरीर जलकरि स्नान करनेतैं कैसैं शुद्ध होय। आत्मा तो अपने स्वभावतैं ही अत्यंत पवित्र है अर अमूर्तिक है ताकूं जल पहुंचै ही नाहीं ऐसा पवित्रमैं स्नान वृथा है अर यो काय है सो अशुचि ही है सो स्नानकरि कदाचित् शुचिताकूं प्राप्त नाहीं होय है यातैं स्नानके दोऊ प्रकारकरि विफलता भई। अर जे फिर हू स्नान करैं हैं तिनके पृथ्वीकाय जलकायादिक अर अनेक त्रसनिका घात होनेतैं पापबंधके अर्थि अर रागभावके अर्थि ही है। भावार्थ—गृहस्थके स्नान बिना सरै नाहीं परंतु अज्ञानी गृहस्थ स्नानमैं धर्म मानै है अर स्नानतैं पवित्रता मानै है ऐसी मिथ्याबुद्धि लग रही है सो याका स्वरूपकूं समझै तो याकूं धर्म तो नाहीं मानै अर यातैं पवित्रपना नाहीं मानै। यद्यपि गृहस्थके स्नान विना व्यवहार समस्त दूषित होय जाय अर व्यवहार दूषित होय जाय तादि परमार्थकी शुद्धता नाहीं करसकै परंतु याकूं राग बधावनेतैं अर हिंसा होनेतैं पापरूप तो श्रद्धान करै। बहुरि और हू शिक्षा जाननी,—चित्तकेविषै पूर्वकालका कोटिनभवकरि संचय किया कर्मरूप रज ताका संबंध करि उपज्या जो मिथ्यात्वादिक मल ताका नाश करनेवाला जो आपापरका भेद जाननेरूप विवेक सो ही सत्पुरुषानिकै मुख्य स्नान है। सत्पुरुषनिकै तो मिथ्यात्वमलका नाश करनेवाला एक विवेक ही स्नान है अर अन्य जो जलकरि स्नान है सो तो जीवनिका समूहका घात करनेतैं पापका करनेवाला है यातैं धर्म नाहीं होय है। ताहीकारणतैं स्वभावहीतैं अशुचि जो काय तिसविषै पवित्रता नाहीं है। बहुरि कहै हैं भो ज्ञानीजन हो! आपकी शुद्धताके अर्थि

राग द्वेष मोह अरति चिंता स्वेद खेद मद निद्रा इन अष्टादश दोषनिकरि रहित अरहंत तिनको वंदना स्तवन ध्यान करो। या अरहंतभक्ति संसारसमुद्रको तारनेवाली निरंतर चिंतवन करो। सुखका करनेवाला अरहंत ताका स्तवन करो याका गुणनिके आश्रय तो अनंत नाम हैं। अर भक्तिका भरया इंद्र भगवानका एक हजारआठ नाम करि स्तवन किया है अर जे अल्पसामर्थ्यके धारक हैं ते हू अपनी शक्तिप्रमाण पूजन स्तवन नमस्कार ध्यान करो अरहंतभक्ति संसारसमुद्रको तारनेवाली है सम्यग्दर्शनमैं अरहंतभक्तिमैं नामभेद है अर अर्थभेद नाहीं है। अरहंतभक्ति नरकादिगतिकूं हरनेवाली है याभक्तिकरि पूजनस्तवनकरि अर्घ उतारण करैं हैं सो देवांका सुख फिर मनुष्यका सुख भोगि अविनाशी सुखका धारक अक्षय अविनाशीसुखकूं प्राप्त होय हैं ऐसे अरहंतभक्ति नाम दशमी भावना वर्णन करी ॥ १० ॥

अब आचार्यभक्ति नाम ग्यारमीभावना वर्णन करैं हैं। सोही गुरुभक्ति है धन्यभाग जिनका होय तिनके वीतरागगुरुनिके गुणनिमैं अनुराग होय है धन्यपुरुषनिके मस्तकऊपरि गुरुनिकी आज्ञा प्रवर्ते है आचार्य हैं सो अनेकगुणनिकी खानि हैं श्रेष्ठतपका धारक हैं यातैं इनका गुण मनविषैं धारणकरि पूजिए अर्घ उतराण करिये पुष्पांजलि अग्रभागमैं क्षेपिये जो मेरे ऐसे गुरुनिका चरणनिका शरण ही होहु कैसेक है आचार्य जिनके अनशनादिक बारहप्रकारका उज्ज्वलतपनिमैं निरंतर उद्यम है अर छह आवश्यकक्रियामैं सावधान है अर पंचाचारके धारक हैं अर दशलक्षणधर्मरूप हैं परणति जिनकि अर मनवचनकायकी गुप्तिकरि सहित हैं ऐसे छत्तीसगुणनिकरी युक्त आचार्य होय हैं अर सम्यग्दर्शनाचारकूं निर्दोष धारैं हैं अर सम्यग्ज्ञानकी शुद्धिताकरि युक्त हैं अर त्रयोदशप्रकार चारित्रकी शुद्धिताके धारक अर तपश्चरणमैं उत्साहयुक्त अर अपने वीर्यकूं नाहीं छिपावतै बाईसपरीषहनिके जीतनेमैं समर्थ ऐसे निरंतर पंचआचारके धारक हैं अंतरंग बहिरंग ग्रंथकरि रहित निर्ग्रंथ मार्गके गमनकरनेमैं तत्पर हैं अर उपवास बेला तेला पंचोपवास पक्षोपवास मासोपवास करनेमैं तत्पर हैं अर निर्जनवनमैं अर

वेदना नष्ट हो जाय है अर रत्नजड़ित सिंहासन सूर्यकी कांतिकूं जीतै है। बहुरि जिनेन्द्रकी दिव्यध्वनिकी अद्भुत महिमा त्रैलोक्यवर्ती जीवनिकै परम उपकार करनेवाली मोहअंधकारका नाश करै है अर समस्त जीव अपनी अपनी भाषामैं शब्द अर्थ ग्रहण करैं हैं अर समस्तजीवनिके संशय नाहीं रहै है स्वर्गमोक्षका मार्गकूं प्रगट करै है दिव्यध्वनिकी महिमा वचन द्वारै गणधर इंद्रादिक कहनेकूं समर्थ नाहीं हैं जिनके समवसरणमैं जातिविरोधी जीवनिकै वैर विरोध नाहीं रहै है समवसरणमैं सिंह अर गज, व्याघ्र अर गौ मार्जारी अर हंस इत्यादिक जातिविरोधी जीव वैरबुद्धि छांड़ि परस्पर मित्रताकूं प्राप्त होय हैं। वीतरागताकी अद्भुत महिमा है जिनके असंख्यातदेव जयजयकार शब्द करैं हैं जिनके निकटताकूं पायकरिकै देवनिकरि रचे कलश झारी दर्पण ध्वजा ठौणों छत्र चमर बीजणो ये अचेतन द्रव्यहू लोकमैं मंगलताकूं प्राप्त होय है। अर केवलज्ञान उत्पन्न भयेपीछै दशअतिशय प्रगट होय हैं चारों तरफ सौ सौ योजन सुभिक्षता, अर आकाशगमन भूमिका स्पर्श नाहीं करैं, अर कोऊ प्राणीका वध नाहीं होय, अर भोजनका अभाव, अर उपसर्गका अभाव, अर चतुर्मुख दीखै, अर समस्त विद्याका ईश्वरपना, छायारहितपणों अर नेत्र टिमकारैं नाहीं, अर केश नख बधैं नाहीं ऐ दश अतिशय घातियाकर्मका नाशतैं स्वयं प्रकट होय हैं। अर तीर्थंकरप्रकृतिका प्रभावतैं चौदह अतिशय देवनिकरि किये होय हैं। अर्द्धमागधी भाषा, समस्तजनसमूहमैं मैत्रीभाव, समस्त ऋतुके फूल फल पत्रादिकसहित वृक्ष होय हैं पृथ्वी दर्पणसमान रत्नमयी तृण-कंटक-रज-रहित होय है, शीतल मंद सुगंध पवन चलै है, समस्त जनोंके आनंद प्रगट होय है, अनुकूल पवन, सुगंध जलकी वृष्टिकरि भूमि रजरहित होय है, चरण धरैं तहां सात आगे सात पाछै एक बीच ऐसे पंद्रापंद्राकरि दोयसै पचीस कमल देव रचैं हैं, आकाश निर्मल, दिशा निर्मल, च्यार निकायके देवनिकरि जय जय शब्द, एक हजार आरांकरिसहित किरणनिका धारक अपना उद्योतकरि सूर्यमंडलकूं तिरस्कार करता धर्मचक्र आगे चालै, अष्ट मंगलद्रव्य ये चौदह देवकृत अतिशय प्रगट होय है। क्षुधा तृषा जन्म जरा मरण रोग शोक भय विस्मय

रूप नेत्रकरि भूत भविष्यतैं वर्तमान त्रिकालवर्ती समस्त द्रव्यनिकी अनंतानंत परणतिसहित अनुक्रमतैं एकसमयमैं युगपत समस्तकूं जानै है देखै है । तदि च्यारनिकायके देव ज्ञानकल्याणककी पूजा स्तवनकरि भगवानका उपदेशकेअर्थि समवसरण अनेक रत्नमय रचैं हैं तिस समवसरणकी विभूतिका वर्णन कौन कर सकै ? पृथ्वीतैं पांचहजारधनुष ऊंचा जाकै वीसहजार पैड़ी तीऊपरि इंद्रनीलमणिमय गोलभूमि बारहयोजन प्रमाण तिसऊपरि अप्रमाणमहिमासहित समवसरणरचना है । जहां समवसरणरचना होय है अर भगवानका विहार होय है तहां आंधेनिकूं दीखने लागि जांय बहरे श्रवण करने लगि जांय लूले चालने लागि जांय हैं गूंगे बोलने लागि जांय हैं वीतरागकी अद्भुत महिमा है जाके धूलिशालादिक रत्नमय कोट मानस्तंभ अर बावड़्या अर जलकी खातिका अर पुष्पवाड़ी फिर रत्नमय कोट दरवाजे नाट्यशाला उपवन वेदी भूमि फिर कोट फिर कल्पवृक्षनिका बन रत्नमयस्तूप फिर महलनिका भूमि फिर स्फटिकका कोटमैं देवच्छद नाम एक योजनका मंडप सर्व तरफ द्वादश सभा तिनकरि सेवित रत्नमय तीन कटनी ऊपरि गंधकुटीमैं सिंहासनऊपरि च्यारिअंगुल अंतरीक्ष विराजमान भगवान अरहंत हैं जिनकी अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतवीर्य अनंतसुखमयी अंतरंग विभूतिकी महिमा कहनेकूं च्यारिज्ञानके धारक गणधर समर्थ नाहीं अन्य कौन कहि सकै अर समवसरणकी विभूतही वचनके अगोचर है अर गंधकुटी तीसरा कटणी उपरि है तहां चऊसठि चमर बत्तीस युगल देवनिके मुकट कुंडल हार कड़ा भुज बंधादिक समस्त आभरण पहिरे ढालि रहैं हैं तीन छत्र अद्भुत कांतिके धारक जिनकी कांतितैं सूर्य चंद्रमा मंदज्योति भासैं हैं अर जिनका देहकी प्रभामंडलको चक्र बँध रह्या जाकरि समवरणमैं रात्रिदिनका भेद नाहीं रहै है,सदा दिवस ही प्रवर्तै है अर महासुगंध त्रैलोक्यमैं ऐसा सुगंध और नाहीं ऐसी गंधकुटीके ऊपर देवनिकरि रच्या अशोकवृक्षकूं देखते ही समस्तलोकनिका शोक नष्ट होय जाय है अर कल्पवृक्षनिके पुष्पनिकी वर्षा आकाशतैं होय है अर आकाशमैं साढ़ाबारकोटि जातिके वादित्रनिकी ऐसी मधुर ध्वनि होय है जिनके श्रवणमात्रतैं क्षुधातृषादिक समस्तरोग

समर्थ नाहीं फिर मेरुगिरतैं पूर्ववत उत्सव करते जिनेंद्रकूं ल्याय माताकूं समर्पण करि इंद्र वहां तांडव-नृत्यादिक जो उत्सव करै है तिन समस्तउत्सवनिकूं कोऊ असंख्यातकालपर्यंत कोटि जिव्हानिकरि वर्णन करनेकूं समर्थ नाहीं है। जिनेंद्र जन्मतैं ही तीर्थंकर प्रकृतिके उदयके प्रभावतैं दश अतिशय जन्मतैं लिये ही उपजैं हैं पसेवरहित शरीर होय, मल मूत्र कफादिकरहितपना, अर शरीरमैं दुग्ध वर्ण रुधिर, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रर्षभनाराचसंहनन, अद्भुत अप्रमाण रूप, महा सुगंध शरीर, अप्रमाण बल, एक हजार आठ लक्षण, प्रियहितमधुरवचन ये समस्त पूर्वजन्ममैं षोड़शकारण भावना भाई ताका प्रभाव है बहुरि इंद्र अंगुष्टमैं स्थाप्या अमृत ताकूं पान करता माताका स्तनतैं उपज्या दुग्धपान नाहीं करै है फिर अपनी अवस्थाके समान बने देवकुमारनिमैं क्रीड़ा करने वृद्धिकूं प्राप्त होय है अर स्वर्गलोकतैं आये आभरण वस्त्र भोजनादिक मनोवांछित देव लीयें सासता रात्रिदिन हाजिर रहैं हैं पृथ्वी-लोकका भोजन आभरण वस्त्रादिक नाहीं अंगीकार करैं हैं स्वर्गतैं आये ही भोगैं हैं। बहुरि कुमारकाल व्यतीत करि इंद्रादिकनिकरि कीये अद्भुत उत्साहसहित भक्तिपूर्वक पिताकरि समर्प्पण कीया राज्यभोगि अवसर पाय संसारदेहभोगनितैं विरागता उपजै तदि अनित्यादिक बारह भावना भावते ही लोकांतिकदेव आय वंदना स्तवनरूप संबोधनादिक करैं हैं अर जिनेंद्रका विरागभाव होतेही चारिनिकायके इंद्रादिक देव अपने आसन कंपायमान होनेतैं जिनेंद्रके तपका अवसर अवधिज्ञानतैं जानि बड़े उत्सवतैं आय अभिषेककरि देवलोकके वस्त्राभरणतैं भक्तितैं भूषित-करि रत्नमयी पालकी रचि जिनेंद्रकूं चढ़ाय अप्रमाण उत्सव अर जयजयकार शब्दसहित तपके योग्य वनमैं जाय उतारैं तहां वस्त्र आभरण समस्त त्यागैं देव अधर झेलि मस्तक चढ़ावैं अर पंचमुष्टी लोंच सिद्धनिकूं नमस्कारकरि करैं तदि केशनिकूं महा उत्तम जाणि इंद्र रत्ननिके पात्रमें धारणकरि क्षीरसमुद्रमैं बड़ीभक्तितैं क्षेपै है जिनेंद्र केतेक कालमैं तपके प्रभावतैं शुक्लध्यानके प्रभावतैं क्षपकश्रेणीमैं घातियाकर्मनिका नाशकरि केवलज्ञानकूं उत्पन्न करैं हैं तदि अरहंतपना प्रकट होय है तदि केवलज्ञान

# सबसे पहिले इसको पढ़िये ।

पाठक महाशयो !

यह आपका पवित्र धर्मशास्त्र है। हस्तलिखित ग्रन्थोंकी समान आपको इसका विनय पूजन नमन करना चाहिये क्योंकि जिनवाणीपना दोनोंमें समान है। यदि आप ऐसा न करेंगे और अन्यान्य छपी पुस्तकोंकी नाईं इसका अविनय करेंगे, तो हम समझेंगे कि आप जिन वाणीके महत्वका विनय नहिं करके केवल—

रुपयोंका ही विनय करते हैं। ऐसा करनेपर आप अविनय संबंधी दोषके भागी होंगे।

निवेदक—ग्रन्थप्रकाशक।

पर्वतनिके दराड़ अर गुफानिके स्थानमैं निश्चल शुभध्यानमैं निरंतर मनकूं धारें हैं अर शिष्यनिकी योग्यताकूं आछी रीति जानि दीक्षा देनेमैं अर शिक्षाकरनेमैं निपुण हैं अर युक्तितैं नव प्रकार नयके जाननेवाले हैं अर अपनेकायसूं ममत्व छांड़ि रात्रिदिन तिष्ठै हैं संसारकूपमैं पतन हो जानेतैं भयवान हैं मनवचनकायकी शुद्धतायुक्त नाशिकाका अग्रमैं स्थापित करिये हैं नेत्रयुगुल जिनूंने ऐसे आचार्यनिकूं समस्त अंगनिकूं नमाय पृथ्वीमैं मस्तकधारि वंदना करिये हैं तिन आचार्यनिका चरणनिकरी स्पर्शनभई पवित्ररजकूं अष्टद्रव्यनिकरी पूजिये सो संसारपरिभ्रमणका क्लेश पीड़ाकूं नष्ट करनेवाली आचार्यभक्ति है अब यहां ऐसा विशेष जानना जो आचार्य हैं सो समस्तधर्मके नायक हैं आचार्यनिके आधार समस्त धर्म हैं यातैं एते गुणनिके धारक ही आचार्य होय बड़ा राजानिका वा राजाके मंत्रीनिका वा महान श्रेष्ठीनिका कुलमैं उपज्या होय अर जाके स्वरूपकूं देखते ही शांतपरिणाम हो जांय ऐसा मनोहररूपका धारक होय जिनका उच्चआचार जगतमैं प्रसिद्ध होय पूर्वं गृहचारामैं भी कदे हीणआचार निंद्यव्यवहार नाहीं किया होय अर वर्तमान भोगसंपदा छांड़ि विरक्तताकूं प्राप्त भया होय अर लौकिक व्यवहार अर परमार्थके ज्ञाता होय अर बुद्धिकी प्रवलता अर तपकी प्रवलताका धारक होय अर संघके अन्य मुनीश्वरनितैं ऐसा तप नाहीं बनि सकै तैसा तपका धारक होय बहुत कालका दीक्षित होय बहुत काल गुरुनिका चरण सेवन किया होय वचनका अतिशयसहित होय जिनका वचन श्रवण करतैंही धर्ममैं दृढ़ता अर संशयका अभाव अर संसारदेहभोगनितैं विरागता जाके निश्चल होय सिद्धांतसूत्रके अर्थका पारगामी होय इंद्रियनिका दमनकरि इसलोक परलोक संबंधी भोगविलासरहित देहादिकमैं निर्ममत्व होय महाधीर होय उपसर्गपरीषहनिकरि कदाचित् जाका चित्त चलायमान नहीं होय जो आचार्य ही चलि जाय तो सकलसंघ भ्रष्ट हो जाय धर्मका लोप हो जाय स्वमत परमतका ज्ञाता होय अनेकांतविद्यामैं क्रीड़ा करनेवाला होय अन्यके प्रश्नादिकतैं कायरतारहित तत्काल उत्तर देनेवाला होय एकांतपक्षकूं खंडनकरि सत्यार्थधर्मकूं स्थापन करनेका जाका सामर्थ्य होय

इंद्रियपूर्णता दीर्घायु सत्संगति श्रद्धान ज्ञान आचरण ऐ उत्तरोत्तर दुर्लभ संयोग पाय तो अल्पज्ञानी गुरुके निकट बसनेवाला शिष्य सो सत्यार्थ उपदेश नाहीं पावनेतैं यथार्थ आपका स्वरूप नाही पाय संशयरूप हो जाय तथा मोक्षमार्गकूं अतिदूर अतिकठिन जानि रत्नत्रयमार्गसूं चलि जाय तथा सत्यार्थ उपदेशविना विषयकषायनिमैं उरझ्या मनकूं निकासनेमैं समर्थ नाहीं होय तथा रोगकृतवेदनामें तथा घोरउपसर्गपरीषहनितैं चल्या हुआ परिणामकूं श्रुतका अतिशयरूप उपदेशविना थांभनेकूं समर्थ नाहीं होय है । बहुरि मरण आ जाय तदि सन्यासका अवसरमैं आहारपानका त्यागका यथाअवसर देश काल सहाय सामर्थ्यका क्रमकूं समझेविना शिष्यका परिणाम चलि जाय वा आर्त्तध्यान हो जाय तो सुगति बिगड़ि जाय धर्मका अपवाद हो जाय अन्य मुनि धर्ममैं शिथिल हो जांय तो बड़ा अनर्थ है तथा यो मनुष्य आहारमय है आहारतैं जीवै है आहारहीकी निरंतर वांछा करै है अर जब रोगके वशतैं तथा त्याग करनेतैं आहार छूटि जाय तदि दुःखकरि ज्ञानचारित्रमैं शिथिल होय धर्मध्यानरहित हो जाय तो बहुश्रुत गुरु ऐसा उपदेश करै जाकरि क्षुधातृषाकी वेदनारहित होय उपदेशरूप अमृतकरि सींचा हुआ समस्त क्लेशरहित भया धर्मध्यानमैं लीन हो जाय है क्षुधातृषारोगादिककी वेदनासहित शिष्यकूं धर्मका उपदेशरूप अमृतका पान अर शिक्षारूप भोजनकरि ज्ञानसहित गुरुही वेदनारहित करै बहुश्रुतीका आधारविना धर्म रहै नाहीं तातैं आधारवान आचार्य होय ताहीका शरण ग्रहण करना योग्य है बहुरि जो शिष्य वेदनाकरि दुःखित होय ताके हस्तपाद मस्तकका दाबना स्पर्शनादि करना मिष्टवचन कहना इत्यादिककरि दुःख दूर करै तथा पूर्वै जे अनेकसाधु घोरपरीषह सहकरि आत्मकल्याण कीया तिनकी कथाके कहनेकरि तथा देहतैं भिन्न आत्माका अनुभव करावनेकरि वेदनारहित करै तथा भो मुने ! अब दुःखमैं धैर्य धारण करो संसारमैं कौन कौन दुःख नाहीं भोगे अर वीतरागताका शरण ग्रहण करोगे तो दुःखनिका नाशकरि कल्याणकूं प्राप्त होवोगे इत्यादिक बहुतप्रकार कहि मार्गसूं नाहीं चलने देवै तातैं आधारवान गुरुनिहीका शरण योग्य है ॥ २ ॥ बहुरि जो व्यवहार प्रायश्चित्तसूत्रनिका ज्ञाता होय जातैं प्रायश्चित्तसूत्र आचार्य

धर्मकी प्रभावना करनेमैं उद्यमी होय गुरुनिके निकट प्रायश्चित्तादिकसूत्र पढ़ि छत्तीस गुणनिका
धारक होय है सो समस्त संघकी साखिसूं गुरुनिकरि दिया आचार्य पद प्राप्त होय एते गुणनिका धारक
होय निसहीकूं आचार्यपना होय है एते गुणनि विना आचार्य होय तो धर्म तीर्थका लोप हो जाय उन्मा-
र्गकी प्रवृति हो जाय समस्तसंघ स्वेच्छाचारी हो जाय सूत्रकी परिपाटी अर आचारकी परिपाटी टूटि
जाय। बहुरी आचार्यपनाके अन्य अष्ट गुण हैं तिनका धारक होय। आचारवान, आधारवान, व्यवहार-
वान, प्रकर्ता, आपायोपायविदर्शी, अवपीड़क, अपरिश्रावी, निर्यापक ए आठ गुण हैं। तिनमैं पंचप्रकारका
आचार धारण करै ताकूं आचारवान कहिये है जीवादिकतत्त्व भगवान सर्वज्ञ वीतराग दिव्य निरावर-
णज्ञानकरि प्रत्यक्ष देखी कह्या तिनमैं श्रद्धानरूप परणति सो दर्शनाचार है स्वपरतत्त्वनिकूं निर्बाध आगम
अर आत्मानुभव करि जाननारूप प्रवृत्ति सो ज्ञानाचार है हिंसादिक पंचपापनिका अभावरूप प्रवृत्ति
सो चारित्राचार है अंतरंगवहिरंग तपमैं प्रवृत्ति सो तपाचार है परीपहादिक आये अपनीशक्तिकूं
नहीं छिपाय धीरतारूपप्रवृत्ति सो वीर्याचार है तथा औरहू दश प्रकार स्थित कल्पादिकआचारमैं तथा
समितिगुप्त्यादिकनिका कथन करिये तो बहुत कथन बधि जाय। पंचप्रकारका आचार आप निर्दोष
आचरै अर अन्य शिष्यादिकनिकूं आचरण करावनेमैं उद्यमी होय सो आचार्य है आप हीणाचारी होय
सो शिष्यनिकूं शुद्धआचरण नाहीं कराय सकै हीणाचारी होय सो आहार विहार उपकरण वस्तिका
अशुद्ध ग्रहण कराय दे अर आपही आचारहीण होय सो शुद्ध उपदेश नाहीं करि सकै तातैं आचार्य
आचारवान ही होय॥ १॥बहुरि जाके जिनेन्द्रका प्ररूप्या च्यार अनुयोगका आधार होय स्याद्वादविद्याका
पारगामी होय शब्दविद्या न्यायविद्या सिद्धांतविद्याका पारगामी होय प्रमाणनयनिक्षेपणकरि स्वानुभव-
करि भले प्रकार तत्त्वनिका निर्णय किया होय सो आधारवान है जाके श्रुतका आधार नाहीं सो अन्य
शिष्यनिका संशय तथा एकांतरूप हठ तथा मिथ्याआचरणकूं निराकरण नाहीं करि सकै। बहुरि अनं-
तानंतकालतैं परिभ्रमण करता जीवकै अतिदुर्लभ मनुष्यजन्मका पावना नामें हू उत्तम देश जाति कुल

पर्वतनिके दराड़े अर गुफानिके स्थानमैं निश्चल शुभध्यानमें निरंतर मनकूं धारैं हैं अर शिष्य-
निकी योग्यताकूं आछी रीति जानि दीक्षा देनेमैं अर शिक्षाकरनेमैं निपुण हैं अर युक्तितैं नव प्रकार
नयके जाननेवाले हैं अर अपनेकायसूं ममत्व छांड़ि रात्रिदिन तिष्ठैं हैं संसारकूपमें पतन हो जानेतैं
भयवान हैं मनवचनकायकी शुद्धतायुक्त नाशिकाका अग्रमैं स्थापित करिये हैं नेत्रयुगुल जिनूंने ऐसे
आचार्यनिकूं समस्त अंगनिकूं नमाय पृथ्वीमैं मस्तकधारि बंदना करिये हैं तिन आचार्यनिका चरणनि-
करी स्पर्शनभई पवित्ररजकूं अष्टद्रव्यनिकरी पूजिये सो संसारपरिभ्रमणका क्लेश पीड़ाकूं नष्ट करनेवाली
आचार्यभक्ति है अब यहां ऐसा विशेष जानना जो आचार्य हैं सो समस्तधर्मके नायक हैं आचार्यनिके
आधार समस्त धर्म हैं यातैं एते गुणनिके धारक ही आचार्य होय बड़ा राजानिका वा राजाके मंत्री-
निका वा महान श्रेष्ठीनिका कुलमैं उपज्या होय अर जाके स्वरूपकूं देखते ही शांतपरिणाम हो जांय
ऐसा मनोहररूपका धारक होय जिनका उच्चआचार जगतमैं प्रसिद्ध होय पूर्व गृहचारमैं भी कदे हीण-
आचार निंद्यव्यवहार नाहीं किया होय अर वर्तमान भोगसंपदा छांड़ि विरक्तताकूं प्राप्त भया होय अर
लौकिक व्यवहार अर परमार्थके ज्ञाता होय अर बुद्धिकी प्रबलता अर तपकी प्रबलताका धारक होय
अर संघके अन्य मुनीश्वरनितैं ऐसा तप नाहीं बनि सकै तैसा तपका धारक होय बहुत कालका दीक्षित
होय बहुत काल गुरुनिका चरण सेवन किया होय वचनका अतिशयसहित होय जिनका वचन श्रवण
करतैंही धर्ममैं दृढ़ता अर संशयका अभाव अर संसारदेहभोगनितैं विरागता जाके निश्चल होय
सिद्धांतसूत्रके अर्थका पारगामी होय इंद्रियनिका दमनकरि इसलोक परलोक संबंधी भोगविलासर-
हित देहादिकमैं निर्ममत्व होय महाधीर होय उपसर्गपरीषहनिकरि कदाचित् जाका चित्त चलायमान
नहीं होय जो आचार्य ही चलि जाय तो सकलसंघ भ्रष्ट हो जाय धर्मका लोप हो जाय स्वमत परम-
तका ज्ञाता होय अनेकांतविद्यामैं क्रीड़ा करनेवाला होय अन्यके प्रश्नादिकतैं कायरतारहित तत्काल
उत्तर देनेवाला होय एकांतपक्षकूं खंडनकरि सत्यार्थधर्मकूं स्थापन करनेका जाका सामर्थ्य होय

वक्तापनाकी शक्तिका धारक होय वादी प्रतिवादीनिके जीतनेमैं समर्थ होय विषयनितैं अत्यंत विरक्त होय बहुतकाल गुरुकुल सेया होय सर्वसंघके मान्य होय पहिली ही समस्त संघ जाकूं आचार्यपनाकी योग्यता जाणै सोही गुरुनिका दिया प्रायश्चित्तसूत्रका ज्ञाता होय आचर्यपना पावै सो प्रायश्चित्त देवै है ऐतै गुणनि विना जैसें मूढवैद्य देश काल प्रकृत्यादिक नाहीं जानै तो रोगीकूं मारै है तैसैं व्यवहारसूत्ररहित मूढ गुणसंयुक्त होय है संघमैं कोऊ रोगी होय वा वृद्ध होय अशक्त होय कोऊ बाल होय कोऊ संन्यास धारण किया होय तिनकी वैयावृत्त्यमैं युक्त कीये जे मुनि ते तो टहल करै ही परंतु आप आचार्य हू संघके मुनीश्वरनिमैं जो अशक्त हो जाय ताका उठावना बैठावना शयन करावना तथा मलमूत्रकफादिक तथा राधिरुधिरादिक शरीरतैं दूरि करना धोवना उठाय प्राशुकभूमिमैं स्थापना धर्मोपदेश देना धर्म ग्रहण करावना इत्यादिक आदरपूर्वक भक्तितैं वैयावृत्त्य करै तिनकूं देखि समस्तसंघके मुनि वैयावृत्त्यमैं सावधान होय विचारैं हैं अहो धन्य है ये गुरु भगवान परमेष्ठी करुणानिधान जिनके धर्मात्मामैं ऐसा वात्सल्य है हम महा निंद्य हैं आलसी होय रहे है हमकूं होते हू सेवा करै हैं यह हमारा प्रमादीपना धिक्कार योग्य है बंधका कारण है ऐसा विचार समस्तसंघ वैयावृत्त्यमैं उद्यमी होय है जो आचार्य आप प्रमादी होय तो सकल संघ वात्सल्यरहित हो जाय यातैं आचार्यका कर्तृत्वगुण मुख्य है समस्तसंघका वैयावृत्त्य करनेका जाका सामर्थ्य होय सो आचार्य होय है कोऊ हीणाचारी ताकूं शुद्ध आचरण ग्रहण करावै कोऊ मंदज्ञानी होय तिनकूं समझाय चारित्रमैं लगावै केईनिकूं प्रायश्चित्त देय शुद्ध करै कोउकूं धर्मोपदेश देय दृढ़ता करै। धन्य है आचार्य जिनके शरणे प्राप्त हो गया तिनकूं मोक्षमार्गमैं लगाय उद्धार करै हैं यातैं आचार्यका प्रकर्ता नामा गुण प्रधान है ॥ ४ ॥ बहुरि अपायोपायविदर्शी नाम पांचमो गुण है कोउ साधु क्षुधातृषा रोगवेदनाकरि पीड़ित हुआ क्लेशितपरिणामरूप हो जाय तथा तीव्र रागद्वेषरूप हो जाय तथा लज्जाकरि भयकरि यथावत आलोचना नाहीं करै तथा रत्नत्रयमैं उत्साहरहित हो जाय धर्मतैं सिथिल हो जाय तो ताकूं अपाय मानि रत्नत्रयका नाश अर उपाय रत्नत्रयकी रक्षानिका प्रगट गुण दोष

ऐसा दिखावै जो रत्नत्रयका नाश होनेतैं कंपायमान हो जाय अर रत्नत्रयका नाशतैं अपना नाश अर नरकादि कुगतिमैं पतन साक्षात दिखावै अर रत्नत्रयकी रक्षातैं संसारतैं उद्धार होय अनंत सुखकी प्राप्ति उपदेशकरि साक्षात दिखाय देय ऐसा उपदेशका सामर्थ्य जामैं होय सो अपयोपायविदर्शी नाम गुणका धारक आचार्य होय है इहां उपदेश दिखाये कथन बहुत हो जाय तातैं नाहीं लिख्या ॥ ५ ॥

अब अवपीड़क नाम छटा गुण कहिये है कोऊ मुनि रत्नत्रय धारण करकै हू लज्जाकरि भयकरि अभिमानगौरवादिकरी अपनी आलोचना यथावत शुद्ध नाहीं करै तो आचार्य ताकूं स्नेहकी भरी कर्णानिकूं मिष्ट अर हृदयमैं प्रवेश करनेवाली शिक्षा करै जो हे मुने बहुत दुर्लभ रत्नत्रयका लाभ ताकूं मायाचारकरि नष्ट मति करो माता पितासमान गुरुनिके निकट अपने दोष प्रगट करनेमैं कहा लज्जा है अर वात्सल्यके धारक गुरु हू अपने शिष्यके दोष प्रगटकरि शिष्यका अर धर्मका अपवाद नाहीं करावैं हैं तातैं शल्य दूरिकरि आलोचना करो जैसैं रत्नत्रयकी शुद्धता अर तपश्चरणका निर्वाह होयगा तैसैं द्रव्य क्षेत्र काल भावके अनुसार प्रायश्चित्त तुमकूं दिया जायगा तातैं भय त्यागि आलोचना निर्दोष करहू ऐसे स्नेहरूप वचन करिकेहू जो माया शल्य नाहीं त्यागै तो तेजका धारक आचार्य शिष्यकी शल्यकूं जबरीतैं निकासैं जिस काल आचार्य शिष्यकूं पूछैं हैं जो हे मुने ऐ दोष ऐसैं ही हैं सत्यार्थ कहो तदि उनके तेजतपके प्रभावतैं जैसैं सिंहकूं देखतेही स्याल खाया हुआ मांसकूं तत्काल उगलै है तथा जैसैं महान प्रचंडतेजस्वी राजा अपराधीकूं पूछै तदि तत्काल सत्य कहता ही बणै तैसैं शिष्यहू माया शल्यकूं निकासै है अर मायाचार नाहीं छांड़ै तो गुरु तिरस्कारके वचन हू कहैं हैं हे मुने हमारे संघतैं निकस जाहु हमकरि तुम्हारे कहा प्रयोजन है जो अपना शरीरादिकका मेल धोया चाहैगा सो निर्मल जलके भरे सरोवरकूं प्राप्त होयगा जो अपना महानरोगकूं दूरि किया चाहैगा सो प्रवीण वैद्यकूं प्राप्त होयगा तैसैं जो रत्नयरूप परमधर्मका अतीचार दूरिकरि उज्वलता किया चाहैगा सो गुरुनिका आश्रय करैगा तुम्हारे रत्नत्रयकी शुद्धिता करनेमैं आदर नाहीं तातैं ये मुनिपणा व्रतधारण नग्न होय क्षुधादि

परीषह सहनेकी विटंबनाकरि कहा साध्य है संवर निर्जरा तो कषायनिके जीतनेतैं है मायाकषायका ही त्याग नाहीं किया तदि व्रत संयम मौन धारण वृथा है नग्नता अर परिषह सहनता मायाचारीका वृथा है तिर्यंच हू परिग्रहरहित नग्न रहैंही हैं यातैं तुम दूरभव्य हो हमारे वंदने योग्य नाहीं हो अर तुम्हारे परिणाम ऐसे हैं जो हमारा दोष प्रगट होय तो हम निंद्य हो जावैं हमारा उच्चपणा घटि जाय सो मानना बंधका कारण है श्रमण तो स्तुति निंदामैं समानपरिणामी होय हैं ऐसे गुरु कठोरवचन कहि करिके हू मायाचारादिका अभाव करावै कैसा होय अवपीड़क आचार्य जो बलवान होय उपसर्ग परि-षह आये कायर नाहीं होय प्रतापवान होय जाका वचन कोऊ उल्लंघन करने समर्थ नाहीं होय अर प्रभा-ववान होय जाकूं देखतप्रमाण दोषका धारक साधू कांपने लगि जाय जाकूं बड़े बड़े विद्याके धारक नम्रीभूत होय वंदना करैं जाकी उज्ज्वलकीर्ति विख्यात होय जाकी कीर्ति सुनताही जाके गुणनिमैं दृढ़ श्रद्धा हो जाय जाका वचन जगतमैं देख्या विना ही दूरदेशनिमैं प्रमाण करैं सिंहकी ज्यौं निर्भय होय ऐसा अवपीड़क गुणका धारक गुरु होय सो जैसैं शिष्यका हित होय तैसैं उपकार करै है जैसे बालकका हितने चिंतवन करती माता रुदन करताहू बालककूं दाबकरि मुख फाड़ि जबरीतैं घृत दुग्धादि पान करावै है। ऐसे शिष्यका हितकूं चिंतवन करता आचार्य हू मायाशल्यसहित क्षपकका बलात्कारकरि दोष दूरि करै है अथवा कटुकऔषधि ज्यों पश्चात् हित करै है जो जिह्वाकरिके मिष्ट बोले अर शिष्यकूं दोषतैं नाहीं छुड़ावै सो गुरु भला नाहीं अर जो चरणकरि ताड़नाहूकरि दोषनितैं भिन्न करै है सो गुरु पूजन योग्य हैं यातैं अवपीड़कगुणका धारक ही आचार्य होय है ॥ ६ ॥ अब अपर-श्रावीगुणकूं कहैं हैं जो शिष्य गुरुनिकूं दोष आलोचना करै सो दोष अन्यकूं गुरु प्रकाश नाहीं करै जैसै तपायमानलोहकरि पीया जल सो बाह्य प्रगट नाहीं होय तैसैं शिष्यकरी श्रवणकिया दोष आचार्य हू किसीकूं नाहीं जणावे है सोही अपरश्रावी नाम गुण है शिष्य तो गुरुका विश्वासकरकै कहै अर गुरु जो शिष्यका दोष प्रगट करै अन्यकूं जनावै तो वो गुरु नाहीं अधम है विश्वासघाती

है कोउ शिष्य अपना दोषकी प्रकटता जानि दुखित होय आत्मघात करै है वा क्रोधी होय रत्नत्रयका त्याग करै है तथा गुरुकी दुष्टता जानि अन्य संघमैं जाय तथा जैसैं हमारी अवज्ञा करी तैसें तुमारी हू अवज्ञा करैगा ऐसैं समस्तसंघमें घोषणा प्रगट होय समस्तसंघ आचार्यनिकी प्रतीतिरहित हो जाय आचार्य सबके त्याज्य हो जाय इत्यादिक बहुत दोष आवैं बहुत कहे कथनी वधि जाय तातैं अपरश्रावी गुणका धारक ही आचार्य योग्य है ॥ ७ ॥ अब आचार्य निर्यापक होय जैसैं नावकूं खेवटिया समस्त उपद्रवनिकूं टालि नावकूं पार उतारि ले जाय तैसैं आचार्य हू शिष्यकूं अनेक विघ्नसूं बचाय संसारसमुद्रके पार करै सो निर्यापक है ॥ ८ ॥ ऐसे आचारवान ॥ १ ॥ आधारवान ॥ २ ॥ व्यवहारवान ॥ ३ ॥ प्रकर्ता ॥ ४ ॥ अपायोपायविदर्शी ॥ ५ ॥ अवपीड़क ॥ ६ ॥ अपरश्रावी ॥ ७ ॥ निर्यापक ॥ ८ ॥ यह आचार्यनिके अष्टगुणकूं धारणकरतेनिके गुणनिमैं अनुराग सो आचार्यभक्ति है ऐसै आचार्यनिके गुणनिकूं स्मरण करकै आचार्यनिका स्तवन वंदना करता जो पुरुष अर्घ उतारण करै है सो पापरूप संसारकी परिपाटीकूं नष्टकरि अक्षयसुखकूं प्राप्त होय है ऐसैं वीतराग गुरु कहैं हैं। ऐसै आचार्यभक्ति वर्णन करी ॥ ११ ॥

अब बहुश्रुतभक्ति नाम बारमीभावनाकूं कहैं हैं ॥ जो अंगपूर्वादिकका ज्ञाता तथा च्यार अनुयोगनिका पारिगामी जो निरंतर आप परमागमकूं पढ़ैं अन्य शिष्यनिकू पढ़ावैं ते बहुश्रुती हैं तथा जिनके श्रुतज्ञान ही दिव्यनेत्र है अर अपना अर परका हित करनेमैं प्रवर्तें ते अर अपने जिनसिद्धांत अर अन्य एकांतीनिके सिद्धांतनिका विस्तारतैं जाननेवाले स्याद्वादरूप परमविद्याके धारक तिनकी जो भक्ति सो बहुश्रुतभक्ति है बहुश्रुतीकी महिमा कौन कहनेकूं समर्थ है जे निरंतर श्रुतज्ञानका दान करैं हैं ऐसे उपाध्याय तिनकी भक्ति विनयकरि सहित करैं हैं ते शास्त्ररूप समुद्रका पारगामी होय हैं जे अंगपूर्व प्रकीर्णक जिनेन्द्र वर्णन कीये तिन समस्तजिनागमकूं निरंतर पढ़ैं पढ़ावैं ते बहुश्रुती हैं इहां प्रथम आचारांग तामैं अठारहहजार पदनिमैं मुनिधर्मका वर्णन है ॥ १ ॥ सूत्रकृतांगका छत्तीसहजार पद हैं

तिनमैं जिनेंद्रके श्रुतके आराधन करनेके विनय क्रियाका वर्णन है ॥ २ ॥ स्थानांगका ब्यालीसहजार पद तिनमैं षट्द्रव्यनिका एकादि अनेक स्थानका वर्णन है ॥ ३ ॥ समवायांग एक लाख चौंसठिहजार पदनिमैं है तिनमैं जीवादिक पदार्थनिका द्रव्य क्षेत्र काल भावकै आश्रित समानता वर्णन है ॥ ४ ॥ व्याख्याप्रज्ञप्ति अंगके दोय लक्ष अट्ठाईस हजार पदनिमैं जीवका अस्तिनास्ति इत्यादिक गणधरनिकरि कीये साठिहजार पदनिका वर्णन है ॥ ५ ॥ ज्ञातृधर्मकथांगके पांचलक्ष छप्पनहजार पदनिमैं गणधरनि करि कीये प्रश्ननिके अनुसार जीवादिकनिका स्वभावका वर्णन है ॥ ६ ॥ उपासकाध्ययन नाम अंगके ग्यारहलक्ष सत्तर हजार पदनिमैं श्रावकके व्रत शील आचार क्रियाका तथा याका मंत्रनिका उपदेशका वर्णन है ॥ ७ ॥ अंतकृतदशांगके तेईसलक्ष अट्ठाईसहजार पदनिमैं एक एक तीर्थंकरके तीर्थमैं दश दश मुनीश्वर उपसर्गसहित निर्वाण प्राप्त भये तिनका कथन है ॥ ८ ॥ अनुत्तरोपपादकदशांगके बाणवै लक्ष चौवालीसहजार पदनिमैं एक एक तीर्थंकरके तीर्थमैं दश दश मुनीश्वर महाभयंकर घोरउपसर्गसहित देवनितैं पूजा पाय विजयादिक अनुत्तर विमाननिमैं उपजे तिनका वर्णन है ॥ ९ ॥ प्रश्नव्याकरण नाम अंगके त्र्याणवैलक्ष षोडशसहस्र पदनिमैं नष्ट मुष्टि लाभ अलाभ सुख दुःख जीवित मरणादिकके प्रश्नका वर्णन है ॥ १० ॥ विपाकसूत्रांगके एककोटि चौरासीलक्ष पदनिमैं कर्मनिका उदय उदीर्णा सत्ताका वर्णन है ॥ ११ ॥ अर दृष्टिवाद नाम बारसअंगका पांच भेद है परिकर्म, सूत्र, प्रथमानुयोग, पूर्व, चूलिका तिनमैं परिकर्मकाहू पांच भेद है तिनमैं चंद्रप्रज्ञप्तिके छह लक्ष पांचहजार पदनिमैं चंद्रमाका आयु गति अर कलाकी हानिवृद्धि अर देवीविभव परिवारादिकका वर्णन है ॥ १ ॥ अर सूर्यप्रज्ञप्तिके पांचलक्ष तीनहजार पदनिमैं सूर्यका आयु गति विभवादिकका वर्णन है ॥ २ ॥ जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिके तीनलक्ष पचीसहजार पदनिमैं जंबूद्वीपसंबंधी क्षेत्र कुलाचल द्रह नदी इत्यादिकनिका निरूपण है ॥३॥ द्वीपसागरप्रज्ञप्तिके बावनलक्ष छत्तीसहजार पदनिमैं असंख्यातद्वीप समुद्रनिका अर मध्यलोकके जिनभवननिका अर भवनवासी व्यंतर ज्योतिष्क देवनिके निवासनिका वर्णन है ॥ ४ ॥ व्याख्याप्रज्ञप्तिके चौरासीलक्ष छप्पनहजार

पदनिमैं जीव पुद्गलादि द्रव्यका निरूपण है ॥ ५ ॥ ऐसे पंच प्रकार परिकर्म कह्या अब दृष्टिवाद अंगका दूजा भेद सूत्रके अठ्ठासीलक्ष पदनिमैं जीव अस्तिरूप ही है नास्तिरूप ही है कर्ता ही है भोक्ता ही है इत्यादि एकांतवादिकरि कल्पित जीवका स्वरूपका वर्णन है ॥ २ ॥ बहुरि प्रथमानुयोगके पांचहजार पदनिमैं त्रेसठि महापुरुषनिके चरित्रका वर्णन है ॥ ३ ॥ अब दृष्टिवादअंगका चतुर्थभेदमैं चौदहपूर्व हैं तिनमैं उत्पादपूर्वके एककोटि पदनिमैं जीवादिक द्रव्यनिका उत्पादादि स्वभावका निरूपण है ॥ १ ॥ अग्रायणीपूर्वके छिनवैकोटि पदनिमैं द्वादशांगका सारभूत सप्ततत्व नवपदार्थ षट् द्रव्य सातसैं सुनय दुर्नयादिकका स्वरूपका वर्णन है ॥ २ ॥ वीर्यानुवादके सत्तरलक्ष पदनिमैं आत्मवीर्य परवीर्य कामवीर्य कालवीर्य भाववीर्य तपोवीर्यादि समस्त द्रव्यगुणपर्यायनिका वीर्यका निरूपण है ॥ ३ ॥ अस्तिनास्तिप्रवाद नाम पूर्वके साठिलक्ष पदनिमैं जीवादि द्रव्यनिका स्वद्रव्यादि चतुष्टयकी अपेक्षा अस्ति और परद्रव्यादि चतुष्टयकी अपेक्षा नास्ति इत्यादिक सप्तभंगादिक तथा नित्य अनित्य एक अनेकादिकनिका विरोध रहित वर्णन है ॥ ४ ॥ ज्ञानप्रवाद पूर्वके एकघाटि कोटि पदनिमैं मति श्रुत अवधि मनःपर्यय केवल ये पांच ज्ञान अर कुमति कुश्रुति विभंग ये तीन अज्ञान इनका स्वरूप संख्या विषयफलनिके आश्रय प्रमाणपना अप्रमाणपनाका वर्णन है ॥ ५ ॥ सत्यप्रवादपूर्वके छहअधिक एककोटि पदनिमैं वचनगुप्ति अर वचनके संस्कारका कारण अर द्वादश भाषा अर वक्तानिके भेद अर बहुतप्रकार असत्य अर दशप्रकारके सत्यका वर्णन है ॥ ६ ॥ आत्मप्रवादपूर्वके छव्वीसकोटि पदनिमैं आत्मा जीव है कर्त्ता है भोक्ता है प्राणी है वक्ता है पुद्गल है वेद है विष्णु है स्वयंभू है शरीरी मान वक्ता शक्ता जंतु मानी माया वियोगी असंकुट क्षेत्रज्ञ इत्यादि स्वरूपका वर्णन है ॥ ७ ॥ कर्मप्रवादपूर्वके एककोटि अस्सीलाख पदनिमैं कर्मनिका बंध उदय उदीर्णा सत्त्व उत्कर्षण उपशमन संक्रमणनिधि तिनिका चितादि अवस्था अर ईर्यापथ तपस्या अधःकर्मादिकनिका वर्णन है ॥ ८ ॥ प्रत्याख्यानपूर्वके चौरासीलक्ष पदनिमैं नाम स्थापना द्रव्य क्षेत्र काल भावनिकूं आश्रय करि पुरुषनिका संहनन अर बलादिकनिके अनुसार प्रमाणीककाल वा अप्रमाणीककाल लिये त्याग

अर पापसहित वस्तुतैं निराला होना अर उपवासकी विधि अर उपवासकी भावना अर पंचसमिति अर तिनगुप्तिका वर्णन है ॥ ९ ॥ विद्यानुवादके एक कोटि दशलक्ष पदनिमैं अंगुष्ठप्रसेनादिक सातसै अल्पविद्या अर रोहणादि पांचसै महाविद्यनिका स्वरूप सामर्थ्य अर इनका साधन मंत्र तंत्र पूजा विधानका अर सिद्ध भई तिनका फलका अर अंतरिक्ष भौम अंग स्वर स्वप्न लक्षण व्यंजन छिन्न ये अष्टप्रकार निमित्तज्ञानका वर्णन है ॥ १० ॥ कल्याणानुवादपूर्वके छव्वीसकोटि पदनिमैं तीर्थंकर चक्रधर बलदेव प्रतिवासुदेवादिकनिका गर्भ कल्याणादि महाउत्सवनिका अर इन पदनिका कारण षोड़श भावना वा तपविशेष आचरणादिकनिका अर चंद्रमा सूर्य ग्रह नक्षत्रनिका गमन तथा ग्रहण शकुनादिकके फलका वर्णन है ॥ ११ ॥ प्राणप्रवाद पूर्वके तेरहकोटि पदनिमैं कायकी चिकित्साका अष्टांग-आयुर्वेद जो वैद्यविद्या ताका भूतकर्मका अर जांगलिका अर इला पिंगलादिक स्वासोच्छ्वासका अर गतिके अनुसार दशप्राणनिके उपकारक अनुपकारक द्रव्यनिका वर्णन है ॥१२॥ क्रियाविशालपूर्वके नव-कोटि पदनिमैं संगीतशास्त्र छंद अलंकार बहत्तरि कला अर स्त्रीके चौसठिगुण अर शिल्पादिविज्ञान अर चौरासी गर्भाधानादि क्रिया अर एकसौआठ सम्यग्दर्शनादिक्रिया अर पचीस देववंदनादिक नित्यनैमित्तक क्रियाका वर्णन है ॥१३॥ त्रिलोकबिंदुसार पूर्वके साढ़ाबारकोटि पदनिमैं त्रैलोक्यको स्वरूप छव्वीस परिकर्म अष्ट व्यवहार च्यारि बीज मोक्षका स्वरूप मोक्षगमनका कारण क्रिया अर मोक्षसुखका वर्णन है ॥१४॥ ऐसे पिच्याणवैकोड़ि पचासलाख पांच पदनिमैं चौदह पूर्व वर्णन किया। अब दृष्टिवादांगको पांचमोभेद चूलिका पांच प्रकार है एक एक चूलिकाके दोयकोटि नवलक्ष निवासीहजार दोयसै पद हैं तिनमैं जलगताचुलिकामैं जलका स्तंभन जलमैं गमन अग्निका स्तंभन भक्षण अग्निऊपरि आसन अग्निमैं प्रवेशनादिकका कारण मंत्र तंत्र तपश्चरणका वर्णन है ॥ १ ॥ अर स्थलगताचुलिकामैं मेरु कुलाचलादिकनिमैं भूमिमैं प्रवेशकरनेकूं अर शीघ्रगमनके कारण मंत्र तंत्र तपश्चरणका वर्णन है ॥ २ ॥ अर मायागताचूलिकामैं मायारूप इंद्रजालादि विक्रियाका मंत्रतंत्र तपश्चरणादिकका वर्णन है ॥ ३ ॥ आकाशगतचूलिकामैं आकाशगमनका

कारण मंत्र तंत्र तपश्चरणादिका वर्णन है ॥ ४ ॥ रूपगताचूलिकामैं सिंह हस्ती तुरंग मनुष्य वृक्ष हरिण शशा बलधि व्याघ्रादिनके रूप पलटनेके कारण मंत्र तंत्र तपश्चरणका वर्णन है तथा चित्राम माटी पाषाण काष्ठकादिक इनका खोदना तथा धातुवाद रसवाद खान्यवादादिककी रचनाके अर्थ हैं ॥ ५ ॥ पंचचूलिकाके दशकोटि गुणंचासलाख छीयालीसहजार पद हैं इहां ऐसा जानना समस्त द्वादशांगके एकघाटि एकठी प्रमाण अक्षर हैं ॥ १८४४६७४४०७३७०९५५१६१५ एते अपुनरुक्त अक्षर हैं एकवार आया अक्षर दूसरां नाहिं आवै इनमैं चोसठि संयोगी तांई अक्षर हैं अर आगममैं कह्या ऐसा मध्यपदका प्रमाण सोलासैचौंतीसकोड़ि तीयासीलक्ष सात हजार आठसै अठासी १६३४८३०७८८८ अपुनरुक्त अक्षर हैं इन अक्षरनिका प्रमाणका भाग दीये एकसौबाराकोटि तीयासीलक्ष अठावनहजार पांच पद आये तिनमैं समस्त द्वादशांग है अर अवशेष अक्षर आठकोटि एकलक्ष आठहजार एकसो पचेतरि आक रहे ॥ ८०१०८१७५ इनि अक्षरनिका पूर्ण एक पद होय नाहीं तातैं इनकूं अंगबाह्य कह्या तिन अक्षरनिका सामायिकादि चौदहप्रकीर्णक हैं सामायिक नाम प्रकीर्णकमैं मिथ्यात्व कषायादिकके क्लेशका अभावरूप नाम स्थापना द्रव्य क्षेत्रकाल भावके भेदतैं छहभेदरूप सामायिकका वर्णन है ॥ १ ॥ बहुरि चौंतीस अतिशय अष्टप्रातिहार्य परमौदारिक दिव्य देह समवसरण सभा धर्मोपदेशादिक तीर्थंकरनिका माहात्म्यका प्रकाशरूप स्तवन नाम प्रकीर्णक है ॥ २ ॥ एक तीर्थंकरके आलंबनरूप चैत्यालय प्रतिमाका स्तवनरूप प्रकीर्णक है ॥ ३ ॥ बहुरि पूर्वकृत प्रमादाजनित दोषका निराकरणके अर्थि दैवसिक, रात्रिक, पाक्षिक, चातुर्मासिक, सांवत्सरिक, ऐर्यापथिक, उत्तमार्थ ऐसे सप्त प्रकार प्रतिक्रमणका जामैं वर्णन ऐसा प्रतिक्रमण नाम प्रकीर्णक है ॥ ४ ॥ बहुरि सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र तप उपचारस्वरूप पंचप्रकार विनयका वर्णनरूप विनय नाम प्रकीर्णक है ॥ ५ ॥ बहुरि नवदेवतानिकी वंदनाके अर्थि तीनप्रदक्षिणा चतुःशिरोनती तीनशुद्धता द्वादश आवर्त इत्यादि नित्यनैमित्तकक्रियाका जामैं वर्णन ऐसा कृतकर्म प्रकीर्णक है ॥६ ॥ बहुरि जामैं साधुका आचारके

गोचर आहारकी शुद्धताका वर्णनरूप दश वैकालिक प्रकीर्णक है ॥ ७ ॥ बहुरि च्यारनकारउपसर्ग तथा बाईसपरीषहनिके सहनेके विधान अर इनके फलका वर्णनरूप उत्तराध्ययन प्रकीर्णक है ॥ ८ ॥ बहुरि साधुके योग्य आचरणका विधान अयोग्यसेवनका प्रायश्चित्तका वर्णनरूप कल्पव्यवहार नाम प्रकीर्णक है ॥ ९ ॥ बहुरि द्रव्य क्षेत्र काल भावके आश्रय साधुकूं ये योग्य हैं ये अयोग्य हैं ऐसा विभागका वर्णनरूप कल्पाकल्प नाम प्रकीर्णक है ॥१०॥ बहुरि उत्कृष्टसंहननादिसंयुक्त द्रव्य क्षेत्र काल भावके प्रभावतैं उत्कृष्टचर्याकरि वर्तते ऐसे जिनकल्पी साधुनिके योग्य त्रिकालयोगादिआचरणका अर स्थविरकल्पनिकी दीक्षा शिक्षा गण पोषण आत्मसंस्कार सल्लेखना अर उत्कृष्टस्थानगत उत्कृष्टआराधनाका वर्णनरूप महाकल्प नाम प्रकीर्णक है ११ ॥ जामैं भवन व्यंतर ज्योतिष्क तथा कल्पवासीनिके विमाननिमैं उत्पत्तिका कारण दान पूजा तपश्चरण अकामनिर्जरा सम्यक्त्व संयमादिकका विधान तिनके उपजनेका स्थान वैभवका वर्णनरूप पुंडरीक नाम प्रकीर्णक है ॥ १२ ॥ बहुरि महर्द्धिक देवनिमैं इंद्र प्रतींद्रादिकनिमैं उत्पत्तिका कारण तपोविशेषादिक आचरणका कहनेवाला महापुंडरीक प्रकीर्णक है ॥ १३ ॥ जामैं प्रमादकरि उपज्या दोषनिका त्यागरूप निषिद्धका प्रकीर्णक है ॥ १४ ॥ जैसे द्वादशांगरूप सूत्रका ज्ञाता है सो तपका प्रभावतैं उपजै है सो आप पढ़ै है अन्यकी बुद्धिप्रमाण शिष्यनिकूं पढ़ावै है तिन बहुश्रुतनिकी भक्ति है सोहू बहुश्रुतभक्ति है जो गुणनिमैं अनुराग करना ताकूं भक्ति कहिये है जो शास्त्रनिमैं अनुरागकरि पढ़ै तथा शास्त्रके अर्थकूं अन्यकूं कहै जो धनकूं लगाय शास्त्रनिकी लिखावै तथा अपने हस्तकरि शास्त्र लिखै तथा हीनअधिकअक्षरकूं मात्राकूं शोधन करै तथा पढ़नेवालेनिकूं शास्त्र लिखाय देवै तथा व्याख्यान करै पढ़ावै बचावनेवालेनिकी आजीविकाकी थिरताकरि शास्त्रनिके ज्ञानाभ्यासका प्रवर्तन करावै स्वाध्याय करनेकेअर्थि निराकुल स्थान देवै सो ज्ञानावरण कर्मके नाश करनेवाली बहुश्रुतिभक्ति है। बहुरि बहुमूल्य वस्त्रनिमैं पूठा लगाय पट्टमय डोरि करि शास्त्रनिकूं बांधै जो देखो श्रवण पठन करनेवालेनिका मनकूं रंजायमान करै सो समस्त बहुश्रुतिभक्ति है। बहुरि सुवर्णादिकरि मनोहर घड़ै

भये अर पंचप्रकार रत्ननिकरि जटित सैकड़ां पुष्पनिकरि शास्त्रकी सारभूत पूजा करै सो श्रुतिभक्ति संशयादिकरहित सम्यग्ज्ञान उपजाय अनुक्रमतैं केवलज्ञान उपजावै है जो पुरुष अपने मनकूं इंद्रियनके विषयनतैं रोकि अर वारंवार श्रुतदेवताका गुण स्मरण करके भली विधिसूं बनाया पवित्र अर्घ श्रुतदेवताका उतारै है सो समस्तश्रुतका पारगामी होय केवलज्ञान उपजाय निर्वाणकूं प्राप्त होय है। ऐसे बहुश्रुतिभक्ति नाम बारमी भावना वर्णन करी सो निरंतर भावो ॥ १२ ॥

अब प्रवचनभक्ति नाम तेरमी भावनाकूं वर्णन करैं हैं। प्रवचन नाम जिनेन्द्र सर्वज्ञ वीतरागकरि प्ररूपण किया आगमका है। जिसमैं षट्द्रव्यनिका पंचास्तिकायका सप्ततत्त्वनिका नवपदार्थनिका वर्णन है अर कर्मनिकी प्रकृतीनिका नाश करनेका वर्णन सो आगम है जाका प्रदेश बहुत होय ताकी अस्तिकाय संज्ञा है। अर गुणपर्यायनिकूं निरंतर प्राप्त होय तातैं द्रव्यसंज्ञा है वस्तुपनाकरि निश्चयकरिये तातैं पदार्थसंज्ञा है स्वभावरूपपनातैं तत्त्वसंज्ञा है सो इनकी विशेष कथनी आगें प्रकरण पाय कहसी। जैसैं अंधकारसंयुक्त महलमैं दीपक हस्तमैं लेकरि समस्तपदार्थ देखिये है तैसैं त्रैलोक्यरूप मंदिरमैं प्रवचनरूप दीपककरि सूक्ष्म स्थूल मूर्तीक अमूर्तीक पदार्थ देखिये है। प्रवचनरूप ही नेत्रनिकरि मुनीश्वर चेतनादि गुणनिके धारक समस्तद्रव्यनिका अवलोकन करैं जिनेन्द्रके परमागमकूं योग्यकालमैं बहुत विनयतैं पढ़िये सो प्रवचनभक्ति है कैसाक हैं प्रवचन जामैं षट्द्रव्य सप्ततत्त्व नवपदार्थनिका भेद समस्तगुणपर्यायनिका वर्णन है जामें भूतकाल अनंत भया अर भविष्यत अनंत होयगा अर वर्त्तमान तिनका स्वरूप वर्णन है। जामें अधोलोककी सप्तपृथ्वी अर नारकीनिका बसनेका उत्पत्ति होनेका स्थाननिकूं अर आयु काय वेदना गत्यादिक समस्तका अर भवनवासी देवनिका सातकरोड़ बहत्तरलाख भवननिका अर तिनका आयु काय विभव विक्रिया भोगादिकनिका अधोलोकमैं वर्णन किया है। जामैं मध्यलोकसंबंधी असंख्यात द्वीप समुद्रनिका अर तिनमैं मेरु कुलाचल नदी द्रहादिकनिका अर कर्मभूमिके विदेहादिक क्षेत्रनिका अर भोगभूमिका अर छिनवै अंतरद्वीपसंबंधी मनुष्यनिका अर कर्मभूमि भोगभूमिके मनुष्यनिका कर्त-

न्यका अर आयु काय सुख दुःखादिकनिका अर तिर्यंचानिका व्यंतरनिके निवास विभव परिवार आयु आयु काय सामर्थ्य विक्रियाका वर्णन है। नथा मध्यलोकमैं ज्योतिष्कदेव हैं तिनके विमान विभव परिवार आयु कायादिकका तथा सूर्य चंद्रमा ग्रह नक्षत्रनिका च्यारक्षेत्रगत संयोगादिकका वर्णन है। बहुरि उर्द्धलोकके त्रेसठ पटलनिका स्वर्गके अहमिन्द्रके पटलनिका इंद्रादिकदेवनिका विभव परिवार आयु काय शक्ति गति सुखादिकका वर्णन है। ऐसैं सर्वज्ञ करि प्रत्यक्ष देखा। त्रिलोकवर्ती समस्त द्रव्यनिके उत्पाद व्यय ध्रौव्यपना समस्त प्रवचनमैं वर्णन किया है। बहुरि कर्मनिका प्रकृतिनिका बंध होनेका उदयका सत्वका संक्रमणादिकनिका समस्त वर्णन आगममैं है। बहुरि संसारतैं उद्धार करनेवाला रत्नत्रयका स्वरूप प्राप्त होनेका उपाय परमागमहीमैं है बहुरि गृहस्थपणामैं श्रावकधर्मका जघन्य मध्यम उत्कृष्ट चर्याका तथा श्रावकनिके व्रत संयमादिक व्यवहार परमार्थरूप प्रवृत्तिका वर्णन प्रवचनतैं ही जानिये है बहुरि गृहका त्यागी मुनिनिके महाव्रतादि अठ्ठाईस मूलगुण अर चौरासीलाख उत्तरगुण अर स्वाध्याय ध्यान आहार विहार सामायिकादि चारित्र चर्याका धर्मध्यान शुक्लध्यानादिकका सल्लेखनामरणका समस्तचर्याका वर्णन प्रवचनमैं है। बहुरि चौदह गुणस्थाननिका स्वरूप तथा चौदह जीवसमासनिका अर चौदह मार्गणनिका वर्णन प्रवचनतैं जानिये है तथा जीवनिके एकसौ साढ़ानिन्यानवैं लक्ष कुलकोड़ अर चौरासीलाख जातिका योनिस्थान प्रवचनहीतैं जानिये है। तथा च्यार अनुयोग च्यार शिक्षाव्रत तीनगुणव्रत आगमतैंही जानिये है। तथा च्यार गतिनिका भेद अर सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रका स्वरूप भगवानका प्ररूप्या आगमहीतैं जानिये है। बहुरि द्वादशभावना अर द्वादशतप अर द्वादश अंग अर चौदहपूर्व चौदहप्रकीर्णकनिका स्वरूप प्रवचनहीतैं जानिये है। बहुरि उत्सर्पिणी अवसर्पिणी कालकी फिरणि अर यामैं छह छह भेदरूप कालमैं पदार्थकी परणतिका भेदनिका स्वरूप आगमतैं जानिये है। बहुरि कुलकर तिर्थंकर चक्रधर बलदेव वासुदेव प्रतिवासुदेव इत्यादिकनिकी उत्पत्ति प्रवृत्ति धर्म तीर्थका प्रवर्तन चक्रीका साम्राज्य वासुदेवादिकनिके विभव परिवार ऐश्वर्यादिक आगम-

हीतैं जानिये है । बहुरि जीवादिक द्रव्यनिका प्रभाव आगमहीतैं जानिये है जातैं आगमकूं भक्तिपूर्वक सेवनविना मनुष्यजन्ममैं हू पशू समान है भगवान सर्वज्ञ वीतराग समस्त लोकअलोककूं अनंतानंत भूत भविष्यत वर्तमान कालवर्ती पर्यायनिकरि संयुक्त एकसमयमैं युगपत् क्रमरहित हस्तकी रेखावात प्रत्यक्ष जान्या देख्या ताकरि प्ररूपण किया स्वरूपकूं सप्तऋद्धिच्यार ज्ञानधारि गणधरदेव द्वादशांगरूप रचना प्रगट करी । इहां ऐसा विशेष जानना जो देवाधिदेव परमपूज्य धर्मतीर्थके प्रवर्तन करनेवाले अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतवीर्य अनंतसुखरूप अंतरंगलक्ष्मी अर समवसरणादि बहिरंगलक्ष्मीकरि मंडित अर इंद्रादिक असंख्यात देवनिके समूह करि वंदनीक चौतीसअतिशय अष्टप्रातिहार्यादि अनुपम ऋद्धिकरि सहित अर क्षुधा तृषादि अष्टादशदोषरहित समस्तजीवनिका परमोपकारक अर लोकअलोकके अनंतगुण पर्यायनिका क्रमरहित युगपत् ज्ञानका धारक अर अनंतशक्तिका धारक संसारमैं डूबते प्राणीनिकूं हस्तावलंबन देनेवाला समस्त जीवनिका दयालु परमात्मा परमेश्वर परमब्रह्म परमेष्ठी स्वयंभू शिव अजर अमर अरहंतादि नामकरि विख्यात अशरण प्राणिनिकूं परम शरण अंतका परमौदारिक देहमैं तिष्ठता गणधरादिक मुनीश्वरनिकरि वंदनीक है चरण जिनका अर कंठ तालुवा ओष्ठ जिह्वादिक चलनहलनरहित इच्छाविना अनेक प्राणीनिका पुण्यके प्रभावतैं इपज्या अर आर्य अनार्य समस्त देशके प्राणीनिका ग्रहणमैं आवता समस्त पापका घातक दिव्यध्वनिकरि भव्य जिवनिका मोह अंधकारकूं नष्ट करता चौसठ चमरनिकरि वीज्यमान छत्रत्रयादि प्रातिहार्यके धारक रत्नमयसिंहासन अर च्यार अंगुल अंतरीक्ष विराजमान भगवान सकलपूज्य परमभट्टारक श्रीवर्धमानदेवाधिदेव मोक्षमार्गके प्रकाशनेकेअर्थि समस्तपदार्थनिका स्वरूप सातिशय दिव्यध्वनिकरि प्रगट किया तिस अवसरमैं निकटवर्ती निर्ग्रंथ ऋषीश्वरनिकरी वंदनीक सप्तऋद्धि समृद्धि च्यारि ज्ञानके धारक श्रीगौतम नाम गणधरदेव कोष्ठबुद्धि आदिक ऋद्धिके प्रभावतैं भगवानभाषित अर्थकूं नाहीं विस्मरण होता भगवानभाषित अर्थकूं धारणकरि द्वादशांगरूप रचना रची जब चतुर्थ कालका

तीन वर्ष साढ़ाआठ महीना बाकी रह्या तदि श्रीवर्धमानस्वामी निर्वाण गये पाछै गौतम स्वामी, सुधर्माचार्य, जंबूस्वामी ऐ तीन केवली बासठवर्ष पर्यंत केवलज्ञानकरि समस्त प्ररूपणा करी। पाछै केवलज्ञानका अभाव भया। ता पाछै अनुक्रमकरि विष्णु, नंदिमित्र, अपराजित, गोवर्धन, भद्रबाहु ऐ पांच मुनि द्वादशांगके धारक श्रुतकेवली भये तिनका एकसौ वर्षका अवसर क्रमतैं भया तिनके अवसरमैं भगवान केवलीतुल्य पदार्थनिका ज्ञान अर प्ररूपणा रही। बहुरि विशाखाचार्य, प्रोष्ठिलाचार्य, क्षत्रिय, जयसेन, नागसेन, सिद्धार्थ, धृतिषेण, विजय, बुद्धिमान, गंगदेव, धर्मसेन ऐ दश पूर्वके धारक एकादश मुनि निर्ग्रंथ मुनीश्वर अनुक्रमतैं एकसो तीयासी वर्षमैं भये ते हू यथावत प्ररूपणा करी। बहुरि नक्षत्र, जयपाल, पांडुनाम, ध्रुवसेन, कंसाचार्य ऐ पंच महा मुनि एकादशांग विद्याका पारगामी अनुक्रमतैं दोयसौवीस वर्षमैं भये ते हू यथावत प्ररूपणा करी। बहुरि सुभद्र, यशोभद्र, भद्रबाहु, महायश, लोहाचार्य ऐ पंच महामुनि एक प्रथमअंगका पारगामी एकसौअठारा वर्षमैं अनुक्रमतैं भये। ऐसैं भगवान वीरजिनेन्द्रकूं निर्वाण गये पाछै छहसौ तियासी वर्ष पर्यंत अंगका ज्ञान रह्या पाछै ऐसे कालके निमित्ततैं बुद्धिवीर्यादिककी मंदता होते श्रीकुंदकुंदादि अनेकमुनि निर्ग्रंथ वीतरागी अंगके वस्तुनिका ज्ञानी होते भये तथा उमास्वामी भये ऐसे पापतैं भयभीत ज्ञानविज्ञानसंपन्न परमसंजमगुणमंडित गुरुनिकी पारिपाटीतैं श्रुतका अव्युच्छिन्न अर्थके धारक वीतरागीनिकी परंपरा चली आई तिनमैं श्रीकुंदकुंदस्वामी समयसार प्रवचनसार पंचास्तिकाय रयणसार अष्टपाहुडकूं आदि लेय अनेकग्रंथ रचे ते अवार प्रत्यक्ष वाचन पढनेमैं आवैं है। इन ग्रंथनिका जो विनयपूर्वक आराधन सो प्रवचनभक्ति है। बहुरि दशअध्यायरूप तत्त्वार्थसूत्र श्रीउमास्वामी रच्या तिस तत्त्वार्थसूत्र ऊपरि सर्वार्थसिद्धि नाम टीका पूज्यपादस्वामी रची है। अर तत्त्वार्थसूत्रऊपरि ही राजवार्तिक सोलहहजार श्लोकनिमैं श्रीअकलंकदेव रच्या अर श्लोकवार्तिक वीसहजार श्लोकनिमैं विद्यानंदिस्वामी रच्या अर गंधहस्ति महाभाष्य चौरासीहजार श्लोकनिमैं समंतभद्रस्वामी बड़ी टीका रची सो अवार इस अवसरमैं

मिले है नाहीं अर इस गंधहस्तिमहाभाष्यको आदि मंगलाचरण एकसौ पन्द्रा श्लोकनिमैं देवागमस्तोत्र किया ताकी आठसौ श्लोकनमैं टीका अष्टशती तो अकलंकदेव रची अर देवागमअष्टशतीऊपरि आप्तमीमांसा नामा जाकूं अष्टसहस्री कहिये सो आठहजार श्लोकनिमैं विद्यानंदिजी रची तिस अष्टसहस्रीउपरि सोलहहजार टिप्पण है अर विद्यानंदिस्वामीकृत आप्तकी परीक्षारूप तीनहजार श्लोकनिमैं आप्तपरीक्षा नाम ग्रंथ है तथा परीक्षामुख माणिक्यनंदि रच्या अर याकी बड़ी टीका प्रभाचंद्र आचार्य प्रमेयकमलमार्तंड बाराहजार श्लोकनिमैं रची अर छोटीटीका प्रमेयचंद्रिका अनंतवीर्य नाम आचार्य रची। अर अकलंकदेवकृत लघुत्रयीऊपरि न्यायकुमुदचंद्रोदय सोलाहजार श्लोकनिमैं प्रभाचंद्र नाम आचार्य रच्या तथा औरहू न्यायके केई ग्रंथ प्रमाणपरीक्षा प्रमाणनिर्णय प्रमाणमीमांसा तथा बालावबोधन्यायदीपिका इत्यादिक जिनधर्मके स्तंभ द्रव्यनिका प्रमाणकरि निर्णय करते अनेकांनका भरचा हुआ द्रव्यानुयोगग्रंथ जयवंते प्रवर्तै हैं अर करणानुयोगका गोमटसार लब्धिसार क्षपणासार त्रिलोकसारादि अनेक ग्रंथ हैं। तथा चरणानुयोगके मूलाचार आचारसार रत्नकरंडश्रावकाचार भगवतीआराधना स्वामिकार्तिकेयानुप्रेक्षा आत्मानुशासन पद्मनंदिपचीसी इत्यादिक अनेक ग्रंथ हैं तथा जैनेन्द्रव्याकरण अनेकांनका भरचा है तथा प्रथमानुयोगके जिनसेनाचार्यकृत आदिपुराण तथा गुणभद्राचार्यकृत उत्तरपुराण इत्यादिक जिनेन्द्रके परमागमके अनुसार उपदेशीग्रंथ तथा पुराण चरित्र आचारके अनेक ग्रंथ हैं तिनकूं बड़ीभक्तितैं पठन करना तथा श्रवण करना तथा व्याख्यान करना तथा वंदना करना लिखना लिखावना शोभना सो समस्त प्रवचनभक्ति है मेरे शास्त्रका अभ्यासमैं जो दिन जाय सो दिन धन्य है परमागमका अभ्यासविना हमारे जो काल जाय सो वृथा है। स्वाध्याय विना शुभध्यान नाहीं होय स्वाध्यायविना पापसूं नाहीं छूटै कषायनिकी मंदता नाहीं होय शास्त्रका सेवन विना संसारदेहभोगनितैं विरागता नाहीं उपजै है समस्त व्यवहारकी उज्ज्वलता परमार्थका विचार आगमका सेवनहीतैं होय है श्रुतका सेवनतैं जगतमैं मान्यता उच्चता उज्ज्वलयश आदरसत्कारकूं प्राप्त होय

है सम्यग्ज्ञान ही परमबांधव है उत्कृष्टधन है परममित्र है सम्यग्ज्ञान ही अविनाशी धन है स्वदेशमैं परदेशमैं सुखअवस्थामैं दुखमैं आपदामैं संपदामैं परमशरणभूत सम्यग्ज्ञान ही है स्वाधीन अविनाशी धन ज्ञान ही है यातैं शास्त्रनिके अर्थहीका सेवन करना अपना आत्माकूं नित्य ज्ञानदान करो अपना संतानकूं तथा अन्य शिष्यनिकूं ज्ञानदान ही करो। ज्ञानदान देने समान कोटिधनका दान नाहीं है धन तो मद उपजावै है विषयनिमैं उरझावै दुर्ध्यान करै संसाररूप अंधकूपमैं डबोवै तातैं ज्ञानदान समान दान नाहीं। एक श्लोक अर्धश्लोक एकपद मात्राहूका जो नित्य अभ्यास करै तो शास्त्रार्थका परिगामी हो जाय। विद्या है सो परमदेवता है जो माता पिता ज्ञानाभ्यास करावैं हैं ते कोट्यां धन दिया। जे सम्यग्ज्ञानके दाता गुरु हैं तिनका उपकारसमान त्रैलोक्यमैं कोऊ उपकारक नाहीं अर ज्ञानके देनेवाला गुरुका उपकारकूं लोपै हैं तिससमान कृतघ्नी नाहीं पापी नाहीं। ज्ञानका अभ्यासविना व्यवहार परमार्थ दोउनिमैं मूढ हैं यातैं प्रवचनभक्तिही परमकल्याण है। प्रवचनका सेवनविना मनुष्य पशुसमान है। या प्रवचनभक्ति हजारां दोपनिका नाश करनेवाली है याका भक्तिपूर्वक अर्घ उतारण करो याहीतैं सम्यग्दर्शनकी उज्ज्वलता होय है। ऐसै प्रवचनभक्ति नामा तेरमी भावना वर्णन करी ॥ १३ ॥

अब आवश्यकापरिहाणि नाम चौदमी भावना वर्णन करैं हैं। अवश्य करनेयोग्य होय ताकूं आवश्यक कहिये है। आवश्यकनिकी जो हानि नाहीं करनेका चिंतवन सो आवश्यकापरिहाणि नाम भावना है। अथवा इंद्रियनिके वश नाहीं सो अवश्य कहिये अवश्य जे मुनि तिनकी जो क्रिया सो आवश्यक है आवश्यककी हानि नाहीं करना सो आवश्यकापरिहाणि कहिये ते आवश्यक छहप्रकार हैं। सामायिक, स्तव, वंदना, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय, कायोत्सर्ग ऐ छह आवश्यक हैं सो कहिये है। जो देहतैं भिन्न ज्ञानमय ही जाके देह ऐसा परमात्मस्वरूप कर्मरहित चैतन्यमात्र शुद्धजीवकूं एकाग्रकरि ध्यावता मुनि है सो सर्वोत्कृष्ट निर्वाणकूं प्राप्त होय है अर जो विकल्परहित शुद्धआत्माके गुणनिमैं आपका मन नाहीं तिष्ठै तो तपस्वीमुनि षट्‌ आवश्यकक्रिया हैं तिनको पुष्ट करो अंगीकार करो अर आवते अशुभ कर्मके आश्र-

वकूं निराकरण करो टालो प्रथम तो सुंदर असुंदर वस्तुमैं तथा शुभ अशुभ कर्मके उदयमैं रागद्वेष मति करो तथा आहार वस्तिकादिकनिका लाभमें वा अलाभमैं समभाव करो जातैं स्तुतिमैं निंदामैं आदरमैं अनादरमैं पाषाणमैं रत्नमैं जीवनमैं मरणमैं वैरीमैं मित्रमें सुखमैं दुखमैं स्मशानमैं महलमैं रागद्वेषरहित परिणाम होना सो समभाव है। जातैं साम्यभावके धारक हैं तैं बाह्य पुद्गलनिकूं अचेतन अर आपतैं भिन्न अर अपने आत्मस्वभावमैं हानि वृद्धिके अकर्त्ता जानि रागद्वेष छांडै है अर आपकूं शुद्ध ज्ञाताद्रष्टारूप अनुभव करता रागद्वेषादिविकार रहित तिष्ठै है ताकै साम्यभाव होय है सोही सामायिक है बहुरि भगवान जिनेंद्रके अनेकनामनिकरि स्तवन करना सो स्तवन नाम आवश्यक है। जो कर्मरूप वैरीकूं आप जीते तातैं जिन हो अर अपनेस्वरूपमैं आपकरि आप तिष्ठे हो तातैं स्वयंभू हो अर केवलज्ञानरूप नेत्रकरि त्रिकालवर्ती पदार्थनिकूं जानो हो तातैं त्रिलोचन हो अर आप मोहरूप अन्धासुरकूं मारया तातैं अंधकांतक हो आप घातियाकर्म रूप अर्धवैरीनिका नाशकरकेही अद्वितीय ईश्वरपना पाया तातैं अर्धनारीश्वर हो आप शिवपद जो निर्वाणपद तामैं बसे तातैं आप शिव हो पापरूप वैरीका संहार करो हो तातैं आप हर हो लोकमैं सुखका कर्त्ता तातैं आप शंकर हो शं जो परमआनंदरूप सुख तामैं उपजे तातैं संभव हो वृष जो धर्म ताकरि दिपो हो तातैं आप वृषभ हो अर जगतके सकल प्राणीनिमैं गुणनिकरि बड़े तातैं जगज्ज्येष्ठ हो क जो सुख ताकरि समस्तजीवनकी पालना करि तातैं आप कपाली हो केवलज्ञानकरि समस्त लोकअलोकमैं व्याप्त हो रहे तातैं आप विष्णु हो अर जन्मजरामरणरूप त्रिपुरकूं मारया तातैं आप त्रिपुरांतक हो ऐसैं एकहजार आठ नामकरि आपका स्तवन इंद्र किया है। अर गुणनिकी अपेक्षा आपका अनंत नाम है। ऐसैं भावनिमैं गुणचिंतवनकरि जो चौवीस तीर्थंकरनिका स्तवन करै है सो स्तवन नाम आवश्यक है ॥ २ ॥ बहुरि चतुर्विंशति तीर्थंकरनिमैं एक तीर्थंकरकी वा अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्वसाधुनमैंतैं एककूं मुख्यकरि स्तुति करना सो वंदना आवश्यक है। ॥ ३ ॥ बहुरि जो समस्त दिनमैं प्रमादके वश होय तथा कषायनिके वश होय

वा विषयनिमैं रागद्वेषी होय कोऊ एकेन्द्रीयादिक जीवनिका घात किया तथा अनर्थक प्रवर्त्तन किया वा सदोषभोजन किया वा किसी जीवका प्राण पीड़ित किया तथा कर्कश कठोर मिथ्यावचन कहा वा किसीकी निंदा अपवाद किया वा अपनी प्रशंसा करी वा स्त्रीकथा भोजनकथा देशकथा राजकथा करी तथा अदत्तधन ग्रहण किया वा परका धनमैं लालसा करी तथा परकी स्त्रीमें राग किया तथा धनपरिग्रहादिकमैं लालसा करी ते समस्त पाप खोटे किये बंधके कारण किये, अब ऐसा पापरूप परिणामनितैं भगवान पंच परमगुरू हमारी रक्षा करहु अब ए परिणाम मिथ्या होहु पंच परमेष्ठीके प्रसादतैं हमारे पापरूपपरिणाम मति होहु ऐसैं भावनिकी शुद्धतावास्ते कायोत्सर्गकरि पंच नमस्कारके नव जाप्य करै ऐसे समस्तदिनकी प्रवृत्तिकूं संध्याकाल चिंतवनकरि पापपरिणामनिकूं निंदना सो दैवसिक प्रतिक्रमण है। अर रात्रिसंबंधी पापका दूरिकरनेके अर्थ प्रभात प्रतिक्रमण करना सो रात्रिक प्रतिक्रमण है। बहुरि मार्गमैं चालनेमैं दोष लाग्या ताकी शुद्धिका जो प्रतिक्रमण सो ऐर्यापथिक प्रतिक्रमण है एकपक्षके दोष निराकरण करनेकेअर्थ पाक्षिक प्रतिक्रमण है च्यार महीनेके दोष निराकरणकेअर्थ प्रतिक्रमण करना चतुर्मासिक प्रतिक्रमण है एक वर्षके दोष निराकरणके अर्थ सांवत्सरिक प्रतिक्रमण है समस्तपर्यायके कालका दोष निराकरणकेअर्थ अंत्यसंन्यासमरणकी आदिमैं प्रतिक्रमण है सो उत्तमार्थप्रतिक्रमण है ऐसैं सप्त प्रकार प्रतिक्रमण है तिनमैं गृहस्थकूं संध्या अर प्रभात तो अपना नफा टोटा अवश्य देखना योग्य है। इहां जो सौ पचास रुपयाका व्यवहार करनेवाला हू आथणै ठिगाई जिताई देखै है तो इस मनुष्यजन्मकी एक एक घड़ी कोटिधनतैं दुर्लभ गयां पाछैं नहीं मिलै है याका विचार हू अवश्य करना जो आज मेरे परमेष्ठीका पूजनमैं स्तवनमैं केता काल गया अर स्वाध्यायमैं पंचपरमगुरुके जापमैं शास्त्रश्रवणमैं तत्त्वार्थकी चरचामैं धर्मात्माकी वैयावृत्तिमैं केता काल गया अर घरके आरंभमैं कषायमैं तथा विकथा करनेमैं विसंवादमैं भोजनादिकमैं वा अन्य इंद्रियनिके विषयनिमैं प्रमादमैं निद्रामैं शरीरके संस्कारमैं हिंसादिक पंच पापनिमैं केता काल गया है ऐसा चिन-

वनकरि पापमैं बहुत प्रवृत्ति भई होय तो आपकूं धिक्कार देय पापबंधके कारणनिकूं घटाय धर्मकार्यमैं आत्माकूं युक्त करना योग्य है पंचमकालमैं प्रतिक्रमण ही परमागममें धर्म कह्या है। आत्माका हितअहितका विचारमैं निरंतर उद्यमी रहना योग्य है। यो प्रतिक्रमण आत्माकी बड़ी सावधानी करनेवाला है अर पूर्वले किये पापकी निर्जरा करै है ॥ ४ ॥ बहुरि आगामि कालमैं आपके आस्रवके रोकनेकेअर्थ पापनिका त्याग करना जो आगे मैं ऐसा पाप कबहू मन वचन कायस्यों नाहीं करूंगा सो प्रत्याख्यान नाम आवश्यक सुगतिका कारण है। ॥ ५ ॥ बहुरि च्यारअंगुलके अंतरालै दोऊ पग बराबरकरि खडा रहै दोऊ हस्तनिकूं लंबायमानकरि देहस्यों ममता छांडि नासिकाका अग्रमैं दृष्टि धारि देहतैं भिन्न शुद्धआत्माकी भावना करना सो कायोत्सर्ग है। सो निश्चय पद्मासनतैं हू होय अर खड्गासनकरि हू होय दोऊनिमैं शुक्लध्यानका अवलंबनतैं सफल है ॥ ६ ॥ ए छह आवश्यक परमधर्मरूप हैं इनकूं पूजि पुष्पांजलि क्षेपि अर्घ उतारण करना योग्य है। बहुरि ए छह आवश्यक परमागममैं छह छह प्रकार कह्या है। नाम स्थापना द्रव्य क्षेत्र काल भाव करि षट्प्रकार जानना। शुभ अशुभ नामकूं श्रवणकरि रागद्वेष नाहीं करना सो नाम सामायिक है। कोऊ स्थापना प्रमाणादिककरि सुंदर है कोऊ प्रमाणादिकरि हीनअधिककरि असुंदर है तिनके विषै रागद्वेषका अभाव सो स्थापना सामायिक है। सुवर्ण रूपा रत्न मोती इत्यादिक अर मृत्तिका काष्ठ पाषाण कंटक क्षार भस्म धूल इत्यादिकनिमैं रागद्वेषरहित सम देखना सो द्रव्यसामायिक है। महल उपवनादि रमणीक श्मशानादिक अरमणीक क्षेत्रमैं रागद्वेष छांडना सो क्षेत्र सामायिक है हिम शिशिर वसंत ग्रीष्म वर्षा शरत् ये ऋतु अर रात्रि दिवस अर शुक्लपक्ष कृष्णपक्ष इत्यादि काल विषैं रागद्वेषका वर्जन सो काल सामायिक है। अर समस्तजीवनिके दुःख मति होहु ऐसा मैत्रीभावकरि अशुभ परिणामनिका अभाव करना सो भावसामायिक है ऐसें छहप्रकार सामायिक कह्या। अब छहप्रकार स्तवन कहैं हैं चतुर्विंशति तीर्थंकरनिका अर्थसहित एकहजारआठ नामकरि स्तवन करना सो नामस्तवन है अर कृत्रिम अकृत्रिम अपरिमाण तीर्थंकर अरहंतनिके प्रतिबिंबनिका स्तवन सो स्थापना-

स्तवन है अर समवसरणस्थित काल देह प्रभा प्रातिहार्यादिकनिकरि स्तवन सो द्रव्यस्तवन है। अर कैलाश संमेदाचल ऊर्जयंत (गिरनार) पावापुर चंपापुरादि निर्वाणक्षेत्रनिका तथा समवसरणमैं धर्मोपदेशका क्षेत्रका स्तवन सो क्षेत्रस्तवन है। अर स्वर्गावतरण जन्म तप ज्ञान निर्वाणकल्याणकके कालका स्तवन सो कालस्तवन है अर केवलज्ञानादिअनंतचतुष्टयभावका स्तवन सो भावस्तवन है ऐसैं छहप्रकार स्तवन कह्या। ए तीर्थंकर वा सिद्ध तथा आचार्य उपाध्याय साधु इनमैं एकका नामका उच्चारण करना सो नामवंदना है। अर अरहंत सिद्ध आचार्यादिकनिमैं एकका प्रतिबिंबादिककी वंदना सो स्थापनावंदना है। तिनके शरीरकी वंदना सो द्रव्यवंदना है। अरहंत सिद्ध आचार्यादिकनिकरि व्याप्त जो क्षेत्र ताकी वंदना सो क्षेत्रवंदना है। तिन ही पंचपरमगुरुनिमैं कोऊ एककरि व्याप्त जो काल ताकी वंदना सो कालवंदना है। एक तीर्थंकरका वा सिद्धका वा आचार्यका वा उपाध्यायका वा साधुके आत्मगुणनिकूं वंदना करना सो भाववंदना है। ऐसैं छहप्रकार वंदना कही। अब छहप्रकार प्रतिक्रमण कहैं हैं। अयोग्य नामके उच्चारणमैं कृतकारितअनुमोदनारूप मनवचनकायतैं उपज्या दोषका निराकरणकेअर्थि प्रतिक्रमण करना सो नामप्रतिक्रमण है। कोऊ शुभअशुभस्थापनाका निमित्ततैं मनवचनकायतैं उपज्या दोषतैं आत्माकूं निवृत्त करना सो स्थापनाप्रतिक्रमण है। अर द्रव्य जो आहार पुस्तक औषधादिकके निमित्ततैं मनवचनकायतैं उपज्या दोषका निराकरणकेअर्थ द्रव्यप्रतिक्रमण है। क्षेत्रमैं गमनस्थानादिकके निमित्ततैं उपज्या अशुभपरिणामजनित दोषनिका निराकरणके अर्थ क्षेत्रप्रतिक्रमण है। अर दिवस रात्रि पक्ष ऋतु शीत उष्ण वर्षाकाल इनके निमित्ततैं उपज्या अतीचारका दूरकरनेकूं प्रतिक्रमण करना सो कालप्रतिक्रमण है। अर रागद्वेषादिभावनितैं उपज्या दोषके दूर करनेकूं भावप्रतिक्रमण है। बहुरि अयोग्य पापके कारण जे नाम उच्चारणकरनेका त्याग सो नामप्रत्याख्यान है अर अयोग्य मिथ्यात्वादिकके प्रवर्तावनेवाली स्थापना करनेका त्याग सो स्थापनाप्रत्याख्यान है। पापबंधका कारण सदोषद्रव्य वा तपकेनिमित्त निर्दोषद्रव्यका हू मनवचनकायकरि त्याग सो द्रव्यप्रत्याख्यान है। बहुरि असंजमका कारण क्षेत्रका त्याग सो

क्षेत्रप्रत्याख्यान है। असंजमका कारण कालका त्याग सो कालप्रत्याख्यान है। मिथ्यात्व असंजम कषायादिकनिका त्याग सो भावप्रत्याख्यान है। ऐसैं छहप्रकार प्रत्याख्यानवर्णन कीया। अब छहप्रकार कायोत्सर्गकूं कहैं हैं। पापके कारण कठोर कटुक नामादिकतैं उपज्या दोषका दूरकरनेके अर्थ कायोत्सर्ग करना सो नामकायोत्सर्ग है। पापरूप स्थापनाका द्वारकरि आया अतीचार दूरकरनेकूं कायोत्सर्ग करना सो स्थापनाकायोत्सर्ग है। सदोषद्रव्यके सेवनतैं तथा सदोष क्षेत्रकालके सेवनतैं संयोगतैं उपज्या दोष दूरकरनेकूं कायोत्सर्ग करना सो द्रव्य क्षेत्र काल कायोत्सर्ग है। मिथ्यात्व असंजमादिक भावनिकरि कीया दोष दूरकरनेकूं कायोत्सर्ग करना सो भावकायोत्सर्ग है। ऐसैं छहप्रकार छहआवश्यक वर्णन कीये। अब गृहस्थके और हू छहप्रकारके आवश्यक हैं। भगवान-जिनेन्द्रका नित्य पूजन करना, निर्ग्रंथगुरुनिका सेवन स्तवन चिंतवन नित्य करना, अर जिनेन्द्रके प्ररूपे आगमका नित्य स्वाध्याय करना, इंद्रियनिकूं विषयनितैं रोकना छहकायके जीवनकी दया पालना सो संयम है, शक्तिप्रमाण नित्य तप करना, शक्ति प्रमाण नित्य दान देना ए षट्प्रकार हू आवश्यक गृहस्थकूं नित्य नियमतैं अंगीकार करना योग्य है। ऐसैं समस्तपापका नाश करनेवाली भावनिकूं उज्ज्वल करनेवाली आवश्यकनिकी हानिका अभावरूप चौदमी भावना वर्णन करी ॥ १४ ॥

अब सन्मार्गप्रभावना नाम पंद्रमीभावना वर्णन करैं हैं। इहां सन्मार्ग जो मोक्षका सत्यार्थमार्ग ताका प्रभाव प्रकट करना सो मार्गप्रभावना है। सो सन्मार्ग रत्नत्रय है रत्नत्रय आत्माका स्वभाव है याकूं मिथ्यात्व राग द्वेष काम क्रोध मान माया लोभ ए अनादितैं मलीन विपरीत करि राख्या है अब परमागमका शरण पाय योकूं मिथ्यात्वादिक दोषनिकूं दूरिकरि रत्नत्रयस्वभावकूं उज्ज्वल करना। यो मनुष्यजन्म अर इंद्रियपूर्णता अर ज्ञानशक्ति अर परमागमका शरण अर साधर्मीनिका समागम अर रोगादिकरहितपना अर अतिक्लेशरहितजीविका इत्यादिक पुण्यरूप सामग्री पायकरकै हू जो आत्माकूं मिथ्यात्वकषायविषयादिकनैं नाहीं छुड़ाया तो अनंतानंतदुःखनिका भरया संसारसमुद्रतैं मेरा

निकसना अंतकालहूमैं नाहीं होयगा जो सामग्री अबार मिली है सो अनंतकालमैं हू अति दुर्लभ है अर अंतरंग बहिरंग सकलसामग्री पायकरिके हू जो आत्माका प्रभाव नाहीं प्रगट करूंगा तो अचानक काल आय समस्तसंयोग नष्ट करदेगा तातैं अब मैं रागद्वेष मोह दूरकरि जैसैं मेरा शुद्ध वीतरागस्वरूप अनुभवगोचर होय तैसैं ध्यान स्वाध्यायमैं तत्पर होना। बहुरि बाह्यप्रवृत्ति भी मेरी उज्ज्वलकरि अंतर्गतधर्मका प्रभाव प्रगटकरि मार्गप्रभावना करनी जाकूं देखि अनेक जीवनिके हृदयमैं धर्मकी महिमा प्रवेश करिजाय। जिनेन्द्रका उत्सव ऐसा करना जाकूं देखि हजारां लोकनिका भाव जिनेन्द्रके जन्म कल्याणसमय जैसे इन्द्रादिक देव अभिषेककरि अपना जन्म सफल किया तैसैं जयजयकार शब्दकरि हजारां स्तवनका उच्चारणकरि लोक आपकूं कृतार्थ मानै तन मन प्रफुल्लित होजाय तैसैं अभिषेककरि प्रभावना करना तथा जिनेन्द्रकी बड़ी भक्ति अर बड़ी विनय अर निश्चलध्यानकरि ऐसे पूजन करो जाकूं करते देखते अर शुद्धभक्तिके पाठ पढ़ते तथा श्रवण करते हर्षके अंकूरे प्रगट होय आनंदहृदयमैं नाहीं समावना वाला उछलने लगजाय जिनकूं देखि मिथ्यादृष्टिनिका हू ऐसा परिणाम होजाय अहो जैनीनिकी भक्ति आश्चर्यरूप है जामैं ये निर्दोष उत्तम उज्ज्वल प्रमाणिक सामग्री अर ये उज्ज्वल सुवर्णके रूपाके तथा कांसी पीतलमय मनोहर पूजनके पात्र अर ये भक्तिके रसकरि भरे अर्थसहित कर्णनिकूं अमृतरूप वांचने शुद्धअक्षरनिका उच्चारण अर एकाग्ररूप विनयसहित शब्दनिके अनुकूल उज्ज्वलद्रव्यका चढ़ावना अर ये परमशांतमुद्रारूप वीतरागके प्रतिबिंब प्रातिहार्यनिकरि भूषितका पूजना स्तवन करना नमस्कार करना धन्य पुरुषनिकरि ही होय है। धन्य इनकी भक्ति धन्य इनका जन्म अर धन्य इनका मनवचनकाय अर धन्य इनका धन जो निर्वांछक होय ऐसे सन्मार्गमैं लगावैं हैं। ऐसा प्रभाव व्याप्त होजाय। अर देखनेतैं अर श्रवण करनेतैं निकटभव्यनिके आनंदके अश्रुपात झरने लगिजाय। भक्तितैं संसारसमुद्रमैं डूबतोनिकूं हस्तावलंबन देनेवाली है हमारे भवभवमैं जिनेन्द्रकी भक्ति ही शरण होहु ऐसा जिनेन्द्रका नित्य पूजन करना तथा अष्टाह्निक पर्वमैं तथा षोडशकारण दश लक्षण रत्नत्रय पर्वमैं समस्त पापके

आरंभ छांडि जिनपूजन करना आनंदसहित नृत्य करना कर्णनिकूं प्रिय ऐसे वादित्र बजावना तथा स्वर ताल मूर्छनादिसहित जिनेन्द्रके गुण गावनेतें समस्त सन्मार्ग प्रभावना है। सो जिनके हृदयमें सत्यार्थधर्म बसै है तिनके प्रभावना होय है। बहुरि जिनेंद्रके प्ररूपे च्यारअनुयोगनिके सिद्धांतनिका ऐसा व्याख्यान करना जाकूं श्रवण करनेतें एकांतका हठ नष्ट होय अनेकांत हृदयमें रमि जाय पापनितें कांपने लगिजाय व्यसन छूटिजाय दयारूपधर्ममें प्रवर्तन होजाय अभक्ष्यभक्षणका त्याग होजाय ऐसा व्याख्यान करना जाके श्रवण करनेतें हजारां मनुष्यनिके कुदेव कुगुरु कुधर्मके आराधनका त्याग होयकै अर वीतराग देव दयारूपधर्म आरंभपरिग्रहरहित गुरुनिके आराधनमें दृढश्रद्धान होजाय तथा ऐसा व्याख्यान करना जो श्रवणकरि बहुत मनुष्य रात्रिभोजन अयोग्यभोजन अन्यायका विषय परधनमें रागछांडि व्रतनिमें शीलमें संजमभावमें संतोषभावमें लीन होय जाय। तथा ऐसा उपदेश करना जाकरि देहादिक परद्रव्यनितें भिन्न अपने आत्माका अनुभव होना पर्यायमें आपा छूटना जीव अजीवादिक द्रव्यनिका प्रमाणनयनिक्षेपनिकरि निर्णय होय संशयरहित द्रव्यगुणपर्यायनिका सत्यार्थ स्वरूप प्रगट होजाना मिथ्या अंधकार दूर होना ऐसा आगमका व्याख्यानतें सन्मार्गकी प्रभावना होय है। बहुरि घोर तपश्चरण करना जो कायरनिकरि नाहीं धारण कियाजाय ऐसें तपकरि प्रभावना होय है। क्योंकि विषयानुरागछांडि निर्वांछक होनेकरि आत्माका प्रभाव भी प्रगट होय है अर धर्मका मार्ग भी तपहीतें दिपै है। यो तप ही दुर्गतिका मार्गका नष्ट करनेवाला है। तप विना कामादिकविषय ज्ञानकूं चारित्रकूं नष्टकरिदेहै तपके प्रभावतें कामका क्षय होय रसनाइंद्रियकी चपलता नष्ट होय लालसाका अभाव होय है यातैं रत्नत्रयकी प्रभावना तपहीतें दृढ होय है। बहुरि जिनेन्द्रका प्रतिबिंबकी प्रतिष्ठा करना जिनेन्द्रका मंदिर करावना यातें सन्मार्गकी प्रभावना है जातें प्रतिष्ठा करावनेकरि जहांताई जिनबिंब रहेगा तहांताई दर्शन स्तवन पूजनादिकरि अनेकभव्य पुण्यउपार्जन करैंगे अर जिनमंदिर करावैंगे तिन गृहस्थनिका ही धनपावन सफल होयगा। पूजन रात्रिजागरण शास्त्रनिका व्याख्यान श्रवण पठन जिनेन्द्रका स्त-

वन सामायिक प्रतिक्रमण अनशनादिकतप नृत्य गान भजन उत्सव जिनमंदिर होय तदि ही होय जिनमंदिरविना धर्मका समस्त समागम होय ही नाहीं यातैं बहुत कहा लिखिये अपना अर परका परम उपकारका मूल प्रतिष्ठा करना अर मंदिर करावना है उत्कृष्टधर्मका मार्ग तो समस्तपरिग्रहछांडि वीतरागता अंगीकार करना है परंतु जाके प्रत्याख्यान वा अप्रत्याख्यान नाम कषायका उपशम भया नाहीं तातैं गृहसंपदा छांडि जाय नाहिं अर धनसंपदा बहुत होय तो प्रथम तो जिनका आप अन्यायसूं धन लियाहोय ताके निकट जाय क्षमा ग्रहण कराय उनका धन लौटा देना बहुरि धन बहुत होय तद नवीनधन उपार्जनका त्याग करना बहुरि तीव्ररागके बधावनेवाले इंद्रियनिके विषयनिकी लालसा छांडि त्यागकरि संवररूप होना फिर जो धन है तामैंसूं अपने मित्र हितू पुत्री बहण भूवा बंधुजननिमैं जे निर्धन रोगी दुःखित होय तीनको वा अनाथ विधवा होय तिनको यथायोग्य देय संतोषित करना बहुरि अपने आश्रित सेवकादिक वा समीप वसनेवाले तिनको यथायोग्य संतोषित करकैं बहुरि पुत्रको स्त्रीको विभागादिक निराला करि पीछैं जो द्रव्य होय ताकूं जिनबिंबके करावनेमैं वा जिनबिंबकी प्रतिष्ठा करावनेमैं तथा जिनेन्द्रके धर्मका आधार सिद्धांतनिके लिखावनेमैं कृपणताछांडि उदारमनतैं परके उपकार करनेकी बुद्धितैं धन लगावै है तिस समान कोऊ प्रभावना नाहीं है अर जे मंदिरप्रतिष्ठा तो करावैगा अर अनीतिकरि परधन राखि मेलैगा अन्यायका धनकूं ग्रहण करैगा तो ताकी समस्त प्रभावना नष्ट होजायगी तथा प्रतिष्ठा करावनेवाला मंदिर करावनेवाला खोटा वनिज व्यौहार करै तथा हिंसादिक महापापनिमैं निंद्य अयोग्य वचननिमैं तथा तीव्रलोभमैं प्रवर्तै तथा कुशीलमैं प्रवर्तै तथा अतिकृपणताकरि परिणाममैं संक्लेशरूप हुआ धनकूं खरच करै तो समस्त प्रभावना नष्ट होजाय यातैं प्रतिष्ठाका करावनेवाला मंदिर करावनेवालाकी बाह्य प्रवृत्ति भी शुद्ध होय है ताकी प्रभावना होय है तथा शिखर कलश घंटा चढ़ावनेकरि क्षुद्रघंटिका बांधने करि प्रभावना करै तथा मंदिरनिमैं चंदवा घंटा सिंहासनादि उत्तमउपकरण चढ़ावनेकरि अर स्वाध्यायमैं

प्रवृत्ति इत्यादिकरि प्रभावना दुःखका नाश करनेवाली होय है प्रभावना शुद्ध आचरणकरि होय है यातैं जिनवचनका श्रद्धानी होय सो धर्मकी प्रभावना ही करैं जैनीनिका गाढ़ देखि मिथ्यादृष्टीनिके हृदयमैं हू बड़ी महिमा प्रगट दीखै जैनीनिका धर्म जो प्राण जातैं हू अभक्षण नाहीं करैं हैं तीव्र रोगवेदना आवतैं हू रात्रिमैं औषधि जलादिकका पान नाहीं करैं हैं धनअभिमानादिक नष्ट होतैं हू असत्यवचनादि नाहीं बोलैं हैं महाआपदा आवतैं हू परधनमैं चित्त नाहीं चलावै हैं। अपना प्राण जातैं हू अन्यजीवका घात नाहीं करैं हैं तथा शीलकी दृढ़ता परिग्रहपरिमाणता परमसंतोष धारण करनेतैं आत्मप्रभावना होय अर मार्गकी प्रभावना हू होय तातैं समस्तधन जातैं हू अर प्राणजाते हू अपने निमित्ततैं धर्मकी निंदा हास्य कदाचित नाहीं करावै ताकै सन्मार्गप्रभावना अंग होय है। इस प्रभावनाकी महिमा कोटजिह्वानितैं वर्णन करनेकों कोऊ समर्थ नाहीं है यातैं भो भव्यजन हो त्रिलोकमैं पूज्य जो प्रभावनाअंग ताकूं दृढ धारणकरि याहीकूं भक्तिकरि पूजो याका महाअर्घ उतारण करो जो प्रभावनाकूं दृढ़ धारण करै है सो इंद्रादिक देवनिकरि पूज्य तीर्थंकर होय हैं ऐसैं सन्मार्गप्रभावना नामा पंद्रहमी भावना वर्णन करी ॥ १५ ॥

अव प्रवचनवत्सलत्व नाम सोलमी भावना वर्णन करैं हैं। प्रवचन जो देव गुरु धर्म इनिमैं जो वात्सल्य कहिये प्रीतिभाव सो प्रवचनवत्सलत्व नाम कहिये है। जे चारित्रगुणयुक्त हैं शीलके धारक हैं परम साम्यभावकरि सहित बाईसपरसिहनिके सहनेवाले देहमैं निर्ममत्व समस्तविषय वांछारहित आत्महितमैं उद्यमी परके उपकार करनेमैं सावधान ऐसे साधुजननिके गुणनिमैं प्रीतिरूपपरिणाम सो वात्सल्य है तथा व्रतनिके धारक अर पापतैं भयभीत न्यायमार्गी धर्ममैं अनुरागके धारक मंदकषायी संतोषी ऐसे श्रावक तथा श्राविका तिनके गुणनिमैं तिनकी संगतिमैं अनुराग धारणकरना सो वात्सल्य है तथा जे स्त्रीपर्यायमैं व्रतनिकी हदकूं प्राप्त भये अर समस्त गृहादिक परिग्रह छांड़ि कुटंबका ममत्व तजि देहमैं निर्ममत्वता धरि पंच इंद्रियनिके विषय त्यागि एकवस्त्रमात्र परिग्रहकूं अवलंबनकरि भूमि-

शयन क्षुधा तृषा शीतउष्णादि परिसहनिके सहनेकरि संयमसहित ध्यान स्वाध्याय सामायिकादिक आवश्यकनिकरि युक्त अर्जिकाकी दीक्षा ग्रहणकरि संयमसहित काल व्यतीत करैं हैं तिनके गुणनिमैं अनुराग सो वात्सल्यभाव है तथा मुनीश्वरनिकी ज्यों वनमैं निवास करने बाईस परीसह सहते उत्तम क्षमादि धर्मके धारक देहमैं निर्ममत्व आपके निमित्त किया औषध अन्न पानादि नाहीं ग्रहण करते एकवस्त्र कोपीनाविना समस्तपरिग्रहके त्यागी उत्तमश्रावकनिके गुणनिमैं अनुराग सो वात्सल्य है तथा देव गुरु धर्मका सत्यार्थ स्वरूपकूं जानि दृढश्रद्धानी धर्ममैं रुचिके धारक अव्रतसम्यग्दृष्टीमैं वात्सल्यता करहु। इस संसारमैं अपने स्त्री पुत्र कुटुंबादिकनिमैं तथा देहमैं इंद्रियनिके विषयनिमैं विपर्यानके साधकनिमैं अनादिनै अतिअनुरागी होय याहीके अर्थि कटैं हैं मरैं हैं अन्यकुं मारैं हैं ऐसा कोऊ मोहका अद्भुत माहात्म्य है। ते धन्यपुरुष हैं जे सम्यग्ज्ञानतैं मोहकूं नष्टकरि आत्माके गुणनिमैं वात्सल्यता करैं हैं संसारी नो धनकी लालसाकरि अति आकुल भए धर्ममैं वात्सल्यता त्यागैं हैं अर संसारीनिकै धन वधै है तदि अति तृष्णा वधै है। समस्त धर्मका मार्ग भूलजाय धर्मात्मानिमैं दूरहीतैं वात्सल्यता त्यागै है रात्रिदिन धनसंपदाके वधावनेमैं ऐसा अनुराग वधै है लाखनिका धन होजाय तो कोटिनिमैं वांछा करना आरंभपरिग्रहकूं वधावता पापनिमैं प्रवीणता वधावता धर्ममैंवात्सल्यनियमनैं छांड़ैं हैं जहां दानादिकनिमैं परोपकारमैं धन लगावता दीखै तहां दूरहीतैं टलि निकलै है अर वहुआरंभ वहुपरिग्रह अति तृष्णातैं समीप आया नरकका वास ताकूं नाहीं दीखै है तामैं पंचमकालका धनाढ्य जो पूर्वै मिथ्याधर्म कुपात्रदान कुदाननिमैं राचि ऐसा कर्म बांधि आया है सो नरक तिर्यंचगतिकी परिपाटी असंख्यातकाल अनंतकालपर्यंत नाहीं छूटै उनका तन मन वचन धन धर्मकार्यमैं नाहीं लागै है। रात्रिदिन तृष्णा अर आरंभकरि क्लेशित रहै तिनकै धर्मात्मामैं अर धर्मके धारणमैं कदाचित वात्सल्यता नाहीं होय है अर धनरहित धर्मात्मा हू होय ताकूं नीचा मानै है तातैं भो आत्महितके वांछक हो धनसंपदाकूं महामदकी उपजावनेवाली जानि अर देहकूं अस्थिर दुःखदायी जानि कुटुंबकूं महाबंधन मानि

इनसूं प्रीति छांड़ि अपने आत्मासूं वात्सल्य करो। धर्मात्मामें व्रतीनिमें स्वाध्यायमें जिनपूजनमें वात्सल्यता करो जे सम्यक्चारित्ररूप आभरण करि भूषितसाधूजन हैं तिनको स्तवन करे है गौरव करे है। तिनके वात्सल्यनाम गुण है सो सुगतिकूं प्राप्त करे है कुगतिका नाश करे है वात्सल्यगुणके प्रभाव करके ही समस्त द्वादशांगविद्या सिद्ध होय है जातें सिद्धांतसूत्रमें अर सिद्धांतका उपदेश करनेवाला उपाध्यायमें सांची भक्तिके प्रभावतें श्रुतज्ञानावरणकर्मका रस सूकिजाय है तदि सकलविद्या सिद्ध होय हैं। वात्सल्यगुणके धारककूं देव नमस्कार करै हैं अर वात्सल्य करके ही अठारह प्रकार बुद्धि ऋद्धि अर आकाशगामनी क्रिया ऋद्धि दोयप्रकार चारणऋद्धि अनेकप्रकार अर अष्टप्रकार विक्रियाऋद्धि तीनप्रकार बलऋद्धि सप्तप्रकार तपऋद्धि छहप्रकार रसऋद्धि छहप्रकार औषधऋद्धि दोयप्रकार क्षेत्रऋद्धि इत्यादिक अनेकशक्ति प्रगट होय हैं। इहां ऋद्धिनिका स्वरूप कहिये तो ग्रन्थ बधिजाय तातें नाहीं लिख्या है अर्थप्रकाशिकादिनिमें लिख्या है तहांतें जानना। वात्सल्य करके ही मंदबुद्धीनिकै हू मतिज्ञान श्रुतज्ञान विस्तीर्ण होय है वात्सल्यके प्रभावतें पापका प्रवेश नाहीं होय है वात्सल्य करके तप हू भूषित होय है तप मैं उत्साहबिना तप निरर्थक है। सो जिनेन्द्रको मार्ग वात्सल्यकरिही शोभाकूं प्राप्त होय है। वात्सल्यकरि ही शुभ ध्यान शुद्धिकूं प्राप्त होय है वात्सल्यतें ही सम्यग्दर्शन निर्दोष होय है। वात्सल्य करके ही दानादिक कृतार्थ होय है। पात्रमें प्रीतिबिना तथा देनेमें प्रीतिबिना दान निंद्यका कारण है जिनवाणीमें वात्सल्य जाके होयगा ताहीके प्रशंसा योग्य सांचा अर्थ उद्योतरूप होयगा जाके जिनवाणीमें वात्सल्य नाहीं विनय नाहीं ताकूं यथावत अर्थ नाहीं दीसैगा विपरीत ग्रहण करैगा इस मनुष्यजन्मका मंडन वात्सल्य ही है वात्सल्यरहित बहुत मनोज्ञ आभरण वस्त्र धारण करता हू पदपदमें निंद्य होय है। अर इसलोकका कार्य जो यशको उपार्जन धर्मको उपार्जन धनको उपार्जन सो वात्सल्यहीतें होय है। अर परलोक जो स्वर्गलोकमें महर्द्धिक देवपना सो हू वात्सल्यहीतें होय है वात्सल्यबिना इसलोकका समस्त कार्य नष्ट होजाय अर परलोकमें देवादिगति नाहीं पावै है। बहुरि अरहंतदेव निर्ग्रंथगुरु

स्याद्वादरूप परमागमदयारूपधर्ममैं वात्सल्य है सो संसारपरिभ्रमणका नाशकरि निर्वाणकूं प्राप्त करै है तथा वात्सल्यतैं ही जिनमंदिरका वैयावृत्त्य जिनसिद्धांतका सेवन साधर्मीनिका वैयावृत्त्य तथा धर्ममैं अनुराग दान देनेमैं प्रीति ये समस्तगुण वात्सल्यतैं ही होय है जे षट्कायके जीवनिमैं वात्सल्य किया है ते ही त्रैलोक्यमैं अतिशयरूप तीर्थंकर प्रकृतिका उपार्जन करै हैं यातैं जे कल्याणके इच्छक हैं ते भगवान जिनेन्द्रका उपदेश्या वात्सल्यगुणकी महिमा जानि षोड़षमा अंग जो वात्सल्य ताका स्तवनकरि पूजनकरि याका महान अर्घ उतारण करै है। सो दर्शनकी विशुद्धता पाय बहुरि तप आचरणकरि अहमिंद्रादि देवलोककूं प्राप्त होय फिरि जगतका उद्धारक तीर्थंकर होय निर्वाणकूं प्राप्त होय है। षोड़श कारण धर्मकी महिमा अचिंत्य है जातैं त्रैलोक्यमैं आश्चर्यकारी अनुपम विभवके धारक तीर्थंकर होय हैं ऐसे षोड़सभावनाका संक्षेपविस्ताररूप वर्णन किया ॥ १६ ॥

अब धर्मका स्वरूप दशलक्षण रूप है इन दश चिन्हनिकरि अंतर्गतधर्म जानिये है। उत्तमक्षमा, उत्तममार्दव उत्तमआर्जव, उत्तमसत्य, उत्तमशौच, उत्तमसंयम, उत्तमतप, उत्तमत्याग, उत्तमआकिंचन्य, उत्तमब्रह्मचर्य ए दश धर्मके लक्षण हैं। जातैं धर्म तो वस्तुका स्वभावहीकूं कहिये है लोकमैं जेते पदार्थ हैं तितने अपने स्वभावकूं कदाचित नाहीं छांड़ैं हैं। जो स्वभावका नाश होजाय तो वस्तुका अभाव होय नाहीं आत्मानामवस्तुका स्वभाव क्षमादिकरूप है अर क्रोधादिक कर्मजनित उपाधि हैं आवरण हैं क्रोध नाम धर्मका अभाव होय तदि क्षमा नाम आत्माका स्वभाव स्वयमेव रहै है ऐसैं ही मानका अभावतैं मार्दवगुण अर मायाके अभावतैं आर्जवगुण लोभके अभावतैं शौचगुण इत्यादिक आत्माके गुण हैं ते कर्मके अभावतैं स्वयमेव प्रगट होय हैं तातैं ये उत्तमक्षमादिक आत्माका स्वभाव हैं मोहनी कर्मके भेद क्रोधादिक कषायनिकरि अनादिका आच्छादित होय रहे हैं कषायके अभावतैं क्षमादिक स्वाभाविकआत्माका गुण उघड़ै है।

अब उत्तमक्षमागुणकूं वर्णन करैं हैं—क्रोध वैरीका जीतना सो ही उत्तमक्षमा है कैसाक है

क्रोधवैरी इस जीवके निवास करनेका स्थान जे संयमभाव संतोषभाव निराकुलताभाव ताकूं दग्ध करनेकूं अग्नि समान है सम्यग्दर्शनादिरूप रत्ननिका भंडारकूं दग्ध करै है यशकूं नष्ट करै है अपयशरूप कालिमाकूं बधावै है धर्मअधर्मका विचार नष्ट होय जाय है क्रोधीकै अपना मन वचन काय आपकै वस नाहीं रहै है। बहुत कालहूकी प्रीतिकूं क्षणमात्रमैं विगाड़ि महान वैर उत्पन्न करै है क्रोधरूप राक्षसके वस होय सो असत्यवचन लोकनिंद्य भीलचांडालादिकनिके बोलनेयोग्य वचन बोलै है। क्रोधी समस्त धर्म लोपै है क्रोधी होय तब पितानै मारि नाखै माताकूं पुत्रकूं स्त्रीकूं बालककूं स्वामीकूं सेवककूं मित्रकूं मारि प्राणरहित करै है। अर तीव्रक्रोधी आपका हू विषतैं शस्त्रतैं मरण करै है ऊंचे मकान तथा पर्वतादिकतैं पतन करै है कूपमैं पड़ै है क्रोधीकी काऊप्रकार प्रतीत नाहीं जाननी। क्रोधी है सो यमराजतुल्य है क्रोधी होय सो प्रथम तो अपना ज्ञान दर्शन क्षमादिक गुणनिकूं घातै है पीछै कर्मके वशतैं अन्यका घात होय वा नाहीं होय क्रोधके प्रभावतैं महातपस्वी दिगम्बरमुनि धर्मतैं भ्रष्ट होय नरक गये हैं। यो क्रोध है सो दोऊ लोकका नाश करै है महा पापबंध कराय नरक पहुंचावै है बुद्धि भ्रष्ट करै है निर्दयी करदे है अन्यकृतउपकारकूं भुलाय कृतघ्न करै है तातैं क्रोधसमान पाप नाहीं इसलोकमैं क्रोधादिकषाय समान अपना घात करनेवाला अन्य नाहीं है। जो लोकमें पुन्यवान है महाभाग्य है जिनका दोऊलोक सुधरना है तिनहीके क्षमा नाम गुण प्रगट होय है क्षमा जो पृथ्वी ताकी ज्यों सहनेका स्वभाव होय सो क्षमा है अर सम्यक स्वपरकूं हित अहितकूं समझकरि जो असमर्थनिकरि किया हू उपद्रवनिकूं आप समर्थ होय करके रागद्वेषरहित हुवा सहै है विकारी नाहीं होय है ताकूं उत्तमक्षमा कहिये है। इहां उत्तमशब्द सम्यग्ज्ञानसहित होनेकूं कह्या है। उत्तमक्षमा त्रैलोक्यमैं सार है उत्तमक्षमा संसारसमुद्रतैं तारनेवाली है उत्तमक्षमा है सो रत्नत्रयकूं धारण करनेवाली है उत्तमक्षमा दुर्गतिके दुःखनिकूं हरनेवाली है जाके क्षमा होय ताके नरक अर तिर्यंच दोऊ गतिनमैं गमन नाहीं होय है उत्तमक्षमाकी लार अनेकगुणनिके समूह प्रगट होय है मुनीश्वरनिकूं तो

तो अति प्यारी उत्तमक्षमा है उत्तमक्षमाका लाभकूं ज्ञानीजन चिंतामणिरत्न मानैं हैं अर उत्तमक्षमा ही मनकी उज्ज्वलता करै है क्षमागुणविना मनकी उज्ज्वलता अर स्थिरता कदाचित ही नाहीं होय है वांछित सिद्ध करनेवाली एक क्षमा ही है। इहां क्रोधके जीतनेकी भावना ऐसी जाननी—कोऊ आपकूं दुर्वचनादिकरि दुःखित करै गाली दे चोर कहै अन्यायी पापी दुराचारी दुष्ट नीच वा दोगलो चांडाल पापी कृतघ्नी ऐसैं अनेक दुर्वचन कहै तो ज्ञानी ऐसी भावना करै जो याका मैं अपराध किया है कि नाहीं किया है। जो मैं याका अपराध किया तथा रागद्वेषमोहका वसतैं कोई वातकरि दुखाया है तदि तो मैं अपराधी हूं मोकूं गाली देना धिक्कार देना नीच चोर कपटी अधर्मी कहना न्याय है. मोकूं इस सीवाय भी दंड देना सो भी ठीक है मैं अपराध किया है मोकूं गालीसुनि रोष नाहीं करना ही उचित है। अपराधीकूं नरकमैं दंड भोगना पड़ै है तातैं मेरा निमित्ततैं याकूं दुःख भया तदि क्लेशित होय दुर्वचन कहै है ऐसा विचारकरि क्लेशित नाहीं होय क्षमाही करै है अर जो दुर्वचन कहनेवाला मंदकषायी होय तो आप जाय क्षमा ग्रहण करावनेकूं कहै भो कृपालु ! मैं अज्ञानी प्रमादके वस वा कषायके वस होय आपका चित्तकूं दुखाया सो अब मैं अपराध माफ कराऊं हुं आगानैं ऐसा कार्य चूककरि नाहीं करूंगा एकबार चूकिजाय ताकी चूककूं महंतपुरुष माफ करैं हैं अर जो आगलो न्यायरहित तीव्रकषायी होय तो वासूं अपराध माफ करावनेको जाय नाहीं कालांतरमैं क्रोध उपशांत हुवा पाछैं माफ करावै अर जो आप अपराध नाहीं कीया अर ईर्षाभावतैं केवल दुष्टतातैं आपकूं दुर्वचन कहै तथा अनेक दोष लगावै तो ज्ञानी किंचितसंक्लेश नाहीं करै ऐसा विचारै जो मैं याका धन हर्या होय तथा जमीजायगा खोसी होय तथा याकी जीविका बिगाड़ी होय चुगली खाईहोय तथा याका दोष कहणादि करकैं जो मैं अपराध किया होय तो मोकूं पश्चात्ताप करना उचित है अर जो मैं अपराध नाहीं किया तदि मोकूं कुछ फिकर नाहीं करना यो दुर्वचन कहै है सो नामकूं कहै है तथा कुलकूं कहै है सो नाम मेरा स्वरूप नाहीं जातिकुलादि मेरा स्वरूप नाहीं मैं तो ज्ञायक हूं जाकूं कहै सो मैं नाहीं। मैं हूं

तार्कूं वचन पहुंचै नाहीं तातैं मोकूं क्षमा ग्रहण करनाही श्रेष्ठ है। बहुरि जो यो दुर्वचन कहै है सो मुख याका, अभिप्राय याका, जिव्हा दंत ओष्ठ याका अर शब्द अर पुद्गल याका परिणामनिकरि शब्द उपज्या ताकूं श्रवणकरि मैं जो विकारकूं प्राप्त होऊं तो या मेरी बड़ी अज्ञानता है। बहुरि जो ईर्षावान दुष्टपुरुष मोकूं गाली देहै सो स्वभावकरि देखिये तो गाली कुछ वस्तु ही नाहीं है मेरे कहां हू गाली लगी नाहीं देखै है अवस्तुमैं देनेलेनेका व्यवहार ज्ञानी होय सो कैसें संकल्प करै। बहुरि जो मोकूं चोर कहै अन्यायी कपटी अधर्मी इत्यादिक कहै तहां ऐसा चिंतवन करै जो हे आत्मन्! तू अनेकवार चोर हुआ अनेक जन्ममैं व्यभिचारी ज्वारी अभक्ष्यभक्षी भील चांडाल चमार गोला बांदा कूकर शूकर गधा इत्यादिक तिर्यंच तथा अधर्मी पापी कृतघ्नी होय होय आया अर संसारमैं भ्रमण करता अनेकवार होऊंगा अब तो कूकर शूकर चोर चांडाल कहै ताकूं श्रवणकरि ताकूं क्लेशित होना बड़ा अनर्थ है अथवा ये दुष्टजन दुर्वचन कहैं हैं सो याको अपराध नाहीं हमारा बांध्या पूर्वजन्मकृतकर्मका उदय है सो याके दुर्वचन कहनेके द्वारकरि हमारे कर्मकी निर्जरा होय है सो हमारे बड़ा लाभ है इनका यह हू उपकार है जो ये दुर्वचन कहनेवाले अपना पुण्यका समूहका तो दोष कहनेकरि नाश करैं हैं अर मेरे किये पापकूं दूरि करैं हैं ऐसे उपकारीतैं जो मैं रोष करूं तो मो समान कोऊ अधम नाहीं है। बहुरि यो तो मोकूं दुर्वचन ही कह्या है मारया तो नाहीं रोषकरि मारने लगिजाय है क्रोधी तो अपने पुत्र पुत्री स्त्री बालादिककूं मारै है सो मोकूं मारया नाहीं योभी लाभ है अर जो दुष्ट आपकूं मारै तो ऐसा विचारै जो मोकूं मारया ही प्राणरहित तो नाहीं किया दुष्ट तो आपका मरण नाहीं गिन करके भी अन्यकूं मारै है यो भी मेरे लाभ है। अर जो प्राणरहित करै तो ऐसा विचारै एक वार मरणो ही छो कर्मका ऋण चुक्यो। हम इहां ही कर्मके ऋणरहित भये हमारा धर्म तो नाहीं नष्ट भया। प्राणधारण तो धर्महीतैं सफल है ये द्रव्यप्राण तो पुद्गलमय हैं मेरा ज्ञान दर्शन क्षमादि-धर्म ये भावप्राण हैं इनका घात क्रोधकरि नाहीं भया इस समान मेरे लाभ नाहीं है।

बहुरि जो कल्याणरूप कार्य हैं तिनमैं अनेकविघ्न आवै ही हैं जो मेरे विघ्न आया सो ठीक ही है । मैं तो अब समभावकूं आश्रय करूं अर जो उपद्रव आवते मैं क्षमा छांड़ि विकारकूं प्राप्त हूंगा तो मोकुं देखि अन्य मंदज्ञानी तथा कायर त्यागी तपस्वी धर्मतैं शिथिल होजांयगे तो मेरा जन्म केवल अन्यके क्लेशके अर्थि ही भया तथा मैं वीतरागधर्म धारणकर कै हू क्रोधी विकारी दुर्वचनी होऊं तो मोकूं देखि अन्य हू क्रोधमैं प्रवर्तने लगिजाय तदि धर्मकी मर्यादा भंगकरि पापकी परिपाटी चलानेवालामैं ही प्रधान भया तातैं क्षमागुण प्राण जाते हू धन अभिमान नष्ट होते हू मोकूं छांड़ना उचित नाहीं । बहुरि पूर्वै मैं अशुभकर्म उपजाया ताका फल मैं ही भोगूंगा अन्य जे जन हैं ते तो निमित्तमात्र हैं इनके निमित्ततैं पाप उदय नाहीं आता तो अन्यके निमित्ततैं आता । उदयमैं आया कर्म तो फल दिये विना टलता नाहीं बहुरि ये लौकिक अज्ञानी मेरे विषैं क्रोधित होय दुर्वचनादिक करि उपद्रव करैं हैं अर जो मैं भी यानैं दुर्वचनादिकरि उत्तर करूं तो मैं तत्त्वज्ञानी अर ये अज्ञानी दोऊ समान भया हमारा तत्त्वज्ञानीपना निरर्थक भया । न्यायमार्गतैं उदयमैं आया मेरा पापकर्म ताकूं सन्मुख होते कोन विवेकी अपना आत्माकूं क्रोधादिकनिके वस करै । भो आत्मन् ! पूर्वै बांध्या जो असाताकर्म ताका अब उदय आया ताकूं इलाजरहित अरोकजानि करकै समभावनितैं सहो जो क्लेशित होय भोगोगे तो असाताकूं तो भोगोहीगे अर नवीन बहुत असाताका बंध और करोगे तातैं होनहार दुःखतैं निःशंकित होय समभावतैं ही सहो येदुष्टजन बहुत हैं अपना सामर्थ्य करकै मेरे रोषरूप अग्निकूं प्रज्वलितकरि मेरा समभावरूप संपदाकूं दग्ध किया चाहैं हैं अब इहां जो असावधान होय क्षमाकूं छांड़ दूंगा तो अवश्य ही साम्यभाव नष्ट करकै धर्म अर अपयशका नाश करनेवाला होयजाऊंगा तातैं दुष्टनिका संसर्गमैं सावधान रहना उचित है । ज्ञानीमनुष्य तो नाहीं सह्या जाय ऐसा क्लेशकूं उत्पन्न होते हू पूर्वकर्मका नाश होना जानि हर्षित ही होय है जो वचनकंटकनिकरि बेध्या जो मैं क्षमा छांड़दूंगा तो क्रोधी अर मैं समान भया अर जो वैरी नानाप्रकारका दुर्वचन मारण पीड़न करकैं मेरा इलाज नाहीं

करै तो मैं संचय किये अशुभकर्म तिनतैं कैसें छूटता तातैं वैरी हू हमारा उपकार ही किया है अथवा तातैं विचैकी होय जो जिनआगमके प्रशादतैं साम्यभावका अभ्यास किया ताकी परीक्षा लेनेकूं ये वैरीरूप परीक्षा स्थान प्रगट भया है सो मेरे भावनिकी परीक्षा करि ये परीक्षा करनेकूं ही कर्म उदय भये है जो समभावकी मर्यादकूं भेदिकरि जो मैं वैरीनिमैं रोष करूं तो ज्ञाननेत्रका धारक हू मैं समभावकूं नाहीं प्राप्त होय क्रोधरूप अग्निमैं भस्म होय जाऊं। मैं वीतरागके मार्गमैं प्रवर्तन करनेवाला संसारकी स्थिति छेदनेमैं उद्यमी अर मेरा ही चित्त जो द्रोहकूं प्राप्त होजाय तो संसारके मार्गमैं प्रवर्त्तते मिथ्यादृष्टीनिकै समान मैं हू भया अर जो दुष्ट जननिकूं न्याय धर्मरूप मार्ग समझाय अर क्षमा ग्रहण कराया जो नाहीं समझै अर क्षमा ग्रहण करै तो ज्ञानीजन वासूं रोष नाहीं करै। जैसैं विष दूरि करनेवाला वैद्य कोऊका विष दूरि करनेकूं अनेक औषधादि देय विष दूरि कर्या चाहै अर वाका जहर दूरि नाहीं होय तो वैद्य आप जहर नाहीं खाय है जो याका विष दूर नाहीं भया तो मैं हू विष भक्षणकरि मरूं ऐसा न्याय नाहीं है तैसैं ज्ञानीजन हू दुष्टजनकी पहली दुष्टताकी जाति पिछानै जो यो दुष्टता छांडैगा वा नाहीं छांडैगा वा अधिक दुष्टता धरैगा ऐसा विचारि जो विपरीत परणमता दीखै ताकूं तो उपदेश ही नाहीं देना अर कुछ समझने लायक योग्यता दीखै तो न्यायवचन हितमितरूप कहना अर दुष्टता नाहीं छांडै तो आप क्रोधी नाहीं होना जो यो मोकूं दुर्वचनादि उपद्रवकरि नाहीं कंपायमान करै तो मैं उपशम भावकरि धर्मका शरणा कैसें ग्रहण करता तातैं जो मोकूं पीड़ा करनेवाला हू मोकूं पापतैं भयभीतकरि धर्मसूं संबंध कराया है तातैं पीड़ा करनेवाला हू मेरा प्रमादीपना छुड़ाय बडा उपकार किया है। बहुरि जगतमैं केतेक उपकारी तो ऐसे हैं जो अन्यजनके सुख होनेके निमित्त अपना शरीरकूं छांडै है अर धनकूं छांडै हैं तो मेरे दुर्वचनबंधनादिक सहनेमैं कहा जायगा मोकूं दुर्वचन कहै ही अन्यकै सुख होजाय तो मेरे कहा हानि है? बहुरि जो अपनेकूं पीड़ा करनेवालेतैं रोष नाहीं करूं तो वैरीकै पुण्यका नाश होय है अर मेरे आत्माके हितकी सिद्धि होय है

अर पीड़ा करनेवालेतैं रोष करूं तो मेरा आत्माका हितका नाश होय दुर्गति होय यातैं प्राणनिका नाश होते हू दुष्टनिप्रति क्षमा करना ही एक हित सत्पुरुष कहैं हैं तातैं आत्मकल्याणकी सिद्धिकैअर्थि क्षमा ही ग्रहण करूं अथवा दुष्टनिकरि दुर्वचनादिक पीड़ा करनेतैं मेरे जो क्षमा प्रगट भई है सो मेरे पुण्यका उदयतैं या परीक्षाभूमिमें प्रगट भई है जो मैं इतना कालतैं वीतरागका धर्म धारण किया सो अब क्रोधादिकके निमित्ततैं साम्यभाव रह्या कि नाहीं रह्या ऐसी परीक्षा करूं। बहुरि सोई साम्यभाव प्रशंसायोग्य है अर सो ही कल्याणका कारण है जो मारनेके इच्छक निर्दयीनिकरि मलीन नाहीं किया गया। बहुरि चिरकालतैं अभ्यास किया शास्त्रकरकैं अर साम्यभाव करकैं कहा साध्य है यो प्रयोजन पड्यां व्यर्थ होजाय है धैर्य तो सो ही प्रशंसा योग्य है जो दुष्टनिके कुवचनादिहोते नाहीं छूटै दृढ़ रहै उपद्रव आये विना तो समस्तजन सत्य शौच क्षमाके धारक बन रहैं हैं जैसैं चंदनवृक्षकूं कुहाड़ा काटै तौ हू कुहाड़ेका मुखकूं सुगंध ही करै तैसैं जाकी प्रवृत्ति होय सो ही सिद्धिकूं साध्या है। बहुरि अन्यकरि किया उपसर्गतैं वा स्वयमेव आया उपसर्ग तिनकरि जाका चित्त कलुषित नाहीं होय सो अविनाशी संपदाकूं प्राप्त होय है। अज्ञानी हैं ते अपने भावनिकरि पूर्वै कीया पापकर्म ताके अर्थि तो नाहीं रोष करैं अर जो कर्मके फल देनेके बाह्यनिमित्त तिनप्रति क्रोध करैं हैं जिसकर्मका नाशतैं मेरा संसारका संताप नष्ट होजाय सो कर्म स्वयमेव भोग्या तो मेरे वांछित सिद्ध भया। बहुरि यो संसाररूप वन अनंत संक्लेशनिकर भरया है इसमैं वसनेवालाकै नानाप्रकारके दुख नाहीं सहने योग्य है कहा? संसारमैं तो दुख ही है जो इस संसारमैं सम्यग्ज्ञान विवेककरिरहित अर जिनसिद्धांतनैं द्वेष करनेवाले अर महानिर्दयी अर परलोकका हितके अर्थि जिनके बुद्धि नाहीं अर क्रोधरूप अग्निकरि प्रज्व-लित अर दुष्टताकरिसहित विषयनिकी लोलुपताकरि अंध हटग्राही महाअभिमानी कृतघ्नी ऐसे बहुत दुष्टजन नाहीं होते तो उज्ज्वलबुद्धिके धारक सत्पुरुष व्रत तपश्चरणकरि मोक्षके अर्थि उद्यम कैसैं करते? ऐसे क्रोधी दुर्वचनके बोलनहारे हटग्राही अन्यायमार्गीनिकी अधिकता देखि करकै ही सत्पुरुष वीतरागी

भये हैं अर जो मैं बड़े पुण्यके प्रभावतैं परमात्माका स्वरूपको ज्ञाता भयो अर सर्वज्ञकरि उपदेश्या पदार्थनिकूं हू निर्णयरूप जाण्या अर संसारके परिभ्रमणादिकतैं भयभीत होय वीतरागमार्गमैं हू प्रवर्तन कीया अब हू जो क्रोधके वस हूंगा तो मेरा ज्ञान चारित्र समस्त निष्फल होयगा अर धर्मका अपयश करावनवारा होय दुर्गतिका पात्र हूंगा। बहुरि और हू पद्मनंदमुनि कह्या है जो दुर्जनकरि बाधा पीड़ा अर क्रोधके वचन अर हास्य अर अपमानादिक होते हू जो उत्तमपुरुषनिका मन विकारकूं प्राप्त नाहीं होय ताकूं उत्तमक्षमा कहिये है सो क्षमा मोक्षमार्गमैं प्रवर्तते पुरुषके परम सहायताकूं प्राप्त होय है। विवेकी चिंतवन करै है हम तो रागद्वेषादि मलरहित उज्ज्वल मनकरि तिष्ठां अन्यलोक हमकूं खोटा कहो तथा भला कहो हमकूं कहा प्रयोजन है। वीतरागधर्मके धारकनिकूं तो अपने आत्माका शुद्धपना साधने योग्य है। जो हमारा परिणाम दोषसहित है अर कोऊ हित हमकूं भला कह्या तो भला नाहीं होजावैंगे अर हमारा परिणाम दोषरहित है अर कोऊ हमकूं वैरबुद्धितैं खोटा कह्या तो हम खोटा नाहीं होजावैंगे फल तो अपनी जैसी चेष्टा आचरण होयगा तैसा प्राप्त होयगा जैसें कोऊ काचकूं रत्न कहदिया अर रत्नकूं काच कहदिया तो हू मोल तो रत्न ही पावैगा काचखंडका बहुतधन कौन देवै। बहुरि दुष्टजन है ताका तो स्वभाव परके दोष कहां हू नाहीं होय तो हू परके दोष कह्यांविना सुखकूं प्राप्त नाहीं होय तातैं दुष्टजन है सो मेरे माहीं अविद्यमान हू दोष लोकमैं घरघरमैं समस्तमनुष्यनिप्रति प्रगटकरि सुखी होहू अर जो धनका अर्थी है सो मेरा सर्वस्व ग्रहणकरि सुखी होहू अर जो वैरी प्राणहरणका अर्थी है सो शीघ्र ही प्राण हरो अर स्थानको अर्थी है सो स्थान हरो मैं मध्यस्थ हूं रागद्वेषरहित हूं समस्त जगतके प्राणी मेरे निमित्ततैं तो सुखरूप तिष्ठो मेरे निमित्ततैं किसी प्राणीकै कोऊप्रकार दुःखमति होहू या मैं घोषणाकरि कहूं हूं क्योंकि मेरा जीवित तो आयुकर्मके आधीन अर धनका अर स्थानका जावना रहना पापपुण्यके आधीन है हमारे किसी अन्यजीवसे वैर विरोध नाहीं है समस्तकै प्रति क्षमा है। बहुरि हे आत्मन् जे मिथ्यादृष्टि अर दुष्टतासहित अर हितअहितका विवेकरहित मूढ

ऐसे मनुष्यनिकरि किया जे दुर्वचनादिक उपद्रवनितैं अस्थिर हुआ बाधाकूं मानि क्लेशित होय रह्या है सो तीनलोकका चूड़ामणि भगवान वीतराग है ताहि नाहीं जान्या कहा ? तथा वीतरागका धर्मकी उपासना नाहीं कीई कहा ? तथा लोकनिकूं मूर्ख नाहीं जान्या कहा ? मोही मिथ्यादृष्टि मूढ़निके ज्ञान तो विपरीत ही होय हैं कथनिके वासि हैं तातैं इनमैं क्षमा ही ग्रहण करना योग्य है। क्षमा है सो इसलोकमैं परमशरण है माताकी ज्यों रक्षा करनेवाली है बहुत कहा कहिये जिनधर्मका मूल क्षमा है याकै आधार सकलगुण हैं कर्मनिर्जराको कारण है हजारां उपद्रव दूरि करनेवाली है यातैं धन जाते जीवितव्य जाते हू क्षमाकूं छांड़ना योग्य नाहीं। कोऊ दुष्टताकरि आपकूं प्राणरहित करै तिसकालमैं हू कटुकवचन मति कहो जो मारनेवालेकूं भी अंतर्गत बैर छांड़ि ऐसे कह्या जो आप तो हमारे रक्षक ही हो परंतु हमारा मरण आय पहुंच्या तदि आप कहा करो हमारे पापकर्मका उदय आयगया तो हू हमारा बड़ा भाग्य है जो आप सरिखे महान् पुरुषनिके हस्तादिकतैं हमारा मरण होय अर जो हमसारिखा अपराधीकूं आप दंड नाहीं द्यो तो मार्ग मलीन होजाय अर हम अपराधको फल नरक तिर्यंच गतिमैं आगें भोगते सो आप हमकूं ऋणरहित किया। मैं आपसूं वैर विरोध मन वचन कायनैं छांड़ि क्षमा ग्रहण करूं हूं अर आप भी मूनै अपराधको दंय देय क्षमा ग्रहण करो। मैं रोगादिक कष्टकूं भोगि करकैं अति दुःखतैं मरण करतो सो धर्मका शरणसूं ऋणरहित होय सज्जनांकी कृपासहित मरण करस्यूं ऐसैं मारनेवालेसूं हू वैर त्यागि समभाव करना सो उत्तमक्षमा है। ऐसैं उत्तमक्षमा नामा धर्मकूं कह्या ॥१॥

अब उत्तममार्दव नाम गुणकूं कहैं हैं—मार्दवका स्वरूप ऐसा है जो मानकषायकरि आत्मामैं कठोरता होय है सो कठोरताका अभाव होनेतैं जो कोमलता होय सो मार्दवनाम आत्माका गुण है अर जो आत्माका अर मानकषायका भेदकूं अनुभवकरि मान मदका छांड़ना सो उत्तममार्दव नाम गुण है। मानकषाय तो संसारका बधावनेवाला है अर मार्दव संसारपरिभ्रमणका नाश करनेवाला है। यो मार्दवगुण दयाधर्मका कारण है अभिमानीकै दयाधर्मका मूलहीतैं अभाव जानना कठोरपरिणामी

तो निर्दयी ही होय है मार्दवगुण समस्तके हित करनेवाला है। जिनकै मार्दवगुण है तिनहीका व्रतपालना संयमधारणा ज्ञानका अभ्यास करना सफल है अभिमानीका निष्फल है। मार्दवनामगुण कषायका नाश करनेवाला है अर पंचइंद्रिय अर मनकूं दंड देनेवाला है। मार्दवधर्मके प्रसादतैं चित्तरूपभूमिमैं करुणारूप वेल नवीन फैलै है मार्दवकरकैं ही जिनेन्द्रभगवानमैं तथा शास्त्रनिमैं भक्तिका प्रकाश होय है मदसहितनिकै जिनेन्द्रके गुणनिमैं अनुराग नाहीं होय है मार्दवगुणकरि कुमतिज्ञानके प्रसरका नाश होय है कुमति नाहीं फैलै है अभिमानिकै अनेक कुबुद्धि उपजै हैं। मार्दवगुणकरि वड़ा विनय प्रवर्तै है मार्दव करकैं बहुत कालका वैरी हू वैर छांडै है। मान घटै नदि परिणामनिकी उज्ज्वलता होय कोमल परिणाम करकै ही दोऊ लोककी सिद्धि होय कोमल परिणामीकूं इस लोकमें सुयश होय है परलोकमैं देवलोककी प्राप्ति होय है कोमल परिणाम करकै ही अंतरंग बहिरंग तपभूषित होय है अभिमानिका तप हू निंदवे योग्य है कोमलपरिणामीमैं तीनजगतके लोकनिका मन रंजायमान होय है मार्दव करकै ही जिनेन्द्रका शासन जानिये है मार्दव करकै अपना परका स्वरूपका अनुभव करिये है कठोर परिणामीकै आपा परका विवेक नाहीं होय है मार्दव करकै ही समस्तदोषनिका नाश होय है मार्दवपरिणाम संसारसमुद्रतैं पार करै है। यातैं मार्दवपरिणामकूं सम्यग्दर्शनका अंग जानि निर्मल मार्दवधर्मका स्तवन करो। संसारी जीवनिकै अनादिकालका मिथ्यादर्शनका उदय रह्या है ताका उदयकरि पर्यायबुद्धि हुआ जातिकूं कुलकूं विद्याकूं बलकूं ऐश्वर्यकूं रूपकूं तपकूं धनकूं अपना स्वरूप मानि इनका गर्वरूप होय रह्या है। ताकूं ये ज्ञान नाहीं है जो ये जातिकुलादिक समस्त कर्मका उदयके आधीन पुद्गलके विकार हैं विनाशीक हैं मैं अविनाशी ज्ञानस्वभाव अमूर्तीक हूं मैं अनादिकालतैं अनेक जाति कुल बल ऐश्वर्यादिक पाय पाय छांडै हैं मैं अब कौनमैं आपा धारूं समस्त धन यौवन इंद्रियजनितज्ञानादिक विनाशीक हैं क्षणभंगुर हैं इनका गर्व करना संसारपरिभ्रमणका कारण है। इस संसारमैं स्वर्गलोकका महाऋद्धिका धारक देव मरिकरि एकसमयमैं एकेन्द्रिय

आय उपजै है तथा कूकर शूकर चांडालादिक पर्यायकूं प्राप्त होय है तथा चक्रवर्ती नवनिधि चौदह-रत्ननिका धारक एकसमयमैं मरि सप्तमनरकका नारकी होजाय है तथा बलभद्र नारायणका ऐश्वर्य नष्ट होयगया अन्यकी कहा कथा है जिनकी हजारां देव सेवा करै तथा तिनकैं पुण्यका क्षय होते कोऊ एकमनुष्य पानी पावनेवाला हू नाहीं रह्या अन्य पुण्यरहित जीव कैसैं मदोन्मत्त बन रहे है। बहुरि जे उत्तमज्ञानकरि जगतमैं प्रधान हैं अर उत्तमतपश्चरण करनेमें उद्यमी हैं अर उत्तमदानी हैं ते हू अपने आत्माकूं अतिनीचा मानै है तिनके मार्दवधर्म होय है। यो विनयवानपनो मदरहितपनो समस्त धर्मको मूल है समस्त सम्यग्ज्ञानादि गुणको आधार है जो सम्यग्दर्शनादि गुणनिका लाभ चाहो हो अर अपना उज्ज्वल यश चाहो हो अर वैरका अभाव चाहो हो तो मदनिकूं त्यागि कोमल-पना ग्रहण करो मदनष्ट हुवा विना विनयादिक गुण वचनकी मिष्टता पूज्यपुरुषनिका सत्कार दान सन्मान एक हू गुण नाहीं प्राप्त होयगा। अभिमानीका विना अपराध हू समस्त वैरी होजाय हैं अभिमानीकी समस्त निंदा करैं हैं अभिमानीका समस्त लोक पतन होना चाहैं हैं स्वामी हू अभिमानी सेवककूं त्यागै है अभिमानीकूं गुरुजन विद्या देनेमैं उत्साहरहित होय हैं अपना सेवक पराङ्मुख होजाय मित्र भाई हितू पड़ौसी याका पतन ही चाहै है पिता गुरु उपाध्याय तो पुत्रकूं शिष्यकूं विनयवंत देख करि ही आनंदित होय हैं। अविनयी अभिमानी पुत्र वा शिष्य वड़े पुरुषनिके मनहूकूं संतापित करै है जातैं पुत्रका तथा शिष्यका तथा सेवकका तो ये ही धर्म है जो नवीन कार्य करना होय सो पिता गुरु स्वामीकूं जनायकरि करै आज्ञामांगि करै तथा आज्ञाको अवसर नाहीं मिलै तो अवसरदेखि शीघ्र ही जनावै यो ही विनय है या ही भक्ति है जाका मस्तकऊपरि गुरु विराजैं ते धन्यभाग हैं विनयवंत मद-रहित पुरुष हैं ते समस्तकार्य गुरुनिको जनाय दे हैं धन्य है जे इस कलिकालमैं मदरहित कोमल परि-णामकरि समस्तलोकमैं प्रवर्तै हैं। उत्तमपुरुष हैं ते बालकमैं वृद्धमैं निर्धनमैं रोगीनिमैं बुद्धिरहित मूर्खनिमैं तथा जातकुलादिहीनमैं हू यथा योग्य प्रियवचन आदर सत्कार स्थानदान कदाचित नाहीं चूकैं हैं

प्रियवचन ही कहैं उत्तमपुरुष उद्धतताका वस्त्र आभरण नाहीं पहरैं उद्धतपणाका परकै अपमानका कारण देनलेन विवाहादि व्यवहार कार्य नाहीं करैं हैं उद्धत होय अभिमानीपनाका चालना बैठना झांकना बोलना दूरहीतैं छांड़ै ताकैं लोकमैं पूज्य मार्दवगुण होय है। धनपावना रूपपावना ज्ञानपावना विद्याकलाचतुराई-पावना ऐश्वर्यपावना बलपावना जातकुलादि उत्तमगुण जगन्मान्यता पावना जिनका सफल है जो उद्धततारहित अभिमानरहित नम्रतासहित विनयसहित प्रवर्तै है अपने मनमैं आपकूं सबतैं लघु मानता कर्मके परवस जानै है सो कैसै गर्व करै नाहीं करै है। भव्यजन हो सम्यग्दर्शनको अंग इस मार्दवअंगकूं जाणि चित्तकेविषै ध्यान करो स्तवन करो। ऐसैं मार्दव धर्मको वर्णन कीयो ॥ २ ॥

अब आर्जवधर्मकूं वर्णन करैं हैं—धर्मका श्रेष्ठ लक्षण आर्जव है आर्जव नाम सरलताका है मनवचनकायकी कुटिलताको अभाव सो आर्जव है। आर्जव धर्म है सो पापका खंडन करनेवाला है अर सुख उपजावनेवाला है। तातैं कुटिलता छांड़ि कर्मका क्षय करनेवाला आर्जवधर्म धारण करो। कुटिलता है सो अशुभकर्मका बंध करनेवाला है जगतमैं अतिनिंद्य है यातैं आत्माका हितका इच्छकनिकूं आर्जवधर्मका अवलंबन करना उचित है। जैसा आपका चित्तमैं चिंतवन करिये तैसा ही अन्यकूं कहना अर तैसा ही बाह्य कायकरि प्रवर्तन करिये सो सुखका संचय करनेवाला आर्जवधर्म कहिये है। मायाचाररूप शल्य मनतैं निकालो उज्वल पवित्र आर्जवधर्मका विचार करो मायाचारीका व्रत तप संयम समस्त निरर्थक है आर्जवधर्म निर्वाणके मार्गको सहाई है जहां कुटिलवचन नाहीं बोलै तहां आर्जवधर्म प्राप्त होय है। यो आर्जवधर्म है सो दर्शनज्ञानचारित्रको अखंडस्वरूप है अर अतींद्रियसुखका पिटारा है आर्जवधर्मका प्रभावकरि अतीन्द्रियका अविनाशी सुखकूं प्राप्त होय है संसाररूप समुद्रके तरनेकूं जिहाजरूप आर्जव ही है। मायाचार जान्या जाय तदि प्रीतिका भंग होय है। जैसैं कांजीतैं दुग्ध फटिजाय है अर मायाचारी अपना कपटकूं बहुत छिपावते हू प्रगट हुयां विना नाहीं रहै है। परजीवनिकी चुगली करै वा दोष प्रकाशै ते आप ही प्रगट हो जाय है मायाचार करना है सो अपनी प्रतीतिका बिगाड़ना

है धर्मका बिगाड़ना है मायाचारीका समस्त हित् विनाकिये वैरी होय हैं जो व्रती होय त्यागी तपस्वी होय अर जाका कपट एकवार किया हू प्रगट होजाय ताकूं समस्तलोक अधर्मीमानि कोऊ प्रतीति नाहीं करै है कपटीकी माता हू प्रतीति नाहीं करै है कपटी तो मित्रद्रोही स्वामिद्रोही धर्मद्रोही कृतघ्नी है अर यो जिनेन्द्रको धर्म तो कपटरहित छलरहित है जैसैं वांका म्यानमैं सूधो खड्ग प्रवेश नाहीं करै तैसैं कपटकरि वक्रपरिणामीका हृदयमैं जिनेन्द्रका आर्जव कहिये सरलधर्म प्रवेश नाहीं कर सकै है। कपटीका दोऊलोक नष्ट होजाय है यातैं जो यश चाहो हो धर्म चाहो हो प्रतीति चाहो हो तो मायाचारका त्यागकरि आर्जवधर्म धारण करो कपट रहितकी वैरी हू प्रशंसा करै है कपटरहित सरलचित्त जो अपराध भी किया होय तो दंड देने योग्य नाहीं होय है आर्जवधर्मका धारक तो परमात्माका अनुभवनमैं संकल्प करै है कषाय जीतनेका संतोष धारनेका संकल्प करै है जगतके छल-निका दूरहीतैं परिहार करै है आत्माकूं असहाय चैतन्यमात्र जानै है जो धनसंपदा कुटुंबादिककूं अपनावै सो ही कपट छलकरि ठिगाई करै तातैं जो आत्माकूं संसार परिभ्रमणतैं छुटाय परद्रव्यनितैं आपकूं भिन्न असहाय जानै सो धनजीवितव्यकेअर्थि कपट कदाचित् नाहीं करै तातैं जो आत्माकूं संसारपरिभ्रमणतैं छुड़ाया चाहो हो तो मायाचारका परिहारकरि आर्जवधर्म धारण करो। ऐसैं आर्जवधर्मका वर्णन कीया ॥ ३ ॥

अब सत्यधर्मका वर्णन करैं हैं—जो सत्यवचन है सो ही धर्म है यो सत्यवचन, दयाधर्मको अब मूल कारण है अनेक दोषनिका निराकरण करनेवाला है इस भवमैं तथा परभवमैं सुखका करनेवाला है समस्तकै विश्वास करनेका कारण है समस्तधर्मके मध्य सत्यवचन प्रधान है सत्य है सो संसारसमुद्रके पार उतारनेकूं जहाज है समस्त विधाननिमैं सत्य है सो बड़ा विधान है समस्तसुखका कारण सत्य ही है सत्यतैंही मनुष्यजन्म भूषित होय है सत्यकरकै समस्त पुण्यकर्म उज्ज्वल होय है जे पुण्यके ऊंचे कार्य करिये हैं तिनकी उज्ज्वलता सत्यबिना नाहीं होय है सत्यकरि समस्तगुणनिका समूह महिमाकूं प्राप्त

होय है सत्यका प्रभावकरि देव है ते सेवा करैं हैं सत्यकरकैं ही अणुव्रत महाव्रत होय हैं सत्यविना व्रत संजम नष्ट होजाय हैं सत्यकरि समस्तआपदाको नाश होय है यातैं जो वचन बोलो सो अपना परका हितरूप कहो प्रमाणीक कहो कोऊकै दुःख उपजै ऐसावचन मति कहो परजीवनिकैं बाधाकारी सत्य हू मति कहो गर्वरहित कहो, परमात्माका अस्तित्व कहनेवाला वचन कहो नास्तिकनिकैं वचन पापपुण्यका स्वर्गनरकका अभाव कहनेवाला वचन मति कहो। यहां ऐसा परमागमका उपदेश जानना यो जीव अनंतानंतकाल तो निगोदमैं ही रह्या तहां वचनरूप कर्मवर्गणा ही ग्रहण नाहीं करी क्योंकि पृथ्वीकाय अपकाय तेजकाय वायुकाय वनस्पतिकाय इनके मध्य अनंतकाल असंख्यात काल रह्यो तहां तो जिह्वा इंद्रिय ही नाहीं पाई बोलनेकी शक्ति ही नाहीं पाई अर जो विकल चतुष्कमैं उपज्या तथा पंचेन्द्रियतिर्यंचनमैं उपज्या तहां जिह्वा इंद्रिय पाई तो हू अक्षरस्वरूप शब्दउचारण करनेका सामर्थ्य नाहीं भया एक मनुष्यपनामैं वचन बोलनेकी शक्ति प्रगट होय है। ऐसा दुर्लभवचनकूं असत्य बोलि विगाड़िदेना सो वडा अनर्थ है मनुष्यजन्मकी महिमा तो एक वचनहीतैं है नेत्र कर्ण जिह्वा नाशिका तो ढोर तिर्यंचके हू होय है खावना पीवना कामभोगादिक पुण्यपापके अनुकूल ढोरनिकूं हू प्राप्त होय हैं आभरण वस्त्रादिक कूकरा वानरा गधा घोड़ा ऊंट वलध इत्यादिकनिकूं हू मिलै है परंतु वचनकहनेकी शक्ति श्रवण करनेकी शक्ति तथा उत्तरदेनेकी शक्ति तथा पढ़ने पढ़ावनेका कारण वचन तो मनुष्यजन्ममैं ही है अर मनुष्यजन्म पाय भी जो वचन विगाड़ि दिया सो समस्तजन्म विगाड़ादिया। बहुरि मनुष्यजन्ममैं जो लेना देना कहना सुनना धीज प्रतो धर्म कर्म प्रीत वैर इत्यादिक जे प्रवृत्तिरूप अर निवृत्तिरूप कार्य हैं ते वचनके आधीन हैं अर वचनकूं ही दूषितकर दिया तदि समस्त मनुष्यजन्मका व्यवहार विगाड़ दूषितकर दिया। तातैं प्राण जाते हू अपना वचनकूं दूषित मति करो। बहुरि परमागममैं कह्या जो च्यारप्रकारका असत्यवचन ताका त्याग करो जो विद्यमान अर्थका निषेध करना सो प्रथम असत्य है जैसैं कर्मभूमिका मनुष्य तिर्यंचका अकाल मृत्यु नाहीं होय ऐसा वचन असत्य है जातैं देव नारकी

तथा भोगभूमिका मनुष्यतिर्यंचका तो आयुकी स्थिति पूर्ण भयां ही मरण है बीच आयु नाहीं छेदै है
जितनी स्थिति बांधी तितनी भोगकरकै ही मरण करै हैं अर कर्मभूमिका मनुष्यतिर्यंचां
सो विषका भक्षणकरि तथा ताड़न मारण छेदन बंधनादिक वेदनाकरि तथा
तथा देहतैं रुधिरका नाश होनेकरि तथा दुष्टमनुष्य दुष्ट
वज्रपातादिकका स्वचक्र परच
अ ज

कदाचित मति कहो अपना
ही वचन बोलो इस जावक जैसा सुख हितरूप अर्थसंयुक्त मिष्ट वचन करै है निराकुल
है तैसा सुखकारी आताप हरनेवाला चंद्रकांतिमणि जल चंदन मुक्ताफलादिक
है अर जहां अपने बोलनेतैं धर्मकी रक्षा होती होय प्राणीनिका उपकार होता होय
हू बोलना अर जहां आपका अन्यका हित नाहीं होय तहां मौन सहित ही रहना उचित
वचनतैं सकलविद्या सिद्ध होय हैं जहां विद्या देनेवाला सत्यवादी होय अर सीखनेवा-

गर्हितवचनका तीन भेद हैं गर्हित, सावद्य, अप्रिय तिनमैं पैशून्य, हास्य, कर्कश, असमंजस, प्रलपित इत्यादिक अन्य हू सूत्रविरुद्धवचन सो गर्हितवचन हैं तिनमैं जो परके विद्यमान तथा अविद्यमानदोषनिकूं पूठ पाछैं कहना तथा परका धनका विनाश जीविकाका विनाश प्राणनिका नाश जिसवचनतैं होजाय तथा जगतमैं निंद्य होजाय अपवाद होजाय ऐसा वचन कहना सो गर्हित नाम असत्यवचन है। बहुरि हास्य लीयां भंडवचन तथा श्रवणकरनेवालेनिकै अशुभराग उपजावनेवाले वचन सो हास्यनामा गर्हित वचन है। बहुरि अन्यकूं कहै तू ढांडा हैं तू मूर्ख है अज्ञानी है इत्यादिक कर्कस वचन है। बहुरि देश कालकै योग्य नाहीं जातैं आपके अन्यकै महासंताप उपजै सो असमंजसवचन है। बहुरि प्रयोजनरहित धीठपनातैं वकवाद करना सो प्रलपित वचन है। बहुरि जिस वचन करि प्राणीनिका घात होजाय देशमैं उपद्रव होजाय देश लुटिजाय तथा देशका स्वामीनिकै महा वैर होजाय तथा ग्राममैं अग्नि लगजाय घर वलजाय वनमैं आग्नि लगजाय तथा कलह विसंवाद युद्ध प्रगट होजाय तथा विषादिकरि मरिजाय तथा मारिजाय वैर बंध जाय तथा छहकायके जीवनिके घातका आरंभ होजाय महाहिंसामैं प्रवृत्ति होजाय सो सावद्यवचन है तथा परकूं चोर कहना व्यभिचारी कहना सो समस्त सावद्यवचन दुर्गतिके कारण त्यागने योग्य है अब अप्रियवचन त्यागने योग्य प्राण जातैं हू नाहीं कहना अप्रियवचनके भेद ऐसे जानने–कर्कशा, कटुका, परुषा, निष्ठुरा, परकोपनी, मध्यकृशा, अभिमानिनी, अनयंकरी, छेदंकरी, भूतवधकरी ये महापापके करनेवाली महानिंद्य दश भाषा सत्यवादी त्याग करै है। तू मूर्ख है बलद है ढोर है रे मूर्ख तू कहा समझै इत्यादिक कर्कशा भाषा है बहुरि तू कुजाति हैं नीचजाति हैं अधर्मी महापापी है तू स्पर्शनकरने योग्य नाहीं तेरा मुख देख्यां बड़ा अनर्थ है इत्यादिक उद्वेग करनेवाली कटुकाभाषा है। तू आचारभ्रष्ट है भ्रष्टाचारी है महा दुष्ट है इत्यादिक मर्म छेदनेवाली परुषाभाषा है। तोकूं मारिनाखिस्यूं थारो नाक काटिस्यूं थारै डाह लगास्यूं थारो मस्तक काटिस्यूं तनै खायजास्यूं इत्यादिक निष्ठुरा भाषा है। रे निर्लज्ज वर्णसंकर तेरा

जाति कुल आचारका ठिकाना नाहीं तेरा कहा तप तू कुशील है तू हँसने योग्य है महानिंद्य है अभक्ष्यभक्षण करनेवाला है तेरा नामलीयां कुल लज्जित होय है इत्यादिक परकोपनी भाषा है । बहुरि जिस वचनके सुनते ही हाड़निकी शक्ति नष्ट होजाय सामर्थ्य नष्ट होजाय सो मध्यकृशा भाषा है। बहुरि लोकनिमैं आपना गुण प्रगट करना परके दोष कहना अपना कुल जाति रूप बल विज्ञानादिक मद लिये जो वचन बोलना सो अभिमानिनी भाषा है। बहुरि शीलखंडनकरनेवाली अर विद्वेष करनेवाली अनयंकरी भाषा है। बहुरि जो वीर्य शील गुणादिकनिके निर्मूल करनेवाली असत्यदोष प्रगट करनेवाली जगतमैं झूंठाकलंक प्रगट करनेवाली छेदंकरी भाषा है। जिस वचनकरि अशुभ वेदना प्रगट हो जाय वा प्राणानिका नाश करनेवाली भूतवधकरी भाषा है। ए दश प्रकार निंद्यवचन त्यागने योग्य हैं। बहुरि स्त्रीनिके हावभाव विलासविभ्रमरूप क्रीड़ा व्यभिचारादिकनिकी कथा कामके जगावनेवाली ब्रह्मचर्यका नाश करनेवाली स्त्रीनिका कथा तथा भोजनपानमैं राग करावनेवाली भोजनकी कथा तथा रौद्रकर्म करनेवाली राजकथा तथा चोरनिकी कथा तथा मिथ्यादृष्टी कुलिंगीनिकी कथा तथा धन उपार्जन करनेकी कथा तथा वैरीदुष्टनिके तिरस्कार करनेकी कथा तथा हिंसाकूं पुष्ट करनेवाली वेद स्मृति पुराणादिक कुशास्त्रनिकी कथा कहने योग्य नाहीं श्रवण करने योग्य नाहीं पापका आस्रवको कारण अप्रिय भाषा त्यागने योग्य है। भो ज्ञानी हो ये चारप्रकारकी निंद्यभाषा हास्यकरि क्रोधकरि लोभकरि मदकरि भयकरि द्वेषकरि कदाचित मति कहो अपना परका हितरूप ही वचन बोलो इस जीवकै जैसा सुख हितरूप अर्थसंयुक्त मिष्ट वचन करै है निराकुल करै है आताप हरै है तैसा सुखकारी आताप हरनेवाला चंद्रकांतिमणि जल चंदन मुक्ताफलादिक कोऊ पदार्थ नाहीं है अर जहां अपने बोलनेतैं धर्मकी रक्षा होती होय प्राणीनिका उपकार होता होय तहां विना पूछै हू बोलना अर जहां आपका अन्यका हित नाहीं होय तहां मौन सहित ही रहना उचित है। बहुरि सत्य वचनतैं सकलविद्या सिद्ध होय है जहां विद्या देनेवाला सत्यवादी होय अर सीखनेवा-

ला हू सत्यवादी होय ताकै सकलविद्या सिद्ध होय कर्मकी निर्जरा होय सत्यका प्रभावतैं अग्नि जल विष सिंह सर्प दुष्ट देव मनुष्यादिक बाधा नाहीं कर सकैं हैं। सत्यका प्रभावतैं देवता वशीभूत होय हैं प्रीति प्रतीति दृढ़ होय है सत्यवादी मातासमान विश्वास करनेयोग्य होय है गुरुकी ज्यों पूज्य होय हैं मित्र ज्यों प्रिय होय है उज्ज्वल यशकूं प्राप्त होय हैं तपसंयमादि समस्त सत्यवचनतैं सोहैं हैं। जैसैं विष मिलनेकरि मिष्टभोजनका नाश होय अन्यायकरि धर्मका यशका नाश होय तैसैं असत्यवचनतैं अहिंसादि सकलगुणनिका नाश होय है तथा असत्य वचनतैं अप्रतीति, अकीर्ति, अपवाद, अपने वा अन्यके संक्लेश, अरति, कलह, वैर, शोक, बध, बंधन, मरण, जिह्वाछेद, सर्वस्वहरण, बंदीग्रहमैं प्रवेश, दुर्ध्यान, अपमृत्यु, व्रत तप शील संयमका नाश, नरकादिदुर्गतिमैं गमन, भगवानकी आज्ञाको भंग, परमागमतैं परान्मुखता, घोरपापका आस्रव इत्यादि हजारां दोष प्रगट होय हैं। यातैं भो ज्ञानीजन हो लोकमैं प्रिय हित मधुर वचन बहुत भरया है सुंदरशब्दनिकी कमी नाहीं फिर निंद्यवचन क्यों बोलो हो ? रे तू इत्यादिक नीचपुरुषनिके बोलनेके वचन प्राणजातैं हू मति कहो अधमपना अर उत्तमपना तो वचनहीनैं जाण्या जाय है नीचनिके बोलनेके निंद्यवचनकूं छांड़ि प्रिय हित मधुर पथ्य धर्मसहित वचन कहो जे अन्यकूं दुःखका देनेवाला वचन कहैं हैं तथा झूंठा कलंक लगावैं हैं तिनकै पापतैं इहांहि बुद्धि भ्रष्ट होय है जिह्वा गलिजाय है तालवा गलिजाय आंधा होजाय पग नष्ट होजाय दुर्ध्यानतैं मरि नरक-तिर्यंचादिकुगतिका पात्र होय है अर सत्यका प्रभावतैं इहां उज्ज्वलयश वचनकी सिद्धि द्वादशांगादि-श्रुतका ज्ञान पाय फिर इंद्रादिक महर्द्धिकदेव होय तीर्थंकरादि उत्तमपद पाय निर्वाण जाय है यातैं उत्तम सत्यधर्महीकूं धारण करो ऐसैं सत्यनामा धर्मका वर्णन कीया ॥ ४ ॥

अब शौचधर्मका स्वरूप वर्णन करिये हैं—शौच नाम पवित्रताका–उज्ज्वलताका है जो बहिरात्मा देहकी उज्ज्वलता स्नानादिक करनेकूं शौच कहैं हैं सो सप्त धातुमयको मलमूत्रको भरयो जलतैं धोया शुचिपनाकूं प्राप्त नाहीं होय है जैसैं मलका बनाया घट मलका भरया जलतैं शुद्ध नाहीं होय

तैसैं शरीर हू उज्ज्वल जलतैं शुद्ध नाहीं होय शुचि मानना वृथा है। बहुरि शौचधर्म तो आत्माकूं उज्ज्वल किये होय आत्मा लोभकरि हिंसाकरि अत्यंत मलिन होय रह्या है सो आत्माकै लोभमलका अभाव भये शुचिता होय है जो अपने आत्माकूं देहतैं भिन्न ज्ञानोपयोग दर्शनोपयोगमय अखंड अविनाशी जन्मजरामरणरहित तीन लोकवर्ती समस्तपदार्थनिका प्रकाशक सदा काल अनुभव करै है ध्यावै है ताकै शौचधर्म होय है। बहुरि मनकूं मायाचारलोभादिकरहित उज्ज्वल करना ताकै शौचधर्म होय है जाका मन कामलोभादिककरि मलीन होय ताकै शौचधर्म नाहीं होय है धनकी गृद्धिता जो अतिलंपटता ताका त्यागतैं शौचधर्म होय है। बहुरि परिग्रहकी ममताकूं छांड़ि इंद्रियनिका विषयनिको त्यागकरि तपश्चरणका मार्गमैं प्रवर्तन करना सो शौचधर्म है। बहुरि ब्रह्मचर्य धारण करना सो शौचधर्म है बहुरि अष्टमदकरिरहित विनयवानपना सो शौचधर्म है अभिमानी मदसहित होय सो महामलीन है ताकै शौचधर्म कैसैं होय। बहुरि वीतरागसर्वज्ञका परमागमका अनुभव करनेकरि अंतर्गत मिथ्यात्व कषायादिक मलका धोवना सो शौचधर्म है। उत्तमगुणनिकी अनुमोदनाकरि शौच धर्म होय है। परिणामनिमैं उत्तम पुरुषनिका गुणनिका चिंतवनकरि आत्मा उज्ज्वल होय है कषाय मलका अभावकरि उत्तम शौचधर्म होय है। आत्माकूं पापकरि लिप्त नाहीं होने देना सो शौचधर्म है जो समभाव संतोषभावरूप जलकरि तीव्र लोभरूप मलका पुंजकूं धोवै है अर भोजनमैं अति लंपटतारहित है ताकै निर्मल शौचधर्म होय है जातैं भोजनका लंपटी अति अधम है अर अखाद्यवस्तुकूं भी खाय है हीनाचारी होय है भोजनका लंपटीकै लज्जा नष्ट होजाय है जातैं संसारमैं जिह्वाइंद्रिय अर उपस्थइंद्रियके वशीभूत भये जीव आपा भूलि नरकके तिर्यंचगतिके कारण महानिंद्य परिणामनिकूं प्राप्त होय है। संसारमैं परधनकी वांछा परस्त्रीकी वांछा अर भोजनकी अतिलंपटता ही परिणामकूं मलीन करनेवाली है इनकी वांछातैंरहित होय अपने आत्माकूं संसारपतनतैं रक्षा करो। आत्माकी मलीनता तो जीवहिंसातैं अर परधन परस्त्रीकी वांछातैं है जे परस्त्री परधनका इच्छक अर जीवघातके

करनेवाले हैं ते कोटितीर्थनिमें स्नान करो समस्त तीर्थनिकी वंदना करो तथा कोटि दान करो कोटिवर्ष तप करो समस्त शास्त्रनिका पठन पाठन करो तो हू उनकै शुद्धता कदाचित नाहीं होय। अभक्ष्यभक्षण करनेवालेनिका अर अन्यायका विषय तथा धनके भोगनेवालेनिका परिणाम ऐसे मलीन होय हैं जो कोटिवार धर्मका उपदेश अर समस्तसिद्धांतनिकी शिक्षा बहुत वर्ष श्रवण करते हू कदाचित हृदयमें प्रवेश नाहीं करै है सो देखिये है जिनकूं पचासवरस शास्त्र श्रवणकरते भये हैं तो हू धर्मका स्वरूपका ज्ञान जिनकूं नाहीं है सो समस्त अन्याय धन अर अभक्ष्यभक्षणका फल है तातैं जो अपना आत्माका शौच चाहो हो तो अन्यायका धन मति ग्रहण करो अर अभक्ष्यभक्षण मतिकरो परकी स्त्रीकी अभिलाषा मति करो। बहुरि परमात्माके ध्यानतैं शौच है अहिंसा सत्य अचौर्य ब्रह्मचर्य और परिग्रहत्यागतैं शौचधर्म है। जे पंचपापनिमें प्रवर्तनवाले हैं ते सदाकाल मलीन हैं जे परके उपकारकूं लोपैं हैं ते कृतघ्नी सदा मलीन हैं जे गुरुद्रोही धर्मद्रोही स्वामिद्रोही मित्रद्रोही उपकारकूं लोपनेवाले हैं तिनकै पापका संतान असंख्यात भवनिमें कोटितीर्थनिमें स्नानकरि दान करि दूर नाहीं होय है विश्वासघाती सदा मलीन है यातैं भगवानके परमागमकी आज्ञा प्रमाण शुद्ध सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रक-रि आत्माकूं शुचि करो क्रोधादि कषायका निग्रहकरि उत्तमक्षमादिगुण धारणकरि उज्ज्वल करो समस्तव्यवहार कपटरहित उज्ज्वल करो परका विभव ऐश्वर्य उज्ज्वलयश उत्तमविद्यादिकप्रभाव देखि अदेखसकाभावरूप मलीनता छांड़ि शौचधर्म अंगीकार करो परकापुण्यका उदय देखि विषादी मति होहु इस मनुष्यपर्यायकूं तथा इंद्रिय ज्ञान बल आयु संपदादिकनिकूं अनित्य क्षणभंगुर जानि एकाग्र-चित्तकरि अपने स्वरूपमें दृष्टि धारि अशुभभावनिका अभावकरि आत्माकूं शुचि करो। शौच ही मोक्षका मार्ग है शौच ही मोक्षका दाता है। ऐसैं शौच नाम पंचमधर्मको वर्णन कियो ॥ ५ ॥

अथ संयम नाम धर्मका स्वरूप कहिये है—संयमका ऐसा लक्षण जानना जो अहिंसा कहिये हिंसा-को त्याग दयारूप रहना हितमित पथ्य प्रिय सत्यवचन बोलना परके धनमें वांछाका अभाव करना

कुशीलका छांड़ना परिग्रहत्यागना ए पांच व्रत हैं तिनमैं पंचपापनिका एक देश त्याग सो अणुव्रत है सकलत्याग सो महाव्रत है इन पंचव्रतनिकूं दृढ़ धारण करना अर पंचसमितिका पालना तिनमैं गमनकी शुद्धता ईर्यासमिति है वचनकी शुद्धता सो भाषासमिति है निर्दोष शुद्धभोजन करना सो एषणासमिति है शरीरके उपकरणादिक नेत्रनितैं देखि सोधि उठावना धरना सो आदाननिक्षेपणा समिति है मलमूत्रकफादिक मलनिकूं अन्य जीवनकै ग्लानि दुःख बाधादिक नाहीं उपजै ऐसे क्षेत्रमैं क्षेपना सो प्रतिष्ठापनासमिति है इन पंचसमितिनिका पालना अर क्रोध मान माया लोभ इन च्यार कषायनिका निग्रह करना अर मनवचनकायकी अशुभप्रवृत्ति ए दंड हैं इन तीनदंडनिका त्याग करना अर विषयनिमैं दौड़ती पंचइंद्रियनिकूं वश करना–जीतना सो संयम है। भावार्थ—पंचव्रतनिका धारण पंच समितका पालन कषायनिका निग्रह दंडनिका त्याग इंद्रियनिका विजयकूं जिनेन्द्रके परमागममैं संयम कह्या है। सो संयम बहुत दुर्लभ है जिनकै पूर्वके बांधे अशुकर्मनिका अतिमंदपना होते मनुष्यजन्म उत्तमदेश उत्तमकुल उत्तमजाति इंद्रियपरिपूर्णता नीरोगता कषायनिकी मंदता होय अर उत्तमसंगति अर जिनेन्द्रका आगमनिका सेवन अर सांचे गुरुनिका संयोग सम्यग्दर्शनादि अनेक दुर्लभसामग्रीका संयोग होय तदि संसारदेहभोगनितैं अति विरक्तताके धारक मनुष्यकै अप्रत्याख्याना-वरणका क्षयोपशमतैं तो देशसंयम होय अर जाकै अप्रत्याख्यान अर प्रत्याख्यान दोऊकषायनिका क्षयोप-शम होय ताकै सकल संयम होय है तातैं संयम पावना महा दुर्लभ है। नरकगतिमैं तिर्यंचगतिमैं देश-गतिमैं तो संयम होय नाहीं कोऊ तिर्यंचकै देशव्रत अपनीपर्यायमाफिक कदाचित होय है अर मनुष्यप-र्यायमें भी नीचकुलादिकमैं अधदेशनिमैं इंद्रियविकल अज्ञानी रोगी दरिद्री अन्यायमार्गी विषयानुरागी तीव्रकषायी निंद्यकर्मी मिथ्यादृष्टीनिकै संयम कदाचित नाहीं होय है तातैं अतिदुर्लभ संयमका पावना है ऐसे दुर्लभसंयककूं हू पाय कोऊ मूढ़बुद्धी विषयनिका लोलुपी होय छांड़ै है तो अनन्तकाल जन्म-मरण करता संसारमें परिभ्रमण करै है। संयमपाय छांड़ै है संयमकूं बिगाड़ै है ताकै अनंतकाल निगो-

दमें परिभ्रमण त्रसस्थावरनिमें भ्रमण करना होय सुगत नाहीं होय संयम पाय विगाड़नेंसमान अन्य अनर्थ नाहीं है विषयनिका लोभी होय करि जो संयमकूं विगाड़ै है सो एककौड़ीमें चिंतामणिरत्न बेचै है तथा ईंधनकेअर्थि कल्पवृक्षकूं छेदै है विषयनिका सुख हैसो सुख नाहीं सुखाभास है क्षणभंगुर है नरकनिके घोरदुःखनिका कारण है किंपाकफल जैसें जिह्वाका स्पर्शमात्र मिष्ट लागै है पाछै घोरदुःख महादाह संताप देय मरणकूं प्राप्त करै है तैसें भोग किंचिन्मात्र काल तो अज्ञानी जीवनिकूं भ्रमतें सुखसा भासै है फिर अनंतकाल अनंतभवनिमें घोरदुःखका भोगना है यातें संयमकी परमरक्षा करो पांच इंद्रियनिकूं विषयनिके संबंधतें रोकनेतें संयम होय है कषायनिका खंडनकरि संयम होय है दुर्द्धरतपका धारणकरि संयम होय है रसनिका त्यागकरि संयम होय है मनके प्रसरके रोकनेकरि संयम होय है महान कायक्लेशनिके सहनेकरि संयम होय हैं उपवासादिक अनशनतपकरि संयम होय है मनमें परिग्रहकी लालसाका त्यागकरि संयम होय है त्रसथावरजीवनिकी रक्षा करना सो ही संयम है मनके विकल्पनिके रोकनेकरि तथा प्रमादतैं वचनकी प्रवृत्तिके रोकनेकरि संयम होय है। शरीरके अंगउपांगनिका प्रवर्त्तनकूं रोकनेकरि संयम होय है। बहुत गमनके रोकनेकरि संयम होय है। बहुरि दयारूप परिणामकरि संयम होय है परमार्थका विचारकरकैं तथा परमात्माका ध्यान करकैं संयम होय है संयमकरकैं ही सम्यग्दर्शन पुष्ट होय संयम ही मोक्षका मार्ग है संयमविना मनुष्यभव शून्य है गुणरहित है संयमविना यो जीव दुर्गतिनिकूं प्राप्त भया संयमविना देहका धारना बुद्धिका पावना ज्ञानका आराधन करना समस्त वृथा है संयमविना दीक्षा धारना व्रतधारना मुंड मुंडावना नग्न रहना भेषधारणा ये समस्त वृथा है जातैं संयम दोयप्रकार है इंद्रियसंयम अर प्राणसंयम जाकी इंद्रियां विषयनितैं नाहीं रुकी अर जाकै छहकायके जीवनिकी विराधना नाहीं टली ताकै बाह्य परीसह-सहना तश्चरण करना दीक्षालेना वृथा है संसारमें दुःखितजीवनिकूं संयमविना कोऊ अन्य शरण नाहीं हैं ज्ञानीजन तो ऐसी भावना भावैं हैं जो संयमविना मनुष्यजन्मकी एक घटिका हू मति जावो

संयमविना आयु निष्फल है यो संयम है सो इस भवमैं अर परभवमैं शरण है दुर्गतिरूप सरोवरके शोषण करनेकूं सूर्य है संयमकरकै ही संसाररूप विषमवैरीका नाश होय संसारपरिभ्रमणका नाश संयम विना नाहीं होय ऐसा नियम है अर जो अंतरंगमैं तो कषायनिकरि आत्माकूं मलीन नाहीं होने देहै अर वाह्य यत्नाचारी हुआ प्रमादरहित प्रवर्तै है ताकै संयमहोय है ऐसैं संयमधर्मका वर्णन किया ॥ ६ ॥

अब तपधर्मका वर्णन करैं हैं,—इच्छाका निरोध करना सो तप है तप च्यार आराधनानिमैं प्रधान है जैसैं सुवर्णकूं तपावनेकरि सोलाताव लगै समस्त मल छांड़ि करकै शुद्ध होय है तैसैं आत्मा हू द्वादशप्रकार तपके प्रभावकरि कर्ममलरहित शुद्ध होय है अज्ञानी मिथ्यादृष्टि तो देहकूं पंचअग्निकरि तपावै है तथा अनेकप्रकार कायके क्लेशकूं तप कहैं हैं सो तप नाहीं है। कायकूं दग्धकिये अर मारलिये कहा होय। मिथ्यादृष्टि ज्ञानपूर्वक आत्माकूं कर्मबंधतैं छुड़ावना नाहीं जानै हैं। कर्ममलकलंकरहित आत्मा तो भेदविज्ञानपूर्वक अपने आत्माका स्वभावकूं अर रागद्वेष मोहादिरूप भावकर्मरूप मैलकूं भिन्न देखै है जैसैं रागद्वेष मोहरूप मल भिन्न होजाय अर शुद्धज्ञान दर्शनमय आत्मा भिन्न होजाय सो तप है याहीतैं कहैं हैं मनुष्यभव पाय जो स्वपरतत्वकूं जाण्या है तो मनसहित पंच इंद्रियनिकूं रोकि विषयनितैं विरक्त होय समस्त परिग्रहकूं छांड़ि बंधका करनेवाली रागद्वेषमई प्रवृत्तिकूं छांड़ि पापका आलंवन छूटनेके अर्थि ममता नष्टकरनेकूं वनमैं जाय तप करिये। ऐसा तप धन्यपुरुषनिकै होय है संसारीजीवकै ममतारूप वड़ी फांसी है सो ममतारूप जालमैं फंसाहुआ घोरकर्मकूं करता महापापका बंधकरि रोगादिककी तीव्रवेदना अर स्त्रीपुत्रादि समस्तकुटुंबका तथा परिग्रहका वियोगादिकतैं उपज्या तीव्र आर्तध्यानतैं मरण पाय दुर्गतिनिके घोर दुःखनिकूं जाय प्राप्त होय है। तपोवनकूं प्राप्त होना दुर्लभ है तप तो कोऊ महाभाग्य पुरुष पापनितैं विरक्त होय समस्त स्त्रीपुत्रधनादिकपरिग्रहतैं ममत्वछांड़ि परमधर्मके धारक वीतराग निर्ग्रंथ गुरूनिका चरणनिका शरण पावै है अर गुरूनिको पायकरि जाके अशुभकर्मका उदय अति मंद होय सम्यक्त्वरूप

सूर्यका उदय प्रगट होय संसारविषयभोगनितैं विरक्तता जाकै उपजी होय सो तप संयम ग्रहण करै है अर जो ऐसा दुर्द्धरतपकूं धारण करके हू कोऊ पापी विषयनिकी बांछाकरि विगाड़ै है ताकै अनंतानंत कालमैं फिर तप नाहीं प्राप्त होय हैं यातैं मनुष्यभव पाय तत्वनिका स्वरूपजानि मनसहित पंच इंद्रियनिकूं रोकि वैराग्यरूप होय समस्तसंगकूं छांडि बनमैं एकाकी ध्यानमैं लीनहुआ तिष्ठै सो तप है। जहां परिग्रहमैं ममता नष्ट होय बांछारहित तिष्ठना तथा प्रचंड कामका खंडन करना सो बड़ा तप है। जहां नग्न दिगंबररूप धारि शीतकी पवनकी आतापकी वर्षाकी तथा डांस माछर मक्षिका मधुमक्षिका सर्प विच्छू इत्यादिकतैं उपजी घोरवेदनाकूं कोरे अंगपरि सहना सो तप है अर जो निर्जनपर्वतनिकी निर्जनगुफानिमैं भयंकर पर्वतनिके दराड़ेनिमैं तथा सिंह व्याघ्र रींछ ल्याली चीता हस्तीनिकरि व्याप्त घोरबनमैं निवास करना सो तप है। तथा दुष्ट वैरी म्लेच्छ चोर शिकारी मनुष्य अर दुष्टव्यंतरादिक देवनिकृत घोरउपसर्गनितैं कंपायमान नाहीं होना धीरवीरपनातैं कायरता छांड़ि वैरविरोध छांड़ि समताभावतैं परमात्माका ध्यानमैं लीनहुआ सहना सो तप है। बहुरि समस्तजीवनिकूं उलझानेवाले रागद्वेषनिकूं जीतना नष्ट करना सो तप है। बहुरि यो याचनारहित भिक्षाके अवसरमैं श्रावकका घरमैं नवधाभक्तिकरि हस्तमैं धरया खारा अलूणा कड़वा खाटा लूखा चीकना रस नीरस तिसमैं लोलुपता अर संक्लेशरहित निर्दोष प्रासुक आहार एकवार भक्षण करना सो तप है। बहुरि जो पंचसमितिका पालना अर मनवचनकायकूं चलायमान नाहीं करना अपना रागद्वेषरहित आत्मानुभव करना सो तप है। जो स्वपर तत्त्वकी कथनीका निर्णय करना च्यारअनुयोगका अभ्यासकरि धर्मसहित काल व्यतीतकरना सो तप है। बहुरि अभिमानछांड़ि विनयरूप प्रवर्तना कपटछांड़ि सरलपरिणाम धारना क्रोधछांड़ि क्षमा ग्रहणकरना लोभत्यागि निर्बांछक होना सो तप है। जाकरि कर्मका समूहका नाशकरि आत्मा स्वाधीन होजाय सो तप है। जो श्रुतका अर्थका प्रकाश करना व्याख्यान करना आप निरंतर अभ्यास करै अन्यकूं

अभ्यास करावै सो तप है। तपस्वीनका देवनिका इंद्र स्तवन करै भक्तिका प्रकाश करै तपकरि केवलज्ञान उत्पन्न होय है तपका अचिंत्य प्रभाव है तपकै मांहि परिणाम होना अतिदुर्लभ है। नरक तिर्यंचदेवनिमैं तपकी योग्यता ही नाहीं एक मनुष्यगतिमैं होय मनुष्यमैं हू उत्तम कुल जाति बल बुद्धि इंद्रियनिकी पूर्णता जाकै होय तथा रागादिकनिकी मंदता जाकै होय तथा विषयनिकी लालसा जाकै नष्ट भई होय ताकै होय है अर तप द्वादशप्रकार है जाकी जैसी शक्ति होय तिसप्रमाण धारण करो। बालक करो वृद्ध करो धनाढ्य करो निर्धन करो बलवान करो निर्बल करो सहायसहित होय सो करो सहायरहित होय सो करो भगवानको प्ररूप्यो तप किसीकै हू करनेकूं अशक्य नाहीं है। जैसैं वायुपित्तकफादिकनिका प्रकोप नाहीं होय रोगकी वृद्धि नाहीं होय जैसैं शरीर रत्नत्रयको सहकारी बन्यों रहै तैसैं अपना संहनन बल वीर्य देखि तप करो। तथा देशकालआहारकी योग्यता देखि तप करो। जैसैं तपमैं उत्साह बधतो रहै परिणामनिमैं उज्ज्वलता बधती जाय तैसैं तप करो तथा जो इच्छाका निरोधकरि विषयनिमैं राग घटावना सो तप है। तप ही जीवका कल्याण है तप ही कामकूं निद्राकूं प्रमादकूं नष्ट करनेवाला है यातैं मदछांड़ि बारहप्रकार तपमैं जैसा जैसा करनेकूं सामर्थ्य होय तैसा ही तप करो सो बारहप्रकार तपकूं आगैं न्यारो लिखैंगे। ऐसैं तपधर्मकूं वर्णन कीया॥७॥

अब त्यागधर्मका वर्णन करैं हैं। त्याग ऐसैं जानना जो धन संपदादि परिग्रहकूं कर्मका उदयजनित पराधीन अर विनाशीक अर अभिमानका उपजावनेवाला तृष्णाकूं बधावनेवाला रागद्वेषकी तीव्रता करनेवाला आरंभकी तीव्रता करनेवाला हिंसादिक पंचपापनिका मूल जानि उत्तमपुरुष याकूं अंगीकार ही नाहीं किया ते धन्य हैं। केई याकूं अंगीकार करि याकूं हलाहलविषसमान जानि जीर्णतृणकी ज्यों त्याग कीया तिनकी अचिंत्यमहिमा है। अर केई जीवनिकै तीव्ररागभाव मंदहुआ नाहीं यातैं सकलत्यागनेकूं समर्थ नाहीं अर सरागधर्ममैं रुचि धारैं हैं अर पापतैं भयभीत हैं ते इस धनकूं उत्तमपात्रनिके उपकारके अर्थि दानमैं लगावैं हैं अर जे धर्मके सेवन करनेवाला निर्धनजन हैं तिनके

अन्नवस्त्रादिककरि उपकार करनेमैं धन लगावैं हैं तथा धर्मके आयतन जिनमंदिरादिकमैं जिनसिद्धांत लिखायदेनेमैं तथा उपकरणनिमैं पूजनादिक प्रभावनामैं लगावैं हैं तथा दुःखित दरिद्री रोगीनिके उपकारमैं तन मन धन करुणावान होय लगावैं हैं ते धन जीतव्यकूं सफल करैं हैं। दान है सो धर्मको अंग है यातैं अपनी शक्तिप्रमान भक्तिकरि गुणानिके धारक उज्ज्वलपात्रनिको दानदेना है सो परलोककूं जावते महान सुखसामग्रीकूं लेजावैं है सो निर्विघ्न स्वर्गकूं तथा भोगभूमिकूं प्राप्त करनेवाला जानो। दानकी महिमा तो अज्ञानी बालगोपाल हू कहैं हैं जो पूर्वै दान दीया है सो नानाप्रकार सुखसामग्री पाई है अर देगा सो पावैगा तातैं जो सुखसंपदाका अर्थी होय सो दानहीमैं अनुराग करो। अर जे दानकरनेमैं उद्यमी नाहीं केवल मरणपर्यंत धनका संचय करनेमैं उद्यमी हैं ते इहां हू तीव्रआर्तपरिणामतैं मरि सर्पादिक दुष्ट तिर्यंचगति पाय नरक निगोदकूं जाय प्राप्त होय हैं। धन कहा लार जायगा धन पावना तो दानहीतैं सफल है दानरहितका धन घोर दुःखनिकी परिपाटीका कारण है अर इहां हू कृपण घोरनिंदाकूं पावै है कृपणका नाम भी लोक नाहीं कहैं हैं कृपण सूमका नामकूं लोक अमंगल मानै है जामैं औगुण दोष हू होय तो दानीका दोष ढकि जाय है। दानीका दोष दूरि भागै है दानकरि ही निर्मलकीर्ति जगतमैं विख्यात होय है। देनेकरि वैरी हू चरननिमैं नमै है। दानदेनेतैं वैरी वैर छांड़ैं हैं अपना हित करनेवालामित्र होजाय हैं जगतमैं दान बड़ा है थोड़ासा दान हू सत्यार्थ भक्तिकरि करनेवाला भोगभूमिका तीनपल्यपर्यंत भोगभोगि देवलोकमैं जाय है देना ही जगतमैं ऊंचा है है दान देना विनयसंयुक्त स्नेहका वचनकरिसहित होय देना अर दानी हैं ते ऐसा अभिमान नाहीं करैं हैं जो हम इसका उपकार करैं हैं। दानी तो पात्रकूं अपना महाउपकार करनेवाला मानै हैं जो लोभरूप अंधकूपमैं पड़नेका उपकार पात्रविना कौन करै पात्रविना लोभीनिका लोभ नाहीं छूटता अर पात्रविना संसारके उद्धारकरनेवाला दान कैसैं बणता। यातैं धर्मात्मा जननिके तो पात्रके मिलनेसमान अर दानके देनेसमान अन्यकोऊ आनंद नाहीं है बड़ापना धनाढ्यपना ज्ञानीपना पाया है

तो दानमैं ही उद्यम करो। छहकायके जीवनिकूं अभयदान देहु अभक्ष्यका त्यागकरि वहुआरंभके घटावनेकरि देखि सोधि मेलना धरना यत्नाचारविना निर्दयी होय नाहीं प्रवर्तना किसी प्राणीमात्रकूं मनवचनकायतैं दुःखित मति करो। दुःखीनिकी करुणा ही करो यो ही गृहस्थकै अभयदान है यातैं संसारमैं जन्म मरण रोग शोक दरिद्र वियोगादिक संतापका पात्र नाहीं होओगे। वहुरि संसारके वधावनेवाले हिंसाकूं पुष्ट करनेवाले तथा मिथ्याधर्मकी प्ररूपणा करनेवाले तथा युद्धशास्त्र शृंगारशास्त्र मायाचारके शास्त्र वैद्यकशास्त्र रस रसायण मंत्र जंत्र मारण वशीकरणादिकशास्त्र महापापके प्ररूपक हैं इनकूं अति दूरितैं ही त्यागि भगवान वीतराग सर्वज्ञका कह्या दयाधर्मकूं प्ररूपणा करनेवाला स्याद्वादरूप अनेकांतका प्रकाश करनेवाले नयप्रमाणकरि तत्त्वार्थकी प्ररूपणा करनेवाले शास्त्रनिकूं अपने आत्माकूं पढ़नेपढ़ावनेकरि आत्माका उद्धारकेअर्थि अपनेअर्थि दान करो। अपनी संतानकूं ज्ञानदान करो तथा अन्यधर्मबुद्धि धर्मके रोचक इच्छक तिनकूं शास्त्रदान करो ज्ञानके इच्छक हैं ते ज्ञानदानके अर्थि पाठशाला स्थापन करैं हैं जातैं धर्मका स्थंभ ज्ञान ही है। जहां ज्ञानदान होयगा तहां धर्म रहैगा यातैं ज्ञानदानमैं प्रवर्तन करो। ज्ञानदानके प्रभावतैं निर्मल केवलज्ञानकूं पावै है। वहुरि रोगका नाश करनेवाला प्रासुक औषधिका दान करो औषधदान वड़ा उपकारक है अर रोगीकूं सीधी तयार औषध मिलै है ताका वड़ा आनंद है अर निरधन होय तथा जाकै टहल करनेवाला नाहीं होय ताकूं औषध जो करी हुई तय्यार मिल जाय तो निधानका लाभसमान मानै है औषध लेय नीरोग होय है सो समस्त व्रत तप संयम पालै है ज्ञानका अभ्यास करै है औषधदान है ताकै वात्सल्यगुण स्थितिकरणगुण निर्विचिकित्सागुण इत्यादिक अनेकगुण प्रगट होय हैं औषधदानके प्रभावतैं रोगरहित देवानिका वैक्रियक देह पावै है। वहुरि आहारदान समस्तदाननिमैं प्रधान है प्राणीका जीवन शक्ति वल बुद्धि ये समस्तगुण आहारविना नष्ट होजाय हैं आहार दिया सो प्राणीकूं जीवन बुद्धि शक्ति समस्त दीना। आहारदानतैं ही मुनि श्रावकका सकलधर्म प्रवर्तै है

आहारविना मार्ग भ्रष्ट होजाय आहार है हो सो समस्तरोगका नाश करनेवाला है जो आहारदान दे है सो मिथ्यादृष्टि हू भोगभूमिमैं कल्पवृक्षनिका दशांग भोगकूं असंख्यातकाल भोगै अर क्षुधातृषादिककी बाधारहित हुआ आंवलाप्रमाण तीनदिनके आंतरै भोजन करै। समस्तदुःखक्लेशरहित असंख्यातवर्ष सुखभोगि देवलोकनिमैं जायउपजै है। यातैं धनकूं पाय च्यारप्रकारके दान देनेमैं प्रवर्तन करो। अर जो निर्धन है सो हू अपना भोजनमैंतैं जेता बनै तेता दान करो आपकूं आधा भोजन मिलै तीमैंतैं हू ग्रास दोयग्रास दुःखित बुभुक्षित दीनदरिद्रीनिकेअर्थ देवो। बहुरि मिष्टवचन बोलनेका बड़ा दान है आदरसत्कार विनयकरना स्थानदेना कुशलपूछना ये महादान हैं। बहुरि दुष्टविकल्पनिका त्याग करो पापनिमैं प्रवृत्तिका त्याग करो चारकषायनिका त्याग करो विकथा करनेका त्याग करो परकेदोष सत्य असत्य कदाचित मति कहो। बहुरि अन्यायका धन ग्रहण करनेका दूरहीतैं त्याग करो भो ज्ञानी-जन हो जो अपना हितके इच्छक हो तो दुखितजननिकूं तो दान करो अर सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञानादि गुणनिके धारकनिका महाविनय सन्मान करो समस्तजीवनिमैं करुणा करो मिथ्यादर्शनका त्याग करो रागद्वेषमोहके धारक कुदेव अर आरंभपरिग्रहके धारक भेषधारी अर हिंसाके पोषक रागद्वेषकूं पुष्ट करनेवाले मिथ्यादृष्टिनिके शास्त्र इनकूं वंदना स्तवन प्रशंसा करनेका त्याग करो क्रोध मान माया लाभ इनके निग्रह करनेमैं बड़ा उद्यम करो क्लेश करनेके कारण अप्रियवचन गालीके वचन अपमानके वचन मदसहित वचन कदाचित मति कहो इत्यादिक जो परके दुःखके कारण तथा अपना यशकूं नष्ट करनेवाला धर्मकूं नष्ट करनेवाला मनवचनकायके प्रवर्तनिका त्याग करो ऐसैं त्यागधर्मका संक्षेप वर्णन किया ॥ ८ ॥

अब आकिंचन्यधर्मका स्वरूप कहिये है,—जो अपना ज्ञानदर्शनमय स्वरूपविना अन्य किंचिन्मात्र हू हमारा नाहीं है मैं किसी अन्यद्रव्यका नाहीं हूं मेरा कोऊ अन्यद्रव्य नाहीं है ऐसा अनुभवनिकूं आकिंचन्य कहिये है। भो आत्मन् अपना आत्माकूं देहतैं भिन्न अर ज्ञानमय अन्यद्रव्यकी उपमारहित अर स्पर्शरसगंधवर्णरहित अर अपना स्वाधीन ज्ञानानंदसुखकरि पूर्ण परमअतींद्रिय भयरहित ऐसा अनुभव करो। भावार्थ—

ये देह है सो मैं नाहीं देह तो रस रुधिर हाड़ मांस चाममय जड़ अचेतन है । मैं इसदेहतैं अत्यंत भिन्न हूं ये ब्राह्मण क्षत्रियादिकजातिकुल देहके हैं मेरे ये नाहीं है स्त्री पुरुष नपुंसकादिलिंग देहके हैं मेरे नाहीं यो गोरापना सांवलापना राजापना रंकपना स्वामीपना सेवकपना पंडितपना मूर्खपणा इत्यादि समस्त रचना कर्मका उदयजनित देहके हैं मैं तो ज्ञायक हूं ये देहका संबंधी मेरा स्वरूप नाहीं है मेरा स्वरूप अन्य द्रव्यकी उपमारहित है ताता ठंडा नरम कठोर लूखा चीकना हलका भारी अष्टप्रकार स्पर्श है ते हमारा रूप नाहीं पुद्गलके रूप हैं ये खाटा मीठा कड़वा कसायला चिरपरा पंचप्रकार रस अर सुगंध दुर्गंध दोयप्रकारका गंध अर काला पीला हरया स्वेत रक्त ये पंचवर्ण मेरा स्वरूप नाहीं पुद्गलका है मेरा स्वभाव तो सुखकरि परिपूर्ण है परंतु कर्मके आधीन दुखकरि व्याप्त होय रह्या हूं मेरा स्वरूप इंद्रियरहित अतींद्रिय है इंद्रियां पुद्गलमय कर्मकरि कीं हुई हैं मैं समस्त भयरहित अविनाशी अखंड आदिअंतरहित शुद्ध ज्ञानस्वभाव हूं परंतु अनादिकालतैं जैसैं सुवर्ण अर पाषाण मिल रह्या है तैसैं तथा क्षीरनीरज्यौं कर्मनिकरि अनादि कालतैं मिलरह्या हूं तिनमैं हू मिथ्यात्वनाम कर्मका उदयकरि अपना स्वरूपका ज्ञानरहित होय देहादिकपरद्रव्यनिकूं आपकास्वरूपजानि अनंतकालमैं परिभ्रमणकरया अब कोउ किंचित आवरणादिकके दूरहोनेतैं श्रीगुरूनिका उपदेश्या परमागमका प्रसादतैं अपना अर परका स्वरूपका ज्ञान भया है जैसैं रत्ननिका व्यौहारी जड़ेहुये पंचवर्णरत्ननिके आभरणनिमैं गुरुकी कृपातैं अर निरंतर अभ्यासतैं मिल्याहुवा हू डाकका रंग अर माणिक्यका रंगकूं अर तोलकूं अर मोलकूं भिन्न भिन्न जानै है तैसैं परमागमका निरंतर अभ्यासतैं मेरा ज्ञान स्वभावमैं मिल्या हुआ रागद्वेषमोह कामादिक मैलकूं भिन्न जाण्या है अर मेरा ज्ञायकस्वभावकूं भिन्न जाण्या है तातैं अब जैसैं रागद्वेषमोहादिकभाव कर्मनिमैं अर कर्मनिके उदयतैं उपजे विनाशीक शरीर परवार धन संपदादि परिग्रहमैं ममताबुद्धि मेरे जैसैं फिर अन्य जन्ममैं हू नाहीं उपजै तैसैं आकिंचन्य भाऊं या आकिंचन्य भावना अनादिकालतैं नाहीं उपजी समस्तपर्यायनिकूं अपना रूप मान्या तथा रागद्वेषमोहक्रोधकामादिकभाव कर्मकृत विकार थे तिनकूं आपरूप अनुभ-

वकरि विपरीतभावनितैं घोरकर्मबंधकूं कीया अब मैं आकिंचन्य भावनामैं विघ्नका नाश करनेवाला पंच परमगुरुनिका शरणतैं आकिंचन्य ही निर्विघ्न चाहूं हूं और त्रैलोक्यमैं कोऊ अन्यवस्तुकूं नाहीं वांछूं हूं। यो आकिंचन्यपणो ही संसारसमुद्रतैं तारणेकूं जिहाज होहू जो परिग्रहकूं महाबंध जानि छांडना सो आकिंचन्य है आकिंचन्यपणा जाकै होय है ताकै परिग्रहमैं वांछा रहै नाहीं है आत्मध्यानमैं लीनता होय है देहादिकनिमैं बाह्यभेषमैं आपो नाहीं रहै है अर अपना स्वरूप जो रत्नत्रय तामैं प्रवृत्ति होय है इंद्रियनिके विषयनिमैं दौड़ता मन रुकिजाय है देहतैं स्नेह छूटि जाय है सांसारिकदेवनिका सुख इंद्र अहमिंद्र चक्रवर्तीनिका सुख हू दुख दीखै है। इनमैं वांछा कैसैं करैं? परिग्रह रत्न सुवर्ण राज्य ऐश्वर्य स्त्री पुत्रादिकनिकूं जीर्णतृणमैं जैसैं ममतारहित छांड़नेमैं विचार नाहीं तैसैं परिग्रह छांड़ै है। आकिंचन्य तो परम वीतरागपणा है जिनकै संसारको अंत आगयो तिनकै होय है जाकै आकिंचन्यपणा होय ताकै परमार्थ जो शुद्धआत्मा ताका विचारनेकी शक्ति प्रगट होय ही अर पंचपरमेष्ठीमैं भक्ति होय ही अर दुष्टविल्पनिका नाश होय ही अर इष्टअनिष्टभोजनमैं रागद्वेष नष्ट होजाय है केवल उदररूप खाड़ा भरना अन्य रसनीरसभोजनमैं विचार जाता रहै है समस्तधर्मनिमैं प्रधानधर्म आकिंचन्य ही मोक्षका निकट समागम करावनेवाला है अनादिकालतैं जेते सिद्ध भये हैं ते आकिंचन्यतैं ही भये हैं अर आगैं जो जो तीर्थंकरादि सिद्ध होयंगे ते आकिंचन्यपणाहीतैं होयगे। यद्यपि आकिंचन्यधर्म प्रधानकरि साधुजननिकै ही होय है तथापि एकदेश धर्मका धारक गृहस्थ उस धर्मके ग्रहणकरनेकी इच्छा करै है अर गृहचारामैं मंदरागी होय अतिविरक्त होय है प्रमाणीकपरिग्रह धारै है आगामीवांछारहित है अन्यायका धन परिग्रह कदाचित ग्रहण नाहीं करै है अल्पपरिग्रहमैं अतिसंतोषी होय रहै है परिग्रहकूं दुःखका देनेवाला अर अत्यंतअस्थिर मानै है ताकै ही आकिंचन्यभावना होय है। ऐसैं आकिंचन्यधर्मका वर्णन कीया ॥ ९ ॥

अब उत्तमब्रह्मचर्यका स्वरूप कहिए है—समस्त विषयनिमैं अनुराग छांड़करकै ब्रह्म जो ज्ञानकस्व-

भाव आत्मा तामैं जो चर्या कहिये प्रवृत्ति सो ब्रह्मचर्य है। भो ज्ञानीजन हो यो ब्रह्मचर्य नाम व्रत बड़ो दुर्द्धर है हरेक बापड़ा विषयनिके वस हुआ आत्मज्ञान रहित हैं ते याकूं धारवेकूं समर्थ नाहीं है जे मनुष्यनिमैं देवके समान हैं ते धारवेकूं समर्थ हैं अन्य रंक विषयनिकी लालसाके धारक ब्रह्मचर्य धारनेकूं समर्थ नाहीं हैं यो ब्रह्मचर्यव्रत महादुर्द्धर है जाकै ब्रह्मचर्य होय ताकै समस्त इंद्रिय अर कषायनिका जीतना सुलभ है। भो भव्य हो स्त्रीनिका सुखमैं रागी जो मनरूप मदोन्मत्तहस्ती ताकूं वैराग्यभावनामैं रोक करकैं अर विषयांकी आशाका अभाव करकैं दुर्द्धर ब्रह्मचर्य धारण करो। यो काम है सो चित्तरूपभूमिमैं उपजै है याकी पीड़ाकरि नाहीं करनेयोग्य ऐसे पाप करै हैं जातैं यो काम मनकूं मथन करै है मनका ज्ञानकूं नष्ट करै है याहीतैं याकूं मनमथ कहिये है ज्ञान नष्ट होजाय तदि ही स्त्रीनिका महादुर्गंध निंद्यशरीरकूं रागी हुआ सेवै है अर कामकरि अंध होजाय तदि महाअनीतिकूं प्राप्त होय अपनी परकी नारिका विचार ही नाहीं करै है। जो इस अन्यायतैं मैं इहां ही मारया जाऊंगा राजाका तीव्रदंड होयगा यश मलिन होयगा धर्मभ्रष्ट होजाऊंगा सत्यार्थबुद्धि नष्ट होजायगी मरणकरि नरकनिके घोरदुःख असंख्यातकाल पर्यंत भोगि फिर असंख्यात तिर्यंचनिके दुःखरूप अनेकभव पाय कुमानुषनिमैं अंधा लूला कूबड़ा दरिद्री इंद्रियविकल बहरा गूंगा चांडाल भील चमारनिके नीचकुलनिमैं उपजि फिर त्रसस्थावरनिमैं अनंतकाल परिभ्रमण करूंगा। ऐसा सत्यविचार कामीकै नाहीं उपजै है। इस कामके नाम ही जगतके जीवनिकूं प्रगट करैं हैं। कं कहिये मोदादर्प्प अर्थात् गर्व उपजावै तातैं कंदर्प कहिये है। अति कामना जो वांछा उपजाय दुःखित करै तातैं याकूं काम कहिये है। याकरि अनेक तिर्यंचनिके तथा मनुष्यनिके भवनिमैं लड़िलड़ि मरिये तातैं मार कहिये है। संवरको वैरी तातैं संवरारि कहिये। ब्रह्म जो तपसंयम तातैं सुचारि कहिये चलायमान करै तातैं ब्रह्मसू कहिये इत्यादिक अनेक दोषनिकूं नाम ही कहैं हैं या जानि मनवचनकायतैं अनुरागकरि ब्रह्मचर्य व्रत पालो। ब्रह्मचर्यकरिसहित ही संसारके पार जावोगे ब्रह्मचर्यविना व्रत तप समस्त असार हैं ब्रह्मचर्यविना सकल

कायक्लेश निष्फल हैं बाह्य जो स्पर्शनइंद्रियका सुखतैं विरक्त होय अभ्यंतर परमात्मस्वरूप आत्मा ताकी उज्ज्वलता देखहु । जैसैं अपना आत्मा कामके रागकरि मलीन नाहीं होय तैसैं यत्न करो । ब्रह्मचर्यकरि ही दोऊ लोक भूषित होय है । बहुरि जो शीलकी रक्षा चाहो हो अर उज्ज्वलयश चाहो हो अर धर्म चाहो हो अर अपनी प्रतिष्ठा चाहो हो तो चित्तमैं परमागमकी शिक्षा इसप्रकार धारण करो स्त्रीनिकी कथा मति श्रवण करो मति कहो स्त्रीनिका रागरंग कुतूहल चेष्टा मति देखो ये मेला देखना परिणाम बिगाड़े है । व्यभिचारी पुरुषनिके संगतिका त्याग करना भांग जरदा मादकवस्तु भक्षण नाहीं करना तांबूल तथा पुष्पमाला अत्तर फुलेलादि शीलभंग व्रतभंगके कारण दूरतैं टालो गीत नृत्यादिकामोद्दीपनके कारणनिका परिहार करो रात्रिभक्षण टालो विकार करनेका कारण लोकविरुद्ध वस्त्र आभरण मति पहरो एकांतमैं कोऊ ही स्त्रीमात्रका संसर्ग मति करो रसनाइंद्रियकी लंपटता छांड़ो जिव्हाकी लंपटताकी लार हजारां दोष आवैं हैं यातैं समस्त ऊंचापणो यश धर्म नष्ट होजाय है जिह्वाइंद्रियका लंपटीकै संतोष नष्ट होजाय समभावकूं स्वप्नमैं हू नाहीं जानै लोकव्यवहार भ्रष्ट होजाय ब्रह्मचर्य भंग होजाय यातैं आत्माके हितका इच्छक एक ब्रह्मचर्यकी ही रक्षा करो ऐसैं धर्मके दशलक्षण सर्वज्ञ भगवान कहे हैं । जाके ये दशचिह्न प्रगट होय ताके धर्म है उत्तमक्षमादिकनिके घातक धर्मके वैरी क्रोधादिक हैं तिनतैं अनेकदोष उपजैं हैं तिनकी भावना करो अर क्षमादिकनिमैं अनेक गुण हैं तिनकी भावना बारंबार सदैव भावो । जो क्षमा है सो अपना प्राणनिकी रक्षा है धनकी रक्षा है यशकी रक्षा है धर्मकी रक्षा है व्रतशीलसंयमसत्यकी रक्षा एक क्षमातैं ही है कलहके घोरदुःखतैं अपनी रक्षा एक क्षमा ही करै है समस्त उपद्रव तथा वैरतैं क्षमा ही रक्षा करै है । बहुरि क्रोध है सो धर्मअर्थकाममोक्षका मूलतैं नाश करै है अपना प्राणनिका नाश करै है क्रोधतैं प्रचंड रौद्रध्यान प्रगट होय है क्रोधी एकक्षणमात्रमैं आप मरिजाय है कूवामैं वावड़ीमैं तलावनदीसमुद्रमैं डूबि मरै है शस्त्रघात विषभक्षण झंपापातादि अनेक कुकर्मकरि आत्मघात करै है । अन्यकै मारनेकी क्रोधीकै दया नाहीं होय है क्रोधी

होय सो अपने पिताकूं पुत्रकूं भ्राताकूं मित्रकूं स्वामीकूं सेवककूं गुरुकूं एक क्षणमात्रमैं मारै है। क्रोधी घोरनरकका पात्र है क्रोधी महाभयंकर है समस्तधर्मका नाश करनेवाला है। क्रोधीकै सत्यवचन नाहीं होय है आपकूं अर धर्मकूं समभावकूं दग्ध करनेवाला कुवचनरूप अग्निकूं उगलै है क्रोधी होय सो धर्मात्मा संयमी शीलवान् मुनि अर श्रावकनिकूं चोरी अन्याईके झूंठे दोष कलंक लगाय दुषित करै है। क्रोधके प्रभावतैं ज्ञान कुज्ञान होय है आचरण विपरीत होजाय है श्रद्धान भ्रष्ट होजाय है अन्यायमैं प्रवृत्ति होजाय है नीतिका नाश होय है अति हठी होय विपरीतमार्गका प्रवर्तक होय है धर्म अधर्म उपकार अपकारका विचाररहित कृतघ्नी होय है यातैं वीतरागधर्मके अर्थी हो तो क्रोधभावकूं कदाचित प्राप्त मति होहू। बहुरि मार्दव जो कठोरतारहित कोमलपरिणामी जीवमैं गुरुनिका बड़ा अनुराग वर्तै है मार्दवपरिणामीकूं साधुपुरुष हू साधु मानै है तातैं कठोरतारहित पुरुष ही ज्ञानका पात्र होय है मानरहित कोमलपरिणामीकूं जैसा गुण ग्रहण कराया चाहै तथा जैसी कला सिखाया चाहै तैसी कला गुण प्राप्त होजाय है समस्तधर्मका मूल समस्त विद्याका मूल विनय हैं विनयवान् समस्तके प्रिय होय है अन्यगुण जामें नाहीं होय सो पुरुष हू विनयतैं मान्य होय है विनय परम आभूषण है कोमल परिणाममैं ही दया वसै है मार्दवतैं स्वर्गलोककी अभ्युदयसंपदा निर्वाणकी अविनाशीक संपदा प्राप्त होय है अर कठोरपरिणामीकूं शिक्षा नाहीं लागै है साधुपुरुष हैं तिनका परिणाम हू अविनयी कठोरपरिणामीकूं दूरहीतैं त्याग्या चाहै है जैसैं पाषाणमैं जल नाहीं प्रवेश करै तैसैं सद्‌गुरुनिका उपदेश कठोरपुरुषका हृदयमैं प्रवेश नाहीं करै है जातैं जो पाषाणकाष्ठादिक हू नरमाई लियेहोय ताका जो वालथालमात्र हू जहां घड़्या चाहै छील्या चाहै तहां बालमात्र ही उतरि आवै तदि जैसी सूरत मूरत बनाया चाहै तैसैं ही बनै है अर कोमलतारहितमैं जहां टांची लगावै तहां चिड़क उतरि दूरि पड़ै शिल्पीका अभिप्रायमाफिक घड़ाईमैं नाहीं आवै तैसैं कठोरपरिणामीकूं यथावत शिक्षा नाहीं लागै अभिमानी कोऊकूं प्रिय नाहीं लागै अभिमानीका समस्तलोक विनाकिया वैरी

होय है अर परलोकमैं अतिनीच तिर्यंचमनुष्यनिमैं असंख्यातकाल नानातिरस्कारका पात्र होय है यातैं कठोरतात्यागि मार्दवभावना ही निरंतर धारण करो। बहुरि कपट समस्तअनर्थनिका मूल है प्रीति अर प्रतीतिका नाशकरनेवाला है कपटीमैं असत्य छल निर्दयता विश्वासघातादि समस्त दोष वसैं हैं कपटीमैं गुण नाहीं समस्तदोष ही दोष वास करैं हैं मायाचारी यहां अपयशकूं पाय तिर्यंचनरकादिकगतिनिमें असंख्यातकाल भ्रमण करै है मायाचाररहित आर्जवधर्मका धारकमैं समस्तगुण वसैं हैं समस्तलोकनिकूं प्रीतिका अर प्रतीतिका कारण है परलोकमैं देवनिकरि पूज्य इंद्र प्रतींद्रादिक होय हैं यातैं सरलपरिणाम ही आत्माका हित है। बहुरि सत्यवादीमैं समस्तगुण तिष्ठैं हैं सदाकाल कपटादिदोषरहित जगतमैं मान्यताकूं हु प्राप्त होय है अर परलोकमैं अनेकदेवमनुष्यादिक जाकी आज्ञा मस्तकऊपरि धारैं हैं अर असत्यवादी इहां ही अपवाद निंदा करनेयोग्य होय हैं। समस्तके अप्रतीतिका कारण है बांधवमित्रादिक हु अवज्ञाकरि छांड़ै हैं राजानिकरि जिह्वाछेद सर्वस्वहरणादिक दंड पावैं हैं अर परलोकमैं तिर्यंचगतिमैं वचनरहित एकेन्द्रिय विकलत्रयादि असंख्यातपर्याय धारैं हैं यातैं सत्यधर्मका धारण ही श्रेष्ठ है। बहुरि जाका शुचिआचरण होय सो ही जगतमैं पूज्य है शुचि नाम पवित्रता उज्ज्वलताका है जाका आहारविहारादिक समस्तप्रवृत्ति हिंसारहित हिंसाका भयतैं यत्नाचारसहित होय अर अन्यके धनमैं अन्यकी स्त्रीमैं कदाचित स्वप्नमैं बांछा नाहीं होय सो ही उज्ज्वलआचरणको धारक है तिसकूं ही जगत पूज्य मानै है निर्लोभीका समस्तलोक विश्वास करै है सो ही लोकमैं उत्तम है ऊर्द्धलोकका पात्र है लोभरहितका बड़ा उज्ज्वल यश प्रगटै है लोभी महानलीन समस्तदोषनिका पात्र है निंद्यकर्ममैं लोभीकी प्रीति होय है लोभीके ग्राह्यअग्राह्य खाद्यअखाद्य कृत्यअकृत्यका विचार ही नाहीं होय है इहां हू लोकमैं निंदा धर्मतैं पराङ्मुखता निर्दयता प्रगट देखिये है लोभी धर्मअर्थकामकूं नष्टकरि कुमरणकरि दुर्गति जाय है लोभीका हृदयमैं गुण अवकाश नाहीं पावै है इसलोक परलोकमैं लोभीकूं अचिंत्यक्लेश दुःख प्राप्त होय है यातैं शौचधर्मका धारण ही श्रेष्ठ है। बहुरि संयम

ही आत्माको हित है इसलोकमैं संयमका धारक समस्तलोकनिके वंदनेयोग्य होय है समस्तपापनिकरि नाहीं लिपै है याका इसलोकमैं परलोकमैं अचिंत्यमहिमा है अर असयंमी है सो प्राणनिका घात अर विषयनिमैं अनुरागकरि अशुभकर्मका बंध करै है यातैं संयमधर्म ही जीवका हित है। बहुरि तप है सो कर्मका संवरनिर्जरा करनेका प्रधान कारण है तप ही आत्माकूं कर्ममलरहित करै तपका प्रभावतैं यहां ही अनेक ऋद्धि प्रगट होय है तपका अचिंत्यप्रभाव है तपविना कामकूं निद्राकूं कौन मारै तपविना बांछाकूं कौन मारै इंद्रियनिके विषयनिका मारनेमैं तप ही समर्थ है आशारूप पिशाचणी तपहीतैं मारी जाय है कामका विजय तपहीतैं होय है तपका साधन करनेवाला परीसह उपसर्ग आवतै हू रत्नत्रयधर्मतैं नाहीं छूटै यातैं तपधर्म ही धारण करना उचित है तपविना संसारतैं छूटना नाहीं है जातैं चक्रीपनाका हू राज्यछांड़ि तप धारै सो त्रैलोक्यमैं वंदनेयोग्य पूज्य होय है अर तपकूं छांड़ि राज्य ग्रहण करै सो अतिनिंद्य थुथुकार करनेयोग्य होय तृणतैं हू लघु होय यातैं त्रैलोक्यमैं तपसमान महान् अन्य नाहीं। बहुरि परिग्रहसमान भार नाहीं जेते दुःख दुर्ध्यान क्लेश वैर वियोग शोक भय अपमान हैं ते समस्त परिग्रहके इच्छककै है जैसैं जैसैं परिग्रहतैं परिणाम निराला होय तैसैंतैसैं खेदरहित होयहै जैसैं बड़ाभारकरि दुःखित पुरुष भाररहित होय तदि सुखित होय तैसैं परिग्रहकी वासना मिटै सुखित होय है समस्तदुःख अर समस्तपापनिका उपजावनेका स्थान ये परिग्रह हैं जैसैं नदीनिकरि समुद्र तृप्त नाहीं होय अर ईंधनकरि अग्नि तृप्त नाहीं होय है आशारूप खाड़ा बड़ा अगाध है जाका तलस्पर्श नाहीं दिनादिन यामैं धरो त्योंत्यों खाड़ा बधता जाय जो आशारूप खाड़ा निधिनितैं नाहीं भरै सो अन्यसंपदातैं कैसैं भरै अर ज्योंज्यों परिग्रहकी आशाका त्याग करो त्योंत्यों भरतो चल्यो जाय तातैं समस्तदुःख दूरि करनेकूं त्याग ही समर्थ है त्यागहीतैं अंतरंग बहिरंग बंधनरहित होय अनंतसुखके धारक होहुगे परिग्रहके बंधनमें बँधेजीव परिग्रह त्यागतैं ही छूटि मुक्त होय तातैं त्यागधर्म धारण ही श्रेष्ठ है। बहुरि हे आत्मन् यो देह अर स्त्रीपुत्र धन धान्य राज्य ऐश्वर्यादिकानिमैं एक परमाणुमात्र हू

तुम्हारा नाहीं हैं ये पुद्गलद्रव्य हैं जड़ हैं विनाशीक हैं अचेतन हैं इन परद्रव्यनिमैं 'अहं' ऐसा संकल्प तीव्र दर्शनमोहकर्मका उदयविना कौन करावै इस परद्रव्यमैं आत्मसंकल्प मेरे कदाचित मति होहु मैं अकिंचन्य हूं। या आकिंचन्यभावनाके प्रभावतैं कर्मका लेपरहित यहां ही समस्त बंधरहित हुआ तिष्ठै है साक्षात् निर्वाणका कारण आकिंचन्यधर्म ही धारण करो। बहुरि कुशील महापाप है संसार-परिभ्रमणका बीज है ब्रह्मचर्यके पालनेवालेतैं हिंसादिक पापनिका प्रचार दूरि भागै है समस्तगुणनिकी संपदा यामैं बसै है जितेंद्रियता प्रगट होय है ब्रह्मचर्यतैं कुलजात्यादि भूषित होय है परलोकमें अनेक ऋद्धिका धारक महर्द्धिक देव होय है। ऐसैं भगवान अरहंत देवाधिदेवके मुखारविंदतैं प्रगटहुवा दशलक्षणधर्म आत्माका स्वभाव है परवस्तु नाहीं है क्रोधादिक कर्मजनित उपाधि दूरि होतैं स्वयमेव आत्माका स्वभाव प्रगट होय है क्रोधके अभावतैं क्षमागुण प्रगट होय है मानके अभावतैं मार्दवगुण प्रगट होय है मायाके अभावतैं आर्जवगुण प्रगट होय है लोभके अभावतैं शौचधर्म प्रगट होय है असत्यके अभावतैं सत्यधर्म प्रगट होय है कषायनिके अभावतैं संयमगुण प्रगट होय है इच्छाके अभावतैं तपगुण प्रगट होय है परमैं ममताके अभावतैं त्यागधर्म प्रगट होय है परद्रव्यनितैं भिन्न अपने आत्मानुभव न होनेतैं आकिंचन्यधर्म प्रगट होय है वेदनिके अभावतैं आत्मस्वरूपमैं प्रवृत्तितैं ब्रह्मचर्यधर्म प्रगट होय है यो दशप्रकारधर्म आत्माको स्वभाव है यो धर्म किसीतैं खोस्या खुसै नाहीं लुट्या लुटै नाहीं चोर चोरि सकै नाहीं राजका लूट्या लुटै नाहीं स्वदेशमैं परदेशमैं सदा याका स्वरूप छूटै नाहीं किसीका विगाड़्या विगड़ै नाहीं धनकरि मोल आवै नाहीं आकाशमैं पातालमैं दिशामैं विदिशामैं पहाड़मैं जलमैं तीर्थमैं मंदिरमैं कहीं धरया नाहीं आत्माका निजस्वभाव है याका लाभ सम्यग्ज्ञानश्रद्धानतैं होय है अर ऐसा सुगम है जो बालक वृद्ध युवा धनवान निर्धन बलवान निर्बल सहायसहित असहाय रोगी निरोगी समस्तके धारण करनेमैं आवनेयोग्य स्वाधीन है धर्मके धारनेमैं कुछ खेद क्लेश अपमान भय विषाद कलह शोक दुःख कदाचित है नाहीं दुर्लभ है नाहीं बोझ ठावना नाहीं दूरदेश जावना नाहीं

क्षुधा तृषा शीत उष्णताकी वेदनाका आवना नाहीं किसीका विसंवाद झगड़ा है नाहीं अत्यंत सुगम समस्तक्लेश दुःखरहित स्वाधीन आत्माका ही सत्यपरिणमन है। यातैं समस्तसंसारपरिभ्रमणतैं छूटि अनंतज्ञान दर्शन सुख वीर्यका धारक सिद्धअवस्था याका फल है। ऐसैं दशलक्षणधर्मको संक्षेपकरि वर्णन कीयो ॥

अब शल्यनिका जातै अभाव होय सो व्रती होय है शल्यसहितकै व्रत कदाचित नाहीं होय यातैं तीनशल्यका स्वरूप श्रावककूं हू जाण्या चाहिए। निदानशल्य, मायाशल्य, मिथ्यादर्शनशल्य ये तीनों ही शल्य व्रतके घात करनेवाली हैं तिन तीनशल्यनैं निदान है सो तीनप्रकार है एक प्रशस्तनिदान, अप्रशस्तनिदान, भोगार्थनिदान ये तीनप्रकार ही निदान संसारका कारण है इहां निदाननाम आगामी वांछाका है तिसमैं जो संयम धारनेकेअर्थि उत्तमकुल उत्तमसंहनन बल वीर्य शुभसंगति तथा बंधुजननिकी धर्ममैं सहायता उज्वलबुद्धयादिककूं चाहना सो प्रशस्तनिदान है। बहुरि अभिमानकेअर्थि उत्तमकुल जाति भलीबुद्धि प्रबलशक्ति तथा आचार्यपना गणधरपना तीर्थंकरपना इत्यादिक अपनीआज्ञा तथा आदर उच्चता प्रवर्तनेकेअर्थि चाह करना सो अप्रशस्तनिदान है तथा क्रोधी होय अन्यके मारनेकेअर्थि वांछा करना परके स्त्री पुत्र राज्य ऐश्वर्यका नाशकेअर्थि वांछा करना सो हू अप्रशस्तनिदान है। बहुरि जो संयमधारणकरि घोरतपश्चरणकरि ताका फल इंद्रियनिका विषय राज्य ऐश्वर्य तथा देवपना तथा अनेकअप्सरानिका स्वामीपना तथा जातिकुलमें उच्चपना तथा चक्रीपना चाहना सो भोगकेअर्थि निदान जानना सो यो निदान दीर्घकाल संसारपरिभ्रमण करावनेवाला जानना। संयमका प्रभावकरि समस्तकर्मका नाशकरि अतींद्रियअविनाशी निर्वाणका अनंतसुख पाईये है तिस संयमकूं पालि भोगनिकी वांछा करै है सो एककौड़ीमें चिंतामणिरत्नकूं बेचैं है तथा अपनी रत्ननिकी भरी समुद्रमें दौड़ती नावकूं ईंधनकेअर्थि तोड़ै है तथा मणिमय हारकूं सूतकेअर्थि तोड़ै है तथा गोशीर जो चंदन ताकूं भस्मके अर्थि दग्ध करै है जो वांछा करै है ताके पुण्य हू नष्ट होजाय पापका बंध होजाय है पुण्यका बंध तो निर्वांछक भावतैं

होय है सम्यग्दृष्टी तो भोगनिकी वांछारहित है सम्यग्दृष्टीकूं तो इंद्रअहमिंद्रलोकका सुख हू सुखाभास विनाशीक पराधीनताकरि दुःखरूप दीखै है वाकूं तो आत्मीकस्वाधीन अतींद्रियसुखका अनुभव है यातैं इंद्रियजनित आतापनैं महाक्लेशका भर्या तृष्णारूप आतापकूं बधावना विषयनिके आधीनकूं कैसैं सुख मानैं जैसैं जो अमृत आस्वादन किया सो कटुक महादुर्गंध आतापउपजावनेवाली कड़वी खलिकूं कैसैं वांछा करै सम्यग्दृष्टीके तो ऐसी वांछा है।

दुक्खक्खयकम्मक्खयसमाहिमरणं च बोहिलाहो य। एयं पत्थे दव्वं ण पत्थणीयं तदो अण्णं ॥ ? ॥

अर्थ—हमारे शरीरधारणादिक जन्ममरण क्षुधातृषादिक दुःखनिको क्षय होहु आत्मगुणकूं नष्ट करनेवाला मोहनीय ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतराय कर्मको क्षय होहु तथा इस पर्यायमैं च्यार आराधनाका धारणसहित समाधि मरण होहु बोधि जो रत्नत्रय ताका लाभ होहू सम्यग्दृष्टीकै एती ही प्रार्थना करने योग्य है। इनतैं अन्य इसभवमैं परभवमैं प्रार्थना करने योग्य नाहीं है संसारमैं परिभ्रमण करता जीव उच्चकुल नीचकुल राज्य ऐश्वर्य धनाढ्यता निर्धनता दीनता रोगीपना नीरोगपना रूपवानपना विरूपपना बलवानपना निर्बलपना पंडितपना मूर्खपना स्वामीपना सेवकपना राजापना रंकपना गुणवानपना निर्गुणपना अनंतानंत वार पाया है अर छांड्या है तातैं इस क्लेशरूप संयोगवियोगरूप संसारमैं सम्यग्दृष्टी निदान कैसैं करै है इस संसारमैं अनंतपर्याय दुःखरूप पावै तदि एकपर्याय इंद्रियजनित सुखकी पावै फिर अनंतवार दुःखकी पावै सो ऐसैं परिवर्तन करते इंद्रियजनित सुख हू अनंतवार पाया अब सम्यग्दृष्टी इंद्रियनिके सुखकी कैसैं वांछा करै। इस संसारमैं स्वयंभूरणसमुद्रका समस्तजलप्रमाण तो दुःख है अर एक बालकी अणीके जल लागै ताका अनंतभाग करिये तिनमैं एकभाग प्रमाण इंद्रियजनित सुख है इसतैं कैसैं तृप्ति होयगी अर भोगनिका तथा इष्टसंपदाका संयोगका जेता सुख है तिसतैं असंख्यातगुणा वियोगकालमैं दुःख है अर संयोगहोय ताका वियोग नियमसूं होयगा जैसैं सहतकरि लिप्त खड्गकी धाराकूं जो जिह्वाकरि चाटै ताकै स्पर्शमात्र मिष्टताका

सुख अर जिह्वा कटिपड़ै ताका महादुःख तैसैं विषयनिके संयोगका सुख जानो तथा जैसैं किंपाकफल दीखनेमैं सुंदर खावनेमैं मिष्ट पीछैं प्राणनिका नाश करैं है तथा जहरतैं मिल्या मोदक खातां तो मीठा परंतु परिपाककालमैं प्राणनिका माहादुखनैं नाश करनेवाला है तैसैं भोगजनित सुख जानहु। बहुरि जैसैं कोउ पुरुषकनैं बहुतधन होय अल्पमोल लीया चाहै तो बहुतधनके साटै थोरा धंन मिलिजाय अर आपकनैं अल्पधन होय अर वाका मोल बहुत चाहै तो नाहीं मिलै तैसैं जो स्वर्गकी संपदा पावनेयोग्य पुण्यबंध कीया होय अर पाछै निदान करैं तो राज्यसंपदा मिलि जाय तथा व्यंतरादिकदेवनिमैं जाय उपजै निदान करनेतैं अपना अधिकपुण्य होय ताकूं घाति तुच्छसंपदा जाय पावै है पाछैं संसारपरिभ्रमण याका फल है। जैसैं सूतकी लांबी डोरी करि बंधा पक्षी दूरि उड़ि गया हू उसी स्थानकूं प्राप्त होय है जातैं दूरि उडिचल्या तो कहा पग तो सूतकी डोरितैं बंधा है जाय नाहीं सकैगा तैसैं निदान करनेवाला अतिदूरि स्वर्गादिकमैं महर्द्धिकदेव हुवा हू संसार-हीमैं परिभ्रमण करैगा देवलोक जाय करके हू निदानके प्रभावतैं एकेंद्रिय तिर्यंचनिमैं तथा पंचेंद्रियति-र्यंचनिमैं तथा मनुष्यमैं आय पापसंचयकरि दीर्घकाल परिभ्रमण करैं है अथवा जैसें ऋणसहितपुरुष करारकरि बंदीगृहतैं छूटिकरि अपनेघरमैं सुखसूं आयवस्या तो हू करार पूर्णभये फिर बंदीगृहमैं जाय-बसै तैसैं निदानकरिसहित पुरुषहू तपसंयमतैं पुण्य उपजाय स्वर्गलोक जाय करकैं हू आयु पूर्ण भये स्वर्गतैं चय संसारहीमैं परिभ्रमण करै है यहां ऐसा जानना जो मुनिपनामैं वा श्रावकपनामैं मंदकषायके प्रभावतैं वा तपश्चरणके प्रभावतैं अहमिंद्रनिमैं तथा स्वर्गमैं उपजनेका पुण्य संचय कीया होय अर पाछै भोगनिका बांछादिरूप निदान करै तो भवनत्रिकादिक अशुभदेवनिमैं जाय उपजै जाकै पुण्य अधिक होय अर अल्पपुण्यकाफलके योग्य निदान करै तो अल्पपुण्यवाला देव मनुष्य जायउपजै अधिक पुण्यवाला देव मनुष्यनिमैं नाहीं उपजै जो निर्वाणका तथा स्वर्गादिकनिके सुखका देनेवाला मुनिश्रावकका उत्तमधर्म धारणकरि निदानतैं विगाड़ै है सो ईंधनके अर्थ कल्पवृक्षकूं छेदै है ऐसैं निदानशल्यका दोष

वर्णन कीया। अर मायाशल्यका दोष कौन वर्णन करिसकै। पूर्वै मायाचारके दोष कहे ही मायाचारीका व्रतशीलसंयम समस्त भ्रष्ट है जो भगवान जिनेंद्रका प्ररूप्या धर्म धारण करो हो अर आत्माकूं दुर्गतिनिके दुखनै रक्षा करी चाहो हो तो कोटिउपदेशनिका सार एक उपदेश यह है जो मायाशल्यकूं हृदयमैंसुं निकासयो यश अर धर्म दोऊनिका नाश करनेवाला मायाचार त्यागि सरलता अंगीकार करो। बहुरि मिथ्यात्वका पूर्वै वर्णन कीया सो समस्त संसारपरिभ्रमणका बीज है मिथ्यात्वके प्रभावनै अनंतानंत परिवर्तन कीया मिथ्यात्वविपकूं उगल्यांविना सत्यधर्म प्रवेश ही नाहीं करै मिथ्यात्वशल्य शीघ्र ही त्यागो। मायामिथ्यानिदान इन तीनशल्यका अभाव हुवाविना मुनिका श्रावकका धर्म कदाचित नाहीं होय निशल्य ही व्रती होय है। बहुरि दुष्टमनुष्यनिका संगम मतिकरो जिनकी संग तिनैं पापमैं ग्लानि जाती रहै पापमैं प्रवृत्ति होजाय तिनका प्रसंग कदाचित मति करो जुवारी चोर छली परस्त्रीलंपट जिह्वा इंद्रियका लोलुपी कुलके आचारतैं भ्रष्ट विश्वासघाती मित्रद्रोही गुरुद्रोही धर्मद्रोही अपयशके भयरहित निर्लज्ज पापक्रियामैं निपुण व्यसनी असत्यवादी असंतोषी अतिलोभी अतिनिर्दयी कर्कशपरिणामी कलहप्रिय विसंवादी वा कुचाल प्रचंडपरिणामी अतिक्रोधी परलोकका अभाव कहनेवाला नास्तिक पापके भयरहित तीव्रमूर्छाका धारक अभक्ष्यका भक्षक वेश्यासक्त मद्यपानी नीचकर्मी इत्यादिकनिकी संगति मति करो जो श्रावकधर्मकी रक्षा कीया चाहो हो जो अपना हित चाहो हो तो अग्निसमान विषसमान कुसंग जानि दूरतैं ही छांडो जातैं जैसाका संसर्ग करोगे तिसमैं ही प्रीति होयगी अर प्रीति जामैं होय ताका विश्वास होय विश्वासतैं तन्मयता होय है तातैं जैसी संगति करोगे तैसा हो जावोगे जातैं अचेतनमृत्तिका हू संसर्गतैं सुगंध दुर्गंध होय है तो चेतन मनुष्य संगतिकरि परके गुणरूप कैसैं नाहीं परिणमैगा जो जैसेकी मित्रता करै है सो तैसा ही होय है दुर्जनकी संगतिकरि सज्जन हू अपनी सज्जनता छांडि दुर्जन होजाय है जैसैं शीतल हू जल अग्निकी संगतितैं अपना शीतलस्वभाव छांडि तप्तताने प्राप्त होय है उत्तमपुरुष हू अधमकी संगतिपाय

अधमताकूं प्राप्त होय हैं जैसें देवताके मस्तक चढ़नेवाली सुगंधपुष्पनिकी माला हू मृतकका हृदयका संसर्गकरि स्पर्शनेयोग्य नाहीं रहै है दुष्टकी संगतितैं त्यागीसंयमीपुरुष हू दोषसहित शंका करिये है जैसैं कलालका हस्तमैं दुग्धका घड़ा हू मदिराकी शंका उपजावै है तथा कलालका घरमैं दुग्धपान करता हू ब्राह्मण लोकनिकै मदिरापीवनेकी शंका उपजावै है लोक तो परके छिद्र देखनेवाले हैं परके-दोष कहनेमैं आसक्त हैं जो तुम दुष्टनिकी दुराचारीनिकी संगति करोगे तो तुम लोकनिंदानै प्राप्त होय धर्मका अपवाद करावोगे तातैं कुसंग मति करो खोटेमनुष्यकी संगतितैं निर्दोष हू दोषसहित मिथ्या-मार्गी शीघ्र होय है जातैं मिथ्यात्वका अर कषायनिका परिचय तो अनादिकालका है अर वीतराग-भाव कदाचित कोई महाकष्टतैं उपज्या सो कुसंग पाय क्षणमात्रमैं जाता रहैगा अनादिकालका मोहकर्म बड़ा प्रबल है । याका उदयतैं विषयकषायनिमैं विनासिखाया स्वयमेव प्रवर्तै है फिर कुसंगतितैं तो पवनकी संगतितैं अग्निकी ज्यों अतिप्रज्वलितहोय है यातैं कुसंगछांड़ि शुभसंगति करो सज्जनिकी संगतितैं दुष्ट हू अपना दोषकूं छांड़े हैं। बहुरि सतसंगतितैं निर्गुणपुरुष हु जगतकै मान्य होय है जैसें निर्गंध हू पुष्प देवतानिकी संगतितैं लोक मस्तकविषैं चढ़ावै है यद्यपि कोऊकै धर्ममैं प्रीति नाहीं है अर परीषह सहनेमैं अर इंद्रियनिके विषम त्यागनेमैं अतिपरान्मुखपना है तो हू संयमी त्यागी व्रती पुरुषनिकी संगतिरहनेके प्रभावतैं लज्जाकरि भयकरि अभिमानकरि अन्यायके विषयकषायतैं विरक्त होय ही है अर जो प्रकृतिकरि ही मंदकषायी धर्मानुरागी पापतैं भयभीत होय अर ताकूं उत्तमसंगति मिलै ताकै परमधर्मका ग्रहण होय संसारके पारकूं पावै ही है बहुरि जिनतैं सम्यक्धर्मकी प्रवृत्ति होय जिनकी संगतितैं अनेकजन विषयकषायतैं विरक्त होय त्यागसंयमतपमैं लीन होजाय ऐसा न्यायमार्गी धर्मचर्याका धारक धर्मात्मा एक पुरुषकरि ही जगत भूषित है कृतार्थ है धर्मरहित विषयी कषायी बहुतकरि कहा साध्य है। कल्पवृक्ष तो एक ही समस्त वेदनारहित करि वांछित सुख दे है अर विषके बहुत वृक्ष केवल मूर्छा संताप मरणके कारणकरि कहा साध्य है

इसलोकमैं जो अनर्थ पैदा होय सो कुसंगतैं होय है कुसंगविना ज्वारी चोर परस्त्रीलंपट वेश्यासक्त अभक्ष्यभक्षक मद्यपानी होय नाहीं बड़े बड़े अनर्थ दोष कुसंगतैं ही होय हैं यातैं दोऊलोकमैं अपनाहित चाहो हो तौ कुसंग मति करो। प्रत्यक्ष देखिये है जे उत्तमकुल उत्तमउज्ज्वलधर्म पाया है फिर हू कुदेव कुगुरु कुधर्म पाखंडीनिकी उपासना करैं हैं भांग पीवैं हैं जरदा खाय हैं अमल खाय हैं बहुरि हुक्का पीवैं हैं रात्रिभक्षण करैं हैं वेश्याकी उच्छिष्ट खाय हैं जुवा खेलै हैं चोरी करैं हैं चुगली करैं हैं परधन परस्त्रीकी ओर तृष्णा करैं हैं जिह्वाइंद्रियके लोलपी हैं निर्दयपरिणामी कुवचन बोलनेमैं रक्त परविघ्नसंतोषी उत्तसंगतिबिना कुसंगतैं ही होय है महा पुण्याधिकारी मनुष्य होय सो इस विषम कलिकालमैं कुसंगछांड़ि शुभसंगति पावैं हैं अर जो जिनेन्द्रधर्म धारण किया है सो अपनी प्रशंसा अर परकी निंदा मति करो जो अपने मुखतैं अपना प्रशंसा करै है सो अपने यशका नाश करै है अतिमानी मदवान विना अपनी प्रशंसा अन्य नाहीं करै है अपनी प्रशंसा करता पुरुष तृणसमान लघु होय है अवज्ञायोग्य होय है विद्यमान हू गुण अपने मुखतैं कहि गुणरहित होय दोषनिको पात्र होय है जामैं और कछू हू दोष नाहीं होय ताकै बड़ाभारी दोष आपकी प्रशंसा करना है अपने मुखतैं अपनी प्रशंसा नाहीं करना सो बड़ागुण है अपना गुणकी प्रशंसा नाहीं करता पुरुषका विद्यमानगुण नाशकूं नाहीं प्राप्त होय है जैसैं अपना तेजकी नाहीं प्रशंसा करता सूर्यका तेज जगतमैं विख्यात होय है आपमैं गुण नाहीं अर आपकी प्रशंसा करता पुरुषकै गुणवानपना प्रगट नाहीं होय है जैसैं स्त्रीकी ज्यों हावभाव विलासविभ्रम शृंगार अंजन वस्त्रादिक धारण कर स्त्रीकी ज्यों आचरण करता नपुंसक स्त्री नाहीं होयगा नपुंसक ही रहैगा आपमैं गुण विद्यमान हू होय अर कोऊ कीर्तन करै प्रशंसा करै तादि उत्तम पुरुष तो अपनी कीर्ति श्रवणकरि लोकनिमैं लज्जाकूं प्राप्त होय हैं सत्पुरुषनकूं अपनी कीर्ति नाहीं रुचै है अपनी कीर्ति श्रवणकरि अतिलज्जित हुवा आत्मनिंदा करै है जो मैं संसारी अनेकदोषनिकरि भरचा मेरी प्रशंसाकरि लोक मेरेऊपरि बड़ा भार आरोपण करैं हैं प्रशंसायोग्य

तो जे आत्माकी परमविशुद्धि ताके इच्छक होय मोह काम क्रोधादिकका विजयकूं प्राप्त भये हैं हम संसारी रागद्वेषकरि व्याप्त इंद्रियनिकै विषयनिकरितार्जित परिग्रहासक्त अतिनिंदनेयोग्य हैं जिनकै एक घड़ी हूं प्रमादीपनातैं धर्मरहित व्यतीत होय है ते जगतमैं महामूढ़ हैं निंद्य हैं यो मनुष्यजन्म अतिदुर्लभ अर जामैं जिनधर्मका पावना अतिदुर्लभतर ऐसे अवसरमैं भी जे धर्मछांड़ि विषयनिमैं रचैं हैं ते अपने गृहमैं उपज्या कल्पवृक्षकूं काटि विषका वृक्ष लगावैं हैं तथा चिंतामणिरत्नकूं काक उड़ावनेकूं क्षेपैं हैं तथा चिंतामणिरत्नकूं कांचका खंडमैं बेचैं है इस मनुष्यजन्मकी एकएकघड़ी कोटिधनमैं दुर्लभ सो वृथा जाय है लोकनिकी कथामैं तथा लोकनकी रागद्वेषपरणति देखि मैं हू कषायसहित हुवा दुर्ध्यानतैं मनुष्यजन्म व्यतीत करूं हू सो मुझसमान निंदनेयोग्य अन्य नाहीं इत्यादिक अपनी निंदा गर्हा करना उत्तमपुरुषकूं अपनी प्रशंसा कैसैं रुचै नाहीं रुचै आपकूं नीचा देखै है जो वचनकरि अपनी प्रशंसा करैं सो नीचगोत्रनामकर्मका बंध करैं हैं अर इहां लोकनिमैं महानिंद्य होय है सत्पुरुष अपनेगुण आप प्रगट नाहीं करैं तो हू उज्ज्वल आचारणकरि जगतमैं गुण विख्यात होय है जैसैं चंद्रमाका उद्योत अर शीतलपना अर आल्हादकपना विना कह्या जगतमैं विख्यात होय है। बहुरि परकी निंदा कदाचित मति करो परकी निंदा करनेसमान जगतमैं दोष नाहीं है परकी निंदा महाबैरका कारण है दुर्ध्यानका कारण है कलहका कारण है भयका कारण है दुःखका तथा पश्चात्तापका तथा शोकका तथा विसंवादका तथा अप्रतीतिका कारण है जगमैं निंदा होय है परकी निंदा करनेवाला अपना धर्म अर यश अर बड़ापनाका अत्यंत नाश करै है जे परके दोष प्रगटकरि आप निर्दोष बण्या चाहैं हैं सो परकूं औषधि भक्षणकरनेतैं अपना नीरोगपना चाहैं हैं कोटिदोषनिका शिरोमणि एक अन्यकी निंदा करना है यातैं जो जिनेन्द्रधर्म धारण करो हो तो परके दोष मति कहो सत्पुरुष तो परमैं दोषदेखि आप लज्जित होय हैं अर परका दोषकूं अपना सामर्थ्य प्रमाण ढांकैं हैं जैसैं अपना अपवादका भय करैं तैसैं परके अपवादहोनेका बड़ाभय करै है जो संसारीजीवनिकै ज्ञानावरण

दर्शनावरण कर्मका उदय प्रवल है जाकरि जीव अज्ञानकूं प्राप्त होय रहैं हैं अर मोहनीकर्मके उदयतैं रागी द्वेषी कामी क्रोधी लोभी मानी कपटी होयरहैं हैं भगवान शोकवान ग्लानिवान रतिके वश अरतिके वशीभूत होय नाना विकाररूप कुचेष्टा करैं हैं जैसैं मदिरा पीय परवस होय आपा भूलैं है तथा धतूरा खाय उन्मत्तचेष्टा करता परवश हुवा आपाभूलि निंद्यचेष्टा करैं है तथा जैसैं वातपित्तकरि उन्मत्त भया परवस बकवाद करैं हैं तैसैं संसारीजीव विषयकषायके वस होय निंद्यचेष्टा करैं हैं इनकी तो करुणाधारि दोषनितैं छुड़ाऊं निंदा अपवाद कैसैं करूं परका अपवादकरि अनेक निंद्यपर्याय दुर्गतिनिमैं तिरस्कार पाया है सम्यग्दृष्टी तो नित्य ही ऐसी प्रार्थना करैं हैं जो मेरे परके दोष कहनेमैं मौन हो हू मेरा समस्तजीवनप्रति वचन ही प्रवर्तो जिनधर्मी तो गुणग्राही ही होय है मिथ्यादृष्टीनिके तीव्र कषायीनिके मिथ्या आचारण देखि वैरबुद्धि करि निंदा नाहीं करै है जो याका अपवाद होय तो अच्छा है ऐसा अभिप्राय नाहीं धारै है दोषनिकूं मिथ्यात्वकूं अनंतकाल दुखनिका देनेवाला जानि करुणाबुद्धितैं मंदकषायी जीवनिकूं गुण दोष हानिवृद्धिका स्वरूप दिखावै है। बहुरि निद्रा आलस्य प्रमादका विजय करो निद्रा समस्तधर्मका अभाव करै है जाकै निद्राका विजय नाहीं हुवा ताकै छहआवश्यक स्वाध्याय ध्यान जाप्य समस्त उत्तमकार्य नष्ट होजाय हैं मुनीश्वरनिके तो तप ही निद्राका विजयके अर्थि है निद्रा है सो दर्शनावरणका उदयजनित सर्वघाती है आत्माकूं अचेतन करै है जो निद्राकूं नाहीं जीती ताकै समस्त हितरूप कार्य नष्ट होजायगा। शास्त्र पठन करैगा अथवा जिनसूत्रका श्रवण करैगा अर निद्रा ऊंग आजायगी तदि श्रवणकरना नाहीं होयगा जिनसूत्रके श्रवणपठनमैं अरुचि होजायगी ध्यानसामायिक करते निद्रा आजायगी तदि ध्यान जाप्य सामायिक आत्मध्यान भावना समस्त नष्ट होजायगा निद्रामैं एकेन्द्रीसमान होय है समस्तज्ञानकूं निद्रा नष्टकरि दे है अबुद्धिपूर्वक अनेकविकल्प आत्मामैं उपजै है बुद्धिपूर्वक आत्माका हित होनेकी भावनाका अभाव होय है दिवसमैं निद्रातैं दर्शनावरणकर्मका आस्रव

होय है मुनीश्वर तो प्रहररात्रि गये पाछैं खेदप्रमादादि दूरिकरनेकूं मध्यमरात्रिके दोयप्रहरमैं शयन करैं सो अल्पनिद्रा लेय फिर जाग्रित हुआ द्वादशभावनादिक चिंतवन करैं हैं फिर क्षणमात्र निंद्रा आवै फिर जाग्रित होय धर्मध्यानमैं लीन होय हैं ऐसैं बीचली दोयप्रहरमैं हू अनेकवार जाग्रित होय धर्मध्यान करता रहैं हैं अर जो कदाचित मुहूर्तप्रमाण भी निद्रामैं अचेत होजाय तो निद्राके जीतनेकैअर्थि उपवास दोयउपवास तीन चार पांच इत्यादिक उपवास तथा रसपरित्यागादिक महान अनशनादिकतपकरि निद्राका अभाव करैं हैं निद्राके जीतनेकूं अर कामके जीतनेकी सावधानीकेअर्थि अनशनादितप निरंतर आचरैं हैं निद्रामैं तो समस्तपरिणामनिकी सावधानीको अर वचनकायकी सावधानीको अभाव होय है जाकूं उत्तममनुष्यजन्म अर उत्तमधर्मका नाशकरि एकेन्द्रीसमान होय मनुष्यआयुकूं पूर्ण करना होय तो बहुतनिद्रा ले है दिवसमैं निद्रा ले ताका तो व्रतसंयम ही गलि जाय है खेदआलस्यादिक दूरि करनेकूं रात्रिविषैं अल्पनिद्रा ग्रहण करैं हैं निद्राआलस्यादिक तो जीवका अंतर्गत महावैरी हैं निद्रामैं हेयउपादेय कार्यअकार्य हितअहित योग्य अयोग्यका विचार रहित होय है निद्रा जीते विना इसलोकहीके समस्तकार्य नष्ट होजाय तदि परमार्थरूप कार्य कैसैं बने यातैं जो विद्या विनय तप संयम स्वाध्याय ध्यान जाप्यकी सिद्धि चाहो हो तो निद्राकूं जीति खेद ग्लानिके दूरि करनेकूं अल्पनिद्रा ग्रहण करो ।

अब अष्ट शुद्धि का वर्णन करैं हैं । यद्यपि ये अष्ट शुद्धता मुनीश्वर परमवीतरागी साधुनिकै होय है तथापि साधुपना धारण करनेका इच्छक अर साधुका धर्ममैं भावना भावनेका इच्छक जो गृहस्थ ताकूं अष्टशुद्धता जाननेयोग्य हैं । भावशुद्धि, कायशुद्धि, विनयशुद्धि, ईर्यापथशुद्धि, भिक्षाशुद्धि, प्रतिष्ठापनाशुद्धि, शयनासनशुद्धि, वाक्यशुद्धि ये अष्टप्रकार शुद्धि हैं तिनमैं मोहनीयकर्मका क्षयोपशमतैं उपजी जो मोक्षमार्गमैं रुचि ताकरि परिणामनिमैं ऐसी उज्ज्वलता होय जो रत्नत्रय ही मार्ग है अन्य है सो संसारमैं उलझावनेवाले कुमार्ग हैं आत्माका हित मोक्ष है सो मोक्ष कर्मके बंधनरहित है अर कर्मबंधनका

छूटना रत्नत्रयतैं ही है ऐसा दृढ़श्रद्धानज्ञानतैं उपजी संसारदेहभोगनितैं विरागतारूप समस्तरागद्वेषादि मलरहित उज्ज्वलता सो भावशुद्धि है। जातैं भावनिमैंतैं विषयनिकी इच्छा रागद्वेषादिउपद्रव मिथ्यात्वरूप महामल दूरि हुयाविना मुनिका आचार तथा श्रावकका आचार प्रकाशकूं प्राप्त नाहीं होय है जैसैं अतिशुद्ध भींतिऊपरि चित्राम उघड़ै है कर्दमादिकरि लिप्त भूमिऊपरि अतिचतुर हू चित्रकार सुंदर रंगावली नाहीं कर सकै है तैसैं मिथ्यात्वकषायादिकरि लिप्तपुरुषकै हू सम्यग्ज्ञानचारित्र नाहीं होय है ऐसैं भावशुद्धता कही। साधुनिकै कायशुद्धि कैसैं होय है। जाकै आचरण तो सूतके रेशमके सणके घासके रोमके चामके वृक्षनिके वक्कलके वस्त्रादिकआच्छादन तथा भस्मादिक लगावनेकरि रहित हैं बहुरि समस्तआभरणादिकरहित अर स्नानगंधलेपनादिसंस्काररहित जैसैं रेत धूल पशेव तृणादि शरीरउपरि आय चिपै तिनका संस्काररहित अर नाशिका नेत्र ललाट ओष्ठ भृकुटी मस्तक स्कंध हस्त अंगुली इत्यादिकनिका हलावने चलावनेके विकाररहित अर सर्वत्र क्रियामैं यत्नाचारसहित प्रशमसुखकूं मूर्तीक दिखावै ही है कहा मानूं ऐसा कायकूं होतेसंते आपके परतैं भय नाहीं होय है अर परके आपतैं भय नाहीं होय है ऐसी कायकी विशुद्धता साधुनिकै ही होय है अर श्रावक हु एकदेश शुद्धताका धारक जे वस्त्राभरण पहरैं हैं ते ऐसे पहरे जिनकरि आपके तथा परके काम नाहीं उपजै अभिमान नाहीं उपजै भय नाहीं उपजै लोकनिके मान्य अपना पदस्थके योग्य तथा अवस्थाके योग्य पहरणा तथा अंगकी चेष्टा नेत्रनिकरि अवलोकन वचनका कहना बैठना सोवना चालना रागादि अभिमानादि दोषरहित प्रवर्तन करना सो कायशुद्धि होय है। अब विनयशुद्धता ऐसी जानो अरहंतादिक परमगुरुनिकी यथायोग्य पूजामैं लीनता अर सम्यग्ज्ञानादिकमैं यथाविधि भक्तिकरि युक्तरहना अर सर्वकाल गुरुनिके अनुकूल प्रवर्तना अर प्रश्नकरनेमैं स्वाध्यायमैं वाचनामैं कथनीमैं वीनतीकरनेमैं निपुणपना तथा देशकालभावनिकूं जानि निपुणताकरी आचार्यादिकनिकै अनुकूल प्रवर्तना, आचरण करना सो विनयशुद्धता है। विनय है सो ही समस्त चारित्र संपदाको

मूल है विनय ही पुरुषका आभूषण है विनय ही संसारसमुद्र तिरनेकूं नाव है याहीतैं गृहस्थ है सो मनकरि वचनकरि कायकरि प्रत्यक्ष परोक्ष विनयहीकूं धारण करो सो आगैं तपके कथनमैं हू वर्णन करसी। अब साधुनिकै ईर्यापथशुद्धता ऐसी जान हू नानप्रकारके जीवनिके स्थान अर जीवनके उत्पत्तिरूप योनि अर जे जे जीवनिके रहनेके आश्रय तिनके जाननेकरि उपज्या यत्नाचार तातैं जीवांके पीड़ाकूं दूरहीतै त्यागकैं गमन करैं हैं बहुरि अपना ज्ञान अर सूर्यका प्रकाशकरि नेत्रादिक इंद्रियनिका प्रकाशकरि देखाहुवा मार्गमैं गमन करैं हैं अर मार्गमैं उतावला शीघ्रगमन अर विलंबकरता गमन अर संभ्रमकरि गमन विस्मयरूप आश्चर्यसहित गमन अर क्रीड़ाकरता गमन अर शरीरकूं विकारसहितकरता गमन अर दिशानिकुं अवलोकनकरता गमन यह गमनके दोष हैं इन दोषनिकरिरहित चारहस्तप्रमाण भूमिको अग्रभागविषैं देखी अनेकमनुष्य गाड़ा गाड़ी बलद गर्दभादिक अनेक जिसमार्गकरि गमन कीया होय अर प्रातःकालका पवन मार्गकूं स्पर्शन कीया होय तथा सूर्यकी किरणनिका संचार जिस मार्गमैं भया होय तिस मार्गमैं दिवसविषैं गमन करैं तिस साधुकै ईर्यासमिति होय है। ईर्यासमितिकूं होते संतेही संयमप्रतिष्ठित होय है जैसैं सुनीति होतेही विभव होय है अर याहीका एकदेशधर्म अंगीकार करता गृहस्थकूं हू ईर्यापथकीशुद्धतारूप गमन करनेकी भावना राखणा अर अपनी शक्तिप्रमाण मार्गमैं कीड़ाकीड़ी हरित अंकुर घास दूब कर्दम नील इत्यदिककूं टालि दयापरिणामतैं गमन करना उचित है अर देखि शोधिकरि गमन करता गृहस्थकै हू इसलोकमैं हू खाड़ामैं पड़नेकी ठोकर लागनेकी सर्पादिक दुष्टजीवनिकी बाधा नाहीं होय है जिनेंद्रकी आज्ञाका पालन होय है। अब मुनीश्वरानिकै भिक्षा शुद्धता वर्णन करैं हैं—साधु जब वनतैं भिक्षा वास्तै नगरग्रामादिकमैं जाय तदि देशकी रीतितैं कालकूं जानि अर नगरग्रामादिककूं उपद्रवरहित जानकरि जाय हैं जो अग्निका उपद्रव तथा परचक्रका उपद्रव तथा राजादि महंतपुरुषनिके मरणका उपद्रव होय तथा धर्ममैं उपद्रव जानै तो भिक्षाकूं नाहीं जाय है तथा महानहिंसा होती जानै तो नाहीं जाय जिस-

कालमें चार्वाकनिका मूसलनिका बहुतशब्द होतें मंद रहि जाय तथा अनेकभेषधारी भिक्षा लेय आवतें होय तिस कालमें मलमूत्रकी बाधा होय तो बाधा मेटि पाछैं पीछेतें अपना अंगका आगलापाछला भागकूं शोध करि कमंडलु पीछी लेय करकै गमन करैं। मार्गमें अतिशीघ्र गमन नाहीं करैं विलंब करते गमन नाहीं करैं किसीसूं मार्गमें वचनालाप नाहीं करैं मार्गमें वनकी भूमिकी नगरग्रामादिककी शोभा नाहीं देखैं जहां कलह विसंवाद कौतुक नृत्य गीतादिक होय तिनकूं दूरि छांडि गमन करैं मार्गमें दुष्टतिर्यंच दुष्टमनुष्य उन्मत्तमनुष्य तथा स्त्री तथा पत्र फल पुष्प बीज जल कर्दमादिक जिस भूमिमें होय ताकूं दूरिहीतें छांडि गमन करैं हैं आचारांगसूत्रमें कह्या देशकाल ताके जाननेमें निपुण अर मार्गमें गमन करता दातारका चिंतवन नाहीं करैं जो मोकूं कौन दातार भोजन देगा तथा मोकूं शीघ्र भोजन मिलै तो अच्छा है तथा मिष्टभोजनका लाभ वा लवणादिकका लाभ तथा उष्णभोजन शीतभोजन स्वादिष्ट वेस्वाद इत्यादिक भोजनका विकल्प नाहीं करैं हैं अंतरायकर्मके क्षयोपशमके आधीन लाभअलाभकूं जानि भोजनका लाभमैं अलाभमैं मानमैं अपमानमैं मनकी वृत्तिकूं समान करता धर्मध्यानरूप चिंतवन करता चार आराधनाका शरण सहित क्षुधातृषादिक वेदनाका चिंतवन नाहीं करता भिक्षाकेअर्थि गमन करैं हैं लोकनिंद्य कुलमें गमन नाहीं करैं हैं तथा ऐसे उत्तमकुलके गृहनिमें हू प्रवेश नाहीं करैं हैं जहां दानशाला होय जहां विवाहादिक होय मृतकका सूतक होय गानगीत हो रहे होय नृत्यके वादित्र वजनेका समाज होरह्या होय रुदन होरह्या होय अनेक भिक्षाकेअर्थ भेले होरहे होय कलह विसंवाद द्यूतक्रीडादि होरहे होय किवाड़ जुड़े होय जावतेकूं कोऊ मनै करता होय घोड़ा हाथी ऊंट बलध इत्यादि मार्गमें खड़े होय वा बंधि रहे होय तथा अनेकमनुष्यनिका संघट होरह्या होय तथा सांकड़ेमार्गमें बहुत लोकनिका सकड़ाईतें आवना जावना होय तथा नाभितें अधिक नीचे द्वार होय करि जाना होय अर गोड़ेनतें ऊंची भूमिका उल्लंघन होय ऐसैं गृहनिमें तो साधु भोजनके अर्थ प्रवेशहू नाहीं करैं हैं चन्द्रमाकी

चांदनी ज्यों धनाढ्यनिर्धनादिक समस्तगृहनिमैं जाय है दीन अनाथ निंद्यकर्मकरि जीविका करनेवाले इत्यादि अयोग्य गृहनिकूं छांड़ि भिक्षाकेअर्थ गृहनिमैं जहां ताईं अन्यभिक्षुकनिका तथा हरेक जनके आवनेकी आड़ नाहीं तहांताईं जाय आशीर्वादादिक धर्मलाभादिक मुखतैं कहैं नाहीं हुंकारा भृकुटीका समस्या करैं नाहीं उदरका कृशपना दिखावैं नाहीं हस्ततैं याचनाकी समस्या करैं नाहीं दातारके देखनेकूं भोजनके देखनेकूं ऊंचा तथा दिशाविदिशामांहि अवलोकन करैं नाहीं खड़ा रहै नाहीं वीजलीके चमत्कारवत् अर्द्ध अंगणेमैं जाय बाहुड़ै है तिष्ठ तिष्ठ तिष्ठ ऐसैं आदरपूर्वक तीनवार उच्चारणकरि खड़ा राखैं तो खड़ा रहैं एकवार निकसे पाछैं फिर उसगृहमैं प्रवेश करैं नाहीं फिर अन्यगृहमैं प्रवेश करैं अंतराय हो जाय तो अन्यगृहमैं हू नाहीं जाय पाछा वनहीकूं जांय है दानव्रतरहित याचनारहित प्रासुक आहार आचारंगमैं कह्या तिसप्रमाण छियालीसदोष चौदहमल बत्तीसअंतरायरहित भोजन अंगीकारकरि प्राणनिकी रक्षामात्र फल अंगीकार करता सुंदररसमैं नीरसमैं लाभमैं अलाभमैं समान संतोषी होय सो भिक्षा है। इस भिक्षाकी शुद्धताकरि चारित्रकी उज्ज्वलसंपदा प्राप्त होय है जैसैं साधु-पुरुषनिकी सेवा करि गुणनिकी संपदा होय है। अब या भिक्षा मुनीश्वरनिकै पंचप्रकार होय है। गोचरोवृत्ति, अक्षम्रक्षणवृत्ति, उदराग्निप्रशमनवृत्ति, भ्रामरी वृत्ति, गर्तपूर्णवृत्ति ऐसैं पंचप्रकारकरि आहारमैं साधुनिकी प्रवृत्ति जाननी। जैसैं लीला विकार वस्त्र आभरणादि सहित रूपयौवनकरियुक्त स्त्रीका लाया घासकूं गऊ चरै है तिस स्त्रीका अंगनिका सौंदर्य तथा आभरणवस्त्रकूं नाहीं अवलोकन करै है केवल घास चरनेका प्रयोजन है तैसैं साधु हू दातारका रूप आभरणादि सौंदर्यकूं नाहीं अवलोकन करता नवधाभक्तिकरि प्रतिगृहपूर्वक हस्तमैं धारण कीया ग्रासकूं भक्षण करै है सो गोचरीवृत्ति है। अथवा जैसैं गऊ बनके नाना स्थाननिमैं तिष्ठता तृणकूं जैसैं लाभ हो जाय तैसैं भक्षण करै है बनकी शोभा वृक्षनिकी शोभा देखनेमैं परिणाम नाहीं धारै है तैसैं साधु हू गृहस्थनिके घरमैं जाय तादि गृहस्थका महल मकान शय्या आसनादिकनिके देखनेमैं तथा सुवर्णके रूपाके कांसीके

पीतलके मृत्तिकाके पात्रादिकनिके देखनेमैं परिणाम नाहीं करैं हैं तथा अनेक भोजन भाजन परिवारके देखनेमैं परिणाम नाहीं लगावते केवल अपने हस्तमैं धरया ग्रासकूं भक्षण करनेमैं दृष्टि राखैं हैं परिकरजननिके कोमल ललित रूप वेष विलासनिके देखनेमैं वांछारहित भये शुष्क तथा गीला आहार ताकूं नाहीं देखता गौकी ज्यों भोजन करैं तातैं गोचरीवृत्ति वा गवेषणा कहिये है। जैसैं बणिक् रत्ननिका भरया गाड़ाकूं घृतादिकतैं वांगि धुरके घृत लगाय अपने वांछित देशांतरकूं लेजाय तैसैं साधु हू गुणरत्ननिकरि भरया देहरूप गाड़ाकूं निर्दोष भिक्षाभोजन देय अपने वांछित समाधिरूप पत्तनकूं प्राप्त करैं हैं यातैं अक्षम्रक्षणवृत्ति कहिये है। बहुरि जैसैं अनेकवस्त्रआभरणादिकनिकरि भरया भंडारविषै उठी अग्निकूं शुचि अशुचि जलतैं बुझाय अपनीवस्तुनिकी गृहस्थी रक्षा करै है तैसैं साधु हू उदररूप भंडारमैं उपजी क्षुधातृषादिरूपआग्निकूं सुंदरअसुंदरभोजनतैं बुझावना सो उदराग्निप्रशमनवृत्ति है। बहुरि जैसैं भ्रमर पुष्पकूं किंचित्मात्र बाधा नाहीं करता पुष्पका गंध हरै है तैसैं साधु हू दातारकै किंचित बाधा नाहीं होय तैसैं भोजन करै सो भ्रमराहारवृत्ति है। बहुरि जैसैं गृहस्थका गृहमैं गर्त जो खाड़ा होगया तो ताकूं धूलिपाषाणादिकतैं पूर्ण करैं हैं तैसैं साधु हू उदररूप खाड़ाकूं रसनीरसभोजनकरि भरैं तातैं गर्तपूर्णवृत्ति कहिये है। ऐसैं पंचवृत्तिकरि भोजन करता साधुकै भिक्षाशुद्धि होय है। श्रावक हू अन्यायछांडि बहुत हिंसाके कारण व्यवहारछांडि कर्मके दीयेमैं संतोषधारणकरि अन्यके पीडादुःख नाहींकरि, न्यायके वित्तकूं मद विषाद दीनता रहित दानकूं विभागकरि भोगै है तथा अभक्ष्यादिक सदोषभोजनका परिहारकरि दिवसमैं भोगांतराय लाभांतरायका क्षयोपशम प्रमाण रसनीरस मिल्या तामैं कुटंबका विभाग तथा दानका विभागकरि भोजनादिक करै गृहस्थकै लालसा गृद्धतारहित ही भोजनकी शुद्धता है। बहुरि संयमी है सो अपना शरीरका नखकेशकफनाशिकामलमूत्रपुरीषादिकनिकूं देशकाल जानि विरोधरहित जीवनिकै बाधा नाहीं होय परके परिणाम मलीन नाहीं होय ऐसे क्षेत्रमैं खेपै ताकै प्रतिष्ठापनशुद्धि

होय है अर गृहस्थ है सो हू अपना देहका मल तथा जल कजोड़ा भस्म मृत्तिका पाषाण काष्ठादिक जतनतैं क्षेपै जैसैं छोटेबड़ेजीवनिका विराधना नाहीं होय किसीके साथ कलह विसंवाद नाहीं होय आपका अंगमैं बाधा नाहीं आवै अन्यजननिके ग्लानि नाहीं उपजै तैसैं क्षेपण करना। बहुरि शयनासनशुद्धता साधुका प्रधान आचरण है जहां स्त्री नपुंसक चोर मद्यपानी शिकारी इत्यादिक पापीजनांका आरजारस्थान (आनेजानेकास्थान) नाहीं होय जहां शृंगार शरीरविकार उज्ज्वलवस्त्र आभरण धारती स्त्री विचरै तथा वेश्यानिकी क्रीड़ा वन बाग गीतनृत्यवादित्रकरिव्याप्त ऐसे स्थानका दूरहीतैं परिहारकरि तिष्ठै हैं अकर्तृमपर्वतनिकी गुफा वृक्षांकाकोटर तिनमैं तथा कृत्रिमशून्यगृहादिक आपकेअर्थ नाहीं किया आरंभरहित ऐसे स्थानिमैं तथा शुद्धभूमिमैं शयन आसन करैं हैं। अर गृहस्थ भी विषयनिके विकाररहित स्त्री नपुंसक दुष्ट कलह विसंवाद विकथादि रहित परिणामनिकी उज्ज्वलता जहां नाहीं बिगडै ऐसे स्थानमैं शयन आसन करै स्थानके दोषतैं परिणाममें दुर्ध्यान रहै दुष्ट चिंतवन होय तातैं अपनी जीविकादिकका न्यायमार्गतैं साधन करकै अर स्थान शयन निराकुलस्थानहीमैं करै है। बहुरि साधु है सो पृथ्वीकायिकादिक जीवनिकी विराधनाकी प्रेरणारहित कठोर कटुकादि परपीड़ाका कारण वचनरहित व्रतशील संयमका उपदेशरूप वचन कहता हितमित मधुरमनोहर बचन कहै सो वाक्यशुद्धता है गृहस्थ भी जेता वाक्य कहै सो विवेकसहित कहै लोकविरूद्ध धर्मविरुद्ध हिंसाका प्रेरक असत्य कटुक कर्कशादिक कदाचित नाहीं कहैं हैं। ऐसैं अष्टप्रकार शुद्धता संयमीनिकी है गृहस्थ अष्टशुद्धताकूं चिंतवन करता रहै भावना राखै तो बहुतपापनितैं लिप्त नहीं होय धर्मभावनाकी वृद्धि होय।

अब तपभावना हू गृहस्थकूं भावने योग्य है। यद्यपि तपकी प्रधानता मुनीश्वरनिकै है तथापि गृहस्थ हू तपभावना भावता रहै तो रोगादिक कष्ट आये चलायमान नाहीं होय। इंद्रियनिकी विकलताकूं जीतै वृद्धअवस्थामैं जराकरि बुद्धि चलित नाहीं होय खानपानमैं विकलताका अभाव होय संतोषवृत्ति प्रगट होय दीनताका अभाव होय लौकिकमैं यश उज्ज्वल होय परलोकमैं स्वर्गकी प्राप्ति

होय तातैं तप ही करना उचित है। सो तप दोयप्रकार है एक वाह्य एक अभ्यंतर तिनमैं वाह्य तपका छह भेद है अनशन, अवमोदर्य, वृत्तिपरिसंख्यान, रसपरित्याग, विविक्तशयनाशन, कायक्लेश ऐसे छहप्रकार वाह्यतप है। तिनमैं अनशन तपका स्वरूप कहिये है–अनशन जो भोजन ताका त्याग करिये सो अनशतप है जो दृष्टफलकी अपेक्षारहित होय करै सो अनशनतप है जो इहां यशकेवास्तै करै विख्यातता वास्तै करै जगतके लोकनितैं पूजा नमस्कारादिवास्तै वा मंत्रसाधनवास्तै करै ऋद्धि संपदा वैरीनिको घात परलोकमैं राज्यसंपदावास्तै करै कषायतैं वैरतैं करै दुःखितहुवा अपना-घातवास्तै करै सो अनशनतप सम्यक् नाहीं केवल संसारपरिभ्रमणका कारण है जो इंद्रियनिकी विषयनिमैं लालसा घटवानेकेअर्थ तथा छहकायके जीवनिकी दयाकेअर्थ रागभावके घटनेकेअर्थ निद्राके जीतनेकेअर्थ कर्मकी निर्जराकेअर्थ ध्यानकी सिद्धिकेअर्थ देहका सुखियापनाका मेटनेके अर्थ जो उपवासादि करै सो अनशनतप है। सो अनशनतप दोयप्रकारका है–एक तो कालकी मर्यादकरि है एक यावज्जीव है। एकदिनमैं दोयबार भोजन होय है तिनमैं एकवार भोजन करना एकवारका भोजनका त्याग करना सो अनशन है अर पहलेदिन एकबार भोजनकरि एकवारका त्याग अर दूसरेदिनके दोय भोजनका त्याग अर पारणाके दिन एकभोजनका त्यागकरि एकबार जीमना सो च्यारभोजनका त्यागरूप चतुर्थ है याहीकूं उपवास कहिये है अर छहभोजनका त्याग ताहि दोय उपवास कहिये है अष्टभोजनका त्यागकूं तेला दशभोजनका त्यागकूं चौला इत्यादि ऐसैं कालकी मर्यादरूप अनशनतप जानना। अर आयुका अंतमैं यावज्जीव भोजन त्यागना सो यावज्जीव अनशन है इंद्रियनिका उपशमकेअर्थ भगवान उपवास कह्या है तातैं इंद्रियनिकूं जीतनै-वाला मुनि भोजनकरता हू उपवासीक जानना अर जो उपवास करता इंद्रियनिकूं विषयनितैं नाहीं रोकै है आरंभ करै है कषायरूप प्रवर्तै है ताका अनशनतप विष्फल होय है कर्मकी निर्जरा नाहीं करै है ऐसा अनशनतपका स्वरूप कह्या सो जैसैं बात पित्त कफादिक विकारकूं प्राप्त नाहीं होय

रोगका उपशम होय उत्साह वधता जाय तैसैं अपना परिणामकी विशुद्धताकी वृद्धि चाहता देशके अनुकूल कालके अनुकूल आहारपानकी योग्यताके अनुकूल कुटुंबादिकका सहायके अनुकूल संहननप्रमाण जैसैं देह नाहीं विगड़ै तैसैं श्रावकनिकूं हू शक्तिप्रमाण अनशनतप अंगीकार करना ही श्रेष्ठ है ॥ १ ॥

अब अवमोदर्यतपका स्वरूप ऐसा जानना अवम कहिये ऊन उदर जामैं होय सो अवमोदर्य कहिये जेता प्रमाणरूप ओदनादिकतैं उदर भरिये तितना प्रमाणतैं ऊनभोजन करिये सो अवमोदर्यतप है अवमोदर्यतपतैं इंद्रियनिका संयम होय है भोजनकी गृद्धिताका अभाव होय है अल्पआहार करनेतैं वातपित्तकफ प्रकोपकूं प्राप्त नाहीं होय है रोगनिका उपशम होय है निद्रा आलस्यका जीतना होय है स्वाध्यायमैं सामायिकमैं कायोत्सर्गमैं ध्यानमैं खेद नाहीं होय सुखकरि ध्यान स्वाध्याय आवश्यकादिक होय है अवमोदर्य करनेतैं उपवासका खेद गरमी नाहीं व्यापै है उपवास सुखसूं होय है जातैं बहुत भोजन करै तदि आवश्यक ध्यान कायोत्सर्ग सुखते नाहीं होय आलस्य निद्रा प्रबल होजाय तृषाका प्रकोप होय है गरमी आताप रोग वधै है यातैं इंद्रियांकी लालसादि घटनेकुं मनके रोकनेकूं ज्ञानीमुनि तो अर्द्धभोजन चतुर्थभागभोजन तथा एकग्रास वा दोयग्रास इत्यादिक एकग्रास घाटिपर्यंत अवमोदर्यतपका भेद करैहैं अर जो मिष्टभोजनका लाभके अर्थ वा कीर्ति प्रशंसा होनेके अर्थ अल्प भोजन करै सो अवमोदर्यतप नाहीं है अवमोदर्य तो भोजनमैं लालसाघटनेके अर्थ है गृहस्थश्रावककूं हू अंतरायकर्मका क्षयोपशमप्रमाण प्राप्त हुवा भोजनमैं संतोषकरि भोजनमैं लालसा छांड़ि इच्छाका निरोधके अर्थ अवमोदर्यतप करना श्रेष्ठ है।

अब वृत्तिपरिसंख्यान नाम तप मुनीश्वरनिकै होय है सो कहैं हैं। मुनीश्वर भोजनकूं जावतां प्रतिज्ञा करै जो आज एकघरमैं जावना वा दोय तीन पांच सात घरनिका प्रमाणकरि जाय तथा आज सूधे मार्गमैं ही मिलै तथा वक्रमार्गमैं ही तथा ऐसादातार ऐसाभोजन तथा ऐसापात्रमें ऐसीविधतैं मिलै तो ग्रहण करना अन्यप्रकार नाहीं करना ऐसी कठिन २ प्रतिज्ञाकरि भोजनके अर्थ गमन करै

ताकै वृत्तिपरिसंख्यान तप होय है यो दुर्द्धरतप मुनीश्वरनिनैं ही होय है अन्य गृहस्थ धारणकरनेकूं समर्थ नाहीं होय हैं अर गृहस्थ है सो हू वीतरागगुरुनिके प्रसादतैं ऐसी प्रतिज्ञा धारै है जो मैं जिनेंद्रधर्म पाय उज्ज्वलधर्मका घात जामैं नहीं होय ऐसी रीतिहीं जीविका करूं जामैं श्रद्धान ज्ञान व्रत नष्ट होजाय सो जीविका नाहीं करूं बहुतहिंसा झूंठ मायाचारकारिसहित ऐसी सेवा नाहीं करूं खोटे पापके बिणज व्यवहार नाहीं करूं उज्ज्वल बिणज बहुत आरंभरहित कपटरहित असत्यरहित जो जीविका होय सो ही मोकूं करना, अन्य नाहीं करना इत्यादि आजीविकामैं नियम करै तथा एताधन एतापरिग्रह एतावस्त्रतें भोगउपभोग करना तथा रोगादिक होजाय तो एती औषध ही भक्षण करूं इन औषधिनितैं अन्य भक्षण नाहीं करूं तथा आज मेरे गृहमैं तयारभोजन पावैगा सो ही भक्षण करूंगा मैं मुखसूं कहिकरि कराऊं नाहीं मंगाऊं नाहीं तथा आज मेरे गृहमैं मेरा घरका ग्रासलीये पहली एकबार जो पात्रमैं घालदेगा सो ही भोजन करूंगा फेर मांगू नाहीं इत्यादिक इच्छाका रोकनेके अर्थ गृहस्थ प्रतिज्ञा करै है।

अब रसपरित्यागतपका ऐसा स्वरूप है दुग्ध, दही, घृत, लवण, गुड़, तेल ए छहप्रकारके रस हैं तिनमैं जिह्वादिक इंद्रियानिकूं दमनेके अर्थ मनकी लोलुपता मेटनेके अर्थ कामके जीतनेके अर्थ निद्राके घटावनेके अर्थ संयमके अर्थ रसनिका त्याग करना कदे एकरसका त्याग कदे दोयतीनका त्याग कदे छहूं रसनिका त्याग करना सो रसपरित्यागतप है संसारीजीव मिष्टरसादि भक्षणकरनेके लोलपी होय अभक्ष्यभक्षण करै हैं लज्जा छांड़ैं हैं व्रततप विगाड़ैं हैं भोजनकी लोलुपतातैं शुद्रादिकनिके अयोग्य कुलमैं भोजन करैं हैं दीनहुवा तरसैं हैं रसादिकभक्षण करनेकूं लड़ैं हैं मरैं हैं पड़ैं हैं बहुधाकरि रसनिके लोभी हुये भ्रष्ट होरहें हैं कोऊ धन्यपुरुषनिकै रसरूप भोजन करनेकी लालसा नाहीं रहै है उत्तम गृहस्थ है सो प्रथम ही नानाप्रकारके घृत मिष्ट रसादिकनिमैं लालसाका त्यागकरि जो अपने गृहमैं खारा अलूणा लूखा सचिक्कण इत्यादिक जो स्वाभाविक कर्म विधि मिलायदे ताकूं संतोषसहित

भक्षण करै है अर रसरूपभोजनकी कथा स्वप्नांमैं हू नाहीं करै है रसनिकी लंपटता दोऊलोकमैं भ्रष्ट करने वाली है तातैं लालसा छूटनेके अर्थ इंद्रियनिकूं वशीभूतकरनेके अर्थ परमसंवर अर निर्जराके अर्थ दीनताका अभावके अर्थ संतोष धारणके अर्थ रसपरित्याग नामा तप ही श्रेष्ठ है।

अब विविक्तशयनासन नामा तपका ऐसा स्वरूप जानना शून्य गृह एकांतस्थान विकलत्रयादि जीवनिकी बाधारहित स्त्रीनपुंनक असंयमीनिका आरजाररहित स्थानमैं वा पर्वतनिकी गुफा बनखंडादिकनिमैं ध्यान अध्ययन करना शयन आसन करना सो विविक्त शयनाशन नाम तप है। जातैं एकांतमैं तिष्ठता साधुकै हिंसाका अभाव ममत्वको अभाव विकथाको अभाव होय है कामको अभाव होय ध्यान अध्ययनकी सिद्धि होय है दूजाको प्रसंग होय तब वचनालाप होय वचनालाप होय तदि मनमैं संकल्प होय तदि ध्यानतैं चलायमानता होय रागभावकी वृद्धि होय तातैं संयमी एकांतमैं ही शयन आसन करै है अर गृहस्थ धर्मात्मा भी पापसूं भयभीत होय अपना गृहस्थचाराके आजीवकादि कार्य न्यायमार्गतैं अल्पआरंभादिकरूप पापकार्यतैं भयभीत हुवा तथा शरीरके स्नानभोजनादि कार्यकरकैं एकांतमकान अपने गृहमैं वा जिनमंदिरमैं वा धर्मशालामैं वा वनके चैत्यालयादिकनिमैं साधर्मीलोकनिकी संगतमैं धर्मचरचा करता स्वाध्याय करता जिनागमका पठनपाठन व्याख्यान करता जिनागमश्रवण करता पंचनमस्कारका स्मरण करता दिनरात्रि व्यतीत करै स्त्रीकथा राजकथा भोजनकथा देशकथा कदाचित हू नाहीं करता काल व्यतीत करै है तथा कामविकारका बधावनेवाला रागका उपजावनेवाला शय्याशनका परिहार करै गृहस्थकै हू विविक्तशयनाशन निर्जराको कारण है।

बहुरि मुनीश्वरनिके कायक्लेश नामा बड़ा तप है जो एकआसनकरि बैठना एकपसवाड़ै शयनकरना मौन धारण करना तदा ग्रीष्मऋतुमैं पर्वतनिके शिखर शिलातलनि ऊपरि सूर्यके सन्मुख कायोत्सर्गादिकधारणकरि ग्रीष्मका घोरआताप तप्तपवनादिककी घोरवेदना होते हू धर्मध्यानमैं

धाराभावनाका चिंतवनमैं परिणामकूं स्थिरकरि परिणामकूं क्लेशरूप नाहीं होने दे है। तथा वर्षाऋतुमें वृक्षके नीचे योगधारण करते घोरअंधकारकी भरी रात्रिमैं अखंड धाररूप वर्षतामेघकरि धरती आकाश जलमय होरह्या होय अर पर्वतनितैं पड़ती नदीनका घोर कोलाहल होरह्या होय अर वृक्षनिमैं एकट्ठा जल होय वहुतस्थूल धार पड़ती होय अर बिजुलीनिका झकझकाट अर घोरगर्जना अर वज्रपातनिका पड़ना तिस अवसरमैं धन्य मुनि आछादनरहित नग्नअंग ऊपरि घोरवेदना भोगते हू संक्लेशरहित धर्मध्यानशुक्लध्यानसूं जुड़ेहुये तिष्ठैं हैं सो समस्त वीतरागताकी महिमा है तथा शीतऋतुमें नदीके तीर वा चौहटे नग्नअंग ऊपरि बरफका पड़ना महान् घोरशीतलपवनका चलना तिसअवसरमें दुखरहित धर्मध्यानतैं शीतकालकी रात्रि व्यतीत करैं हैं तथा दुष्टजीवनिकरि किया घोरउपद्रवनिकूं भोगि समभाव रखना सो कायक्लेशतप है सो परवस दुख आये चलायमान नाहीं होनेके अर्थ तथा देहजनित सुखकी अभिलाषाका अभावके अर्थ रोगनितैं चलायमान नाहीं होनेके अर्थ भयके जीतनेके अर्थ परीसह सहनेके अर्थ कर्मकी निर्जराके अर्थ कायक्लेशतप धारण करै है अर गृहस्थकै ये आतापनयोगादिक नाहीं होय यो तप तो दिगंबरसाधुनितैं ही होय गृहस्थ है सो आप तो चलायकरि कायक्लेश करै नहीं अर सामायिकादिकके अवसरमैं आयजाय तो चलायमान होय नाहीं अर कर्मके उदयतैं अपनी रक्षा करते हु शीतज्वर दाहज्वर वातशूलादिक आजाय वा दुष्टवैरी धर्मद्रोही म्लेच्छादिक आय उपद्रव करै वा वंदिगृहादिकमें रोकदे वा ताड़न मारन करै तो गृहस्थ है सो मुनीश्वरनिका कायक्लेशतपकी भावनाकरि समभावनिकरि सहै कायरता धारण नाहीं करै दारिद्रयका दुःखजनित क्षुधातृषाशीतउष्णादिककी वेदना कर्मके उदयतैं आवै तहां कायर नाहीं होय धर्मके शरणतैं सहना सो ही कायक्लेश है मुनीश्वर तो ऐसा कायक्लेशतप उत्साहकरि धारण करैं हैं हम कायक्लेशतैं अतिदूरि बर्तैं हैं तो हू असाताकर्मका उदयकरि दुःख आयगया तो भयवान हुवा कौन छांड़ैगा अब जो धैर्यधारणकरि सहूंगा तो कर्म रसदेय जरूर निर्जरैगा अर कायरता करूंगा क्लेश करूंगा तो हू भोगना पड़ैगा कर्मका उदयकै दया है नाहीं कायर होय दुख

करनेतैं उदयमैं आया सो भी भोगूंगा अर यातैं बहुतगुणां आगानैं बंध करूंगा तातैं जिनेन्द्रका वचनांको शरण ग्रहणकरकै कर्मका उदयमैं धैर्य धारण करना ही श्रेष्ठ है अर गृहस्थकै अंतरायकर्मका उदय आवै है तदि उदरभर भोजन हू पूरा नाहीं मिलै वा घृतादिक रस नाहीं मिलै अतिअल्प मिलै तदि जो अल्पमैं संतोपित रहै परका विभवदेखि वांछा नाहीं करै समभावरूप रहै तो सहज ही कायक्लेश तप होय है बड़ी निर्जरा करै है ऐसैं छहप्रकारका बाह्यतप कह्या। बाह्य अन्यकै प्रत्यक्ष जाननेमैं आवै वा बाह्य भोजनादिकके त्यागतैं होय वा अन्य गृहस्थ परमती हू धारलें तातैं याकूं बाह्य तप कह्या तथा जैसैं अग्नि बहुत संचय कीया तृणादिककूं दग्ध करै तैसैं पूर्वसंचितकर्मकूं दग्ध करै है तातैं तप कह्या तथा शरीर इंद्रियनिकूं संतापितकरि विषयादिकनिमैं मग्न नाहीं होने दे तातैं तप कहिये तथा जैसैं तपायाहुवा सुवर्णपाषाण है सो कीटिका छांड़ि शुद्ध सुवर्ण हो जाय हैं तैसैं आत्मा याकै प्रभावतैं कर्ममलरहित होजाय तातैं याकूं भगवान तप कह्या है।

अब छहप्रकार अभ्यंतरतप है सो कहिये है–प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग और ध्यान ऐसैं छहप्रकार हैं। तिनमैं प्रायश्चित्तका नव भेद अर संख्यात असंख्यात भेद हैं सो इहां आलोचनादिकका कथन लिखे कथनी बहुत होजाय तातैं संक्षेप कहिए है जो धर्मात्मा है सो अपने व्रतधर्ममैं कदाचित दोषरूप आचरण नाहीं करै अन्यको सदोष आचरण नाहीं करावै दोषसहित आचरण करै ताकूं मनवचनकायकरि भला नाहीं कहै अर जो कदाचित प्रमादकरि भूलकरि दोष लगिजाय तो निर्दोषसाधुके निकट जाय सरलपरिणामतैं दशदोषरहित आलोचना करकैं जो गुरुनिकरि दीया प्रायश्चित्ततादि परमश्रद्धातैं आदरपूर्वक ग्रहण करै हृदयमैं ऐसी शंका नाहीं करै जो मोकूं बहुत प्रायश्चित्त दीया वा अल्पप्रायश्चित्त दीया प्रमादतैं एकवार दोष लगिगया ताकूं प्रायश्चित्त लेय दूरि कीया फिर ऐसी सावधानी राखै जो अपना शतखंड होजाय तो हू फिर दोष नाहीं लागने देवै ताकै प्रायश्चित्त लेना सफल होय है। बहुरि प्रायश्चित्त लेवै सो अनेकगुणनिका धारक सिद्धांतरहस्यका पार-

गामी प्रशांतमनका धारक अपरश्रावीगुणका धारक जैसैं तप्तलोहका गोला जल पीगया ताका फिर बाहिर प्रकाश नाहीं तैसें जो शिष्यकरि आलोचना कीया दोषकी कदाचित प्रकटता बाह्य नाहीं करनेवाला देशकालका ज्ञाता एकांतमैं तिष्ठता पूर्वै कह्या आचार्यनिके अनेक गुण तिनका धारक तिनकै निकट अंजुली जोड़ि महाविनयपूर्वक बालक ज्यों सरलचित्त होय आत्मनिंदा करतो आलोचना करै है। बहुरि जैसैं रुधिरसूं लिप्तवस्त्र रुधिरकरि नाहीं धुवै कर्दम कर्दमकरि नाहीं धुवै तैसें दोषनिकरिसहित साधु हू शिष्यकूं निर्दोष नाहीं करि सकै है जैसे मूढ़वैद्य रोगीका विपरीत इलाजकरि प्राणरहित करै तैसैं अज्ञानीगुरु हू शिष्यकूं संसारसमुद्रमैं डबोय दे है तातैं निर्दोषगुरु प्रायश्चित्त देय शुद्ध करै संयमी पुरुष तो एकगुरु एकशिष्य दोय ही एकांतमैं आलोचना करैं अर्यिकादिक प्रगत प्रकाशस्थानमैं एकगुरु दोयअर्यिका एकगणिनी होय एक दोष लाग्यो होय सो होय ऐसैं तीन होय जो लज्जातैं वा तिरस्कार वा प्रायश्चित्तका भयतैं वा अभिमानतैं दोषकूं शुद्ध नाहीं करै तो जैसैं लाभ अर खरचका ज्ञानरहित वणिककी ज्यों कर्मरूप ऋणवान होय भ्रष्ट होय है अथवा आलोचनाविना महान हू तप अंगीकार कीयाहुवा वांछितफल नाहीं देवै है अर आलोचना करकै हू गुरुका दीया प्रायश्चित नाहीं करै तो वैद्यका कह्या औषधकूं नाहीं भक्षण करता रोगीकी ज्यों शुद्ध नाहीं होय है वा हलादिककरि नाहीं सुधार्या क्षेत्रमैं धान्यवत महाफल नाहीं फलै है अथवा जैसें विना मंजन कीया दर्पणमैं रूपकी ज्यों चित्तकी शुद्धता विना आत्मामैं चारित्रकी उज्ज्वलता नाहीं भासै है। अब इस कलिकालके प्रभावकरि निर्दोषगुरु प्रायश्चित्त देनेवाले दीखै नाहीं जो आप ही अनेक पापनिकरि लिप्त सो अन्यकूं कैसैं शुद्ध करैं रुधिरसूं रुधिर कैसें धुवै सो ही आत्मानुशासनजीमैं कह्या है,—

कलौ दंडो नीतिः स च नृपतिभिस्ते नृपतयो नयन्त्यर्थार्थं तं न च धनमदोऽस्त्याश्रमवताम्।
नतानामाचार्या न हि नतिरताः साधुचरितास्तपस्तेषु श्रीमन्मणय इव जाताः प्रविरलाः ॥१४९॥

अर्थ—कोऊ शिष्य गुणभद्र स्वामीसूं पूछ्या जो हे स्वामिन् इस कालमैं तपस्वी मुनिनिविषै हू

सत्य आचरणके धारक अत्यंत विरले रहगये ताका कारण कहा है ताकूं उत्तर देनेरूप काव्य कह्या ताका अर्थ लिखिये है—इस कलिकालमैं नीतिमार्ग है सो तो दंड है दंडका भय विना न्यायमार्गमैं कोऊ स्वयं नाहीं प्रवर्तै है अर दंड है सो राजानिकरि दीयाजाय क्योंकि कलिकालमैं जोरावर विना अन्य साधर्मीनिकरि तथा वृद्धपुरुषनिकरि लोकानिकरि दीया दंड कोऊ ग्रहण करै नाहीं कोऊ कह्या मानै नाहीं तातैं बलवान राजाकरि दीया दंड ही ग्रहण करै अर इस कलिकालमैं राजा ऐसे होने लगे जातैं धन आवता देखि ताकूं दंड देवैं निर्धनिकूं दंड नाहीं देहैं अर आश्रमवान संयमी तिनकै कुछ धन नाहीं तातैं संयम लेयकरि कुमार्ग चालै तिनकैं राजाका दंड तो है नाहीं जातैं कुमार्गतैं रुकैं अर आचार्यनिका दंड हुवाचाहिये सो कलिकालमैं आचार्यनिका शिष्यनिमैं अनुराग होगया जो आपकूं नमिजाय ताकूं दंड दे नाहीं अपना संप्रदाय बधावनेका अर्थि जो आपकूं नमोऽस्तु नमस्कार करले ताकूं अपना जानि दंड देवैं नाहीं तदि दंडका भयरहित सूत्रविरुद्ध आचरण करने लगि जाय तातैं कलिकालविषै तपस्वी जननिमैं हू सत्यआचारके धारक अतिविरले देखिये हैं केवल भेषधारी ही बहुत दीखैं हैं। तातैं प्रायश्चित्त नाम ही कल्याणका कारण है तातैं गृहस्थनिकै प्रायश्चित्तकी प्रवृत्ति कैसैं होय तातैं परमेष्ठीका प्रतिबिंबके सन्मुख होय करकैं ही अपना अपराधकूं आलोचनाकरि ऐसा यत्न करना जो फेर अपराध स्वप्ननिमैं हू नाहीं बने।

अब विनय नामा दूजा अभ्यंतरतप है ताका पंच भेद है दर्शनविनय, ज्ञानविनय, चारित्रविनय, तपविनय, उपचारविनय। तहां जो पदार्थनिका श्रद्धानविषै शंकादिदोषरहित निःशंक रहना सो दर्शनविनय है। सम्यग्दर्शनपरिणाम होनेसैं हर्ष अर सम्यक्त्वकी विशुद्धतामैं उद्यमी रहना सम्यग्दृष्टीनिका संगम चाहना सम्यक्त्वके परिणामकी भावना भावना, मिथ्याधर्मकी प्रशंसा नाहीं करना मिथ्यादृष्टीनिका तप दान ज्ञानकी प्रशंसा नाहीं करना क्योंकि मिथ्यादृष्टीका आचरण है सो इसलोक परलोकमें यश विख्यातता विषयसुख धन संपदाकी चाहपूर्वक आत्मज्ञानरहित है बंधको कारण है यातैं प्रमाण

नाहीं अर वीतराग सर्वज्ञने पदार्थनिका स्वरूप कह्या है सो प्रमाण है यो दर्शनविनय है। बहुरि ज्ञानविनय ऐसा है जो आलस्यरहित विक्षेपरहित विषयकषायमलरहित शुद्धमनकरकैं देशकालकी विशुद्धिताका विधानमैं विचक्षण पुरुष बहुत सन्मानतैं यथाशक्ति मोक्षका अर्थी हुवा वीतरागसर्वज्ञकरि प्ररूपणकीया परमागमका ज्ञान ग्रहण अभ्यास स्मरणादि करना सो ज्ञानविनय जानना। ज्ञानका अभ्यास ही जीवका हित है ज्ञानविना पशु समान है मनुष्य चार ही ज्ञानका सेवनतैं है कामसेवन भक्षणादिक इंद्रियविषय तो तिर्यंचकै हू होय है ज्ञानविनयका धारक निरंतर सम्यग्ज्ञानहीकी वांछा करै है ज्ञानहीके लाभकूं परमनिधानका लाभ मानै है यो ज्ञानविनय महानिर्जराको कारण है जाकै ज्ञानविनय होय ताकै ज्ञानका धारकनिका विनय विशेषताकरि होय है। अब चारित्रविनयका स्वरूप कहैं हैं ज्ञानदर्शनवानपुरुषकै पंचाचारका श्रवणकरतां प्रमाण समस्तशरीरमैं रोमांच प्रगट होय अंतरंगमैं भक्तिका प्रकट होना अर कषायविषयनिका निग्रहरूप परमशांतभावके प्रसादतैं मस्तकऊपरि अंजुलिकरणादिकरि भावनितैं चारित्ररूपअपना होना सो चारित्रविनय है बहुरि जाकै भावनिमैं संसारका दुःख छेदनेवाला आत्माकूं बाधारहित सुखकूं प्राप्तकरनेवाला विषयकषाय रोगउपद्रवका जीतनेवाला एक तप ही परमशरण दीखै है ताकै तपभावना होय है ताहीकै तपका विनय होय है तपस्वीनिकूं उच्च सर्वोत्कृष्ट समझना तपस्वीनिकी सेवा भक्ति वैयावृत्त्य स्तुति करना सो तपविनय है शक्तिप्रमाण इंद्रियनिका निग्रहकरि देशकालकी योग्यताप्रमाण अनशनादितपमैं उद्यमी होय धारण करना सो समस्त तपविनय है। अब उपचारविनय ऐसा जानना जो आचार्यादिक पूज्यपुरुषनिकूं देखतप्रमाण उठि खड़ा होना सप्तपैंड सन्मुख जावना अंजुलि मस्तक चढ़ावना उनकूं आगैंकरि आप पाछैं गमनकरना गुरुनिकूं बैठतेसंते बैठना नमस्कारपूर्वक रत्नत्रयकी कुशल पूछना गुरुनिकी आज्ञाप्रमाण आचरण करना पठन पाठन तपश्चरण आतापनयोगादिक सिद्धांतका नवीन अभ्यासका ग्रहण विहारवंदनादिक समस्तकार्य गुरुनिको जणाय करना गुरुनिके होते ऊंचाआसन छांड़ना सो समस्त

उपचारविनय है। तथा आचार्यादिक परोक्ष होय तो मनवचनकायकी शुद्धतापूर्वक नमस्कार करना अंजुली करना गुणनिका स्मरण करना गुणानिका कीर्तन करना जो वाकी आज्ञा धारण करी ताका पालना सो समस्त उपचारविनय है विनयके प्रभावतैं सम्यग्ज्ञानका लाभ होय है अनेकविद्या सिद्ध होय हैं मदका अभाव होय है आचारकी उज्ज्वलता होय है सम्यक आराधना होय है यशकी उज्ज्वलता होय है कर्मकी निर्जरा होय है। बहुरि अन्य साधर्मीनिका शिष्यनिका मंदज्ञानकेधारकनिहूका यथायोग्य विनय करना मिथ्यादृष्टिनिका हू तिरस्कार नाहीं करना मिष्टवचन आदरपूर्वक वचन बोलना संतोष करनेवाला दुःख दूरकरनेवाला वचन कहना सो ही विनय है उद्धतचेष्टा दोऊलोक नष्ट करै है। बहुरि उपचारविनय मनवचनकायके मार्गकरि अनेक प्रकार होय है गुरुनिका तथा सम्यग्दर्शनादिगुणनिके धारकनिका शय्याका स्थान बैठनेका स्थान शोधना आसनतैं नीचा बैठना नीचास्थानमैं शयन करना अनुकूल पादस्पर्शन करना दुःखरोग आजाय तो शरीरकी टहल करकैं अपनाजन्म सफल मानना पूज्यपुरुषनिके निकट थूकना नाहीं आलस्य नाहीं लेना उवासी नाहीं लेना अंगुलादिक भंजन नाहीं करना हास्य नाहीं करना पांव नाहीं पसारणा हस्तताल नाहीं देना अंगका विकार भ्रुकुटीका विकार अंगका संस्कार नाहीं करना विनयवान है सो उच्चस्थानमैं स्थित रह वंदना नाहीं करै जठै जठै संयमी तिष्ठै, तठै तठै वंदना करै जो आवते संयमनिकूं देखि खड़ा होना आसन त्याग करना वंदना करना तिनकै ही विनय है जो गुरुनिकी आज्ञा हमकूं होय तिसप्रमाण अंगीकार करना तो हमारे समान कोऊ पुण्यवान विरले हैं विनयरहितकै व्रत शील संयम विद्या समस्त निष्फल है विनयका प्रभावतैं क्रोध मानवैरादिक समस्तदोषनिका अभाव होय है विनयविना संसारसंबंधी लक्ष्मी सौभाग्य यश मित्रता गुणग्रहण सरलता मान्यता कृतज्ञता समस्त नष्ट होय है तातैं साधुनिकूं अर गृहस्थनिकूं समस्तधर्मका मूल विनय ही धारण करना श्रेष्ठ है।

अब वैयावृत्यतप हू जिनकै गुणनिमैं प्रीति धर्ममैं श्रद्धान धर्मात्मामैं वात्सल्य निर्विचिकित्सतादि-

गुण होंय तिनहीकै होय है कृतघ्नके आचार्यादिकनिका वैयावृत्त्यमैं परिणाम नाहीं होय है दशप्रकारके साधुनिका वैयावृत्त्य आगममैं कह्या है । आचार्य, उपाध्याय, तपस्वी, शैक्ष्य, ग्लान, गण, कुल, संघ, साधु, मनोज्ञ इन साधुनका दशप्रकार वैयावृत्त्य कह्या है । तिनमैंतैं जिनके सम्यग्ज्ञानादिकगुणनिकूं तथा स्वर्गमोक्षके सुखरूप अमृतका बीज व्रत संयम अपना हितके अर्थ आचरण करते आचार्य हैं तिनका अपना कायकरि तथा अन्यक्षेत्र शय्या आसनादिककरि सेवा करिये सो आचार्यवैयावृत्त्य है । आचार्यनिका वैयावृत्त्य है सो समस्तसंघको वैयावृत्त्य है समस्तसंघ समस्तधर्म आचार्यनिके प्रभावतैं प्रवर्तै है । बहुरि जिनेन्द्रव्रतशीलके धारकनिका समीपकूं प्राप्त होय परमागमका अध्ययन पठन करिये सो उपाध्याय है। महान अनशनादितपमैं प्रवर्तन करै ते तपस्वी हैं । श्रुतज्ञानके शिक्षणमैं तथा व्रतशीलभावनामैं निरंतर तत्पर होय ते शैक्ष्य हैं । रोगादिककरि क्लेशित जिनका शरीर होय ते ग्लान हैं । वृद्ध मुनिनिकी संगति सो गण है । आपको दीक्षा देनेवाला आचार्यनिका शिष्य होय सो कुल कहिये है । च्यारप्रकारके मुनीश्वरनिका समुदाय सो संघ है । बहुतकालका दीक्षित होय सो साधु है । लोकमैं पंडितपणाकरि मान्य होय तथा वक्तृत्वगुणकरि मान्य होय महा कुलीनपनाकरि लोकनिमैं मान्य होय सो मनोज्ञ है जातैं प्रवचनका धर्मका गौरवपणा प्रगट होय है ऐसैं दशप्रकारके मुनीनिकै कदाचित शरीरमैं व्याधि प्रगट होय जाय तथा परीषह आजाय तथा मिथ्यात्वादिकनिका भावनिमैं उदय होजाय तो प्रासुक-औषधि भोजन पान वस्तिका संस्तरणादिकरि धर्मोपदेशकरि श्रद्धानकी दृढ़ता करावनेकरि पुस्तक-पिच्छिकाकमंडलादिधर्मोपकरणनिका दानकरि इलाज करना धर्ममैं दृढ़ता करावना संतोष धैर्यादि धारण करावना वीतरागताका बधावना सो वैयावृत्त्य है बाह्य औषधभोजनपानादिकद्रव्यका असंभव होतैं अपना कायकरि कफ नाशिकामल मूत्र पुरीषादिक दूर करना रात्रि जागरण करना सो वैयावृत्त्य तप परमनिर्जराका कारण है तिनमैं केतेक उपकार तो मुनीश्वरनिका मुनीश्वर ही करैं हैं उठावना बैठावना शयन करावना कलोटलिवावना हस्तपादादिकनिका पसारना समेटना उपदेश देना कफमलादि

दूर करना धैर्य धारण करावना मुनीश्वरानिका मुनीश्वर ही करैं हैं अर केतेक प्रासुकऔषधि आहार-पान उपकरणादिकनिकरि गृहस्थ धर्मात्माश्रावकतैं ही बनै है गृहस्थ है सो साधुनिका वैयावृत्य करै अर आर्जिकाका वैयावृत्त्य श्राविका हू करै जातैं गृहस्थ है सो गृहस्थधर्मात्माका वैयावृत्य करै तथा करुणाबुद्धिकरि दुःखित रोगी वेवारिस बाल वृद्ध पराधीन वंदिगृहमैं पड़ेनिका करुणाबुद्धितैं उपकार करै तथा माता पिता विद्यागुरु स्वामी मित्रादिकनिका उपकार स्मरणकरि कृतघ्नताछांड़ि सेवासनमानदान-प्रशंसादिकरी आदर सन्मानादिकरि सुख उत्पन्न करै दुःख होय ताकूं दूर करै अपनी शक्तिप्रमाण दानसन्मानकरि वैयावृत्त्य करै ताकै वैयावृत्त्यतप महानिर्जरा करै है। वैयावृत्त्यतैं ग्लानिको अभाव होय है प्रवचनमैं वात्सल्यता होय है आचार्यादिक अनेक वात्सल्यके स्थान हैं तिनमैं कोऊको भी वैयावृत्त्य बनिजाय ताहीकरि समस्त कल्याणकूं प्राप्त होजाय हैं।

अब स्वाध्याय नामा तपकूं वर्णन करैं हैं-स्वाध्याय पंच प्रकार है वाचना, पूछना, अनुप्रेक्षा, आम्नाय, धर्मोपदेश ऐसे पंच प्रकार स्वाध्याय है। निर्दोषग्रंथ कहिए पाठ तथा आगमका अर्थ तथा पाठ अर अर्थ दोऊ इनकूं पात्र मनुष्यनै पढ़ावना जनावना समझावना सो वाचनास्वाध्याय है जातैं परमागमको शब्द पढ़ावनेसमान अर्थसमझावनेसमान कोऊ अपना परका उपकार है नाहीं तथा परमागमको पढ़ाय योग्याशिष्यकूं प्रवीण करना है सो धर्मका स्थंभ खड़ा करना है जातैं जिनधर्म तो शास्त्रज्ञानतैं ही है प्रतिमा अर मंदिर तो मुखतैं बोलैं नाहीं साक्षातबोलता देवसमान हितमैं प्रेरणा करनेवाला अर अहिततैं रक्षा करनेवाला भगवान सर्वज्ञका परमागम ही है तातैं शास्त्रपढ़ावनेमैं पढ़नेमैं परम उद्यमी रहना। बहुरि अपनासंशयका नाशकेअर्थ बहुज्ञानीसूं विनयपूर्वक प्रश्न करना जातैं प्रश्नकरि संशय दूर कियेबिना ज्ञान सम्यक् प्रकट नाहीं होय यातैं पूछना है अथवा आप जो आगमका शब्द अर्थ समक्ष राख्या होय सो बहुज्ञानीनिके मुखतैं श्रवण करले तो बहुत ज्ञान दृढ़ होजाय ज्ञानकी शिथिलता दूर होजाय तातैं बहुज्ञानीनितैं प्रश्न करना अथवा आप संक्षेप समझ्या होय ताकूं विस्तारतैं

जाननेकेअर्थ बड़ा विनयतैं सम्यग्ज्ञानीनितैं प्रश्न करना अपनी उच्चता तथा अपना पंडितपना दिखावने-
केअर्थ तथा परका तिरस्कार करनेकेअर्थ तथा परका हास्यकेअर्थ सम्यग्दृष्टी प्रश्न नाहीं करै है शब्दमैं
हू प्रश्न करै अर्थमैं हू प्रश्न करै शब्दअर्थ दोऊनिकूं हू प्रश्नादिककरि निर्णय करना सो पृच्छनानामा
स्वाध्याय है। बहुरि परमागमका जाण्या हुआ शब्दअर्थकूं अपना हृदयमैं धारणकरि बारंबार मनकरि
अभ्यासकरना चिंतवनकरना तथा आगममैं आज मैं पठनश्रवण किया तिसमैं ये दोष मेरे त्यागनेयोग्य
हैं ये गुण मेरे ग्रहणकरनेयोग्य हैं ये हमारे स्वरूपतैं अन्य द्रव्यलोकक्षेत्रादिक जाननेयोग्य ही हैं
ऐसे मनकरि बारंबार चिंतवन करना सो अनुप्रेक्षा नाम स्वाध्याय है। यातैं अशुभभावनिका
नाश होय है शुभधर्मध्यान प्रकट होय है। बहुरि अतिशीघ्रतातैं पढ़ना वा अतिविलंबतैं पढ़ना
इत्यादिक वचनके दोष टालि धैर्यसहित एकएकअक्षरकी स्पष्टतासहित अर्थका प्रकाशसहित पढ़ना
पाठकरना मिष्टस्वरतैं उच्चारण करना तथा सिद्धांतकी परिपाटीतैं आगमतैं विरोधरहित लोकविरु-
द्धतारहित पढ़ना सो आम्नाय नामा स्वाध्याय है। बहुरि लौकिकप्रयोजनलाभपूजाअभिमानमदादि-
कनिकूं छांडि उन्मार्गके दूर करनेकूं सन्मार्ग दिखावनेकूं संशय निराकरणकरनेकूं अपूर्वपदार्थ प्रगटकर-
नेकूं धर्मका उद्योतहोनेकूं मोहअंधकार दूर करनेकूं संसारदेहभोगनेतैं लोकानिकूं विरक्त करनेकूं विषया-
नुराग तथा कषाय घटावनेकूं अज्ञान निराकरण करनेकूं भेदविज्ञान प्रगटकरनेकूं पापक्रियातैं भयभीत
होनेकूं भव्यनिकूं धर्मकथनीका उपदेश करना सो धर्मोपदेश नाम स्वाध्याय है। जहां अनेक-
भव्यजीवनिको धर्मका उपदेश देना होय है तहां मनवचनकाय समस्त धर्मके स्वरूपमैं लीन होजाय
है अर ऐसा अभिप्राय उपदेशदाताका होय है जो कोऊरीति अनेकांतधर्मका यथावतस्वरूप श्रोता-
निका हृदयमैं प्रवेश करै कोऊप्रकार संसारदेहभोगनिमैं राग घटै कोऊप्रकार भेद विज्ञान प्रगट होय
ऐसा अभिप्राय जाका होय सो सत्यार्थधर्मका उपदेश करै है जाका आत्मा धर्ममैं रचि जायगा सो
ही अन्यश्रोतानिकूं धर्ममैं रचावैगा। धर्मोपदेश देनेवालाके आत्मानुशासनमैं ऐसे गुण कहे हैं जाकी

बुद्धि त्रिकालविषया होय जो पाछली अनेकरीत परमागमतैं नाहीं जानै सो यथावत वस्तुका स्वरूप नाहीं कहि सकै है जाकूं वर्तमानवस्तुका स्वरूपको ज्ञान नाहीं होय सो विरुद्धकथनी करदे जाकूं आगानै परिपाकका ज्ञान नाहीं होय सो अयोग्य कह दे यातैं वक्ता होय सो बुद्धिका बलतैं आगमका बलतैं लौकिकरीति प्रत्यक्षदेखनेतैं त्रिकालकी रीति जानै। बहुरि समस्तशास्त्र जे च्यारअनुयोगके शास्त्र तिनका रहस्यका जाननेवाला होय जो च्यारअनुयोगनिका रहस्य नाहीं जानै अर वक्तापना करै तो श्रोतानिकूं यथावत् नाहीं समझाय सकै जातैं प्रमाणका कथन आजाय नयनिका तथा निक्षेपनिका तथा गुणस्थान मार्गणास्थानका तथा तीनलोकका तथा कर्मप्रकृतिनिका तथा आचारका कथन आजाय तो जाण्याविना यथावत् निःशंक संशयरहित नाहीं व्याख्यान करसकै। यातैं समस्तशास्त्रनिका रहस्यका ज्ञाता होय बहुरि लोकरीतिका ज्ञाता होय जो लौकिकरचनामैं मूढ़ होय सो लोकविरुद्ध व्याख्यान करै बहुरि जाकै भोजन वस्त्र स्थान धन अभिमानकी आशा वांछा होय सो वक्ता यथार्थ व्याख्यान नाहीं करै लोकनिकूं रंजायमान किया चाहै लोभीकै सत्यार्थ वक्तापनो नाहीं होय है बहुरि जाकी बुद्धि तत्काल उत्तर देनेवाली होय जो वक्ताकूं तत्काल उत्तर नाहीं उपजे तो सभामैं क्षोभ होजाय वक्ताकी दृढ़प्रतीति सभानिवासीनिके नाहीं आवै बहुरि वक्ता होय सो मंदकषायी होय मंदकषायीविना लोभीका कपटीका क्रोधीका अभिमानीका दिया उपदेश कोऊ अंगीकार नाहीं करै है बहुरि वक्ता ऐसा होय जो श्रोतानिका प्रश्नहुआं पहले ही उत्तरकूं दिखावनेवाला होय जो थे या कहो तो या है अर या कहो तो या है। इसप्रकार व्याख्यान ही ऐसा करै जो श्रोतानिकूं प्रश्न नाहीं उपजिसकै अगाऊ ही प्रश्नका मार्ग मुद्रित करता व्याख्यान करै जो बहुत प्रश्न होजाय तो सभामैं क्षोभ मचिजाय बहुरि प्रबलप्रश्न हू कोऊ आय करै तो सहनशील होय क्रोधित नाहीं होय जो प्रश्न श्रवणकरि क्रोधित होजाय तो कोऊ प्रश्न नाहीं करसकै बहुरि जामैं प्रभुत्वगुण होय जातैं जाकूं आपतैं ऊंचा जानै ताहीकी शिक्षा ग्रहण करै दीनकी नीचकी शिक्षा कौन ग्रहण करै यातैं जामैं जगतके

मान्य प्रभुत्वगुण होय बहुरि परके मनका हरनेवाला होय जो समस्तके प्रिय होय जो मनकूं अप्रिय होय ताकि शिक्षा ग्रहण नाहीं होय है। बहुरि जाकूं आप आछीरीति आगमतैं वा गुरुपरिपाटीतैं नीका समझलिया होय ताकूं ही व्याख्यान करै जाकूं आप ही पूरा नाहीं समझ्या होय सो अन्यकूं कैसें समझावैगा जो आप ही अंधकाररूप होय सो परपदार्थनिकूं कैसें उद्योत करैगा दीपक आप प्रकाशरूप है सो ही घटपटादिकनिकूं प्रकाशै है बहुरि जाकी प्रवृत्ति व्यवहारमें परमार्थमें धर्ममें देनेमें लेनेमें वाणिज्यादिक जीविकामें भोजनवस्त्रादिकनिमें उज्ज्वल यशसहित होय सो ही वक्ता होय जाकी प्रवृत्ति मलीन होय ताके वक्तापनो सोहै नाहीं मलीन होजाय सो जगतमें मान्य नाहीं रहै। बहुरि जाकी अन्यलोकनिके ज्ञानउपजावनेमें परणति होय जाकी अन्यके समझावनेमें परणति नाहीं होय सो काहेकूं कहै। बहुरि रत्नत्रयमार्गका प्रवर्तावनेमें जाके उद्यम होय सो ही धर्मकथाका वक्ता होय इसमें अन्यलौकिक प्रयोजन है ही नाहीं। बहुरि जाकी बड़ा ज्ञानीजन स्तुति करता होय क्योंकि बड़े बड़े ज्ञानी जाकी प्रशंसा करै ताका वचन जगतके हृदयस्थानमें आजाय है। बहुरि उद्धततारहित होय जातैं उद्धत होय सो समस्तके अप्रिय होय है। बहुरि लोकरीति देश काल श्रोतानिकी मुग्धता दुष्टता प्रवीणता मूढ़ता शक्तता अशक्ततादिक समस्त जानि ऐसा उपदेश करै जो समस्तजन बड़ाआदरतैं ग्रहण करै लौकिकज्ञाताबिना यथायोग्य उपदेश नाहीं होय। बहुरि कोमलतागुण जामें होय कठोरपरिणामीका कठोरवचन आदरनेयोग्य नाहीं होय सो श्रोता श्रवणकरनेतैं पराङ्मुख होजाय है बहुरि जाके वक्तापनाकरि धनभोगादिककी वांछा नाहीं होय बहुरि जाकामुखमें अक्षर स्पष्ट उच्चारण होय स्पष्टअक्षर बिना समझमें आवै नाहीं बहुरि मिष्टअक्षर होय जामें श्रोता जाने कि कर्णनिके द्वार करि समस्तअंगनिकूं अमृतकरि सींचदिया बहुरि श्रोताजन जाका स्वामित्व समझै बहुरि सम्यग्दर्शनचारित्र वात्सल्यादि अनेकगुणनिका निधान होय ऐसे वक्तापनाके अनेकगुणनिकरि सहित होय सो धर्मकथाका वक्ता होय सो ऐसे गुणनिका धारक वक्ताको उपदेश कोऊ महाभाग्य पुण्यवानजननिकूं मिलै

है । सम्यग्देशनालब्धिका पावना अनंतकालमैं हू दुर्लभ है वहुरि धर्मोपदेश हू मिलै तो योग्य श्रोतापनाविना धर्मग्रहण नाहीं होय है जैसैं योग्यपात्रविना वस्तु ठहरै नाहीं अयोग्यपात्रमैं धरै तो पात्रका अर वस्तुका दोऊनिका नाश होय है तैसैं योग्यश्रोतापनाविना हू धर्मका उपदेश ठहरै नाहीं याहीतैं श्रोताका लक्षण हू संक्षेपतैं ऐसे जानना प्रथम तो भव्य होय जो उपदेश देते हू सम्यक्श्रद्धानादिक ग्रहण करनेयोग्य नाहीं होय ताकूं उपदेश देना वृथा है वहुरि मेरा कल्याण कहा है मेरा हित कहा है ऐसा जाकै सासता विचार होय जाकै अपना हितकी वांछा नाहीं सो विना प्रयोजन धर्मकथा काहेको श्रवण करै वेतो विषयका लाभ जातैं सधै ताकी वांछा करै हैं। वहुरि दुःखतैं अत्यन्त भयभीत होय जो मेरे अव नरकतिर्यंचादिक पर्यायका दुःख मति होहु ऐसैं जाकै भय नाहीं होय सो पापछोड़िवाका विषयकषायत्यागवाका शास्त्र काहेकूं श्रवण करै तातैं दुःखतैं भयभीत होय वहुरि सुखका इच्छक होय जाकै सुखकी चाह नाहीं होय सो धर्मका श्रवण नाहीं करै अर जाकै कर्णइंद्रिय होय कर्ण विगड़गयेहोंय ते काहेतें श्रवण करैं वहुरि जाकै धर्मकथा श्रवण करनेकी इच्छा होय इच्छाविना परिपूर्ण श्रवण होय नहीं अर इच्छा भी होय अर प्रमाद आलस कुसंगकरि श्रवण नाहीं करै तो इच्छा वृथा है अर जो श्रवण हु करै अर ये गुरु ऐसे कहै हैं एती सावधानतारूप ग्रहणविना श्रवण वृथा है अर ग्रहण हु होय अर जो धारण नाहीं होय श्रवणकरते ही विस्मरण होजाय तो ग्रहणकरना वृथा है वहुरि जो विचारपूर्वक प्रश्नउत्तरकरि निर्णय नाहीं करै तो श्रवणमैं संशयादिक ही रहै तदि कैसैं आत्महितके सन्मुख होय । वहुरि श्रोता हैं सो ऐसा धर्मकूं श्रवण करै जो दयामय होय अर सुखका करनेवाला होय अर युक्तितैं प्रमाणनयतैं जामैं वाधा नाहीं आवै अर भगवानसर्वज्ञवीतरागके आगमतैं प्रवर्त्या होय ऐसा धर्मकूं श्रवणकरि वारंवार विचारकरि ग्रहण करै जो विचाररहित होय मिथ्यात्वरूप हिंसाका कारण धर्म ग्रहण करले तो दुःख करनेवाला नरकादिकमैं प्राप्त करै अर जामैं युक्तितैं तथा सर्वज्ञवीतरागके आगमतैं वाधा आजाय सो धर्म नाहीं है अधर्म है यातैं श्रवण करनेयोग्य

नाहीं बहुरि हटग्रहहादिकदोषरहित होय हटग्राहीकूं शिक्षा लगै नाहीं इत्यादिक अनेकगुणनिका धारक होय सो श्रोताधर्मका उपदेश श्रवणकरि आत्मकल्याण करै है। अब इहां प्रकरणपाय श्रोतानिकी केतीकजाति दृष्टांतकरि कहै हैं केतेक श्रोता मृत्तिकाका स्वभाव लिये हैं जैसैं मृत्तिका पानी पड़ै जब तो नरम होजाय पाछै कठोर होय तैसैं धर्मश्रवणकरतैं भावनिमैं भीजजाय पाछैं कठोर होय है। केतेक चालनी जैसैं कणछांड़ि तुप ग्रहण करैं तैसैं धर्मकथामैं सारगुण तो छांड़दे अर औगुण ग्रहण करै है ते चालनीवत् जानना। बहुरि केतेक भैंसातुल्य श्रोता होय हैं जैसैं उज्ज्वलजलका भर्या सरोवरमैं भैंसा प्रवेशकरि समस्त सरोवरकूं कर्दममय करै तैसैं समस्तसभाके लोकनिका परिणाम मलीन करै है। बहुरि केते हँसतुल्य श्रोता हैं जैसैं हंस जलदुग्धकाभेदकरि दुग्ध ग्रहण करै तैसैं निःसारछांड़ि आत्महित ग्रहण करै हैं। बहुरि केतेश्रोता सूवातुल्य हैं जिनकूं रामबुलावो तो राम बोलैं अर अन्य सिखावो तो अन्य बोलै जाकूं रामका हू ज्ञान नाहीं अर रहीमका हू ज्ञान नाहीं तैसैं पापपुण्यका विचाररहित जो पढ़ावो सो ही ग्रहणकरैं विचाररहित आपनास्वरूप परस्वरूपका ज्ञानरहित सूवापक्षीसमान श्रोता होय हैं। बहुरि केतेक मार्जारसमान श्रोता हैं जैसैं मार्जार सूता हू अपना शिकारकी तरफ जाग्रित रहै है तैसैं कोऊ श्रोता अपनाविषयकषाय वाणीमैं छलग्रहण करता तिष्टै है। बहुरि कोऊ बुगला जातिका श्रोता ध्यानीसा बन्या रहै अपना विषयकषायकूं ग्रहण करै है। बहुरि बहुरि कोऊ डांससमान श्रोता होय है वक्ताकूं वारंवार बाधा उपजावै है। बहुरि कोऊ बकराजातका श्रोता जैसैं बकराकूं अतर फुलेल सुगंध पान करावतें हू दुर्गंध ही प्रगट करै है तैसैं उज्ज्वलधर्म श्रवण करकै हू पापही उगलै है। बहुरि कोऊ जलौकासमान श्रोता है जैसे जोककूं स्तनऊपर लगावै तो हू मलिनरुधिर ही ग्रहण करै। कोऊ फूटाघटसमान श्रोता है धर्मश्रवणकरता हू चित्तमैं लेशमात्र भी धारण नाहीं करै है। कोऊ सर्प्पसमान श्रोता हैं जो दुग्धमिश्रीकूं पान करावतै हू प्रबलजहर वधै है। कोऊ गायसमान उत्तमश्रोता है जो तृणभक्षणकरि दुग्ध दे है। बहुरि कोऊ पाषाणकी

शिलासमान जाकूं बहुत धर्मोपदेशदेते हू हृदयमैं प्रवेश नाहीं करै है। कोऊ कसोटीसमान श्रोता परीक्षाप्रधानी हैं कोऊ ताखड़ीकी डांडी समान घाटबाध जानै हैं। ऐसे श्रोतानिका उत्तम मध्यम अधम अनेकजाति हैं जाका जैसा स्वभाव है तैसा धर्मका उपदेश परिणमैं है ऐसैं धर्मोपदेश नाम स्वाध्यायका प्रकरणमैं वक्ताश्रोताका लक्षण कह्या है। ऐसे पंचप्रकार स्वाध्याय वर्णन करी। स्वाध्याय करनेतैं बुद्धि तो अतिशयवान होय है अभिप्राय उज्ज्वल होय है जिनधर्मकी स्थिति दृढ़ होय है संशयका अभाव होय है परवादीकी शंकाको अभाव होय है परमधर्मानुराग होय है तपकी वृद्धि होय है आचारकी उज्ज्वलता होय है अतीचारको अभाव होय पापक्रियाका परिहार होय कुधर्ममैं रागका अभाव होय है परमेष्ठीमैं अतिशयरूप भक्ति होय सम्यग्दर्शन प्रकट होय है संसारदेहभोगनितैं विरागता होय कषायांकी मंदता होय दयाभावकी वृद्धि होय शुभध्यान होय आर्तरौद्रको अभाव होय जगतके मान्य होय उज्ज्वल यश प्रकट होय दुर्गतिका अभाव होय स्वर्गके उत्तम सुख तथा निर्वाणका अतींद्रियसुखकी प्राप्ति होय इत्यादि अनेकगुणनिका उत्पन्न करनेवाला जानि वीतरागसर्वज्ञका प्रकाश्या आगमका अभ्यास-विना मनुष्यजन्म व्यतीत मति करो। ऐसे स्वाध्यायनामा अंतरंगतपका पांचप्रकार स्वरूप कह्या।

अब कायोत्सर्ग नाम तपका स्वरूप कहिये है—जो वाह्यअभ्यंतर उपाधिको त्याग सो कायोत्सर्ग है वाह्य जो शरीरधनधान्यादिकको त्याग सो वाह्यउपाधित्याग है अर अभ्यंतरमिथ्यात्व क्रोध मान माया लोभ हास्य रति अरति शोक भय जुगुप्सा वेद परिणामनिका अभाव सो अभ्यंतर उपाधित्याग है। वहुरि वाह्यत्यागमैं आहारादिकका हू त्याग है संन्यासका अवसरमैं आयुकी पूर्णता होय तहां यावज्जीव त्याग है सो आगै क्रमतैं सल्लेखनामैं वर्णन करसी। तातैं इहां विशेष नाहीं लिख्या है।

अब ध्यान नामा तप छठा है ताकूं वर्णन करिये है—सो याका ऐसा स्वरूप जानना जो एक-पदार्थकै सन्मुख चिंतवनका रुकना सो ध्यान है सो ध्यान उत्तमसंहननवालेकै अंतर्मुहूर्त रहै है।

देहमैं धनमैं राज्यमैं ऐश्वर्यमैं महल मकान नगर कुटुम्बनिमैं है। याकी लार हमारी घटी, हमारी बढ़ी, हमारा सर्वस्व पूरा हुआ, मैं नीचा हुआ, मैं ऊंचा हुआ, मैं मरा, मैं जीया, हमारा तिरस्कार हुआ, हमारा सर्वस्व गया इत्यादिक परवस्तुमैं अपना संकल्प करि महा आर्त्तध्यान रौद्रध्यान करि दुर्गतिको पाय संसार परिभ्रमण करै है। बहुरि मिथ्यादृष्टि जीव किंचित् जिनधर्ममैं अधिकार पाय अर नवीन नवीन अपना परिणाममैं युक्ति बनाय लोकनिकै भ्रम उपजाय आप पांच आदम्यांमैं महान् ज्ञानीपनाका अभिमानकरि सूत्रविरुद्ध अनेक कथनी करै है। कृतघ्न भया जिनसूत्रनिकी हू निंदा करै है। बहुज्ञानिनिकी निंदा करै है। दुष्ट अभिप्रायी पांच आदम्यांमैं मान्यता वा पक्षपात ग्रहण करि निराधार रहित हुआ हठग्राही आप थापी एकांती स्याद्वादरूप भगवानकी वाणीतैं पराङ्मुख हुआ कलह विसंवाद परकी निंदाहीकूं धर्म मानता तिष्टै है। तथा केतेक मिथ्यादृष्टि किंचित् मात्र बाह्यत्याग ग्रहण करकै तथा स्नानकरि भोजन करते तथा अन्य देवादिकी वंदनाका त्यागकूं कृत्यकृत्य मानता जगतके जीवनकी निंदा करि आपकूं प्रशंसा योग्य मानै है अर अन्यायतैं आजीविका अर हिंसादिकके आरंभमैं निपुण होय अन्यधर्मीनिके छिद्र हेरते फिरै है। तथा निर्दोष पुरुषनिके दोष विख्यात करि मदमैं छके फिरै है आपकूं ऊंचा मानै है अन्यकूं अज्ञानी भ्रष्ट मानै है पापिष्ठ आपकी प्रशंसा कराय फूलो फूलो फिरै है अपना स्वरूपकी शुद्धताकूं नाहीं देखता नाना चेष्टा करै है भोले जीवनिकूं मिथ्या उपदेश देय एकांतके हठकूं ग्रहण करावे है। अर कुगुरु कुदेवनिकूं नमस्कारके त्याग करनेतैं अर अन्य देवनिकी निंदा करके अर सभामैं बैठ मिथ्या भेषधारीनिकी निंदा करकै ही आपकूं सम्यग्दृष्टि मानै है। तथा लोग हमकूं दृढ़ श्रद्धानी धर्मात्मा मानैंगे ऐसा अनंतानुबंधीमानके उदयतैं परकी निंदा करनेतैं ही आपकूं उच्च जानतैं जगतकूं अधर्मी मानै है जातैं कुदेव कुगुरुकूं नमस्कार तो समस्त तिर्यंच भी नाहीं करै हैं अर नारकी नाहीं करै हैं। भोगभूमिके कुभोगभूमिके हू नमस्कार नाहीं करै हैं अर समस्त देवता हू नाहीं पूजै हैं। नमस्कार पूजा नाहीं करनेतैं ही सम्यग्दृष्टि होय तो समस्त नारकी मनुष्य तिर्यंचादिक सम्यग्दृष्टि होय जाय सो है नाहीं। बहुरि जगतके

समस्त मिथ्यादृष्टि मनुष्य देवादिकनिकी निंदा करनेतैं ही सम्यक्त्व नाहीं होयगा। जगतकी निंदा करनेवाला अर पापीनतैं वैर करनेवाला तो कुरीतिहीका पात्र होयगा। जातैं मिथ्याभाव तो जीवनिके अनादिका है सम्यग्दृष्टि तो इनकी हू करुणा करै अर समस्तमैं साम्यभाव ही करै है। यातैं सम्यग्दर्शन तो आपापरका सत्य श्रद्धान ज्ञान विनय सहित स्याद्वादरूप परमागमके सेवनतैं ही होयगा।

इति श्रीस्वामीसमंतभद्राचार्यविरचित रत्नकरंडश्रावकाचार्यके सूत्रनिकी देशभाषामयवचनिकाविषै सम्यग्दर्शनका स्वरूपवर्णन नामवाला प्रथम अधिकार समाप्त भया ॥१॥

## अब सम्यग्ज्ञानरूप धर्मकूं प्रगट करनेकूं सूत्र कहै हैं—

[। आर्या छन्द। ]

अन्यूनमनतिरिक्तं याथातथ्यं विना च विपरीतात्। निस्सन्देहं वेद यदाहुस्तज्ज्ञानमागमिन. ॥ ४२ ॥

अर्थ—आगमके जाननेवाले श्रीगणधर देव तथा श्रुतकेवली हैं ते ताकूं ज्ञान कहै हैं जो वस्तुका स्वरूपकूं परिपूर्ण जानै न्यून नाहीं जानै अर वस्तुका स्वरूप जैसा है तातैं अधिक नाहीं जानै अर जैसा वस्तुका सत्यार्थस्वरूप है तैसा ही जानै अर विपरीतपनाकरि रहित जानै अर संशयरहित जानै ताहि भगवान ज्ञान कहै हैं। इहां सम्यग्ज्ञानका स्वरूप कह्या है, सो जो वस्तुका स्वरूपकूं न्यून जानै सो मिथ्याज्ञान है। जैसैं आत्माका स्वभाव तो अनंतज्ञानस्वरूप है अर आत्माकूं इंद्रियजनित मतिज्ञानमात्र ही जानै सो न्यूनस्वरूप जाननैतैं मिथ्याज्ञान भया। अर वस्तुके स्वरूपकूं अधिक जानै सो हू मिथ्याज्ञान है। जैसैं आत्माका स्वभाव तो ज्ञान दर्शन सुख सत्ता अमूर्त्तीक है ताकूं ज्ञान दर्शन सुख सत्ता अमूर्त भी जानना अर पुद्गलके गुणरूप स्पर्श गंध वर्ण रस मूर्तीक हू जानना सो अधिक जाननैतैं मिथ्याज्ञान है। अर सीपकूं सुपेद अर चिलकता देख वामैं रूपाका ज्ञान होना सो विपरीतज्ञान हू मिथ्याज्ञान है। अर यह सीप है कि रूपो है ऐसैं दोउमैं संशयरूप एकका निश्चयरहित जानना सो संशयज्ञान है सो हू मिथ्याज्ञान है अर जो

वस्तुका जैसा स्वरूप है तैसैं जानना सो सम्यग्ज्ञान है अथवा जैसैं सोलाकूं पांचगुणा करिये तो अस्सी होय ताकूं अठहत्तर जानै सो न्यून ज्ञान भया अर अस्सीका वियासी जानिये सो अधिकका जानना भया अर अस्सी होय ताकूं सोलह जानना वा पांच जानना सो विपरीतज्ञान भया अर सोलहकूं पांचगुणा किये अस्सी भये कि अठहत्तर भये ऐसा संदेहरूप ज्ञान सो संशयज्ञान है। ऐसैं न्यून जानना तथा अधिक जानना तथा विपरीत तथा संशयरूप जानना ऐसैं चारप्रकारका मिथ्याज्ञान है अर जो वस्तुका स्वरूपकूं न्यून नाहीं जानै अधिक नाहीं जानै विपरीत ( अंवली ) नाहीं जानै संशयरूप नाहीं जानै जैसा स्वरूप है तैसा संशयरहित जानै ताहि सम्यग्ज्ञान कहिये है। अब सम्यग्ज्ञान है सो प्रथमानुयोगकूं जानै है ऐसा सूत्र कहे हैं—

प्रथमानुयोगमर्थाख्यानं चरितं पुराणमपि पुण्यं। वोधिसमाधिनिधानं वोधति बोधः समीचिनिः ॥४३॥

अर्थ-सम्यग्ज्ञान है सो प्रथमानुयोगनै जानै है, कैसाक है प्रथमानुयोग-अर्थ जे धर्म अर्थ काम मोक्ष रूप चार पुरुषार्थ तिनका है कथन जामें बहुरि चरित कहिये एक पुरुषके आश्रय है कथा जामें, बहुरि त्रिषष्ठिशलाका पुरुषनिकी कथनीका संवंधका प्ररूपक यातैं पुराण है। बहुरि बोधिसमाधिको निधान है सो सम्यग्दर्शनादिक नाहीं प्राप्त भए तिनकी प्राप्ति होना सो वोधि है अर प्राप्ति भए जे सम्यग्दर्शनादिकनकी जो परिपूर्णता सो समाधि है। सो यो प्रथमानुयोग रत्नत्रयकी प्राप्तिको अर परिपूर्णताको निधान है उत्पत्तिको स्थान है अर पुण्य होनेका कारण है तातैं पुण्य है। ऐसा प्रथमानुयोगकूं सम्यग्ज्ञान ही जानै है। भावार्थ—जामें धर्मका कथन अर धर्मका फलरूप कहे जे धन संपदा रूप अर्थ काम जो पंच इंद्रियनिका विषय अर संसारतैं छूटनेरूप मोक्ष ताका कथन है अर एक पुरुषका आचरणका है कथन जामें ऐसा चरित्ररूप है। अर त्रिषष्ठिशलाका पुरुषनिका है वर्णन जामें तातैं पुराणरूप है। अर वक्ता श्रोतानिके पुण्यके उपजावनेका कारण है तातैं पुण्यरूप है। अर चार आराधनाकी प्राप्ति होनेका अर चार आराधनाकी पूर्णता करनेका निधान है ऐसा प्रथमानुयोगकूं सम्यग्ज्ञान ही जानै है। अब करणानुयोगका जाननेवाला हू सम्यग्ज्ञान है ऐसा सूत्र कहे हैं—

लोकालोकविभक्तेर्युगपरिवृत्तेश्चतुर्गतीनां च। आदर्शमिव तथामतिरवैति करणानुयोगं च ॥ ४४ ॥

अर्थ—तैसैं ही मति कहिये सम्यग्ज्ञान जो है सो करणानुयोग जो है ताहि जानै है। कैसाक है करणानुयोग लोक अर अलोकके विभागको अर उत्सर्पिणीके छह काल अर अवसर्पिणीके षटकालके परिवर्तन कहिये पलटनेका अर चार गतिनिके परिभ्रमणका आदर्शमिव कहिये दर्पणवत् दिखावनेवाला है। भावार्थ—जामैं षटद्रव्यका समुदायरूप तो लोक अर केवल आकाश द्रव्य ही सो अलोक अपने गुणपर्यायनिसहित प्रतिबिंबित होय रहे हैं। अर छहूकालके निमित्ततैं जैसे जैसे जीवपुद्गलनिकी परणति है ते प्रतिबिंबरूप होय जामैं झलकै हैं अर जामें चार गतिनिका स्वरूप प्रगट दिपै है सो दर्पण समान करणानुयोग है। तिनै यथावत् सम्यग्ज्ञान ही जानै है। अब चरणानुयोगका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

गृहमेध्यनगाराणां चारित्रोत्पत्तिवृद्धिरक्षाङ्गम्। चरणानुयोगसमयं सम्यग्ज्ञानं विजानाति ॥४५॥

अर्थ—गृहमें आसक्त है बुद्धि जिनकी ऐसे गृहस्थी अर गृहतैं विरक्त होय गृहका त्यागी ऐसा अनगार कहिये यति तिनकै चारित्र जो सम्यक् आचरण ताकी उत्पत्ति अर वृद्धि अर रक्षा इनकी अंग कहिये कारण ऐसा चरणानुयोग सिद्धांत ताहि सम्यग्ज्ञान ही जानै है। भावार्थ—मुनिका अर गृहस्थका जो निर्दोष आचरण ताकी उत्पत्तिका अर दिन दिन वृद्धि होनेका अर धारण किया तिनकी रक्षाका कारण चरणानुयोगरूप ज्ञान ही है। अब द्रव्यानुयोगका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

जीवाजीवसुतत्त्वे पुण्यापुण्ये च बन्धमोक्षौ च। द्रव्यानुयोगदीपः श्रुतविद्यालोकमातनुते ॥४६॥

अर्थ—यो द्रव्यानुयोग नाम दीपक है सो जीव अर अजीव ये दोय जे निर्बाध तत्व तिननै अर पुण्य पापनै अर बंध मोक्ष जे हैं तिननै भावश्रुतज्ञानरूप प्रकाश होय जैसैं होय तैसैं विस्तारता है। भावार्थ—द्रव्यानुयोगनामा दीपक ऐसा है जो बाधारहित जीव अजीवका स्वरूपकूं अर पुण्यपापकूं अर कर्मके बंधकूं अर कर्मतैं छूट जानेकूं आत्मामें उद्योत हो जाय तैसैं विस्तार करि दिखावै है। ऐसैं चार अनुयोगरूप श्रुतज्ञानका स्वरूप वर्णन किया। ज्ञानके बीस भेद अर अंग तथा पूर्वरूप वर्णन किये ग्रंथ बहुत हो जाय।

इति श्रीस्वामीसमंतभद्राचार्यविरचित रत्नकरंडश्रावकाचारके मूल सूत्रनिकी देशभाषामय वचनिका विषै
सम्यग्ज्ञानका स्वरूप वर्णन करनेवाला द्वितीय अधिकार समाप्त भया ॥२॥

अब सम्यक्चारित्रनामा तृतीय अधिकारकूं वर्णन करते चारित्रस्वरूप धर्मके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

मोहतिमिरापहरणे दर्शनलाभादवाप्तसंज्ञानः। रागद्वेषनिवृत्त्यै चरणं प्रतिपद्यते साधुः ॥४७॥

अर्थ—दर्शनमोहरूप तिमिरको दूर होते संते सम्यग्दर्शनका लाभतैं प्राप्त भया है सम्यग्ज्ञान जाकै ऐसा साधु जो निकटभव्य है सो रागद्वेषका अभावके अर्थि चारित्र है ताहि अङ्गीकार करै है। भावार्थ—इस संसारी जीवकै अनादिकालका दर्शनमोहनीयका उदयरूप तिमिरकरि ज्ञाननेत्र ढकि रह्या है तिस मोह तिमिरतैं अपना अर परका भेदविज्ञानरहित हुआ चारों गतिनमें पर्यायहीकूं आपा जानता अनन्तकालतैं भ्रमण करै है। कोऊ जीवकै करणलब्धादिक सामग्रीतैं दर्शनमोहका उपशमतैं तथा क्षयतैं तथा क्षयोपशमतैं सम्यग्दर्शन होय है तदि मिथ्यात्वका अभावतैं ज्ञान हू सम्यक्पनाकूं प्राप्त होय है तदि कोऊ सम्यग्ज्ञानी रागद्वेषका अभावके अर्थि चारित्र अङ्गीकार करै। अब रागद्वेषका अभावतैं ही हिंसादिकका अभाव होनेका नियमके अर्थि सूत्र कहै हैं—

रागद्वेषनिवृत्तेर्हिंसादिनिवर्तना कृता भवति। अनपेक्षितार्थवृत्तिः कः पुरुषः सेवते नृपतीन् ॥ ४८ ॥

अर्थ—रागद्वेषका अभावतैं हिंसादिक पंच पापनिकी निवृत्ति कहिए अभाव परिपूर्ण होय है। पंचपापनिका अभाव सो ही चारित्र है। अभिलाषरूप नाहीं है प्रयोजनकी प्राप्ति जाकै ऐसा कौन पुरुष राजानिनै सेवन करै? भावार्थ—जाकै अर्थ जो प्रयोजन तथा धनादिक फलके प्राप्त होनेकी अभिलाषा नाहीं ऐसा कौन पुरुष राजानिनै सेवन करै? नाहीं करै। राजानिकी महाकष्टरूप सेवा तो जाकै भोगनिकी चाह तथा धनकी तथा अभिमानादिककी अभिलाषा होय सो करै। जाकै कुछ अपेक्षा चाहना नाहीं सो राजाका सेवन नाहीं करै जाकै रागद्वेषका अभाव भया सो पुरुष हिंसादिक पंच पापनिमें प्रवृत्ति नाहीं करै। अब चारित्रका लक्षण रागद्वेषका अभाव कह्या सो इसहीका विशेष कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

हिंसानृतचौर्येभ्यो मैथुनसेवापरिग्रहाभ्यां च। पापप्रणालिकाभ्यो विरतिः संज्ञस्य चारित्रं ॥ ४९ ॥

अर्थ—हिंसा अनृत चौर्य मैथुनसेवन परिग्रह ये पाप आवनेके प्रनाला हैं इनतैं जो विरक्त होना सो सम्यग्ज्ञानीके चारित्र है। भावार्थ-निश्चय चारित्र तो वहिरंग समस्त प्रवृत्तितैं छूटे परमवीतरागताके प्रभावतैं परमसाम्यभावकूं प्राप्त होय अपना ज्ञायकभावरूप स्वभावमैं चर्या सो स्वरूपाचरण नामा सम्यक्चारित्र है तौ हू पंच पापनितैं विरक्त होय अंतरङ्ग वहिरङ्ग प्रवृत्तिकी उज्ज्वलतास्वरूप व्यवहार चारित्र विना निश्चयस्वरूप चारित्रकूं प्राप्त नाहीं होय है। तातैं हिंसादिक पंच पापनिका त्याग करना ही श्रेष्ठ है। पंच पापका त्याग करना ही चारित्र है। अव इस चारित्रकैं दोय प्रकारका कहनेकूं सूत्र कहै हैं।

सकल विकलं चरणं तत्सकलं सर्वसंगविरतानां। अनगाराणां विकलं सागाराणां ससंगानां ॥ ५० ॥

अर्थ—सो चारित्र समस्त अंतरंग परिग्रहतैं विरक्त जे अनगार कहिए ग्रह मठादि नियत स्थानरहित वन खंडादिकमें परम दयालु हुआ निरालंब विचरै ऐसे ज्ञानी मुनीश्वरनिकै सकलचारित्र है अर जे स्त्री पुत्र धनधान्यादिक परिग्रहसहित घरमें तिष्ठैं ते जिनवचनके श्रद्धानी न्यायमार्गकूं नाहीं उल्लंघन करिकैं पापतैं भयभीत ऐसे ज्ञानी ग्रहस्थीनिकै विकलचारित्र है। भावार्थ-ग्रहकुटुंवादिकके त्यागी अपने शरीरमें निर्ममत्व साधूनिकै सकलचारित्र होय है। ग्रहकुटुंवधनादिकसहित ग्रहस्थीनिके विकलचारित्र होय है। अव ग्रहस्थीनिकै विकलचारित्र कहनेकूं सूत्र कहै हैं।

गृहिणां त्रेधा तिष्ठत्यणुगुणशिक्षाव्रतात्मकं चरणं। पञ्चत्रिचतुर्भेदं त्रयं यथासंख्यमाख्यातं ॥५१॥

अर्थ—ग्रहस्थनिकै चारित्र है सो अणुव्रत गुणव्रत शिक्षाव्रतस्वरूप तीन प्रकारकरि तिष्ठै है। सो यो तीन प्रकार चरित्र है सो यथासंख्य पांच भेदरूप तीनभेदरूप च्यार भेदरूप परमागममें कह्या है। भावार्थ—जो ग्रहवास छोड़नेकूं समर्थ नाहीं ऐसा सम्यग्दृष्टि ग्रहमें तिष्ठता ही पंच प्रकार अणुव्रत तीन प्रकार गुणव्रत च्यार प्रकार शिक्षाव्रत धारण करि चारित्रकूं पालै है। अव पंच प्रकार अणुव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

प्राणातिपातवितथव्याहारस्तेयकाममूर्छाभ्य.। स्थुलेभ्यः पापेभ्यो व्युपरमणमणुव्रतं भवति ॥ ५२ ॥

अर्थ—प्राणनिका जो अतिपात कहिये वियोग करणा सो प्राणातिपात कहिये हिंसा अर वितथ अ-सत्य ऐसा व्यवहार कहिये वचन कहना सो वितथव्याहार कहिये असत्य वचन अर स्तेय कहिये चोरी और काम कहिये मैथुन अर मूर्छा कहिये परिग्रह ये पांच पाप हैं। इनमें स्थूलपापनितैं विरक्त होना सो अ-णुव्रत है। भावार्थ—मारनेका संकल्प करकैं जो त्रसकी हिंसाका त्याग सो स्थूलहिंसाका त्याग है बहुरि जिस वचन कर अन्य प्राणीका घात होजाय तथा धर्म बिगड़ जाय अन्यका अपवाद हो जाय कलह सं-क्लेश भयादिक प्रगट होजाय ऐसा वचनका क्रोध अभिमान लोभके वश होय कहनेका त्याग कर सो स्थूल असत्यका त्याग है। अर विना दिया अन्यके धनका लोभके वशतैं छलकरि ग्रहण करनेका त्याग सो स्थूल चोरीका त्याग है। बहुरि अपनी विवाही स्त्री विना समस्त अन्यस्त्रीनिमैं कामका अभिलाषका त्याग सो स्थूल कामत्याग है। बहुरि दशप्रकार परिग्रह परिमाण करि अधिक परिग्रहका त्याग सो स्थूल परिग्र-हका त्याग है। ऐसैं पाप आवनेके प्रनाले ये पांच हिंसादिक तिनका त्याग सो ही पंच अणुव्रत है। अब अहिंसा अणुव्रतका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहे हैं—

संकल्पात्कृतकारितमननाद्योगत्रयस्य चरसत्वान्। न हिनस्ति यत्तदाहुः स्थूलवधाद्विरमणं निपुणाः ॥ ५३ ॥

अर्थ—जो गृहस्थ मनवचनकायके कृतकारित अनुमोदनारूप संकल्पतैं वरवाणी द्विन्द्रियादिक त्रसप्रा-णीनका घात नाहीं करे ताही निपुण जे गणधर देव हैं ते स्थूलहिंसातैं-विरक्त कहे हैं। इहां ऐसा जानना जो गृहस्थ सम्यग्दर्शन संयुक्त दयावान हिंसातैं भयभीत होय त्यागके सम्मुख हुआ तो गृहस्थके एकेन्द्रिय जे पृथ्वीकायादिक तिनकी हिंसाका त्याग तो वन सकै नाहीं गृहका त्यागी योगीश्वरनिकै ही त्रसस्थावर दो-ऊनका हिंसाका त्याग बने अर प्रत्याख्यानावरणादिक कषायका उदयतैं गृहतैं ममता छूटी नाहीं तिस गृ-हस्थके त्रसजीवनका संकल्पीहिंसाके त्यागतैं भगवान अहिंसा अणुव्रत कह्या है। संकल्पीहिंसाका त्याग ऐ-से जानना—दयावान गृहस्थ अपने परिणामनिकर मारनेरूप संकल्पतैं तो त्रस जीवका घात करै नाहीं क-रावै नाहीं घात करनेका मनवचनकायतैं प्रशंसा करै नाहीं ऐसा परिणाम रहे। जो कोऊ दुष्ट वैर ईर्षादि-

ककरि आपकूं मार्या चाहै तथा आजीविका धनादिक हर्या चाहै तिसका भी घात करनेकूं नाहीं चाहै तथा कोऊ आपकूं बहुत धन देकर मरावै तो कीड़ीमात्रकूं मारनेका संकलपकरि कदाचित् नाहीं मारै। तथा एक जीव मारनेतैं अपना रोग आपदा दूर होय तो जीवनके लोभतैं त्रसजीवकूं नाहीं मारन करे। हिंसातैं अत्यंत भयभीत है तो हू गृहस्थके आरम्भमैं त्रसजीवनिका घात हुआ विना रहै नाहीं याहीतैं गृहस्थके मारनेका संकलपकरि त्रसको हिंसाका त्याग है अर आरम्भी हिंसाका त्याग करनेकूं समथ नाहीं है केवल आरम्भमैं यत्नाचारसहित दयाधर्मकूं नाहीं भूलता प्रवर्तै है क्योंकि गृहस्थके आरम्भ विना निर्वाह नाहीं। केते आरम्भ नित्य होय है चूल्हा बालना चाकी पीसना ओंखलीमें कूटना बुहारी देना जलका आरम्भ करना उपार्जन करना ये छह पापके कर्म तो नित्य ही हैं बहुरि केतेक और हू नित्य भी कदाचित् अन्य कारणतैं हू आरम्भ बहुत हैं अपने पुत्र पुत्रीका विवाह करना मकान बनाना लीपना धोवना झाड़ना होय ही। रात्री गमनादि आरम्भ करना धातुका पाषाणका काष्टका आरम्भ करना शय्या बिछावना उठाना पात्र पसारना समेटना जातिकूं जीमावना दीपकादिक जोवना इत्यादिक पापहीके कार्य हैं। तथा गाड़ी रथ ऊपरि चढ़ि चालना हस्थी घोड़ा ऊंट बलद इत्यादिक ऊपर चढ़ि चालना गाय भैंस इत्यादिक राखना तिनमें त्रस जीवका घात होय ही तथा जिन मन्दिर करावना दानका देना पूजन करना इनमें हू आरम्भ है तो कैसे त्रसहिंसाका त्याग होय ? ताका उत्तर करै हे,जो आपका परिणाम तो जीव मारनेका है नाहीं अर जीव मारने वास्ते आरम्भ करै नाहीं इस कार्य करनेमैं जीव मर जाय तो भला है ऐसा राग हू नाहीं आप तो जीव विराधनातैं भयभीत हुआ गृहचाराका कार्य करनेको आरंभ करै है। जीव मारनेके वास्ते नाहीं करै है। अपने परिणाममैं तो मेलता धरता उठता बैठता लेता देता जीवनिकी रक्षा करनेहीका संकलप करै हैं, मारनेका संकलप नाहीं करै, तिसके पापबंध कैसें होय ? जीव अपने आयुकर्मके आधीन उपजैं अर मरे हैं अपने हाथ नाहीं आप तो जेता आरम्भ करै तितना दयारूप हुआ यत्नाचार्यतैं करै यत्नाचारीके भगवानका परमागममें हिन्सा होते हू बन्ध होना नाहीं कह्या है। समस्त लोक जीवनिकरि भर्या है जीवनिके मरने जीवनिके आधीन अपना उपयोग विना हिन्सा अहिंसा

नाहीं है। अपने परिणामके आधीन हिंसा अर अहिंसा है। जातैं सिद्धान्तमें ऐसा कह्या है जो मुनिराज चार हस्त परमाण आगेको सोधता गमन करै है अर जो पगको उठाय धर्‍यो होय तहां जीव उछलकरि आय पड़ै अर जीव मर जाय तो मुनीश्वरनिकै किञ्चित हू बन्ध नाहीं होय है क्योंकि साधुके परिणामनिमें तो इर्यासमिति पालना चित्त-विषैं तिष्ठै था तातैं बंध नाहीं। आहार प्रासुक जानि देखि सोधि करिये है अर सूक्ष्म जीव आय पड़ै तो कौन जानैं? भगवान् केवलज्ञानी ही जाने। आप प्रमादी होय यत्नतैं देखे सोधे बिना भोजन करै तो दोषतैं लिपै। याहीतैं श्रावक प्रमादि छांड़ि बड़ो सावधानीतैं प्रवर्तन करता दोषकूं कैसैं प्राप्त होय? चूल्हाकूं दिनमें सोधि बुहारि ईंधन झड़काय यत्नतैं अग्नि जलावै है ऐसे ही चाकी ओखली भी सोधि झाड़ि अन्नकूं सोधि पीषण घोटणका आरम्भ करै है बीधा अन्नकूं नाहीं ग्रहण करै है। अर बुहारि हू दिवसमें देखि कोमल कूंची गूंज इत्यादिकतैं जीव विराधनाका भयसहित हुआ देवै हैं कजोड़ा बुहारै हैं तथा जलकूं दोहरा दृढ़ वस्त्रतैं छानि जतन पूर्वक वरतै है तथा द्रव्यका उपार्जन हू अपना कुलके योग्य सामर्थ्य सहायादिकके योग्य जैसैं यश अर धर्म नीति नाहीं बिगड़ै तैसैं यत्नतैं असि मसि कृषी विद्या वाणिज्य शिल्प इन षट् कर्मनिकरि करै हैं क्योंकि श्रावकका व्रत तो चारों वर्णोंमें होय है आपके उज्वल हिंसा रहित कर्मसूं आजीवका होती हो तो निंद्य कर्म करि संक्लेश कर्मकरि लोभादिकके वश होय पापरूप आजीवका करै नाहीं अर आपकूं अन्य आजीविकाको उपाय नाहीं दीखै तो घटायकरि पापतैं भयभीत हुआ न्यायतैं करै। क्षत्रिकुलका शस्त्र धारक होय तो दीन अनाथकी रक्षा करता दीन दुःखित निर्बलको घात नाहीं करै शस्त्र रहितकूं नाहीं मारै गिर पड्या ऊपरि घात नाहीं करै पीठ देया भाग जाय दीनता भाषै तिन ऊपरि घात नाहीं करै है अर धनके लूटनेको घात नाहीं करै अभिमानतैं वैरतैं घात नाहीं करै अपने ऊपर घात करता आवै ताकूं तथा दीननिकूं मारनेकूं आवै तिनकूं शस्त्रतैं रोकै जो शस्त्रतैं जीविका करता होय सो केवल स्वामिधर्मतैं तथा अनाथनिका स्वामीपना आपके होय सो शस्त्र धारण करै जाके शस्त्रसंबंधी सेवा नाहीं अर प्रजा-

का स्वामीपना नाहीं ताकै वृथा शस्त्र धारण नाहीं होय है। अर स्याही तैं आमद खरच लिखनेकी जीविका होय तो मायाचारादिक दोष रहित स्वामीके कार्यकूं यथावत् सही लिखता जीविका करै। और माली जाट इत्यादिक कुलमैं अन्य जीविका नाहीं होय तो कृषि जो खेती करि आजीविका करता हू दयाधर्मको छांडै नाहीं जो खेत पहली वहता आया होय तिसकूं परिमाण करि अधिकका त्यागी हुआ खेती करै है अधिक तृष्णा नाहीं करै यामें हू बहुत घटाय आपाकूं निंदता खेती करै है। बहुत जल सींचै है तो हू आप अनछाण्या जल एक चल्लू मात्र हू नाहीं पीवै है कोऊ आय बहुत धन भी देवै अर कहै तुम यहां धान्यके बहुत वृक्ष छेदो हो हमतैं एक मोहर लेय हमारे एक वृक्षको एक डाहली काट आवो तो लोभके वशि होय कदाचित् नाहीं छेदै है तथा खेतीमें बहुत जीव मरै हैं तो भी इसके जीव मारनेका अभिप्राय नाहीं केवल आजीविकाका अभिप्राय है कोऊ सौ मोहर देवै तो लोभके वशि होय अपना संकल्पतैं एक कीडी हू मारै नाहीं ऐसा व्रतमैं दृढ़ता है। अर उत्तम कुलवाला खेती करै नाहीं। बहुरि विद्याकरि आजीविका करै ऐसा ब्राह्मणादिक श्रावक हैं सो मिथ्यात्व भावका पुष्ट करनेवाला तथा हिंसाका प्रधानता लिये रागद्वेषका बधावनेवाला शास्त्रनिकूं त्याग करि उज्वलविद्या पढ़ावै सो ही दया है। बहुरि श्रावक है सो बहुत हिंसाके खोटे वाणिज्य त्याग न्यायपूर्वक तीव्र लोभकूं त्याग आपकी निंदा करता संतोष सहित घटाय प्रमाणीक सांचसूं व्योहार करै दयाधर्मकूं नाहीं भूलता समस्त जीवनिकूं आप समान जानता वाणिज्य करै है। बहुरि शिल्पकर्म करनेवाला शूद्र हू श्रावकका व्रत ग्रहण करै है सो बहुत निंद्यकर्मनिकूं तो टालै ही अर टालवेकूं समर्थ नाहीं तामें बहुत हिंसा टालि दयारूप प्रवर्तै है संकल्पतैं याकूं मारना या जाणि घात नाहीं करै। अर मंदिर बनवाना पूजन करना दान देना इन कार्यनिमैं तो निरंतर बड़ा यत्नाचारतैं केवल दयाधर्मके निमित्त ही प्रवर्तन करै है। हिंसाका भाव काहेतैं होय जातैं पुरुषार्थसिद्ध्युपाय नामा ग्रंथमें श्रीअमृतचन्द्रस्वामी ऐसैं कह्या है—

यत्खलु कषाययोगात्प्राणानां द्रव्यभावरूपाणां। व्यपरोपणस्य करणंसुनिश्चिता भवति सा हिंसा ॥ ५४ ॥

अर्थ—जे कषायके संयोगतैं द्रव्यप्राण जे इंद्रिय कायादिक अर भावप्राण जे ज्ञानदर्शनादिक तिनके वियोग करवो सो निश्चितहिंसा होय है। भावार्थ—जो कषायके वशि होय परके द्रव्यप्राण भावप्राणनिको वियोग करवो सो निश्चितहिंसा होय है। कषायरहितकै प्राणीका मरणमात्रतैं हिंसा नाहीं होय है आप परजीवकै मारनेकी कषायसहित होय ताकैं हिंसा होय है।

अप्रादुर्भावः खलु रागादीनां भवत्यहिंसेति। तेषामेवोत्पत्तिर्हिंसेति जिनागमस्य संक्षेपः ॥ ५५ ॥

अर्थ—जो रागद्वेषादिको आत्माके नाहीं प्रगट होवो सो अहिंसा है अर आत्माके परिणाममें रागद्वेषादिकनिकी उत्पत्ति होय सो ही हिंसा है। जिनेंद्रभगवानके आगमका संक्षेप तो इस प्रकार है प्राणीनिका हिंसा होहू वा मत होहू जो परिणाम रागद्वेषादि कषायसहित होय सो ही अपना ज्ञानदर्शनादिरूप भावप्रप्राणनिका घात है सो ही आत्महिंसा है जाकै आत्महिंसा है ताकै परकी हिंसा भी होय ही है॥

युक्ताचरणस्य सतो रागाद्यावेशमन्तरेणापि। न हि भवति जातु हिंसा प्राणव्यपरोपणादेव ॥५६॥

अर्थ—योग्य आचरण करता सत्पुरुषकै रागद्वेषादि कषाय विना प्राणनिका घाततैं ही हिंसा कदाचित नाहीं होय है। भावार्थ—यत्नतैं दयासहित प्रवर्तन करता पुरुषकै जीवघात होतै हू हिंसाकृत बंध नाहीं होय है।

व्युत्थानावस्थायां रागादीनां वशप्रवृत्तायां। म्रियतां जीवो मा वा धावत्यग्रे ध्रुवं हिंसा ॥ ५७ ॥

अर्थ—रागद्वेषादिकनिके आधीन प्रवृत्त जे गमन आगमन उठना बैठना धरना मेलना ऐसे आरंभ तिनमें जीवनिका मरण होहू वा मत होहू हिंसा तो निश्चयतैं आगैं दौड़ती है। यत्नाचाररहित होय आरंभ करै है ताकै जीव अपने आयुके आधीन मरण करौ वा मत करौ आप तो अपने परिणामतैं निर्दय भया ताकै हिंसाकृत बंध आगैं आगैं दौड़ै है॥

यस्मात्सकषायः सन् हन्त्यात्मा प्रथममात्मनात्मानं। पश्चाज्जायेत न वा हिंसा प्राण्यन्तराणां तु ॥५८॥

अर्थ—जातैं आत्मा कषायसहित हुवो संतो प्रथम ही आप करिकै आपनै हनै है पाछैं अन्य प्राणीनि-

को हिंसा उत्पन्न होय वा नाहीं होय। जिस काल कषायसहित आत्मा भया तिस ही कालमें अपना ज्ञानानंद वीतरागस्वरूपका घात तो अवश्य करि हो चुका।

हिंसायामविरमणं हिंसापरिणमनमपि भवति हिंसा। तस्मात्प्रमत्तयोगे प्राणव्यपरोपणं नित्यं ॥ ५६ ॥

अर्थ—जातैं हिंसाके विषै विरक्त होय त्याग नाहीं करना सो भी हिंसा है अर हिंसामें प्रवर्तन है सो हू हिंसा है तातैं प्रमत्तयोगं होतैं प्राणनिका घात नित्य है। भावार्थ—अपना अर परका घात होनेकी सावधानीरहित प्रवर्तते जे मनवचनकायके योग सो प्रमत्तयोग है जहां प्रमत्तयोग है तहां सासती हिंसा है जो कोऊ हिंसा तो नाहीं करै परन्तु हिंसातैं विरक्त होय हिंसाका त्याग नाहीं करै सो सूते विलाव समान सदाकाल हिंसक ही है अर हिंसामें प्रवर्तन करै है सो हू हिंसक ही है। भावनितैं तो दोऊ हिंसक हैं बाह्यनिमित्त हिंसाका मिलो वा मति मिलो ॥

सूक्ष्मापि न खलु हिंसा परवस्तुनिबन्धना भवति पुंसः। हिंसायतननिवृत्तिः परिणामविशुद्धये तदपि कार्या ॥६०॥

अर्थ—अन्यवस्तु है कारण जाकूं ऐसी तो सूक्ष्म हू हिंसा नाहीं है जातैं पुरुषकै जो हिंसा होय है सो तो अपना परिणाममें हिंसा करनेका भाव होतैं हिंसा होय है। इहां कोऊ पूछै जो परद्रव्यके निमित्ततैं सूक्ष्महिंसा नाहीं होय है तो बाह्यवस्तुका त्याग व्रत संयम किसवास्तै करिये हैं? ताका उत्तर करै हैं। यद्यपि हिंसकपरिणाम होय तदि ही जीवकै हिंसा होय परंतु हिंसा होनेके स्थाननिमें प्रवर्तैगा ताकै हिंसाके परिणाम कैसैं नाहीं होयगा? तातैं परिणामकी विशुद्धताके अर्थि जहां हिंसा होय ऐसे खान पान ग्रहण आसन वचन चिंतवनादिक त्याग करने योग्य है।

निश्चयमबुद्ध्यमानो यो निश्चयतस्तमेव संश्रयते। नाशयति करणचरणं स बहिःकरणालसोबालः ॥ ६१ ॥

अर्थ—जो जीव निश्चयनयका विषय रागादि कषायरहित शुद्धात्मा रूपकूं तो जाण्या नाहीं अर मेरा भाव कषायरहित है मेरे समस्त प्रवृत्तिमें हिंसा नाहीं ऐसा वृथा निश्चय करता निरर्गल यथेच्छ प्रवर्तै है सो अज्ञानी बाह्य आचरणमें प्रवृत्ति छांडि प्रमादी हुआ करणचरणरूप चारित्रका नाश करै है। भावार्थ-

जाका परिणाम रागद्वेषरहित भया ते अयोग्य भोजन पान धन परिग्रह आरम्भादिकमें कसैं प्रवर्तन करैगा जो हिंसासूं विरक्त है सो हिंसा होनेके कारण दूरहीतैं छांडैगा। अब और हू पुरुषार्थसिद्ध्युपायमें कहै हैं कोऊ तो हिंसा नाहीं करकैं अर हिंसाके फलका भोगनेवाला होय है जैसैं आयुध बनावनेवाले लुहार सिकलीगर हिंसा नाहीं करिकैं हू तंदुलमच्छकी ज्यों हिंसाके फलकूं प्राप्त होय हैं। अर कोऊ दयावान होय यत्नाचारतैं जिनमंदिर बनावनेवाला बाह्यहिंसा होते हू हिंसाके फलकूं नाहीं प्राप्त होय है। कोऊ पुरुष हिंसा तो अल्प करी परन्तु तीव्र रागद्वेषरूप भावनितैं करने करि उदयकालमें महाफलकूं प्राप्त होय है। बहुरि केई अनेक पुरुष मिलि करकैं एक हिंसा करी परन्तु उस हिंसा करनेमें कोऊ तो तीव्र रागवाला सो तीव्रफलकूं प्राप्त होय है मन्दकषायवाला मन्दफलकूं प्राप्त होय है मध्यमकषायवाला मध्यमफलकूं प्राप्त होय है। तथा कोऊ पुरुषकैं हिंसा तो पाछैं काल पाय बनेगी परंतु हिंसाके परिणाम करनेतैं हिंसाको फल पहले हो उदय होय रस दे है। अर कोऊकै हिंसा करतां करतां फल है जैसैं कोऊ पुरुष अन्य कोऊकूं मारण करै तिस कालमें ही उसका प्रहारतैं आपहू मारया जाय है। कोऊकै पूर्वे करी पाछैं फलै है। कोऊ हिंसाका आरम्भ तो किया अर पाछैं बन सकी नाहीं सो हू फलै है जैसैं कोऊका घात करनेका उपाय किया सो तो बणि सक्या नाहीं अर पाछैं वै जानि आपका घात किया हो। बहुरि हिंसा तो एक करै अर हिंसाका फल अनेक पुरुष भोगैं जैसैं चोर तथा हत्याराकूं मारै वा सूली चढ़ावै तो एक चांडाल अर देखनेवाले अनेक तमासगीर पापबंधकरि फल भोगवै हैं। अर संग्राममें हिंसा करनेवाला तो बहुत योद्धा होय हैं अर फल भोगनेवाला एक राजा होय है तातैं करै एक अर भोगै अनेक हैं अर करै अनेक भोगै एक है। बहुरि कोऊकै तो हिंसा करी हुई हिंसाहीका फल देहै अर अन्यकै सो ही हिंसा अहिंसाका फल देहै जैसैं कोऊ पुरुष किसी जीवकी रक्षा करनेकूं यत्न करै छा यत्न करते हू उसका मरण होय गया तो वाकै रक्षाका अभिप्रायतैं अहिंसाहीका फल होयगा अर कोऊका परिणाम तो किसीके मारनेका था आपदाकूं प्राप्त करनेका था अर उसका पुण्यका उदयतैं आपदा हू नाहीं भई अर मरण हू नाहीं

भया अनेक लाभ भया तो मारनेके अर्थीकौं तो पापहीका बंध होय है। अर कोऊका परिणाम किसीकूं दुःख देनेका नाहीं था सुख देनेका वा रक्षा करनेका था अर उसके दुःख हो गया वा मरण हो गया तो सुख देनेका परिणामकरि वाकै पुण्यबंध ही होयगा। इसप्रकार अनेक भंगनिकरि गहन यो जिनेन्द्रका मार्ग है यामें एकांती मिथ्यादृष्टिनिका पार होना अतिकष्टतैं हू नाहीं होय। अनेकांतके प्रभावतैं नयसमूहके जाननेवाला गुरु ही शरण है। यो जिनेन्द्रभगवानको नयचक्र तीक्ष्णधाराकूं धारण करता एकांती दुष्टआग्रहसहित मिथ्यादृष्टिनिका मिथ्यायुक्तिनिकी हजारां खण्ड करनेवाला है। यातैं भो ज्ञानीजन हो! भगवान वीतरागकी आज्ञातैं प्रथम ही हिंसा होने योग्य जे जीवनिके स्थान इंद्रियकायादिक जीवनिके कुलकोड तिनकूं जानो। बहुरि हिंसा करनेवाला भाव ताकूं जानो। बहुरि हिंसाका स्वरूप कहा है ताकूं जानो। बहुरि हिंसाका फलकूं जानो। ऐसें हिंस्य हिंसक हिंसा हिंसाका फल इन चारकूं यत्नतैं जानि करिके पाछैं देशकाल सहाय अपना परिणाम अर निर्वाह होना जानि अपनी शक्तिकूं नाहीं छिपाय गृहस्थपणामें हू अपने पदके योग्य हिंसाका त्याग हो करो तथा त्रसजीवनिकी संकल्पी हिंसाका तो त्याग करो अर समस्त आरम्भमें दयावान हुआ यत्नाचारतैं प्रवर्तन करो अर पंचस्थावरनिका आरम्भमें घटाय करि दयावान होय प्रवर्तो। ऐसैं अहिंसा अणुव्रतका स्वरूप कह्या अब अहिंसाणुव्रतका पंच अतीचार जनावनेकूं सूत्र कहै हैं—

छेदनबंधनपीडनमतिभारारोपणं व्यतीचाराः। आहारवारणापि च स्थूलवधाद्व्युपरतेः पंच ॥ ६३ ॥

अर्थ—ये स्थूलहिंसाका त्याग नामक व्रतके पंच अतीचार हैं ते गृहस्थके त्यागने योग्य हैं। छेदन कहिये अन्य मनुष्यतिर्यंचनिके कर्ण नासिका ओष्ठादिक अंगनिका छेदना सो छेदन नाम अतीचार है॥१॥ अर मनुष्यनिकूं बंधनादिककरि बांधना तथा बंदीगृहमें रोकना तथा तीर्यञ्चनिकूं दृढ़वन्धनकरि बांधना पक्षीनिकूं पींजरेमें रोकना इत्यादिक बन्धन नाम अतीचार है॥ २ ॥ अर मनुष्यतिर्यञ्चनिकूं लात धमूका लाठी चाबुक आदिका घातकरि ताडना करना सो पीडन नाम अतीचार है ॥३॥ बहुरि मनुष्यतिर्यञ्च गाडा

गाड़ी इत्यादिक ऊपरि बहुत बोझका लादना सो अतिभारारोपण नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ अर मनुष्य-तिर्यञ्चनिको खावने पीवनेको रोकना सो अन्नपानका निराकरण नामा अतीचार है ॥ ५ ॥ ये पांच अतीचार स्थूलहिंसाका त्यागीकूं त्यागने योग्य है। अब सत्य नाम अणुव्रतके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

रत्न० श्रावं० १०४ स्थूलमलीकं न वदति न परान् वादयति सत्यमपि विपदे। यत्तद्वदन्ति सन्तः स्थूलमृषावादवैरमणं ॥ ६४ ॥

अर्थ—जो स्थूल असत्य नाहीं बोलै अर परकूं असत्य नाहीं बुलावै अर जिस वचनतैं आपकै अन्यकै आपदा आवै ऐसा सत्य हू नाहीं कहै ताहि सत्पुरुष स्थूलझूंठका त्याग कहै हैं। भावार्थ—सत्य अणुव्रतका धारक होय सो क्रोधमानमायालोभके वशीभूत होय ऐसा वचन नाही कहै जाकरि अन्यका घात होजाय अन्यका अपवाद होजाय अन्यकै कलंक चढि जाय सो वचन निंद्य है। जिस वचनतैं मिथ्याश्रद्धान होजाय तथा धर्मसूं छूटि जाय व्रत संयम त्यागतैं शिथिल होजाय श्रद्धा बिगड़ि जाय सो बचन नाहीं कहै तथा कलह विसंवाद पैदा हो जाय विषयानुराग बधि जाय महाआरंभमैं प्रवृत्ति हो जाय अन्यके आर्त्तध्यान प्रगट होजाय कामवेदना प्रगट होजाय परके लाभमैं अन्तराय होजाय परकी जीविका बिगड़ि जाय अपना परका अपयश होजाय ऐसा निंद्यवचन योग्य नाहीं तथा ऐसा सत्य वचन हू नाहीं कहै जाकरि आपको अन्यको बिगाड़ होजाय आपदा आजाय अनर्थ पैदा होजाय दुःख पैदा होजाय मर्म छेद्या जाय राजका दंड होजाय धनकी हानि होजाय ऐसा सत्यवचन हू झूठ ही है। बहुरि गालीके वचन भंडवचन नीचकुलवालेनिके बोलनेके वचन तथा मर्मछेदके वचन परके अपमानके वचन परके तिरस्कारके वचन अहंकारके वचनकूं कदाचित् नाहीं कहै। जिनसूत्रके अनुकूल तथा आपका परका हितरूप अर बहुत प्रलाप रहित प्रमाणीक संतोषका उपजानेवाला धर्मका उद्योत करनेवाला वचन कहै जातैं न्यायरूप आजीविका सधै अनीतिरहित होय ऐसे वचनको कहता गृहस्थके स्थूल असत्यका त्यागरूप द्वितीय अणुव्रत होय है। अब सत्याणुव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

परिवादरहोभ्याख्या पैशून्यं कूटलेखकरणं च न्यासापहारितपि च व्यतिक्रमाः पंच सत्यस्य ॥ ६५ ॥

अर्थ-इहां परिवाद तो मिथ्याउपदेश है जो स्वर्गमोक्षका कारण जो चारित्र तिस चारित्रकूं अन्यथा उपदेश करना सो परिवाद नाम अतीचार है ॥ १ ॥ अर कोऊ आपकूं छानी बात कही होय सो किसीकूं कह देना विख्यात करि देना तथा कोऊ स्त्रीपुरुषादिकनिका एकांतमें गुह्य चेष्टा देख करिकैं तथा गुह्यवचन श्रवण करि किसीकूं प्रगट करना सो रहोभ्याख्यान नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि अन्यका छिद्र जानि बिगाड़ि करानेके अर्थि कोऊकूं छिपकरि कह देना चुगली करना सो पैशून्यनाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि अन्यके विना कह्या तथा विना आचरण किया झूठा लिख देना जो इसने ऐसा कह्या है ऐसा आचरण किया है सो कूटलेखकरण नामा अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि कोऊ आपको धन सौंपि गया तथा वस्त्र आभरणादिक मेलि गया फिर संख्या भूलि अल्प मांगने आया ताकूं कहै तुम्हारा है सोही लेजावो सो न्यासापहारिता अतीचार है ॥५॥ ऐसैं स्थूल असत्यका त्याग नाम अणुव्रतके पांच अतीचार त्यागने योग्य हैं। इहां ऐसा विशेष जानना जो अनादितैं अनन्तकाल तो यो जीव निगोदमें ही बास किया फिर कदाचित् निगोदिमेंतैं निकसि करिकैं फिर पंच स्थावरनिमें असंख्यकाल परिभ्रमणकरि बहुरि निगोदमें अनन्तकाल बारंबार अनन्तानन्त परिवर्तन एकेन्द्रियमें किये तहां तो वचन पाया नाहीं जिह्वा इन्द्रिय ही नाहीं भई बहुरि द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय असैनी सैनी पंचेन्द्रियमें उपज्या तहां जिह्वा पाई तो अक्षरात्मक कहने सुननेरूप वचन नाहीं पाया। कदाचित् अनन्तानन्तकालमें मनुष्य जन्ममें वचन बोलनेकी शक्ति पाई तो नीच कुलनिमें अयोग्य वचन हिंसाके बचन असत्य वचन परकै अर आपकै संताप करनेवाला वचन बोलि महापापबंध करि दुर्गतिका पात्र भया अपने वचन करि अपना घातक भया। कदाचित् कोऊ पूर्वपुण्यके उदयकरि मनुष्यजन्म पाया है तो यामैं वचन बोलनेमें बड़ा यत्न करो। भोजनपान करना कामसेवन करना नेत्रनितैं देखना काननितैं श्रवण करना तो शूकर कूकर गधा कागलाकैं भी होय हैं क्योंकि आंख नाक कान जीभ कामेन्द्रिय ये तो समस्त ढोरनिके भी होय हैं। इस मनुष्यजन्ममें तो एक वचन ही सार है करामाति है जो इस बचनकूं बिगाड्या सो अपना समस्त जन्म बिगाड्या। बचनतैं ही जानि-

ये है यो पंडित है यो मूर्ख है यो धर्मात्मा है यो पापी है यो राजा है वा राजाका मंत्री है यो रंक है यो कुलीन है यो अकुलीन है यो हीणाचारी है यो उत्तमाचारी है यो संतोषी है यो तीव्रलोभी है यो धर्मवासनासहित है यो धर्मवासनारहित है यो मिथ्यादृष्टि है यो सम्यग्दृष्टि है यो संस्कृती है यो संस्कृत रहित है यो उत्तम संगतिको राजसभामें रह्यो हुवो है यो ग्राम्यजन गंवारनिमें रह्यो है यो लौकिकचतुर है यो लौकिकमूढ है यो हस्तकलासहित है यो कलाविज्ञानरहित है यो उद्यमी पुरुषार्थी है यो आलसी प्रमादी है यो शूर है यो कायर है यो दातार है यो कृपण है यो दयावान है यो निर्दय है यो दीन याचक है यो महंत है यो क्रोधी है यो क्षमावान है यो मदोद्धत है यो मदरहित है यो विनयवान है यो कपटी है यो निष्कपट है यो सरल है यो वक्र है इत्यादि क आत्माके गुणदोषादिक समस्त वचनद्वारे ही प्रगट होय है,यातें मनुष्य जन्म पावना सफल किया चाहो तो एक वचनहीकी उज्वलता करो। इस वचनहीतैं सत्यार्थ उपदेश करि भगवान अरहंत त्रैलोक्यकरि वंदनीक होय जगतको मोक्षमार्गमें प्रवर्तन कराया है वचनहीतैं अनेक जीवनिका मिथ्यात्वरागादिक मल दूरकरि अजर अमर अविनाशी पद दिया है। पंचपरमेष्ठीमें भी वचनकृत उपकारके प्रभावतैं प्रथम अरिहंतनिकूं ही नमस्कार किया है ज्ञानी वीतरागीके वचनकरि स्वर्ग नरकादिक तीन लोक प्रत्यक्षकी ज्यों दीखैं है। वचन हीकी सत्यताके प्रभावकरि पंचमकालमें धर्म प्रवर्तै है। अर उज्वल वचन विनयका वचन प्रियवचनरूप पुद्गलनि करि समस्त लोग भरया है मोल नाहीं लागै तथा किसीकूं जीकारो देनेमें अपना अंगमें दुःख नाहीं उपजै है जीभ तालु कण्ठ नाहीं भिदे है यातैं समस्त प्राणीनिके सुख उपजावे ऐसा प्रिय वचन ही कहो अर असत्यवचनके प्रभावकरि ही मिथ्यादेवनिकी आराधना तथा यज्ञादिक हिंसाके प्ररूपक वेदादिक ग्रन्थनिमें मांस भक्षणादिक कुकर्मनिमें प्रवृत्ति हू असत्य वचनतैं ही भई है तथा खोटे शास्त्रनिकी रचना नाना प्रकारके मिथ्यात्वरूप मत नरक तिर्यञ्चनिमें परिभ्रमण करानेवाला समस्त दुष्ट आचार इस असत्य वचनके प्रभावकरि ही प्रवर्तै है अर अयोग्यवचनतैं ही घर घरमें कलह विसंवाद परस्पर वैर परस्पर ताड़न मारन प्राणापहार क्रोधभय संतापभय अपमानादिक

देखिये है अर अप्रतीत अविश्वास खेदका कारण एक असत्य वचनहीकूं जानो। अर असत्यका प्रभावकरि परलोकमें नरकतिर्यंचगतिकूं प्राप्त होय अरु कुमानुषनिमें तथा नीच चाडाल चमार भील कषायी इत्यादिक कुलमें हू असत्य ही उपजावै तथा अनेक भवनिमें दरिद्री रोगी गूंगो बहरो हीण दीन असत्यका प्रभावतैं होय है तातैं समस्त दुःखका मूल एक असत्यवचन है सो शीघ्र ही त्याग करि एक सत्यवचन प्रियवचनहीमें प्रवृत्ति करो। तातैं तुम्हारावचन समस्तके आदरके योग्य अनेक देव मनुष्यनिके ऊपर आज्ञा करने योग्य होय तथा समस्तश्रुतका परिगामी श्रुतकेवलीपना गणधरपना सत्यहीका प्रभावतैं प्राप्त होय है यातैं असत्यका त्याग ही जीवका कल्याण है। बहुरि पुरुषार्थसिद्ध्युपायमें कहे हैं—

हेतौ प्रमत्तयोगे निर्दिष्टे सकलवितथवचनानां। हेयानुष्ठानादेरनुवदनं भवति नासत्य ॥ १०० ॥

भोगोपभोगसाधनमात्रं सावद्यमक्षमा मोक्तुं। ये तेऽपि शेषमनृतं समस्तमपि नित्यमेव मुञ्चंतु॥१०१॥

अर्थ—समस्त असत्यवचनको कारणप्रमत्तयोग भगवान कह्यो है कषायके आधीन होय जो वचन कहै है सो असत्य है यातैं कषाय विना देना मेलना धरना त्यागना ग्रहण करना इत्यादिका कहना सो असत्य नाहीं है अर जो गृहस्थ अपना भोग उपभोगका साधनमात्र सदोष वचन त्यागनेकूं समर्थ नाहीं हैं ते गृहस्थ अन्य निरर्थक पापबन्ध करनेवाला समस्त असत्यवचनकूं तो त्याग अवश्य ही करो। भावार्थ—अपना भोग उपभोगका साधनमात्र सदोषवचनका त्याग नाहीं होय सकै तो ताका त्याग करनेमें वड़ा उद्यम राखणा अर वृथा बहु आरम्भ बहुपरिग्रहका कारण दुर्ध्यानका कारण अन्यके आपकै संतापका कारण ऐसा सदोष निन्द्यवचनका तो त्याग अवश्य करना ही श्रेष्ठ है। ऐसैं स्थूलअसत्यका त्याग नामा दूजा अणुव्रतकूं कह्या है। अब स्थूलचोरीका त्याग नामा तीजा अणुव्रतकूं कहै हैं—

निहितं वा पतितं वा सुविस्मृतं वा परस्वमविसृष्टं। न हरति यन्न च दत्ते तदकृशचौर्यादुपारमणं ॥६६॥

अर्थ—जो किसी पुरुषका जमींमें गड्या हुआ धन होय वा कोऊ स्थानमें महल मन्दिर गृहादिकमैं स्थापन किया हुआ धन होय अथवा आपकूं अमानत सौंपि गया होय वा अपने मकानमें तथा परके

स्थानमें आपकूं नाहीं जनाया घर गया होय अथवा ग्राममें नगरमें वनमें बागमें पटकि गया होय अथवा आपको सौंपि भूलि गया होय वा हिसाब लेखामें चूक गया होय वा आपके स्थानमें भूलिकरि पटकि गया होय अथवा लेनेदेनेमें गिनतीमें विस्मरण हुआ पैसा रुपया मनोहर आभरण वस्त्रादिक बहुत वा अल्प द्रव्य बिना दिया नाहीं ग्रहण करै अर परका द्रव्य उठाय किसीकूं देवे भी नाहीं सो स्थूल चोरीका त्यागरूप अणुव्रत है। अर कार्तिकेयस्वामी ऐसैं कह्या है।

जो बहुमुल्लं वत्थुं अप्पमुल्लेण णेय गिण्हेदि। वीसरियं पि ण गिण्हेदि लाहे थूवेहि तूमेदि ॥६३५॥

अर्थ—जाके स्थूलचोरीका त्याग होय सो बहुत मोलकी वस्तु अल्पमोलमें नाहीं ग्रहण करै जैसैं कोऊ पुरुष आपको वस्तुको चौकसि करि बेचै तो सवारुपयामें बिक जाय अर आपकूं आय सौंपी जो इसकी कीमत होय सो आप देवो तो तहां सवारुपयाका वस्तुकूं प्रगट जानता लोभके वशि हो एक रुपयामें हू नाहीं लेवै। अन्यकी भूली हुई वस्तु ग्रहण नाहीं करै तथा ऐसा परिणाम नाहीं करै जो कोऊ निर्धन तथा अज्ञानीकी वस्तु हमारे थोड़े मोलमें आजाय तो भला है अर अल्प लाभहीमें बहुत संतोष राखै। भावार्थ—बनजके व्यवहारमें तथा सेवामें लाभ थोरा होय तो संतोष ही करै अधिकमें लालसा नाहीं करै तिसकै स्थूलचोरीका त्याग जानना। अब अचौर्य नामा अणुव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहे हैं।

चौरप्रयोगचौरार्थादानविलोपसदृशसन्मिश्राः। हीनाधिकविनिमानं पंचास्तेये व्यतीपाताः ॥६७॥

अर्थ—अचौर्य नाम अणुव्रतके ये पंच अतीचार हैं आप तो चोरी नाहीं करै परन्तु अन्यकूं प्रेरणा करै तथा चोरी करनेका प्रयोग ( उपाय ) बतावै सो चोरप्रयोग नामा अतीचार है ॥ १ ॥ अर चोरका ल्याया धनको ग्रहण करणा सो चौरार्थादान नामा दूसरा अतीचार है ॥ २ ॥ अर उचित न्यायतैं छांडि अन्यरीतितैं ग्रहण करना अथवा राजाकी आज्ञासूं जाका निषेध होय तिस कार्यका करना विलोप नामा अतीचार है ॥ ३ ॥ अर बहुत मोलकी वस्तुमें अल्पमोलकी वस्तु मिलाय चला देना सो सदृशसन्मिश्र नामा अतीचार है जैसैं घृतमें तेल मिलाय देणा शुद्धसुवर्णमें कृत्रिमसुवर्ण मिलाय देना सो सदृशसन्मिश्र है

॥ ४ ॥ बहुरि देनेके बांट ताखड़ी घाटि परिमाण राखना लेनेकूं वधती राखना सो ही नाधिकामानोन्यान नामा अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं स्थूल चोरीका त्याग नामा अणुव्रतके पंच अतीचार त्यागने योग्य हैं। इस चोरी समान जगतमें अपराध नाहीं है समस्त उच्चता कुलकर्म धर्मविनाश करनेवारी समस्त प्रतीति बड़ापनाका विध्वंस करनेवाली है अर चोरीका धन हू वेश्यासेवनमें परस्त्रीमें व्यसननिमें अभक्ष्यमें खरच होय है वा अन्य किसीमें रही जाय है संतोष नाहीं आवै है क्लेशित होय रहे है अर प्रगट होय तो राजा तीव्र दंड देहैं समस्त लोक मारे है हस्तनासिकाका छेदन सर्वस्वहरणादिक दण्ड यहां ही प्राप्त होय है परलोकमें नरकादिक कुयोनिनिमें परिभ्रमण होय है। अब स्थूल ब्रह्मचर्य नामा अणुव्रतका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

न च परदारान् गच्छति न परान् गमयति च पापभीतेर्यत्। सा परदारनिवृत्तिः स्वादारसंतोषनामापि ॥ ५८ ॥

अर्थ—जो पापका भयतैं परकी स्त्री प्रति आप नाहीं प्राप्त होय अर परकी स्त्री प्रति अन्य पुरुषनिनैं गमन नाहीं करावै सो स्वदारसंतोषनामधारक परस्त्रीका त्याग नामा चौथा अणुव्रत है। भावार्थ—जो अपने जाति कुलकी साखातैं विवाही स्त्री तिसविषै संतोष धारण करके तिसतैं अन्य समस्त स्त्री मात्रमें रागभावका त्यागी होय परस्त्री तथा वेश्या दासी तथा कुलटा तथा कन्या इत्यादिक स्त्रीनिमें विरागताको प्राप्त होय स्त्रीनिसूं रागभावकरि संगमवचनालाप अवलोकन स्पर्शनका त्याग करै ताकूं परस्त्रीका त्यागी कहिये तथा स्वदारसंतोषी हू कहिये है। अब स्वदारसंतोषव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

अन्यविवाहाकरणानङ्गक्रीडाविटत्वविपुलतृषाः। इत्वरिकागमनं चास्मरस्य पञ्च व्यतीचाराः ॥ ५९ ॥

अर्थ—ये अस्मर जो स्थूल ब्रह्मचर्य ताके पंच अतीचार हैं ते त्यागने योग्य हैं। अपने पुत्र पुत्री विना अन्यके पुत्रपुत्रीनिका विवाहकूं आ संमतात् कहिये आप रागी होय करवो सो अन्य विवाहकरण नाम अतीचार है ॥ १ ॥ अर कामके अंग छांडि अन्य अंगनितैं क्रीडा करिवो सो अनंगक्रीडा नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि भंडिमारूप पुरुषकूं स्त्रीका रूप स्वांगादिक बनाय मनवचनकायकी प्रवृत्ति सो विटत्व नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि कामकी अतितृष्णा कामकी तीव्रता सो अतितृष्णा नाम अतीचार है ॥ ४ ॥

बहुरि इत्वरिका जे व्यभिचारिणी स्त्री तिनके घर जावना व्यभिचारिणीकूं आपके घर बुलावना देन लेन रखना परस्पर बार्ता करना रूप श्रृंगार देखना सो इत्वरिकागमन नाम अतीचार है ॥५॥ ये स्थूल ब्रह्मचर्यव्रतके पांच अतीचार त्यागने योग्य हैं। जो देवनिकरि पूज्य यो ब्रह्मचर्यव्रत ताकी रक्षा किया चाहै सो अपनी विवाही स्त्री विना अन्य माता भगिनी पुत्री पुत्रबधूके नजीक हू एकांतस्थानमें नाहीं रहै अन्य स्त्रीका मुख नेत्रादिककूं अपना नेत्र जोड़ नाहीं देखै। शीलवंतपुरुषनिका नेत्र अन्यस्त्रीकूं देखत प्रमाण मुद्रित हो जाय हैं। अब परिग्रहपरिमाण नामा अणुव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

धनधान्यादिग्रन्थंपरिमायततोऽधिकेषु निस्पृहता। परिमितपरिग्रहः स्यादिच्छापरिमाणनामापि ॥७०॥

अर्थ—अपने परिणामनिमें जेतामें सन्तोष आजाय तितना धन धान्य द्विपद चतुष्पद गृहक्षेत्र वस्त्र आभरणादि परिग्रहका परिमाण करकैं अधिक परिग्रहमें निर्वांछकपनो सो परिमितपरिग्रह नाम व्रत है याहीकूं इच्छापरिमाण नाम कहिये है। बहुरि कोऊकै वर्तमानमैं परिग्रह अल्प है अर बांछा अधिक करि बहुत धनमें परिमाण करि मर्याद करै है सो हू धर्मबुद्धि है ब्रती है, परन्तु अन्यायतैं लेवाका त्याग दृढ़ राखै जैसैं कोऊकै परिग्रह तो सौ रुपयाका है परिमाण हजारका करै जो हजार सिवाय नाहीं ग्रहण करूं यो भी व्रत है परन्तु हजार अन्यायतैं नाहीं ग्रहण करूंगा ऐसा दृढ़ नियम करै जातैं परिग्रहका परिमाण बिना निरन्तर परिणाम अनेक वस्तुनिमें परिभ्रमण करै है। समस्त पापनिका मूलकारण परिग्रह है समस्त दुर्ध्यान याहीतैं होय है जातैं भगवान मूर्छाकूं परिग्रह कह्या है। बाह्यपरिग्रह अन्य वस्त्रमात्र तथा रहनेकूं कुटीमात्र नाहीं होतैं हू परवस्तुमें ममता (बांछा) करिसहित है सो परिग्रही ही है परमागममें अंतरङ्ग परिग्रह चौदह प्रकार कह्या है—मिथ्यात्व १ वेद २ राग ३ द्वेष ४ क्रोध ५ मान ६ माया ७ लोभ ८ हास्य ९ रति १० अरति ११ शोक १२ भय १३ जुगुप्सा १४। तहां मिथ्यात्व तो देहादिक परद्रव्यनिमें अनादिकालतैं ममतारूप परिणाम है यह देह है सो मैं हूं जाति मैं हू कुल मैं हूं इत्यादिक परपुद्गलनिमें आत्मबुद्धि अनादितैं लाग रही है सो मिथ्यात्व है तथा रागद्वेषभाव क्रोधादिकभाव मोहकर्मकरि किए भावनिमैं

आत्मपनाको संकल्प सो मिथ्यात्वपरिग्रह है। तथा कामतैं उपज्या विकारमें लीन हो जाना तथा राग द्वेष क्रोध मान माया लोभ हास्यादिक छह नोकषायनिमें आपा धारन सो अन्तरंग परिग्रह है जाकैं अंतरंग-परिग्रहका अभाव है ताकैं बाह्यपरिग्रहमें ममता नाहीं होय है समस्त अनीति परिग्रहकी ममतासूं करै है परिग्रहकी बांछातैं हिंसा करै झूठ बोलै ही चोरी करै ही कुशीलसेवन करै ही परिग्रहके वास्ते मरजाय अन्यकूं मारै महा क्रोध करै परिग्रहका प्रभावतैं महाअभिमान करै परिग्रहवास्ते अनेक मायाचार करै परिग्रहकी ममतातैं महालोभ करै बहुत आरंभ बहुत कषायको मूल परिग्रह ही है समस्त पापनितैं छूट्या चाहै सो परिग्रहतैं विरक्त होय है सो हो कार्तिकेयस्वामी कह्या है।

कोण वसो इत्थिजणे कस्स ण मयणेण खंडियं माणं। को इंदिएहिं ण जिओ को ण कसाएहि संतत्तो॥२८१॥
सो ण वसो इत्थिजणे सो ण जिओ इंदिएहिं मोहेण। जो ण य गिण्हदि गंथं अब्भंतरबाहिरं सव्वं॥२८२॥
जो लोहं णिहणित्ता सन्तोसरसायणेण सन्तुट्ठो। णिहणदि तिण्णा दुट्ठा मण्णंतो विणस्सरं सव्वं॥३३९॥
जो परिमाणं कुव्वदि धणधाणसुवण्णखित्तमाईणं। उवओगं जाणित्ता अणुव्वयं पंचमं तस्स॥३४०॥

अर्थ—इस जगतमें स्त्रीनिके वश कौन नाहीं है अर कामविकारनें कौनका मान खंडन नाहीं किया अर इंद्रियनिकरि कौन नाहीं जीत्या गया अर कषायनिकरि तप्तायमान कौन नाहीं है? समस्त संसारी जीव हैं ते स्त्रीनिके वश होय रहे हैं अर कामविकार समस्त संसारीनिका अभिमान खंडन करै है अर समस्त संसारी इन्द्रियनिके वश पराधीन होय रहे हैं अर चार प्रकार कषायनिका समस्त प्राणी दग्ध होय रहे हैं जो पुरुष अभ्यंतर अर बाह्य समस्त परिग्रहकूं ग्रहण नाहीं करै है सो हो स्त्रीनिके वश नाहीं सो हो इन्द्रियनिके आधीन नाहीं तिसहीकूं मोह नाहीं जीतै सो ही कामकरि नाहीं खंडन होय है सो ही कषायकरि दग्ध नाहीं होय है। जो पुरुष लाभको नष्टकरि संतोषरूप रसायणकरि आनंदित हुआ समस्त धन संपदादिकनिनैं विनाशीक मानि दुष्ट तृष्णाकूं आगामी बांछाकूं छांड़िकरि धन धान्य सुवर्ण क्षेत्र स्थानादिकनिको अपना अभिप्राय जानि परिणाम करै है जो इतना परिग्रहसूं मेरा निर्वाह करना अधिकमें मेरा

प्रवृत्ति करनेका त्याग है ऐसे पापरूप जानि वांछा छांडै ताकै परिग्रहपरिमाण नामा अणुव्रत होय है। बहुरि परमागममें परिग्रहका लक्षण मूर्छा कह्या है जीवकै जो परपदार्थनिमें ममता बुद्धि सो ही मूर्छा है जातैं पर वस्तुमें ऐसा अपना मानकरि राग है जो आत्माका मरण जीवन हित अहित योग्य अयोग्यके विचारमें अचेत होय रह्या है मोहकी उदीरणातैं म्हारो ऐसो परद्रव्यमें परिणाम सो ही मूर्छा है। मूर्छा हीकूं भगवान परिग्रह कह्या है याहीतैं बाह्यपरिग्रह अल्प होहु वा मति होहु समस्त परिग्रहरहित है तो हू मूर्छावान परिग्रही है सो ही कहै हैं।

बाहिरगथविहीणा दलिदमणुआ सहावदो हुंति। अब्भंतरगंथं पुण ण सक्कदे को वि छंडदु ॥ ३८७ ॥

अर्थ—बाह्य परिग्रह रहित तो दरिद्री मनुष्य स्वभावहीते होय है सो देखिये हो है हजारां लाखां मनुष्य ऐसे हैं जिनकूं जन्मलिये पीछे पीतल तांबा कांसाका पात्र मिलया हो नाहीं जे जन्मतैं घृत भक्षण किया नाहीं मोदकादिक खाया नाहीं पाग अंगरखी जामा कदे पहरह्या ही नाहीं स्त्री विवाही ही नाहीं कदे उदर भर भोजन मिल्या नाहीं सुवर्णादिक देख्या नाहीं समस्त जन्ममें दोय चार दिनके खावने योग्य अन्नमात्रका हू संग्रह हुआ नाहीं अन्य सुवर्णरूपादिकनिका तो दर्शन ही नाहीं पैसा रुपया एक भी जिनकूं कदे प्राप्त हुआ नाहीं रहनेकूं कुटीमात्र हू अपनी भई नाहीं ऐसैं अनेक मनुष्य देखिये हैं परन्तु अभ्यंतर ममता छोड़नेकूं कोऊ सामर्थ नाहीं तातैं मूर्छा ही परिग्रह है। यहां कोऊ पूछै जो मूर्छा ही परिग्रह है तो बाह्य धनधान्यवस्त्रादिक बाह्यवस्तुका संगमके परिग्रहपना नाहीं ठहरया ताकूं उत्तर करै हैं—ये बाह्यपरिग्रह अन्तरङ्गपरिग्रहके निमित्त हैं इन बाह्यपरिग्रहका देखना श्रवण करना चिन्तवन करना शीघ्र ही परिग्रहमें लालसा उपजावै है ममता उपजावै है अचेत करै है तातैं बहिरङ्गपरिग्रह मूर्छाका कारण त्यागने योग्य है अर अन्तरंग बहिरंग दोऊ प्रकार परिग्रहके ग्रहणकूं भगवान हिंसा कही है अर दोय प्रकारका परिग्रहका त्याग सो अहिंसा है ऐसैं परमागमके जाननेवाले कहै हैं। जातैं मिथ्यात्वकषायादिक अन्तरंगपरिग्रह तो हिंसाहीके दूजे पर्यायनाम हैं अर बाह्यपरिग्रहमें मूर्छा सो ही हिंसा है। बहुरि ये कृष्णा-

दिक लेश्याके अशुभपरिणाम हू परिग्रहमें रागकरि ही होय हैं क्योंकि परिणामनिकी शुद्धता मंदकषायकरि होय है कषायनिकी मंदता होय सो परिग्रहके अभावतैं होय अर महान आरंभ भी परिग्रहका अधिकतातैं ही होय है ऐसैं जानि समस्त परिग्रह छांड़नेका राग नाहीं घट्या तो परिग्रहमें उपयोग माफिक परिणाम करिकैं तो रहो। अर जो परिग्रह तो अल्प है अर अधिककी वांछा बनि रही है सो इस वांछातैं प्राप्त नाहीं होयगा लाभ तौ अन्तरायकर्मका च्चयोपशमतैं होयगा वांछातैं तो अर पाप कर्मका बंध ही होयगा तातैं पापका कारण परिग्रहकी ममता छांड़ि जेता प्राप्त भया तितनामें संतोष धारण करि ही रहो। यहां ऐसा विशेष जानना, यद्यपि समस्त परिग्रह त्यागने योग्य हैं परंतु जो गृहस्थपनामें रहि धर्मसेवन कर्‍या चाहै सो अपने पुण्यके अनुकूल परिग्रह राखै हो जो परिग्रह गृहस्थके नाहीं होय तो काल दुकालमें रोगमें वियोगमें व्याहमें मरणमें परिणाम ठिकाने रहै नाहीं परिणाम बिगडि जाय तातैं गृहस्थधर्मकी रत्तावास्ते परिग्रह संचय करै ही अर आजीविकाको उपाय न्यायमार्गत करै ही क्योंकि साधु तो परिग्रह अल्प हू राखै तो दोऊ लोकतैं भ्रष्ट होजाय अर गृहस्थ परिग्रह नाहीं राखै तो भ्रष्ट हो जाय जातैं गृहस्थाचारमैं रहैं तो ताके अल्प तथा वहुत परिग्रह विना परिणाममैं समता नाहीं रहै अर आजीविका नाहीं होय तो निराधारका परिणाम धर्मसेवनमें ठहर सकै नाहीं परिणाममैं तीव्र आर्ति मिटै नाहीं भोजनपान मिलने योग्य आजीविका बिना स्वाध्यायमैं पूजनमैं शुभभावनामैं परिणाम ठहरि सकै नाहीं आकुलताकरि संक्लेश बधतो जाय संतोष रहै नाहीं। जातैं रोग आवतैं वृद्धपना आवतैं वियोग होतैं अन्न वस्त्रका आधार विना अपना परिणाम कोऊ देशमैं कोऊ कालमैं थिरता पावै नाहीं देहकी रत्ता आजीविका बिना नाहीं, देह बिना अणुव्रत शील संयम काहेतैं होय? यातैं अपना पुण्यकी अनुकूलता अर उद्यम सामर्थ्य सहाय साधनादिक देशकालके योग्य विचारि न्यायमार्गतैं आजीविका करि धर्म सेवन करौ। अहिंसातैं सत्यप्रवृत्तितैं अदत्त परके धनका त्याग करि आपकूं जगतकै लोकनिकै विश्वास आवनेयोग्य पात्र बनो। तथा विद्या कला चातुर्य करि आजीविका होने योग्य आपकूं करौ। पाछैं लाभांतरायका च्चयोपशम प्रमाण लाभ अलाभ अल्पलाभ होय ताहीमैं संतोष करो। अर कु-

टुंबका पोषण देहका पोषण पुण्यके उदयतैं लाभ भया तिस परिणाम करो। ऋणवान मत होहू ऋण हुआ पाछैं समस्त धीरज प्रतीतका अभाव हो जायगा दीनता प्रगट हो जायगी एक बार अपनी प्रतीति बिगड़ै पाछैं आजीविका होना कठिन है बहुरि आजीविकाकै अनुकूल खरच राखो पुण्यवाननिकूं देख अधिक खरच करोगे तो जस अर धर्म अर नीति तीनों नष्ट हो जायंग अर अन्य पुण्यवानोका खरच देख बराबरी करोगे तो दरिद्री होय दोऊ लोकतैं भ्रष्ट हो जावोगे अर या जानो हो जो हमारी बडी आबरू है पूर्वैं हमारे बड़ा २ कार्य भया है अब कैसैं घटावैं जो घटावैं तो हमारा समस्त बडापना बिगडि जाय ऐसो बुद्धि मति करो पुण्य अस्त होजाय तब बडापना कैसैं रहेगा अब बडापना तो सांच संतोष धारणाकरि शीलकरि विनयकरि दीनता रहितपनाकरि इंद्रियनिके विषयनिकी चाह घटावनेकरि है। जातैं दोऊ लोकमें उज्वलता होय पुण्यको उदय आजाय तदि जीवकूं स्वर्गलोकका महर्द्धिक देव बना दे चक्रवर्ती करदे अर पापका उदय आवै तदि नरकका नारको तथा एकेन्द्रिय बनादे तथा भार बहनेवाला रोगी दरिद्री मनुष्य करदे तिर्यञ्च करदे इसही भवमें राजा होय रंक हो जाय कौनसा बडापनाकूं देखो हो अर अपने धन तो अल्प अर अभिमानी होय बहुत धन खरच करोगे तो दरिद्री अर ऋणवान दीन होय समस्ततैं नीचे हो जावोगे निंद्यताकूं प्राप्त होय आर्तध्यानतैं दुर्गतिकै पात्र हो जावोगे तातैं आजीविका होय तातैं अल्प खरच करो यो ही प्रवीणपणो है पंडितपणोहै जो आंवदनीतैं अल्प खरच करै सो ही कुलवानपणो है सो ही उत्तम धर्म है क्योंकि आंवदनीतैं खरच बधावोगे तो अपनी ही बुद्धितैं दरिद्री होय मूर्खता दिखावोगे अर ऋणवान हो जावोगे तदि उत्तम कुल योग्य आदर सत्कार आचरण समस्त नष्ट होजायगा अर मलीनता प्रगट होजायगी अर पूजन स्वाध्याय शुभ भावनामें बुद्धि निर्धन हुआ पीछैं ऋणवान हुआ पीछैं नाहीं तिष्ठैगी। तातैं आजीविकातैं अल्प खरच करना ही गृहस्थकी परम नीति है अर अभिमानी होय अधिक खरच करै ताकै अन्यका बिना दिया धन ऊपरि चित्त चलि जाय है अनेक असत्य कपटादिक पापमैं प्रवृत्ति होय संतोष धर्म नष्ट हो जाय है। कोऊ या कहै जो आजीविका तो पूर्वकर्मके आधीन है धर्मसेवन अपने

आधीन है ताकूं कहिये है जो—यहां आजीविका पुण्यके आधीन ही है परन्तु धर्मग्रहण होजाना हू पुण्य-कर्मका सहाय बिना नाहीं होय है। धर्मग्रहणकी योग्यतामें हू एती सामग्री मिले होय है उत्तमकुलमें जन्म पावना, जातैं चांडाल चमार भील शूद्रादिकके कुलमें धर्मका लाभ कैसैं होय ? बहुरि सुदेशमें उपजना, इंद्रियांकी पूर्णता पावना, रोगरहित देह पावना, शुभ संगति पावना, आजीविकाकी स्थिरता पावना सम्यक्धर्मका उपदेश पावना, इत्यादिक पुण्यका उदयजनित बाह्यसामग्री पाये विना धर्मग्रहण वा धर्मका सेवन नाहीं होय है। तातैं जाकैं पूर्वपुण्यका उदयतैं आजीविकाकी स्थिरता होय ताकै धर्मसेवनमें योग्यता होय है। बहुरि जाके इंद्रियनकी पूर्णता निरोगता होजाय अर न्याय अन्यायका विवेक तथा धर्म अधर्म योग्य अयोग्यका विवेक होय तथा प्रियवचन विनय अन्यके धन अर अन्यकी स्त्रीसूं परांगमुखता अर आलस्य प्रमादरहितता धीरता कालदेशके योग्य वचन होय ताकै आजीविकाका लाभ अर धर्मका लाभ होजाय। गुणवानकै निर्लोभीकै आलस्यरहित उद्यमीकै विनयवानकै जीविका दुर्लभ नाहीं है। आप जीविका योग्य पात्र बन जाय तो जीविका कदाचित् दूर नाहीं लोभान्तराय कर्मका क्षयोपशम प्रमाण आजीविका थोडी वा बहुत नियमतैं बन ही जाय तिसमैं संतोष करि अधिकमैं वांछाका त्याग करि परिग्रहपरिमाणव्रत धारण करो। अर पुण्यका उदयके आधीन आजीविका प्राप्त होजाय तो अनीतिमैं प्रवृत्ति करि आजीविकाकूं नष्ट मत करो आजीविका नष्ट हो जायगी तो धर्म अर जस नष्ट होजायगा अर अपने भावनिकरि जो नीति धर्म नाहीं छांडोगे न्यायमार्ग चालोगे फिर हू असाताका उदयतैं अग्नितैं जलतैं चोरनितैं राजाके उपद्रवतैं आजीविका बिगाड़ जाय तथा धन बिगडि जायगा तो धर्म नाहीं बिगड़ैगा यश नाहीं बिगड़ैगा जगतमें अप्रतीतका पात्र नाहीं होवोगा, अर प्रबल लाभांतरायका उदयतैं न्यायरूप उद्यम करते हू जो लाभ नाहीं होय तो समता ही ग्रहण करो। जो आयुकर्म बाकी है तो भोजनादिककी विधि कर्म मिलाय देगो कर्म बलवान है। वनमैं पहाड़मैं जलमैं नगरमैं अन्तरायका क्षयोपशम प्रमाण सबकूं मिलै है। कोउका पुण्य तो ऐसा है जो बहुत लोकनिकूं भोजनादिक देय आप भोजन करै है अर कोउके अं-

तरायका ऐसा उदय है जो अपना उदर हू नाहीं भरै है। कोऊकूं आधा उदर भरनेलायक मिलै है। कोऊकूं एक दिन मिलै एक दिन नाहीं मिलै। कोऊकूं दिनके आंतरै तीन दिनके आंतरै नीरस भोजन मिलै तो हू धर्मात्मा समताकूं नाहीं छांडै। जो पूर्वै तिर्यञ्चनिके भवमैं कदे उदरभर भोजन मिल्या नाहीं तथा क्षुधा तृषाके मारे अनेक बार मरे हैं तातैं अब धैर्य धारण करि जैसैं हमारे धर्म नाहीं छूटै तैसैं यत्न करना जिनका परिणाममैं ऐसा गाढ प्रगट होय तो स्वर्गलोकमैं महर्द्धिक देव होय है। बहुरि कोऊ या कहे जो आप तो गाढ़ पकडि समता राखै परंतु कुटुम्ब जाकी गैलि होय तो कहा करै ? तो ऐसे कुटुम्बकूं कहै भो कुटुम्बके जन हो ! आपां पूर्व जन्ममैं दान दिया नाहीं व्रत पाल्या नाहीं अभक्ष भक्षण किये अन्यायतैं परका धन ग्रहण किया तिस पापके उदयकरि ऐसे दरिद्री भये जो उदरकूं भोजन अर वस्त्र भी नाहीं सो अपना किया पापका फल है जो अब अन्य पुण्यवाननिके आभरण भोजनादिक देखि क्लेशित होवोगे तो केवल आंगानै हू तिर्यञ्चगतिके घोर दुःखनिका कारण पापकर्म तथा कोटनि भवपर्यन्त दरिद्रादिकके कारण पापबंध करोगे परको सम्पदा आपकै नाहीं आवैगी। क्लेश दुर्ध्यान तृष्णादि कियेतैं दुःख नाहीं मिटैगा अर दुःख बधैगा अर जो अल्प मिल्या मैं सन्तोष करि निर्वाञ्छक होओगे तो वर्तमानमैं तो दुःख ही नाहीं व्यापैगा अर समस्त पापकर्मकी निर्जरा ऐसो होयगी जो घोर तपश्चरणतैं हू नाहीं होय। अर अल्प भोजन वस्त्रादिक मिलै अर परिणाममैं आकुलतारहित समतासूं रहै तो बडा तप है। अर कर्म मुझे थांकै सामिल उपजायो सो अब मैं दैव पुरुषार्थ दोऊनिके अनुकूल द्रव्य उपार्जनमैं उद्यम करूं हूं परन्तु लाभांतरायका क्षयोपशम प्रमाण न्यायमार्गतैं प्राप्त हो जायगा सो तुम्हारे निकट लाऊं हूं। अब यामेसूं हमारे विभागका बांटा होय सो हमकूं द्यो अर तुम्हारा होय सो तुम विभागकरि भोजनादिक करो परन्तु अब हम भगवान का उपदेश्या दुर्लभ धर्म ग्रहण किया है सो अब तुम्हारे वास्तै अनीति कपट घोर पापकरि धन नाहीं ग्रहण करैंगे न्यायनोतितैं जैसैं धर्म नाहीं बिगडै तैसैं उद्यमकरि उपार्जन करैंगे। तुम भी जैसैं हमारा धर्म बिगड़ि जाय तैसैं प्रवर्तन मत करो। अपना अपना पुण्यपापका फल भोगो। आकुलता

छांड़ि जेता मिलै तितनाम सन्तोष धारि सुखतैं रहो ऐसा जाके निश्चय है ताके परिग्रहपरिमाण नाम स्थूल व्रत होय है। और जो कुटुम्बका पोषणके अर्थि पाप क्रियामें प्रवर्तै है असत्य चोरी कपट हिंसा इत्यादिक पापनिमैं प्रवर्तै है तिनके घोरपापका बंध होय पापतैं दुर्गतिका पात्र होय है तातैं अल्प जीतव्यमें व्रत शील संयममैं ही दृढता करो। केतेक लोक कहै हैं जो धन तो पापहीतैं आवै है पाप बिना धन आवै नाहीं त्यागी व्रती हुयां धन कैसैं आवै ? ताकूं कहिये है—ऐसा तो तुम्हारी भ्रांति है जो पाप बिना धन आवै नाहीं ऐसा कहना अयुक्त है। जो पापहीतैं धन आवै तो इस जगतमें लाखां भील चांडाल चोर चुगुल मनुष्यनिकूं मारनेवाले ग्राम दग्ध करनेवाले मार्ग लूटनेवाले समस्त ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र समस्त जाति समस्त कुल पापीनि करि भरया है समस्त पुरुष स्त्री बालकादि हिंसाके करनेकूं असत्य बोलनेकूं चोरी करनेकूं तय्यार हैं परन्तु जो पूर्वजन्ममें कुपात्र दान दिया है कुतपकरि खोटा पुण्य बांध्या है तिनकै कुमार्गतैं धन आवै है पुण्यहीन तो मारया जाय पूर्वपुण्य विना पापतैं ही तो नाहीं आवै है अर जो पुण्यबांध्या ते यहां चोरी चुगुली करयां बिना ही सम्पदाकूं प्राप्त होय है। राजाके घर जन्म ले है तातैं कोटधनके धणीनिकै घर जन्म ले है। बहुत कहा कहिये समस्त पुण्यका फल है खोटे पुण्यकी लक्ष्मी भोगि नरक तिर्यञ्चमें जाय डूबै है।

अब परिग्रहपरिमाण व्रतके पंच अतीचार वर्णन करनेकूं सूत्र कहै हैं—

अतिवाहनातिसंग्रहविस्मयलोभातिभारवहनानि। परिमितपरिग्रहस्य च विक्षेपाः पंच लक्ष्यन्ते ॥ ७२ ॥

अर्थ—परिमितपरिग्रह नाम व्रतके ये पंच अतीचार जानिये है जो घोड़ा ऊंट बैल इत्यादिक तिर्यंचनिकूं तथा दासी दास सेवकादिकनिकूं अतिलोभके वशतैं मर्यादारहित अति दूरका मंजल करावै बहुत चलावै सो अतिवाहन नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि अपने गृहमैं प्रयोजनरहित हू बहुत वस्तुनिका संग्रह करै भोजनवस्त्रपात्र इत्यादिक थोरेका प्रयोजन होय अर बहुतका संग्रह करै तथा धान्यादिक अर वस्त्रादिक तथा औषधादिक तथा काष्ट पाषाण धातु इत्यादिकनिका संग्रहमैं बहुत परिणाम रहै सो अतिसंग्रह नामा दूजा अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि अन्यके बहुत संपदा बहुत परिग्रह तथा अनेक देशांतरनिकी वस्तु

वा कदे नाहीं देखे ऐसे वस्तुका देखनेकरि श्रावक आश्चर्य करना सो विस्मय नाम तीजा अतीचार है ॥३॥ बहुरि कोऊ बनिजमैं तथा सेवामैं तथा कलाहुन्नरतैं आपके अन्तरायके क्षयोपशम परिमाण लाभ होय तो हू तृप्त नाहीं होना संतोष नाहीं आवना सो अतिलोभ नामा चौथा अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि तिर्यंचनि ऊपरि लोभके वशतैं अधिक भार लादि चलावना सो अतिभारवाहन नामा पांचमा अतीचार है ॥ ५ ॥ जो गृहस्थ परिग्रह परिमाण करै सो इन पांच अतीचारका हू परित्याग करै। ऐसैं गृहस्थनिके धारण करनेयोग्य पंच अणुव्रत कह करिके अब अणुव्रतनिके फल कहनेकूं सूत्र कहै हैं।

पञ्चाणुव्रतनिधयो निरतिक्रमणाः फलन्ति सुरलोकं। यत्रावधिरष्टगुणा दिव्यशरीरं च लभ्यन्ते ॥ ७२ ॥

अर्थ—अतीचारनिकरि रहित ये पूर्वोक्त पंच अणुव्रतरूप निधि हैं सो देवलोकरूप फलकूं फलै हैं जिस देवलोकमैं अवधिज्ञान अर अणिमा महिमा लघिमा गरिमा प्राप्ति प्राकाम्य ईशित्व वशित्व ये अष्ट महागुण हैं अर धातु उपधातुरहित दिव्यशरीर पाइये है। भावार्थ। अणुव्रतनिके धारण करनेवाला मरकरि स्वर्गलोकमैं महान् अणिमादिक ऋद्धिके धारक देव ही होय अन्य पर्याय नाहीं पावै ऐसा नियम है। स्वर्गमैं धातु उपधातुरहित रोग वृद्धत्वादिकरहित दिव्यशरीरकूं प्राप्त होय असंख्यात वर्षपर्यंत सुखसंपदामैं लीन हुआ तिष्ठै है। अब जे पंच अणुव्रतनिकूं धारण करि इस लोकमैं विख्यात महिमाकूं प्राप्त भये तिनके नाम प्रगट करनेकूं सूत्र कहै हैं।

मातङ्गो धनदेवश्च वारिषेणस्ततः परः। नीली जयश्च संप्राप्ताः पूजातिशयमुत्तमं ॥ ७३॥

अर्थ—अहिंसा नाम अणुव्रतकरि मातंग जो चांडाल अर सत्य अणुव्रतकरि धनदेव नाम वणिकपुत्र अर अचौर्यव्रत करि वारिषेण नाम राजपुत्र अर ब्रह्मचर्यव्रतकरि नीली नाम श्रेष्ठीकी पुत्री अर परिग्रह परिमाणकरि जयकुमार ये व्रतके माहात्म्य करि उत्तम पूजाके अतिशयकूं प्राप्त भये इस ही भवमैं देवनिकरि पूज्य भये। यद्यपि इन व्रतनिके प्रभावतैं अनेक भव्य इस लोकमैं महिमा पाय देवलोकमैं गये तथापि आगमप्रसिद्ध इनकी ही कथा है। अब पंच पापनिके प्रभावतैं जे इस लोकमैं घोर क्लेश पाय दुर्गति गये

तिनका नाम कहनेकूं सूत्र कहै हैं।

धनश्रीसत्यघोषौ च तापसारक्षकावपि। उपाख्येयास्तथा श्मश्रु नवनीतो यथाक्रमम् ॥ ७४ ॥

अर्थ—हिंसा करि तो धनश्री असत्य करि सत्यघोष चोरीकरि तापसी कुशीलकरि कोतवाल परिग्रहकरि श्मश्रु नवनीत ये इस लोकमैं राजानितैं तीव्र दंड पाय दुर्गतिकूं प्राप्त भये इनका यथाक्रम दृष्टांत जानना अब अष्टमूल गुणनिकूं कहै हैं—

मद्यमांसमधुत्यागैः सहाणुव्रतपञ्चकं। अष्टौ मूलगुणानाहुर्गृहिणा श्रमणोत्तमाः ॥ ७५ ॥

अर्थ—श्रमणोत्तम जे गणधर तथा श्रुतकेवली हैं ते गृहस्थके मद्यमांसमधूके त्याग सहित जे पंच अणुव्रत ताहिअष्टमूलगुण कहै हैं। भावार्थ—जीव मारनेके संकल्पकरि त्रस जीवनके मारनेका त्याग॥१॥अन्यके अर आपके क्लेश उपजावनेवाला अर सांचा श्रद्धान ज्ञान आचरणका घातकरनेवाला वचनका त्याग ॥ २ ॥ विना दिया धरथा गड्या पड्या भूल्या परके धनके ग्रहण करनेका त्याग ॥ ३ ॥ अपना कुलके योग्य विवाही स्त्री बिना अन्य समस्त स्त्रीनिमें रागका त्याग ॥ ४ ॥ न्यायकरि उपजाया परिग्रहके मांहि परिमाणकरि अधिक परिग्रहका त्याग ॥ ५ ॥ ये पांच तो अणुव्रत अर जिसतैं परिणाम मोहित होय अर अपना हित अहितकी सावधानी बिगडि जाय सो मद्य है ताका त्याग ॥६॥ अर द्वींद्रियादिक जीवनिके देहतैं उपज्या मांसका त्याग ॥ ७ ॥ अर मक्षिकानिकरि संचय किया मधु छत्तातैं उपज्या मधूका त्याग ॥ ८ ॥ इन अष्टका त्याग सो अष्टमूलगुण हैं। जातैं गृहस्थके पंच पाप अर तीन मकारका त्यागमैं दृढता हो जाय तदि समस्त गुणरूप महलकी नीव लग गई। अनादिकालतैं संसारमें परिभ्रमणका कारण मिथ्यात्व अन्याय अर अभक्ष था तिनका अभाव हुआ तब अनेक गुण ग्रहणका पात्र भया तातैं ये अष्ट त्याग हैं तैं हो मूलगुण हैं। बहुरि अन्य ग्रंथनिमें पंच उदम्बरफल अर तीन मकारका त्यागतैं अष्टमूलगुण कहै हैं। इहां उदुम्बर ॥ १ ॥ कठूम्बर ॥ २ ॥ पीलू ॥ ३ ॥ पीपलका गोल ॥ ४ ॥ बडका बडवाल्या ॥ ५ ॥ ये पांच उदंबर फल कहिये हैं इनमें बहुत त्रस जीवनिकूं प्रगट देखिये है तातैं इन फलनिका भक्षण मांसके समान है और हू

केतेक फल जिनमैं काल पाय त्रस मरि जाय तिनका भक्षणमैं हू रागभावकी अधिकतातैं महा हिंसा होय है ज्ञाकैं ऐसा परिणाम होय जो याकूं मैं सुकाय खाऊंगा तिसकैं अभक्षमैं तीव्र अनुरागतैं बहुत बंध होय है। मदिरा है सो मनकूं मोहित करै है अचेत करै है अर मन मोहित होय जाय सो धर्मकूं विस्मरण होजाय अर धर्म भूलि जाय सो पुरुष निःशंक हिंसाकूं आचरण करै है ऐसा विशेष जानना जो— मनकूं उन्मत्त करै स्वरूपकी सावधानी भुलाय विषयांमैं आसक्तता उपजावै रसना इन्द्रिय अर उपस्थ इन्द्रियके विषयमैं अतिराग उपजावै सो ही मद्य है यातैं भंग पीवना तथा अमल (अफीम) पोस्त आदिक नशाकी वस्तु तथा इनके संयोगतैं उपजे पाक माजूम इन समस्त मदकारी वस्तुके भक्षण करनेतैं धर्मबुद्धिका नाश होय है अर अभक्ष्य भक्षणमैं रक्त होजाय बुद्धिकी उज्वलता परमार्थका विचार नष्ट होजाय है तातैं जिनेन्द्रकी आज्ञाकूं धारण कर्या चाहै तो अवश्य अमलकारी वस्तुका भक्षणका त्याग करै है। बहुरि भांगमैं त्रस जीव बहुत उपजे हैं अर मदिरामैं तो अपरिमाण त्रस जीवनिकी उत्पत्ति है महा दुर्गन्ध है। उत्तमकुलके पुरुष मदिराको धारा दूरतैं हू भोजन करते देख लें तो भोजनका शीघ्र त्याग करैं अर स्पर्शनतैं वस्त्र सहित स्नान करैं। मदिराकरि उन्मत्त होय सो माताकूं पुत्रीकूं स्त्रीरूप आचरण करै है अर अपनी स्त्रीकूं मातापुत्रीरूप आचरण करै है। भय ग्लानि क्रोध काम लोभ हास्य रति अरति शोक ये समस्त दोष हिंसाहोतैं हैं ते समस्त मद्यपायीकै होय हैं तातैं धर्मका अर्थी मद्यपानका दूरहीतैं त्याग करै। बहुरि द्विइंद्रियादिक प्राणीनिकै घातकरनेतैं मांस उपजै है अर जाकी आकृति महाघृणा उपजावै है मांसका स्पर्शन अर दुर्गन्ध अर नाम ही परिणाममैं महाग्लानि उपजावै है जे धर्मरहित नरकादिकके जानेवाले महा निर्दय परिणामी होय ते मांस भक्षण करै हैं अर जो स्वयमेव मरे हुए बलध भैंसा अजा मृगादिकनिका मांस है ताके आश्रय अनन्त तो बादर निगोदिया जीव अर असंख्यात त्रसजीव तिनका घात होय है बहुरि कच्चा मांसमैं अर अग्निकरि पक्या मांसमैं अर जिस काल नीचैं अग्नि लाग करि सीझै है तिस काल पकता हुआ मांसमैं हू अनन्त जीव निरन्तर उपजै हैं तैसो ही जातिका समय समय उपजै हैं

तातैं कच्चा मांस पक्या हुआ मांस वा पकता हुआ मांस सूका हुआ मांसकूं जो खाय हैं तथा मांसकी डलीको स्पर्शन करै हैं ते मनुष्य निरन्तर संचय किया ऐसा बहुत जीवनिका घात करै हैं। बहुरि चांडालनिका उच्छिष्ट कषायीनिका म्लेछनिका कूकरानिका उच्छिष्ट तो मांस होय ही है मांस भक्षीनिके दया नाहीं आचार नाहीं जाति कुल धर्म दया क्षमादिक समस्त गुणनिकरि भ्रष्ट हैं। दुर्गतिगामी महापापी महानिर्दयीनिनैं मांस भक्षणकूं शास्त्रनिमैं धर्म कह्या है। मांसकरि देवता तथा पितरनिकूं तृप्त होना कहैं देवतानिकूं मांसभक्षी कहैं श्राद्धनिमैं ब्रह्मणनिकूं मांसपिंड भक्षण कराय देवनिका पितरनिका तृप्त होना कहै हैं सो ये समस्त मिथ्यादर्शनका प्रभाव है। बहुरि मधु समान कोऊ अधम नाहीं मक्षिकानिका वमन भीलचडालनिका उच्छिष्ट अनन्तजीवनिका स्थान है बहुत मक्षिकानिकूं मारि भील चांडाल ल्यावैं वा स्वयमेव मरै हैं तिनमैं ; असंख्यात त्रसजीवनिकी उत्पत्ति है याकूं पवित्र मानना पंचामृतनिमैं कहना याकूं शुद्ध कहना इस समान विपरीत और नाहीं। सहतका एक कणमात्र हू जो औषधादिकनिकैं अर्थि ग्रहण करै हैं रोगके दूर करनेकूं भक्षण करै हैं सो नरकनिके घोर दुःख भोगि असंख्यात वा अनन्त जन्मनिमैं अनेक रोगनिका पात्र हाय है। मधु मद्य मांस नवनीत (मगवल) ये चार महाविकृति भगवानके परमागममैं कहै हैं जो जिनधर्म ग्रहण करै सो मद्य माखन मांस मधु इन चार विकृतिनका प्रथम ही परित्याग करै। इन चारनिकूं भगवान महाविकृति कही है इनका परिहार विना धर्मका उपदेशका पात्र ही नाहीं होय है। धर्म है सो अहिंसारूप है ऐसैं जिनेंद्रनकी आज्ञा वारंवार श्रवण करते हू जो स्थावरनिकी हिंसाकूं छाडनेकूं असमर्थ हैं ते त्रस जीवनिकी हिंसाकूं तो शीघ्र ही छोड़ो। हिंसाका त्याग नव प्रकार करि है मनकरि हिंसा करै नाहीं अन्यकरि हिंसा करावै नाहीं अन्य हिंसा करै ताकूं सराहै नाहीं। ऐसैं ही वचनकरि हिंसा करै नाहीं करावै नाहीं करतेकूं प्रशंसा करै नाहीं। ऐसैं ही कायकरि हिंसा करै नाहीं परकूं हिंसा करनेकूं प्रेरणा करै नाहीं करनेवालेकूं प्रशंसा करै नाहीं। ऐसैं मनवचनकायद्वारैं कृतकारितअनुमोदनाकरि हिंसाकूं छाडै है तिसके औत्सर्गिक त्याग कहिये उत्कृष्ट त्याग है। अर नव भंग विना जो त्याग सो अपवादि-

कल्याग कहिये सो अनेक प्रकार है। या अहिंसाधर्म मोक्षको कारण अर समस्त संसारके परिभ्रमणका दुःखरूप रोगके मेटनेकूं अमृत समान पाय करके अज्ञानी मिथ्यादृष्टिनिका अयोग्य आचरण देखि अपने परिणाममैं आकुल मत हो हू। संसारमैं कर्मके प्रेरे अनेक प्रकारके जीव हैं। केई हिंसक हैं कई अभक्ष्य भक्षण करनेवाले हैं कई क्रोधी लोभी मानी मायावी महाआरंभी महापरिग्रही हैं अन्यामार्गी हैं तिनकी अनीति देखि अपने परिणाम मत बिगाडो कर्मके प्रेरे जीव आपा भूल रहे हैं आप तो साम्यभाव ही ग्रहण करो। कोऊ या कहै भगवानका धर्म सूक्ष्म है धर्मके अर्थि हिंसा होनेमैं दोष नाहीं ऐसैं धर्ममूढ होय करिकैं प्राणीनिकी हिंसा नाहीं करिये। बहुरि जो देवके निमित्त गुरुके कार्य करनेके निमित्त करी हुई हिंसा हू शुभ नाहीं है हिंसा तो पाप ही है। धर्म तो दयारूप है जो देवगुरुके कार्य करनेके निमित्त हिंसाका आरम्भ ही धर्म होय तो हिंसारहित धर्म है ऐसा जिनेंद्रका वाक्य असत्य होजाय यातैं हिंसाकूं धर्म कदाचित् श्रद्धान मत करो। कोऊ कहै धर्म तो देवतानितैं होय है, देवतानिके निमित्त समस्त देना योग्य है ऐसी विपरीत बुद्धिकरि प्राणीनिकी हिंसा करना योग्य नाहीं। बहुरि केतेक कहै हैं देवी कहिए कात्यायनी चंडिका भवानी दुर्गा पारवती इत्यादिक नाम करिकैं प्रसिद्ध हैं ताकै बकरा तथा भैंसा मारि चढ़ाइए या भवानी इनतैं ही प्रसन्न है सो मिथ्यादृष्टिनिके वाक्यतैं चलायमान नाहीं होना। एक तो यह विचार करो जो देवी जीवनिका मांसकूं भोगना चाहै है तो आप अनेक भुजानिमैं शस्त्रधारण करि भौंह वक्र करि खडी है आप ही जीवनिकूं मारि करि भक्षण क्यों नाहीं करै है ? अपने भक्तनितैं दीन अनाथ जीवनिकूं भयभीतनिकूं क्यों मरावै है ? आप ही सिंह व्याघ्रादिक ज्यों सिंहादिकानै मारि क्यों नाहीं भक्षण करै है ? और आप देवता होय करि हू कागला कूकरा भील चांडालकी ज्यों मांस भक्षणमैं रत है क्षुधातुर है दुःखी है ताकै काहेका देवपना ? जो आपही दुःखी आसक्त सो भक्तनिकूं कैसैं सुखी करैगा ? महादुर्गंध तिर्यचनिके दुर्गंधमय घृणा देनेवाला मांसका इच्छुक महा पापीनिके देवपना नाहीं होय है। पापीनिनै झूठे शास्त्र बनाय आपके मांस भक्षण करनेकूं अर मूढलोकनिकूं देवीनिका प्रसादके संकल्पतैं मांस भक्षणमैं प्रवृत्ति

कराय जगतके जीवनिकूं अपनी इन्द्रियनिके पुष्ट करनेकूं नरकमैं डबोवै है । जिनेंद्रके परमागममैं तो भवनवासी व्यन्तर ज्योतषी कल्पवासी चार प्रकारके देवनिकै कवलाहार नाहीं है मानसीक आहार कह्या है। कोऊ कालमैं इच्छा उपजते प्रमाण अपने कंठहीमैं अमृत झरै है तिसकरि लेशमात्र क्षुधावेदना रहै नाहीं। तिनकै दिव्य वैक्रियिक देह सातधातु उपधातुरहित महादिव्यरूप सुगंध शरीर है । देवनिके मांस भक्षण कहना महाविपरीतबुद्धि है । जो देवता मांसभक्षी है तो कागला कूकरा गीध स्यालतैं हू देवता नीच ठहरया तातैं देवताके अर्थि हिंसा करना योग्य नाहीं अर कोऊ मांसभक्षी गुरुके अर्थि मांसका दान मत करो। जो पापी मांसादिक अभक्ष्य भक्षण करै मदिरा पीवै वह पापी काहेका गुरु ? वो तो मांसादिक भक्षण कराय नरक पोहचावनेका गुरु है । ताके स्पर्शने देखनेतैं घोर पापका बंध होय है । बहुरि कोऊ कहै अन्नादिकके भक्षणमैं तो बहुत जीवनिका घात है तातैं एक जीवकूं मारि भक्षण करना श्रेष्ठ है ऐसा विचार करि बड़ा प्राणीकूं मारि खावना योग्य नाहीं जातैं एकेंद्रिय प्रत्येक वनस्पती पृथ्वी जल अग्नि पवन समस्त त्रैलोकमैं भरे हुए अर समस्त विकलत्रय अर समस्त देव मनुष्य तिर्यंच इन समस्तनिकूं इकट्ठा करि गिणिए तो समस्त असंख्यात परिमाण हैं अर मनुष्य तिर्यंचनिके मांसका एक कणमैं एते बादर निगोदिया जीव हैं जो त्रैलोक्यके एकेंद्री वेंद्री तेइन्द्री चतुरिंद्रिय पंचेंद्रिय समस्त मनुष्य तिर्यंच देव नारकानितैं अनंतगुणा भगवान सर्वज्ञ देखि परमागममैं कह्या है तातैं अन्न जलादिक असंख्यात वरस भक्षण करै तिसमैं जो एकेंद्रीकी हिंसा होय तातैं अनंतगुणे जीवनिकी हिंसा सूईकी अणीमात्र मांसके भक्षण करनेमैं है। बहुरि एकेंद्रीकी हिंसा अर त्रसहिंसा बराबर नाहीं है दुःखमैं हू बड़ा अंतर है ज्ञानमैं बड़ा अंतर है एकेंद्रीका शरीर रस रुधिर हाड मांस चामादिक धातुकरि रहित है अर मांसभक्षणमैं तीव्र परिणाम तीव्र निर्दयपना है तैसा अन्नके भक्षणमैं नाहीं है । जैसैं अपनी स्त्रीकूं स्पर्श करनेमैं अर अपनी पुत्रीके माताके स्पर्श करनेमैं परिणाम कैसैं समान होय बड़ा अन्तर है तातैं बहुत कहनेकरि कहा त्रसजीवका घात करना घोर पाप जानना । बहुरि एसी आशंका हू मत करो जो यह सिंह व्याघ्र सर्पादिक बहुत प्राणीनिका घातक हैं

इनकूं मारे बहुत जीवनिकी रक्षा होयगी ऐसी मिथ्याबुद्धिकरि हिंसक जीवनिकी हिंसा हू मत करो। जातैं कौन कौन हिंसककूं मारोगे ? चिडी कागला सूवा मैना तीतर इत्यादिक समस्त पक्षी हिंसक हैं तथा कीडा कीडी लट मकडी माखी सर्प बीछू इत्यादिक तथा ऊंदरा कूतरा बिलाव स्याल सिंह अनेक तीर्यंच मनुष्यादिक समस्त जीव पापकर्मके संतापतैं हिंसक ही हैं। तुम कौन कौनकी हिंसा करोगे ? और तुम्हारे हिंसक जीवनिके मारनेका विचार भया तब तुम समस्त हिंसकनिके घात करनेवाले महाहिंसक भये। तुमारे समान पापी कौन रह्या तातैं हिंसक जीवनिकी हिंसाके परिणाम कदाचित् मत करो। हिंसक कौननै किया ? पूर्वं उपजाये अपने कर्मके आधीन समस्त जीव उपजे हैं पापका संतान अनंतकालतैं चल्या आया है कौन दूर करि सकै। पाप जीव कौननै किया पुण्यवान कौननै किया ? समस्त कर्मकी विचित्रता है। कालके प्रभावतैं पापी जीवनिको पापके फल देनेकूं अनेक पापी जीव उपजै हैं कौन दूरि करनेकूं समर्थ है तातैं दयावान होय समस्त जीवनिको करुणा ही करो। बहुरि ऐसा विचार हू मत करो जो यो बहुत जीवैगा तो पापका बंध करैगा जो इस पापरूप पर्यायतैं छूटि जाय तो याकै बहुत पापका बंध नाहीं होय ऐसी करुणा करकैं हू पापी जीवनिकूं मत मारो जातैं तुम तो समस्तको दया ही करो। बहुरि ये जीव बहुत दुःख करि पीड़ित हैं जो मरण करि जाय तो शीघ्र ही दुःखसों छूटि जाय सो ऐसा मिथ्या विचार हू मत करो जातैं मरण करि जो जायगा तो वर्त्तमानकी पर्याय ही छूटैगी असाताकर्म नाहीं छूटैगा जो यहांतैं छूटि अन्य पर्याय तिर्यञ्च नरक मनुष्यादिक पावैगा तहां बहुतगुणा रोग दरिद्र प्राप्त होयगा बहुतकाल दुःख भोगैगा बहुत कहने करि कहा है जो कदाचित् सूर्यका उदय पश्चिम दिशामैं होजाय अर अग्नि शीतल हो जाय चंद्रमाकी किरण उष्ण होजाय अर सूर्यका आताप शीतल होजाय और समस्त पृथ्वी जगतके ऊपरि होजाय अर पाषाणमय भारी गोला जलतैं तिर जाय अर अग्निमैं कमल उपजि जाय अर सूर्यकूं अस्त होतैं दिनका प्रारंभ होजाय सर्पका मुखमैं अमृत होजाय कलहतैं यश होजाय अजीर्णतैं रोग नष्ट होजाय कालकूट जहरके भक्षणतैं जीवना बधि जाय विवादतैं प्रीति बधि जाय तो हू हिंसातैं तो धर्म नाहीं उपजैगा

जगतमैं एते नाहीं होने योग्य कार्य होजांय तो हो हू परंतु हिंसाके परिणामतैं तो कोऊ देश कोऊ कालमैं धर्म नाहीं हुआ नाहीं होय है अर नाहीं होयगा। अब यहां कोऊ आशंका करै जो गृहस्थ जिनमंदिर करावै है उपकरण करावै है जिनपूजा करै है इनमें हू आरंभ ही है अर आरंभ है तहां हिंसा होय ही तातैं जिनमन्दिरादिक बनावनेमैं धर्म कैसैं संभवै है ? ताकूं उत्तर कहिये है जो गृहस्थ आरंभादिकका त्यागी है अर जाका परिणाम वीतरागतारूप होय धनका उपार्जनादिकसूं विरक्त होयगा ताकूं मन्दिरादिक बनावना योग्य नाहीं अर जाका राग धन परिग्रहसूं आरंभसूं घट्या नाहीं अभिमान घट्या नाहीं अपनी जाति कुलादिकमैं ऊंचे होनेके अर्थि अभिमानतैं विख्याततताके अर्थि अपने भोगनिके अर्थि हवेली महल चित्रशालादिक बनावै है बाग बनावै है अनेक अपने विहार करनेके स्थान बनावै है संतानादिकके विवाहादिकमैं बहुत धन लगावै है जाति कुल नगर निवासीनिकूं जिमावै है तिनकूं कोऊ धर्मात्मा शिक्षा करै है जो तुम्हारा राग आरंभादिकतैं नाहीं घट्या तो ये केवल पापबंधके कारण अभिमानादिक पुष्टकरनेवाले पापके आरंभनिकूं त्याग करि जिनमंदिर बनावनेका आरंभ करो। जिसके प्रभावतैं तुम्हारा अशुभ राग घटि जाय अर आगेकूं तुम्हारे परिणाम वीतरागके सम्मुख होजाय अर अहिंसाधर्मका प्रवर्तन बधि ।य अनेक जीव स्वाध्याय करि शास्त्रश्रवणकरि वीतरागका दर्शन भावना पापाचारका रोकना शील संयम ज्ञानकी वृद्धि करना इत्यादिक उत्तम कार्य करि धर्मकी वृद्धि करै। जिनमंदिर हैं सो अहिंसाधर्मका आयतन है जिनमंदिरका निमित्तसूं अनेक जोव पापाचार छांड़ि जिनमंदिरमैं आवै तदि जिनधर्मके शास्त्रश्रवण करै तदि अपना अर परद्रव्यनिका भेदविज्ञान उपजै तदि मिथ्यादेव मिथ्यागुरु मिथ्याधर्मकी उपसना छांड़ि सर्वज्ञ वीतरागके धर्ममैं प्रवर्तन करै तदि हिंसादिक पापनितैं सप्तव्यसनतैं अन्यायतैं अभक्ष्यतैं विरक्त होय वीतरागके ध्यानमैं पूजनमैं कायोत्सर्गमैं सामायिकमैं संयममैं उपवास शील संयम दान व्रत प्रभावनामैं लीन होय मोक्षमार्गमैं प्रवर्तन करै तातैं ऐसा निश्चय जान हू जिनमंदिरका निमित्त विना मोक्षमार्ग नाहीं प्रवर्तै तातैं जा पुरुषनै जिनमंदिर कराया सो बहुत जीवनिका उपकार किया। बहुरि आपका हू बड़ा उपकार है आप कराव-

नेवालेका परिणाम सुलटे मार्गमैं लगि जाय हैं जो म जिनेन्द्र वीतरागका मन्दिर कराया है अब जो मैं अन्यायमार्ग चलूंगा तो जगतमें निन्द्य हो जाऊंगा। मैं अभक्ष्य भक्षण कैसैं करूं झूठ कैसैं बोलूं व्यसननिमैं प्रवृत्ति कैसैं करूं कलह करना गाली देना लोकनिंद्यकर्म करना ये अयोग्य दुराचार तो लोकलाजतैं ही अति दूर जाता रहे है अर परिणाम ऐसा हो जाय जो मंदिरमैं मैं मंदिर करानेवाला ही प्रवर्तन नाहीं करूंगा तो और कौन प्रवर्तैगा ऐसा विचार करि अभिषेकमैं जिनपूजनमैं शास्त्रश्रवणमैं जापमैं व्रतमैं जागरण भजनमैं प्रवर्तन लगि जाय तदि आपके धर्ममैं अतिप्रीति वधि जाय शास्त्रके वाचनेवालेनितैं शास्त्रश्रवण करनेवालेनितैं धर्ममैं प्रीति करनेवाले साधर्मीनिसूं सिद्धांतकी चर्चा कथनी करनेवालेनिमैं अनुराग बधता चलया जाय पढ़नेवालेनिसूं अतिहर्ष बधै। बहुरि आज मंदिरमैं पूजन कौन कौन किया दर्शनमैं कौन कौन आवै है यहां व्याख्यानमैं कौन कौन बैठे हैं आज उपवासवाले केतेक हैं अबकैं बेला तेला कौन कौन किया प्रोषधोपवासवाले केतेक हैं जागरणमैं केतेक लोग लुगाई प्रवर्तै हैं भजन गान बहुत सुन्दर भये ऐसैं धर्मकी प्रवृत्ति देखि बहुत आनन्द बधै समस्त साधर्मीनिमैं वात्सल्यता दिन दिन बधै अर हजारां लोग लुगाईनिमैं प्रभाव जैसैं जैसैं प्रगट होय तैसैं तैसैं धर्मानुराग बधता चलया जाय। बहुरि गृहचारका नुकता व्योहार विवाह करना वस्त्र वनावना आभरणवनावना अपने रहनेका जायगामैं मकान वनावना चित्राम करावना सुवर्ण लगावना इत्यादि रागके बधावनेवाले पाप कार्यनिमैं तो प्रीति घटि जाय है जो इनकरि कहा प्रयोजन है कौनकूं दिखवना है पापका कारण है निंद्य है ऐसा विराग आजाय है लज्जा आजाय जो पाप कार्यकूं कहा दिखाऊं? जो एता धन मन्दिरमैं लगाऊं तो बहुत जीवनिकै बहुत कालपर्यंत धर्ममैं अनुराग बधै ऐसा विचार जो धन लगावै सो मन्दिरके उपकरणनिमैं सिंहासन छत्र चामर भामंडल घण्टा ठोणा कलश तथा थाल रकावी झारी धूपदहनादिक समवशरणादि अनेक उपकरण सुवर्ण रूपाके कांसीके पीतलके उपकरणनिमैं धन लगाय आपकै धर्मात्माजननिकै धर्ममैं अनुराग बधावै तथा गदेला चांदनी पडदा सायवान इत्यादिकनिकरि साधर्मी धर्म-

सेवन करनेवालेनिका बड़ा वैयाव्रत्य होय है तथा विवाहादिकमैं लगाया धनतैं ऐसी कीर्ति उच्चपना प्रकट नाहीं होय जैसा मन्दिर करानेवालेका बहुत कालपर्यन्त कीर्ति यश प्रकट हो जाय अपने देशके समस्त लोक पूजन प्रभावना दर्शन धर्मश्रवण करि महान पुण्य उपार्जन करै हैं। यहां कोऊ कहै मन्दिर करावना उपकरण कराय जिनमन्दिरमैं मेलना अपना अर अन्यका उपकार तो करै हैं परन्तु मन्दिर करावनेमैं छह कायके जीवनिकी हिंसा तो धर्मके घात करनेवाली होय ही। ऐसैं कहनेवालेकूं उत्तर करिए है-यामैं हिंसा नाहीं होय है हिंसा तो अपना जीवघात करनेकी परिणाम होयगा तदि होयगी। मन्दिर करानेवालेके हिंसा करनेका परिणाम नाहीं है अहिंसाधर्ममैं प्रवृत्ति करनेका परिणाम है जैसैं मुनीश्वरनिकूं यत्नाचारतैं आहार देता गृहस्थके हिंसा नाहीं तथा जैसैं साधुनिकी बंदनाके अर्थि वा धर्मश्रवणके अर्थि गमन करता गृहस्थके हिंसा नाहीं होय है तथा जैसैं नित्य विहार करता ईर्यापथ सोधि गमन करता मुनीश्वरनिके हिंसा नाहीं है तथा मुनीश्वर नित्य उपदेश करै हैं गमन करै हैं शयन करै हैं उठै हैं बैठै हैं आहार करै हैं निहार करै हैं बन्दना करै हैं कायोत्सर्ग करै हैं तीर्थ बन्दनागुरुबन्दनाकूं जाय हैं तिन कार्यनिमैं हिंसक परिणामविना जीवकी विराधना होते हू हिंसा नाहीं है जीवनि करि तो समस्त धरती आकाश समस्त वस्तु भया है परन्तु कषायके वशि होय दयाभाव रहित होय प्रवर्तन करैगा तिसकै जीव मरो वा मत हिंसा ही है। जातैं अपना परिणाममैं दया नाहीं। हिंसा भाव अर अहिंसाभाव तो जीवके परिणाम है बाह्यमैं जीवका घात अघातके आधीन नाहीं सो पूर्वै बहुत वर्णन किया है। अब यहां मन्दिर बनावनेवालेका परिणाम विचारो जाकूं हवेली बनावनेमैं बाग बनावनेमैं कूआ बावड़ी बनावनेमैं महाहिंसा दीखै है अर जिसकै लाभ घट्या है धनसूं ममता टूटी है पापतैं भयभीत भया है सो मन्दिर करावै है। पहिले गृहस्थकै व्यापारनिमैं तो प्रवर्तनि करै था तदि दयाधर्मकूं याद हू नाहीं करै था अब सब काममैं धर्महोसूं परिणाम जोड़ै है जो यत्नसूं करो यो मन्दिरको काम है जल दोहरा नातणासूं छान २ लगावै है। कली चूना तगार दो दिन

ाय नाहीं राखै दो दिनमैं उठावनेमैं यत्न करै है अर उठावना मेलना धरना इनमैं अपना परिणाम तो

यही राखै है जो यत्नसूं करो विरधनाकूं टालो। इत्यादिक कार्यनिमैं हिंसाका परिणाम तो नाहीं करै है अपना परिणाम तो धर्मके आयतन बनावनेका है जो धर्मका स्थान बनि जायगा तो यामें अखण्ड अहिंसा धर्म प्रवर्तेगा अर यो मन्दिर है सो महान धर्मको आयतन है गृहसंबधी बहुत हिंसा आरम्भ घटाय परिणामनिमैं दयारूप प्रवर्तनमैं यत्न किया है मन्दिरमैं पग धरतां प्रमाण ईर्यापथ सोधि चालो यो मन्दिर है मत विराधना हो जाओ। मन्दिरमैं प्रवेश किये पीछैं जैनीनिकै इतने त्याग तो बिना करैं ही है—भोजनका त्याग जलपानका त्याग विकथाका त्याग गालीका त्याग शयनका त्याग पवनलेनेका त्याग वनज करनेका त्याग इत्यादिक पापबंधके कारण समस्त दुराचारका त्याग होय है तातैं जिनमन्दिर तो समस्त प्रकार अहिंसा धर्महीका प्रवर्तक जानना जामैं आरम्भ विषय कषायनिका त्याग करनेकी ही महिमा है। ऐसै मांसादिका त्यागरूप मूलगुण कहि अब तीन प्रकार गुणव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

दिग्व्रतमनर्थदण्डव्रतं च भोगोपभोगपरिमाणं। अनुबृंहणाद्गुणानामाख्यान्ति गुणव्रतान्यार्याः ॥ ७६ ॥

अर्थ—आर्य जे भगवान गणधरदेव हैं ते दिग्व्रत अनर्थदण्डव्रत भोगोपभोगपरिमाण ये तीन व्रत हैं ते तीन अणुव्रतनिकूं गुणकाररूप बधावनेतैं गुणव्रत कहै हैं। दश दिशानिमें गमन करनेकी मर्यादा करना सो दिग्व्रत है ॥ १ ॥ अर जिनके कुछ कार्य तो सधै नाहीं अर जिनतैं सासतो पाप होय विना प्रयोजन दण्ड भुगतना पड़ै सो अनर्थदण्ड है, अनर्थदण्डनिका त्याग सो अनर्थदण्डविरति नामका गुणव्रत है ॥ २ ॥ अर एकबार भोगनेमैं आवै सो भोग अर बारम्बार भोगनेमैं आवै सो उपभोग कहिये है, भोग उपभोगनिका परिमाण करना सो भोगोपभोगपरिमाणव्रत है ॥ ३ ॥ अब दिग्व्रत नाम गुणव्रतका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

दिग्वलयं परिगणितं कृत्वातोऽहं बहिर्न यास्यामि। इति संकल्पो दिग्व्रतमामृत्यणुपापविनिवृत्त्यै ॥ ७७ ॥

अर्थ—दश दिशानिका समूहमैं परिमाण करिकै अर परिमाण करी तातैं बाहरमैं नाहीं गमन करूंगा अणुमात्र हू पापतैं निवृत्तिके अर्थि इस प्रकार मरणपर्यन्त संकलप करना सो दिग्व्रत नाम गुणव्रत है। भा-

वार्थ—गृहस्थ है सो अपना प्रयोजन जानै जो हमारे इस दिशामैं एता क्षेत्रतैं अधिक बनज व्यौहारका प्रयोजन नाहीं तथा इस दिशामैं एता क्षेत्र सिवाय मोकूं व्यौहार नाहीं करना लोभनाशके अर्थि अहिंसाधर्मकी वृद्धिके अर्थि ऐसा विचारि करि मरणपर्यन्त दश दिशानिमैं मर्यादा करि बाहर जावनेका कोऊको बुलावनेका भेजनेका वस्तु मंगावनेका त्याग करि लोभकूं जीतना सो दिग्व्रत नाम गुणव्रत है। अब दश दिशानिकी मर्यादा कौन परिमाणतैं करिये यातैं सूत्र कहै हैं—

मकराकरसरिदटवीगिरिजनपदयोजनानि मर्यादाः। प्राहुर्दिशां दशानां प्रतिसंहारे प्रसिद्धानि ॥७८॥

अर्थ—दश दिशानिकी मर्यादारूप संकोचविषै प्रसिद्ध विख्यात मर्यादा परमागमविषै समुद्र नदी पर्वत वन देश योजन कहै हैं। मरणपर्यन्त मर्यादाबाह्यक्षेत्रमैं गमनागमनादि नाहीं करै समुद्रादिक लोक विख्यात चिह्नतैं मर्यादा करै। अब दश दिशाकी मर्यादा धारण करनेवालेकै कहा होय सो कहै हैं।

अवधेर्बहिरणुपापं प्रतिविरतेर्दिग्व्रतानि धारयताम्। पञ्चमहाव्रतपरिणतिमणुव्रतानि प्रपद्यन्ते ॥७९॥

अर्थ—दिग्व्रतनिनै धारण करते गृहस्थनिकै मर्यादा बाहर अणुमात्र हू पापप्रवृत्तिकी विरक्ततातैं अणुव्रत हैं ते ही पंच महाव्रतनिकी परणतिकूं प्राप्त होय हैं। भावार्थ—जो गृहस्थ दश दिशानिकी मर्यादा करिकैं रहै हैं ताकै मर्यादामांहि तो अणुव्रत रह्या अर मर्यादाबाहर समस्त त्रसस्थावरनिकी हिंसादिक पंच पापनिके त्यागतैं अणुव्रत ही महाव्रतपनाकी परणतिकूं प्राप्त होय हैं। अब या कहै हैं जो सम्वर कियो तितना क्षेत्र बाहर अणुव्रत हैं ते महाव्रतका परणतिकूं प्राप्त होना ही कैसैं कहो हो? मर्यादा बाहर साक्षात् महाव्रती कहो, ताकूं उत्तर करनेरूप सूत्र कहै हैं—

प्रत्याख्यानतनुत्वान्मन्दतराश्चरणमोहपरिणामाः। सत्त्वेन दुरवधारा महाव्रताय प्रकल्प्यन्ते ॥८०॥

अर्थ—अणुव्रती गृहस्थकै सकलसंयमका विरोधी जो प्रत्याख्यानावरणका उदयका मंदपनातैं मंदतर चारित्र मोहका परिणाम सत्त्वेन दुरवधारा कहिये अस्तिपनाकरि महा कष्ट करिकै हू धारण नाहीं किया जाय तातैं महाव्रतके अर्थि कल्पना करिये है। भावार्थ-जाकै चारित्रमोहकर्मकै मंदउदयका परिणाम संज्व-

लनकषाय रूप होय ताकै तिसकालमैं महाव्रत होय है अर गृहस्थ देशव्रतीकै प्रत्याख्यानावरणका उदय विद्यमान है तातैं संज्वलन कषायका मंदउदयरूप परिणाम कष्टतैं हू होना दुर्लभ है तातैं समस्त पापनिका त्याग होते हू महाव्रत नाहीं होय है। महाव्रतकी कल्पना ही करिये है। महाव्रत तो प्रत्याख्यानावरण कषायका उदयका अभावतैं होय हैं। अब महाव्रत कैसैं होय सो कहै हैं—

पञ्चानां पापानां हिंसादीनां मनोवचःकायैः। कृतकारितानुमोदैस्त्यागस्तु महाव्रतं महतां ॥८१॥

अर्थ--हिंसादि पंच पापनिका मनवचनकायकरि कृतकारित अनुमोदनाकरि त्याग सो महंत पुरुषनिकै महाव्रत होय हैं। अब दिग्व्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

ऊर्ध्वाधस्तात्तिर्यग्व्यतिपाताः क्षेत्रवृद्धिरवधीनां। विस्मरणं दिग्विरतेरत्याशाः पञ्च मन्यन्ते ॥८२॥

अर्थ—दिशानिकी मर्यादा करी तिनमैं अज्ञानतैं वा प्रमादतैं पर्वतादिक ऊपरि चढ़ावना सो उर्द्ध्वातिपात अतीचार है। कूप बावड़ी इत्यादिकनिमैं नीचैं उतरबो सो अधःअतिक्रम है। तिर्यक् गुफादिकनिमैं प्रवेश करना सो तिर्यग्व्यतिक्रम है। बहुरि क्षेत्र बधाय लेना सो क्षेत्रवृद्धि अतीचार है। त्याग किया तिसका विस्मरण हो जाना सो विस्मरण नाम अतीचार है। ये दिग्व्रतके पञ्च अतीचार हैं। अब अनर्थदण्डत्यागव्रत कहनेकूं अष्ट सूत्र कहै हैं-

अभ्यन्तरं दिगवधेरपार्थकेभ्यः सपापयोगेभ्यः। विरमणमनर्थदण्डव्रतं विदुर्व्रतधराग्रण्यः ॥८३॥

अर्थ—आप जो दिशानिकी मर्यादा करी ताके मांहि वृथा जे मनवचनकायके योगनिकी प्रवृत्ति तिनतैं विरक्त होना ताहि व्रतधरनिमैं अग्रणी जे भगवान ते अनर्थदंडवृत कहै हैं। भावार्थ-मर्यादा करि लीनी तहां हू ऐसा कर्म करै जातैं अपना प्रयोजन हू नाहीं सधै अर वृथा पापका बंध होय दण्ड भुगतना पड़ै सो अनर्थदण्ड है सो अनर्थदण्ड त्यागने योग्य है जातैं जिसके करनेतैं अपना विषयभोग हू नाहीं सधै कुछ लाभ हू नाहीं होय यश हू नाहीं होय धर्म हू नाहीं होय अर पापका बंध निरंतर होय जाका फल कडवा दुर्गतनिमैं भोगना पड़ै सो अनर्थदण्ड त्यागने ही योग्य है। अब अनर्थदण्ड पांच प्रकार है तिनकूं कहै हैं-

पापोपदेशहिंसादानापध्यानदुःश्रुतीः पंच । प्राहुः प्रमादचर्यामनर्थदण्डानदण्डधराः ॥७५॥

अर्थ—पापका उपदेश हिंसादान अपध्यान दुःश्रुति प्रमादचर्या ए पंच अनर्थदण्ड हैं तिननैं अदंडधर जे गणधरदेव हैं ते कहे हैं। भावार्थ-अशुभ मन वचन कायके योग तिनकूं दंड कहिये है, जातैं समस्त जीवनिकूं अपने अपने अशुभ मनवचनकायके योग ही दुर्गतिनिमैं नानाप्रकार दंड दे हैं तातैं अशुभ मनवचनकायकूं दण्ड कहिये, ताकूं अदण्डधर जे अशुभ योगनिकूं नाहीं धारैं ऐसैं गणधरदेव हैं ते पांच प्रकार अनर्थदंड कह्या है। पापका उपदेश देना सो पापोपदेश ॥१॥ हिंसाके उपकरणनिका दान सो हिंसादान ॥ २ ॥ खोटा ध्यान सो अपध्यान ॥ ३ ॥ खोटा श्रवण करना सो दुःश्रुति ॥ ४ ॥ प्रमादरूप चर्या करना सो प्रमादचर्या ॥ ५ ॥ ऐसे पंच प्रकार अनर्थदंड हैं। पापोपदेश नाम अनर्थदंड कहनेकूं सूत्र कहै हैं-

तिर्य्यक्क्लेशवणिज्याहिंसारम्भप्रलम्भनादीनाम् । प्रसवः कथाप्रसंगः स्मर्तव्यः पाप उपदेशः ॥८५॥

अर्थ-जे तिर्यंचनिके क्लेश उपजनेकी तथा वनज कहिये वेचनेकी खरीदनेकी अर हिंसाकी अर आरंभकी अर प्रलंभ कहिये कपट ठगपनाकी इत्यादिक पाप उपजनेकी कथामैं वारंवार प्रवृत्तिरूप उपदेश करनेतैं पापोपदेश नामा अनर्थदण्ड है। भावार्थ—तिर्यंचनिकूं मारनेका डाहनेका दृढ़ वांधनेका मर्मस्थानमैं पीड़ा करनेका बहुत बोझ लादनेका बाधी करनेका नाशिका फोड़नेका तिर्यंचनिको पकड़नेका पिंजरेनिमैं रोकनेका जो उपदेश सो तिर्यक्क्लेश नाम पापोपदेश है, तथा अनेक वस्तुनिमैं पाप उपजानेवाला बनजका उपदेश तथा जिनतैं छहकायके जीवनिकी हिंसा होय ऐसा उपदेश सो हिंसोपदेश है, अर बाग वनावना जायगा वनावना विवाह करना इत्यादि पापके आरंभका उपदेश सो आरंभोपदेश, अर कपट छल करनेका उपदेश सो प्रलंभनोपदेश है, अनेक प्रकार पापरूप उपदेशकी कथा करना पापमैं प्रेरणा करना, सो पापोपदेश नाम अनर्थदंड है। अब हिंसादान नामा दूजा अनर्थदंड कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

परशुकृपाणखनित्रज्वलनायुधशृङ्गिशृङ्खलादीनां वधहेतूना दानं हिंसादानं ब्रुवन्ति बुधा. ॥८६॥

अर्थ—हिंसाका कारण जे फरसी खडग कुदाल अग्नि आयुध विष वेड़ी सांकल इत्यादिकनिका दान ताहि ज्ञानी हैं ते हिंसादान नाम अनर्थदंड कहै हैं। जिनतैं हिंसा ही उपजैं ऐसा वस्तुका अन्यकूं देना फावडा कुदाल खुरपा कुशि हथोड़ा तरवार छूरी कटारी तमंचा भाला वाण धनुष बंदूक तोप दारू गोला गोली चाबुक दांतला दतीला बेड़ी सांकल जहर अग्नि इत्यादिक वस्तुकूं दान करना मांगी देना वेचना भाडै देना सो समस्त हिंसादान नाम अनर्थदंड है। अब अपध्यान नामा अनर्थदंडकूं कहै हैं—

वधबन्धच्छेदादेर्द्वेषाद्रागाच्च परकलत्रादेः। आध्यानमपध्यानं शासति जिनशासने विशदाः ॥८७॥

अर्थ—जो वैरतैं वा अपने विषय साधनेके रागतैं परकी स्त्री पुत्रादिकनिका वंधन मारण वा छेदनादिकका चिन्तवन ताहि जिनशासनविषैं प्रवीण हैं ते अपध्यान नामा अनर्थदंड कहै हैं। भावार्थ—जाकै रागद्वेषतैं ऐसा परिणाममैं चिंतवन रहै जो याका पुत्र मर जाय याकी स्त्री मर जाय याकै दंड होजाय याका हस्त नाक कर्ण छेद्या जाय याका धन लुट जाय याकी आजीविका नष्ट होजाय याकी इन्द्रियां नष्ट होजायं याका लोकमैं अपवाद होजाय यो स्थानभ्रष्ट होजाय बुद्धिभ्रष्ट होजाय ऐसा चिंतवन वारंवार करै ऐसैं अन्यके दुःख आपदा चाहना अपने कुछ लाभादिक होय नाहीं आपका चिंतवनतैं कुछ होय नाहीं अपने वृथा महापापका वंध होय अन्यका बुरा भला आपका पापपुण्यके अनुकूल होय है वृथा दुर्ध्यान करै ताकै अपध्यान नामा अनर्थदंड कहिये है। अब दुःश्रुति नामा अनर्थदंड कहनेकूं सूत्र कहै हैं।

आरम्भसंगसाहसमिथ्यात्वद्वेषरागमदमदनैः। चेतः कलुषयतां श्रुतिरवधीनां दुःश्रुतिर्भवति ॥८८॥

अर्थ—आरम्भ कहिए असि मसि कृषि विद्या वाणिज्य शिल्प अर संग कहिए धन धान्यादिक परिग्रह अर साहस कहिए आश्चर्यकारी वीरकर्मादिक अर मिथ्यात्व कहिए ब्रह्माद्वैत ज्ञानाद्वैत क्षणिक याज्ञकादिक विरुद्ध अर्थका प्रतिपादक शास्त्र अरु राग कहिये आसक्तता द्वेष कहिये वैर अष्ट मद अर कामवेदनाकृत विकार इनकरि चित्तकूं कलुषित करनेवाले ऐसे अवधि जे शास्त्र तिनको जो श्रवण सो दुःश्रु

ति नामा अनर्थदंड है। भावार्थ—जो मिथ्यात्व राग द्वेषका उपजानेवाला पदार्थनिका विपर्यय स्वरूप ग्रहण करावनेवाला शास्त्रका विकथाका शृंगार वीर हास्यका प्ररूपक तथा मारण उच्चाटन वशीकरण कामका उत्पादक शास्त्रनिका श्रवण करना तथा जांगलिक सर्पनिका भूतनिका रसकर्म इन्द्रजाल रसायण मायाचारादिके प्ररूपक यज्ञादिक हिंसाके प्ररूपक दुष्टशास्त्र दुष्टकथा दुष्टराग दुष्ट चेष्टा दुष्टक्रिया दुष्टकर्मनिका श्रवण करना सो दुःश्रुति नामा अनर्थदण्ड है। अब प्रमादचर्या नामा अनर्थदण्डकूं कहै हैं।

क्षितिसलिलदहनपवनारम्भं विफलं वनस्पतिच्छेदं। सरणं सारणमपि च प्रमादचर्यां प्रभाषन्ते ॥८६॥

अर्थ—पृथ्वी खोदनेका पाषाणादिक फोडनेका आरम्भ, जलपटकनेका सींचनेका छिडकनेका जल विलोवनेका अवगाह करनेका आरम्भ, विना प्रयोजन अग्नि वधावनेका बालनेका बुझावनेका दावनेका आरम्भ, पवन धालनेका पवनके यंत्र रोकनेका अग्निमैं धमनेका वृथा आरम्भ, तथा प्रयोजन विना वनस्पतिका छेदना तथा विना प्रयोजन गमन करना विना प्रयोजन गमन करावना ते समस्त प्रमादचर्या नामा अनर्थदंड कह्या है। यहां ऐसा विशेष जानना, गृहस्थकै गृहाचारामैं अनेक पापहीके आचरण हैं जो गृहाचाराके पापतैं निराला नाहीं हुआ जाय तो जिनसूं कुछ प्रयोजन तुम्हारा सिद्ध नाहीं होय ऐसैं विना प्रयोजन पापबंधका कारण जिनका फल दुर्गतिनिमैं असंख्यातकाल अनंतकाल दुःख भोगो ऐसे निंद्यकर्म तो छोड़ो जो उत्तम कुलमैं जिनेंद्रको उपदेश उत्तमधर्म अतिदुर्लभ पायो है तो विना प्रयोजनके पाप बंधतैं भयभीत होना योग्य है पशुका ज्यों जन्म वृथा मत व्यतीत करो आपका घरका पापतैं नाहीं छूटया जाय तो अन्यकूं ऐसा पापका उपदेश मत करो गृह जायगा बणावनेमैं महा हिंसा होय है, यातैं गृह बनावनेका जायगा धवल करावनेका जायगाको मरम्मत करावनेका बागवगीचा बनावनेका रोडीखुदावनेका गली खुदावनेका कुआ बावडी बनावनेका तालाव खुदावनेका जल निकासनेका तालावकी पाल बन्धावनेका तालावको पाल फुडावनेका नदीकी पाल बन्धावनेका वना हुआ मकान गृह डहावनेका बागबगीचा डहावनेका वृक्ष कटावनेका बनकटी करावनेका कोयला बनावनेका घास

खुदावनेका दाह लगावनेका मिथ्या देवनिका मकान बनावनेका मिथ्या देवतानिका मन्दिर तथा मूर्तिका बिगाड़नेका खेती करनेका सुन्दर मकानकूं मलीन करनेका कदाचित् उपदेश मत करो। तथा तिर्यञ्चनिकै दुःख होनेका मारनेका दृढ़ बांधनेका बाधी करनेका डाह देनेका नाशिका फोडनेका उपदेश मत करो मनुष्य तिर्यञ्चनिके भोजनपानके रोकनेका बंदीगृहमें धरनेका संताननितैं वियोग करनेका पत्तीनिकूं पिंजरानिमैं धरनेका सर्प बीछू सिंह व्याघ्र मूसा न्योला कूकरा इत्यादिक हिंसक जीवनिके मारनेका जूवां लीखां मारनेका उटकण खटमल मारनेका खाट तावड़ै देनेका छिडकाव करावनेका जीवनिके पकड़ने मारनेके यंत्र जाल बनावनेका उपदेश मत करो। खोटे पापरूप शास्त्र पढनेका जिन शास्त्रनिमें श्रृंगार मायाचारादिककी अधिकता मिथ्या श्रद्धान करानेवाले जिनग्रन्थनिमें मारणक्रिया विष बनावनेकी क्रिया मारण उच्चाटन वशीकरण मन्त्र तंत्रादिक तथा इन्द्रजालादिक अनेक कपटनिका उपदेश तथा रसनिका दग्ध करना रसायण करना इत्यादिक पापके शास्त्र वीररसके शास्त्र हिंसाप्रधान क्रियाके शास्त्र मत पढ़ो अन्यकूं उपदेश मत करो तथा अभक्ष्य भक्षण करनेका रात्रिभोजन करनेका झूठ बोलनेका चुगली करनेका चोरी करनेका खोटी साख भरनेका व्यभिचार करावनेका व्यवहारादिक महाआरम्भ करनेका रोशनी प्रज्वलित करनेका (बारूदके) छुडावनेके तथा बागबागीचा देखवेकूं प्रेरणा करनेका उपदेश मत करो।

तथा इस देशतैं दूसरे देशमें व्यौपार बहुत है वहां जावो ऐसा उपदेश मत करो। तथा परिणामनिमें दुर्ध्यानके कारण ऐसा मेला ख्याल कौतुक व्यभिचारादिक कर्म मनुष्यतिर्यञ्चनिको गडिकलहादिक देखनेका उपदेश मत करो। तथा युद्धादिक करनेका गाली देनेका परकी आजीविका बिगाड़ि देनेका उपदेश मत करो। तथा खोटे गीत गान नृत्य वादित्र कलह बिसंवाद श्रवण करनेका उपदेश मत करो। तथा इस देशमें दासी दास सुलभ हैं इनकूं अमुक देशमें लेजाय बेचै तो बहुत लाभ होय ऐसा उपदेश क्लेशवणिज्या है तथा गाय भैंस अश्वादिक अमुक देशतैं ग्रहण करि अन्य देशमें बेचै तो बहुत धनका लाभ होय सो तिर्यक्वणिज्या है तथा चिडीमार शिकारानिकूं शाकुनीनिकूं ऐसैं कहै जो अमुक देशमें मृग सूकर

पक्षी इत्यादिक जीव बहुत हैं ऐसा कहना सो वधकोपदेश है तथा खेती करनेवालेनिकूं पृथ्वीके आरम्भका जल अग्नि पवन वनस्पति छेदनादिकका उपदेश देना सो आरम्भोपदेश है ये समस्त पापोपदेश त्यागने योग्य हैं। तथा हुक्का जरदा तमाखू भांग अमल छोंतरादिक पीवनेका सूंघनेका खावनेका उपदेश महा-पापका कारण है सो मत करो जातैं हुक्को जर्दो तो उत्तम कुलके योग्य ही नाहीं जिसतैं जाति कुल भ्रष्ट होजाय धुवांका अर जलका संयोगतैं बहुत जीव हुक्काके जलमें उपजैं अर जल महादुर्गन्ध होजाय अर जहां पड़ै तहां छहकायके जीवनिको विराधना हो करै अर चूना ईंट पकावनेका उपदेश मत करो। बहुरि बहुत पापके वनिजका उपदेश मत करो। गाय भैंस बलद ऊंट गाडा गाडोनिका राखनेका उपदेश मत करो। कोऊ दातार मनुष्य तिर्यञ्चनिकूं भोजन वस्त्र धनादिक देता होय ताके अन्तराय मत करो। कुपात्र दा-नका उपदेश मत करो देतेमैं विघ्न मत करो। व्रत भङ्ग करनेका उपदेश मत करो। इत्यादि बहुत कहा कहिये अपने धर्म अर्थ कामना कुछ भी सिद्ध होय नाहीं केवल आपके पापहीका बन्ध होय ऐसा पापरूप उपदेश मत करो। बहुरि जिनतैं हिंसा बहुत होय ऐसे उपकरण किसीकूं मत द्यो मांगे मत द्यो भाड़े मत द्यो प्रीतिकरि मत द्यो मोलकरि मत द्यो जिनके देनेमैं किंचित लाभ ही होय तो हू महापापके कार-ण जानि देना योग्य नाहीं जिनकूं हस्तमें लेते ही दुष्ट परिणाम होजाय घातहीका विचार रहै ऐसे खड्ग छूरी भाला वाण धनुष बन्दूक कटारी इत्यादिक आयुध देना योग्य नाहीं। बहुरि भूमि खोदनेके कारण जिनकरि गलोनिमैं रोडोनिमैं खेतिनमैं बड़े बड़े जीव सर्प बीछू गिंडोला लट कीडा मूसा इत्यादिक जीव कटि जांय छिद जांय कोटनि जीवनिकी हिंसा होजाय ऐसा फावड़ा कुदाल कुस खुरपा हल मूद्गर हथो-ड़ा किसीकूं मत द्यो। तथा अनेक त्रसस्थावरनिकूं चीरनेवाला मारनेवाला परसी कुल्हाडा बसोला करोंत दातला दतीला किसीकूं मत द्यो। तथा तिर्यञ्च मनुष्यनिके मारनेके कारण लाठी घोटा चाबुक चामड़ा-लोढा किसीको मत द्यो। बहुरि अग्नि विष वेड़ी सांकल पिंजरा जाल जीव पकड़नेका यन्त्र किसीको मत द्यो। मार्जार कूकरा इत्यादिक हिंसक जीवनिकूं अपनाकरि मत पालो। सूआ तीतर बुलबुल कूकडा मैना

कबूतर बाज इत्यादिक पक्षीनिकूं पींजरामें रखना पालना मत करो। बहुरि केतेक बहुत पापके उपकरण घरमें हू मत राखो घरमें रहे देखते हू हिंसाके उपकरण परिणाम हो बिगाड़े हैं। बहरि एते निंद्य बनिज हू महापापके कारण जिनमें किंचित लाभ होय तो हू पापसूं भयभीत होय त्याग करो लोहा नील मैण लवण लकडा साजी सण सावण लाख चामडा ऊनकेश कसूंभा गुड खांड अन्न चावल सिंहाडा शस्त्र दारू गोला सीसा लहसन कांदा आदो जमीकंद तथा घृत तैल आंम नीबू इत्यादिक वनस्पतिकाय भांग तमाखू जर्दा तिल खल काकडा पिंजरा फांसी गांजा चरस दासी दास घोड़ा ऊंट बलध भैंसा गाडागाडी इंट इनके बेचनेमें खरीदनेमें संचयमें महा हिंसा होय है यातैं त्याग करो। समस्तका त्याग नाहीं बन सके तो यामैं महापाप जानि कोऊ अन्नादिकमैं अल्प संग्रह अल्प प्रमाण राखि अन्य समस्तका तो त्याग करो। बहुरि केतीक खोटी आजीविका महापापबन्धकरि दुर्गति लेजाय ते परिहार करो। कटिवालो करनेकी कोटवालका पियादापनाकी बनकटी करानेको गाडा गाडी ऊंट बलध भाड़ै देनेकी ऊंट बलध गाडा गाडी भाडै करानेवाला दलाल यो नाहीं देखै है जो याका कांधा गल गया है कि नासिका गल गई है कि पीठ गल गई है कि पग दूखै है कि याका अङ्गमैं कीडा पढि रह्या है कि वृद्ध है कि रोगी है ऐसा बिचार भाड़ाकी दलालीवालाकै नाहीं है चतुर्मासमें भी बहुत बोझ लदाय दे अर भाड़ाकी आजीविका अर भाड़ाकी दलाली दोऊ महापाप हैं अर लोभके वश होय वृद्ध पुरुषका व्याह सगाई मत करावो। राजका हासिल मत चुरावो।

तथा अन्य अपराधीकी चुगली खानेकी झूठी साखि भरनेकी गवाही होजानेकी वैद्यपनाकी आजीविका मत करो जंत्र मन्त्र भूत भूतणी डाकनिके इलाज करनेकी रसायणादिक धूर्त्ताई तैं दिखाय ठग लेनेकी आजीविका मत करो। यह दुर्गतिको ले जानेवाली है तथा काठ बेचनेवाला मदिरा करनेवाला कलाल कषायी धोबी चमार इंट चूना पकावनेवाला नीलगर जुवारी घसियारा घास खोदनेवाला इनकूं व्याजपर धन मत दो। मांसभक्षीनिकूं वेश्यानिकूं निंद्यपापकी आजीविका करनेवालेनिकूं व्याजपर रुपया मत दो

अपना मकान भाड़े मत दो। बहुरि अशुभ परिणामके धारक अन्य मार्गी मांसभक्षी मद्यपायी वेश्यामें आसक्त परस्त्रीलंपटी अधर्मीनितैं मित्रता प्रीति करनेका हू त्याग करो। परके दोष ग्रहण मत करो। अन्यकी लक्ष्मीमैं वांछा मत करो अन्यकी लक्ष्मीकूं देखि आश्चर्य मत करो अपना दीनपना मत चिन्तवन करो अन्यकी स्त्रीके देखनेमैं अभिलाषा मत करो। अन्य मनुष्य तिर्यंचनिकी कलह मत देखो। अन्यके पुत्रका स्त्रीका वियोगकी वांछा मत करो। परका अपमान अपयश अपवाद सुनि हर्षित मत होहु। अन्यके लाभ देख विषाद मत करो। अन्यके रससहित भोजन आभरणादिक देखि अपने परिणाममें दुःखित मत होहु। आपकै दारिद्र वियोग रोग होते आर्तपरिणामकरि क्लेशित मत होहु धनवाननिसूं ईर्षा मति करो। बहुरि कोऊ सिंघ व्याघ्र सर्पादिकनिकी शिकार चिंतवन मत करो। कोऊका संग्राममें जय पराजय मत चाहो। परकी स्त्रीका संसर्ग वचनालाप करनेमें वेश्यादिकनिका हावभाव नृत्यका विलास देखनेमें अभिलाषा मत करो। गाली भंडवचन लिए गीत मत सुनो। खोटे राग सांग कौतूहल परिणाम मलिन करनेका कारणका श्रवण देखना दूरहीतैं छांड़ो। दारिद्र आवते हू नीच प्रवृत्तिकरि आजीविका मत करो किसींतैं याचना मत करो दीनता मत भाखो निर्धनपणाकूं होते हू प्रवृत्ति विकाररूप मत करो। नीच कुलवालेनिके करनेयोग्य वस्त्र रंगणा धोवना इत्यादिक निंद्यकर्म करनेका परिहार करो। बहुरि जिनालय आदिक धर्मके स्थाननिमें स्त्रीनिकी कथा राजकथा चोरकथा देशकथा महापापबन्ध करनेवाली कथा कदाचित् मत करो। बहुरि लेन देन व्याह सगाईका झगड़ा तथा न्याय पंचायती जिनमंदिरमें बैठि जाति कुलका विसंवाद कदाचित् मत करो। मंदिरमें बैठि करोगे तो धर्मस्थानकी मर्यादा तोड़नेतें नरक निगोदका कारण घोरकर्मका बन्ध होयगा तातें धर्मायतनमें पापका बधावनेवाला कर्म दूरहीतें त्याग करो। बहुरि जिनमंदिरमें भोजनपान तांबूल गंध पुष्प विषयादिक तथा शयन उच्चासन वनिज सगाई झगड़ा गालीके वचन हास्यके वचन अविनयके वचन आरम्भके वचनादिकमैं कदाचित् प्रवर्तन मत करो। बहुरि मिथ्याश्रुतका श्रवण मत करो जिनके श्रवणतें विषयनिमें राग बधे हास्य कौतुक उपजै काम जाग्रत होजाय भोजनके नाना स्वादनिमें चित्त चलि जाय ऐसी कथनी

श्रवण मत करो। तथा स्त्रीपुरुषनिके पापरूप चारित्रकी कथा तथा भूतप्रेतनिकी असत्य कथा तथा हिंसाकी प्रधानताके धारक वेद स्मृत्यादिककी कथा तथा कपोल कल्पित अनेक कहानी तथा फारसी किताबनिका लिख्या तिनकूं किस्सा कहै हैं ते महा दुर्ध्यानके करनेवाले श्रवण मत करो तथा भारत रामायणादिकनिकी कल्पित कथा कदाचित् श्रवण मत करो। बहुरि कषायनिके उत्पन्न करनेवाले क्रोधीनिके वचन अभिमानीनिके मदके भरे वचन मायाचारीनिके कुटिल वचन लोभीनिके लालसा उपजावनेवाले वचन मद्यमांस अभक्ष्यके स्वादकी प्रशंसा करनेवालेनिके वचन मद्य अमल भांग तमाखू हुक्कनिकी प्रशंसा करनेवालेनिके वचन मत श्रवण करो। बहुरि धर्मके अभाव करनेवाले परलोकादिकके अभाव कहनेवाले नास्तिकनिके वाक्य पापबन्धके कारण मत श्रवण करो। बहुरि वृथा आरम्भ विसंवादकूं छोड़ो तथा माटी कजोडी कर्दम कांटा ठीकरा मल मूत्र कफ उच्छिष्ट जल अग्नि दीपक इत्यादिक भूमिकूं देखे विना मत पटको तथा शीघ्रतासूं पाषाण काष्ठ आसन शय्या पल्यंक धातुका पात्र चरवा चरी तवला परात चौकी पाटा वस्त्रादिकनिकूं जमीन ऊपरि घींसकरि रगडकरि प्रमादतैं मत सरकावो यामैं बहुत जीवनकी हिंसा होय है यत्नाचारका अभाव है तातैं देखि यत्नतैं उठावो मेलो। बहुरि विना प्रयोजन भूमिका कुचरना वृक्षकी डाहलीनिका मोडना हरित तृणादिककूं छेदना मर्दन करना वृक्षनिके पत्र पुष्पादिकनिकूं चीरना तोड़ना वृथा जल पटकना इत्यादिक पापतैं भयभीत होय मत करो। बहुत कहा कहिये गृहाचारामैं जेता वस्तु पात्र अन्न जलादिक हैं तिनकूं देख करि धरो जैसैं धर्म नाहीं विगडै उजाड़ विगाड नाहीं होय तैसैं करो। प्रमाद छाडि भोजनपान औषधि पकवानादिक नेत्रनितैं देखि सोधि भक्षण करो। शीघ्रतासूं प्रमादी होय विना सोध्या भोजन मत करो। गमनमैं आगमनमैं उठनेमैं देखे विना सोधे विना प्रवर्तन मत करो। जातैं दया पलै अर अपना शरीरकै वाधा नाहीं होय हानि नाहीं होय तथा प्रमादी होय हित अहितका विचार किये विना सुपात्र कुपात्रका विचार विना किसीकूं वार्ता मत कहो कहनेमैं गुणदोषका विचार करि कहो। अर कोई आपकूं पूछै तो शीघ्रतासे उत्तर मत द्यो याही कहो मैं समझ करि वि-

चार करि आपकूं जवाब देस्यों पाछैं अवकाश पाय धर्मअर्थकामसूं अविरुद्ध विचार विनयसहित उत्तर करो शीघ्रतातैं उत्तर देनेमैं उस कालमैं क्रोधमानमायालोभके वशतैं वचन निकसनेका ठिकाना नाहीं कषायके उदयतैं योग्य अयोग्य कहनेका विचार नाहीं रहै है अन्यका वाक्य हू परिपूर्ण श्रवण करि लेवे तथा कहनेका समस्त अभिप्राय जाननेमैं आजाय तदि उत्तर करना योग्य है तातैं प्रमाद जो असावधानतातैं वचन मत कहो। एकांतरूप हठग्राही पक्षपाती मत होहु धर्म विगडि जायगा तातैं दोऊ लोकके हितके अर्थी हो तो प्रमादचर्या नामा अनर्थदण्ड छोड़ो ऐसैं पंच प्रकार अनर्थदण्डनिकूं समझ करि त्याग करै तातैं अनर्थदण्ड त्याग नामा व्रत होय है।

बहुरि अनर्थदंडनिमैं महा अनर्थकारी द्यूतक्रीड़ा है जुवा समस्त व्यसननिमैं प्रधान है समस्त पापनिका संकेत स्थान है महान आपदाका कारण है समस्त अनीतिनिमैं महा अनीति है याका परिणाम ही महादुष्ट है जो अपना समस्त घर संपदा जूवामें संकल्प करिकैं हू अन्यका धन लिया चाहै है जुवारीके एता बड़ा लोभ है जो कोऊ प्रकार परका धन मेरे आजाय ऐसैं रात्रि दिन चिंतवन करता रहै है मेरा धन जाय तो जावो अपयश होहु मरण होहु दरिद्रता होहु कोऊप्रकार परका धन मैं जीत ल्यूं तदि मेरा जीवतव्य सफल है लोभकषायकी तीव्रता सो ही महाहिंसा है। जुवारीका महा निर्दयी परिणाम होय है परका घात ही चिंतवन करै है। जो जुवामैं धन हारि जाय तो चोरी करै धनवास्तैं मनुष्यनिकूं मारै ही जुवारीनिके परस्पर महाक्लेश होय ही मारामारी होय हो मायचारी होय ही जिनसूं महाप्रीति होय तिनसूं भी महाकपट अनेक छल करि धनग्रहण करया ही चाहै जुवा कपटका तो स्थान ही है हजारा छल रचै है अपनी स्त्रीनैं जुवामैं संकल्प करदे पुत्र पुत्रीनै संकल्प करदे स्त्रीनै हारजाय पुत्रीनै हारजाय जुवारीनै देदे है जुवारी दरिद्री व्यसनीकूं पुत्री परणाय देहै जुवामैं अपना मकान रहनेका बेच देहै दावपर लगाय देहै तथा पुत्रकूं बेच देहै लक्ष धनका धनी एक क्षणमैं समस्त धन हार दरिद्री हो जाय है तदि महाआर्तध्यान रौद्रध्यानतैं मरि दुर्गतिमैं भ्रमण करै है अर धन जीत ल्यावै तो मद उपजै है कुमार्गमैं ही जाका धन खर्च

होय है महा रौद्रध्यानके प्रभावतैं मरि महा कुयोनि पाय भ्रमण करै है जुवारी मद्पानादिक करै है वेश्यामैं आसक्त होय जाय है सुमार्गमैं धन लगै नाहीं जुवारीतैं न्यायरूप अन्य आजीविका नाहीं करी जाय है जुवारीकी प्रतीति जाती रहै है याकूं कोऊ धन नाहीं दीजै है जुवारीके सत्य वचन कदाचित् नाहीं होय है। जुवारीकै शुभपरिणाम होय नाहीं अपना पूर्वोपार्जित कर्मका दिया न्यायका धनमैं संतोष कदाचित् आवै नाहीं। एकान्तमें एकाकीकूं मारि धन खोस ले जाय है अपना घना नातादार भाई होय ताकूं एकान्तमैं मारि आभरणादि ले ही जाय है। जुवारीकी प्रीति मूरख होय सो हू नाहीं करै है परधनकी अति तीव्र तृष्णाकरि कुदेवनिको बोलारी बोले है मिथ्याधर्म सेवन करै है संतोष शील निराकुलताकूं जलांजली देहै अति लोभके परिणामतैं विपरीत बुद्धि हो जाय है। परमार्थ जानै नाहीं है। धर्मको श्रद्धान स्वप्नमें हू नाहीं होय है। समस्त पापनिका मूल जुवाकूं जानि दूरहीतैं त्याग करो। जुवारीकी बुद्धि कोट उपायकरि हू विपरीतता नाहीं छाडै है परलोकमें दुर्गति ही जाय है। जुवारी तौ तीव्रलोभकरि अपना आत्माकूं घात्या है।

बहुरि केतेक अज्ञानी जुवामैं हार जीत धनकी तो नाहीं करै परंतु मनुष्य जन्मकूं वृथा व्यतीत करनेका इच्छुक धन संकल्प कर तो जुआ नाहीं करै है अर क्रीडाके निमित्त चौपड़ शतरंज गंजफा इत्यादिक अनेक अविद्या करै है तिनके हारमें अर जीतमैं रागद्वेषकी बड़ी तीव्रता है हरष विषाद बहुत होय है कपट बहुत करै हैं पिता पुत्र हू परस्पर विसंवाद कलह करै ही हैं परिणाममैं जीत हारमैं तीव्रताने प्राप्त होय है। या ऐसी अविद्या है जो इस क्रीडामैं रचै है ताका इस लोक सम्बन्धी सेवा बनिज लिखना इत्यादिक समस्त कार्य बिगडि जाय तो हू छाड नाहीं सकै है जाकै द्यूतक्रीड़ा है ताकै अन्य उद्यमका अभाव होय है दरिद्रता नजीक आवै है। हीन नीच मलिन जातिके बरोबर बैठ द्यूतक्रीड़ा करै है यो नाहीं देखै है यो म्लेच्छ है नाई कलाल धोबी समस्त द्यूतक्रीड़ामैं सामिल प्रत्यक्ष देखिये हैं जिनकी महादुर्गन्ध आवै है वस्त्रनिमैंतैं जूंवां झड़ झड़ पड़ै हैं तिनके बरोबर बैठ रमिये है। अन्य अधर्मनिका स्थानमैं आप जाय बैठै हैं मार्गमैं खेलते देखकर खड़ा रहजाय बैठनेकूं स्थान नाहीं होय तो आप खड़ा खड़ा ही देखै है ऐसा व्यसन है खावना

पीवना देन लेन सब छांड़ि खड़ा हुआ देखै है मनियार नीलगर कमनीगर बिसायती समस्त मांस भक्षी नीच कर्मीनिके सामिल ख्याल खेलै देखै है बहुत कहा कहिये अपना सर्व कार्य बिगडि जाय तथा माता पितादिकका मरण हो जाय तौ हू इस ख्यालमैंतैं उठ्या नाहीं जाय है ऐसा तीव्र परिणामतैं नरक तिर्यंच बंध होय ही ! जामैं धन कुछ नाहीं आवै बड़ा विसंवाद होय तिस क्रीड़ामैं तीव्र राचनैतैं धनकी हारजीतवालेतैं हू तीव्र पापका बन्ध करै है जाकै धनको हारजीत होय सो तो अल्पकाल राचै है याका परिणाम समस्त कालमैं राचै है इस व्यसनमैं लागे है ताकूं धर्मका नाम नाहीं सुहावै है ताकै बुद्धि विपरीत होय पापक्रियामैं अन्यायमैं असत्यमैं विकथाहीमैं राचै है देखहु यह मनुष्यजन्म अर उत्तमकुल अर निरोग शरीर उत्तमधर्म ए अनंतकालमैं नाहीं पाया सो संयोग मिलि गया याका एक एक घड़ी कोड धनमैं नाहीं मिलै ऐसा अवसर सिद्धांतनिका स्वाध्याय जीवादिक द्रव्यनिकी चर्चा अनित्यादिक द्वादश भावना षोडशकारण भावना पञ्च परमगुरुका नमस्कार जाप स्मरणादिककरि सफल करनेका था तानै चौपड़ गंजफो शतरंज ये महाअविद्यामैं राचि समस्त धर्मके मार्गतैं पराङ्मुख होय महापाप उपजाय मर जाना यो फल ग्रहण करि तिर्यंच नरकादिकमैं जाय उपजै है। बहुरि ऐसा जानना भगवानका परमागममैं तो सप्त व्यसनका त्याग जाकै होयगा सो ही जिनधर्म ग्रहण करनेका पात्र होयगा जाके ए व्यसन ग्रहण हो जायं तिसको बुद्धि ही विपरीत होजाय है पाप कार्यनिमैं प्रवीण होजाय है अनीतिमैं तत्पर होजाय है। इस लोकका कार्य तो न्यायमार्गतैं अपने कुलके योग्य षट्कर्मकरि आजीविका करना अर खानपानादिक शरीरका संस्कार तथा न्यायरूप लेना देना धरना जाना आना प्रयोजनरूप करना अर परलोकके अर्थि धर्मकार्यमैं प्रवर्तन करना यही गृहस्थके दोय करने योग्य कार्य हैं इन दोय कार्य विना जो प्रवृत्ति सो ही व्यसन है ते सप्त व्यसन हैं। द्यूतक्रीडा ॥ १ ॥ मांसभक्षण ॥ २ ॥ मद्यपान ॥ ३ ॥ वेश्यासेवन ॥ ४ ॥ शिकार करना ॥ ५ ॥ चोरी करना ॥ ६ ॥ परस्त्रीसेवन करना ॥ ७ ॥ ये महाघोरपापबंधके कारण सप्त व्यसन हैं। इन व्यसननिमैं उलझना सहज है छूटकरि सुलझना बड़ा कठिन है। इन व्यसननितैं पापबंध ही ऐसा होय है जो बुद्धि ही विपर्ययमैं होजाय है नि-

कस नाहीं सकै है। यहां द्यूत व्यसन वर्णन किया याहीमैं होड लगावना है। अब दस बीस बरससे अफीमके फाटकाको व्यौपार हू तीव्रतृष्णाकरि युक्त पुरुषके संतोषका बिगाडनेवाला प्रवर्त्या सो हू जुवाहीमैं गर्भित जानना। बहुरि मांस मद्य शिकार जैनीनिके कुलमैं है ही नाहीं ये लगे पीछैं महा व्यसन हैं परंतु आगै अभक्ष्यनिमैं कहैंगे तथा बीध्या अन्नादिकनिका समस्त भोजन अर चमड़ाका स्पर्श्या समस्त जल घृत तेल रसादिक रात्रि भोजन इत्यादिक समस्त अभक्ष्य मांसके दोष समान जानि त्यागै हो। बहुरि भांग तमाखू जर्दा ( अफीम ) हुक्का ये समस्त पराधीन करनेतैं अर ज्ञानके नष्ट करनेतैं परमार्थरूप बुद्धिकूं नष्ट करनेतैं मदिरा समान ही हैं यातैं त्याग ही करना। बहुरि अन्य जीवनिकी दया नाहीं करिके आजीविका बिगाड देना धन लुटाय देना तीव्रदंड कराय देना सो समस्त शिकार ही है अन्यका मानभंग कराय देना स्थान छुडाय देना सो समस्त शिकारतैं अधिक अधिक है सो त्याग ही करना। बहुरि वेश्यासेवन किया जाका समस्त आचार भोजनपान भ्रष्ट है वेश्याकूं चांडाल भील म्लेच्छ मुसलमान इत्यादिक समस्त सेवन करै हैं जो वेश्या मांसमद्यका खानपान नित्य ही करै है धनहीतैं जाके प्रीति है ऐसी वेश्याकी मुखकी लाल पीवै है जातिकुल आचार समस्त भ्रष्ट है तातैं त्याग ही श्रेष्ठ है वेश्याका संगम किया तिसके चोरी जुवा मद्यपानादिक समस्त व्यसन होय हैं। समस्त धनकी हानि होय है धर्मतैं पराङ्मुखता होजाय है बुद्धि विपरीत होजाय है मायाचारमैं झूठमैं छलमैं तत्परता होजाय है निंद्यकर्मकी ग्लानि जाती रहै है लज्जा नष्ट होजाय है वेश्याका देखनेमैं हाव भाव विलास विभ्रमादिक देखने चिंतवन करनेतैं अतिरागी होय कुलमर्यादा समस्त भंग करै है वेश्यामैं,आसक्त हुआ पुरुष कफविषै पड़ी मक्षिकाकी ज्यों आपकूं नाहीं छुडाय सकै है महा अनीत है। बहुरि चोरपनाका महा व्यसन है। चोर आप भी निरंतर भयरूप रहै है अर चोरका अन्य जीवनिकै बड़ा भय रहै है माताकै भी चोरपुत्रका भय रहै है। चोर इस लोकमैं आपकी समस्त प्रतिष्ठा बिगाडि महाकलंकित होय है। राजासूं तीव्रदंड पावै है हस्तनाशिकादिक छेद्या जाय है। चोरका परिणाम संतोषरूप कदाचित नाहीं होय है। चोरके योग्य अयोग्य करने योग्यका

विचार ही नाहीं रहै है। याहीतैं धर्मध्यान स्वाध्याय धमकथातैं पराङ्मुख रहै है। अर जिनशास्त्रनिका श्रवण पठन करता हू अन्यके धन ऊपर चित्त चलावै है सो ठग है जगतके ठगनेकूं शास्त्ररूप शस्त्र ग्रहण किया है तिसके धर्मकी श्रद्धा कदाचित् नाहीं जानना जाके जिनधर्मकी प्रधानता होय है ताकै चारित्रमोहका उदयतैं त्याग व्रत संयम नाहीं होय तो हू अन्यायके धनमें तो बांछा नाहीं चालै है चोरीतैं दोऊ लोक भ्रष्ट होना जानि विना दिया परका धनमैं बांछा मत करो। बहुरि परस्त्रीकी बांछा नाम व्यसन समस्त अनर्थनिमैं प्रधान है परस्त्रीलंपटकै इसलोक परलोकमैं जो घोरपाप आपदा अकीर्ति अपयश मरण रोग अपवाद धनहानि राजदंड जगतका बर दुर्गतिगमन मारन ताड़न बंदीगृहमें बंदनादिक होय हैं तिनकूं वचन द्वारे कौन कहनेकूं समर्थ है? ऐसे सप्तव्यसन दूरतैं ही त्यागो इनके त्यागनेमैं कुछ हानि नाहीं है जानै सप्तव्यसन त्याग किया सो आपका समस्त दुःख अकीर्ति नरकादिक कुगति समस्त आपदाका निराकरण किया। अब अनर्थ दंडव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

कंदर्पं कौत्कुच्यं मौखर्यमतिप्रसाधनं पञ्च। असमीक्ष्य चाधिकरणं व्यतीतयोऽनर्थदण्डकृद्विरतेः ॥६०॥

अर्थ—चारित्र मोहनीयकर्मका उदयतैं रागभावकी अधिकतातैं हास्यतैं मिल्या हुआ भंडवचन बोलना सो कंदर्प नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि तीव्ररागका उदयतैं हास्यरूप भंडवचनकरि सहित जो कायकी खोटी चेष्टा शरीरकी निंद्यक्रिया करना सो कौत्कुच्य है ॥ २ ॥ अर विनाप्रयोजन बहुत साररहित बकवाद सो मौखर्य कहिये है ॥ ३ ॥ अर प्रयोजन रहित अधिकताकरि मनवचमनकायको प्रवर्तावना सो असमीक्ष्याधिकरण कहिये है। रागद्वेषकरनेवाला काव्य श्लोक कवित्त छंद गीतनिका चिंतवन सो मन असमीक्ष्याधिकरण कहिये है। बहुरि पापकथाकरि अन्यके मनवचनकायकूं बिगाडनेवाली खोटी कथा कहना सो वचन असमीक्ष्याधिकरण है। बहुरि प्रयोजन बिना गमन करना उठना बैठना दौड़ना पटकना फेंकना तथा पत्र फल पुष्पादिकनका छेदन भेदन विदारण क्षेपणादिक करना तथा अग्नि बिष क्षारादिकका देना सो काय असमीक्ष्याधिकरण नामका अतीचार है ॥ ४ ॥ जेता भोग-उपभोगकरि प्रयोजन सधै तातैं

अधिक विना प्रयोजनका अतिसंग्रह करै सो अति प्रसाधन नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ऐसैं अनर्थ दंडव्रतके पांच अतिचार कहे ते त्यागने योग्य हैं अब भोगोपभोगोपरिमाणव्रत अष्ट सूत्रनिकरि कहै हैं—

अक्षार्थानां परिसंख्यानं भोगोपभोगपरिमाणम् । अर्थवतामप्यवधौ रागरतीनां तनूकृतये ॥६१॥

अर्थ—प्रयोजनवान हू पंचइंद्रियनिके विषयनिका जो रागभाव करिकैं आसक्तताकौं घटावनेके अर्थि जो परिमाण करना सो भोगोपभोगपरिमाण नामा व्रत है । भावार्थ—संसारी जीवनिकै इंद्रियनिके विषयनिमैं अतिराग वर्तै है रागतैं व्रत संयम दया क्षमादिक समस्त गुणनितैं पराङ्मुख होय रह्या है यातैं अणुव्रतका धारक गृहस्थ है सो हिंसा असत्य चोरी पर स्त्रीसेवन अपरिमाणपरिग्रहतैं उपजी जो अन्यायके विषयनिमैं प्रीति तिसका त्याग करकै तो व्रती भया अब न्यायके विषयनिकूं हू तीव्ररागके कारण जानि जाकै अति अरुचि भई होय सो रागकी आसक्तता घटावनेके अर्थि अपने प्रयोजनवान हू इंद्रियनिके विषयनिमैं परिमाण करै सो भोगोपभोगपरिमाण नामा गुणव्रत है । व्रतीनिकूं इंद्रियनिके विषयनिमैं निरर्गल प्रवृति रोकि भोगोपभोगका परिमाण करना महान संवरका कारण है । अब भोग तो कहा होय है अर उपभोग कहा तिनका लक्षण कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

भुक्त्वा परिहातव्यो भोगो भुक्त्वा पुनश्च भोक्तव्यः । उपभोगोऽशनवसनप्रभृतिः पाञ्चेन्द्रियो विषयः ॥ ६२ ।

अर्थ—जो एकवार भोग करकैं फिर त्यागनेयोग्य होय सो भोग है बहुरि भोग करकैं फिर भोगने योग्य होय सो उपभोग है । भोग तो भोजनादिक पंच इंद्रियनिके विषय हैं अर उपभोग वस्त्रादिक पंच इंद्रियनिके विषय हैं । भावार्थ—जो एकवार ही भोगनेमें आवै फिर भोगनेमें नाहीं आवै ते भोग हैं । अर जो वारवार भोगनेके अर्थि आवै ते उपभोग हैं जैसैं भोजन नानारूप एकवार ही भोगनेमैं आवै है तथा कर्पूर चंदनादिकका विलेपन तथा पुष्प माला अतर फुलेल तथा मेला कौतुक इन्द्रजालादिकस्तवनके गीतके शब्दादिक एकवार ही भोगनेमैं आवै हैं ते पंच इन्द्रियनिके विषयभोग कहावै हैं । अर जैसे वस्त्र आभरण स्त्री सिंहासन पर्यंक महल बाग वादित्र चित्राम इत्यादिक वारंवार भोगनेमैं आवैं ते उपभोग हैं

भोगोपभोग दोऊंनिका परिमाण करै ताकै व्रत होय है। अब जे परिमाण करनेयोग्य नाहीं यावज्जीवन त्याग करने योग्य हैं तिनके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

त्रसहतिपरिहरणार्थं क्षौद्रं पिशितं प्रमादपरिहृतये। मद्यं च वर्जनीयं जिनचरणौ शरणमुपयातैः ॥ ८३ ॥

अर्थ—जिनेन्द्रभगवानके चरणनिका शरणकूं प्राप्त भये ऐसे सम्यग्दृष्टि हैं तिननैं त्रसनिकी हिंसाका परित्यागके अर्थि क्षौद्र जो मधु अर पिशित कहिये मांस वर्जन करनेयोग्य है अर प्रमाद जो हित अहितमैं असावधानी ताका वर्जनके अर्थि मद्यका त्याग करना योग्य है। भावार्थ—जे पुरुष जिनेंद्रका चरणनिकी आज्ञाका श्रद्धानी हैं ते त्रसजीवनिकी हिंसाका त्यागके अर्थि मधुका अर मांसका त्याग ही करैं अर प्रमोद जो अचेतपना ताका त्यागके अर्थि मदिराका त्याग करैं ही जाकै मधुमांसमद्यका त्याग नाहीं सो जिन आज्ञात पराङ्मुख है जैनी नाहीं है। बहुरि त्यागने योग्यनिकूं कहै हैं—

अल्पफलबहुविघातान्मूलकमार्द्राणि शृङ्गवेराणि। नवनीतनिम्बकुसुमं कैतकमित्येव मवहेयम् ॥ ८४ ॥

यदनिष्टं तद्व्रतयेद्यच्चानुपसेव्यमेतदपि जह्यात्। अभिसन्धिकृता विरतिर्विषयाद्योग्याद् व्रतं भवति ॥ ८५ ॥

अर्थ—जिनके सेवनतें फल जो अपना प्रयोजन सो तो अल्प सिद्ध होय अर जिनके भक्षणतैं घात अनंत जीवनिका होय ऐसे मूल कंद आदो श्रृंगवेर इत्यादिक कंद मूल अर नवनीत जो माखन निंबका फूल केवडा केतकीका फूल इत्यादिक जे अनंतकाय ते त्यागने योग्य हैं। एक देहमैं अनंत जीव ते अनंतकाय हैं जो आपके अनिष्ट होय ताका व्रत करना त्याग करना अर जो सेवन योग्य नाहीं ते अनुपसेव्यनिका त्याग ही करना योग्य है। यद्यपि अनिष्ट अनुपसेव्यके सेवनेका प्रयोजन नाहीं है तो हू अपने अभिप्रायकरि योग्य विषयका हू त्याग सो व्रत है जातैं जाका फल तो एक जिह्वाका आस्वादनमात्र अर जाका एक बालमात्र कणहूमैं अनंतानंत बादरनिगोदजीवनिका घात होय ऐसे कंदमूलादिक अर निंबका पुष्प अर केतकी केवडाका पुष्प त्यागने योग्य हैं तथा अन्य हू पुष्प प्रत्यक्ष त्रस जीवनिकर भरे हैं ते जिन धर्मीनिके त्यागने योग्य हैं। बहुरि जो वस्तु शुद्ध हू है अर भक्षण करनेतैं अपना देहमैं वेदना उपजावै

उदरशूलादिक उपजावनेवाला वाय पित्त कफादिक दोष तथा रुधिरविकार उदरविकारादिककूं उत्पन्न करनेवाला भोजनादिक तथा अन्य हू दुःखके कारण इंद्रियविषयनिका सेवन मत करो। जातैं जो अति तीव्ररागी इंद्रियनिका लंपटी होयगा सो ही अनिष्टसेवन करैगा। जो अपना मरण होजाना तथा तीव्रवेदना भोगना ऐसैं तीव्र दुःखहूकूं नाहीं गिणता भक्षण करै है ताकै जिव्हाकी तीव्र विकलतातैं महापापका बंध होय है। अनेक मनुष्य भोजनके आस्वादनमैं अनुराग करकै अनिष्ट भोजनतैं रोग बधाय आर्तध्यानकरि दुर्गतिकूं जाय हैं तातैं अनिष्टका त्यागही श्रेष्ठ है। बहुरि केते ही वस्तु अपने कुलकूं तथा व्यवहारकूं धर्मकूं मलीन करनेवाले हैं ते सेवन योग्य नाहीं ते अनुपसेव्य हैं। संख हस्तीका दांत केश मृगमद गोलोचन इत्यादिकका स्पर्श्या हुआ भोजन जल सेवन योग्य नाहीं तथा ऊंटनीका दुग्ध तथा गधीका अर गायका मूत्र तथा मल मूत्र तथा कफ लाल उच्छिष्ट भोजन ये सेवने योग्य नाहीं तथा म्लेच्छ भील अस्पर्श्यशूद्रानिका स्पर्शन किया हुआ भोजन तथा अशुद्ध भूमिमैं पड्या चर्मका स्पर्श्या मार्जार श्वानादिक करि तथा मांसभक्षी मद्यपायीनिकरि बनाया हुआ स्पर्शन किया हुआ समस्त भोजन लोकनिंद्य भोजन अनुपसेव्य है। जिनधर्मीनिके भक्षण करने योग्य नाहीं। बुद्धिकूं विपरीत करै है। मार्गतैं भ्रष्ट करनेवाला धर्मतैं भ्रष्ट करनेवाला है। इहां ऐसा विशेष जानना, श्रीराजवार्तिकमैं हू पंच प्रकार भोग संख्या कही है तहां त्रसका घात जामैं होय ॥ १ ॥ प्रमाद उपजावनेवाला होय ॥ २ ॥ बहुबध कहिये जामैं अनन्त जीवनिका घात होय ॥ ३ ॥ अनिष्ट होय ॥ ४ ॥ अनुपसेव्य होय ॥ ५ ॥ ये पांच प्रकार त्यागने योग्य हैं यावज्जीवन त्यागने योग्य हैं अर जिसका यावज्जीवन त्याग करनेकूं समर्थ नाहीं तो वाका त्याग कालकी मर्यादाकरि करना। यहां केतेक वस्तूनिमैं तो प्रगट त्रसनिका घात है अर केतेक वस्तूनिमैं अनन्त जीवनिके संघट्ट इकट्ठे होय घात होय है बीधा अन्न है तामैं ईली घुन प्रगट हजारां फिरै हैं बीधे अन्न खानेवालेके अप्रमाण त्रसनिका घात होय है जो गृहस्थ धान्यका संग्रह राखै है ताकै नित्य बीधा अन्नके भक्षणतैं महापाप प्रवर्तै है याहीतैं पापतैं भयभीत जैनी होय सो अबीधा अन्न खरीदै अर

दोय महीनाका खरच प्रमाण राखै दोय महीना भक्षण करि चुकै तदि और अबीधा अन्न देखि ग्रहण करै थोड़ा संग्रहमैं अच्छी तरह सोधनेमैं आजाय थोड़ाका जाबता यत्नाचारतैं बनि सकै वीधता देखि तदि बद-लाय मंगावै अन्य पांच जायगा अबीधा देखि लावै बहुत धान्य होय तो देय सकै नाहीं फटकि सकै नाहीं बदल्या जाय नाहीं बहुत बीधा होजाय अर खावना पड़ै तदि नित्य छांणि छांणि ईली लट घुणनिकूं पात्र भर भर मार्गमैं पटकै तहां मनुष्यनिके तथा पशुनिके पगतलैं खुंदजाय मरजाय पशु चर जाय बहुरि धान्यमैं जीव पडने लगैं हैं तदि दिन प्रति दूना चौगुना सौगुना हजारगुना छोटा बड़ा वधता चल्या जाय है अर समस्त घरके मकाननिमैं अर रसोईमैं परींडा ऊपर दीवारपर चाकीपर फैलते खानपानकी वस्तुनिमैं जमीमैं छतनिमैं लाखां कोड्यां जीव विचरने लग जायं हैं तातैं लोभके वशतैं प्रमादके वशतैं अभिमानके वशतैं बहुत संग्रह मत करो बहुरि मूंग मोठ उडद तथा अन्य हू फंजादिक जिनकै ऊपरि सुफेद फूली प्र-गट हो जाय तामैं त्रसजीव जानि भक्षण मत करो । बहुरि वर्षाकालके चार महीनेमैं केतीक वस्तुका संग्रह मत राखो नगर शहरमैं वसनेका सुख तो ये ही है कि जिस अवसरमें चाहें तिस अवसरमैं दश पांच दो चार दिनके खरचमैं आवै तितनी दश पांच जायगांमें आछी निर्दोष दीखै सो खरीदो । वर्षाऋतुमैं गुडमैं शक्करमैं खांडमैं बहुत चींटी लट सुलसुली पडै हैं तथा सूंठ अजवायणि इलायची डोडा सुपारी बहुत बीधै हैं दाख पिस्ता चारोली छिंवारा खोपरा इत्यादिकनमैं परिमाण रहित लट कीडा इल्यां बहुत हजारां लाखां उत्पन्न होय हैं । पुरवाई पवनका संयोगतैं ही गुडादिकमैं परिमाणरहित जीव उपजैं हैं तथा मर्यादारहित वस्तु लाडू पेड़ा घेवर वरफी इत्यादिकमैं बहुत जीव प्रगट लट उपजै हैं । बहुरि हलदी धणां जीरा मिरच अमचूर कोथोडी इनमैं वर्षाऋतुमें बहुत त्रसजीव उपजै हैं तातैं अल्प संग्रह करो नित्य देख सोधि प्रवर्तो यो यत्नाचार ही धर्म है । चून शीत ऋतुमैं सात दिनका ग्रीष्मऋतुमैं पांच दिनका वर्षाऋतुमैं तीन दिन-का सिवाय भक्षण मत करो चुनका संग्रह मति करो चूनमैं बहुत लट पैदा होजाय हैं दाल चावल इत्या-दिक जब रांधो तदि दोय तीन वार सोधि रांधो। बहुरि प्रश्नोत्तर श्रावकाचारमैं ऐसा लिख्या है । श्लोकार्द्ध—

"सर्वाशनं च न ग्राह्यं दिनद्वययुतं नरैः" अर्थ—समस्त भोजन दोय दिनकर युक्त नाहीं भक्षण करना। यातैं एक रात्रि गयां सिवाय दूजी रात्रि व्यतीत होजाय सो भक्षण योग्य नाहीं। यामैं जलका संसर्ग युक्त पक्वान्नादिक हू आगये। बहुरि पुवा मालपुवा सीरो इत्यादिक तथा बड़ा कचोरी रात्रिवास्याको रस चलि जाय है। जातैं यामैं जलका संसर्ग बहुत रहै है। बहुरि रोटी खिचड़ी तरकारी लोंजी रात्रिवासी तो भक्षण ही नाहीं करना अर स्वादसों चलि जाय तो उस दिनमैं भी भक्षण नाहीं करना। बहुरि रात्रिका बनाया समस्त भोजनका भक्षण नाहीं करना बहुरि दही पहला दिनका जमाया दूजा दिन पर्यंत खावो अधिक नाहीं। बहुरि दोय दालका अन्नकूं दही छाछके सामिल भक्षण मत करो जो मिलायकरि खावोगे तो यामैं बिदलका दोष लागेगा जीभ नीचे कंठमें उतरते ही संमूर्छन जीव उपजै हैं याकूं विदल कहिए है। बहुरि दुग्ध दूह्यां पाछैं छानि दोय घड़ी पहली तप्त करो पाछैं सम्मूर्च्छन त्रसनिकी उत्पत्ति होय है। घृत हू छाछमैंसूं निकस्यां पाछैं शीघ्र ही तपाय छानि भक्षण करना योग्य है ताया छान्यां विना मत भक्षण करो बहुरि घृत तेल जल इत्यादिक रस चामका पात्रमैं घाल्या हुआ भक्षण योग्य नाहीं यामें असंख्यात त्रस जीव उपजै हैं। सींघड़ा (कुप्पा) बनै हैं ते मांसकूं गाडि पाछैं कूटि माटीके सांचे ऊपरि बनावे हैं इनका स्पर्श्या घृत तेल जल मांसके समान हैं। इनको प्रवृत्ति मुसलमानांका राज्य हुआ तदि मुसलमानां चलाई है। जो चामका विना स्पर्श्या घृतादि नाहीं मिलै तो रूक्ष भोजन करो अर फागुन पीछैं तिलनिमैं तथा सिंघाड़ेनिमैं बहुत त्रसजीव उपजे हैं यातैं फागुन पीछैं तेल अथवा सिंघाडा कदाचित् मत भक्षण करो। बहुरि जलकूं गाढ़ी दोहरा कपड़ासूं छाणिकरि पीवो अन्यकूं छाणिकरि प्यावो छाणिकरि ही पशनिकूं हू प्यावो अणछाण्यां जलतैं स्नान भोजन वस्त्रधोवन इत्यादि कोई भी क्रिया मत करो जलमैं यत्नाचार क्रियातैं दयावानपनाकी हद बनी रहै है। पात्रका मुखतैं तिगुना लांबा दोहरा वस्त्र नवीन होय तातैं छाणा अजवाणया (विलछन) अन्य पात्रमें करि जलके स्थानमें पहुंचावो जलमें यत्नाचारकी याही मर्यादा है छाणया पाछैं दोय घड़ीकी मर्यादा है फिरि काम पडे तो फिरि छाण करि वर्तो। तप्तजल दोय पहर वर्त्तो

बहुत उकलतो तस कियो हुवो आठ पहर वर्तौ पाछैं निकाम है। बहुरि केतेक वस्तूनिकूं त्रसनिको घात जानि सर्वथा भक्षण मति करो जैसैं-बोर लटांको प्रत्यक्ष स्थान है भिंडीनिमैं बहुत लट उपजै हैं बैंगण तरबूज कोहला पेठा जामुन आडू बडवाला गोल अंजीर कठूमर ऊमरफल पीलू आलू जामफल टींडू अज्ञातफल सूक्ष्मफल वीधाफल चलितरस तथा साराफल तथा पत्र शाक कन्दमूल आदो शृंगवेर सलगम प्याज लहसन गाजर किशोय्या इत्यादिक तथा कचनार महुवा क्षीरवृक्षका फल खिरनीकूं आदि लेय नीमका फल इत्यादिक अनेक फल हैं केवडा केतकी इत्यादिक फूल हैं तिनका तो प्रगट दोष आगमतैं वा प्रत्यक्षतैं है ही परन्तु परमागमतैं वनस्पतीका ऐसा स्वरूप जानना—वनस्पती दोय प्रकार है एक प्रत्येक दूजी साधारण प्रत्येक तो एक देहमें एक जीव है अर देह एक जामैं जीव अनंतानन्त सो साधारणवनस्पती है यातैं साधारण भक्षण करै तामैं अनन्तानन्त जीवनिका घात जानि त्याग करना योग्य है। अब साधारण प्रत्येककी पहिचानके ऐसे लक्षण जानने—जिस वनस्पतीमैं लीक प्रगट नाहीं भई होय रेखसी नाहीं दीखी होय कली प्रगट नाहीं भई होय अर जामैं पैली प्रगट नाहीं भई होय अर जाका तोडता ही समभङ्ग हो जाय वा कांटे फूटे नाहीं तथा जाके माहीं तांतू तूतडो प्रगट नाहीं भयो होय सो साधारण वनस्पती है यामैं एक अणुमात्रमैं अनन्तानन्त जीव हैं अर जिस वनस्पतीमैं धार तथा कला तथा रेखा तथा पैली प्रगट दीखै सो साधारण नाहीं प्रत्येकवनस्पती है तथा जाकूं तोडिये तो टेढा बांका टूटै सूधा शस्त्रसे बनाय्या जैसा साफ बरोबर नाहीं टूटै तथा जाकै माहीं तार तूतड़ा प्रगट होगया होय सो प्रत्येक वनस्पती है परन्तु कोऊ वनस्पती पहली साधारण होय वाही एक अन्तर्मुहूर्तमैं प्रत्येक होजाय है कोऊ साधारण ही बनी रहै पान फूल बीज डाहली कूंपल इत्यादिक समस्तमैं साधारण प्रत्येककी याही पिछाण जानना। पत्रमैं समभङ्गादिक होय तो पत्र साधारण है अन्य समस्त वृक्ष साधारण नाहीं। बीज कूंपल समभङ्ग सहित होय रेखादिक प्रगट नाहीं होय तेते बीज कूंपल साधारण हैं अन्य साधारण नाहीं ऐसैं इस वनस्पतिमैं कोऊ साधारण मिल जाय कोऊ प्रत्येक होजाय इत्यादिक दोषरूप तथा वनस्पतिमैं अनेक त्रस जीवनिका संसग

उत्पत्ति जानि जे जिनेन्द्रधम धारणकरि पापनितैं भयभीत हैं ते समस्त ही हरितकायका त्याग करो जिह्वा इन्द्रियकूं वश करो अर जिनका समस्त हरितकायके त्याग करनेका सामर्थ्य नाहीं है ते कंदमूलादिक अनन्तकायका तो यावज्जीवन त्याग करो। अर जे पंच उदंबरादिक प्रगट त्रस जीवनिकरि भय्या है ऐसा फल पुष्प शाक पत्रादिकनिकूं छांडि करिकैं त्रसघातकरिरहित दीखै ऐसी तरकारी फलादिक दश वीशकूं अपने परिणामनिके योग्य जानि नियम करो। इन सिवाय अट्ठाईस लाख कोड कुल वनस्पतीकाय हैं तिनका तो त्याग करि भार उतारो। हरितकाय प्रमाणीकका नियम करै ताकै कोट्यां अभक्ष टलै है तिसमैं पत्रजात भक्षण योग्य नाहीं। त्रसकी उत्पत्ति टालि अन्य बहुत घटाय नियम करो विना घटायां निरर्गल रह्यां असंयमीपना होय आस्रव होय है तातैं हरितकायका भक्षणमैं नियम व्रत करना योग्य है। बहुरि जिस भोजन ऊपरि ऊलण आजाय ऊपर फूलसा नीला हरा लाल आजाय सो भोजन मत करो यामैं अनन्त जीवनिका घात है यातैं जिस ऊपर फूलो आजाय सो दूरतैं ही त्यागो। बहुरि मोहके कारण प्रमादके उपजावनेवाले ज्ञानकूं बिगाड़ने वाले जिह्वा इन्द्रिय अर उपस्थइंद्रियकूं विकल करनेवाली ऐसी भांग तमाखू छोंतरा अमल हुक्का जरदा इत्यादिक अभक्ष्यनिका खावना पीवना जिनधर्मीनिकै त्यागने योग्य हैं। ये अमल पराधीन करै हैं इनमैं अफीमका भक्षण करनेवालेकूं एक घड़ी अफीम नाहीं होय तो जमीमैं बेहोश होय पड़ि जाय है वेदनाका अर्त्तपरिणामतैं पशुका ज्यों पग जमीमैं पड्या पड्या रगडै है निर्लज्ज हुआ याचना करै है नेत्रनितैं नीर पडै है और अफीम मिलि जाय तदि अमलमैं आया भूला हुआ ऊंगवो करै है जिह्वा इंद्रियकी लोलुपता बधि जा है स्वाध्याय धर्मश्रवण व्रत संयम उपवासादिकनिकूं दूरहीतैं त्यागै है बुद्धि धर्मतैं परांमुख होजाय है उत्तम आचार नष्ट होजाय है। बहुरि हुक्काकी महामलीनता दुर्गन्ध तमाखू और धुवांका योगतैं पानीमैं जीवनिकी उत्पत्ति होय है जहां हुक्काका जल पड़ै तहां छहकायके जीवनिका घात होय है। अर याकी दुर्गन्धतैं उत्तम आचारके धारक नजीक बैठ नाहीं सकै हैं अर बारम्बार घरघरमैं अग्नि हेरतो फिरै है घरमैं राखको ठीकरो धर्योही रहै है नीचकुलवाले नीचजननिके पीवने योग्य है।

हुक्का पीवनेवालेकूं गाडीवान घोड़ाका चाकर मीणा गूजर मुसलमान इत्यादिकनिकी संगति रुचै है उत्तम कुलवालेनिके योग्य नाहीं है अर हुक्का नाहीं मिलै तो नाई धोवी गूजर मीणा तेली तमोली मुसलमाननि-की चिलम याचना करि पीवै है अर नाहीं पीवै तो बड़ा रोग पैदा होजाय उदरमैं आफरो चढि जाय नींद्र बंद होजाय महान दुःख गले बांध्या है तातैं व्रत संयम उपवास स्वाध्यायादिक समस्त उत्तम कार्यनिकूं जलांजलि देहै। बहुरि जरदा महा अशुचि द्रव्य है याकूं मुखमैं राखि मलमूत्र मोचन करै है रास्तामैं मार्गमैं मलमूत्रादिक ऊपरि पगरखी पहरे जरदा खाय है मांसभक्षी मद्यपायीनीका तथा नीच जातिका घरका पानी मिल्या कत्था चूना खाय है नीच जानि अपना हस्तादिक विना धोये अंग खुजावते जरदा मसल देहै उच्छिष्टकी ग्लानि नाहीं करै है समस्त शय्या आसन खूणा बारी जाली समस्त जायगां उच्छि-ष्टसूं लिप्त करिदेय है पशु हू रस्तै चालता सोता मुख नाहीं चलावै है याकै पशुतैं हू अधिक विकलता है। मुखमैं महादुर्गंध रहै है जरदाका पीका जहां पडै तहां माछी माछर डांस मकड़ी कीडा कीडी वडा वडा त्रस ही मरि जाय तहां पंचस्थावरनिका घात होय ही। व्रत संयम उपवास स्वाध्याय जाप्य शुभ भावनाका नाश होय है जरदा खानेवालेनिकी बुद्धि आत्माके हितमैं प्रवर्तन नाहीं करै है संयमके योग्य नाहीं होय है तामैं दया क्षमा शील संतोष इंद्रियविजय परिणाम कदाचित् नाहीं प्रवर्तैं हैं अनेक पापाचार कपट छलमैं बुद्धि प्रवीण होजाय है। अनेक व्यसननिमैं प्रवृत्ति होजाय है जरदा खानेवालेके मांगनेकी लाज नाहीं रहै है। समस्त नीच जातिसूं भी मांगि करि खाय है। मद्य मांस खानेवाले जिसकाल मद्य पीवै हुक्का पीवै है उसका हस्ततैं दीया जरदा वीडी मांगि मांगि खाय है जरदा खानेवाले बहुत मनुष्यनिकूं नीकेकरि देखिए है एककै हू परमार्थमैं बुद्धि परलोक शुद्ध करनेकी बुद्धि नाहीं होय है इस जरदेके प्रभावकरि हीन आचारकी वृद्धि होय तदि परमार्थतैं बुद्धि भ्रष्ट होय लौकिक जनमैं व्यभिचारमैं लोभमैं प्रबल होय है सांचा धर्म याकै नाहीं होय है ऐसा आपका परिणाममैं आप अनुभव करो। अर परका जरदा खानेका स्वरूप प्रत्यक्ष देखि जरदा खानेका त्याग करो। अर जरदा एक दिन हू नाहीं खाय तो परिणाममैं उपाधि उदरमैं व्याधि

अनेक रोगव्याधि उपजावै है तातैं जरदा खाना महारोगकूं महाव्याधिकूं सूगलापनाकूं अङ्गीकार करना है बहुरि भांग पीवना हू अपना बडापना शोभितपना नष्ट कर देहै भंगेराका दरजा घटि जाय है भंगेराके जिह्वा इंद्रियकी लंपटता बधि जाय है। विकलीपना होइ जाय है प्रमादी हुवा ऐश करना बहुत निद्रा लेना बहुत घृत खांडका भोजन करना चाहै है। पांचो इंद्रियां विषयांकी लंपटताने प्राप्त होजाय हैं ज्ञान शिथिल होजाय है वैमी होजाय है भांग पीवनेवालेके मीठा भोजनमैं ऐसी लम्पटता होजाय है जो मीठा मिलै कृत कृत्य होजाय है आत्मज्ञान धर्मका ज्ञान कदाचित् नाहीं होय है बाह्यआचरण भ्रष्ट होय ही है अर भांगमैं हजारा त्रसजीव चालता दौड़ता उपजै है वर्षाऋतुमैं भांगमैं अपरिमाण त्रसजीव उपजै हैं भंगेरा भांग सोधै नाहीं घोटिकरि पीजाय है। ऐसैं हू अफीम खाना जरदा खाना हुक्का पीवना भांग पीवना अर और हू छौंतरा पीवना तमाखू सूंघना ये देहके तो महारोग ही हैं अमल करनेवालेकी आकृति बिगडि जाय है धर्म बिगडि जाय आचार बिगडि जाय ऐसा नियम है। ये नसा सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रका हू महाघातक है ये अमल अनर्थदंडनिमैं हू हैं अर व्यसननिमैं हू हैं यातैं मनुष्य जन्म अर जिनधर्म उत्तम कुलादिक पायाकूं सफल किया चाहो हो तो अमल नसा करनेका त्याग ही करो।

बहुरि रात्रिके अवसरमैं भोजन करना त्यागने योग्य ही है रात्रिभोजन करै ताकै यत्नाचार तो रहै ही नाहीं अर जीवनकी हिंसा होय ही। रात्रिविषै कीडी मांछर मांखी मकडी कसारी अनेक जीव आय पडै हैं अर दीपक जोय भोजन करै तो दीपकके संयोगतैं दूरदूरके जीव दीपककने शीघ्र आय भोजनमैं पडै हैं। अर रात्रिभोजन जिनधर्मी होय करै तो आगांने मार्ग भ्रष्ट होजाय अर रात्रिमैं चूल्हा चाकी परीडाका आरंभ करना मेलना धोवना मांजना ये घोरकर्म प्रगट होजांय तदि महान हिंसा अर महान दुःख प्रगट होजाय तदि घोर आरंभीके जिनधर्मका लेश हू नाहीं रहै है। बहुरि कोऊ कहै जो आरंभ तो नाहीं करै सीधा भोजन लाडू पेडा पूडी पूवा बरफी दुग्धादिक भक्षण करनेमैं रात्रि आरम्भ नाहीं भया ताकूं ऐसा समझना जो दिवसकूं छांड रात्रि भोजन करै ताकै तीव्ररागरूप महान हिंसा होय है जैसैं अन्नके ग्रासका

अनुराग समान नाहीं होय है तैसैं रात्रि भोजनका अनुराग है सो दिनके भोजनका अनुरागके समान नाहीं है। दिवसमैं ही भोजन बहुत है रात्रिदिवस दोऊनिमैं भोजन करै ताके ढोर समान संवररहित प्रवृत्ति रही तथा रात्रिभोजन करनेवालेके व्रत-तप नाहीं होय है ऐसा विशेष जानना जो अनादिकालतैं विदेहनिमैं एकबार वा दोयबार ही भोजन है रात्रिमैं कदाचित हू भोजन नाहीं जो रात्रि भोजन करै तो चूल्हा चाकी बुवारी जलादिकका समस्त आरम्भ रात्रिमैं होजाय तदि भोजन करनेमैं तरकारी बनावनेमैं तथा पुरुषनिके भोजन करनेमैं स्त्रीनिके कुटुंब सेवकादिकनिके भोजन करनेमैं धोयबेमैं बुहारिबैमैं मांजनेमैं दोय पहर रात्रि व्यतीत हो जाय है अनेक,जीवनिका संहार होजाय समस्त यत्नाचारका अभाव होय जाय अर कीडा कीडी ईली कसारी मकडी इत्यादिक बडे बडे जीवनिका भोजनमैं पतन तथा ईंधनमैं चूल्हामैं तरकारीमैं जलमैं पात्र-निमैं पतन होय है अर दीपकादिक तथा चूल्हाका निमित्तकरि माखी माछर डांस पतंगादिक अनेक जीव-निका नितप्रति होम होजाय अर दिनमैं भी आरम्भ अर रात्रिमैं हू घोर आरम्भ करि समस्त कुटुंवजन-निके महा दुःख पैदा होजाय। रात्रिमैं घोर धंधातैं समता नाहीं आसके तामैं धर्मसेवन तथा शास्त्रका पठन श्रवण तत्वार्थकी चर्चा सामायिक जाप्य शुभध्यानका तो अवसर हो रात्रिभोजन करनेवालेके नाहीं रहै है। यातैं जिनेंद्रधर्मके धारक रात्रिभोजन कदाचित् हू नाहीं करै हैं ऐसी सनातनरीति अब ताईं चली आवै है अर जिनधर्मी रात्रिभोजन नाहीं करै हैं ऐसैं कोट्यां मनुष्यनिमैं प्रसिद्धता अर उज्वलता अर प्रभावना अर उच्चता अर भोजनकी शुद्धताकूं बिगाड कोऊ विषयनिकरि प्रमादी अन्ध भया रात्रिमैं दुग्ध कलाकंद पेड़ा खाय हैं तथा औषधि जलादिक पीवै हैं सो अपने उत्तम आचार धर्मनै अर कुल मर्यादानै अर जैनी-पनानै जलांजलि देय सन्मार्गतैं भ्रष्ट हुआ उन्मार्गी हैं, उनका मार्ग तो बाह्य अभ्यंतर भ्रष्ट है अर आगानै अधर्मकी परिपाटी चलावै हैं। बहुरि रात्रिका किया भोजन दिनमैंहू भक्षण करना योग्य नाहीं है। बहुरि मिथ्याधर्मके धारकनिकै मांसभक्षीनिकै संग बैठि भोजन मत करो। नीचजातिकेसूं मित्रता मति करो देव-ताके चढ्या भोजन मत भक्षण करो। दांतका चूढा रोमका वस्त्र कामली पहिर भोजन बनावै तो भक्षण

योग्य नाहीं मांसभक्षीनिके घरमें भोजन नाहीं करना नीचजातिके घरमैं भोजन नाहीं करना। वहुरि अत्तारनिका अर्क तथा माजूम तथा सरवत अन्य हू समस्त वस्तु भक्षण करना योग्य नाहीं। अत्तारके बिलायतका बरायां म्लेछनिके जलकर बनाया उच्छिष्ट अर्कनिकी भरी हुई बोतलां आवै हैं अर समस्त वस्तु अज्ञात हैं अर अर्कादिकनिमैं अनेक जलचर थलचर नभचर पंचेन्द्रियादिक जीवनिके मांसके कई अर्क हैं अर बहुत जातिकी मदिरा बनाय अर्क संज्ञा करै हैं बहुत जीवनिके अण्डानिका रसकी बोतलां भरी हैं। अर मधु जो सहत सो समस्त सरबत मुरब्बा माजूम जवारसादिकनिमैं है अर अनेक जीवनिका अनेक अंग इंद्रियां जिव्हा कलेजा इत्यादिक शुष्क हुआ मांसनिकूं अत्तार बेचैं है यहांके समस्त उत्तमकुलनिकी बुद्धि भ्रष्ट करनेकूं मुसलमान लोक अपनी उच्छिष्ट भक्षण करावनेकूं समस्त हिंदुस्थानके लोकनिकूं भ्रष्ट करनेकूं अत्तारनिकी दुकानां करवाई हैं करोड कषायनिकी दुकान समान एक अत्तारकी दुकान है। यहां इस देशमैं राजालोक हिंदूधर्मकी रक्षावास्ते अठारासै बाईसका संबत तांई तो अत्तारका बसना दुकान करना नाहीं होने दिया फिर कालके निमित्ततैं पापकी प्रवृत्ति फैली ही अब उत्तम कुलवाले हू इनका अर्कादिक खावने लगे हैं सो मुसलमाननिका झूंठन अर मांस मदिरादिक भक्षण करने लगे तदि ब्राह्मणपना महाजनपना वैश्यपना कहां रह्या सब कुल भ्रष्ट भये अर अभक्ष्य भक्षण करनेहीतैं सत्यार्थधर्मतैं रहित लोकनिकी बुद्धि हो गई है अर अत्तारनिकी औषधिहीतैं रोग मिटै है ऐसा नियम नाहीं। अत्तारनिका अर्क पीवा करि धर्मभ्रष्ट होय बहुत लोक मरते देखिये हैं जिनके दुर्गतिका बंध होगया है तिनके ही इनकी भ्रष्ट औषधिसे आराम होय है। जैसैं राजा अरविन्दके दाहज्वरका अनेक इलाज किया तो हू दाहज्वर शांत नाहीं भया अर पाछै अपना महलकी छाति ऊपर लड़ते विसमरानिका शरीरतैं रुधिरका बूंद अपने शरीर ऊपरि पड़ा तातैं शीतलता भई तदि पापी पुत्रनिसूं कही मोकूं रुधिरकी बावड़ी भराय द्यो जो मैं वामैं क्रीडा करि आतापरहित होहूं तब पुत्र पापतैं भयभीत होय लाखका रंगकी बावडी भराई तदि राजा बावडीकूं देखि बडा आनंद मानि बावडीमैं गर्क होय अर कपटके लोहीकी बावडी जानि पुत्र ऊपर क्रोधित होय पुत्रकूं मारनेकूं

छुरी लेय दौड्या सो मार्गमैं पडि अपना हाथकी छुरीतैं आप मरि नरक जाय पहुंच्या। ऐसैं ही जिनकी दुर्गति होनी है तिनकै अत्तारनिकी औषधिसूं आराम होय है तदि उनके पापरूप अत्तारी वस्तूनिमैं प्रवृत्ति होय है यातैं प्राणनिका नाश होते हू छह महीनेके बालकहूकूं अत्तारकी औषधि देना योग्य नाहीं। धर्म बिगड्यां पाछैं यो जिनधर्म अनंतकालमैं हू नाहीं मिलेगा तातैं जैनधर्मके धारकनिकूं हजारां खंड हो जाय तो हू अभक्ष्यभक्षण नाहीं करना बहुरि वजारकी दुकाननिका चून कदाचित् मति भक्षण करो वेचनेवालेनिकै समस्त चमारी खटीकनी और मुसलमानिनी धोबिन इत्यादिक तो पीसै हैं मुसलमान धोबी षलाईनिकै राजाका तवेला तोपखानानितैं चून मिलै सो वजारवाले मोल लेय लेवै हैं अर मनीनाका छह महीनाका पीस्याको प्रमाण नाहीं हजारां सुलसुल्यां पडि जाय हैं। घणा जणा वीधो नाज लेय मोदी लोग पिसावै हैं अर मुसलमान म्लेच्छ समस्त उसहीमैं हस्त घालि तुला लेजाय हैं मुसलमानांकै नुकता विवाहमैं काम नाहीं आवै सो आधा ओसरण आधो फेर जाय हैं बहुरि सरायका दुकानदारांका पीतलका कांसीका लोहेका पात्र भोजन करनेकूं लेना योग्य नाहीं समस्त मांसभक्षी दुराचारीनिकूं भी वेही पात्र देहैं तातैं अपना आचारकी उज्वलता चाहै हैं सो तीन चार पात्र अपने निकट राखि विदेशमैं गमन करै हैं अर जहां जाय तहां दमडी बधती देय चून तराय भक्षण करै चूनकी नाहीं विधि मिलै तो खिचड़ी तथा घूघरी रांधि खाय। बहुरि वजारकी मिठाई लाडू बरफी घेवरादिक मत भक्षण करो। इनका चूनका घृतका जलका कुछ परिमाण नाहीं है। लोभी निंद्यकर्मीनिकै आचार नाहीं होय है बहुरि मैदाका खमीरा वाडिकरि सडावै हैं खट्टा पड़ते ही तामैं अनंतानंत जीव पडै हैं पाछैं कढाईमैं पकै हैं भुनै हैं सो जलेवी करै हैं साबूनी करै हैं सो भक्षण करने योग्य नाहीं तथा दहीमैं खांड बूरा मिलाय बहुतकालपर्यंत मति राखो दोय महूरततांईं खाना योग्य है अपना मित्र भाई पुत्रादिकके सामिल एक पात्रमैं भोजन करना योग्य नाहीं। मनुष्य कूकरा बिलाई इत्यादिकनिका उच्छिष्ट भोजन त्यागना योग्य है तथा गाय भैंस गधा इत्यादिक तिर्यंचनिका उच्छिष्ट जलादिकमैं स्नान मति करो पान तो कदाचित् हू मत करो तथा अन्नका खांडका लापसीका बना-

रत्न० श्राव० १५६

या मनुष्य तिर्यंचनिका आकार ताकूं मत भक्षण करो तथा देवी दिहाडी व्यंतरादिकनिकी पूजाके वास्तै संकल्प किया भोजन त्यागने योग्य है तथा मांसभक्षीनिका भोजनमैं भाजन मत भक्षण करो। भाजन मांसभक्षीको मांग्या मत द्यो। नाईका भाजनका जलसौं छौर मत करावो रजस्वलाका स्पर्शन किया पात्र भोजन योग्य नाहीं। बहुरि अनुपसेव्य जानि विकाररूप वस्त्र आभरण मत पहरो जो उत्तम कुलके योग्य नाहीं ऐसा नीचकुलनिके पहरनेके वेश्या तथा विटपुरुषनिके पहरनेके तथा म्लेच्छ मुसलमाननिके पहरनेके तथा स्वामी योगी फकीर भांडनिके पहरनेके वस्त्र आभरण परिणाम बिगाड़ै है अपने तथा परके विकार उपजावनेवाला तथा अपना पदस्थके योग्य लोकतैं अविरुद्ध ऐसा आभरण वस्त्र भेष धारना योग्य है बहुत करनेकरि कहा संक्षेपतैं जानना जो समस्त संसार परिभ्रमणके कारण पंचइंद्रियनिका विषयनिमैं लालसा है तिन इंद्रियनिमैं हू जिह्वा इंद्रिय अर उपस्थइंद्रिय दोय इंद्रियनिकी लालसा इसलोक परलोक दोऊनिकूं बिगाड़देनेवाली है इन दोय इन्द्रियनिके विषयकी लोलुपता जिनके अधिक है ते मनुष्यजन्ममैं हू पशुके समान हैं। पशुयोनिमैं हू इन दोऊ इंद्रियांका विषयकी चाहकरि परस्पर लडि लडि मरजाय है अर मनुष्यजन्ममैं हू कलह करना मारना मरना निर्लज्ज होना उच्छिष्ट खावना दीनता भाषणा पुण्यदान लेना अभक्ष्य भक्षण करना इत्यादिक समस्त नीचकर्मनिमैं प्रवृत्ति रसना इंद्रियके विषयनिकी लालसातैं ही होय है। अरु देखहू भोगभूमिके अर देवलोकके नानाप्रकारके भोगनितैं हू तृप्तता नाहीं भई अब ये किंचित् जिह्वाका स्पर्शमात्रका स्वाद अति अल्पकालमैं हैं भोजन गिल्यां पाछैं नाहीं अर पहली नाहीं ऐसा तृष्णाका वधावनेवाला आहारमैं लुब्धताका त्याग करि समस्त इंद्रियांको विजय करि रस नीरसको कर्म जैसी विधि मिलाई तीसमैं संतोष धरि अभक्ष्यनिका त्याग करि देहका धारणमात्रके अर्थि भोजन करै है सो समस्त पापरहित होय देवलोकका पात्र होय है। अब यहां ऐसा जानना जो भोगोपभोगपरिमाण करै सो अपना परिणामनिकी दृढ़ता देखै जो मेरे ऐता राग घट्या है ऐता हाल नाहीं घट्या है अर सामर्थ्य देखै जो ऐसा योग्य बनैगा तो मेरा देहका तथा परिणामका इसकूं निर्वाह क-

रनेका सामर्थ्य है कि नाहीं है ऐसा विचार करि व्रत धारण करना अर देशकी रीति निर्वाह योग्य देखनी अर कालकूं अवसरकूं देखना अवस्था देखना अपना कोऊ सहायी है कि त्यागव्रतके विगाडनेवाला है ऐसा हू विचार करना शरीरका रोगरहितपना (नीरोगपना) देखना भोजनादिक मिलनेका नाहीं मिलनेका संयोग देखना तथा भोजनादिक मेरे आधीन है कि पराधीन है ऐसे त्यागव्रततैं हमारे तथा स्त्री पुत्र स्वामी इत्यादिकनिके परिणाममैं संक्लेश होयगा कि संक्लेश नाहीं होयगा अपना स्वाधीनपना पराधीनपना जानि जैसैं परिणामनिकी उज्वलता सहित व्रतका निर्वाह होय तैसैं नियमरूप त्याग करो तथा यम कहिये यावज्जीव त्याग करो। केतेक तो यावज्जीवन ही त्यागने योग्य हैं-जामैं प्रगट त्रसनिका घात होय तथा अनंत जीवनिका घात होय अपने कुलमैं सेवने योग्य नाहीं होय तथा मद करनेवाला होय तथा मांस मद्य माखन मदिरा अचार महा विकृति अर रात्रिविषै भोजन द्यूतक्रीड़ादिक सप्तव्यसन विना दिया परधनका ग्रहण अर त्रसहिंसा अर स्थूल असत्य अन्यायका परिग्रह विनाछान्या जल अनर्थदंड ये तो यावज्जीवन ही त्यागने योग्य हैं। इनमैं नियम कहा करिये ये तो महा अनीति हैं इनके त्याग करनेमैं शरीर ऊपरि कुछ क्लेश भार दुःख नाहीं आवै है अपयश नाहीं होय है इनका त्यागमैं धन चाहिये नाहीं वल चाहिये नाहीं स्वामीका तथा स्त्रीका पुत्र कुटम्बादिकनिका सहाय चाहिये नाहीं किसीकूं पूछनेका वाकिफ करनेका हू काम नाहीं अपने परिणामके ही आधीन है कोऊ प्रकार इनका त्यागमैं शीत उष्ण क्षुधा तृषादिककी वाधा पीड़ा भोगना पड़ै नाहीं स्वाधीन है परिणामनिमैं देहमैं सुख करनेवाला है यातैं दुर्लभ सामग्री पाय भोगोपभोगका परिमाण करना श्रेष्ठ है। वहुरि कदाचित् प्रबलकर्मके उदयतैं यो मनुष्य कुदेशमैं पराधीनतामैं जाय पडै तथा प्रवल रोगतैं पराधीन होजाय तथा प्रवल जराके आवनेतैं उठने वैठने चालनेकी सामर्थ्य घटि जाय तथा कोऊ स्त्री पुत्रादिक सहायी नाहीं होय तथा नेत्रनिकरि अंध होजाय वधिर होजाय तथा लंवा रोग आजाय तथा वंदाखानामैं दुष्ट म्लेच्छादिक अपना भोजन जलादिक विगाड़ि दे तथा जवरीतैं समस्तके सामिल वैठाय खान पान करावै ऐसा उपद्रव आजाय तो तहां अंतरंगमैं तो व्रतसंयमकूं छांडै नाहीं वाहिर श्रीपंचनमोकार मंत्रको

ध्यान करिही शुद्ध है क्योंकि बाह्यदेहादिक पवित्र हो हू वा अपवित्र होहू मलमूत्र रुधिरादिक करि लिप्त हो हू समस्त कुत्सित ग्लानियोग्य अवस्थाकूं प्राप्त हुआ जो पुरुष परमात्माकूं स्मरण करै है सो बाह्यहू पवित्र है अर अभ्यन्तर हू पवित्र है जातैं देह तो सप्तधातुमय मलमूत्रादिकी भरी हुई अर रोगनिका स्थान है एक क्षणमैं समस्त शरीरमैं कोढ झरने लगि जाय है हजारां फोडा फुनसी गुमडी लोहू राध स्रवणे लगि जाय मलमूत्र अबुद्धिपूर्वक स्रवणे लगि जाय है ऐसा अवसरमैं बाह्य व्यवहार शुद्धता कैसैं होय अर निर्धन एकाकीका सहायक कौन होय ? तहां धर्मात्मा पुरुष अशुभ कर्मका उदयमैं ग्लानि त्याग करके धीरता धारण करि आर्त्तपरिणाम करि संक्लेश नाहीं करै हैं अशुभकर्मके उदयकूं निर्जरा मानता अंतरंग वीतरागताकरि संसार देह भोगनिका स्वरूप चिंतवन करता बारह भावना भावता कर्मके उदयतैं अपना आत्मस्वरूपकूं भिन्न ज्ञाता दृष्टा शुद्ध चितवन करता वीतरागताकरि ही राग द्वेष हर्ष विषाद ग्लानि भय लोभ ममतारूप आत्माके मलकूं धोय आपकूं शुद्ध मानै है ताकै समस्त शुद्धता होय हैं। अब भोगोपभोगपरिमाण व्रतकै दोय प्रकारता कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

नियमो यमश्च विहितो द्वेधा भोगोपभोगसंहारात्। नियमः परिमितकालो यावज्जीवं यमो ध्रियते ॥ ८६ ॥

अर्थ--भगवान है सो भोग अर उपभोगका घटावनेतैं नियम अर यम ऐसैं दोय प्रकार भोगोपभोग परिमाण व्रत कह्या है। तिनमैं कालका परिमाणकरि त्याग करना सो नियम कह्या है अर इस देहमैं जीवन है तितने तक तो त्याग करि रहना सो यम कह्या है। भावार्थ–जो एकवार भोगनेमैं आवैं ऐसे आहारादिक तो भोग हैं अर जे बारंबार भोगनमैं आवैं ऐसे वस्त्र आभरणादिक हैं ते उपभोग हैं। तिन भोग उपभोगनिका परिमाण यम नियम करि दोय प्रकार हैं तिनमैं जिस भोग उपभोगका एक मुहूर्त्त तथा दोय मुहूर्त्त तथा पहर तथा दोय पहर एक दिवस दोय दिवस पांच दिन पंद्रह दिन एक मास दोय मास चार मास छह मास एक वर्ष दोय वर्ष इत्यादिक कालकी मर्यादा करि त्याग करै सो नियम नामका परिमाण है। जातैं जो आपके उपयोगी होय शुद्ध होय ताका त्यागमैं तो कालकी मर्यादाकरि ही नियमका

त्याग करना। अर जो आपके प्रयोजनरूप हू नाहीं होय तथा परिणामनिकूं बिगाडनेवाला होय अथवा सदोष होय ताकूं यावज्जीवन त्याग करि यमनामा परिमाण करना योग्य है इस भोगोपभोग परिमाणतैं अनेक पापके आश्रव रुक जाय हैं। इंद्रियां वशीभूत हो जाय हैं राग अतिमन्द होजाय है व्यवहार शुद्ध होजाय है। मन वश होजाय व्यवहार परमार्थ दोऊ उज्वल हो जाय तातैं भोगोपभोग परिमाण व्रत ही आत्माका हित है विरुद्ध भोग तो त्यागिये ही और अविरुद्ध भोग होय तिनमें हू अपनी शक्ति परिमाण देश काल देखि दिवस रात्रिके कालकी मर्यादा करो तामैं हू फिर दोय घडीकी चार घडीकी मर्यादा करि रहना यातैं कर्मनिकी बड़ी निर्जरा है। अब और हू भोगोपभोगनिमैं परिमाण कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

भोजनवाहनशयनस्नानपवित्रांगरागकुसुमेषु। ताम्बूलवसनभूषणमन्मथसंगीतगीतेषु ॥ ८७ ॥

अर्थ-भोगोपभोग परिमाणनाम व्रतमैं नित्य हू नियम करै आजका दिन मैं एक वार भोजन करूंगा वा दोय बार भोजन करूंगा वा तीन चार बार इत्यादिक भोजन करनेका परिमाण करै अथवा आजका दिन मैं एती जातिका अन्न तथा एते रस एते व्यंजन भक्षण करूंगा अधिक प्रकार भक्षण नाहीं करूंगा ऐसैं भोजनका नियम करै। बहुरि वाहन जे हस्ती घोडा ऊंट बलध पालकी रथ बहली नाव जहाज इत्यादिक बाहन ऊपरि चढनेका नियम करै। बहुरि पलंग खाट इत्यादिकविषै शयनका नियम करै जो आज मैं पलंगादिकमैं शयन करूंगा वा भूमिमैं ही शयन करूंगा। बहुरि आज एक बार स्नान करूंगा वा दोय बार स्नान करूंगा वा स्नान नाहीं करूंगा इत्यादिक नियम करै। बहुरि पवित्र जो अंगराग कहिये चंदन केसर कर्पूरादिकके विलेपन करना वा नाहीं करना इनमैं नियम करै बहुरि पुष्प तथा पुष्पनिकी माला आभरणादिक धारण करनेमैं नियम करै। बहुरि तांबूल इलाची सुपारी लवंगादिक भक्षण करूंगा वा नाहीं करूंगा ऐसा नियम करै। बहुरि वस्त्रनिका नियम करै जो आज एते वस्त्र पहरूंगा अधिक नाहीं पहरूंगा ऐसैं वस्त्रनिमैं नियम करै। बहुरि आज एते ही आभरण पहरूंगा अधिक नाहीं ऐसैं आभरण पहरनेमैं नियम करै। बहुरि काम सेवनेका नियम करै। बहुरि नृत्य देखनेका नियम करै

बहुरि गीत गावनेका वा अन्य वेश्या कलावंतादिकतैं गवावनेका नियम करै। बहुरि और हू हरितकायके भक्षणमैं नियम करै। बहुरि षटरसके भक्षणमैं जल पीवनेमैं नियम करै। बहुरि सिंहासन कुरसी चौकी इत्यादिक आसननमैं बैठनेका नियम करै। इत्यादिक अपने योग्य हू भोग उपभोगनिमैं नित्य नियम करै है ताकै भोजनपनादिक करनेतैं हू निरंतर संवर होय है। अब नियमके अर्थि कालकी मर्यादा कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

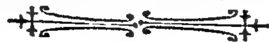
अद्य दिवा रजनी वा पक्षो मासस्तथर्तुरयनं वा। इति कालपरिच्छित्या प्रत्याख्यानं भवेन्नियमः ॥ ८८ ॥

अर्थ—अद्य कहिये एक घड़ी मुहूर्त प्रहर अर दिवा कहिये दिवस तथा रात्रि पक्ष तथा एक मास तथा दोय मासका ऋतु अर अयन कहिये छह मास इत्यादिक कालका परिमाण करि त्याग करना सो नियम है। ऐसैं भोगोपभोगका परिमाण वर्णन किया। अब भोगोपभोगपरिमाण व्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

विषयविषतोऽनुपेक्षाऽनुस्मृतिरतिलौल्यमनिततृषानुभवौ:। भोगोपभोगपरिमाव्यतिक्रमाः पञ्च कथ्यन्ते ॥८९॥

अर्थ—ये भोगोपभोग व्रतके पांच अतीचार त्यागने योग्य हैं। विषय है ते संताप वधावै हैं अर विषयांका निमित्ततैं मरण होय है यातैं ये पंचइंद्रियनिके विषय विष हैं इनमैं परिणामका राग नाहीं घटना सो अनुपेक्षा नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि जे विषय पूर्वकालमैं भोगे थे तिनकूं बारंबार याद करचा करै सो अनुस्मृति नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि विषय भोगै तिस कालमैं अतिगृद्धितातैं अति आसक्त हुआ भोगै सो अतिलौल्य नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि विषयनिकूं आगामी कालमैं भोगनेकी अति तृष्णा लगी रहै सो अतितृष्णा नाम अतीचार है ॥४॥ बहुरि विषयनिकूं नाहीं भोगै तिस कालमैं भी जानै भोगूं ही हूं ऐसा परिणाम सो अनुभव नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं भोगोपभोगपरिमाण व्रतके पांच अतीचार छांडि व्रतकूं शुद्ध करना ॥

इति श्रीस्वामीसमंतभद्राचार्यविरचित रत्नकरंडश्रावकाचारके मूल सूत्रनिकी देशभाषामय वचनिकाविषै तृतीय अधिकार समाप्त भया ॥३॥



अब च्यार शिक्षाव्रतनिके स्वरूपका निरूपण करनेकूं सूत्र कहै हैं—

देशावकाशिकं वा सामयिकं प्रोपधोपवासो वा । वैय्यावृत्त्यं शिक्षाव्रतानि चत्वारि शिष्टानि ॥ १०० ॥

अर्थ—देशावकाशिक ॥ १ ॥ सामायिक ॥ २ ॥ प्रोपधोपवास ॥ ३ ॥ वैयावृत्य ॥ ४ ॥ ऐसैं चार शिक्षाव्रत कहै हैं ।। भावार्थ—ए चार व्रत हैं ते गृहस्थपनामैं मुनिपनाकी शिक्षा करै हैं । अब देशावकाशिक व्रतके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

देशावकाशिकं स्यात्कालपरिच्छेदनेन देशस्य । प्रत्यहमणुव्रतानां प्रतिसंहारो विशालस्य ॥ १०१ ॥

अर्थ—अणुव्रतनिके धारक पुरुषनिकै दिन दिन प्रति विस्तीर्ण देशकूं कालकूं कालकी मर्यादा करि घटावना सो देशावकाशिक नाम शिक्षाव्रत है । भावार्थ—जो पूर्वकालमैं दश दिशानिमैं जावना मंगावना भेजना बुलावना इत्यादिकनिकी मर्यादा यावज्जीवन दिग्व्रतमैं करी थी सो तो बहुत थी तासैंतैं अब रोजीना क्षेत्रकूं घटाय कालकी मर्यादा करि व्रत करै सो देशावकाशिक व्रत है जैसैं पूर्वदिशामैं दोयस कोसका परिमाण यावज्जीवन किया सो तो दिग्व्रत है फिर यामैंतैं रोजीना मर्यादा रूपकरि राखै जो आज चार कोसहीका म्हारै परिमाण है वा इस नगरका ही परिमाण है वा आज अपने घर वाहिर नाहीं जाऊंगा सो देशावकाशिक व्रत है अब देशावकाशिक व्रतमैं क्षेत्रकी मर्यादा प्रगट करै हैं—

गृहहारिग्रामाणां क्षेत्रनदीदावयोजनानां च । देशावकाशिकस्य स्मरंति सीम्ना तपोवृद्धाः ॥ १०२ ॥

अर्थ— तपोवृद्ध जे गणधर देव हैं ते देशावकाशिक व्रत करनेकूं सीमा मर्यादा कहै हैं । गृहकूं कटककूं ग्रामकूं क्षेत्रकूं नदीकूं वनकूं योजनकूं देशावकाशिक व्रतमैं मर्यादा करै हैं। इनकूं उल्लंघनका हमारे इतने काल त्याग है ! अब देशावकाशिकमैं कालकी मर्यादा कहै हैं—

संवत्सरमृतुमयनं मासचतुर्मासपक्षमृक्षं च । देशावकाशिकस्य प्राहुः कालावधिं प्राज्ञाः ॥ १०३ ॥

अर्थ—प्रवीण पुरुष हैं ते एक वर्ष छह महीना दोय मास चार मास एक पक्ष एक नक्षत्र इस प्रकार देशावकाशिक व्रतके कालकी मर्यादा कहै हैं । अब देशावकाशिकका प्रभाव दिखावै हैं—

सीमान्तानां परतः स्थूलेतरपंचपापसंत्यागात्। देशावकाशिकेन च महाव्रतानि प्रसाध्यंते ॥ १०४ ॥

अर्थ—रोजीना जेता चेत्रका परिमाण किया ताके वारैं स्थूल अर सूक्ष्म जे पंच पाप तिनका त्यागतैं
देशावकाशिक व्रत करकैं महाव्रतनिकूं सिद्ध करिये हैं। भावार्थ-मर्यादा करी तीं वारैं समस्त पंचपापनिका
देशावकाशिक व्रत करकैं महाव्रतनिकूं सिद्ध करिये हैं। भावार्थ-मर्यादा करी तों वारैं समस्त पंचपापनिका
त्यागतैं महाव्रत तुल्य भया। अब देशावकाशिक व्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

प्रेषणशब्दानयनं रूपाभिव्यक्तिपुद्गलक्षेपौ। देशावकाशिकस्य व्यपदिश्यन्तेऽत्यया पञ्च ॥ १०५ ॥

अर्थ—आपके जेता चेत्रकी मर्यादा थी तिस वार प्रयोजनके अर्थि अपना सेवककूं वा मित्र पुत्रादिक
कूं कहै तुम जावो तथा या काम करदो ऐसैं कहना सो प्रेषण नाम अतीचार है ॥ १ ॥ वहुरि मर्यादाबाह्य
चेत्रमैं तिष्ठतेनितैं वचनालाप करना तथा अन्य शब्दकी समस्या करि समझाय देना सो शब्द नाम अती-
चार है ॥ २ ॥ वहुरि मर्यादाबाह्य चेत्रमैं कोऊकूं बुलावना वा वस्त्रादिक वांछित वस्तुकूं शब्द कहि मंगा-
वना सो आनयन नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बाह्य चेत्रमैं तिष्ठतेनिकूं समस्या वास्ते अपनारूप दिखा-
वना सो रूपाभिव्यक्ति नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ वहुरि मर्यादाके चेत्रके वाह्य चेत्रमैं वस्त्रादिक तथा कं-
करी पाषाण काष्ठखंड आदिक फेंकि आपाकूं जितावना सो पुद्गलक्षेप नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं
देशावकाशिकव्रतके पंच अतीचार त्यागने योग्य हैं ऐसें देशावकाशिक व्रत कह करि अब सामायिकका
स्वरूप कहै हैं—

असमयमुक्तमुक्तं पञ्चाघानामशेषभावेन। सर्वत्र च सामयिकाः सामयिकं नाम शंसन्ति ॥ १०६ ॥

अर्थ—सामायिक कहिये परम साम्यभावकूं प्राप्त भये ऐसे गणधर देव हैं ते सामायिक नाम करि ताकी
प्रगट प्रशंसा करै हैं जो सर्वत्र कहिये मर्यादा करी तिस चेत्रमैं अर मर्यादाबाह्य चेत्रमैं हू समस्त मनवचनकाय
कृतकारितअनुमोदनाकरि कालकी मर्यादारूप जो समस्त पंचपापनिका त्याग सो सामायिक है। भावार्थ—स-
मस्त पंचपापनिका कालकी मर्यादाकरि समस्तपनाकरि त्याग सो सामायिक है। अब सामायिकमैं पंचपापनि-
का त्याग करि कैसैं तिष्ठै सो कहै हैं—

मूर्धरुहमुष्टिवासोबन्धं पर्यङ्कबन्धनं चापि । स्थानमुपवेशनं वा समयं जानन्ति समयज्ञाः ॥१०७॥

अर्थ—समयज्ञ जे परमागमके जाननेवाले हैं ते मूर्द्धरुह जे केश तिनका बंधन अर मुष्टिबंधन अर वस्त्रबंधन अर पर्यंकासनबंधन हू जैसैं होय तैसैं स्थान कहिये खडा तथा उपवेशन कहिये बैठा समय कहिये रागद्वेषादि रहित शुद्धात्मा जो है ताहि जानता रहै । भावार्थ । सामायिक करनेवाला कालकी मर्यादा परिणाम समस्त प्रकार पापनिका त्याग करि खडा होय करि तथा पर्यंकासन कर बैठै । अर पर्यङ्कासनमैं अपना वाम हस्ततल ऊपरि दच्चिण हस्ततलकूं स्थापन करै । अर अपना मस्तकका केश वा वस्त्र हलता होय तो परिणामके विच्चेप करै यातैं मस्तकके चोटी इत्यादिकके केश होय तिनकूं बांधिले अर वस्त्र हू बिखरि रह्या होय ताकूं हू गांठ देय दांधि करि सामायिक खडा हुआ करै वा बैठा हुआ करै । अब सामायिकके योग्य स्थानकूं कहै हैं—

एकान्ते सामयिकं निर्व्याक्षेपे वनेषु वास्तुषु च । चैत्यालयेषु वापि च परिचेतव्यं प्रसन्नधिया ॥१०८॥

अर्थ—जिस स्थानमैं चित्तकूं विच्चेप करनेके कारण नाहीं होय अर बहुत असंयमीनका आवना जावना नाहीं होय अर अनेक लोकनिकरि वादविवादादिकका कोलाहल नाहीं होय स्त्रीनिका नपुंसकनिका आगमन प्रचार नाहीं होय अर जहां गीत नृत्य वादित्रादिकनिका प्रचार नजीक नाहीं होय अर तिर्यंचनिका अर पच्चीनिका संचार नाहीं होय और जहां बहुत शीतकी तथा उष्णताकी प्रचंड पवनकी वर्षाकी बाधा नाहीं होय तथा डांस माछर मच्चिका कीडा कीडी जवा मधुमच्चिका टांट्या सर्प बीछू कनसला इत्यादिक जीवनकृत बाधा नाहीं होय ऐसा विच्चेपरहित स्थान एकांत होय वा वन होय जीर्ण बागके मकान होय वा गृह होय वा चैत्यालय होय वा धर्मात्माजननिका प्रोषधोपवास करनेका स्थान होय ऐसा एकान्त विच्चेपरहित वन होहु वा जीर्ण बाग तथा सूना गृहादिक चैत्यालयादिकमैं प्रसन्नचित्त हुआ सामायिकमैं परिचय करो । अब सामायिककी और हू सामग्री कहिये है ।

व्यापारवैमनस्याद्विनिवृत्यामन्तरात्मविनिवृत्या । सामयिकं बध्नीयादुपवासे चैकभुक्ते वा ॥ १०६ ॥

सामयिकं प्रतिदिवसं यथावदप्यनलसेन चेतव्यं । व्रतपञ्चकपरिपूरणकारणमवधानयुक्तेन ॥ ११० ॥

अर्थ—कायकी चेष्टारूप व्यापार तामैं विरक्तपनातैं बाह्य आरंभादिकतैं छूटि अर अन्तरात्मा जो मन ताकूं विकल्परहित करिकैं अर उपवासके दिनविषै अथवा एकभुक्तिके दिनविषै सामायिकरूप तिष्ठै तथा आलस्यरहित पुरुष दिवस २ प्रति नित्य रोजीना यथावत् सामायिक जो है ताहि एकाग्र चित्तकरि युक्त हुवा परिचय करने योग्य है वृद्धि करने योग्य है। कैसाक है सामायिक अहिंसादिक पंचव्रतनिकी परिपूर्णताका कारण है। भावार्थ—सामायिक करनेमैं उद्यमी श्रावक है सो समस्त आरंभादिक कायकी क्रियाकूं त्याग करि अर मनका विकल्प छांडि सामायिक करै तिनमैं कोऊ तो पर्वका निमित्त पाय उपवास जिस दिन करै तिसही दिनमैं सामायिक करै कोऊ एक ठाणाके दिन सामायिक करै कोऊ नित्यप्रति सामायिक करै कोऊ एक दिवसकी आदि अन्तमैं दोय बार नित्यप्रति सामायिक करै अथवा पूर्वाह्न मध्याह्न अपराह्न तीनकालविषै दोय दोय घड़ीका नियम करि साम्यभावकी आराधना करै सो एक स्थानमैं निश्चल पर्यंकासन तथा कायोत्सर्ग नाम निश्चल आसन धरि अङ्गउपंगनिका चलायमानपना छांडि काष्ठपाषाणकरि गड्या प्रतिबिंबतुल्य अचल होय दशदिशनिकूं नाहीं अवलोकन करता अपने अङ्गउपंगनिकूं नाहीं देखता किसीतैं वार्ता नाहीं करता समस्त पंच इंद्रियनके विषयनितैं मनकूं रोकि समस्त चेतन अचेतन द्रव्यनिमैं राग द्वेष हर्ष विषाद वैर स्नेहादिकनिकूं छांडि सामायिकमैं तिष्ठै है सामायिकमैं तिष्ठता समस्त जीवनिमैं मैत्री धारण करता परम क्षमा धारण करै है मैं सर्व जीवनिमैं क्षमा धारण करूं हूं कोऊ जीव मेरा वैरी नाहीं है मेरा उपार्जन किया मेरा कर्म ही वैरी है मैं अज्ञानभावतैं क्रोधी अभिमानी लोभी होय करिकै विपरीत परिणामी हुआ जाकी प्रवृत्तिसूं मेरा अभिमानादिक पुष्ट नाहीं भया तिसकूं ही वैरी मान्या कोऊ मेरा स्तवन बड़ाई नाहीं करी मेरे कर्तव्यकी प्रशंसा नाहीं करी ताकूं वैरी समझ्या मेरा आदर सत्कार उठना स्थान देना इत्यादिकमैं मंद प्रवर्त्या ताकूं वैरी जान्या तथा कोऊ मेरा दोष छो ताकूं जनाया ताकूं वैरी जान्या तथा कोऊ मेरे आधीन नाहीं प्रवर्तन किया तथा मोकूं कुछ भोजन वस्त्र धनादिक

नाहीं दिया ताकूं बैरी मान्या सो ये समस्त मेरी कषायतें उपजी दुर्बुद्धितें अन्य जीवनिमें वैर बुद्धि नाहि छांडि क्षमा अङ्गीकार करू हूं अर अन्य समस्त जीव हैं ते हू मेरा अज्ञानभाव विपयकषायांके आधीन जानि मेरे ऊपरि क्षमा करो मोकूं माफ करो ऐसें वैर विरोधकी बुद्धिकूं छांडि में समस्तमें समभाव धारि सामायिक अंगीकार करू हूं जेते दोय घटिका परिमाणमें मनकरि वचनकरि कायकरि समस्त पंच इंद्रियनिका विषयनिकूं समस्त आरम्भ परिग्रहकूं त्यागकरि भगवान पंचपरमेष्ठीका स्मरण करता तिष्ठू हूं ऐसें सामायिकका अवसरमैं प्रतिज्ञाकरि पंचनमस्कारके अक्षरनिका ध्यान करता तथा पंच परमेष्ठीके गुणनिकूं स्मरण करता तथा जिनेन्द्रका प्रतिबिंबकूं चिंतवन करता सामायिकमें तिष्ठे तथा अपणा आत्माका ज्ञाता दृष्टा स्वभावकूं रागद्वेषतैं भिन्न अनुभव करता तिष्ठै तथा चार मंगल पद चार उत्तम पद चार शरण पदनिकूं चिंतवन करता तिष्ठै तथा द्वादशभावना पोड़शकारणभावना चिंतवन करे अर चतुर्विंशति तीर्थंकरनिका स्तवनमैं तथा एक तीर्थङ्करकी स्तुति तथा पंच परम गुरुनिका स्तवनमें इनके अर्थमें एकाग्रचित्त धारणकरि सामायिक करै तथा प्रतिक्रमण करनेकूं समस्त दिवसमैं किये दोपनिकूं दिनका अन्तमें चिंतवन करै अर समस्त रात्रिमें जे दोष किये तिनकूं प्रभात समय चिंतवन करै जो यो मनुष्य जन्म अर तामें भगवान सर्वज्ञ वीतरागका उपदेश्या धर्म अनन्तकालमैं बहुत दुर्लभ प्राप्त भया है इस जन्मकी एक घडी हू धर्म विना व्यतीत मत होहू ऐसा विचार करे जो आजका दिनमें तथा रात्रिमें जिनदर्शन पूजन स्तवनमैं केता काल व्यतीत किया अर स्वाध्याय सत्संगति तत्त्वार्थनिकी चर्चा तथा पंच परमेष्ठीनिका जाप ध्यानमें तथा पात्रदानमैं केता काल व्यतीत किया अर बहुत प्रारम्भमैं अर इंद्रियनिके विषयनिमैं अर व्यवहारादिक विकथामैं अर प्रमादमैं निद्रामैं काम सेवनमें भोजनपानादिकमें आरम्भादिकनिमैं केता काल व्यतीत किया तथा मेरा मनवचनकायकी प्रवृत्ति तथा रागादिक संसारके कार्यनिमें अधिक भई कि परमार्थमें अधिक भई ऐसे समस्त दिवसका किया कर्तव्यकूं दिनका अन्तमें चिंतवन करे अर रात्रिका कियाकूं प्रभात समय चिंतवन करै जातैं जो पांच रुपयाकी पूंजी लेय बनिज करे है सो हू नित्य रोजाना अपना ठगावना

कुमावना टोटा नफाकी संभाल करै है तो पूर्व पुण्यके प्रभावतैं इस जन्म लाया जो उत्तम मनुष्य जन्म वीतराग धर्म सतसंगति इन्द्रियपरिपूर्णतादिक धन तिसमैं व्यवहार करता ज्ञानी अपनी आत्माके हानि वृद्धि नाहीं संभालि करै कहा ? जो टोटा नफाकी संभाल नाहीं करै तो परलोकतैं ल्याया धमधनादिकनकूं नष्ट करि घोर तिर्यंच गतिमैं वा नारकीनिमैं निगोदनिमैं जाय नष्ट होजाय तातैं धर्मरूप धनका वधावनेका अर्थि एक दिनमैं दोय वार तो संभाल करै ही अर जो कपायनिके वशतैं जो अपने मनवचनकायकी दुष्ट प्रवृत्ति भई ताकूं वारंवार निंद्या करै हाय मैं दुष्ट चिंतवन किया तथा कायतैं दुष्ट क्रिया करी हाय मैं वचनकी प्रवृत्ति वहुत निंदा करी यामैं महा अशुभकर्मका वंध किया धर्मकूं दूषित किया अपयश प्रगट किया अव इस निंद्यकर्मकूं चिंतवन करते मेरे परिणाम पश्चात्तापकरि दग्ध होय हैं अहो ! मोहकर्म वडा वलवान है जो मैं मेरे दुष्ट परिणामनिकी दुष्टताकूं अर पापके करनेवाले अर दुर्गतिके ले जानेवाले हमारे निंद्य परिणामनिकूं नीकै मेरा घात करनेवाले जानूं हूं अर प्रयोजनरहित जानूं हूं अर अपनी जीवितव्यकूं वहुत अल्प जानूं हूं अर परलोकमैं मेरे किये कर्मका फलकूं मैं हो अकेला ही भोगूंगा ऐसा अच्छी तरह वारंवार परिणाममैं निश्चय करूं हूं चिंतऊ हूं चिंतवन करते करते हू मेरा परिणाम जो अन्य जीवनितैं वैर अर विषयनिमैं राग नाहीं घटै है सो यो प्रवल मोहकर्मकी महिमा है याहीतैं मोहकमका नाश करि विजयकूं प्राप्त भये ऐसे पंच परमेष्ठीनिकूं स्मरण करूं हूं जो मोहकर्मके जीतनेवाले जिनेन्द्रका प्रभावकरि मेरे मोह कर्मतैं उपजे रागभाव द्वेषभाव कामादि विकारभाव तथा क्रोधभाव अभिमान भाव मायाचारके भाव लोभभाव मेरा नाशकूं प्राप्त होहू जैसी वीतरागता जिनेन्द्रभगवान पाई तैसी मेरे भी हो हू इस अभिप्रायतैं मैं कायतैं ममत्व छांडि पंचपरमेष्ठीका ध्यान सहित कायोत्सर्ग करूं हूं तथा अज्ञानभावतैं जो पूर्वकालमैं पृथ्वीकायका खोदना कुचरना कूटना इत्यादिक करि घात किया होय तथा अवगाहनेकरि विलोवनकरि छिडकनेकरि स्नानादिककरि जलकायका जीवांकी विराधना करि तथा दावना बुझावना कसेरना कूटना इत्यादिककरि अग्निकायके जीवनिकी विराधना करी तथा वीजणां इत्यादिककरि पवनकायका जीवांकी विराधना

करी तथा जड कंद मूल छाल कूपल पत्र फूल फल डाहला डाहली सीव तृण घास बेल गुल्म वृक्षादिकनिका तोडना छेदना वनारना उपाडना चबाना रांधना बांटना इत्यादिककरि वनस्पतिकायकी विराधना करी तिनतैं उत्पन्न भया पापकर्म तिनका नाश परमेष्ठीके जाप्यके प्रभावतैं मेरे हो हू अर परमेष्ठीके ध्यानका प्रभावतैं अब मेरा परिणाम छह कायनिके जीवनिकी घाततैं पराङ्मुख हो हू संयमभावको प्राप्त हो हू। बहुरि जो मेरे गमनमें आगमनमें उठनेमें पसारनेमें संकोचनेमें भोजनमें पानीमें आरंभमें उठावनेमें मेलनेमें तथा चाकी चूल्हा औखली बुहारी जलका परीडा अर सेवा कृषी विद्या वाणिज्य लिखना शिल्पकर्म जीविकामें तथा गाडी घोड़ा इत्यादिक वाहननिमें प्रवर्तन करि जो मेरी यत्नाचाररहित प्रवृत्ति ताकरि जो द्विइंद्रिय त्रिइंद्रिय चतुरिन्द्रिय पंचेंद्रिय जीवनिकी विराधना भई होय सो मिथ्या हो हू। मैं बुरी करी ये आरंभादिक भला नाहीं संसारमें डबोनेवाले हे नरक देनेवाले हैं इन आरंभविषय कषायनिकरि ही यो जीव एकेन्द्रियादिक तिर्यंचनिमें अनन्तानन्तकाल क्षुधा तृषा मारन ताडना लादन बंधन चालन छेदन फाडन चीरन चाबन इत्यादिक घोर दुःख भोगता ते हिंसातैं उपजाया कर्मको नाशके अर्थि अर आगाने हिंसारूप परिणामका अभावके अर्थि मैं पंच नमस्कार पदका शरण ग्रहण करूं हूं।बहुरि अज्ञान भावतैं व प्रमादतैं जो मैं असत्य वचन कह्या तथा गाली दीनी तथा भंडवचन कह्या तथा मर्मछेद करनेवाले कर्कश वचन व कठोर कह्या तथा किसीकूं चोरीका कलंक लगाया किसीकूं कुशीलका कलंक लगाया तथा धर्मात्मा ज्ञानी तपस्वी शीलवंतनिकूं दोष लगाया तथा धर्मात्मानिकी निंदा करी तथा सांचे देवधर्मगुरुकी निंदा करी तथा मिथ्याधर्मकी पोषणा करी हिंसाकी प्रवृत्तिका उपदेश किया तथा मिथ्याधर्मकी प्ररूपणा करी तथा स्त्रीनिकी कथा राजकथा भोजनकथा देशकथा इत्यादिक घोर पापनिमें मेरा वचन प्रवर्त्या ताका अब पश्चात्ताप करूं हूं। मैं घोर कर्मका बंध किया जाका फल नरकनिके दुःख तथा तिर्यंचगतिनिके घोर दुःख अनंतकाल भोगने हैं अर अनंतकाल गूंगा बहिरा आंधा नीच जाति नीच कुलमें महा दारिद्रसहित उपजावना है यातैं अब दुष्ट वचनके बोलनेकरि उपजाया पापकर्मका नाशके अर्थि अर अब आगाने मेरे दुष्ट वचनमें प्रवृत्ति कदाचित मत होहु इस वास्ते मैं पंचनमस्कारपदका

शरण ग्रहण करूं हूं बहुरि अज्ञानभावतैं वा प्रमादतैं पूर्वकालमैं जो मैं परका विनादिया धन गिरया पड्या भूल्याग्रहण करनेमैं परिणाम किया कपटछलतैं ठग्या तथा जबर होय परका धन राखि मेल्या नाहीं दिया तो बहुत संक्लेश आपकै अर अन्यकै उपजाय दिया तातैं घोर पाप उपजाया ताका फल नरक तिर्यञ्चादि गतिनिमैं परिभ्रमण अनंतकालपर्यन्त दरिद्रादिक घोर दुःख होना है यातैं चोरीकरि उपजाया जो पाप कम ताका नाशके अर्थि अर आगानै मेरा पराया धन विना दिया ग्रहण करनेमैं परिणाम कदाचित मत होऊ इसवास्तै मैं पंचनमस्कारपदका शरण ग्रहण करूं हूं बहुरि परकी स्त्रीके रूप आभरण वस्त्र भाव विलासकूं राग भावतैं देखनेकी इच्छा करि तथा राग भावतैं देखी तथा संगमादिक किया तातैं उपार्जन किया घोर पाप जाका फल अनंतकालपर्यन्त नरकगतिनिमैं परिभ्रमण करि अनेक भवनिमैं हजारां रोगका पावना तथा दरिद्रादि दुःख भोगना तथा बहुत कालपर्यंत कामरूप अग्निकरि दग्ध भया असंख्यात भवनिमैं कामवेदनाकरि पीडित हुआ लडि लडि मर जाना है तातैं परस्त्रीकी वांछाकरि उपजाया पापकर्मका नाशके अर्थि अर आगामी कालमें मेरा अन्यकी स्त्रीमैं अनुराग कदाचित् मत होऊ इसवास्ते मैं पंचपरमगुरुनिका पंचनमस्कारमंत्रका ध्यान करूं हूं। बहुरि मैं अज्ञानी परिग्रहमैं बड़ी ममता करि शरीरादिक पुद्गलकूं मेरा मानि यामैं ही आपा जान्या तथा रागादिकभाव मोहकर्मके उदयतैं भया तिनिकूं अपना भाव मानि परद्रव्यनिमैं बड़ी आसक्तता करि धनधान्य कुटुम्बादिककी वृद्धिकूं अपनी वृद्धि मानी इनकी हानिकूं अपनी हानि मानी अर अब हू जायगा हाट आजीविका स्त्री पुत्र धन धान्य आभरण वस्त्रादिक हजारां वस्तुरूप परिग्रहमैं हमारा हमारा ऐसो बुद्धिमैं विपरीतता लग रही है जो आपका ज्ञान परका ज्ञान पापपुण्यका ज्ञान परलोकका ज्ञान नष्ट होय रह्या है कण्ठगत प्राण हो जाय तो हू ममता नाहीं घटै है अर जगतमैं प्रत्यक्ष देखै है जो किसीकी लार परिग्रह गया नाहीं मेरी लार जायगा नाहीं तो हू दिन प्रति बधाया चाहै है यामैं मरण करूं तहां पर्यन्त किंचित् मत घट जावो इसप्रकार ही निरन्तर चिंतवन रहै है इस परिग्रहरूप दावाग्निकूं संतोषरूप जलकरि नाहीं बुझाया चाहै है समस्त पापनिका मूल एक परिग्रहमैं मूर्छा है मैं

अज्ञानी याहीका आरम्भमैं याहीमैं ममता धारण करनेकरि अनन्तकालमैं दुर्लभ ऐसा मनुष्य जन्म जिन-धर्म पाया ताहि बिगाडि अनन्तभवनिमैं नरक तिर्यञ्च गतिनिके दुःखकूं अङ्गीकार किया ताका मरे बड़ा पश्चात्ताप है अब ऐसे घोर पापकर्मके नाश करनेका उपाय भगवान पंचपरमेष्ठीका शरण विना कोऊ दूजा है नाहीं अर आगामी कालहूमैं परिग्रहमैं विरक्तताका करानेवाला भगवान पंचपरमेष्ठी विना कोऊ है नाहीं यातैं मूर्छाका नाशके अर्थि परम संतोष उपजनेके अर्थि परिग्रहका त्यागके अर्थ पंचनमस्कारका ध्यानपूर्वक कायोत्सर्ग करूं हूं। अब सामायिकमैं तिष्ठता गृहस्थ कैसा है सो कहै हैं—

सामयिके सारम्भाः परिग्रहा नैव सन्ति सर्वेऽपि। चेलोपसृष्टमुनिरिव गृही तदा याति यतिभावं ॥ १११ ॥

अर्थ—गृहस्थ जे हैं तिनके सामायिकके अवसरविषै आरम्भकरि सहित समस्त ही परिग्रह नाहीं है यातैं सामायिक करता गृहस्थ जो है सो वस्त्रसहित मुनिकी ज्यों यतिका भावकूं प्राप्त होय है। भावार्थ—सामायिकके अवसरमैं समस्त आरम्भ अर समस्त परिग्रह नाहीं है परन्तु गृहस्थ है यातैं वस्त्र पहरै है तातैं वस्त्रविना अन्य प्रकार तो मुनितुल्य ही है मुनिकै नग्नपना होय है याकै वस्त्रधारण है एता ही अन्तर है तातैं मुनि नाहीं कह्या जाय है। बहुरि जो उपसर्ग परीषह आजाय तो मुनीश्वरनिकी ज्यों धीरता धारण करि सकै कायर नाहीं होय ऐसैं सूत्र कहै हैं—

शीतोष्णदंशमशकपरिषहमुपसर्गमपि च मौनधराः। सामयिकं प्रतिपन्ना अधिकुर्वीरन्नचलयोगाः ॥ ११२ ॥

अर्थ—सामायिककूं धारण करता गृहस्थ मौनकूं धारण करै है अर मनवचनकायकूं नाहीं चलायमान करता शीत उष्ण देशमशकादि परीषह अर चेतन अचेतनकृत उपसर्गनिकूं सहै है। भावार्थ—सामायिक करनेके अवसरमैं जो शीतका उष्णताका वर्षाका पवनका डांस मांछर दुष्टनिके दुर्वचन रोगपीडादिका परीषह आजाय तथा दुष्ट वैरीकरि किया तथा सिंह व्याघ्र सर्पादिक तथा अग्निजलादिकजनित उपसर्ग आजाय तो बडा धैर्य धारणकरि मनवचनकायकूं साम्यभावतैं नाहीं चलायमान करता मौनसहित समस्तकूं सहै है। अब सामायिक करता संसारका स्वरूपकूं अर मोक्षके स्वरूपकूं ऐसैं चिंतवन करै है—

अशरणमशुभमनित्यं दुःखमनात्मानमावसामि भवम् । मोक्षस्तद्विपरीतात्मेति ध्यायन्तु सामयिके ॥ ११३ ॥

अथ—सामायिक धारता गृहस्थ संसारकूं ऐसे चिंतवन करै यो चतुर्गतिमैं परिभ्रमणरूप संसार अशरण है यामैं अनंतानंत जन्म मरण करते अनंतकाल व्यतीत भयो अर समस्त पर्यायनिमैं क्षुधा तृषा रोग वियोग मारन ताड़न भोगतैं कहूं शरण नाहीं जो कोऊ कालमैं कोऊ क्षेत्रमैं कोऊ रक्षा करनेवाला नाहीं तातैं संसार अशरण है । बहुरि अशुभकर्मके बंधनकरि दुःखका देनेवाला अशुभदेहरूप पिंजरामैं फस्या हुआ अशुभ कषायनिरूप अशुभभावनिमैं लीन हुआ निरंतर अशुभका ही बंध करता अशुभहीकूं भोगै है तातैं यो संसार अशुभ है । बहुरि इस संसारमैं जीव अनंतानंतकाल परिभ्रमण करते करते कदाचित् सुक्षेत्रमैं वास उत्तमकुल इंद्रियपरिपूर्णता सुन्दररूप प्रबलबुद्धि जगतमैं पूज्यता मानता तथा राज्यसंपदा धनसंपदा सुन्दर मित्रनिका संगम आज्ञाकारी महाप्रवीण सुपुत्र मनोहर बल्लभाका संगम तथा पण्डितपना सूरपना बलवानपना आज्ञा ऐश्वर्यादिक मनोवांछित भोग नीरोग शरीरादिक कर्मके उदयकरि पा जाय तो क्षणमात्रमैं विजुलीवत् इंद्र धनुषवत् इन्द्रजालीका नगरवत् नियमत विलाय जाय हैं । फिर अनंतानंतकालमैं हू नाहीं प्राप्त होय हैं तातैं संसार अनित्य है अर समस्त कालमैं कर्मबंधनसहित देहपिंजरमैं फस्या अनंतानंत जन्ममरणादिकनिकरि सहित है अनंतकालहूमैं दुःखका अभाव नाहीं तातैं संसार दुःख ही है । बहुरि संसारपरिभ्रमणरूप मेरा आत्मा नाहीं तातैं संसार अनात्मा है ऐसैं सामायिकमैं तिष्ठता गृहस्थ चिंतवन करै है अहो परिभ्रमणरूप संसार है सो अशरण है अनित्य है दुःखरूप है अर मेरा स्वरूप नाहीं ऐसा संसारमैं मिथ्याज्ञानका प्रभावकरि मैं अनंतकालतैं वास करूं हूं । अब मोक्ष जो संसारतैं छूटना है सो मेरा आत्माकूं शरण है फिर अनंतानंत कालमैं हू संसारमैं आवनेकरि रहित है बहुरि शुभ है अनंत कल्याणरूप है बहुरि नित्य है अविनाशी है बहुरि अनंतानंतस्वरूप है जामैं अनंतज्ञानादि अर अनाकुलतारूप है अर मेरा आत्माका स्वरूप है पररूप नाहीं ऐसैं सामायिकमैं तिष्ठता गृहस्थ संसारका अर मोक्षका स्वरूप चिंतवन करै है । साम्यभाव सहित सामायिक दोय घडी मात्र हो जाय तो महान कर्मकी निर्जरा है सामायिककी

ल०
ाव०
७०

महिमा कहनेकूं इंद्र हू समर्थ नाहीं है सामायिकके प्रभावतैं अभव्य हू ग्रैवेयिकपर्यन्त उपजै हैं। सामायिक समान धर्म कोऊ हुयो न होसी यातैं सामायिक अंगीकार करना ही आत्माका हित है। अर जाकैं सामायिकादिकका पाठका ज्ञान नाहीं आवै नाहीं ते पंचनमस्कारमात्र ही एकाग्रतैं मनवचनकायकूं निश्चलकरि समस्त आरंभ कषायविषयनिका त्याग करि पंचनमस्कार मंत्रका ध्यान करता दोय घटिका पूर्ण करो अब सामायिकके पंच अतीचार कहैं हैं।

वाक्कायमानसानां दुःप्रणिधानान्यनादरास्मरणे। सामायिकस्यातिगमा व्यज्यन्ते पञ्च भावेन ॥ ११४ ॥

अर्थ—ए पांच सामायिकका भावनिकरि अतीचार हैं सामायिक करते वचनकी संसारसंबंधी प्रवृत्ति करना सो वचनदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि शरीरकी संयमरहित चलायमानपनाकी चेष्टा सो कायदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि मनमैं आर्तरौद्रादिक चिन्तवन करै सो मनोदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि सामायिककूं उत्साहरहित निरादरतैं करै सो अनादर नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि सामायिक करता देववंदनादिक पाठ भूलि जाय वा कायोत्सर्गादिक भूलि जाय सो अस्मरण नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं पंच अतीचारसहित सामायिकका वर्णन किया। अब प्रोषधोपवासकूं वर्णन करै हैं—

पर्वण्यष्टम्यां च ज्ञातव्यः प्रोषधोपवासस्तु। चतुरभ्यवहार्याणां प्रत्याख्यानं सदिच्छाभि ॥ ११५ ॥

अर्थ—पर्वणि जो चतुर्दशी अर अष्टमीका दिवसरात्रिविषै चार प्रकारका आहारका जो सम्यक् इच्छा करि त्याग करना सो प्रोषधोपवास जानने योग्य है। एकमासविषै दोय अष्टमी अर दोय चतुर्दशी ये अनादितैं पर्व ही हैं इन पर्वनिमैं गृहस्थ व्रतसंयमसहित ही रहै जातैं धर्मात्मा संयमी हैं ते तो सदाकाल व्रती ही रहै हैं यातैं धर्मसैं अनुरागका धारक गृहस्थ एक महीनामैं चार दिन तो समस्त पापके आरंभ अर इंद्रियनिके विषयनिकूं नष्ट करि व्रतशीलसंयमसहित उपवास धारण करि चार प्रकारका आहारका त्याग करि संयम सहित तिष्ठै ताकै प्रोषधोपवास जानना। अब प्रोषधोपवासका विशेष कहै हैं। सप्तमीके

दिन वा त्रयोदशीके दिन मध्याह्नकाल पहली एक वार भोजनपानादिक करि समस्त आरंभ वणिज सेवा लेन देनका त्याग करि देहादिकमैं ममत्व त्यागि एकांत वस्तिका तथा जिनमंदिरमैं एकांतस्थान वा वनके चैत्यालय वा शून्य गृह मठादिक वा प्रोषधोपवास करनेका स्थानमैं जाय समस्त विषय कषायनिका त्याग करि मनवचनकायकी प्रवृत्तिकूं रोकि धर्मध्यान करिकैं वा स्वाध्याय करिकैं सप्तमी वा त्रयोदशीका अर्द्ध दिनकूं व्यतीत करै। पीछे संध्याकाल संबंधी देववंदनादिक करि रात्रिनै धर्मकथा वा जिनेन्द्रका स्तवनादिक करि रात्रि व्यतीत करै वा धर्मध्यान करता शोधित संथरामैं अल्पकाल प्रमाद टालि रात्रि व्यतीत करै अष्टमी चतुर्दशीका प्रातःकालमैं सामायिकादिक वंदना करि तथा प्राशुक द्रव्यनितैं पूजनकरि शास्त्रका अभ्यासकरि भावनाका चिन्तवन करि धर्मध्यानसहित अष्टमी चतुर्दशीका दिन अर समस्त रात्रिकूं व्यतीतकरि नवमी वा पूर्णिमाका प्रभातसंबंधी कर्म क्रिया करि पूजनादि वंदना करि उत्तम मध्यम जघन्य पात्रमैं कोऊ पात्रका लाभ होय ताकूं भोजन कराय आप पारनौ करै। ऐसैं षोडश प्रहर धर्मसहित व्यतीत करै ताकैं उत्कृष्ट प्रोषधोपवास होय है। तथा कार्तिकेयस्वामी कह्या है जो अष्टमी चतुर्दशीके दिन स्नान विलेपन आभूषण स्त्रीसंसर्ग पुष्प अतर फुलेल धूपदीपादिकनितैं त्याग जो ज्ञानी वीतरागतारूप आभरण करि भूषित हुआ दोऊ पर्वनिमैं सदा काल उपवास करै वा एक वार भोजन करै वा नीरस भोजन करै ताकै प्रोषधोपवास होय है तथा अमितगति श्रावकाचारमैं पर्वीका दिनमैं उपवास अनुपवास एकभुक्त ऐसैं तीन प्रकार कह्या है। तिनमैं चार प्रकार आहारका त्यागकूं उपवास कह्या अर एकवार जल ग्रहण करै ताकूं अनुपवास कह्या अर एक वार अन्न जल ग्रहण करता ताकूं एकभुक्त ऐसी संज्ञा है परंतु तात्पर्य ऐसा जानना जो अपनी शक्तिकूं नाहीं छिपाय करिकैं धर्ममैं लीन भया उपवास करै तथा आगैं प्रोषधप्रतिमा चतुर्थी कहसो तिसविषै तो षोडशप्रहरका नियम जानना अर दूजी व्रतप्रतिमामैं यथाशक्ति व्रत तप संयम धारण करि पर्वीमैं धर्मध्यानसहित रहना॥ अब उपवासमैं और हू वर्णन करै हैं—

पञ्चानां पापानामलंक्रियारम्भगन्धपुष्पाणां। स्नानाञ्जननस्यानामुपवासे परिहृतिं कुर्यात्॥ ११६॥

अर्थ—उपवासके दिन हिंसादिक पंच पापनिका त्याग करि रहै अर अलंक्रिया कहिये आभरणादिक मंडनका त्याग करै अर गृहकार्यका आरंभ जीविकाका आरंभ छांडै अर सुगंधि केशर कपूरादिक तथा अतर फुलेलादिक गंधके ग्रहणका त्याग करै अर पुष्पनिका ग्रहण करनेका त्याग करै बहुरि स्नान करनेका नेत्रमैं अंजन अंजनेका अर नास लेनेका त्याग करै तथा और हू नृत्य वादित्रके बजावनेका देखनेका श्रवणका त्याग करै। तथा और हू पंच इंद्रियनिके भोगका त्याग करै जातैं उपवास करि है सो इंद्रियनिका मद मारनेकूं और इंद्रियनिका विषयांमैं गमन है ताकै रोकनेकूं अर कामके मारनेकूं प्रमाद आलस्यादिकनिके रोकनेकूं नष्ट करनेकूं आरंभादिकतैं विरक्त होनेकूं परीषह सहनेमैं सामर्थ्य होनेकूं धर्मके मार्गतैं नाहीं चिगनेकूं जिह्वा इंद्रिय उपस्थइंद्रियके दण्ड देनेकूं उपवास करिये है अर अपनी प्रशंसा वा लाभ वा परलोकमैं राज्यसंपदादिक प्राप्त होनेकूं उपवास नाहीं करिये है। केवल विषयानुराग घटावनेकूं शक्तिबधावनेकूं उपवास करिये है। जातैं इंद्रियां खानपानादिकके नाना स्वादमैं निरंतर प्रवर्तै हैं उपवास करनेतैं रसादिकके भोजनमैं लालसा नष्ट होजाय निद्राका विजय होजाय काम मार्‍या जाय तातैं उपवासका बडा प्रभाव जानि उपवास करिये है। अब उपवासका दिन कैसे व्यतीत करै सो कहै हैं—

धर्मामृतं सतृष्णः श्रवणाभ्यां पिबतु पाययेद्वान्यान्। ज्ञानध्यानपरो वा भवतूपवसन्नतन्द्रालुः ॥ ११७ ॥

अर्थ—उपवास करता गृहस्थ है सो निरालसी हुआ संता ज्ञानका अभ्यासमैं अर धर्मध्यानमैं तत्पर होहू अर अतितृष्णारूप हुआ धर्मरूप अमृतका पान कर्णइंद्रियकरि करि हू। अर अन्य भव्य जीवनिकूं धर्मरूप अमृतका पान करावो। भावार्थ—उपवासके दिन धर्मकथा श्रवण करो तथा अन्य धर्मात्मानिकूं धर्मश्रवण करावो ज्ञानका अभ्यास करि वा धर्मध्यानमैं लीनता करि ही उपवासका अवसर व्यतीत करो आलस्य निद्राकरि व्यतीत मत करो। तथा आरंभादिकमैं विकथामैं काल व्यतीत मत करो। उपवासका अर्थ कहै हैं—

चतुराहारविसर्जनमुपवासः प्रोषधः सकृद्भुक्तिः स प्रोषधोपवासो ...

अर्थ—असन पान खाद्य स्वाद्य ये चार प्रकारके आहार इनका त्याग सो उपवास है अर धारणाका दिन विषैं अर पारणाका दिन विषैं एकबार भोजन करना सो प्रोषध कहिये है ऐसैं षोड़श प्रहर भोजनादिक आरम्भ छांडि पाछैं भोजनादिक आरम्भ आचरण करै सो प्रोषधोपवास है ॥ अब उपवासके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

ग्रहणविसर्गास्तरणान्यदृष्टमृष्टान्यनादरास्मरणे। यत्प्रोषधोपवासे व्यतिलङ्घनपञ्चकं तदिदं ॥ ११९ ॥

अर्थ—जो प्रोषधोपवासके पंच अतीचार हैं ते ऐसैं जानने, नेत्रनितैं देख्यां बिना अर कोमल उपकरणतैं शुद्ध किये विना जो पूजाके तथा स्वाध्यायके उपकरण ग्रहण करना ॥ १ ॥ बहुरि देख्यां सोध्यां विना उपकरणनिका मेलना अथवा शरीरके हस्त पदादिक पसारना ॥ २ ॥ बहुरि देख्यां सोध्यां विना आस्तरण जो शयन करनेका उपकरण बिछावना बैठना ॥३॥ ऐसैं ए तीन अतीचार हैं। बहुरि उपवासमैं अनादर करना उत्साहित रहित करना सो अनादर नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि उपवासके दिन क्रिया पाठ करनेकूं भूल जाना सो अस्मरण नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं उपवासके पंच अतीचार कहे ते टालने योग्य हैं। अब वैयावृत्य नामा शिक्षाव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं इस व्रतकूं अतिथिसंविभाग नाम हू कहिये हैं—

दानं वैयावृत्यं धर्माय तपोधनाय गुणनिधये। अनपेक्षितोपचारोपक्रियमगृहाय विभवेन ॥ १२० ॥

अर्थ—यहां परमागममैं दानहीकूं वैयावृत्य कहिये है जाकै तपही धन है अर्थात् जो इच्छानिरोधादिक तपहीकूं अपना अविनाशी धन जानै है जातैं तप विना समस्त कर्मकलंकमलरहित आत्माका शुद्ध स्वभावरूप अविनाशी धन नाहीं पाइये तातैं रागादिक कषायमलका दग्ध करनेवाला ऐसा तपरूप धन ग्रहण किया अर जो संसारमैं नष्ट करनेवाला जड अचेतन विनाशीक सुवर्णादिकका त्याग किया ऐसा जो तपकी निधि जो परम वीतरागी दिगंबर यतिनकूं आप दातारके अर पात्रके धर्मप्रवृत्तिके अर्थि जो दान देना सो वीतरागी यतीनकी वैयावृत्य हैं, कैसे हैं दिगंबर यातैं सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्र इत्यादिक गुणनिका

निधान हैं बहुरि कैसे हैं यातैं नाहीं है अंतरंग बहिरंग परिग्रह जिनके ऐसैं मठ मकान उपासरा आश्रमादिकरहित एकाकी अथवा गुरुजनांकी चरणाकी लार कदे बनमें कदे पर्वतनिकी निर्जन गुफानिमैं कदे घोर वनमैं नदीनके तटनिमैं नियम रहित है नित्य विहार जिनका असंयमीनिका गृहस्थनिका संगमरहित आत्माकी विशुद्धता जो परम वीतरागताकूं साधता अर लौकिकजनकृत पूजा स्तवन प्रशंसादिककूं नाहीं चाहता परलोकमैं देवलोकादिकनिके भोगनिकूं तथा इंद्रपनाका अहिमिंद्रपनाका ऐश्वर्यकूं रागरूप अङ्गारेनिकरि तप्त महान् आताप उपजावनेवालो तृष्णाके बधावनेवाले जानि परम अतींद्रिय आकुलतारहित आत्मीक सुखकूं सुख जानता देहादिकमैं ममत्वरहित आत्मकार्य साधै है ऐसे साधुजनका वैयावृत्यका लाभ अनंतकालमें दुर्लभ है। कैसे हैं साधु यद्यपि इस देहतैं अत्यंत निर्ममत्व है तो हू देहकूं रत्नत्रयका सहकारो कारण जानि रस नीरस करडा नरम आहार देय रत्नत्रयका साधनकरि धर्मके अर्थि इस कृतघ्नदेहकी रक्षा करै हैं जो अकालमैं देह नष्ट होय जायगा तो मरकरि देवादिक पर्यायमैं असंयमी जाय उपजूंगा तहां असंख्यातकालपर्यन्त असंयमी हुआ कर्मका बंध करूंगा तातैं जो आहारादिकका त्याग करि इस मनुष्यपनाका देहकूं मार्या तो कर्ममय कार्माण देह नाहीं मरैगा इस देहकूं मार्या तो नवीन और देह धारण करूंगा तातैं इन समस्त शरीरके उत्पन्न करनेका बीज जो कर्ममय कार्माणदेह है याके मारनेमैं यत्न करूं यातैं कषायनिकूं जीतता विषयनिका निग्रह करता छियालीस दोष टालि बत्तीस अन्तरायरहित चौदहमलका परिहार करिकैं आपके निमित्त नाहीं किया ऐसा शुद्ध आहारकी योग्यता मिल जाय तो अर्द्ध उदर तो भोजनतैं भरै चतुर्थभाग जलतैं भरै चतुर्थभाग ध्यान अध्ययन कायोत्सर्गादिकमैं सुखतैं प्रवृत्तिके अर्थि खाली राखै है। न्योत्या बुलाया जाय नाहीं याचना करै नाहीं हस्तादिककी समस्या करै नाहीं ऐसैं साधुनकूं जो आहारादिकका दान सो वैयावृत्य है। कैसाक है दान अनपेक्षितोपचारोपक्रिय जो प्रत्युपकार कहिये हमारा हू कुछ उपकार करैगा वा उपक्रिय कहिये हमकूं प्रसन्न होय विद्या मंत्र औषधादिक देगा तथा मुनीश्वरनिके अर्थि देनेतैं मेरी नगरमैं दातापनाकरि मान्यता हो जायगी वा राज्यमान्य हो जाऊंगा वा मेरे

घरमैं अटूट धन हो जायगा तातैं आगैं पंचाश्चर्य भये हैं मेरे हू लाभ होयगा ऐसा विकल्प अर बांछा नाहीं करता केवल रत्नत्रयका धारकनिकी भक्तिकरि आपकूं कृतार्थ मानि अपना मनवचनकायकूं तथा गृहचारा पायाकूं कृतार्थ मानता दान करै है आनंदसहित आपकूं कृतकृत्य मानै है सो वैयावृत्य है। वैयावृत्यका अन्य हू स्वरूप कहै हैं।

व्यापत्तिव्यपनोद पदयोः संवाहनं च गुणरागात्। वैयावृत्यं यावानुपग्रहोऽन्योऽपि संयमिनां ॥ १२१ ॥

अर्थ—संयमीनके जो व्यापत्तिव्यपनोद कहिये नाना प्रकारकी जे आपदा ताहि दूर करना अर संयमीनका चरणमर्द्दनादिक करना और हू जो संयमीनका गुणमैं अनुराग करि यावन्मात्र उपकार करना सो वैयावृत्य है। भावार्थ-साधुनिके ऊपरि काऊ देव मनुष्य तिर्यंच वा अचेतनकरि किया उपसर्ग आया होय तो अपनी शक्तिप्रमाण उपसर्ग दूर करै तथा चोर भील दुष्टादिक मार्गमैं खेदित किया होय अर परिणाम क्लेशित होय गया होय तिनकूं धैर्य धारण करावना तथा मार्गकरि खेदित भया होय ताका पादमर्दनादिक करना रोगी होय ताका संयम मलीन नाहीं होय तैसैं यत्नाचारतैं आसन शय्या वस्तिकाका सोधन यत्नाचारपूर्वक उठावना वैठावना शयन करावना मलमूत्रादिक कराय देना जो अबुद्धिपूर्वक मलमूत्रादिक अयोग्य स्थानमैं वा वस्तिकामैं भया होय तो यत्नतैं अविरुद्ध स्थानमैं क्षेपना तथा कफ नाशिका मलादिककूं पूंछना उठाय अविरुद्ध स्थानमैं क्षेपणा आहार औषधादिक संयमीके योग्य होय तिनकूं अवसरमैं देय वेदना दूर करना तथा कालके योग्य बाधारहित वस्तुका देना वेदना करि चलायमान चित्त हो गया होय तो उपदेश देय चित्तकूं थांभना धर्मकथा करना अनुकूल प्रवर्तना गुणनिका स्तवन करना ऐसैं संयमीनिका गुणनिमैं अनुराग करि जेता उपकार करना सो समस्त वैयावृत्य है। अब वैयावृत्यमैं प्रधान आहारदान है ताकूं कहिये हैं।

नवपुण्यै: प्रतिपत्तिः सप्तगुणसमाहितेन शुद्धेन। अपसूनारम्भाणामार्याणामिष्यते दानं ॥ १२२ ॥

अर्थ—सप्त गुणनिकरि सहित जो दातार है सो सून अर आरम्भ करि रहित जे आर्य कहिये सम्य-

ग्दर्शनके धारक मुनि तिनकूं नवपुण्य परिणामनिकरि जो प्रतिपत्ति कहिये गौरव आदर करि अंगीकार करना ताहि दान कहिये है। भावार्थ—दान करना सो तीन प्रकारके पात्रनिकूं करना तिनमैं जो चाकी चूल्हा ओखली बुहारी परींडा ये तो पंच सून अर द्रव्यका उपार्जनकूं आदि लेय समस्त आरंभ अर पंच सून करि रहित तो उत्तम पात्र दिगम्बर साधु है। अर व्रतनिका धारक श्रावक मध्यमपात्र है अर व्रतकरि रहित अर सम्यक्त्वकरि सहित जघन्य पात्र है तिनमैं उत्तमपात्रादिकनिकूं दानका देनेवाले दातारके सप्त गुण हैं। दान देय इस लोकसंबंधी विख्यातता लोकमान्यता राजमान्यता धनधान्यादिककी वृद्धि यशकीर्तनादिक इस लोकसंबंधी फल न चाहिये ॥ १ ॥ बहुरि दातार क्रोधकषायकूं नाहीं प्राप्त होय जो बहुत लेनेवाले हैं कौन कौनकूं देवैं ऐसा क्रोध नाहीं करै मुनि श्रावकादिकनिकूं दान देना ॥ २ ॥ बहुरि कपटकरि सहित दान नाहीं करै कहना और, करना और, लोकनिकूं भक्ति दिखावेमांहि संक्लेशित न होना ऐसा कपटकरि रहित दान करै ॥ ३ ॥ अन्य दातारतैं ईर्ष्यारहित होय दान करै जो इसने कहा दिया है मैं ऐसा दान करूं जो मेरा दानतैं इसका यश घटि जाय ऐसैं ईर्ष्या भावकरि दान नाहीं करै ॥ ४ ॥ अर दान देय विषाद करै नाहीं जो कहा करूं नैं समस्तमैं उच्चता राखू हूं अर नाहीं दूं तो मेरी उच्चता घटि जाय ऐसैं विषादी हुआ नाहीं देवै ॥ ५ ॥ बहुरि पात्रका संगम मिल जाय या निर्विघ्न दान हो जाय तिसका अपूर्व निधि पायेकासा आनंद मानना सो मुदितभाव जानना ॥६॥ दान देनेका मद अहंकार नाहीं करना सो निरहंकारता नाम गुण है॥७॥ ऐसैं पात्र दान करता दातार सप्तगुण सहित होय है। बहुरि पात्रकूं दान देवै सो मुनिश्रावकका जैसा पद होय तिस परिमाण नवधा भक्तिकरि देवै, नव प्रकार भक्तिके नाम-संग्रह ॥१॥ उच्चस्थान ॥ २ ॥ पादोदक ॥ ३ ॥ अर्चन ॥ ४ ॥ प्रणाम ॥ ५ ॥ मनःशुद्धि ॥ ६ ॥ वचनशुद्धि ॥ ७ ॥ कायशुद्धि ॥ ८ ॥ एषणाशुद्धि ॥ ९ ॥ तिनमैं मुनीश्वरनिकूं तथा क्षुल्लककूं तो तिष्ठ तिष्ठ तिष्ठ याका अर्थ खडा रहो खडा रहो खडा रहो ऐसैं तीन बार कहना जामैं अति पूज्यपनातैं अति अनुराग जाका चित्तमैं होयगा सो ही तीन बार आदरपूर्वक कहैगा अन्य हू श्रावकादिक

योग्यपात्र घर आवैं तो आइये पधारिए विराजिए इत्यादिक आदरके वचनका कहना सो संग्रह वा प्रतिग्रह है ॥ १ ॥ बहुरि उच्चस्थान देना ॥ २ ॥ अर प्राशुक प्रमाणकि जलसूं चरण धोवना ॥ ३ ॥ जैसा अवसर जैसा पात्र ताकै योग्य पूजन स्तवन पूज्यपनाके वचन कहना ॥ ४ ॥ अर मुनि वा श्रावकाकी योग्यता प्रमाण नमस्कार आदि करना ॥ ५ ॥ मनकी शुद्धता करनी ॥ ६ ॥ वचनकी शुद्धता करनी अयोग्य वचन नाहीं बोलना ॥ ७ ॥ कायशुद्धि यत्नाचार सहित चलना उठना इत्यादिक ॥ ८ ॥ अर भोजनशुद्धि पात्रके योग्य होय सो देना यो ऐषणा शुद्धि है ॥ ९ ॥ ऐसे जिन सूत्रके अनुसार पात्रके योग्य देशकालके योग्य आहार देना जातैं पात्रके गुणनिमैं हर्ष अनुराग विना देना निष्फल है अर जाकूं धर्म प्रिय होयगा ताकै धर्मात्मामैं अनुराग होयहीगा ऐसा नियम है । अर मुनीश्वरनिके जिनधर्मीकी नवधा भक्तिहीतैं परीक्षा होय है जाकै नवधाभक्ति नाहीं ताका हृदयमैं धर्म हू नाहीं धर्मरहितके मुनीश्वर भोजन हू नाहीं करै है । अन्य हू धर्मात्मा पात्र गृहस्थादिक हैं ते हू आदर विना लोभी होय धर्मका निरादर कराय दान वृत्तितैं भोजनादिक कदाचित नाहीं ग्रहण करैं हैं जैनीपना ही दीनतारहित परम संतोष धारण करना है। अर दातार है सो ऐसा आहार औषधि शास्त्र वस्तिका वस्त्रादिक द्रव्यका दान करै जातैं रागद्वेष बधै नाहीं मद बधै नाहीं जातैं मोह काम आलस्य चिंता अरुचन भय दुःख अभिमानका करनेवाला द्रव्यकूं देना योग्य नाहीं । जिसद्रव्यके देनेतैं स्वाध्याय ध्यान तप संतोषकी वृद्धि होय सो द्रव्य देने योग्य है । जातैं पात्रका दुःख मिटि जाय रोग नष्ट होजाय परिणामका संक्लेश नष्ट होजाय ऐसा द्रव्य देना योग्य है । इहां अन्य विशेष जानना, दानविषै पांच प्रकार जानना दाता ॥ १ ॥ देय ॥ २ ॥ पात्र ॥ ३ ॥ विधि ॥ ४ ॥ फल ५ दाता तो कैसाक होय सप्त गुणका धारक होय धर्ममैं तत्पर पात्रनिके गुणनिके सेवनमैं लीन भया पात्रकूं अंगीकार करै प्रमादरहित ज्ञानसहित शांतपरिणामी हुआ पात्रकी भक्तिमैं प्रवर्तै सो भक्तिक गुण दातारका हैं ॥ १ ॥ देनेमैं अति आसक्त हुआ पात्रका लाभकूं परम निधान लाभ मानै सो दातारका तुष्ट गुण है ॥२॥ साधुनिकूं दान होजाना इसलोक परलोकमैं परम कल्याण है ऐसा परिणाममैं गाढ सो दातारका श्रद्धा नाम गुण है ॥३॥ जो द्रव्य क्षेत्र काल

भावकूं सम्यक् विचार योग्य वस्तुका दान करै सो दातारका विज्ञान गुण है ॥ ४ ॥ दानकूं देय दानका प्रभावतैं संसारसंबंधी धन राज्य ऐश्वर्य विद्या मंत्र यश कीर्तनादि फलकूं नाहीं चाहै सो दातारका अलोलुप गुण है ॥ ५ ॥ जाकै अल्प हू वित्त होय तो हू दान देनेमैं बडा उद्यम होय जाका दानकूं देखि धनाढ्य पुरुषनिकै हू आश्चर्य उपजै सो दातारका सात्विकगुण है ॥६॥ कलुषताका महान कारण हू आजाय तो हू किसीके अर्थि रोष नाहीं करै सो दाताका क्षमा गुण है ॥७॥ और हू मुनि तथा श्रावक तथा अव्रत सम्यग्दृष्टी ये तीन प्रकारके पात्र तिनके अर्थि देनेवाले उत्तम दातारके अनेक गुण हैं। विनयवान होय विनयरहितका दान निष्फल है जातैं कुछ देनेकूं नाहीं होय तो विनय करना ही महादान है। सत्कार करना प्रिय वचन बोलना स्थान देना गुण स्तवन करना यो ही बडो दान है धर्ममैं प्रीति होय दानका अनुक्रमका ज्ञाता होय दानका कालकूं जाननेवाला होय जिनसूत्रका जाननेवाला होय भोगनिकी वांछारहित होय समस्त जीवनिका दयालु होय रागद्वेषकी मंदता जाकै होय सार असारका जाननेवाला होय समदर्शी होय इंद्रियनिकूं जीतनेवाला होय आया परीषहतैं कायरतारहित होय अदेखसका भावरहित होय स्वमत परमतका ज्ञाता होय प्रियवचनसहित होय व्रतीनिका पवित्र गुणकरि जाका चित्त व्याप्त होय लोकव्यवहार अर परमार्थ दोऊनिका जाननेवाला होय सम्यक्त्वादि गुणसहित होय अहंकारादि मदरहित होय वैयावृत्यमैं उद्यमी होय ऐसा उत्तम दातार प्रशंसायोग्य है। बहुरि जाका हृदयमैं निरन्तर ऐसो विचार रहै कि जो द्रव्य व्रतीनिकी सेवामैं लागै तथा साधर्मी जननिका उपकारसैं श्रावक जननिके आपदा दुःख निवारनमैं धर्मके बधावनेमैं धर्ममार्गके चलावनेमैं लागैगा सो धन मेरा है। अन्य संसारके कार्यनिमैं विषय भोगनिमैं कुटुंबके विषय कषाय साधनेमैं जो धन खर्च होय सो केवल बंधके करनेवाला संसारसमुद्रमैं डबोनेवाला है ये कुटुंबके धन खाय ते तो दायादार हैं धन बटावनेवाले हैं जबरीतैं धन लूटनेवाले हैं राग द्वेष क्रोधादि कषाय उपजाय व्रत संयमका घात करनेवाले हैं अर मोकूं पापमैं प्रेरणा करनेवाले हैं अर मेरे हू इनका संयोगतैं ऐसा अज्ञानरूप अंधकार छाया है जातैं धम अधम न्याय अन्याय यश अपयश कछू नाहीं दीखै है। स्त्री पुत्रादिकके विषय

साधनेकूं अन्य निर्बल तथा भोले अज्ञानी जीवनिका धनके ठगनेमैं लूट लेनेमैं परिणाम उद्यमी होय जाय हैं। इस कुटुंबके धन वस्त्र आभरण भोजनादिककरि तृप्ति करनेके अर्थि झूठमैं चोरीमैं निरन्तर परिणाम लग्या रहै हैं यातैं अब भगवान वीतरागका धर्मकूं पाय कुटुंबके अर्थि धनका उपार्जनके अर्थि अन्यायमैं अनीतिमैं तो नाहीं प्रवर्तन करना जो न्यायमार्गतैं धनका उपार्जन होइगा तिसमेंतैं मेरा कुटुंबका अर धर्मके अर्थि दानका विभाग करि जीवनका दिन व्यतीत करूंगा। धन यौवन जीतव्य क्षणभंगुर है अवश्य जायगा मरण अचानक आवेगा धन संपदा कुटुंबादि कोऊ लार नाहीं जायगा। मेरा दान शील तप भावनाकरि उपजाया पुण्य एक परलोकमैं मेरा सहायी होय लार जायगा जो इहां समस्त सामग्री मिली है सो पूर्वजन्ममैं जैसा दान दिया तैसी फली है। अब दानके देनेमैं धर्मात्मानिकी सेवामैं दुःखित बुभुक्षितनिके उपकारमैं प्रवर्तूंगा तो परलोकमैं समस्त सुखकूं प्राप्त हूंगा मोक्षमार्गकी सम्यग्ज्ञानादिक सामग्रीकूं प्राप्त हूंगा भोजन तो दानपूर्वक भक्षण करैं ताका भोजन करना सफल है अपना उदर भरना तो पशुके हू है। जाकै गृहमैं पात्रदान है ताका गृहाचार सफल हैं दान विना पशुनिके हू रहने योग्य बिल होय ही है। पक्षीनकै घूंसला होय ही हैं। समुद्रमैं जल हू बहुत अर रत्न हू बहुत परन्तु जल तो महाक्षार अर रत्न मगर मच्छादिकन करि व्याप्त दोऊ उपकार विना निष्फल हैं। तैसैं धनवान कृपणका धन परके उपकार रहित है सो निष्फल है। जो गृहस्थ धन पाय साधर्मीनिका उपकारमैं दीन अनाथनिके सत्कारमैं नाहीं खरच किया सो यो धन याको नाहीं यो धन तो किसी अन्य पुण्यवानको है यो तो रखवालो भयो चोकसी करै है। धनका स्वामी तो अन्य ही पुण्यवान है। जो दान भोगमैं लगावेगा जाकै घरमैं पात्र आजाय अर देनेका सामग्री होय फिर नाहीं दिया जाय ताकै हस्तमैं चिंतामणिरत्न नष्ट भया जान हू। जो धनकूं पाय दानमैं नाहीं प्रवर्तैं हैं सो मूढ़ अपने आत्माकूं ठगे हैं। धनकूं दानमैं लगावे है सो धनका स्वामी है जाका परिणाम दानका देनेमैं पात्रके हेरनेमैं निरंतर प्रवर्तै है तिनके दानका संयोग नाहीं होय तो हू निरन्तर दान ही है। जो द्रव्यकूं होते वा बहुत होते हू पात्रकूं पाय अतिभक्तितैं देवै है सो दातार है। भक्ति रहितके दातापना

नाहीं होय है।

बहुरि अवसर टालि अकालमैं दान देहै तिनकै अकालमें बोया बीजकी ज्यों निष्फल होय है अर जो अपात्रमैं दान देहै ताको दान खारडी भूमिमैं बोया बीजकी ज्यो निरर्थक है। अथवा दुष्टकूं दिया दान सर्पकूं पाया दुग्ध मिश्रीकी ज्यों दातारने संसारके घोर दुःख मरण आताप देनेकूं विष समान परिणमैं है बहुरि अपना भाग्यप्रमाण जेता धन मिलै तितनामैं दानका विभागमैं परिणाम करै ऐसा नाहीं विचारै जो मेरे पास अधिक धन होय तो अधिक दान करूं ऐसैं दान वास्ते अभिमानो होय धनकी बांछा मत करो। जेता आपके लाभांतरायका क्षयोपशमसूं लाभ भया तेतामैं संतोष करि अधिककी बांछा नाहीं करना सो ही वडा दान है। आपकूं जो न्यायपूर्वक द्रव्य प्राप्त भया तिसमैं जाका निरन्तर ऐसा परिणाम रहै जो मेरा धनमैंतैं कोऊके अर्थि आजाय तो कुमावना मेरा सफल है अपने गृहके खरचमैं लेनेमैं देनेमैं कोई मोतैं कुछ कुमाय ले तो ही हमारे बड़ा लाभ है ऐसा परिणाम दातारका रहै है अर जो दान देय सो हर्षित चित्त होय देवै। जो देवै भी अर क्रोधकरि देवै अपमानकरि देवै तिरस्कारके वचन कहि देवै रोषकरि देवै दूषण लगाय देवै तिस दातारके इसलोकमैं तो कलह अर अपयश होय है परलोकमैं अशुभकर्मका फलतैं दारिद्र अपमानादिक अनेक भवनिमैं प्राप्त होय है। अब देनेयोग्य नाहीं ऐसे खोटे दान कुदान ही हैं तिनिकूं देना योग्य नाहीं भूमिदान देना योग्य नाहीं जामैं हल फावडा खुरपादिकनिकरि भूमि विदारन करिये अर महान् हिंसा प्रवर्तै महा आरंभ पंचेन्द्रियादिक सर्प मूषा सूर हिरणादि बड़े बड़े जीवनिकूं धान्यादिक फलके बाधक मारियै हैं भूमिकी ममताकरि भाई भाई परस्पर मारि मरजाय तीव्ररागको कारण ऐसा भूमिदानतैं महाघोरपापका बंध जानि बहुरि महाहिंसाका कारण तातैं अनेक हिंसा होय ऐसा लोहका दान महा कुदान जानि छांडना। बहुरि सुवर्णदान त्यागना जाकरि पात्रका नाश होजाय मारया जाय सदाकाल भय उपजावे संयमका नाश करै तथा इस धनतैं राग द्वेष काम क्रोध लोभ भय मद आरंभादिककी प्रचुर उत्पत्ति होय आत्मस्वरूपका विस्मरण होजाय तातैं वीत-

राग धर्मका इच्छुक सुवर्णदानकूं पाप समझि त्यागना। बहुरि कोड्यां त्रसजीवनिका उत्पत्तिका कारण ऐसा तिलदान त्यागने योग्य है। बहुरि चाकी चूल्हा छाजला बुहारी मूसल फावडा दतीला अन्न तेल दीपक गुडादि रस इत्यादिक महापाप सामग्रीका भर्या महा आरंभ मोहका उपजावनेवाला गृहका दानकूं धर्म मानि मिथ्याधर्मी दे हैं सो कुदान हैं बहुरि जिस गौकूं बांधनेमैं हरित तृणादिक चरनेमैं तथा जीया (जवा) बुग (वग) उपजनेमैं मलमैं मूत्रमैं असंख्यात जीव उपजैं सींगनतैं मारनेतैं खुर पूंछादिकनितैं जीवघात करनेवाला गौका दान सो कुदान है बहुरि संसारके बधावनेवाला महाबंधन करनेवाला जो कन्याका दान सो कुदान है इहां कहो जो कन्यादान तो गृहस्थकूं दिये विना कैसैं रह्या जाय सो ठीक है गृहस्थ है सो अपनी कन्याका विवाह योग्यकुलमैं उपज्या जो जिनधर्मी व्यवहारचातुर्यादिक वरके गुण देखि कन्या देवे है परंतु कन्यादानकूं धर्म तो श्रद्धान नाहीं करै जिनधर्मी तो कन्यादानकूं पाप ही श्रद्धान करै है जैसैं गृहचारका आरंभादिक अनेक पापका कारण है तैसैं कन्यादान हू पापका कारण है परंतु विषयनिका दंड है सो अंगीकार किया हो सरै। अन्यमतवाले तो कन्यादान देनेका बहुत बड़ा फल कहै हैं लक्षयज्ञ कियाका फल कहै हैं कोटि ब्राह्मणकूं भोजन करावनेतैं कोटि गऊनिका दान देनेतैं हू अधिक फल कहै हैं अन्यकी कन्याका विवाह कराय देनेका हू बड़ा धर्म कहै हैं सो जिनधर्ममैं तो याकूं संसारपरिभ्रमणका कारण कुदान कहै हैं। बहुरि और हू संसारसमुद्रमैं डबोवनेवाले मिथ्या दृष्टि लोभी विषयनिका लंपटनिकरि कह्या कुदान त्यागने योग्य है। सुवर्णकी गाय बनाय देवै हैं तिलकी गाय घृतकी गाय रूपाकी गाय बनाय देवे हैं अर लेनेवाला घृतकी गायकूं लापसीकी गायकूं तिलकी गायकूं खाय है सुवर्णरूपाकीकूं कटावै है गलावै है अर गायकी पूंछमैं तेतीसकोटि देवता अर अडसठ तीरथ कहै हैं तथा दासी दासका दान देहै रथदान देहै तथा संक्रांति मानि ग्रहण मानि व्यतीपातादि मानि दान देवे हैं ते समस्त मिथ्यात्वका प्रभाव है। बहुरि मृतककूं तृप्ति करनेके अर्थि ब्राह्मणादिकनिकूं भोजन करावै है देखहू ब्राह्मणनिके जीमनेतैं मृतककूं कैसैं पहुंचेगा दान तो पुत्र देवै अर पिता पापतैं छूटै, बहुत कालका मर्या

हुआका हाड गंगामैं क्षेपणेतैं मृतकका मोक्ष होय। गयामैं जाय श्राद्ध करनेतैं इकबीस पीढीका उद्धार कहै हैं गयामैं पिंड देनेतैं दश पीढी पहली दश पाछली एक आप ऐसैं इकबीस पीढी संसारमैं कुगतिमैं पडी हुई निकस बैकुण्ठ वास करै हैं अगाऊ बेटा पोतानिका सन्तान चाहै जेता पाप करो गया श्राद्ध इकबीस पीढीमैं कोऊ एक हू पिण्डदान दिया तो सबकी मुक्ति होय जायगी तातैं कोऊ पापको भय मत करो। बहुरि जे श्राद्धमैं ब्राह्मणनिकूं मांसपिण्ड जिमावै हैं मांस करि देवतानिकूं तृप्ति करै हैं देवता दुर्गा भवानी जोवनिका राक्षसनिका तिर्यंचनिका रुधिर पावनेतैं बहुत तृप्ति होती मानै हैं देवीनिकै बकरा भैंसा काटि बलिदान करै हैं। पापी खोटा शास्त्र बनाय अपने मांसभक्षणके अर्थि महाघोर कर्मकरि नरकके मार्गकूं आप जाय है अन्यकूं नरक पहुंचावै हैं सो जिह्वाइन्द्रीका लोलुपी लोभी कौन घोरकर्म नाहीं करै ? वे पापी मनुष्यपनामैं भी ल्याली स्याल कागला कूकरा व्याघ्रकासा आचरण करै हैं जिनका ऐसे घोरपापके शास्त्र तिनके धर्ममैं अर म्लेच्छ धर्ममैं कुछ फरक नाहीं। ये अक्षर म्लेच्छनिके हैं वेदके अक्षरनितैं लोकनिके अज्ञान उपजाय शिकारमैं धर्म जनाया। जलचर थलचर नभचर जीवनिके मारनेमैं धर्म बताया जगतकूं भ्रष्ट किया है अर करै हैं। अर जाका देवता तो मुंडमाला अर मांसभक्षक रुधिर पीवनेमैं अति लीन है तिनके सेवकनिके पापकी कहा कथा। तिन कुपात्रनिकूं दान देना सो महा दुःखका करनेवाला कुदान है। ऐसैं कुदानके बहुत भेद हैं कुदानके देनेतैं अर कुदानके लेनेतैं नरकतिर्यंचनिमैं बहुत जन्ममरणकरि निगोदमैं एकेन्द्रिय विकलत्रयमैं अनंतकाल पर्यंत असंख्यात परावर्तन करै है या जानि कुदान मत करो कुपात्रदान मत करो॥ अब यहां पहली सूत्रके अनुकूल दानका फल कहै हैं।

गृहकर्मणापि निचितं कर्म विमार्ष्टि खलु गृहविमुक्तानां। अतिथीनां प्रतिपूजा रुधिरमलं धावते वारि ॥ १२३ ॥

अर्थ—गृहरहित ऐसे अतिथि जे मुनि तिनको जो प्रतिपूजा कहिये दान सन्मानादिक उपासना है सो गृहस्थके षटकर्मकरि उपार्जन किया जो पापकर्मरूप मल ताहि शुद्ध करै है। जैसैं शरीर ऊपरि लग्या रुधिररूप मल तिनै जल धोवै है। भावार्थ—गृहस्थके नित्य ही आरम्भादिककरि निरन्तर पापका उपार्जन

होय है तिस पापकूं धोवनेकूं एक मुनिश्वरादिकनिकूं दिया दान ही समर्थ है जैसैं रुधिर लग्या होय सो रुधिरतैं नाहीं धुवै है जलकरि धुवै है तैसैं गृहचारके आरम्भतैं उपज्या पाप मल है सो गृहके त्यागी साधूनिके अर्थि दान देनेकरि धुवै है। अब दानका और हू प्रभाव कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

उच्चैर्गोत्रं प्रणतेर्भोगो दानादुपासनात्पूजा। भक्तेः सुन्दररूपं स्तवनात्कीर्तिस्तपोनिधिषु ॥ १२४ ॥

अर्थ—तपके निधान जे साम्यभावके धारक द्वाविंशति परीषहनिके सहनेवाले अपने देहमैं निर्ममत्व पंचइंद्रियनिके विषयनिमैं अत्यंत विरक्त अभिमान कषायादिरहित आत्मविशुद्धताके इच्छुक ऐसे उत्तम पात्र जो मुनि तिनके अर्थि नमस्कार प्रणति करनेतैं उच्चगोत्र जो स्वर्गलोकमैं जन्म तथा स्वर्गतैं आय तीर्थङ्करपनामैं जन्म वा चक्रीपनामैं जन्मरूप उच्चगोत्रकूं तथा सिद्धनिकी सर्वोत्कृष्ट उच्चताकूं प्राप्त होय है अर उत्तमपात्रके दान देनेतैं भोगभूमिके भोग वा देवलोकके भोग भोगि राज्यादिकनिके भोग पाय अहमिंद्र लोकके भोग पाय तीर्थंकर चक्रीपना पाय निर्वाणके अनन्त सुखका भोगकूं पावै हैं। बहुरि साधुनिका उपासना जो सेवन ताकरि त्रैलोक्यमैं पूज्य केवली होय हैं बहुरि साधुनिकी भक्ति करनेतैं सुन्दररूप ताहि प्राप्त होय हैं। बहुरि साधुनिका स्तवन करनेतैं त्रैलोक्यव्यापिनी कीर्ति इन्द्रादिकनिकरि स्तवन कीर्तनकूं प्राप्त होय हैं। और हू दानके प्रभाव कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

क्षितिगतमिव वटबीजं पात्रगतं दानमल्पमपि काले। फलति च्छायाविभव बहुफलमिष्टं शरीरभृताम् ॥ १२५ ॥

अर्थ—अवसरविषै सत्पात्रविषै गया अल्प हू दान सुन्दर पृथ्वीमैं प्राप्त भया बड़का बीजकी ज्यों प्राणीनिके छाया जो माहात्म्य ऐश्वर्य अर विभव जे भोगोपभोगको संपदारूप वांछित बहुत फलकूं फलै है जातैं पात्रदानका अचिंत्य फल है पात्रदानके प्रभावतैं सम्यक्त्व ग्रहण होजाय है। बहुरि सम्यक्त्वरहित मिथ्यादृष्टि हू पात्रदानके प्रभावतैं उत्तम भोगभूमिविषै जाय उपजै है कैसाक है भोगभूमि जहां तीन पल्यका आयु तीन कोशका ऊंचा शरीर अमृतरूप समचतुरस्र संस्थान महाबल पराक्रमयुक्त मनुष्य होय है स्त्री पुरुषनिका युगल उपजै है तीन दिन गये कदाचित् किंचित् आहारकी इच्छा उपजै सो बदरीफल

प्रमाण आहार करनेकरि क्षुधाकी वेदनारहित होय है। दश जातिके कल्पवृक्षनितैं उपजे वांछित भोगनिकूं भोगै है। जहां शीत उष्णताकी वेदना नाहीं है जहां वर्षाका ताडनाका उपजना नाहीं दिन रात्रिका भेद नाहीं सदा उद्योतरूप अन्धकाररहित काल वर्तै है शीतल मन्द सुगन्ध पवन निरन्तर विचरै है जिस भूमिमैं रज पाषाण तृण कण्टक कर्दमादि नाहीं होय है स्फटिकमणि समान भूमिका है यावत् जीव रोग नाहीं शोक नाहीं जरा नाहीं क्लेश नाहीं जहां सेवक नाहीं स्वामी नाहीं स्वचक्रका भय नाहीं षटकर्मकरि जीवनोपाय करना नाहीं। दश प्रकारके कल्पवृक्ष हैं। तूर्याङ्ग ॥ १ ॥ पात्रांग ॥ २ ॥ भूषणांग ॥ ३ ॥ पानांग ॥ ४ ॥ आहाराङ्ग ॥ ५ ॥ पुष्पांग ॥ ६ ॥ ज्योतिरङ्ग ॥ ७ ॥ गृहाङ्ग ॥ ८ ॥ वस्त्रांग ॥ ९ ॥ दीपांग ॥ १० ॥ तूर्याङ्गजातिका कल्पवृक्ष तो वासुरी मृदंग इत्यादिक कारण इंद्रियनिकूं तृप्त करनेवाला वादित्र देहैं ॥ १ ॥ पात्रांगजातिका वृक्ष रत्नसुवर्णमय अनेक प्रकारके आनन्दकारी कलस दर्पण झारी आसन पयकादि समस्त जातिके पात्र देहैं ॥ २ ॥ भूषणांगजातिके अनेक आभूषण अनेक प्रकारके क्षण क्षणमैं पहरने योग्य हार मुकुट कुण्डल मुद्रिकादि अङ्गकूं भूषित करनेवाले वा महलकूं द्वारकूं तथा शय्या आसन भूमिकूं भूषित करनेवाले अनेक आभूषण देहैं ॥ ३ ॥ पानांगजातिके वृक्ष नाना प्रकार पीवने योग्य शीतल सुगन्ध पान लिये खरे हैं ॥ ४ ॥ आहाराङ्गजातिके कल्पवृक्ष अनेक स्वादरूप अनेक प्रकारके आहार धारै हैं परन्तु क्षुधाकी पीडा ही नाहीं तदि रोग विना इलाज औषध कौन अङ्गीकार करै भोगभूमिमैं उपजनेवालेके क्षुधा नाहीं तीन दिन गये बदरीफल मात्र भोजन करै है ॥ ५ ॥ पुष्पांगजातिके वृक्ष नानाजातिके महा कोमल सुगंध पुष्पमाला आभरणादिक अनेक पुष्प धारै हैं ॥ ६ ॥ ज्योतिरंग जातिके कल्पवृक्षनिकी ज्योतिकरि सूर्य चंद्रमा नजर ही नाहीं आवै हैं सूर्यके उद्योततैं बहुत गुणा उद्योत धारण करै हैं तातैं रात्रि दिनका भेद नाहीं है ॥ ७ ॥ गृहांगजातिके कल्पवृक्ष अनेक महल चौरासी खणनिपर्यंत विस्तीर्ण रत्ननिकरि चित्र विचित्र देहैं ॥ ८ ॥ वस्त्रांगजातिके कल्पवृक्ष नानाप्रकारके वांछित पहरने योग्य वस्त्र तथा शय्या आसन बिछायत आदि समस्त वस्त्र देहैं ॥ ९ ॥ बहुरि दीपां-

गजातिके अंधकार विना ही दीपमालिकाकी शोभाकूं विस्तरै हैं ॥ १०॥ बहुरि भोगभूमिमैं स्त्रीपुरुषनिका युगल मरण समयमैं पुरुषकूं छींक अर स्त्रीकूं जम्भाई आवै है तिस समयमैं संतान युगल उत्पन्न होय है संतानकूं तो माता पिता नाहीं दीखै अर माता पिताकूं संतान नाहीं दीखे तातैं इनके वियोगका दुःख नाहीं है अर मरण किये पाछैं इनका देह शरद कालका मेघपटलवत् विलाय जाय है। बहुरि युगलिया उत्पन्न हुआ पाछैं सप्त दिन तो अपना अंगुष्ठ चाटै है। अर पाछैं सप्त दिनमैं सूधा औंधा पलटना होय पाछैं सप्त दिनमैं अस्थिर गमन करै हैं पाछैं सप्त दिनमैं परिपूर्ण यौवनवान होय हैं। बहुरि सप्त दिनमैं समस्त दर्शन ग्रहण चातुर्य कला ग्रहण करै हैं । ऐसैं गुणचास दिनमैं परिपूर्ण होय अनेक पृथक् विक्रिया अपृथक् विक्रियासहित नानाप्रकारके महल मन्दिर वनविहार करते क्षणक्षणमैं अनेक कोटि नवीन नवीन विषय तिनकी सामग्री भोगतैं अनेक क्रीड़ा रागरंगादिक अनेक सुखरूप क्रीडा चेष्टाकरि तीन पल्य पूर्ण करि मरण समयमैं छींक जंभाई मात्रतैं प्राण त्याग सम्यग्दृष्टि होय सो तो सौधर्म ईशान स्वर्गमैं जाय है अर मिथ्यादृष्टि मरण करि भवनवासी व्यंतर जोतषी देवनिमैं उपजै है कषायके प्रभावतैं देवलोकविना अन्य गति नाहीं पावै है बहुरि सम्यग्दृष्टि होय तथा श्रावकके व्रतका धारक होय जो पात्र दान करै सो षोशडम स्वर्गपर्यंत महर्द्धिक देव ही उपजै है। आगममैं पात्र तीन प्रकार हैं अर्थात् उत्तम पात्र, मध्यमपात्र अर जघन्यपात्र। तिनमैं उत्तमपात्र तो महाव्रतनिके धारक अठाईस मूलगुण तथा उत्तर गुणनिके धारक देहमैं निर्ममत्व वीतरागी साधु हैं। मध्यम पात्र ग्यारा भेदरूप श्रावक सम्यग्दृष्टि व्रतनिकरि सहित है तथा स्त्रीपर्यायमैं व्रतनिकी हदकूं धारण करती तिनके एक वस्त्रतैं अन्य समस्त परिग्रहरहित परके घर एकवार याचनारहित मौनतैं भिक्षा भोजन करि आर्यिकानिका संगमैं धर्मध्यानसहित महातपश्चरण करती तिष्ठै ऐसी आर्यिका मध्यमपात्र है तथा अणुव्रत अर सम्यग्दर्शनसहित श्राविका मध्यमपात्र है अर व्रतरहित जिनेन्द्रवचनके श्रद्धानी सम्यग्दर्शनसहित पुरुष तथा सम्यग्दर्शनसहित व्रतरहित स्त्री जघन्यपात्र है। इन तीन प्रकारका पात्रनिमैं चार दान देना तथा सत्कार करना स्थानदान करना आदर करना तथा यथा योग्य

स्तवन पूजा प्रशंसादिकके वचन बोलना उठि खड़ा होना उच्च मानना सो समस्त दान है अब चार प्रकार
दान कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

आहारौषधयोरप्युपकरणावासयोश्च दानेन । वैयावृत्यं ब्रुवते चतुरात्मत्वेन चतुरस्राः ॥ १२६ ॥

अर्थ—चतुरस्र जे प्रवीण ज्ञानी हैं ते आहार दान औषधि दान उपकरणदान अर आवासदान इन
चार प्रकारके दान करके वैयावृत्यकूं चार स्वरूप करि कहै हैं । आहारदान औषधिदान उपकरणदान
आवासदान । या प्रकार गृहस्थकै चार प्रकार दान कह्या जातैं अभयदानकी प्रधानता तो छहकायके जीव-
निकी कृतकारितअनुमोदनाकरि विराधनाका त्यागी दिगंबर मुनीश्वरनिकै है अर श्रावकनिकै हू त्रसजीवनि-
का संकल्पीहिंसाका त्यागतैं अभयदान है ही परंतु अभयदानकी मुख्यता तो आरंभका त्यागतैं विषयनितैं
अत्यंत पराङ्मुखतातैं होय है तातैं जेते गृहचारतैं संपदातैं तथा न्यायरूप विषयनितैं परिणाम नाहीं निरा-
ला होय तितने आहारादिक चार प्रकारका दान करि पापका नाश करहू । संपदा आयु काय अत्यंत अस्थिर
है गृहचारा तो दानकरि ही पूज्य है । आहारादिक दान विना गृहस्थपना पाप आरंभके भारकरि पाषाणकी
नाव समान केवल संसारसमुद्रमैं डबोवनेवाला है । बहुरि ज्ञानी गृहस्थ चिंतवन करै है जो यो धन मैं उपार्जन
किया तथा पितादिकनिका धर्या हमारे विना खेद प्राप्त होगया तथा राज्य ऐश्वर्य देश नगर आभरण वस्त्र
स्त्री सेवकनका समूह समस्त जो विना खेद प्राप्त होगया सो समस्त पूर्व जन्ममैं दान दिया दुःखितनिका
पालनपोषण किया ताका फल है । तथा परके धनमैं स्वप्नमैं हू चित्त नाहीं चलाया परम संतोष धारण
करि विषयनिसूं विरक्त होय निर्वांछकता धारण करी ताका फल है । तथा दीन दुःखित रोगी असमर्थ बाल
वृद्धनिका दया धारण करि उपकार किया ताका फल यह संपदा है सो दोय दिन याका संयोग है परलोक
लार जायगी नाहीं जमीनमैं गडी रहैगी तथा अन्य दशांतरमैं धरी रहैगी तथा अन्यमैं रह जायगी वा स्त्री
पुत्र कुटुम्ब दायेदार मालिक बनैंगे तथा राजा लूट लेगा तथा अचानक मरि दुर्गति चल्या जाऊंगा
यो धन सैंकडा दुर्ध्यानतैं महापापके आरंभतैं देश देशनिमैं परिभ्रमणकरि बड़ा कष्टतैं उपार्जन किया

था प्राणनिसूं हू अधिक याकी रक्षा करी अब इस धनका फल छोडकरि मरि जाना ऐसा विचारना तो योग्य नाहीं जगतमैं देखो जो लाख धन होय भोगनेमैं तो आवै नाहीं जातैं भोगनेमैं तो आधा सेर अन्न आवै है अर तृष्णा ऐसी बधै है जो अब धन बधाऊं। अहो अन्यकै तो पचास लाख धन होगया मेरे पांच लाख ही है। अब कैसैं बधाऊं कौन आरम्भ करूं कौन ऊपाय करूं कौन राजनिकूं रिझाऊं तथा कौन वनिज करूं तथा कौनसूं मित्रता करूं जाकी बुद्धितैं मेरे धन उपायन होजाय तथा कौनसा सेवककूं अंगीकार करूं जो मेरा अलप धन खाय अर मोकूं बहुत धन उपार्जन करदे ऐसैं हजारां दुर्ध्यान करतो संसार जीव समस्त संपदा राज्य ऐश्वर्य छांडि महा मूर्छातैं अतिरौद्र परिणामतैं मरि घोर नरकका घोर दुःख भोगै है। संसारमैं अनंत दुःखरूप परिभ्रमण करता क्षुधा तृषा रोग दारिद्रकूं भोगता अनंतकाल असंख्यातकाल व्यतीत करै है। अब इस घोर कालमैं कोऊ किंचित् मोहनिद्राके उपशमतैं जिनेंद्रभगवानके वचनतैं कोऊ अति विरले पुरुष सचेत होय अपना हितकूं चिंतवन करता चार प्रकारके दानमैं प्रवर्तन करै है। दानमैं आहारदान प्रधान है इस जीवका जीवन आहारतैं कोटि सुवर्णका दान आहारदानसमान नाहीं है। आहारहीतैं देह रहै है। देहतैं रत्नत्रय धर्म पलै है। रत्नत्रयधर्मतैं निर्वाण होय है निर्वाणमैं अनंत सुख है। त्यागी निर्वांछक साधुनिका उपकार तो एक आहारदानतैं ही है। आहार विना कोऊ तिलतुषमात्र वस्तु हू नाहीं अंगीकार करै आहार बिना देह रहै नाहीं आहार विना अनेक रोग उपजै हैं। आहार विना ज्ञानाभ्यास नाहीं होय। आहार विना व्रत संयम तप एक हू नाहीं पलै। आहार विना सामायिक प्रतिक्रमण कायोत्सर्गध्यान एक हू नाहीं होय आहार विना परमागमको उपदेश नाहीं होय। आहार विना उपदेश ग्रहण करनेकूं समर्थ नाहीं होय आहार बिना कांति विनसि जाय मति विनसि जाय कीर्ति क्षांति नीति गति रति उक्ति शक्ति द्युति प्रीति प्रतीति नाशकूं प्राप्त होय है। आहार विना समभाव इन्द्रियदमन जीवदया मुनि श्रावकका धर्म विनयमैं प्रवृत्ति न्यायमैं प्रवृत्ति तपमैं प्रवृत्ति यशमैं प्रवृत्ति समस्त विनाशनै प्राप्त होय जाय आहार विना वचनकी प्रवीणता नष्ट होजाय है आहार विना शरीरका वर्ण विगडि जाय शरीरमैं

भा   कार पूज व्यतरदव हा लच्छा दव ता दान पूजा शील संयम ध्यान अध्ययन तप रूप समस्त धर्म
काहेकूं करिये ? बहुरि जो भक्तिकरि पूजे बंदे कुदेव ही संसारके कार्य सिद्ध करैंगे तो कर्म कछु बात ही
नाहीं ठहरें ? व्यंतर ही समस्त सुखका दायक रहै धर्मका आचरण निष्फल रह्या। भावार्थ—जगतविषै इस



पूजा करावै ऐसा अविनय धर्मात्मा होय कैसैं करै ? बहुरि अनेक आयुध धारण करि अपनी वीतराग धर्ममैं प्रवृत्तिकूं बिगाडे हैं। अर अपना असमर्थपना प्रगट दिखावै हैं तथा जिनशासनके रक्षक एक २ यक्ष यक्षणी ही कैसैं कहो हो ? भगवानके शासनके तौ सौधर्म इन्द्रकूं आदि लेय असंख्यात देव देवी समस्त सेवक हैं अर जिनका हृदयमैं सत्यार्थ धर्मतैं पूर्वकृत अशुभकर्म निर्जर गया होय ताकै समस्त पुद्गल राशि अचेतन है सो हू देवतारूप होय उपकार करैं हैं देव मनुष्य उपकार करैं सो कहा आश्चर्य है। अर शासनमैं हू ऐसी केई कथा हैं जो शीलवान तथा ध्यानी तपस्वीनिके धर्मके प्रसादतैं देवनिके आसन कम्पायमान भये अर देव जाय उपसर्ग टाले अर नाना रत्ननि करि पूजा करी ऐसी कथा तो शासनमें वहुत हैं अर ऐसी तो कहूं कथा भी नाहीं जो धर्मात्मा पुरुष देवनिकूं पूजै अर पद्मावती चक्रेश्वरीकी भी केई कथा हैं जो शीलवंती व्रतवंतिनीकी देव देवियोंने पूजा करी अर शीलवंती व्रतवंती तो जाय कोऊ देव देवीकी पूजा करी नाहीं लिखी है। तथा कार्तिकेय स्वामी कही है,—

गाथा,—ण य का वि देदि लच्छी ण को वि जीवस्स कुणइ उवयारं।
उवयारं अवयारं कम्मं पि सुहासुहं कुणदि ॥ ३१९ ॥
भत्तीए पुज्जमाणो विंतरदेवो वि देदि जदि लच्छी।
तो किं धम्मं कीरदि एवं चिंतेहि सद्दिट्ठी ॥ ३२० ॥

अर्थ—इस जीवकूं कोऊ लक्ष्मी नाहीं देवै है अर जीवका कोऊ उपकार अपकार हू नाहीं करै है जो जगतमैं उपकार अपकार करता देखिये है सो अपना किया शुभ अशुभकर्म करि करै है। बहुरि जो भक्तिकरि पूजे व्यंतरदेव ही लच्छी देवैं तो दान पूजा शील संयम ध्यान अध्ययन तप रूप समस्त धर्म काहेकूं करिये ? बहुरि जो भक्तिकरि पूजे वंदे कुदेव ही संसारके कार्य सिद्ध करैंगे तो कर्म कछु बात ही

होना सो भोगोपभोग नाम अंतरायकर्मका क्षयोपशमतैं होय है अर अपने भावनिकरि बांधे कर्मनिकूं कोऊ देव देवता देनेकूं तथा हरनेकूं समर्थ है नाहीं। बहुरि कुलकी वृद्धिके अर्थि कुलदेवीकूं पूजिये है अर पूजते पूजते हू कुलका विध्वंश देखिये हैं अर लक्ष्मीके अर्थी लक्ष्मीदेवीकूं तथा रुपया मोहरानिकूं पूजते हू दरिद्र होते देखिये हैं। तथा शीतलाका स्तवन पूजन करते हू संतानका मरण होते देखिये हैं। पितरानिकूं मानते हू रोगादिक वधै है तथा व्यंतर क्षेत्रपालादिकानिकूं अपना सहायी मानै है सो मिथ्यात्वका उदयका प्रभाव है। बहुरि केतक कहै हैं जो चक्रेश्वरी पद्मावती देवी ये शस्त्रधारण किये जिनशासनकी रक्षक हैं तथा सेवकनिकी रक्षा करनेवाली एक एक तीर्थंकरनिकी एक एक देवी है। एक एक यक्ष है इनका आराधन करने पूजनेतैं धर्मकी रक्षा होय है ये धर्मात्माकी रक्षा करैं हैं तातैं इन देवीनिका और यक्षनिका स्तवन करना पूजन करना योग्य है। देवी समस्त कार्यके साधनेवाली तीर्थंकरनिकी भक्त हैं इस विना धर्मकी रक्षा कौन करै याहीतैं मन्दिरानिके मध्य पद्मावतीका रूप जाके चार भुजा तथा वत्तीस भुजा अर नाना आयुधनिकरि युक्त अर तिनके मस्तक ऊपर पार्श्वनाथस्वामीका प्रतिबिंब अर ऊपर अनेक फणानिका धारक सर्पका रूपकरि बहुत अनुरागकरि पूजै हैं सो सब परमागमतैं जानि निर्णय करो। मूढलोकनिका कहिवो योग्य नाहीं। प्रथम तो भवनवासी व्यंतर ज्योतिषी इन तीनप्रकारके देवनिमैं मिथ्यादृष्टि ही उपजै है। सम्यग्दृष्टिका भवनत्रिकदेवानिमैं उत्पाद ही नाहीं अर स्त्रीपना पावै ही नाहीं सो पद्मावती चक्रेश्वरी तो भवनवासिनी अर स्त्रीपर्यायमैं अर क्षेत्रपालादिक यक्ष ये व्यंतर इनमैं सम्यग्दृष्टिका उत्पाद कैसैं होय? इनमैं तो नियमतैं मिथ्यादृष्टि ही उपजै हैं ऐसा हजारांबार परमागम कहै हैं। बहुरि जो इनके जिनधर्मसूं प्रीति है तो जिनधर्मके धारीनतैं अपनी पूजा वन्दना नाहीं चाहै जैनी होय सो आपकूं अव्रती जानता सम्यग्दृष्टिसे वंदना पूजा कैसैं करावै? साधर्मीनिका उपकार विना कहे ही करै। बहुरि भगवानका प्रतिबिंब तो अपने मस्तक ऊपरि है अर भगवानके भक्तनितैं अपनी

जलकूं शुद्ध मानना, तिर्यंचानिके रूपकूं देव मानना, कुवा बावडी वापिका तलाव खुदावनेमैं धर्म मानना बाग लगावनेमैं धर्म मानना, मृत्युंजय आदिके जप करावनेतैं अपनी मृत्युका टलजाना मानना, ग्रहांका दान देनेतैं अपने दुःख दूर होना मानना, सो समस्त लोकमूढता है। बहुत कहनेकरि कहा जो योग्य अयोग्य, सत्य असत्य, हित अहितका, आराध्य अनाराध्यका विचाररहित लौकिक जनकी प्रवृत्ति देख जैसैं अज्ञानी अनादिके मिथ्यादृष्टि प्रवर्तैं तैसी प्रवृत्तिकूं सत्य मानना, विचाररहित लौकिकजननिकी प्रवृत्ति देख प्रवर्त्तन करना सो लोकमूढता है। अर केतेक जिनधर्मी कहाय करके हू आत्मज्ञानकररहित परमागमकी आज्ञाकूं नहीं जानते भेषधारीनिके कल्पे हुए अनेक क्रियाकांड तथा तीर्थंकरादिकनिका तर्पण कराना अपना पिता पितामहका तर्पण कराना तथा यक्षादिकनिके अर्थि होम यज्ञादिकनिमैं अपना कल्याण होना मानैं हैं। शकलीकरणादिक विधान कराना सो लोकमूढता है। तथा केतेक स्नान करि रसोई करनेमैं तथा स्नानकरि जीमनेमैं तथा आला वस्त्र पहिर जीमनेमैं अपनी पवित्रता शुद्धता मानै हैं परम धर्म मानै हैं अर अभक्ष्यभक्षण अर हिंसादिकका विचार नाहीं करै हैं सो समस्त मिथ्यात्वके उदयतैं लोकमूढता है॥ अब देवमूढता कहनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

वरोपलिप्सयाशावान् रागद्वेषमलीमसाः। देवता यदुपासीत देवतामूढमुच्यते॥ २३॥

अर्थ—अपने वांछित होय ताकूं वर कहिये वरकी वांछा करके आशावान् हुवा संता जो रागद्वेष करि मलीन देवताकूं सेवन करै सो देवतामूढ कहिये है॥ २३॥

संसारी जीव हैं ते इस लोकमें राज्यसंपदा स्त्री पुत्र आभरण वस्त्र वाहन धन ऐश्वर्यनिकी वांछा सहित निरंतर वर्तैं हैं। इनकी प्राप्तिके अर्थि रागी द्वेषी मोही देवनिका सेवन करैं सो देवमूढता है। जातैं राज्यसुखसंपदादिक तो सातावेदनीयका उदयतैं होय है सो सातावेदनीयकर्मकूं कोऊ देनेकूं समर्थ है नाहीं तथा लाभ है सो लाभांतरायका क्षयोपशमतैं होय है अर भोग सामग्री उपभोग सामग्रीका प्राप्त

जलतैं पादप्रक्षालन कराय भोजन करै हैं तातैं व्यवहार आचारकूं नाहीं छांडैं है। यो भगवान जिनेंद्रका धर्म अनेकांतरूप है अर निश्चयव्यवहारका विरोधरहित ही धर्म है। सर्वथा एकांतरूप जिनेंद्रधर्म नाहीं है। लौकिकशुचितारहित होय सो धर्मकी निंदा करावै कुलकी निंदा करावै तादि अपना आतमा मलीन होय ही है। बहुरि मैथुनसेवन किया होय अर मृतककूं दग्ध करि आया होय अर केश क्षौर कराया होय अर चांडाल म्लेच्छादिकनिका स्पर्श भया होय मृतक पंचेन्द्रीका स्पर्श भया होय रजस्वलादि अशुचिका स्पर्श भया होय इत्यादिक और कारण होय तहां अवश्य स्नान करना अर अन्य कारणनिमैं जहां मल मूत्र हाड चामादिकका जिस अंगसौं स्पर्श भया होय तिसकूं धोवना शीघ्र ही उचित है। अष्टप्रकार शौच लौकिकमैं अनादिका प्रवर्तैं हैं। यातैं आगमकी आज्ञा मानना अपना हित है। बहुरि जगतमैं प्रगट देखिये है कर्णके मलतैं नेत्र मलकूं, अर यातैं नासिका मलकूं, यातैं कफ लालादिक मुखके मलकूं, यातैं मूत्रकूं, यातैं विष्ठाकूं, अधिक २ अशुचि मानिये है। अर जो समस्त मलकूं समानही मानिये तो समस्त आचार उपद्रित होय विपरीत होय जाय। यद्यपि द्रव्यार्थिकनयतैं समस्त एक पुद्गल जाति हैं तथापि बहुत भेद हैं। यद्यपि हाड मांस रुधिर मल मूत्रादिक समस्त पृथ्वीरूप जलादिरूप होजाय है अर पृथ्वी जलादिकनिका मांस रुधिर मलादिकरूप होजाय है तथापि पर्यायनिमैं बडा भेद है। द्रव्यके अर पर्यायके सर्वथा एकता माननेतैं समस्त व्यवहार परमार्थका लोप होय तातैं द्रव्यके पर्यायके कथंचित् एकपना कथंचित् अनेकपना मानना ही श्रेष्ठ है। बहुरि बालूके पिंड करनेमैं तथा पर्वततैं पडनेमैं अग्निमैं दग्ध होनेमैं हिमालय गलनेमैं पंचाग्नि तपनेमैं धर्म मानै हैं सो लोकमूढता है। तथा ग्रहणमैं सूतक मानना, स्नान करना चांडालादिककूं दान देना, संक्रांति मानि दान देना, कुवा पूजना, पीपल पूजना, गायकूं पूजना, रुपया मोहरकूं पूजना, लक्ष्मीकूं पूजना, मृतक पितरकूं पूजना छींक पूजना, मृतकानिके तृप्ति करनेकूं तर्पण करना, श्राद्ध करना, देवतानिका रतजगा करना, गंगा-

है तदि समस्त जाति व्यवहारके लोप होनेतैं उत्तम कुलका अर नीचकुलका आचार समान होजाय तदि व्यवहार आचारके बिगडनेतैं धर्मका मार्ग भ्रष्ट होजाय। निंद्यकर्म करनेकी लज्जा छुटि जाय तदि कुलके मार्ग बिगाडनेतैं महापापका बन्ध होय है। परमार्थशौच तो व्यवहारकी शौचता करि ही शुद्ध होय है। जाका भोजनमैं, पानमैं, स्पर्शनमैं, संगतिमैं, प्रवृत्तिमैं मलीनता होजाय तदि परमार्थ धर्म मलीन हो ही जाय। जिनधर्मी हैं सो चांडाल भील म्लेच्छ मुसलमानादिककी शरीरकी छायाहीतैं मलीनता मानै हैं अर धोबी कलाल लुहार खाती सुनार भडभूजा इत्यादिकनिका स्पर्शनकूं हिंसाकर्म करनेतैं दूर ही छाडिये हैं। मुनीश्वर तो नीच जातिके मनुष्यका स्पर्श होतैं दंड स्नान करैं अर तिस दिन उपवास करैं। अर नाहीं जाननेतैं नीच कुलके गृहनिमैं प्रवेश होजाय तो भोजनका अंतराय करै हैं। अर मदिरा मांस अर शरीरतैं चार अंगुल बहता रुधिर राधि अर पंचेंद्रिय जीव मृतकका कलेवर भोजन करते देखैं तो भोजनका अन्तराय करैं हैं। तो जिनधर्मी गृहस्थ हाड कौडी चाम केश ऊन इनके स्पर्शनतैं भोजन कैसैं नाहीं छांडै याहीतैं गृहस्थ है सो हस्तपाद प्रक्षालनकरि शुद्धभूमिमैं शुद्ध भोजन करै हैं। अधम जातिका स्पर्श्या भोजन नाहीं करैं। बहुरि जिनेंद्रका पूजन वास्तैं स्नान करना योग्य ही है क्योंकि स्नानकरि देवका स्पर्शन पूजन करना यह बडा विनय है। यद्यपि स्नानतैं शुद्धता नाहीं, तो हू, देवके उपकरणनिकूं स्नानकरि स्पर्शना धोया हुआ द्रव्य चढावना सो देवविनय ही है। विनय है सो ही आराधना है। जातैं जिनमन्दिरके उपकरणका हू विनय करिये है तो जिनेंद्रके आगमकी वाणीका पूजनके द्रव्यका हू स्नानकरि स्पर्शना हस्त धोय लगावना मन्दिरमैं हस्त पाद प्रक्षालनकरि प्रवेश करना सो हू विनय ही है। यद्यपि पापमलकी शुद्धता करना प्रधान है तो हू भगवान जिनेंद्रका आगममैं अष्टप्रकार लौकिकशुद्धि कही है लौकिकशौचके विना परमार्थधर्मतैं भ्रष्ट होजाय है। मुनीश्वरका देह रत्नत्रयका प्रभावतैं महापवित्र है तो हू बाह्यशौचके निमित्त कमण्डलु राखैं हैं हस्तपाद धोय स्वाध्याय करैं हैं अत्यंत मंद

गृहस्थाचारमैं मुनीश्वरनिकी ज्यौं स्नानका त्याग योग्य नाहीं। क्योंकि जो पापिष्ठ जीवनसूं स्पर्श होजाय अर स्नान नाहीं करै तो अपना मनमैं पापकी ग्लानि जाती रहै। तदि तिनकी संगति स्पर्शन खान पान यथेच्छ करने लगि जाय तब व्यवहारधर्मका लोप होजाय यातैं जिनधर्मीनिका आचार हैं ते व्यवहारके विरोधी नाहीं। जो अतिपापतैं आजीविकाके करनेवाला चांडाल कषाई चमार शिकार भील धीवरादिक अतिपापिष्ठ तथा मुसलमान म्लेच्छनिकी शरीर ऊपर छाया पडते हू महामलीनता मानिये है तो इनका स्पर्श होनेतैं स्नान कैसैं नाहीं करै ? स्नान हू करै अर परमात्माका स्मरण हू करै। अर याके नजीक बैठनेतैं बुद्धि मलीन होय है अर जो मुसलमान वेश्यादिकनिसूं कान लगाय मुखके सनमुख अपना मुखकरि वचनालाप करै हैं तिनकी बुद्धि उत्तम धर्मादिक कार्यतैं विमुख होय विपरीत प्रवर्त्तन करै है तथा जीवनिके घातक कूकरा मार्जारादिक पशु अर पक्षी इत्यादिक दुष्ट तिर्यंचनिका भोजनके स्थाननिमैं आगमन होजाय तथा भोजनका स्पर्शन होजाय तो त्याग करना उचित है तो इनका स्पर्शन होतैं स्नान विना भोजन स्वाध्यायादिक करनेमैं हीनाचारपना होय है पापतैं ग्लानि जाती रहै कुलका भेद नाहीं ठहरै। अर स्त्रीकरि सहित संगम करै तहां अनेक जीवनकी हिंसा अर महा अशुचि अंगनिका संघट्टन अर रुधिर वीर्यादिकनिका वाह्य स्पर्शनादिक अर महा निंद्य रागका उपजना है याका त्याग नाहीं बन सकै तो इस पापकी ग्लानि करि आपको अशुद्धि मानि स्नान तो करै जो मैं निंद्यकर्म किया है तातैं वाह्यशुद्धिता वास्तै स्नान किये विना पुस्तकनिका तथा जिनमंदिरके उपकर्णनिका उत्तम वस्तुका कैसैं स्पर्शन करूं। यद्यपि देहमैं रुधिरमांस हाड चाम केश मल मूत्र भरे हैं परन्तु रुधिर राध चाम हाड मांस मल मूत्रादिकनिका वाह्यस्पर्श होजाय तो अवश्य धोवना उचित है जातैं केश चामादिक शरीरतैं दूर हुआ पाछै स्पर्शनेयोग्य नाहीं है। अर इनका हस्तादिककरि स्पर्श होजाय तो शीघ्र ही हस्त धोवना उचित है। इनकी ग्लानि नाहीं करै तो नीच चमार चाण्डाल कसायीनितैं एकता होनेतैं आचरणमैं भेद नाहीं

परमात्मा नामा तीर्थमैं सदा काल स्नान करो। वृथा खेदकरि व्याकुल भये गंगादिक तीर्थनप्रति क्यों दौडो हो? कैसाक है परमात्मानामा तीर्थ? सम्यग्ज्ञानरूप ही जामैं निर्मल जल है अर देदीप्यमान सम्यग्दर्शनरूप जामैं लहरि है अर अविनाशी अनंतसुख करि शीतल है अर समस्त पापनिकै नाश करनेवाला है ऐसा परमात्मस्वरूप तीर्थमैं लीन होहू। बहुरि जगतके पापिष्ठ मिथ्यादृष्टि जननिनै निर्मल तत्त्वनिका निश्चयरूप द्रह नाहीं देख्या है अर कठै हू ज्ञानरूप रत्नाकर समुद्र हू नाहीं देख्या। अर समता नामा अतिशुद्ध नदी हू नाहीं देखी, तिसकारण करि पापके हरनेवाले सत्य तीर्थनिकूं छांडि करि मूर्ख लोक हैं ते तीर्थ जिनकूं कहै हैं ते संसारके तारनेवाले नाहीं ऐसे गंगादिक नदीनिमैं डूबकरि हर्षित होय हैं। भावार्थ–जिनमूर्खनिनै तत्त्वनिका निश्चयरूप द्रहकूं नाहीं देख्या अर ज्ञानरूप समुद्र नाहीं देख्या अर समता नाम नदी नाहीं देखी ते गंगादिक तीर्थाभासनिमैं दौडता फिरै हैं जो तत्त्वनिका निश्चयरूप द्रहकूं देखता अर ज्ञानरूप समुद्रकूं देखना अर समतानामा नदीकूं देखता तो इनमैं गरक होय मिथ्यात्वकषायरूप मलकरि रहित होय आपकूं उज्वल कर लेता। बहुरि इस भुवनमैं ऐसा कोऊ तीर्थ नाहीं है तथा ऐसा जल हू नाहीं तथा और हू कोऊ द्रव्य नाहीं है जिसकरि यो समस्त अशुचि मनुष्यका शरीर साक्षात् शुद्ध होजाय अर यह शरीर कैसाक है–आधिव्याधि जरा मरणादिक करि निरंतर व्याप्त अर निरंतर तापकरनेवाला ऐसा है जातैं सत्पुरुषनिके याका नाम हू सहनेयोग्य नाहीं है। बहुरि समस्त तीर्थनिके जलतैं नित्य स्नान करिये अर चंदनकपूरादिकका विलेपन करिये तो हू यह शुद्ध नाहीं होय सुगन्ध नाहीं होय रक्षा करते हू विनाशके मार्गमैं ही तिष्ठै है। जो नदीमें स्नानतैं ही शुद्ध होजाय तो कोट्यां मच्छी मच्छ काछिवा कीर धीवरादिक शुद्ध होजांय तातैं यह लोकमूढता त्यागने योग्य है।

अब इहां इतना विशेष और जानना जो स्नान करनेतैं पवित्र नाहीं होय अर धर्म हू नाहीं होय परंतु

रहित होय अर जीवमात्रका विराधनारहित होजाय तो हाडमांसका मलीन देह हू देवनकरि पूज्य महा पवित्र होय जाय। इस देहकूं पवित्र करनेका और कारण ही नाहीं है सो ही श्रीपद्मनंदी नाम दिगम्बर वीतराग मुनि कह्या है सो जानहु। जिसकी निकटतातैं सुगंध पुष्पमालाचंदनादिपवित्र द्रव्य हू अस्पर्श्यताकूं प्राप्त होय है अर विष्टा मूत्रादिककरि भर्‌या रुधिर रस हाड चामादिककरि रच्या अर महासूगला अर महा दुर्गंध महामलीन समस्तअशुचिका रहनेका एक संकेतगृह ऐसा मनुष्यका शरीर जलकरि स्नान करनेतैं कैसैं शुद्ध होय। आत्मा तो अपने स्वभावतैं ही अत्यंत पवित्र है अर अमूर्तिक है ताकूं जल पहुंचै ही नाहीं ऐसा पवित्रमैं स्नान वृथा है अर यो काय है सो अशुचि ही है सो स्नानकरि कदाचित् शुचिताकूं प्राप्त नाहीं होय है यातैं स्नानके दोऊ प्रकारकरि विफलता भई। अर जे फिर हू स्नान करैं हैं तिनके पृथ्वीकाय जलकायादिक अर अनेक त्रसनिका घात होनेतैं पापबंधके अर्थि अर रागभावके अर्थि ही है। भावर्थ—गृहस्थके स्नान बिना सरै नाहीं परंतु अज्ञानी गृहस्थ स्नानमैं धर्म मानै है अर स्नानतैं पवित्रता मानै है ऐसी मिथ्याबुद्धि लग रही है सो याका स्वरूपकूं समझै तो याकूं धर्म तो नाहीं मानै अर यातैं पवित्रपना नाहीं मानै। यद्यपि गृहस्थके स्नान विना व्यवहार समस्त दूषित होय जाय अर व्यवहार दूषित होय जाय तादि परमार्थकी शुद्धता नाहीं करसकै परंतु याकूं राग बधावनेतैं अर हिंसा होनेतैं पापरूप तो श्रद्धान करै। बहुरि और हू शिक्षा जाननी,—चित्तकेविषै पूर्वकालका कोटिनभवकरि संचय किया कर्मरूप रज ताका संबंध करि उपज्या जो मिथ्यात्वादिक मल ताका नाश करनेवाला जो आपापरका भेद जाननेरूप विवेक सो ही सत्पुरुषानिकै मुख्य स्नान है। सत्पुरुषनिकै तो मिथ्यात्वमलका नाश करनेवाला एक विवेक ही स्नान है अर अन्य जो जलकरि स्नान है सो तो जीवनिका समूहका घात करनेतैं पापका करनेवाला है यातैं धर्म नाहीं होय है। ताहीकारणतैं स्वभावहीतैं अशुचि जो काय तिसविषै पवित्रता नाहीं है। बहुरि कहै हैं भो ज्ञानीजन हो! आपकी शुद्धताके अर्थि

राग द्वेष मोह अरति चिंता स्वेद खेद मद निद्रा इन अष्टादश दोषनिकरि रहित अरंहत तिनको वंदना स्तवन ध्यान करो। या अरहंतभक्ति संसारसमुद्रको तारनेवाली निरंतर चिंतवन करो। सुखका करनेवाला अरहंत ताका स्तवन करो याका गुणनिके आश्रय तो अनंत नाम हैं। अर भक्तिका भरया इंद्र भगवानका एक हजारआठ नाम करि स्तवन किया हैं अर जे अल्पसामर्थ्यके धारक हैं ते हू अपनी शक्तिप्रमाण पूजन स्तवन नमस्कार ध्यान करो अरहंतभक्ति संसारसमुद्रको तारनेवाली है सम्यग्दर्शनमैं अरहंतभक्तिमैं नामभेद है अर अर्थभेद नाहीं है। अरहंतभक्ति नरकादिगतिकूं हरनेवाली है याभक्तिकरि पूजनस्तवनकरि अर्घ उतारण करै हैं सो देवांका सुख फिर मनुष्यका सुख भोगि अविनाशी सुखका धारक अक्षय अविनाशीसुखकूं प्राप्त होय हैं ऐसे अरहंतभक्ति नाम दशमी भावना वर्णन करी ॥ १० ॥

अब आचार्यभक्ति नाम ग्यारमीभावना वर्णन करै हैं। सोही गुरुभक्ति है धन्यभाग जिनका होय तिनके वीतरागगुरुनिके गुणनिमैं अनुराग होय है धन्यपुरुषनिके मस्तकऊपरि गुरुनिकी आज्ञा प्रवर्तै है आचार्य हैं सो अनेकगुणनिकी खानि हैं श्रेष्ठतपका धारक हैं यातैं इनका गुण मनविषैं धारणकरि पूजिए अर्घ उतराण करिये पुष्पांजलि अग्रभागमैं क्षेपिये जो मेरे ऐसे गुरुनिका चरणनिका शरण ही होहु कैसेक है आचार्य जिनके अनशनादिक बारहप्रकारका उज्ज्वलतपनिमैं निरंतर उद्यम है अर छह आवश्यकक्रियामैं सावधान है अर पंचाचारके धारक हैं अर दशलक्षणधर्मरूप हैं परणति जिनकि अर मनवचनकायकी गुप्तिकरि सहित हैं ऐसे छत्तीसगुणनिकरि युक्त आचार्य होय हैं अर सम्यग्दर्शनाचारकूं निर्दोष धारैं हैं अर सम्यग्ज्ञानकी शुद्धिताकरि युक्त हैं अर त्रयोदशप्रकार चारित्रकी शुद्धिताके धारक अर तपश्चरणमैं उत्साहयुक्त अर अपने वीर्यकूं नाहीं छिपावतै बाईसपरीषहनिके जीतनेमैं समर्थ ऐसे निरंतर पंचआचारके धारक हैं अंतरंग बहिरंग ग्रंथकरि रहित निर्ग्रंथ मार्गके गमनकरनेमैं तत्पर हैं अर उपवास बेला तेला पंचोपवास पक्षोपवास मासोपवास करनेमैं तत्पर हैं अर निर्जनवनमैं अर

वेदना नष्ट हो जाय है अर रत्नजड़ित सिंहासन सूर्यकी कांतिकूं जीतै है। बहुरि जिनेन्द्रकी दिव्यध्वनिकी अद्भुत महिमा त्रैलोक्यवर्ती जीवनिकै परम उपकार करनेवाली मोहअंधकारका नाश करै है अर समस्त जीव अपनी अपनी भाषामैं शब्द अर्थ ग्रहण करैं हैं अर समस्तजीवनिके संशय नाहीं रहै है स्वर्गमोक्षका मार्गकूं प्रगट करै है दिव्यध्वनिकी महिमा वचन द्वारै गणधर इंद्रादिक कहनेकूं समर्थ नाहीं हैं जिनके समवसरणमैं जातिविरोधी जीवनिकै वैर विरोध नाही रहै है समवसरणमैं सिंह अर गज, व्याघ्र अर गौ मार्जारी अर हंस इत्यादिक जातिविरोधी जीव वैरबुद्धि छांड़ि परस्पर मित्रताकूं प्राप्त होय हैं। वीतरागताकी अद्भुत महिमा है जिनके असंख्यातदेव जयजयकार शब्द करैं हैं जिनके निकटताकूं पायकरिकै देवनिकरि रचे कलश झारी दर्प्पण ध्वजा ठोंणां छत्र चमर बीजणो ये अचेतन द्रव्यहू लोकमैं मंगलताकूं प्राप्त होय है। अर केवलज्ञान उत्पन्न भयेपीछै दशअतिशय प्रगट होय हैं चारों तरफ सौ सौ योजन सुभिक्षता, अर आकाशगमन भूमिका स्पर्श नाहीं करैं, अर कोऊ प्राणीका वध नाहीं होय, अर भोजनका अभाव, अर उपसर्गका अभाव, अर चतुर्मुख दीखै, अर समस्त विद्याका ईश्वरपना, छायारहितपणों अर नेत्र टिमकारैं नाहीं, अर केश नख बधैं नाहीं ऐ दश अतिशय घातियाकर्मका नाशतै स्वयं प्रकट होय हैं। अर तीर्थंकरप्रकृतिका प्रभावतैं चौदह अतिशय देवनिकरि किये होय हैं। अर्द्धमागधी भाषा, समस्तजनसमूहमैं मैत्रीभाव, समस्त ऋतुके फूल फल पत्रादिकसहित वृक्ष होय हैं पृथ्वी दर्पणसमान रत्नमयी तृण-कंटक-रज-रहित होय है, शीतल मंद सुगंध पवन चलै है, समस्त जनोंके आनंद प्रगट होय है, अनुकूल पवन, सुगंध जलकी वृष्टिकरि भूमि रजरहित होय है, चरण धरैं तहां सात आगे सात पाछै एक बीच ऐसे पंदरापंदराकरि दोयसै पचीस कमल देव रचैं हैं, आकाश निर्मल, दिशा निर्मल, च्यार निकायके देवनिकरि जय जय शब्द, एक हजार आरांकरिसहित किरणनिका धारक अपना उद्योतकरि सूर्यमंडलकूं तिरस्कार करता धर्मचक्र आगे चालै, अष्ट मंगलद्रव्य ये चौदह देवकृत अतिशय प्रगट होय है। क्षुधा तृषा जन्म जरा मरण रोग शोक भय विस्मय

रूप नेत्रकरि भूत भविष्यतैं वर्तमान त्रिकालवर्ती समस्त द्रव्यनिकी अनंतानंत परणतिसहित अनुक्रमतैं एकसमयमैं युगपत समस्तकूं जानै है देखै है । तदि च्यारनिकायके देव ज्ञानकल्याणककी पूजा स्तवनकरि भगवानका उपदेशकेअर्थि समवसरण अनेक रत्नमय रचैं हैं तिस समवसरणकी विभूतिका वर्णन कौन कर सकै ? पृथ्वीतैं पांचहजारधनुष ऊंचा जाके वीसहजार पैड़ी तीऊपरि इंद्रनीलमणिमय गोलभूमि बारहयोजन प्रमाण तिसऊपरि अप्रमाणमहिमासहित समवसरणरचना है । जहां समवसरणरचना होय है अर भगवानका विहार होय है तहां आंधेनिकूं दीखने लगि जांय बहरे श्रवण करने लगि जांय लूले चालने लगि जांय हैं गंगे बोलने लगि जांय हैं वीतरागकी अद्भुत महिमा है जाके धूलिशालादिक रत्नमय कोट मानस्तंभ अर बावड़्या अर जलकी खातिका अर पुष्पवाड़ी फिर रत्नमय कोट दरवाजे नाट्यशाला उपवन वेदी भूमि फिर कोट फिर कल्पवृक्षनिका बन रत्नमयस्तूप फिर महलनिका भूमि फिर स्फटिकका कोटमैं देवच्छद नाम एक योजनका मंडप सर्व तरफ द्वादश सभा तिनकरि सेवित रत्नमय तीन कटनी ऊपरि गंधकुटीमैं सिंहासनऊपरि च्यारिअंगुल अंतरीक्ष विराजमान भगवान अरहंत हैं जिनकी अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतवीर्य अनंतसुखमयी अंतरंग विभूतिकी महिमा कहनेकूं च्यारिज्ञानके धारक गणधर समर्थ नाहीं अन्य कौन कहि सकै अर समवसरणकी विभूतही वचनके अगोचर है अर गंधकुटी तीसरा कटणी उपरि है तहां चऊसठि चमर बत्तीस युगल देवनिके मुकट कुंडल हार कड़ा भुज बंधादिक समस्त आभरण पहिरे ढालि रहैं हैं तीन छत्र अद्भुत कांतिके धारक जिनकी कांतितैं सूर्य चंद्रमा मंदज्योति भासैं हैं अर जिनका देहकी प्रभामंडलको चक्र बंध रह्या जाकरि समवरणमै रात्रिदिनका भेद नाहीं रहै है,सदा दिवस ही प्रवर्तै है अर महासुगंध त्रैलोक्यमैं ऐसा सुगंध और नाहीं ऐसी गंधकुटीके ऊपर देवनिकरि रच्या अशोकवृक्षकूं देखते ही समस्तलोकनिका शोक नष्ट होय जाय है अर कल्पवृक्षनिके पुष्पनिकी वर्षा आकाशतैं होय है अर आकाशमैं साढ़ाबारकोटि जातिके वादित्रनिकी ऐसी मधुर ध्वनि होय है जिनके श्रवणमात्रतैं क्षुधातृषादिक समस्तरोग

समर्थ नाहीं फिर मेरुगिरतैं पूर्ववत उत्सव करते जिनेंद्रकूं ल्याय माताकूं समर्पण करि इंद्र वहां तांडव-नृत्यादिक जो उत्सव करै हैं तिन समस्तउत्सवनिकूं कोऊ असंख्यातकालपर्यंत कोटि जिन्हानिकरि वर्णन करनेकूं समर्थ नाहीं है। जिनेंद्र जन्मतैं ही तीर्थंकर प्रकृतिके उदयके प्रभावतैं दश अतिशय जन्मतैं लिये ही उपजैं हैं पसेवरहित शरीर होय, मल मूत्र कफादिकरहितपना, अर शरीरमैं दुग्ध वर्ण रुधिर, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रर्षभनाराचसंहनन, अद्भुत अप्रमाण रूप, महा सुगंध शरीर, अप्रमाण बल, एक हजार आठ लक्षण, प्रियहितमधुरवचन ये समस्त पूर्वजन्ममैं षोड़शकारण भावना भाई ताका प्रभाव है बहुरि इंद्र अंगुष्ठमैं स्थाप्या अमृत ताकूं पान करता माताका स्तनतैं उपज्या दुग्धपान नाहीं करै है फिर अपनी अवस्थाके समान बने देवकुमारनिमैं क्रीड़ा करने वृद्धिकूं प्राप्त होय है अर स्वर्गलोकतैं आये आभरण वस्त्र भोजनादिक मनोवांछित देव लीयें सासता रात्रिदिन हाजिर रहैं हैं पृथ्वी-लोकका भोजन आभरण वस्त्रादिक नाहीं अंगीकार करैं हैं स्वर्गतैं आये ही भोगैं हैं। बहुरि कुमारकाल व्यतीत करि इंद्रादिकनिकरि कीये अद्भुत उत्साहसहित भक्तिपूर्वक पिताकरि समर्पण कीया राज्यभोगि अवसर पाय संसारदेहभोगनितैं विरागता उपजै तदि अनित्यादिक बारह भावना भावते ही लोकांतिकदेव आय वंदना स्तवनरूप संबोधनादिक करैं हैं अर जिनेंद्रका विरागभाव होतेही चारिनिकायके इंद्रादिक देव अपने आसन कंपायमान होनेतैं जिनेंद्रके तपका अवसर अवधिज्ञानतैं जानि बड़े उत्सवतैं आय अभिषेककरि देवलोकके वस्त्राभरणतैं भक्तितैं भूषित-करि रत्नमयी पालकी रचि जिनेंद्रकूं चढ़ाय अप्रमाण उत्सव अर जयजयकार शब्दसहित तपके योग्य वनमैं जाय उतारैं तहां वस्त्र आभरण समस्त त्यागैं देव अधर झेलि मस्तक चढ़ावैं अर पंचमुष्टी लोंच सिद्धनिकूं नमस्कारकरि करैं तदि केशनिकूं महा उत्तम जाणि इंद्र रत्ननिके पात्रमें धारणकरि क्षीरसमुद्रमैं बड़ीभक्तितैं क्षेपै है जिनेंद्र केतेक कालमैं तपके प्रभावतैं शुक्लध्यानके प्रभावतैं क्षपकश्रेणीमैं घातियाकर्मनिका नाशकरि केवलज्ञानकूं उत्पन्न करैं हैं तदि अरहंतपना प्रकट होय है तदि केवलज्ञान

# सबसे पहिले इसको पढ़िये ।

पाठक महाशयो !

यह आपका पवित्र धर्मशास्त्र है। हस्तलिखित ग्रन्थोंकी समान आपको इसका विनय पूजन नमन करना चाहिये क्योंकि जिनवाणीपना दोनोंमें समान है। यदि आप ऐसा न करेंगे और अन्यान्य छपी पुस्तकों-की नाई इसका अविनय करेंगे, तो हम समझेंगे कि आप जिन वाणीके महत्वका विनय नहिं करके केवल—

रुपयोंका ही विनय करते हैं। ऐसा करनेपर आप अविनय संबंधी दोषके भागी होंगे।

निवेदक—ग्रन्थप्रकाशक ।

पर्वतनिके दराड़ अर गुफानिके स्थानमैं निश्चल शुभध्यानमैं निरंतर मनकूं धारैं हैं अर शिष्यनिकी योग्यताकूं आछी रीति जानि दीक्षा देनेमें अर शिक्षाकरनेमैं निपुण हैं अर युक्तितैं नव प्रकार नयके जाननेवाले हैं अर अपनेकायसूं ममत्व छांड़ि रात्रिदिन तिष्ठैं हैं संसारकूपमैं पतन हो जानेतैं भयवान हैं मनवचनकायकी शुद्धतायुक्त नाशिकाका अग्रमैं स्थापित करिये हैं नेत्रयुगुल जिनूंने ऐसे आचार्यनिकूं समस्त अंगनिकूं नमाय पृथ्वीमैं मस्तकधारि वंदना करिये हैं तिन आचार्यनिका चरणनिकरी स्पर्शनभई पवित्ररजकूं अष्टद्रव्यनिकरी पूजिये सो संसारपरिभ्रमणका क्लेश पीड़ाकूं नष्ट करनेवाली आचार्यभक्ति है अब यहां ऐसा विशेष जानना जो आचार्य हैं सो समस्तधर्मके नायक हैं आचार्यनिके आधार समस्त धर्म हैं यातैं एते गुणनिके धारक ही आचार्य होय बड़ा राजानिका वा राजाके मंत्रीनिका वा महान श्रेष्ठीनिका कुलमै उपज्या होय अर जाके स्वरूपकूं देखते ही शांतपरिणाम हो जांय ऐसा मनोहररूपका धारक होय जिनका उच्चआचार जगतमैं प्रसिद्ध होय पूर्व गृहचारामैं भी कदे हीणआचार निंद्यव्यवहार नाहीं किया होय अर वर्तमान भोगसंपदा छांड़ि विरक्तताकूं प्राप्त भया होय अर लौकिक व्यवहार अर परमार्थके ज्ञाता होय अर बुद्धिकी प्रबलता अर तपकी प्रबलताका धारक होय अर संघके अन्य मुनीश्वरनितैं ऐसा तप नाहीं बनि सकै तैसा तपका धारक होय बहुत कालका दीक्षित होय बहुत काल गुरुनिका चरण सेवन किया होय वचनका अतिशयसहित होय जिनका वचन श्रवण करतैंही धर्ममैं दृढ़ता अर संशयका अभाव अर संसारदेहभोगनितैं विरागता जाके निश्चल होय सिद्धांतसूत्रके अर्थका पारगामी होय इंद्रियनिका दमनकरि इसलोक परलोक संबंधी भोगविलासरहित देहादिकमैं निर्ममत्व होय महाधीर होय उपसर्गपरीषहनिकरि कदाचित् जाका चित्त चलायमान नहीं होय जो आचार्य ही चलि जाय तो सकलसंघ भ्रष्ट हो जाय धर्मका लोप हो जाय स्वमत परमतका ज्ञाता होय अनेकांतविद्यामैं क्रीड़ा करनेवाला होय अन्यके प्रश्नादिकतैं कायरतारहित तत्काल उत्तर देनेवाला होय एकांतपक्षकूं खंडनकरि सत्यार्थधर्मकूं स्थापन करनेका जाका सामर्थ्य होय

इंद्रियपूर्णता दीर्घायु सत्संगति श्रद्धान ज्ञान आचरण ए उत्तरोत्तर दुर्लभ संयोग पाय तो अल्पज्ञानी गुरुके निकट बसनेवाला शिष्य सो सत्यार्थ उपदेश नाहीं पावनेतैं यथार्थ आपका स्वरूप नाही पाय संशयरूप हो जाय तथा मोक्षमार्गकूं अतिदूर अतिकठिन जानि रत्नत्रयमार्गसूं चलि जाय तथा सत्यार्थ उपदेशविना विषयकषायनिमैं उरझ्या मनकूं निकासनेमैं समर्थ नाहीं होय तथा रोगकृतवेदनामें तथा घोरउपसर्गपरीषहनितैं चल्या हुआ परिणामकूं श्रुतका अतिशयरूप उपदेशविना थांभनेकूं समर्थ नाहीं होय है। बहुरि मरण आ जाय तदि सन्यासका अवसरमैं आहारपानका त्यागका यथाअवसर देश काल सहाय सामर्थ्यका क्रमकूं समझेविना शिष्यका परिणाम चलि जाय वा आर्त्तध्यान हो जाय तो सुगति बिगड़ि जाय धर्मका अपवाद हो जाय अन्य मुनि धर्ममैं शिथिल हो जांय तो बड़ा अनर्थ है तथा यो मनुष्य आहारमय है आहारतैं जीवै है आहारहीकी निरंतर वांछा करै है अर जब रोगके वशतैं तथा त्याग करनेतैं आहार छूटि जाय तदि दुःखकरि ज्ञानचारित्रमैं शिथिल होय धर्मध्यानरहित हो जाय तो बहुश्रुत गुरु ऐसा उपदेश करै जाकरि क्षुधातृषाकी वेदनारहित होय उपदेशरूप अमृतकरि सींचा हुआ समस्त क्लेशरहित भया धर्मध्यानमैं लीन हो जाय है क्षुधातृषारोगादिककी वेदनासहित शिष्यकूं धर्मका उपदेशरूप अमृतका पान अर शिक्षारूप भोजनकरि ज्ञानसहित गुरुही वेदनारहित करै बहुश्रुतीका आधारविना धर्म रहै नाहीं तातैं आधारवान आचार्य होय ताहीका शरण ग्रहण करना योग्य है बहुरि जो शिष्य वेदनाकरि दुःखित होय ताके हस्तपाद मस्तकका दाबना स्पर्शनादि करना मिष्टवचन कहना इत्यादिककरि दुःख दूर करै तथा पूर्वे जे अनेकसाधु घोरपरीषह सहकरि आत्मकल्याण कीया तिनकी कथाके कहनेकरि तथा देहतैं भिन्न आत्माका अनुभव करावनेकरि वेदनारहित करै तथा भो मुने! अब दुःखमैं धैर्य धारण करो संसारमैं कौन कौन दुःख नाहीं भोगे अर वीतरागताका शरण ग्रहण करोगे तो दुःखनिका नाशकरि कल्याणकूं प्राप्त होवोगे इत्यादिक बहुतप्रकार कहि मार्गसूं नाहीं चलने देवै तातैं आधारवान गुरुनिहीका शरण योग्य है ॥ २ ॥ बहुरि जो व्यवहार प्रायश्चित्तसूत्रनिका ज्ञाता होय जातैं प्रायश्चित्तसूत्र आचार्य

धर्मकी प्रभावना करनेमैं उद्यमी होय गुरुनिके निकट प्रायश्चित्तादिकसूत्र पढ़ि छत्तीस गुणनिका धारक होय है सो समस्त संघकी साखिसूं गुरुनिकरि दिया आचार्य पद प्राप्त होय ऐते गुणनिका धारक होय निसहीकूं आचार्यपना होय है ऐते गुणनि विना आचार्य होय तो धर्म तीर्थका लोप हो जाय उन्मार्गकी प्रवृत्ति हो जाय समस्तसंघ स्वेच्छाचारी हो जाय सूत्रकी परिपाटी अर आचारकी परिपाटी टूटि जाय। बहुरि आचार्यपनाके अन्य अष्ट गुण हैं तिनका धारक होय। आचारवान, आधारवान, व्यवहारवान, प्रकर्ता, आपायोपायविदर्शी, अवपीड़क, अपरिश्रावी, निर्यापक ऐ आठ गुण हैं। तिनमैं पंचप्रकारका आचार धारण करै ताकूं आचारवान कहिये है जीवादिकतत्त्व भगवान सर्वज्ञ वीतराग दिव्य निरावरणज्ञानकरि प्रत्यक्ष देखी कह्या तिनमैं श्रद्धानरूप परणति सो दर्शनाचार है स्वपरतत्त्वनिकूं निर्बाध आगम अर आत्मानुभव करि जानानारूप प्रवृत्ति सो ज्ञानाचार है हिंसादिक पंचपापनिका अभावरूप प्रवृत्ति सो चारित्राचार है अंतरंगवहिरंग तपमैं प्रवृत्ति सो तपाचार है परीषहादिक आये अपनी शक्तिकूं नहीं छिपाय धीरतारूपप्रवृत्ति सो वीर्याचार है तथा औरहू दश प्रकार स्थित कल्पादिकआचारमैं तथा समितिगुप्त्यादिकनिका कथन करिये तो बहुत कथन बधि जाय। पंचप्रकारका आचार आप निर्दोष आचरै अर अन्य शिष्यादिकनिकूं आचरण करावनेमैं उद्यमी होय सो आचार्य है आप हीणाचारी होय सो शिष्यनिकूं शुद्धआचरण नाहीं कराय सकै हीणाचारी होय सो आहार विहार उपकरण वस्तिका अशुद्ध ग्रहण कराय दे अर आपही आचारहीण होय सो शुद्ध उपदेश नाहीं करि सकै तातैं आचार्य आचारवान ही होय॥१॥बहुरि जाकै जिनेन्द्रका प्ररूप्या च्यार अनुयोगका आधार होय स्याद्वादविद्याका पारगामी होय शब्दविद्या न्यायविद्या सिद्धांतविद्याका पारगामी होय प्रमाणनयनिक्षेपणकरि स्वानुभवकरि भले प्रकार तत्त्वनिका निर्णय किया होय सो आधारवान है जाकै श्रुतका आधार नाहीं सो अन्य शिष्यनिका संशय तथा एकांतरूप हठ तथा मिथ्याआचरणकूं निराकरण नाहीं करि सकै। बहुरि अनंतानंतकालतैं परिभ्रमण करता जीवकैं अतिदुर्लभ मनुष्यजन्मका पावना नामें हू उत्तम देश जाति कुल

पर्वतनिके दराड़े अर गुफानिके स्थानमैं निश्चल शुभध्यानमैं निरंतर मनकूं धारैं हैं अर शिष्य-
निकी योग्यताकूं आछी रीति जानि दीक्षा देनेमैं अर शिक्षाकरनेमैं निपुण हैं अर युक्तितैं नव प्रकार
नयके जाननेवाले हैं अर अपनेकायसूं ममत्व छांडि रात्रिदिन तिष्ठै हैं संसारकूपमैं पतन हो जानेतैं
भयवान हैं मनवचनकायकी शुद्धतायुक्त नाशिकाका अग्रमैं स्थापित करिये हैं नेत्रयुगुल जिनूंने ऐसे
आचार्यनिकूं समस्त अंगानिकूं नमाय पृथ्वीमैं मस्तकधारि बंदना करिये हैं तिन आचार्यनिका चरणनि-
करी स्पर्शनभई पवित्ररजकूं अष्टद्रव्यनिकरी पूजिये सो संसारपरिभ्रमणका क्लेश पीड़ाकूं नष्ट करनेवाली
आचार्यभक्ति है अब यहां ऐसा विशेष जानना जो आचार्य हैं सो समस्तधर्मके नायक हैं आचार्यनिके
आधार समस्त धर्म हैं यातैं एते गुणनिके धारक ही आचार्य होय बड़ा राजानिका वा राजाके मंत्री-
निका वा महान श्रेष्ठीनिका कुलमैं उपज्या होय अर जाके स्वरूपकूं देखते ही शांतपरिणाम हो जांय
ऐसा मनोहररूपका धारक होय जिनका उच्चआचार जगतमैं प्रसिद्ध होय पूर्व गृहचारामैं भी कदे हीण-
आचार निंद्यव्यवहार नाहीं किया होय अर वर्तमान भोगसंपदा छांड़ि विरक्तताकूं प्राप्त भया होय अर
लौकिक व्यवहार अर परमार्थके ज्ञाता होय अर बुद्धिकी प्रबलता अर तपकी प्रबलताका धारक होय
अर संघके अन्य मुनीश्वरनितैं ऐसा तप नाहीं बनि सकै तैसा तपका धारक होय बहुत कालका दीक्षित
होय बहुत काल गुरुनिका चरण सेवन किया होय वचनका अतिशयसहित होय जिनका वचन श्रवण
करतैंही धर्ममैं दृढ़ता अर संशयका अभाव अर संसारदेहभोगनितैं विरागता जाके निश्चल होय
सिद्धांतसूत्रके अर्थका पारगामी होय इंद्रियनिका दमनकरि इसलोक परलोक संबंधी भोगविलासर-
हित देहादिकमैं निर्ममत्व होय महाधीर होय उपसर्गपरीषहनिकरि कदाचित् जाका चित्त चलायमान
नहीं होय जो आचार्य ही चलि जाय तो सकलसंघ भ्रष्ट हो जाय धर्मका लोप हो जाय स्वमत परम-
तका ज्ञाता होय अनेकांतविद्यामैं क्रीड़ा करनेवाला होय अन्यके प्रश्नादिकतैं कायरतारहित तत्काल
उत्तर देनेवाला होय एकांतपक्षकूं खंडनकरि सत्यार्थधर्मकूं स्थापन करनेका जाका सामर्थ्य होय

वक्तापनाकी शक्तिका धारक होय वादी प्रतिवादीनिके जीतनेमैं समर्थ होय विषयनितैं अत्यंत विरक्त होय बहुतकाल गुरुकुल सेया होय सर्वसंघके मान्य होय पहिली ही समस्त संघ जाकूं आचार्यपनाकी योग्यता जाणै सोही गुरुनिका दिया प्रायश्चित्तसूत्रका ज्ञाता होय आचर्यपना पावै सौ प्रायश्चित्त देवै है एते गुणनिविना जैसें मूढ़वैद्य देश काल प्रकृत्यादिक नाहीं जानै तो रोगीकूं मारै है तैसैं व्यवहारसूत्ररहित मूढ़ गुणसंयुक्त होय है संघमैं कोऊ रोगी होय वा वृद्ध होय अशक्त होय कोऊ बाल होय कोऊ संन्यास धारण किया होय तिनकी वैयावृत्त्यमैं युक्त कीये जे मुनि ते तो टहल करै ही परंतु आप आचार्य हू संघके मुनीश्वरनिमैं जो अशक्त हो जाय ताका उठावना बैठावना शयन करावना तथा मलमूत्रकफादिक तथा राधिरुधिरादिक शरीरतैं दूरि करना धोवना उठाय प्राशुकभूमिमैं स्थापना धर्मोपदेश देना धर्म ग्रहण करावना इत्यादिक आदरपूर्वक भक्तितैं वैयावृत्त्य करैं तिनकूं देखि समस्तसंघके मुनि वैयावृत्त्यमैं सावधान होय विचारैं हैं अहो धन्य है ये गुरु भगवान परमेष्ठी करुणानिधान जिनके धर्मात्मामैं ऐसा वात्सल्य है हम महा निंद्य हैं आलसी होय रहे है हमकूं होते हू सेवा करैं हैं यह हमारा प्रमादीपना धिक्कार योग्य है बंधका कारण है ऐसा विचार समस्तसंघ वैयावृत्त्यमैं उद्यमी होय है जो आचार्य आप प्रमादी होय तो सकल संघ वात्सल्यरहित हो जाय यातैं आचार्यका कर्तृत्वगुण मुख्य है समस्तसंघका वैयावृत्त्य करनेका जाका सामर्थ्य होय सो आचार्य होय है कोऊ हीणाचारी ताकूं शुद्ध आचरण ग्रहण करावै कोऊ मंदज्ञानी होय तिनकूं समझाय चारित्रमैं लगावै केईनिकूं प्रायश्चित देय शुद्ध करैं कोउकूं धर्मोपदेश देय दृढ़ता करै। धन्य है आचार्य जिनके शरणे प्राप्त हो गया तिनकूं मोक्षमार्गमैं लगाय उद्धार करैं हैं यातैं आचार्यका प्रकर्ता नामा गुण प्रधान है ॥ ४ ॥ बहुरि अपायोपायविदर्शी नाम पांचमो गुण है कोउ साधु क्षुधातृषा रोगवेदनाकरि पीड़ित हुआ क्लेशितपरिणामरूप हो जाय तथा तीव्र रागद्वेषरूप हो जाय तथा लज्जाकरि भयकरि यथावत आलोचना नाहीं करै तथा रत्नत्रयमैं उत्साहरहित हो जाय धर्मतैं सिथिल हो जाय तो ताकूं अपाय मानि रत्नत्रयका नाश अर उपाय रत्नत्रयकी रक्षानिका प्रगट गुण दोष

ऐसा दिखावै जो रत्नत्रयका नाश होनेतैं कंपायमान हो जाय अर रत्नत्रयका नाशतैं अपना नाश अर नरकादि कुगतिमैं पतन साक्षात दिखावै अर रत्नत्रयकी रक्षातैं संसारतैं उद्धार होय अनंत सुखकी प्राप्ति उपदेशकरि साक्षात दिखाय देय ऐसा उपदेशका सामर्थ्य जामैं होय सो अपयोपायविदर्शी नाम गुणका धारक आचार्य होय है इहां उपदेश दिखाये कथन बहुत हो जाय तातैं नाहीं लिख्या ॥ ५ ॥ अब अवपीड़क नाम छटा गुण कहिये है कोऊ मुनि रत्नत्रय धारण करकै हू लज्जाकरि भयकरि अभिमानगौरवादिकरी अपनी आलोचना यथावत शुद्ध नाहीं करै तो आचार्य ताकूं स्नेहकी भरी कर्णानिकूं मिष्ट अर हृदयमैं प्रवेश करनेवाली शिक्षा करै जो हे मुने बहुत दुर्लभ रत्नत्रयका लाभ ताकूं मायाचारकरि नष्ट मति करो माता पितासमान गुरुनिके निकट अपने दोष प्रगट करनेमैं कहा लज्जा है अर वात्सल्यके धारक गुरु हू अपने शिष्यके दोष प्रगटकरि शिष्यका अर धर्मका अपवाद नाहीं करावैं हैं तातैं शल्य दूरिकरि आलोचना करो जैसैं रत्नत्रयकी शुद्धता अर तपश्चरणका निर्वाह होयगा तैसैं द्रव्य क्षेत्र काल भावके अनुसार प्रायश्चित्त तुमकूं दिया जायगा तातैं भय त्यागि आलोचना निर्दोष करहू ऐसे स्नेहरूप वचन करिकेहू जो माया शल्य नाहीं त्यागै तो तेजका धारक आचार्य शिष्यकी शल्यकूं जबरीतैं निकासैं जिस काल आचार्य शिष्यकूं पूछैं हैं जो हे मुने ऐ दोष ऐसैं ही हैं सत्यार्थ कहो तदि उनके तेजतपके प्रभावतैं जैसैं सिंहकूं देखतेही स्याल खाया हुआ मांसकूं तत्काल उगलै है तथा जैसैं महान प्रचंडतेजस्वी राजा अपराधीकूं पूछै तदि तत्काल सत्य कहता ही बणै तैसैं शिष्यहू माया शल्यकूं निकासै है अर मायाचार नाहीं छांड़ै तो गुरु तिरस्कारके वचन हू कहैं हैं हे मुने हमारे संघतैं निकस जाहु हमकरि तुम्हारे कहा प्रयोजन है जो अपना शरीरादिकका मेल धोया चाहैगा सो निर्मल जलके भरे सरोवरकूं प्राप्त होयगा जो अपना महानरोगकूं दूरि किया चाहैगा सो प्रवीण वैद्यकूं प्राप्त होयगा तैसैं जो रत्नयरूप परमधर्मका अतीचार दूरिकरि उज्वलता किया चाहैगा सौ गुरुनिका आश्रय करैगा तुम्हारे रत्नत्रयकी शुद्धिता करनेमैं आदर नाहीं तातैं ये मुनिपणा व्रतधारण नग्न होय क्षुधादि

परीषह सहनेकी विटंबनाकरि कहा साध्य है संवर निर्जरा तो कषायनिके जीतनेतैं है मायाकषायका ही त्याग नाहीं किया तदि व्रत संयम मौन धारण वृथा है नग्नता अर परिषह सहनता मायाचारीका वृथा है तिर्यंच हू परिग्रहरहित नग्न रहैंही हैं यातैं तुम दूरभव्य हो हमारे वंदने योग्य नाहीं हो अर तुम्हारे परिणाम ऐसे हैं जो हमारा दोष प्रगट होय तो हम निंद्य हो जावैं हमारा उच्चपणा घटि जाय सो मानना बंधका कारण है श्रमण तो स्तुति निंदामैं समानपरिणामी होय है ऐसे गुरु कठोरवचन कहि करिके हू मायाचारादिका अभाव करावै कैसा होय अवपीड़क आचार्य जो बलवान होय उपसर्ग परिषह आये कायर नाहीं होय प्रतापवान होय जाका वचन कोऊ उल्लंघन करने समर्थ नाहीं होय अर प्रभाववान होय जाकूं देखतप्रमाण दोषका धारक साधू कांपने लगि जाय जाकूं बड़े बड़े विद्याके धारक नम्रीभूत होय वंदना करैं जाकी उज्ज्वलकीर्ति विख्यात होय जाकी कीर्ति सुनताही जाके गुणनिमैं दृढ़ श्रद्धा हो जाय जाका वचन जगतमैं देख्या विना ही दूरदेशनिमैं प्रमाण करैं सिंहकी ज्यौं निर्भय होय ऐसा अवपीड़क गुणका धारक गुरु होय सो जैसैं शिष्यका हित होय तैसैं उपकार करै है जैसे बालकका हितने चिंतवन करती माता रुदन करताहू बालककूं दाबकरि मुख फाड़ि जबरीतैं घृत दुग्धादि पान करावै है। ऐसे शिष्यका हितकूं चिंतवन करता आचार्य हू मायाशल्यसहित क्षपकका बलात्कारकरि दोष दूरि करै है अथवा कटुकऔषधि ज्यों पश्चात् हित करै है जो जिह्वाकरिके मिष्ट बोले अर शिष्यकूं दोषतैं नाहीं छुड़ावै सो गुरु भला नाहीं अर जो चरणकरि ताड़नाहूकरि दोषनितैं भिन्न करै है सो गुरु पूजन योग्य है यातैं अवपीड़कगुणका धारक ही आचार्य होय है ॥ ६ ॥ अब अपरश्रावीगुणकूं कहैं हैं जो शिष्य गुरुनिकूं दोष आलोचना करै सो दोष अन्यकूं गुरु प्रकाश नाहीं करै जैसै तपायमानलोहकरि पीया जल सो बाह्य प्रगट नाहीं होय तैसैं शिष्यकरी श्रवणकिया दोष आचार्य हू किसीकूं नाहीं जणावे है सोही अपरश्रावी नाम गुण है शिष्य तो गुरुका विश्वासकरकै कहै अर गुरु जो शिष्यका दोष प्रगट करै अन्यकूं जनावै तो वो गुरु नाहीं अधम है विश्वासघाती

है कोउ शिष्य अपना दोषकी प्रकटता जानि दुखित होय आत्मघात करै है वा क्रोधी होय रत्नत्रयका त्याग करै है तथा गुरुकी दुष्टता जानि अन्य संघमैं जाय तथा जैसैं हमारी अवज्ञा करी तैसें तुमारी हू अवज्ञा करैगा ऐसैं समस्तसंघमें घोषणा प्रगट होय समस्तसंघ आचार्यनिकी प्रतीतिरहित हो जाय आचार्य सबके त्याज्य हो जाय इत्यादिक बहुत दोष आवैं बहुत कहे कथनी वधि जाय तातैं अपरश्रावी गुणका धारक ही आचार्य योग्य है ॥ ७ ॥ अब आचार्य निर्यापक होय जैसैं नावकूं खेवटिया समस्त उपद्रवनिकूं टालि नावकूं पार उतारि ले जाय तैसैं आचार्य हू शिष्यकूं अनेक विघ्नसूं बचाय संसारसमुद्रके पार करै सो निर्यापक है ॥ ८ ॥ ऐसे आचारवान ॥ १ ॥ आधारवान ॥ २ ॥ व्यवहारवान ॥ ३ ॥ प्रकर्ता ॥ ४ ॥ अपायोपायविदर्शी ॥ ५ ॥ अवपीड़क ॥ ६ ॥ अपरश्रावी ॥ ७ ॥ निर्यापक ॥ ८ ॥ यह आचार्यनिके अष्टगुणकूं धारणकरतेनिके गुणनिमैं अनुराग सो आचार्यभक्ति है ऐसैं आचार्यनिके गुणनिकूं स्मरण करकै आचार्यनिका स्तवन वंदना करता जो पुरुष अर्घ उतारण करै है सो पापरूप संसारकी परिपाटीकूं नष्टकरि अक्षयसुखकूं प्राप्त होय है ऐसैं वीतराग गुरु कहैं हैं। ऐसैं आचार्यभक्ति वर्णन करी ॥ ११ ॥

अब बहुश्रुतभक्ति नाम बारमीभावनाकूं कहैं हैं ॥ जो अंगपूर्वादिकका ज्ञाता तथा च्यार अनुयोगनिका पारिगामी जो निरंतर आप परमागमकूं पढ़ैं अन्य शिष्यनिकूं पढ़ावैं ते बहुश्रुती हैं तथा जिनके श्रुतज्ञान ही दिव्यनेत्र है अर अपना अर परका हित करनेमैं प्रवर्तें ते अर अपने जिनसिद्धांत अर अन्य एकांतीनिके सिद्धांतनिका विस्तारतैं जाननेवाले स्याद्वादरूप परमविद्याके धारक तिनकी जो भक्ति सो बहुश्रुतभक्ति है बहुश्रुतीकी महिमा कौन कहनेकूं समर्थ है जे निरंतर श्रुतज्ञानका दान करैं हैं ऐसे उपाध्याय तिनकी भक्ति विनयकरि सहित करैं हैं ते शास्त्ररूप समुद्रका पारगामी होय हैं जे अंगपूर्व प्रकीर्णक जिनेन्द्र वर्णन कीये तिन समस्तजिनागमकूं निरंतर पढ़ैं पढ़ावैं ते बहुश्रुती हैं इहां प्रथम आचारांग तामैं अठारहहजार पदनिमैं मुनिधर्मका वर्णन है ॥ १ ॥ सूत्रकृतांगका छत्तीसहजार पद हैं

तिनमैं जिनेंद्रके श्रुतके आराधने करनेके विनय क्रियाका वर्णन है ॥ २ ॥ स्थानांगका व्यालीसहजार पद तिनमैं षट्द्रव्यनिका एकादि अनेक स्थानका वर्णन है ॥ ३ ॥ समवायांग एक लाख चौंसठिहजार पदनिमैं है तिनमैं जीवादिक पदार्थनिका द्रव्य क्षेत्र काल भावकै आश्रित समानता वर्णन है ॥ ४ ॥ व्याख्याप्रज्ञप्ति अंगके दोय लक्ष अट्ठाईस हजार पदनिमैं जीवका अस्तिनास्ति इत्यादिक गणधरनिकरि कीये साठिहजार पदनिका वर्णन है ॥ ५ ॥ ज्ञातृधर्मकथांगके पांचलक्ष छप्पनहजार पदनिमैं गणधरनि करि कीये प्रश्ननिके अनुसार जीवादिकनिका स्वभावका वर्णन है ॥ ६ ॥ उपासकाध्ययन नाम अंगके ग्यारहलक्ष सत्तर हजार पदनिमैं श्रावकके व्रत शील आचार क्रियाका तथा याका मंत्रनिका उपदेशका वर्णन है ॥ ७ ॥ अंतकृतदशांगके तेईसलक्ष अट्ठाईसहजार पदनिमैं एक एक तीर्थंकरके तीर्थमैं दश दश मुनीश्वर उपसर्गसहित निर्वाण प्राप्त भये तिनका कथन है ॥ ८ ॥ अनुत्तरोपपादकदशांगके बाणवै लक्ष चौवालीसहजार पदनिमैं एक एक तीर्थंकरके तीर्थमैं दश दश मुनीश्वर महाभयंकर घोरउपसर्गसहित देवनितैं पूजा पाय विजयादिक अनुत्तर विमाननिमैं उपजे तिनका वर्णन है ॥ ९ ॥ प्रश्नव्याकरण नाम अंगके त्र्याणवैलक्ष षोडशसहस्र पदनिमैं नष्ट मुष्टि लाभ अलाभ सुख दुःख जीवित मरणादिकके प्रश्नका वर्णन है ॥ १० ॥ विपाकसूत्रांगके एककोटि चौरासीलक्ष पदनिमैं कर्मनिका उदय उदीर्णा सत्ताका वर्णन है ॥ ११ ॥ अर दृष्टिवाद नाम बारमअंगका पांच भेद है परिकर्म. सूत्र, प्रथमानुयोग, पूर्व, चूलिका तिनमैं परिकर्मकाहू पांच भेद है तिनमैं चंद्रप्रज्ञप्तिके छह लक्ष पांचहजार पदनिमैं चंद्रमाका आयु गति अर कलाकी हानिवृद्धि अर देवीविभव परिवारादिकका वर्णन है ॥ १ ॥ अर सूर्यप्रज्ञप्तिके पांचलक्ष तीनहजार पदनिमैं सूर्यका आयु गति विभवादिकका वर्णन है ॥ २ ॥ जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिके तीनलक्ष पचीसहजार पदनिमैं जंबूद्वीपसंबंधी क्षेत्र कुलाचल द्रह नदी इत्यादिकनिका निरूपण है ॥३॥ द्वीपसागरप्रज्ञप्तिके बावनलक्ष छत्तीसहजार पदनिमैं असंख्यातद्वीप समुद्रनिका अर मध्यलोकके जिनभवननिका अर भवनवासी व्यंतर ज्योतिष्क देवनिके निवासनिका वर्णन है ॥ ४ ॥ व्याख्याप्रज्ञप्तिके चौरासीलक्ष छप्पनहजार

पदनिमैं जीव पुद्गलादि द्रव्यका निरूपण है ॥ ५ ॥ ऐसे पंच प्रकार परिकर्म कह्या अब दृष्टिवाद अंगका दूजा भेद सूत्रके अठ्ठासीलक्ष पदनिमें जीव अस्तिरूप ही है नास्तिरूप ही है कर्ता ही है भोक्ता ही है इत्यादि एकांतवादिकरि कल्पित जीवका स्वरूपका वर्णन है ॥ २ ॥ बहुरि प्रथमानुयोगके पांचहजार पदनिमैं त्रेसठि महापुरुषनिके चरित्रका वर्णन है ॥ ३ ॥ अब दृष्टिवादअंगका चतुर्थभेदमें चौदहपूर्व हैं तिनमैं उत्पादपूर्वके एककोटि पदनिमैं जीवादिक द्रव्यनिका उत्पादादि स्वभावका निरूपण है ॥ १ ॥ अग्रायणीपूर्वके छिनवैकोटि पदनिमैं द्वादशांगका सारभूत सप्ततत्व नवपदार्थ षट् द्रव्य सातसैं सुनय दुर्नयादिकका स्वरूपका वर्णन है ॥ २ ॥ वीर्यानुवादके सत्तरलक्ष पदनिमैं आत्मवीर्य परवीर्य कामवीर्य कालवीर्य भाववीर्य तपोवीर्यादि समस्त द्रव्यगुणपर्यायनिका वीर्यका निरूपण है ॥ ३ ॥ अस्तिनास्तिप्रवाद नाम पूर्वके साठिलक्ष पदनिमैं जीवादि द्रव्यनिका स्वद्रव्यादि चतुष्टयकी अपेक्षा अस्ति और परद्रव्यादि चतुष्टयकी अपेक्षा नास्ति इत्यादिक सप्तभंगादिक तथा नित्य अनित्य एक अनेकादिकनिका विरोध रहित वर्णन है ॥ ४ ॥ ज्ञानप्रवाद पूर्वके एकघाटि कोटि पदनिमैं मति श्रुत अवधि मनःपर्यय केवल ये पांच ज्ञान अर कुमति कुश्रुति विभंग ये तीन अज्ञान इनका स्वरूप संख्या विषयफलनिके आश्रय प्रमाणपना अप्रमाणपनाका वर्णन है ॥ ५ ॥ सत्यप्रवादपूर्वके छहअधिक एककोटि पदनिमैं वचनगुप्ति अर वचनके संस्कारका कारण अर द्वादश भाषा अर वक्तानिके भेद अर बहुतप्रकार असत्य अर दशप्रकारके सत्यका वर्णन है ॥ ६ ॥ आत्मप्रवादपूर्वके छव्वीसकोटि पदनिमैं आत्मा जीव है कर्त्ता है भोक्ता है प्राणी है वक्ता है पुद्गल है वेद है विष्णु है स्वयंभू है शरीरी मान वक्ता शक्ता जंतु मानी माया वियोगी असंकुट क्षेत्रज्ञ इत्यादि स्वरूपका वर्णन है ॥ ७ ॥ कर्मप्रवादपूर्वके एककोटि अस्सीलाख पदनिमैं कर्मनिका बंध उदय उदीर्णा सत्त्व उत्कर्षण उपशमन संक्रमणानिधि तिनिका चितादि अवस्था अर ईर्यापथ तपस्या अधःकर्मादिकनिका वर्णन है ॥ ८ ॥ प्रत्याख्यानपूर्वके चौरासीलक्ष पदनिमैं नाम स्थापना द्रव्य क्षेत्र काल भावनिकूं आश्रय करि पुरुषनिका संहनन अर बलादिकनिके अनुसार प्रमाणीककाल वा अप्रमाणीककाल लिये त्याग

अर पापसहित वस्तुतैं निराला होना अर उपवासकी विधि अर उपवासकी भावना अर पंचसमिति अर तिनगुप्तिका वर्णन है ॥ ९ ॥ विद्यानुवादके एक कोटि दशलक्ष पदनिमैं अंगुष्टप्रसेनादिक सातसै अल्पविद्या अर रोहणादि पांचसै महाविद्यनिका स्वरूप सामर्थ्य अर इनका साधन मंत्र तंत्र पूजा विधानका अर सिद्ध भई तिनका फलका अर अंतरिक्ष भौम अंग स्वर स्वप्न लक्षण व्यंजन छिन्न ये अष्टप्रकार निमित्तज्ञानका वर्णन है ॥ १० ॥ कल्याणानुवादपूर्वके छब्बीसकोटि पदनिमैं तीर्थंकर चक्रधर बलदेव प्रतिवासुदेवादिकनिका गर्भ कल्याणादि महाउत्सवनिका अर इन पदनिका कारण षोड़श भावना वा तपविशेष आचरणादिकानिका अर चंद्रमा सूर्य ग्रह नक्षत्रनिका गमन तथा ग्रहण शकुनादिकके फलका वर्णन है ॥ ११ ॥ प्राणप्रवाद पूर्वके तेरहकोटि पदनिमैं कायकी चिकित्साका अष्टांग-आयुर्वेद जो वैद्यविद्या ताका भूतकर्मका अर जांगलिका अर इला पिंगलादिक स्वासोच्छ्वासका अर गातिके अनुसार दशप्राणानिके उपकारक अनुपकारक द्रव्यनिका वर्णन है ॥१२॥ क्रियाविशालपूर्वके नवकोटि पदनिमैं संगीतशास्त्र छंद अलंकार बहत्तरि कला अर स्त्रीके चौसठिगुण अर शिल्पादिविज्ञान अर चौरासी गर्भाधानादि क्रिया अर एकसौआठ सम्यग्दर्शनादिक्रिया अर पचीस देववंदनादिक नित्यनैमित्तक क्रियाका वर्णन है ॥१३॥ त्रिलोकविंदुसार पूर्वके साढ़ाबारकोटि पदनिमैं त्रैलोक्यको स्वरूप छब्बीस परिकर्म अष्ट व्यवहार च्यारि वीज मोक्षका स्वरूप मोक्षगमनका कारण क्रिया अर मोक्षसुखका वर्णन है ॥१४॥ ऐसे पिच्याणवैकोड़ि पचासलाख पांच पदनिमैं चौदह पूर्व वर्णन किया। अब दृष्टिवादांगको पांचमोभेद चूलिका पांच प्रकार है एक एक चूलिकाके दोयकोटि नवलक्ष निवासीहजार दोयसै पद हैं तिनमैं जलगताचुलिकामैं जलका स्तंभन जलमैं गमन अग्निका स्तंभन भक्षण अग्निऊपरि आसन अग्निमैं प्रवेशनादिकका कारण मंत्र तंत्र तपश्चरणका वर्णन है ॥ १ ॥ अर स्थलगताचुलिकामैं मेरु कुलाचलादिकनिमैं भूमिमैं प्रवेशकरनेकूं अर शीघ्रगमनके कारण मंत्र तंत्र तपश्चरणका वर्णन है ॥ २ ॥ अर मायागताचूलिकामैं मायारूप इंद्रजालादि विक्रियाका मंत्रतंत्र तपश्चरणादिकका वर्णन है ॥ ३ ॥ आकाशगतचूलिकामैं आकाशगमनका

कारण मंत्र तंत्र तपश्चरणादिका वर्णन है ॥ ४ ॥ रूपगताचूलिकामैं सिंह हस्ती तुरंग मनुष्य वृक्ष हरिण शशा बलधि व्याघ्रादिनके रूप पलटनेके कारण मंत्र तंत्र तपश्चरणका वर्णन है तथा चित्राम माटी पाषाण काष्ठकादिक इनका खोदना तथा धातुवाद रसवाद खान्यवादादिककी रचनाके अर्थ हैं ॥ ५ ॥ पंचचूलिकाके दशकोटि गुणंचासलाख छीयालीसहजार पद हैं इहां ऐसा जानना समस्त द्वादशांगके एकघाटि एकठी प्रमाण अक्षर हैं ॥ १८४४६७४४०७३७०९५५१६१५ एते अपुनरुक्त अक्षर हैं एकवार आया अक्षर दूसरां नाहिं आवै इनमैं चोसठि संयोगी तांई अक्षर हैं अर आगममैं कह्या ऐसा मध्यपदका प्रमाण सोलासैचौंतीसकोड़ि तीयासीलक्ष सात हजार आठसै अठासी १६३४८३०७८८८ अपुनरुक्त अक्षर हैं इन अक्षरनिका प्रमाणका भाग दीये एकसौबाराकोटि तीयासीलक्ष अठावनहजार पांच पद आये तिनमैं समस्त द्वादशांग है अर अवशेष अक्षर आठकोटि एकलक्ष आठहजार एकसो पचेतरि आक रहे ॥ ८०१०८१७५ इनि अक्षरनिका पूर्ण एक पद होय नाहीं तातैं इनकूं अंगबाह्य कह्या तिन अक्षरनिका सामायिकादि चौदहप्रकीर्णक हैं सामायिक नाम प्रकीर्णकमैं मिथ्यात्व कपायादिकके क्लेशका अभावरूप नाम स्थापना द्रव्य क्षेत्रकाल भावके भेदतैं छहभेदरूप सामायिकका वर्णन है ॥ १ ॥ बहुरि चौंतीस अतिशय अष्टप्रातिहार्य परमौदारिक दिव्य देह समवसरण सभा धर्मोपदेशादिक तीर्थंकरनिका माहात्म्यका प्रकाशरूप स्तवन नाम प्रकीर्णक है ॥ २ ॥ एक तीर्थंकरके आलंबनरूप चैत्यालय प्रतिमाका स्तवनरूप प्रकीर्णक है ॥ ३ ॥ बहुरि पूर्वकृत प्रमादाजनित दोषका निराकरणके अर्थि दैवसिक, रात्रिक, पाक्षिक, चातुर्मासिक, सांवत्सरिक, ऐर्यापथिक, उत्तमार्थ ऐसे सप्त प्रकार प्रतिक्रमणका जामैं वर्णन ऐसा प्रतिक्रमण नाम प्रकीर्णक है ॥ ४ ॥ बहुरि सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र तप उपचारस्वरूप पंचप्रकार विनयका वर्णनरूप विनय नाम प्रकीर्णक है ॥ ५ ॥ बहुरि नवदेवतानिकी वंदनाके अर्थि तीनप्रदाक्षिणा चतुःशिरोनती तीनशुद्धता द्वादश आवर्त इत्यादि नित्यनैमित्तकक्रियाका जामैं वर्णन ऐसा कृतकर्म प्रकीर्णक है ॥६ ॥ बहुरि जामैं साधुका आचारके

गोचर आहारकी शुद्धताका वर्णनरूप दश वैकालिक प्रकीर्णक है ॥ ७ ॥ बहुरि च्यारनकारउपसर्ग तथा बाईसपरीषहनिके सहनेके विधान अर इनके फलका वर्णनरूप उत्तराध्ययन प्रकीर्णक है ॥ ८ ॥ बहुरि साधुके योग्य आचरणका विधान अयोग्यसेवनका प्रायश्चित्तका वर्णनरूप कल्पव्यवहार नाम प्रकीर्णक है ॥ ९ ॥ बहुरि द्रव्य क्षेत्र काल भावके आश्रय साधुकूं ये योग्य हैं ये अयोग्य हैं ऐसा विभागका वर्णनरूप कल्पाकल्प नाम प्रकीर्णक है ॥१०॥ बहुरि उत्कृष्टसंहननादिसंयुक्त द्रव्य क्षेत्र काल भावके प्रभावनैं उत्कृष्टचर्याकरि वर्तते ऐसे जिनकल्पी साधुनिके योग्य त्रिकालयोगादिआचरणका अर स्थविरकल्पनिकी दीक्षा शिक्षा गण पोषण आत्मसंस्कार सल्लेखना अर उत्कृष्टस्थानगत उत्कृष्टआराधनाका वर्णनरूप महाकल्प नाम प्रकीर्णक है ११ ॥ जामैं भवन व्यंतर ज्योतिष्क तथा कल्पवासीनिके विमाननिमैं उत्पत्तिका कारण दान पूजा तपश्चरण अकामनिर्जरा सम्यक्त्व संयमादिकका विधान तिनके उपजनेका स्थान वैभवका वर्णनरूप पुंडरीक नाम प्रकीर्णक है ॥ १२ ॥ बहुरि महर्द्धिक देवनिमैं इंद्र प्रतींद्रादिकनिमैं उत्पत्तिका कारण तपोविशेषादिक आचरणका कहनेवाला महापुंडरीक प्रकीर्णक है ॥ १३ ॥ जामैं प्रमादतैं उपज्या दोषनिका त्यागरूप निषिद्धका प्रकीर्णक है ॥ १४ ॥ जैसे द्वादशांगरूप सूत्रका ज्ञाता है सो तपका प्रभावतैं उपजै है सो आप पढै है अन्यकी बुद्धिमान शिष्यनिकूं पढावै है तिन बहुश्रुतनिकी भक्ति है सोही बहुश्रुतभक्ति है जो गुणनिमैं अनुराग करना ताकूं भक्ति कहिये है जो शास्त्रनिमैं अनुरागकरि पढै तथा शास्त्रके अर्थकूं अन्यकूं कहै जो धनकूं लगाय शास्त्रनिकों लिखावै तथा अपने हस्तकरि शास्त्र लिखै तथा हीनअधिकअक्षरकूं मात्राकूं शोधन करै तथा पढनेवालेनिकूं शास्त्र लिखाय देवै तथा व्याख्यान करै पढावै बचावनेवालेनिकी आजीविकाकी थिरताकरि शास्त्रनिके ज्ञानाभ्यासका प्रवर्तन करावै स्वाध्याय करनेकेअर्थि निराकुल स्थान देवै सो ज्ञानावरण कर्मके नाश करनेवाली बहुश्रुतिभक्ति है । बहुरि बहुमूल्य वस्त्रनिमैं पूठा लगाय पटमय डोरि करि शास्त्रनिकूं बांधै जो देखो श्रवण पठन करनेवालेनिका मनकूं रंजायमान करै सो समस्त बहुश्रुतिभक्ति है। बहुरि सुवर्णादि मनोहर घडे

भये अर पंचप्रकार रत्ननिकरि जटित सैकड़ां पुष्पनिकरि शास्त्रकी सारभूत पूजा करै सो श्रुतिभक्ति संशयादिकरहित सम्यग्ज्ञान उपजाय अनुक्रमतैं केवलज्ञान उपजावै है जो पुरुष अपने मनकूं इंद्रियनके विषयनतैं रोकि अर वारंवार श्रुतदेवताका गुण स्मरण करके भली विधिसूं वनाया पवित्र अर्घ श्रुतदेवताका उतारै है सो समस्तश्रुतका पारगामी होय केवलज्ञान उपजाय निर्वाणकूं प्राप्त होय है। ऐसे बहुश्रुतिभक्ति नाम बारमी भावना वर्णन करी सो निरंतर भावो ॥ १२ ॥

अब प्रवचनभक्ति नाम तेरमी भावनाकूं वर्णन करैं हैं। प्रवचन नाम जिनेन्द्र सर्वज्ञ वीतरागकरि प्ररूपण किया आगमका है। जिसमैं षट्द्रव्यनिका पंचास्तिकायका सप्ततत्त्वनिका नवपदार्थनिका वर्णन है अर कर्मनिकी प्रकृतीनिका नाश करनेका वर्णन सो आगम है जाका प्रदेश बहुत होय ताकी अस्तिकाय संज्ञा है। अर गुणपर्यायनिकूं निरंतर प्राप्त होय तातैं द्रव्यसंज्ञा है वस्तुपनाकरि निश्चयकरिये तातैं पदार्थसंज्ञा है स्वभावरूपपनातैं तत्त्वसंज्ञा है सो इनकी विशेष कथनी आगें प्रकरण पाय कहसी। जैसैं अंधकारसंयुक्त महलमैं दीपक हस्तमैं लेकरि समस्तपदार्थ देखिये है तैसैं त्रैलोक्यरूप मंदिरमैं प्रवचनरूप दीपककरि सूक्ष्म स्थूल मूर्तीक अमूर्तीक पदार्थ देखिये है। प्रवचनरूप ही नेत्रनिकरि मुनीश्वर चेतनादि गुणनिके धारक समस्तद्रव्यनिका अवलोकन करैं जिनेन्द्रके परमागमकूं योग्यकालमैं बहुत विनयतैं पढ़िये सो प्रवचनभक्ति है कैसाक हैं प्रवचन जामैं षट्द्रव्य सप्ततत्त्व नवपदार्थनिका भेद समस्तगुणपर्यायनिका वर्णन है जामें भूतकाल अनंत भया अर भविष्यत अनंत होयगा अर वर्त्तमान तिनका स्वरूप वर्णन है। जामें अधोलोककी सप्तपृथ्वी अर नारकीनिका बसनेका उत्पत्ति होनेका स्थाननिकूं अर आयु काय वेदना गत्यादिक समस्तका अर भवनवासी देवनिका सातकरोड़ वहत्तरलाख भवननिका अर तिनका आयु काय विभव विक्रिया भोगादिकनिका अधोलोकमैं वर्णन किया है। जामैं मध्यलोकसंबंधी असंख्यात द्वीप समुद्रनिका अर तिनमैं मेरु कुलाचल नदी द्रहादिकनिका अर कर्मभूमिके विदेहादिक क्षेत्रनिका अर भोगभूमिका अर छिनवै अंतरद्वीपसंबंधी मनुष्यनिका अर कर्मभूमि भोगभूमिके मनुष्यनिका कर्त-

व्यका अर आयु काय सुख दुःखादिकनिका अर तिर्यंचानिका व्यंतरनिके निवास विभव परिवार आयु आयु काय सामर्थ्य विक्रियाका वर्णन है। तथा मध्यलोकमैं ज्योतिष्कदेव हैं तिनके विमान विभव परिवार आयु कायादिकका तथा सूर्य चंद्रमा ग्रह नक्षत्रनिका च्यारक्षेत्रगत संयोगादिकका वर्णन है। बहुरि उर्द्ध्वलोकके त्रेसठ पटलनिका स्वर्गके अहमिन्द्रके पटलनिका इंद्रादिकदेवनिका विभव परिवार आयु काय शक्ति गति सुखादिकका वर्णन है। ऐसैं सर्वज्ञ करि प्रत्यक्ष देख्या। त्रिलोकवर्ती समस्त द्रव्यनिके उत्पाद व्यय ध्रौव्यपना समस्त प्रवचनमैं वर्णन किया है। बहुरि कर्मनिका प्रकृतिनिका बंध होनेका उदयका सत्वका संक्रमणादिकनिका समस्त वर्णन आगममैं है। बहुरि संसारतैं उद्धार करनेवाला रत्नत्रयका स्वरूप प्राप्त होनेका उपाय परमागमहीमैं है बहुरि गृहस्थपणामैं श्रावकधर्मका जगन्य मध्यम उत्कृष्ट चर्याका तथा श्रावकनिके व्रत संयमादिक व्यवहार परमार्थरूप प्रवृत्तिका वर्णन प्रवचनतैं ही जानिये है बहुरि गृहका त्यागी मुनिनिके महाव्रतादि अठ्ठाईस मूलगुण अर चौरासीलाख उत्तरगुण अर स्वाध्याय ध्यान आहार विहार सामायिकादि चारित्र चर्याका धर्मध्यान शुक्लध्यानादिकका सल्लेखनामरणका समस्तचर्याका वर्णन प्रवचनमैं है। बहुरि चौदह गुणस्थाननिका स्वरूप तथा चौदह जीवसमासनिका अर चौदह मार्गणनिका वर्णन प्रवचनतैं जानिये है तथा जीवनिके एकसौ साढ़ानिन्यानवैं लक्ष कुलकोड़ अर चौरासीलाख जातिका योनिस्थान प्रवचनहीतैं जानिये है। तथा च्यार अनुयोग च्यार शिक्षाव्रत तीनगुणव्रत आगमतैंही जानिये है। तथा च्यार गतिनिका भेद अर सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रका स्वरूप भगवानका प्ररूप्या आगमहीतैं जानिये है। बहुरि द्वादशभावना अर द्वादशतप अर द्वादश अंग अर चौदहपूर्व चौदहप्रकीर्णकनिका स्वरूप प्रवचनहीतैं जानिये है। बहुरि उत्सर्पिणी अवसर्पिणी कालकी फिराणि अर यामैं छह छह भेदरूप कालमैं पदार्थकी परणतिका भेदनिका स्वरूप आगमतैं जानिये है। बहुरि कुलकर तिर्थंकर चक्रधर बलदेव वासुदेव प्रतिवासुदेव इत्यादिकनिकी उत्पत्ति प्रवृत्ति धर्म तीर्थका प्रवर्तन चक्रीका साम्राज्य वासुदेवादिकनिके विभव परिवार ऐश्वर्यादिक आगम-

हीतैं जानिये है। बहुरि जीवादिक द्रव्यनिका प्रभाव आगमहीतैं जानिये है जातैं आगमकूं भक्तिपूर्वक सेवनाविना मनुष्यजन्ममैं हू पशू समान है भगवान सर्वज्ञ वीतराग समस्त लोकअलोककूं अनंतानंत भूत भविष्यत वर्तमान कालवर्ती पर्यायनिकरि संयुक्त एकसमयमैं युगपत् क्रमरहित हस्तकी रेखावात प्रत्यक्ष जान्या देख्या ताकरि प्ररूपण किया स्वरूपकूं सप्तऋद्धिच्यार ज्ञानधारि गणधरदेव द्वादशांगरूप रचना प्रगट करी। इहां ऐसा विशेष जानना जो देवाधिदेव परमपूज्य धर्मतीर्थके प्रवर्तन करनेवाले अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतवीर्य अनंतसुखरूप अंतरंगलक्ष्मी अर समवसरणादि बहिरंगलक्ष्मीकरि मंडित अर इंद्रादिक असंख्यात देवनिके समूह करि वंदनीक चौतीसअतिशय अष्टप्रातिहार्यादि अनुपम ऋद्धिकरि सहित अर क्षुधा तृषादि अष्टादशदोषरहित समस्तजीवनिका परमोपकारक अर लोकअलोकके अनंतगुण पर्यायनिका क्रमरहित युगपत् ज्ञानका धारक अर अनंतशक्तिका धारक संसारमैं डूबते प्राणीनिकूं हस्तावलंबन देनेवाला समस्त जीवनिका दयालु परमात्मा परमेश्वर परब्रह्म परमेष्ठी स्वयंभू शिव अजर अमर अरहंतादि नामकरि विख्यात अशरण प्राणिनिकूं परम शरण अंतका परमौदारिक देहमैं तिष्ठता गणधरादिक मुनीश्वरनिकरि वंदनीक है चरण जिनका अर कंठ तालुवो ओष्ठ जिह्वादिक चलनहलनरहित इच्छाविना अनेक प्राणीनिका पुण्यके प्रभावतैं इपज्या अर आर्य अनार्य समस्त देशके प्राणीनिका ग्रहणमैं आवता समस्त पापका घातक दिव्यध्वनिकरि भव्य जीवनिका मोह अंधकारकूं नष्ट करता चौसठ चमरानिकरि वीज्यमान छत्रत्रयादि प्रातिहार्यके धारक रत्नमयसिंहासन अर च्यार अंगुल अंतरीक्ष विराजमान भगवान सकलपूज्य परमभट्टारक श्रीवर्धमानदेवाधिदेव मोक्षमार्गके प्रकाशनेकेअर्थि समस्तपदार्थनिका स्वरूप सातिशय दिव्यध्वनिकरि प्रगट किया तिस अवसरमैं निकटवर्ती निर्ग्रंथ ऋषीश्वरनिकरी वंदनीक सप्तऋद्धि समृद्धि च्यारि ज्ञानके धारक श्रीगौतम नाम गणधरदेव कोष्ठबुद्धि आदिक ऋद्धिके प्रभावतैं भगवानभाषित अर्थकूं नाहीं विस्मरण होता भगवानभाषित अर्थकूं धारणकरि द्वादशांगरूप रचना रची जब चतुर्थ कालका

तीनवर्ष साढ़ाआठ महीना बाकी रह्या तदि श्रीवर्धमानस्वामी निर्वाण गये पाछै गौतम स्वामी, सुधर्माचार्य, जंबूस्वामी ए तीन केवली बासठवर्ष पर्यंत केवलज्ञानकरि समस्त प्ररूपणा करी। पाछै केवलज्ञानका अभाव भया। ता पाछै अनुक्रमकरि विष्णु, नंदिमित्र, अपराजित, गोवर्धन, भद्रबाहु ए पांच मुनि द्वादशांगके धारक श्रुतकेवली भये तिनका एकसौ वर्षका अवसर क्रमतैं भया तिनके अवसरमैं भगवान केवलीतुल्य पदार्थनिका ज्ञान अर प्ररूपणा रही। बहुरि विशाखाचार्य, प्रोष्ठिलाचार्य, क्षत्रिय, जयसेन, नागसेन, सिद्धार्थ, धृतिषेण, विजय, बुद्धिमान, गंगदेव, धर्मसेन ए दश पूर्वके धारक एकादश पास निर्ग्रंथ मुनीश्वर अनुक्रमतैं एकसो तीयासी वर्षमैं भये ते हू यथावत प्ररूपणा करी। बहुरि नक्षत्र, जयपाल, पांडुनाम, ध्रुवसेन, कंसाचार्य ए पंच महा मुनि एकादशांग विद्याका पारगामी अनुक्रमतैं दोयसौवीस वर्षमैं भये ते हू यथावत प्ररूपणा करी। बहुरि सुभद्र, यशोभद्र, भद्रबाहु, महायश, लोहाचार्य ए पंच महामुनि एक प्रथमअंगका पारगामी एकसौअठारा वर्षमैं अनुक्रमतैं भये। ऐसैं भगवान वीरजिनेन्द्रकूं निर्वाण गये पाछै छहसौ तियासी वर्ष पर्यंत अंगका ज्ञान रह्या पाछै ऐसे कालके निमित्ततैं बुद्धिवीर्यादिककी मंदता होते श्रीकुंदकुंदादि अनेकमुनि निर्ग्रंथ वीतरागी अंगके वस्तुनिका ज्ञानी होते भये तथा उमास्वामी भये ऐसे पापतैं भयभीत ज्ञानविज्ञानसंपन्न परमसंजमगुणमंडित गुरुनिकी पारिपाटीतैं श्रुतका अव्युच्छिन्न अर्थके धारक वीतरागीनिकी परंपरा चली आई तिनमैं श्रीकुंदकुंदस्वामी समयसार प्रवचनसार पंचास्तिकाय रयणसार अष्टपाहुडकूं आदि लेय अनेकग्रंथ रचे ते अवार प्रत्यक्ष वाचन पढ़नेमैं आवैं हैं। इन ग्रंथनिका जो विनयपूर्वक आराधन सो प्रवचनभक्ति है। बहुरि दशअध्यायरूप तत्त्वार्थसूत्र श्रीउमास्वामी रच्या तिस तत्त्वार्थसूत्र ऊपरि सर्वार्थसिद्धि नाम टीका पूज्यपादस्वामी रची है। अर तत्त्वार्थसूत्रऊपरि ही राजवार्तिक सोलहहजार श्लोकनिमैं श्रीअकलंकदेव रच्या अर श्लोकवार्तिक वीसहजार श्लोकनिमैं विद्यानंदिस्वामी रच्या अर गंधहस्ति महाभाष्य चौरासीहजार श्लोकनिमैं समंतभद्रस्वामी बड़ी टीका रची सो अवार इस अवसरमैं

मिले है नाहीं अर इस गंधहस्तिमहाभाष्यको आदि मंगलाचरण एकसौ पन्द्रा श्लोकनिमैं देवागमस्तोत्र किया ताकी आठसौ श्लोकनमैं टीका अष्टशती तो अकलंकदेव रची अर देवागमअष्टशतीऊपरि आप्तमीमांसा नामा जाकूं अष्टसहस्री कहिये सो आठहजार श्लोकनिमैं विद्यानंदिजी रची तिस अष्टसहस्रीउपरि सोलहहजार टिप्पण है अर विद्यानंदिस्वामीकृत आप्तकी परीक्षारूप तीनहजार श्लोकनिमैं आप्तपरीक्षा नाम ग्रंथ है तथा परीक्षामुख माणिक्यनंदि रच्या अर याकी बड़ी टीका प्रभाचंद्र आचार्य प्रमेयकमलमार्तंड बाराहजार श्लोकनिमैं रची अर छोटीटीका प्रमेयचंद्रिका अनंतवीर्य नाम आचार्य रची। अर अकलंकदेवकृत लघुत्रयीऊपरि न्यायकुमुदचंद्रोदय सोलाहजार श्लोकनिमैं प्रभाचंद्र नाम आचार्य रच्या तथा औरहू न्यायके केई ग्रंथ प्रमाणपरीक्षा प्रमाणनिर्णय प्रमाणमीमांसा तथा बालावबोधन्यायदीपिका इत्यादिक जिनधर्मके स्तंभ द्रव्यनिका प्रमाणकरि निर्णय करते अनेकांतका भर्या हुआ द्रव्यानुयोगग्रंथ जयवंते प्रवर्तै हैं अर करणानुयोगका गोमटसार लब्धिसार क्षपणासार त्रिलोकसारादि अनेक ग्रंथ हैं। तथा चरणानुयोगके मूलाचार आचारसार रत्नकरंडश्रावकाचार भगवतीआराधना स्वामिकार्तिकेयानुप्रेक्षा आत्मानुशासन पद्मनंदिपचीसी इत्यादिक अनेक ग्रंथ हैं तथा जैनेन्द्रव्याकरण अनेकांतका भर्या है तथा प्रथमानुयोगके जिनसेनाचार्यकृत आदिपुराण तथा गुणभद्राचार्यकृत उत्तरपुराण इत्यादिक जिनेन्द्रके परमागमके अनुसार उपदेशीग्रंथ तथा पुराण चरित्र आचारके अनेक ग्रंथ हैं तिनकूं बड़ीभक्तितैं पठन करना तथा श्रवण करना तथा व्याख्यान करना तथा वंदना करना लिखना लिखावना शोभना सो समस्त प्रवचनभक्ति है मेरे शास्त्रका अभ्यासमैं जो दिन जाय सो दिन धन्य है परमागमका अभ्यासविना हमारे जो काल जाय सो वृथा है। स्वाध्याय विना शुभध्यान नाहीं होय स्वाध्यायविना पापसूं नाहीं छूटै कषायनिकी मंदता नाहीं होय शास्त्रका सेवन विना संसारदेहभोगनितैं विरागता नाहीं उपजै है समस्त व्यवहारकी उज्ज्वलता परमार्थका विचार आगमका सेवनहीतैं होय है श्रुतका सेवनतैं जगतमैं मान्यता उच्चता उज्ज्वलयश आदरसत्कारकूं प्राप्त होय

है सम्यग्ज्ञान ही परमबांधव है उत्कृष्टधन है परममित्र है सम्यग्ज्ञान ही अविनाशी धन है स्वदेशमैं परदेशमैं सुखअवस्थामैं दुखमैं आपदामैं संपदामैं परमशरणभूत सम्यग्ज्ञान ही है स्वाधीन अविनाशी धन ज्ञान ही है यातैं शास्त्रनिके अर्थहीका सेवन करना अपना आत्माकूं नित्य ज्ञानदान करो अपना संतानकूं तथा अन्य शिष्यनिकूं ज्ञानदान ही करो। ज्ञानदान देने समान कोटिधनका दान नाहीं है धन तो मद उपजावै है विषयनिमैं उरझावै दुर्ध्यान करै संसाररूप अंधकूपमैं डुबोवै तातैं ज्ञानदान समान दान नाहीं। एक श्लोक अर्धश्लोक एकपद मात्राहूका जो नित्य अभ्यास करै तो शास्त्रार्थका परिगामी हो जाय। विद्या है सो परमदेवता है जो माता पिता ज्ञानाभ्यास करावैं हैं ते कोट्यां धन दिया। जे सम्यग्ज्ञानके दाता गुरु हैं तिनका उपकारसमान त्रैलोक्यमैं कोऊ उपकारक नाहीं अर ज्ञानके देनेवाला गुरुका उपकारकूं लोपै हैं तिससमान कृतघ्नी नाहीं पापी नाहीं। ज्ञानका अभ्यासविना व्यवहार परमार्थ दोउनिमैं मूढ हैं यातैं प्रवचनभक्तिही परमकल्याण है। प्रवचनका सेवनविना मनुष्य पशुसमान है। या प्रवचनभक्ति हजारां दोषनिका नाश करनेवाली है याका भक्तिपूर्वक अर्घ उतारण करो याहीतैं सम्यग्दर्शनकी उज्ज्वलता होय है। ऐसैं प्रवचनभक्ति नामा तेरमी भावना वर्णन करी ॥ १३ ॥

अथ आवश्यकापरिहाणि नाम चौदमी भावना वर्णन करैं हैं। अवश्य करनेयोग्य होय ताकूं आवश्यक कहिये है। आवश्यकनिकी जो हानि नाहीं करनेका चिंतवन सो आवश्यकापरिहाणि नाम भावना है। अथवा इंद्रियनिके वश नाहीं सो अवश्य कहिये अवश्य जे मुनि तिनकी जो क्रिया सो आवश्यक है आवश्यककी हानि नाहीं करना सो आवश्यकापरिहाणि कहिये ते आवश्यक छहप्रकार हैं। सामायिक, स्तव, वंदना, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय, कायोत्सर्ग ऐ छह आवश्यक हैं सो कहिये है। जो देहतैं भिन्न ज्ञानमय ही जाके देह ऐसा परमात्मस्वरूप कर्मरहित चैतन्यमात्र शुद्धजीवकूं एकाग्रकरि ध्यावता मुनि है सो सर्वोत्कृष्ट निर्वाणकूं प्राप्त होय है अर जो विकल्परहित शुद्धआत्माके गुणनिमैं आपका मन नाहीं तिष्ठै तो तपस्वीमुनि षट् आवश्यकक्रिया हैं तिनको पुष्ट करो अंगीकार करो अर आवते अशुभ कर्मके आस्र-

वकूं निराकरण करो टालो प्रथम तो सुंदर असुंदर वस्तुमैं तथा शुभ अशुभ कर्मके उदयमैं रागद्वेष मति करो तथा आहार वस्तिकादिकनिका लाभमें वा अलाभमैं समभाव करो जातैं स्तुतिमैं निंदामैं आदरमैं अनादरमैं पाषाणमैं रत्नमैं जीवनमैं मरणमैं वैरीमैं मित्रमैं सुखमैं दुखमैं स्मशानमैं महलमैं रागद्वेषरहित परिणाम होना सो समभाव है। जातैं साम्यभावके धारक हैं तैं बाह्य पुद्गलनिकूं अचेतन अर आपतैं भिन्न अर अपने आत्मस्वभावमैं हानि वृद्धिके अकर्त्ता जानि रागद्वेष छांडे है अर आपकूं शुद्ध ज्ञाताद्रष्टारूप अनुभव करता रागद्वेषादिविकार रहित तिष्ठै है ताकै साम्यभाव होय है सोही सामायिक है बहुरि भगवान जिनेंद्रके अनेकनामनिकरि स्तवन करना सो स्तवन नाम आवश्यक है। जो कर्मरूप वैरीकूं आप जीते तातैं जिन हो अर अपनेस्वरूपमैं आपकरि आप तिष्ठे हो तातैं स्वयंभू हो अर केवलज्ञानरूप नेत्रकरि त्रिकालवर्ती पदार्थनिकूं जानो हो तातैं त्रिलोचन हो अर आप मोहरूप अन्धासुरकूं मारया तातैं अंधकांतक हो आप घातियाकर्म रूप अर्धवैरीनिका नाशकरकेही अद्वितीय ईश्वरपना पाया तातैं अर्धनारीश्वर हो आप शिवपद जो निर्वाणपद तामैं बसे तातैं आप शिव हो पापरूप वैरीका संहार करो हो तातैं आप हर हो लोकमैं सुखका कर्त्ता तातैं आप शंकर हो शं जो परमआनंदरूप सुख तामैं उपजे तातैं संभव हो वृक्ष जो धर्म ताकरि दिपो हो तातैं आप वृषभ हो अर जगतके सकल प्राणीनिमैं गुणनिकरि बडे तातैं जगज्ज्येष्ठ हो क जो सुख ताकरि समस्तजीवनकी पालना करि तातैं आप कपाली हो केवलज्ञानकरि समस्त लोकअलोकमैं व्याप्त हो रहे तातैं आप विष्णु हो अर जन्मजरामरणरूप त्रिपुरकूं मारया तातैं आप त्रिपुरांतक हो ऐसैं एकहजार आठ नामकरि आपका स्तवन इंद्र किया है। अर गुणनिकी अपेक्षा आपका अनंत नाम है। ऐसैं भावनिमैं गुणचिंतवनकरि जो चौवीस तीर्थंकरनिका स्तवन करै है सो स्तवन नाम आवश्यक है ॥ २ ॥ बहुरि चतुर्विंशति तीर्थंकरनिमैंतै एक तीर्थंकरकी वा अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्वसाधुनमैंतैं एककूं मुख्यकरि स्तुति करना सो वंदना आवश्यक है। ॥ ३ ॥ बहुरि जो समस्त दिनमैं प्रमादके वश होय तथा कषायनिके वश होय

वा विषयनिमैं रागद्वेषी होय कोऊ एकेन्द्रीयादिक जीवनिका घात किया तथा अनर्थक प्रवर्त्तन किया वा सदोषभोजन किया वा किसी जीवका प्राण पीड़ित किया तथा कर्कश कठोर मिथ्यावचन कहा वा किसीकी निंदा अपवाद किया वा अपनी प्रशंसा करी वा स्त्रीकथा भोजनकथा देशकथा राजकथा करी तथा अदत्तधन ग्रहण किया वा परकाधनमैं लालसा करी तथा परकी स्त्रीमें राग किया तथा धनपरिग्रहादिकमैं लालसा करी ते समस्त पाप खोटे किये बंधके कारण किये, अब ऐसा पापरूप परिणामनितैं भगवान पंच परमगुरू हमारी रक्षा करहु अब ए परिणाम मिथ्या होहु पंच परमेष्ठीके प्रसादतैं हमारे पापरूप परिणाम मति होहु ऐसैं भावनिकी शुद्धतावास्ते कायोत्सर्गकरि पंच नमस्कारके नव जाप्य करे ऐसे समस्तदिनकी प्रवृत्तिकूं संध्याकाल चिंतवनकरि पापपरिणामनिकूं निंदना सो दैवसिक प्रतिक्रमण है। अर रात्रिसंबंधी पापका दूरिकरनेके अर्थ प्रभात प्रतिक्रमण करना सो रात्रिक प्रतिक्रमण है। बहुरि मार्गमैं चालनेमैं दोष लाग्या ताकी शुद्धिका जो प्रतिक्रमण सो ऐर्यापथिक प्रतिक्रमण है एकपक्षके दोष निराकरण करनेकेअर्थ पाक्षिक प्रतिक्रमण है च्यार महीनेके दोष निराकरणकेअर्थ प्रतिक्रमण करना चतुर्मासिक प्रतिक्रमण है एक वर्षके दोष निराकरणके अर्थ सांवत्सरिक प्रतिक्रमण है समस्तपर्यायके कालका दोष निराकरणकेअर्थ अंत्यसंन्यासमरणकी आदिमैं प्रतिक्रमण है सो उत्तमार्थप्रतिक्रमण है ऐसैं सप्त प्रकार प्रतिक्रमण है तिनमैं गृहस्थकूं संध्या अर प्रभात तो अपना नफा टोटा अवश्य देखना योग्य है। इहां जो सौ पचास रुपयाका व्यवहार करनेवाला हू आथगनै ठिगाई जिताई देखै है तो इस मनुष्यजन्मकी एक एक घड़ी कोटिधनतैं दुर्लभ गयां पाछैं नहीं मिलै है याका विचार हू अवश्य करना जो आज मेरे परमेष्ठीका पूजनमैं स्तवनमैं केता काल गया अर स्वाध्यायमैं पंचपरमगुरूके जापमैं शास्त्रश्रवणमैं तत्त्वार्थकी चरचामैं धर्मात्मांकी वैयावृत्तिमैं केता काल गया अर घरके आरंभमैं कषायमैं तथा विकथा करनेमैं विसंवादमैं भोजनादिकमैं वा अन्य इंद्रियनिके विषयनिमैं प्रमादमैं निद्रामैं शरीरके संस्कारमैं हिंसादिक पंच पापनिमैं केता काल गया है ऐसा चिंत-

वनकरि पापमैं बहुत प्रवृत्ति भई होय तो आपकूं धिक्कार देय पापबंधके कारणनिकूं घटाय धर्मकार्यमैं आत्माकूं युक्त करना योग्य है पंचमकालमैं प्रतिक्रमण ही परमागममें धर्म कह्या है। आत्माका हितअहितका विचारमैं निरंतर उद्यमी रहना योग्य है। यो प्रतिक्रमण आत्माकी बडी सावधानी करनेवाला है अर पूर्वले किये पापकी निर्जरा करै है ॥ ४ ॥ बहुरि आगामी कालमैं आपके आस्रवके रोकनेकेअर्थ पापनिका त्याग करना जो आगे मैं ऐसा पाप कदाहू मन वचन कायस्यों नाहीं करूंगा सो प्रत्याख्यान नाम आवश्यक सुगतिका कारण है। ॥ ५ ॥ बहुरि च्यारअंगुलके अंतराले दोऊ पग बरोबरकरि खडा रहै दोऊ हस्तनिकूं लंबायमानकरि देहस्यों ममता छांडि नासिकाका अग्रमें द्रष्टि धारि देहतैं भिन्न शुद्धआत्माकी भावना करना सो कायोत्सर्ग है। सो निश्चय पद्मासनतैं हू होय अर खड्गासनकरि हू होय दोऊनिमैं शुक्लध्यानका अवलंबनतैं सफल है ॥ ६ ॥ ए छह आवश्यक परमधर्मरूप हैं इनकूं पूजि पुष्पांजलि क्षेपि अर्घ उतारण करना योग्य है। बहुरि ए छह आवश्यक परमागममें छह छह प्रकार कह्या है। नाम स्थापना द्रव्य क्षेत्र काल भाव करि षट्प्रकार जानना। शुभ अशुभ नामकं श्रवणकरि रागद्वेष नाहीं करना सो नाम सामायिक है। कोऊ स्थापना प्रमाणादिककरि सुंदर है कोऊ प्रमाणादिकरि हीनअधिककरि असुंदर है तिनके विषै रागद्वेषका अभाव सो स्थापना सामायिक है। सुवर्ण रूपा रत्न मोती इत्यादिक अर मृत्तिका काष्ठ पाषाण कंटक क्षार भस्म धूल इत्यादिकनिमैं रागद्वेषरहित सम देखना सो द्रव्यसामायिक है। महल उपवनादि रमणीक श्मशानादिक अरमणीक क्षेत्रमैं रागद्वेष छांडना सो क्षेत्र सामायिक है हिम शिशिर वसंत ग्रीष्म वर्षा शरत् ये ऋतु अर रात्रि दिवस अर शुक्लपक्ष कृष्णपक्ष इत्यादि काल विषैं रागद्वेषका वर्जन सो काल सामायिक है। अर समस्तजीवनिके दुःख मति होहू ऐसा मैत्रीभावकरि अशुभ परिणामनिका अभाव करना सो भावसामायिक है ऐसैं छहप्रकार सामायिक कह्या। अब छहप्रकार स्तवन कहैं हैं चतुर्विंशति तीर्थंकरनिका अर्थसहित एकहजारआठ नामकरि स्तवन करना सो नामस्तवन है अर कृत्रिम अकृत्रिम अपरिमाण तीर्थंकर अरहंतनिके प्रतिबिंबनिका स्तवन सो स्थापना-

स्तवन है अर समवसरणस्थित काल देह प्रभा प्रातिहार्यादिकनिकरि स्तवन सो द्रव्यस्तवन है। अर कैलाश संमेदाचल ऊर्जयंत (गिरनार) पावापुर चंपापुरादि निर्वाणक्षेत्रनिका तथा समवसरणमैं धर्मोपदेशका क्षेत्रका स्तवन सो क्षेत्रस्तवन है। अर स्वर्गावतरण जन्म तप ज्ञान निर्वाणकल्याणकके कालका स्तवन सो कालस्तवन है अर केवलज्ञानादिअनंतचतुष्टयभावका स्तवन सो भावस्तवन है ऐसैं छहप्रकार स्तवन कह्या। ए तीर्थंकर वा सिद्ध तथा आचार्य उपाध्याय साधु इनमैं एकका नामका उच्चारण करना सो नामवंदना है। अर अरहंत सिद्ध आचार्यादिकनिमैं एकका प्रतिबिंबादिककी वंदना सो स्थापनावंदना है। तिनके शरीरकी वंदना सो द्रव्यवंदना है। अरहंत सिद्ध आचार्यादिकनिकरि व्याप्त जो क्षेत्र ताकी वंदना सो क्षेत्रवंदना है। तिन ही पंचपरमगुरुनिमैं कोऊ एककरि व्याप्त जो काल ताकी वंदना सो कालवंदना है। एक तीर्थंकरका वा सिद्धका वा आचार्यका वा उपाध्यायका वा साधुके आत्मगुणनिकूं वंदना करना सो भाववंदना है। ऐसैं छहप्रकार वंदना कही। अब छहप्रकार प्रतिक्रमण कहैं हैं। अयोग्य नामके उच्चारणमैं कृतकारितअनुमोदनारूप मनवचनकायतैं उपज्या दोषका निराकरणकेअर्थि प्रतिक्रमण करना सो नामप्रतिक्रमण है। कोऊ शुभअशुभस्थापनाका निमित्ततैं मनवचनकायतैं उपज्या दोषतैं आत्माकूं निवृत्त करना सो स्थापनाप्रतिक्रमण है। अर द्रव्य जो आहार पुस्तक औषधादिकके निमित्ततैं मनवचनकायतैं उपज्या दोषका निराकरणकेअर्थ द्रव्यप्रतिक्रमण है। क्षेत्रमैं गमनस्थानादिकके निमित्ततैं उपज्या अशुभपरिणामजनित दोषनिका निराकरणके अर्थ क्षेत्रप्रतिक्रमण है। अर दिवस रात्रि पक्ष ऋतु शीत उष्ण वर्षाकाल इनके निमित्ततैं उपज्या अतीचारका दूरकरनेकूं प्रतिक्रमण करना सो कालप्रतिक्रमण है। अर रागद्वेषादिभावनितैं उपज्या दोषके दूर करनेकूं भावप्रतिक्रमण है। बहुरि अयोग्य पापके कारण जे नाम उच्चारणकरनेका त्याग सो नामप्रत्याख्यान है अर अयोग्य मिथ्यात्वादिकके प्रवर्तावनेवाली स्थापना करनेका त्याग सो स्थापनाप्रत्याख्यान है। पापबंधका कारण सदोषद्रव्य वा तपकेनिमित्त निर्दोषद्रव्यका हू मनवचनकायकरि त्याग सो द्रव्यप्रत्याख्यान है। बहुरि असंजमका कारण क्षेत्रका त्याग सो

क्षेत्रप्रत्याख्यान है। असंजमका कारण कालका त्याग सो कालप्रत्याख्यान है। मिथ्यात्व असंजम कषायादिकनिका त्याग सो भावप्रत्याख्यान है। ऐसैं छहप्रकार प्रत्याख्यानवर्णन कीया। अब छहप्रकार कायोत्सर्गकूं कहैं हैं। पापके कारण कठोर कटुक नामादिकतैं उपज्या दोषका दूरकरनेके अर्थ कायोत्सर्ग करना सो नामकायोत्सर्ग है। पापरूप स्थापनाका द्वारकरि आया अतीचार दूरकरनेकूं कायोत्सर्ग करना सो स्थापनाकायोत्सर्ग है। सदोषद्रव्यके सेवनतैं तथा सदोष क्षेत्रकालके सेवनतैं संयोगतैं उपज्या दोष दूरकरनेकूं कायोत्सर्ग करना सो द्रव्य क्षेत्र काल कायोत्सर्ग है। मिथ्यात्व असंजमादिक भावनिकरि कीया दोष दूरकरनेकूं कायोत्सर्ग करना सो भावकायोत्सर्ग है। ऐसैं छहप्रकार छहआवश्यक वर्णन कीये। अब गृहस्थके और हू छहप्रकारके आवश्यक हैं। भगवान जिनेन्द्रका नित्य पूजन करना, निर्ग्रंथगुरुनिका सेवन स्तवन चिंतवन नित्य करना, अर जिनेन्द्रके प्ररूपे आगमका नित्य स्वाध्याय करना, इंद्रियनिकूं विषयनितैं रोकना छहकायके जीवनकी दया पालना सो संयम है, शक्तिप्रमाण नित्य तप करना, शक्ति प्रमाण नित्य दान देना ए षट्प्रकार हू आवश्यक गृहस्थकूं नित्य नियमतैं अंगीकार करना योग्य है। ऐसैं समस्तपापका नाश करनेवाली भावनिकूं उज्ज्वल करनेवाली आवश्यकनिकी हानिका अभावरूप चौदमी भावना वर्णन करी ॥ १४ ॥

अब सन्मार्गप्रभावना नाम पंद्रमीभावना वर्णन करैं हैं। इहां सन्मार्ग जो मोक्षका सत्यार्थमार्ग ताका प्रभाव प्रकट करना सो मार्गप्रभावना है। सो सन्मार्ग रत्नत्रय है रत्नत्रय आत्माका स्वभाव है याकूं मिथ्यात्व राग द्वेष काम क्रोध मान माया लोभ ए अनादितैं मलीन विपरीत करि राख्या है अब परमागमका शरण पाय मोकूं मिथ्यात्वादिक दोषनिकूं दूरिकरि रत्नत्रयस्वभावकूं उज्ज्वल करना। यो मनुष्यजन्म अर इंद्रियपूर्णता अर ज्ञानशक्ति अर परमागमका शरण अर साधर्मीनिका समागम अर रोगादिकरहितपना अर अतिक्लेशरहितजीविका इत्यादिक पुण्यरूप सामग्री पायकरकै हू जो आत्माकूं मिथ्यात्वकषायविषयादिकनैं नाहीं छुड़ाया तो अनंतानंतदुःखनिका भरया संसारसमुद्रतैं मेरा

निकसना अंतकालहूमें नाहीं होयगा जो सामग्री अबार मिली है सो अनंतकालमें हू अति दुर्लभ है अर अंतरंग वहिरंग सकलसामग्री पायकरकै हू जो आत्माका प्रभाव नाहीं प्रगट करूंगा तो अचानक काल आय समस्तसंयोग नष्ट करदेगा तातैं अब मैं रागद्वेष मोह दूरकरि जैसैं मेरा शुद्ध वीतरागस्वरूप अनुभवगोचर होय तैसैं ध्यान स्वाध्यायमैं तत्पर होना। बहुरि बाह्यप्रवृत्ति भी मेरी उज्ज्वलकरि अंत-र्गतधर्मका प्रभाव प्रगटकरि मार्गप्रभावना करनी जाकूं देखि अनेक जीवनिके हृदयमैं धर्मकी महिमा प्रवेश करिजाय। जिनेन्द्रका उत्सव ऐसा करना जाकूं देखि हजारां लोकनिका भाव जिनेन्द्रके जन्म कल्याणसमय जैसे इन्द्रादिक देव अभिषेककरि अपना जन्म सफल किया तैसैं जयजयकार शब्दकरि हजारां स्तवनका उच्चारणकरि लोक आपकूं कृतार्थ मानैं तन मन प्रफुल्लित होजाय तैसैं अभिषेककरि प्रभावना करना तथा जिनेन्द्रकी बड़ी भक्ति अर बड़ी विनय अर निश्चलध्यानकरि ऐसे पूजन करो ताकूं करते देखते अर शुद्धभक्तिके पाठ पढ़ते तथा श्रवण करते हर्षके अंकूरे प्रगट होय आनंद हृदयमैं नाहीं समावना बाहर उछलने लगजाय जिनकूं देखि मिथ्यादृष्टिनिका हू ऐसा परिणाम होजाय अहो जैनी-निकी भक्ति आश्चर्यरूप है जामैं ये निर्दोष उत्तम उज्ज्वल प्रमाणिक सामग्री अर ये उज्ज्वल सुवर्णके रूपाके तथा कांसी पीतलमय मनोहर पूजनके पात्र अर ये भक्तिके रसकरि भरे अर्थमालिन कर्णनिकूं अमृतरूप बांचने शुद्धअक्षरनिका उच्चारण अर एकाग्ररूप विनयसहित शब्दनिके अनुकूल उज्ज्वलद्रव्यका चढ़ावना अर ये परमशांतमुद्रारूप वीतरागके प्रतिबिंब प्रातिहार्यनिकरि भूषितका पूजना स्तवन करना नमस्कार करना धन्य पुरुषनिकरि ही होय है। धन्य इनकी भक्ति धन्य इनका जन्म अर धन्य इनका मनवचनकाय अर धन्य इनका धन जो निर्वांछक होय ऐसे सन्मार्गमैं लगावैं हैं। ऐसा प्रभाव व्याप्त होजाय। अर देख-नेतैं अर श्रवण करनेतैं निकटभव्यनिके आनंदके अश्रुपात झरने लगिजाय। भक्तिही संसारसमुद्रमें डूबतेनिकूं हस्तावलंबन देनेवाली है हमारे भवभवमैं जिनेन्द्रकी भक्ति ही शरण होहु ऐसा जिनेन्द्रका नित्य पूजन करना तथा अष्टाह्निक पर्वमें तथा षोडशकारण दश लक्षण रत्नत्रय पर्वमैं समस्त पापके

आरंभ छांड़ि जिनपूजन करना आनंदसहित नृत्य करना कर्णनिकूं प्रिय ऐसें वादित्र बजावना तथा स्वर ताल मूर्छनादिसहित जिनेन्द्रके गुण गावनेतैं समस्त सन्मार्ग प्रभावना है। सो जिनके हृदयमें सत्यार्थधर्म बसै है तिनके प्रभावना होय है। बहुरि जिनेंद्रके प्ररूपे च्यारअनुयोगनिके सिद्धांतनिका ऐसा व्याख्यान करना जाकूं श्रवण करनेतैं एकांतका हठ नष्ट होय अनेकांत हृदयमें रमि जाय पापनितैं कांपने लगिजाय व्यसन छूटिजाय दयारूपधर्ममें प्रवर्तन होजाय अभक्ष्यभक्षणका त्याग होजाय ऐसा व्याख्यान करना जाके श्रवण करनेतैं हजारां मनुष्यनिके कुदेव कुगुरु कुधर्मके आराधनका त्याग होयकै अर वीतराग देव दयारूपधर्म आरंभपरिग्रहरहित गुरुनिके आराधनमें दृढश्रद्धान होजाय तथा ऐसा व्याख्यान करना जो श्रवणकरि बहुत मनुष्य रात्रिभोजन अयोग्यभोजन अन्यायका विषय परधनमें रागछांड़ि व्रतनिमें शीलमें संजमभावमें संतोषभावमें लीन होय जाय। तथा ऐसा उपदेश करना जाकरि देहादिक परद्रव्यनितैं भिन्न अपने आत्माका अनुभव होना पर्यायमें आपा छूटना जीव अजीवादिक द्रव्यनिका प्रमाणनयनिक्षेपनिकरि निर्णय होय संशयरहित द्रव्यगुणपर्यायनिका सत्यार्थ स्वरूप प्रगट होजाना मिथ्या अंधकार दूर होना ऐसा आगमका व्याख्यानतैं सन्मार्गकी प्रभावना होय है। बहुरि घोर तपश्चरण करना जो कायरनिकरि नाहीं धारण कियाजाय ऐसें तपकरि प्रभावना होय है। क्योंकि विषयानुरागछांडि निर्वांछक होनेकरि आत्माका प्रभाव भी प्रगट होय है अर धर्मका मार्ग भी तपहीतैं दिपै है। यो तप ही दुर्गतिका मार्गका नष्ट करनेवाला है। तप विना कामादिकविषय ज्ञानकूं चारित्रकूं नष्टकरिदेहै तपके प्रभावतैं कामका क्षय होय रसनाइंद्रियकी चपलता नष्ट होय लालसाका अभाव होय है यातैं रत्नत्रयकी प्रभावना तपहीतैं दृढ होय है। बहुरि जिनेन्द्रका प्रतिबिंबकी प्रतिष्ठा करना जिनेन्द्रका मंदिर करावना यातैं सन्मार्गकी प्रभावना है जातैं प्रतिष्ठा करावनेकरि जहांताईं जिनबिंब रहैगा तहांताईं दर्शन स्तवन पूजनादिकरि अनेकभव्य पुण्यउपार्जन करैंगे अर जिनमंदिर करावैंगे तिन गृहस्थनिका ही धनपावन सफल होयगा। पूजन रात्रिजागरण शास्त्रनिका व्याख्यान श्रवण पठन जिनेन्द्रका स्त-

वन सामायिक प्रतिक्रमण अनशनादिकतप नृत्य गान भजन उत्सव जिनमंदिर होय तदि ही होय जिनमंदिरविना धर्मका समस्त समागम होय ही नाहीं यातैं बहुत कहा लिखिये अपना अर परका परम उपकारका मूल प्रतिष्ठा करना अर मंदिर करावना है उत्कृष्टधर्मका मार्ग तो समस्तपरिग्रहछांड़ि वीतरागता अंगीकार करना है परंतु जाके प्रत्याख्यान वा अप्रत्याख्यान नाम कषायका उपशम भया नाहीं तातैं गृहसंपदा छांड़ि जाय नाहिं अर धनसंपदा बहुत होय तो प्रथम तो जिनका आप अन्यायसूं धन लियाहोय ताके निकट जाय क्षमा ग्रहण कराय उनका धन लौटा देना बहुरि धन बहुत होय तद नवीनधन उपार्जनका त्याग करना बहुरि तीव्ररागके बधावनेवाले इंद्रियनिके विषयनिकी लालसा छांड़ि त्यागकरि संवररूप होना फिर जो धन है तामैंसूं अपने मित्र हितू पुत्री बहण भूवा बंधुजननिमैं जे निर्धन रोगी दुःखित होय तीनको वा अनाथ विधवा होय तिनको यथायोग्य देय संतोषित करना बहुरि अपने आश्रित सेवकादिक वा समीप बसनेवाले तिनको यथायोग्य संतोषित करकैं बहुरि पुत्रको स्त्रीको विभागादिक निराला करि पीछैं जो द्रव्य होय ताकूं जिनबिंबके करावनेमैं वा जिनबिंबकी प्रतिष्ठा करावनेमैं तथा जिनेन्द्रके धर्मका आधार सिद्धांत.नि के लिखावनेमैं कृपणताछांड़ि उदारमनतैं परके उपकार करनेकी बुद्धितैं धन लगावै है तिस समान कोऊ प्रभावना नाहीं है अर जे मंदिरप्रतिष्ठा तो करावैगा अर अनीतिकरि परधन राखि मेलैगा अन्यायका धनकूं ग्रहण करैगा तो ताकी समस्त प्रभावना नष्ट होजायगी तथा प्रतिष्ठा करावनेवाला मंदिर करावनेवाला खोटा वनिज व्यौहार करै तथा हिंसादिक महापापनिमैं निंद्य अयोग्य वचननिमैं तथा तीव्रलोभमैं प्रवर्ते तथा कुशीलमैं प्रवर्तै तथा अतिकृपणताकरि परिणाममैं संक्लेशरूप हुआ धनकूं खरच करै तो समस्त प्रभावना नष्ट होजाय यातैं प्रतिष्ठाका करावनेवाला मंदिर करावनेवालाकी बाह्य प्रवृत्ति भी शुद्ध होय है ताकी प्रभावना होय है तथा शिखर कलश घंटा चढ़ावनेकरि क्षुद्रघंटिका बांधने करि प्रभावना करैं तथा मंदिरनिमैं चंदवा घंटा सिंहासनादि उत्तमउपकरण चढ़ावनेकरि अर स्वाध्यायमैं

प्रवृत्ति इत्यादिकरि प्रभावना दुःखका नाश करनेवाली होय है प्रभावना शुद्ध आचरणकरि होय है यातैं जिनवचनका श्रद्धानी होय सो धर्मकी प्रभावना ही करै जैनीनिका गाढ़ देखि मिथ्यादृष्टीनिके हृदयमैं हू बड़ी महिमा प्रगट दीखै जैनीनिका धर्म जो प्राण जातैं हू अभक्षण नाहीं करैं हैं तीव्र रोगवेदना आवतैं हू रात्रिमैं औषधि जलादिकका पान नाहीं करैं हैं धनअभिमानादिक नष्ट होतैं हू असत्यवचनादि नाहीं बोलैं हैं महाआपदा आवतैं हू परधनमैं चित्त नाहीं चलावै हैं। अपना प्राण जातैं हू अन्यजीवका घात नाहीं करैं हैं तथा शीलकी दृढ़ता परिग्रहपरिमाणता परमसंतोष धारण करनेतैं आत्मप्रभावना होय अर मार्गकी प्रभावना हू होय तातैं समस्तधन जातैं हू अर प्राणजाते हू अपने निमित्ततैं धर्मकी निंदा हास्य कदाचित नाहीं करावै ताकै सन्मार्गप्रभावना अंग होय है। इस प्रभावनाकी महिमा कोटजिह्वानितैं वर्णन करनेको कोऊ समर्थ नाहीं है यातैं भो भव्यजन हो त्रिलोकमैं पूज्य जो प्रभावनाअंग ताकूं दृढ धारणकरि याहीकूं भक्तिकरि पूजो याका महाअर्घ उतारण करो जो प्रभावनाकूं दृढ़ धारण करै है सो इंद्रादिक देवनिकरि पूज्य तीर्थंकर होय हैं ऐसैं सन्मार्गप्रभावना नामा पंद्रहमी भावना वर्णन करी ॥ १५ ॥

अब प्रवचनवत्सलत्व नाम सोलमी भावना वर्णन करैं हैं। प्रवचन जो देव गुरु धर्म इनिमैं जो वात्सल्य कहिये प्रीतिभाव सो प्रवचनवत्सलत्व नाम कहिये है। जे चारित्रगुणयुक्त हैं शीलके धारक हैं परम साम्यभावकरि सहित बाईसपरीसहनिके सहनेवाले देहमैं निर्ममत्व समस्तविषय वांछारहित आत्महितमैं उद्यमी परके उपकार करनेमैं सावधान ऐसे साधुजननिके गुणनिमैं प्रीतिरूपपरिणाम सो वात्सल्य है तथा व्रतनिके धारक अर पापतैं भयभीत न्यायमार्गी धर्ममैं अनुरागके धारक मंदकषायी संतोषी ऐसे श्रावक तथा श्राविका तिनके गुणनिमैं तिनकी संगतिमैं अनुराग धारणकरना सो वात्सल्य है तथा जे स्त्रीपर्यायमैं व्रतनिकी हदकूं प्राप्त भये अर समस्त गृहादिक परिग्रह छांड़ि कुटंबका ममत्व तजि देहमैं निर्ममत्वता धरि पंच इंद्रियनिके विषय त्यागि एकवस्त्रमात्र परिग्रहकूं अवलंबनकरि भूमि-

शयन क्षुधा तृषा शीतउष्णादि परिसहनिके सहनेकरि संयमसहित ध्यान स्वाध्याय सामायिकादिक आवश्यकनिकरि युक्त अर्जिकाकी दीक्षा ग्रहणकरि संयमसहित काल व्यतीत करैं हैं तिनके गुणनिमैं अनुराग सो वात्सल्यभाव है तथा मुनीश्वरनिकी ज्यों वनमैं निवास करने बाईस परीसह सहते उत्तम क्षमादि धर्मके धारक देहमैं निर्ममत्व आपके निमित्त किया औषध अन्न पानादि नाहीं ग्रहण करते एकवस्त्र कोपीनाविना समस्तपरिग्रहके त्यागी उत्तमश्रावकनिके गुणनिमैं अनुराग सो वात्सल्य है तथा देव गुरु धर्मका सत्यार्थ स्वरूपकूं जानि दृढश्रद्धानी धर्ममैं रुचिके धारक अव्रतसम्यग्दृष्टीमैं वात्सल्यता करहु। इस संसारमैं अपने स्त्री पुत्र कुटुंवादिकनिमैं तथा देहमैं इंद्रियनिके विषयनिमैं विपर्यानके साधकनिमैं अनादिनैं अतिअनुरागी होय याहीके अर्थि कटैं हैं मरैं हैं अन्यकुं मारैं हैं ऐसा कोऊ मोहका अद्भुत माहात्म्य है। ते धन्यपुरुष हैं जे सम्यग्ज्ञानतैं मोहकूं नष्टकरि आत्माके गुणनिमैं वात्सल्यता करैं हैं संसारी तो धनकी लालसाकरि अति आकुल भए धर्ममैं वात्सल्यता त्यागैं हैं अर संसारीनिकै धन वधै है तदि अति तृष्णा वधै है। समस्त धर्मका मार्ग भूलजाय धर्मात्मानिमैं दूरहीतैं वात्सल्यता त्यागैं है रात्रिदिन धनसंपदाके वधावनेमैं ऐसा अनुराग वधै है लाखनिका धन होजाय तो कोटिनिमैं वांछा करना आरंभपरिग्रहकूं वधावता पापनिमैं प्रवीणता वधावता धर्ममैंवात्सल्य नियमतैं छांडै हैं जहां दानादिकनिमैं परोपकारमैं धन लगावता दीखै तहां दूरहीतैं टलि निकलै है अर बहुआरंभ बहुपरिग्रह अति तृष्णातैं समीप आया नरकका वास ताकूं नाहीं दीखै है तामैं पंचमकालका धनाढ्य जो पूर्वैं मिथ्याधर्म कुपात्रदान कुदाननिमैं राचि ऐसा कर्म बांधि आया है सो नरक तिर्यंचगतिकी परिपाटी असंख्यातकाल अनंतकालपर्यंत नाहीं छूटै उनका तन मन वचन धन धर्मकार्यमैं नाहीं लागै है। रात्रिदिन तृष्णा अर आरंभकरि क्लेशित रहै तिनकै धर्मात्मामैं अर धर्मके धारणमैं कदाचित वात्सल्यता नाहीं होय है अर धनरहित धर्मात्मा हू होय ताकूं नीचा मानै है तातैं भो आत्महितके वांछक हो धनसंपदाकूं महामदकी उपजावनेवाली जानि अर देहकूं अस्थिर दुःखदायी जानि कुटुंवकूं महाबंधन मानि

इनसूं प्रीति छांड़ि अपने आतमासूं वात्सल्य करौ। धर्मात्मामें व्रतीनिमें स्वाध्यायमें जिनपूजनमें वात्सल्यता करो जे सम्यक्चारित्ररूप आभरण करि भूषितमापूजन हैं तिनको स्तवन करै है गौरव करै है। तिनके वात्सल्यनाम गुण है सो सुगतिकूं प्राप्त करै है कुगतिका नाश करै है वात्सल्यगुणके प्रभाव करके ही समस्त द्वादशांगविद्या सिद्ध होय है जातैं सिद्धांतसूत्रमें अर सिद्धांतका उपदेश करनेवाला उपाध्यायमें सांची भक्तिके प्रभावतैं श्रुतज्ञानावरणकर्मका रस सूकिजाय है तदि सकलविद्या सिद्ध होय हैं। वात्सल्यगुणके धारककूं देव नमस्कार करै हैं अर वात्सल्य करके ही अठारह प्रकार बुद्धि ऋद्धि अर आकाशगामनी क्रिया ऋद्धि दोयप्रकार चारणऋद्धि अनेकप्रकार अर अष्टप्रकार विक्रियाऋद्धि तीनप्रकार बलऋद्धि सप्तप्रकार तपऋद्धि छहप्रकार रसऋद्धि छहप्रकार औषधऋद्धि दोयप्रकार क्षेत्रऋद्धि इत्यादिक अनेकशक्ति प्रगट होय हैं। इहां ऋद्धिनिका स्वरूप कहिये तो ग्रन्थ बधिजाय तातैं नाहीं लिख्या है अर्थप्रकाशिकादिनिमें लिख्या है तहांतैं जानना। वात्सल्य करके ही मंदबुद्धीनिकै हू मतिज्ञान श्रुतज्ञान विस्तीर्ण होय है वात्सल्यके प्रभावतैं पापका प्रवेश नाहीं होय है वात्सल्य करके तप हू भूषित होय है तप मैं उत्साहविना तप निरर्थक है। यो जिनेन्द्रको मार्ग वात्सल्यकरिही शोभाकूं प्राप्त होय है। वात्सल्यकरि ही शुभ ध्यान शुद्धिकूं प्राप्त होय है वात्सल्यतैं ही सम्यग्दर्शन निर्दोष होय है। वात्सल्य करके ही दानादिया कृतार्थ होय है। पात्रमें प्रीतिविना तथा देनेमें प्रीतिविना दान निंदाका कारण है जिनवाणीमें वात्सल्य जाकै होयगा ताहीकै प्रशंसा योग्य सांचा अर्थ उद्योतरूप होयगा जाकै जिनवाणीमें वात्सल्य नाहीं विनय नाहीं ताकूं यथावत अर्थ नाहीं दीसैगा विपरीत ग्रहण करैगा इस मनुष्यजन्मका मंडन वात्सल्य ही है वात्सल्यरहित बहुत मनोज्ञ आभरण वस्त्र धारण करता हू पदपदमें निंद्य होय है। अर इसलोकका कार्य जो यशको उपार्जन धर्मको उपार्जन धनको उपार्जन सो वात्सल्यहीनैं होय है। अर परलोक जो स्वर्गलोकमें महर्द्धिक देवपना सो हू वात्सल्यहीतैं होय है वात्सल्यविना इसलोकका समस्त कार्य नष्ट होजाय अर परलोकमैं देवादिगति नाहीं पावै है। बहुरि अरहंतदेव निर्ग्रंथगुरु

स्याद्वादरूप परमागमदयारूपधर्ममैं वात्सल्य है सो संसारपरिभ्रमणका नाशकरि निर्वाणकूं प्राप्त करै है तथा वात्सल्यतैं ही जिनमंदिरका वैयावृत्त्य जिनसिद्धांतका सेवन साधर्मीनिका वैयावृत्त्य तथा धर्ममैं अनुराग दान देनेमैं प्रीति ये समस्तगुण वात्सल्यतैं ही होय है जे षट्कायके जीवनिमैं वात्सल्य किया है ते ही त्रैलोक्यमैं अतिशयरूप तीर्थंकर प्रकृतिका उपार्जन करैं हैं यातैं जे कल्याणके इच्छक हैं ते भगवान जिनेन्द्रका उपदेश्या वात्सल्यगुणकी महिमा जानि षोड़षमा अंग जो वात्सल्य ताका स्तवनकरि पूजनकरि याका महान अर्घ उतारण करै है। सो दर्शनकी विशुद्धता पाय बहुरि तप आचरणकरि अहमिंद्रादि देवलोककूं प्राप्त होय फिरि जगतका उद्धारक तीर्थंकर होय निर्वाणकूं प्राप्त होय है। षोड़श कारण धर्मकी महिमा अचिंत्य है जातैं त्रैलोक्यमैं आश्चर्यकारी अनुपम विभवके धारक तीर्थंकर होय हैं ऐसे षोड़सभावनाका संक्षेपविस्ताररूप वर्णन किया ॥ १६ ॥

अब धर्मका स्वरूप दशलक्षण रूप है इन दश चिन्हनिकरि अंतर्गतधर्म जानिये है। उत्तमक्षमा, उत्तममार्दव उत्तमआर्जव, उत्तमसत्य, उत्तमशौच, उत्तमसंयम, उत्तमतप, उत्तमत्याग, उत्तमआकिंचन्य, उत्तमब्रह्मचर्य ए दश धर्मके लक्षण हैं। जातैं धर्म तो वस्तुका स्वभावहीकूं कहिये है लोकमैं जेते पदार्थ हैं तितने अपने स्वभावकूं कदाचित नाहीं छांड़ैं हैं। जो स्वभावका नाश होजाय तो वस्तुका अभाव होय नाहीं आत्मानामवस्तुका स्वभाव क्षमादिकरूप है अर क्रोधादिक कर्मजनित उपाधि हैं आवरण हैं क्रोध नाम धर्मका अभाव होय तदि क्षमा नाम आत्माका स्वभाव स्वयमेव रहै है ऐसैं ही मानका अभावतैं मार्दवगुण अर मायाके अभावतैं आर्जवगुण लोभके अभावतैं शौचगुण इत्यादिक आत्माके गुण हैं ते कर्मके अभावतैं स्वयमेव प्रगट होय हैं तातैं ये उत्तमक्षमादिक आत्माका स्वभाव हैं मोहनी कर्मके भेद क्रोधादिक कषायनिकरि अनादिका आच्छादित होय रहे हैं कषायके अभावतैं क्षमादिक स्वाभाविकआत्माका गुण उघड़ै है।

अब उत्तमक्षमागुणकूं वर्णन करैं हैं—क्रोध वैरीका जीतना सो ही उत्तमक्षमा है कैसाक है

क्रोधवैरी इस जीवके निवास करनेका स्थान जे संयमभाव संतोषभाव निराकुलताभाव ताकूं दग्ध करनेकूं अग्नि समान है सम्यग्दर्शनादिरूप रत्ननिका भंडारकूं दग्ध करै है यशकूं नष्ट करै है अपयशरूप कालिमाकूं बधावै है धर्मअधर्मका विचार नष्ट होय जाय है क्रोधीकै अपना मन वचन काय आपकै वस नाहीं रहै है। बहुत कालहूकी प्रीतिकूं क्षणमात्रमैं विगाड़ि महान वैर उत्पन्न करै है क्रोधरूप राक्षसके वस होय सो असत्यवचन लोकनिंद्य भीलचांडालादिकनिके बोलनेयोग्य वचन बोलै है। क्रोधी समस्त धर्म लोपै है क्रोधी होय तब पितानै मारि नाखै माताकूं पुत्रकूं स्त्रीकूं बालककूं स्वामीकूं सेवककूं मित्रकूं मारि प्राणरहित करै है। अर तीव्रक्रोधी आपका हू विषतैं शस्त्रतैं मरण करै है ऊंचे मकान तथा पर्वतादिकतैं पतन करै है कूपमैं पड़ै है क्रोधीकी काऊप्रकार प्रतीत नाहीं जाननी। क्रोधी है सो यमराजतुल्य है क्रोधी होय सो प्रथम तो अपना ज्ञान दर्शन क्षमादिक गुणनिकूं घातै है पीछे कर्मके वशतैं अन्यका घात होय वा नाहीं होय क्रोधके प्रभावतैं महातपस्वी दिगम्बरमुनि धर्मतैं भ्रष्ट होय नरक गये हैं। यो क्रोध है सो दोऊ लोकका नाश करै है महा पापबंध कराय नरक पहुंचावै है बुद्धि भ्रष्ट करै है निर्दयी करदे है अन्यकृतउपकारकूं भुलाय कृतघ्न करै है तातैं क्रोधसमान पाप नाहीं इसलोकमैं क्रोधादिकषाय समान अपना घात करनेवाला अन्य नाहीं है। जो लोकमैं पुन्यवान है महाभाग्य है जिनका दोऊलोक सुधरना है तिनहीके क्षमा नाम गुण प्रगट होय है क्षमा जो पृथ्वी ताकी ज्यों सहनेका स्वभाव होय सो क्षमा है अर सम्यक स्वपरकूं हित अहितकूं समझकरि जो असमर्थनिकरि किया हू उपद्रवनिकूं आप समर्थ होय करके रागद्वेषरहित हुवा सहै है विकारी नाहीं होय है ताकूं उत्तमक्षमा कहिये है। इहां उत्तमशब्द सम्यग्ज्ञानसहित होनेकूं कह्या है। उत्तमक्षमा त्रैलोक्यमैं सार है उत्तमक्षमा संसारसमुद्रतैं तारनेवाली है उत्तमक्षमा है सो रत्नत्रयकूं धारण करनेवाली है उत्तमक्षमा दुर्गतिके दुःखनिकूं हरनेवाली है जाके क्षमा होय ताके नरक अर तिर्यंच दोऊ गतिनमैं गमन नाहीं होय है उत्तमक्षमाकी लार अनेकगुणनिके समूह प्रगट होय है मुनीश्वरनिकूं तो

तो अति प्यारी उत्तमक्षमा है उत्तमक्षमाका लाभकूं ज्ञानीजन चिंतामणिरत्न मानैं हैं अर उत्तमक्षमा ही मनकी उज्ज्वलता करै है क्षमागुणविना मनकी उज्ज्वलता अर स्थिरता कदाचित ही नाहीं होय है वांछित सिद्ध करनेवाली एक क्षमा ही है। इहां क्रोधके जीननेकी भावना ऐसी जाननी—कोऊ आपकूं दुर्वचनादिकरि दुःखित करै गाली दे चोर कहै अन्यायी पापी दुराचारी दुष्ट नीच या दोगलो चांडाल पापी कृतघ्नी ऐसैं अनेक दुर्वचन कहै तो ज्ञानी ऐसी भावना करै जो याका मैं अपराध किया है कि नाहीं किया है। जो मैं याका अपराध किया तथा रागद्वेषमोहका वसतैं कोई बातकरि दुखाया है तदि तो मैं अपराधी हूं मोकूं गाली देना धिक्कार देना नीच चोर कपटी अधर्मी कहना न्याय है. मोकूं इस सीवाय भी दंड देना सो भी ठीक है मैं अपराध किया है मोकूं गालीसुनि रोप नाहीं करना ही उचित है। अपराधीकूं नरकमैं दंड भोगना पड़ै है तातैं मेरा निमित्ततैं याकूं दुःख भया तदि क्लेशित होय दुर्वचन कहै है ऐसा विचारकरि क्लेशित नाहीं होय क्षमाही करै है अर जो दुर्वचन कहनेवाला मंदकषायी होय तो आप जाय क्षमा ग्रहण करावनेकूं कहै भो कृपाल! मैं अज्ञानी प्रमादके वस या कषायके वस होय आपका चित्तकूं दुखाया सो अब मैं अपराध माफ कराऊं हुं आगानैं ऐसा कार्य चूककरि नाहीं करूंगा एकवार चूकिजाय ताकी चूककूं महंतपुरुष माफ करैं हैं अर जो आगलो न्यायरहित तीव्रकषायी होय तो वासूं अपराध माफ करावनेको जाय नाहीं कालांतरमैं क्रोध उपशांत हुवा पाछैं माफ करावै अर जो आप अपराध नाहीं कीया अर ईर्षाभावतैं केवल दुष्टतातैं आपकूं दुर्वचन कहै तथा अनेक दोप लगावै तो ज्ञानी किंचित्संक्लेश नाहीं करै ऐसा विचारै जो मैं याका धन हरचा होय तथा जमीजायगा खोसी होय तथा याकी जीविका बिगाड़ी होय चुगली खाईहोय तथा याका दोप कहणादि करकैं जो मैं अपराध किया होय तो मोकूं पश्चात्ताप करना उचित है अर जो मैं अपराध नाहीं किया तदि मोकूं कुछ फिकर नाहीं करना यो दुर्वचन कहै है सो नामकूं कहै है तथा कुलकूं कहै है सो नाम मेरा स्वरूप नाहीं जातिकुलादि मेरा स्वरूप नाहीं मैं तो ज्ञायक हूं जाकूं कहै सो मैं नाहीं। मैं हूं

ताकूं वचन पहुंचे नाहीं तातैं मोकूं क्षमा ग्रहण करनाही श्रेष्ठ है। बहुरि जो यो दुर्वचन कहै है सो मुख याका, अभिप्राय याका, जिव्हा दंत ओष्ठ याका अर शब्द अर पुद्गल याका परिणामनिकरि शब्द उपज्या ताकूं श्रवणकरि मैं जो विकारकूं प्राप्त होऊं तो या मेरी बड़ी अज्ञानता है। बहुरि जो ईर्षावान दुष्टपुरुष मोकूं गाली देहै सो स्वभावकरि देखिये तो गाली कुछ वस्तु ही नाहीं है मेरे कहां हू गाली लगी नाहीं देखै है अवस्तुमैं देनेलेनेका व्यवहार ज्ञानी होय सो कैसें संकल्प करै। बहुरि जो मोकूं चोर कहै अन्यायी कपटी अधर्मी इत्यादिक कहै तहां ऐसा चिंतवन करै जो हे आत्मन्! तू अनेकवार चोर हुआ अनेक जन्ममैं व्यभिचारी ज्वारी अभक्ष्यभक्षी भील चांडाल चमार गोला बांदा कूकर शूकर गधा इत्यादिक तिर्यंच तथा अधर्मी पापी कृतघ्नी होय होय आया अर संसारमैं भ्रमण करता अनेकवार होऊंगा अब तो कूकर शूकर चोर चांडाल कहै ताकूं श्रवणकरि ताकूं क्लेशित होना बड़ा अनर्थ है अथवा ये दुष्टजन दुर्वचन कहैं हैं सो याको अपराध नाहीं हमारा बांध्या पूर्वजन्मकृतकर्मका उदय है सो याके दुर्वचन कहनेके द्वारकरि हमारे कर्मकी निर्जरा होय है सो हमारे बड़ा लाभ है इनका यह हू उपकार है जो ये दुर्वचन कहनेवाले अपना पुण्यका समूहका तो दोष कहनेकरि नाश करैं हैं अर मेरे किये पापकूं दूरि करैं हैं ऐसे उपकारीतैं जो मैं रोष करूं तो मो समान कोऊ अधम नाहीं है। बहुरि यो तो मोकूं दुर्वचन ही कह्या है मार्या तो नाहीं रोषकरि मारने लगिजाय है क्रोधी तो अपने पुत्र पुत्री स्त्री बालादिककूं मारै है सो मोकूं मार्या नाहीं योभी लाभ है अर जो दुष्ट आपकूं मारै तो ऐसा विचारै जो मोकूं मार्या ही प्राणरहित तो नाहीं किया दुष्ट तो आपका मरण नाहीं गिन करके भी अन्यकूं मारै है यो भी मेरे लाभ है। अर जो प्राणरहित करै तो ऐसा विचारै एक वार मरणो ही छो कर्मका ऋण चुक्यो। हम इहां ही कर्मके ऋणरहित भये हमारा धर्म तो नाहीं नष्ट भया। प्राणधारण तो धर्महीतैं सफल है ये द्रव्यप्राण तो पुद्गलमय हैं मेरा ज्ञान दर्शन क्षमादि-धर्म ये भावप्राण हैं इनका घात क्रोधकरि नाहीं भया इस समान मेरे लाभ नाहीं है।

बहुरि जो कल्याणरूप कार्य हैं तिनमैं अनेकविघ्न आवै ही हैं जो मेरे विघ्न आया सो ठीक ही है । मैं तो अब समभावकूं आश्रय करूं अर जो उपद्रव आवते मैं क्षमा छांड़ि विकारकूं प्राप्त हूंगा तो मोकुं देखि अन्य मंदज्ञानी तथा कायर त्यागी तपस्वी धर्मतैं शिथिल होजांयगे तो मेरा जन्म केवल अन्यके क्लेशके अर्थि ही भया तथा मैं वीतरागधर्म धारणकर कै हू क्रोधी विकारी दुर्वचनी होऊं तो मोकूं देखि अन्य हू क्रोधमैं प्रवर्तने लगिजाय तदि धर्मकी मर्यादा भंगकरि पापकी परिपाटी चलानेवालामैं ही प्रधान भया तातैं क्षमागुण प्राण जाते हू धन अभिमान नष्ट होते हू मोकूं छांड़ना उचित नाहीं । बहुरि पूर्व मैं अशुभकर्म उपजाया ताका फल मैं ही भोगूंगा अन्य जे जन हैं ते तो निमित्तमात्र हैं इनके निमित्ततैं पाप उदय नाहीं आता तो अन्यके निमित्ततैं आता । उदयमैं आया कर्म तो फल दिये विना टलता नाहीं बहुरि ये लौकिक अज्ञानी मेरे विषैं क्रोधित होय दुर्वचनादिक करि उपद्रव करैं हैं अर जो मैं भी यानैं दुर्वचनादिकरि उत्तर करूं तो मैं तत्त्वज्ञानी अर ये अज्ञानी दोऊ समान भया हमारा तत्त्वज्ञानीपना निरर्थक भया । न्यायमार्गतैं उदयमैं आया मेरा पापकर्म ताकूं सन्मुख होते कौन विवेकी अपना आत्माकूं क्रोधादिकनिके वस करै । भो आत्मन् ! पूर्वै बांध्या जो असाताकर्म ताका अब उदय आया ताकूं इलाजरहित अरोकजानि करकै समभावनितैं सहो जो क्लेशित होय भोगोगे तो असाताकूं तो भोगोहीगे अर नवीन बहुत असाताका बंध और करोगे तातैं होनहार दुःखतैं निःशंकित होय समभावतैं ही सहो ये दुष्टजन बहुत हैं अपना सामर्थ्य करकै मेरे रोषरूप अग्निकूं प्रज्वलितकरि मेरा समभावरूप संपदाकूं दग्ध किया चाहैं हैं अब इहां जो असावधान होय क्षमाकूं छांड़ दूंगा तो अवश्य ही साम्यभाव नष्ट करकै धर्म अर अपयशका नाश करनेवाला होयजाऊंगा तातैं दुष्टनिका संसर्गमैं सावधान रहना उचित है । ज्ञानीमनुष्य तो नाहीं सह्या जाय ऐसा क्लेशकूं उत्पन्न होते हू पूर्वकर्मका नाश होना जानि हर्षित ही होय है जो वचनकंटकनिकरि बेध्या जो मैं क्षमा छांड़दूंगा तो क्रोधी अर मैं समान भया अर जो वैरी नानाप्रकारका दुर्वचन मारण पीड़न करकैं मेरा इलाज नाहीं

करै तो मैं संचय किये अशुभकर्म तिनतैं कैसैं छूटता तातैं वैरी हू हमारा उपकार ही किया है अथवा तातैं विवेकी होय जो जिनआगमके प्रशादतैं साम्यभावका अभ्यास किया ताकी परीक्षा लेनेकूं ये वैरीरूप परीक्षा स्थान प्रगट भया है सो मेरे भावनिकी परीक्षा करि ये परीक्षा करनेकूं ही कर्म उदय भये है जो समभावकी मर्यादकूं भेदिकरि जो मैं वैरीनिमैं रोष करूं तो ज्ञाननेत्रका धारक हू मैं समभावकूं नाहीं प्राप्त होय क्रोधरूप अग्निमैं भस्म होय जाऊं। मैं वीतरागके मार्गमैं प्रवर्तन करनेवाला संसारकी स्थिति छेदनेमैं उद्यमी अर मेरा ही चित्त जो द्रोहकूं प्राप्त होजाय तो संसारके मार्गमैं प्रवर्त्तते मिथ्यादृष्टीनिके समान मैं हू भया अर जो दुष्ट जननिकूं न्याय धर्मरूप मार्ग समझाय अर क्षमा ग्रहण कराया जो नाहीं समझै अर क्षमा ग्रहण करै तो ज्ञानीजन वासूं रोष नाहीं करै। जैसैं विष दूरि करनेवाला वैद्य कोऊका विष दूरि करनेकूं अनेक औषधादि देय विष दूरि कर्या चाहै अर वाका जहर दूरि नाहीं होय तो वैद्य आप जहर नाहीं खाय है जो याका विष दूर नाहीं भया तो मैं हू विष भक्षणकरि मरूं ऐसा न्याय नाहीं है तैसैं ज्ञानीजन हू दुष्टजनकी पहली दुष्टताकी जाति पिछानै जो यो दुष्टता छांडैगा वा नाहीं छांडैगा वा अधिक दुष्टता धरैगा ऐसा विचारि जो विपरीत परणमता दीखै ताकूं तो उपदेश ही नाहीं देना अर कुछ समझने लायक योग्यता दीखै तो न्यायवचन हितमितरूप कहना अर दुष्टता नाहीं छांडै तो आप क्रोधी नाहीं होना जो यो मोकूं दुर्वचनादि उपद्रवकरि नाहीं कंपायमान करै तो मैं उपशम भावकरि धर्मका शरणा कैसैं ग्रहण करता तातैं जो मोकूं पीड़ा करनेवाला हू मोकूं पापतैं भयभीतकरि धर्मसूं संबंध कराया है तातैं पीड़ा करनेवाला हू मेरा प्रमादीपना छुड़ाय बडा उपकार किया है। बहुरि जगतमैं केतेक उपकारी तो ऐसे हैं जो अन्यजनके सुख होनेके निमित्त अपना शरीरकूं छांडै है अर धनकूं छांडै हैं तो मेरे दुर्वचनबंधनादिक सहनेमैं कहा जायगा मोकूं दुर्वचन कहे ही अन्यकै सुख होजाय तो मेरे कहा हानि है ? बहुरि जो अपनेकूं पीड़ा करनेवालेतैं रोष नाहीं करूं तो वैरीकै पुण्यका नाश होय है अर मेरे आत्माके हितकी सिद्धि होय है

अर पीड़ा करनेवालेतैं रोष करूं तो मेरा आत्माका हितका नाश होय दुर्गति होय यातैं प्राणनिका नाश होते हू दुष्टनिप्रति क्षमा करना ही एक हित सत्पुरुष कहैं हैं तातैं आत्मकल्याणकी सिद्धिकैअर्थि क्षमा ही ग्रहण करूं अथवा दुष्टनिकरि दुर्वचनादिक पीड़ा करनेतैं मेरे जो क्षमा प्रगट भई है सो मेरे पुण्यका उदयतैं या परीक्षाभूमिं प्रगट भई है जो मैं इतना कालतैं वीतरागका धर्म धारण किया सो अब क्रोधादिकके निमित्ततैं साम्यभाव रह्या कि नाहीं रह्या ऐसी परीक्षा करूं। बहुरि सोई साम्यभाव प्रशंसायोग्य है अर सो ही कल्याणका कारण है जो मारनेके इच्छक निर्दयीनिकरि मलीन नाहीं किया गया। बहुरि चिरकालतैं अभ्यास किया शास्त्रकरकैं अर साम्यभाव करकैं कहा साध्य है यो प्रयोजन पड्यां व्यर्थ होजाय है धैर्य तो सो ही प्रशंसा योग्य है जो दुष्टनिके कुवचनादिहोते नाहीं छूटै दृढ़ रहै उपद्रव आये विना तो समस्तजन सत्य शौच क्षमाके धारक बन रहैं हैं जैसैं चंदनवृक्षकूं कुहाड़ा काटै तौ हू कुहाड़ेका मुखकूं सुगंध ही करै तैसैं जाकी प्रवृत्ति होय सो ही सिद्धिकूं साध्या है। बहुरि अन्यकरि किया उपसर्गतैं वा स्वयमेव आया उपसर्ग तिनकरि जाका चित्त कलुषित नाहीं होय सो अविनाशी संपदाकूं प्राप्त होय है। अज्ञानी हैं ते अपने भावनिकरि पूर्वै कीया पापकर्म नाके अर्थि तो नाहीं रोष करैं अर जो कर्मके फल देनेके बाह्यनिमित्त तिनप्रति क्रोध करैं हैं जिसकर्मका नाशतैं मेरा संसारका संताप नष्ट होजाय सो कर्म स्वयमेव भोग्या तो मेरे वांछित सिद्ध भया। बहुरि यो संसाररूप वन अनंत संक्लेशनिकर भरया है इसमैं बसनेवालाकै नानाप्रकारके दुख नाहीं सहने योग्य है कहा? संसारमैं तो दुख ही है जो इस संसारमैं सम्यग्ज्ञान विवेककरिरहित अर जिनसिद्धांततैं द्वेष करनेवाले अर महानिर्दयी अर परलोकका हितके अर्थि जिनके बुद्धि नाहीं अर क्रोधरूप अग्निकरि प्रज्वलित अर दुष्टताकारिसहित विषयनिकी लोलुपताकरि अंध हटग्राही महाअभिमानी कृतघ्नी ऐसे बहुत दुष्टजन नाहीं होते तो उज्ज्वलबुद्धिके धारक सत्पुरुष व्रत तपश्चरणकरि मोक्षके अर्थि उद्यम कैसैं करते ? ऐसे क्रोधी दुर्वचनके बोलनहारे हटग्राही अन्यायमार्गीनिकी अधिकता देखि करकै ही सत्पुरुष वीतरागी

भये हैं अर जो मैं बड़े पुण्यके प्रभावतैं परमात्माका स्वरूपको ज्ञाता भयो अर सर्वज्ञकरि उपदेश्या पदार्थनिकूं हू निर्णयरूप जाण्या अर संसारके परिभ्रमणादिकतैं भयभीत होय वीतरागमार्गमैं हू प्रवर्तन कीया अब हू जो क्रोधके वस हूंगा तो मेरा ज्ञान चारित्र समस्त निष्फल होयगा अर धर्मका अपयश करावनवारा होय दुर्गतिका पात्र हूंगा। बहुरि और हू पद्मनंदमुनि कह्या है जो मुर्खजनकरि बाधा पीड़ा अर क्रोधके वचन अर हास्य अर अपमानादिक होते हू जो उत्तमपुरुषनिका मन विकारकूं प्राप्त नाहीं होय ताकूं उत्तमक्षमा कहिये है सो क्षमा मोक्षमार्गमैं प्रवर्तते पुरुषके परम सहायताकूं प्राप्त होय है। विवेकी चिंतवन करै है हम तो रागद्वेषादि मलरहित उज्ज्वल मनकरि तिष्ठां अन्यलोक हमकूं खोटा कहो तथा भला कहो हमकूं कहा प्रयोजन है। वीतरागधर्मके धारकानिकूं तो अपने आत्माका शुद्धपना साधने योग्य है। जो हमारा परिणाम दोषसहित है अर कोऊ हित हमकूं भला कह्या तो भला नाहीं होजावेंगे अर हमारा परिणाम दोषरहित है अर कोऊ हमकूं वैरबुद्धितैं खोटा कह्या तो हम खोटा नाहीं होजावैंगे फल तो अपनी जैसी चेष्टा आचरण होयगा तैसा प्राप्त होयगा जैसैं कोऊ काचकूं रत्न कहदिया अर रत्नकूं काच कहदिया तो हू मोल तो रत्न ही पावैगा काचखंडका बहुतधन कौन देवै। बहुरि दुष्टजन हैं ताका तो स्वभाव परके दोष कहां हू नाहीं होय तो हू परके दोष कह्याविना सुखकूं प्राप्त नाहीं होय तातैं दुष्टजन है सो मेरे माहीं अविद्यमान हू दोष लोकमैं घरघरमैं समस्तमनुष्यनिप्रति प्रगटकरि सुखी होहू अर जो धनका अर्थी है सो मेरा सर्वस्व ग्रहणकरि सुखी होहू अर जो वैरी प्राणहरणका अर्थी है सो शीघ्र ही प्राण हरो अर स्थानको अर्थी है सो स्थान हरो मैं मध्यस्थ हूं रागद्वेषरहित हूं समस्त जगतके प्राणी मेरे निमित्ततैं तो सुखरूप तिष्ठो मेरे निमित्ततैं किसी प्राणीके कोऊप्रकार दुःखमति होहू या मैं घोषणाकारि कहूं हूं क्योंकि मेरा जीवित तो आयुकर्मके आधीन अर धनका अर स्थानका जावना रहना पापपुण्यके आधीन है हमारे किसी अन्यजीवसे वैर विरोध नाहीं है समस्तके प्रति क्षमा है। बहुरि हे आत्मन् जे मिथ्यादृष्टि अर दुष्टतासहित अर हितअहितका विवेकरहित मूढ

ऐसे मनुष्यनिकरि किया जे दुर्वचनादिक उपद्रवनितैं अस्थिर हुआ बाधाकूं मानि क्लेशित होय रह्या है सो तीनलोकका चूड़ामणि भगवान वीतराग है ताहि नाहीं जान्या कहा ? तथा वीतरागका धर्मकी उपासना नाहीं कीई कहा ? तथा लोकनिकूं मूर्ख नाहीं जान्या कहा ? मोही मिथ्यादृष्टि मूढ़निके ज्ञान तो विपरीत ही होय हैं कथनिके बासि हैं तातैं इनमैं क्षमा ही ग्रहण करना योग्य है। क्षमा है सो इसलोकमैं परमशरण है माताकी ज्यों रक्षा करनेवाली है बहुत कहा कहिये जिनधर्मका मूल क्षमा है याकै आधार सकलगुण हैं कर्मनिर्जराको कारण है हजारां उपद्रव दूरि करनेवाली है यातैं धन जाते जीवितव्य जाते हू क्षमाकूं छांड़ना योग्य नाहीं। कोऊ दुष्टताकरि आपकूं प्राणरहित करै तिसकालमैं हू कटुकवचन मति कहो जो मारनेवालेकूं भी अंतर्गत बैर छांड़ि ऐसे कह्या जो आप तो हमारे रक्षक ही हो परंतु हमारा मरण आय पहुंच्या तदि आप कहा करो हमारे पापकर्मका उदय आयगया तो हू हमारा बड़ा भाग्य है जो आप सरिखे महान् पुरुषनिके हस्तादिकतैं हमारा मरण होय अर जो हमसारिखा अपराधीकूं आप दंड नाहीं द्यो तो मार्ग मलीन होजाय अर हम अपराधको फल नरक तिर्यंच गतिमैं आगें भोगते सो आप हमकूं ऋणरहित किया। मैं आपसूं वैर विरोध मन वचन कायनैं छांड़ि क्षमा ग्रहण करूं हूं अर आप भी मूनै अपराधको दंय देय क्षमा ग्रहण करो। मैं रोगादिक कष्टकूं भोगि करकैं अति दुःखतैं मरण करतो सो धर्मका शरणसूं ऋणरहित होय सज्जनांकी कृपासहित मरण करस्यूं ऐसैं मारनेवालेसूं हू वैर त्यागि समभाव करना सो उत्तमक्षमा है। ऐसैं उत्तमक्षमा नामा धर्मकूं कह्या ॥१॥

अब उत्तममार्दव नाम गुणकूं कहैं हैं—मार्दवका स्वरूप ऐसा है जो मानकषायकरि आत्मामैं कठोरता होय है सो कठोरताका अभाव होनेतैं जो कोमलता होय सो मार्दवनाम आत्माका गुण है अर जो आत्माका अर मानकषायका भेदकूं अनुभवकरि मान मदका छांड़ना सो उत्तममार्दव नाम गुण है। मानकषाय तो संसारका बधावनेवाला है अर मार्दव संसारपरिभ्रमणका नाश करनेवाला है। यो मार्दवगुण दयाधर्मका कारण है अभिमानीकै दयाधर्मका मूलहीतैं अभाव जानना कठोरपरिणामी

तो निर्दयी ही होय है मार्दवगुण समस्तकै हित करनेवाला है। जिनकै मार्दवगुण है तिनहीका व्रतपालना संयमधारणा ज्ञानका अभ्यास करना सफल है अभिमानीका निष्फल है। मार्दवनामगुण कषायका नाश करनेवाला है अर पंचइंद्रिय अर मनकूं दंड देनेवाला है। मार्दवधर्मके प्रसादतैं चित्तरूपभूमिमैं करुणारूप वेल नवीन फैलै है मार्दवकरकै ही जिनेन्द्रभगवानमैं तथा शास्त्रनिमैं भक्तिका प्रकाश होय है मदसहितनिकै जिनेन्द्रकै गुणनिमैं अनुराग नाहीं होय है मार्दवगुणकरि कुमतिज्ञानकै प्रसरका नाश होय है कुमति नाहीं फैलै है अभिमानिकै अनेक कुबुद्धि उपजै है। मार्दवगुणकरि बड़ा विनय प्रवर्तै है मार्दव करकै बहुत कालका वैरी हू वैर छांड़ै है। मान घटै तदि परिणामनिकी उज्ज्वलता होय कोमल परिणाम करकै ही दोऊ लोककी सिद्धि होय कोमल परिणामीकै इस लोकमें सुयश होय है परलोकमैं देवलोककी प्राप्ति होय है कोमल परिणाम करकै ही अंतरंग बहिरंग तपभूषित होय है अभिमानिका तप हू निंदवे योग्य है कोमलपरिणामीमैं तीनजगतके लोकनिका मन रंजायमान होय है मार्दव करकै ही जिनेन्द्रका शासन जानिये है मार्दव करकै आपना परका स्वरूपका अनुभव करिये है कठोर परिणामीकै आपा परका विवेक नाहीं होय है मार्दव करकै ही समस्तदोषनिका नाश होय है मार्दवपरिणाम संसारसमुद्रतैं पार करै है। यातैं मार्दवपरिणामकूं सम्यग्दर्शनका अंग जानि निर्मल मार्दवधर्मका स्तवन करो। संसारी जीवनिकै अनादिकालका मिथ्यादर्शनका उदय रह्या है ताका उदयकरि पर्यायबुद्धि हुआ जातिकूं कुलकूं विद्याकूं बलकूं ऐश्वर्यकूं रूपकूं तपकूं धनकूं अपना स्वरूप मानि इनका गर्वरूप होय रह्या है। ताकूं ये ज्ञान नाहीं है जो ये जातिकुलादिक समस्त कर्मका उदयकै आधीन पुद्गलकै विकार हैं विनाशीक हैं मैं अविनाशी ज्ञानस्वभाव अमूर्तीक हूं मैं अनादिकालतैं अनेक जाति कुल बल ऐश्वर्यादिक पाय पाय छांड़े हैं मैं अब कौनमैं आपा धारूं समस्त धन यौवन इंद्रियजनितज्ञानादिक विनाशीक हैं क्षणभंगुर हैं इनका गर्व करना संसारपरिभ्रमणका कारण है। इस संसारमैं स्वर्गलोकका महाऋद्धिका धारक देव मरिकरि एकसमयमैं एकेन्द्रिय

आय उपजै है तथा कूकर शूकर चांडालादिक पर्यायकूं प्राप्त होय है तथा चक्रवर्ती नवनिधि चौदह-रत्ननिका धारक एकसमयमैं मरि सप्तमनरकका नारकी होजाय है तथा बलभद्र नारायणका ऐश्वर्य नष्ट होयगया अन्यकी कहा कथा है जिनकी हजारां देव सेवा करै तथा तिनकैं पुण्यका क्षय होते कोऊ एकमनुष्य पानी पावनेवाला हू नाहीं रह्या अन्य पुण्यरहित जीव कैसैं मदोन्मत्त बन रहे है। बहुरि जे उत्तमज्ञानकरि जगतमैं प्रधान हैं अर उत्तमतपश्चरण करनेमैं उद्यमी हैं अर उत्तमदानी हैं ते हू अपने आत्माकूं अतिनीचा मानै है तिनके मार्दवधर्म होय है। यो विनयवानपनो मदरहितपनो समस्त धर्मको मूल है समस्त सम्यग्ज्ञानादि गुणको आधार है जो सम्यग्दर्शनादि गुणनिका लाभ चाहो हो अर अपना उज्ज्वल यश चाहो हो अर वैरका अभाव चाहो हो तो मदनिकूं त्यागि कोमल-पना ग्रहण करो मदनष्ट हुवा विना विनयादिक गुण वचनकी सिष्टता पूज्यपुरुषनिका सत्कार दान सन्मान एक हू गुण नाहीं प्राप्त होयगा। अभिमानीका विना अपराध हू समस्त वैरी होजाय हैं अभिमानीकी समस्त निंदा करैं हैं अभिमानीका समस्त लोक पतन होना चाहैं हैं स्वामी हू अभिमानी सेवककूं त्यागै है अभिमानीकूं गुरुजन विद्या देनेमैं उत्साहरहित होय हैं अपना सेवक पराङ्मुख होजाय मित्र भाई हितू पड़ौसी याका पतन ही चाहै है पिता गुरु उपाध्याय तो पुत्रकूं शिष्यकूं विनयवंत देख करि ही आनंदित होय हैं। अविनयी अभिमानी पुत्र वा शिष्य बड़े पुरुषनिके मनहूकूं संतापित करै है जातैं पुत्रका तथा शिष्यका तथा सेवकका तो ये ही धर्म है जो नवीन कार्य करना होय सो पिता गुरु स्वामीकूं जनायकरि करै आज्ञामांगि करै तथा आज्ञाको अवसर नाहीं मिलै तो अवसरदेखि शीघ्र ही जनावै यो ही विनय है या ही भक्ति है जाका मस्तकऊपरि गुरु विराजैं ते धन्यभाग हैं विनयवंत मद-रहित पुरुष हैं ते समस्तकार्य गुरुनिको जनाय दे हैं धन्य है जे इस कलिकालमैं मदरहित कोमल परि-णामकरि समस्तलोकसैं प्रवर्तैं हैं। उत्तमपुरुष हैं ते बालकमैं वृद्धमैं निर्धनमैं रोगीनिमैं बुद्धिरहित मूर्खनिमैं तथा जातकुलादिहीनमैं हू यथा योग्य प्रियवचन आदर सत्कार स्थानदान कदाचित नाहीं चूकैं हैं

प्रियवचन ही कहैं उत्तमपुरुष उद्धतताका वस्त्र आभरण नाहीं पहरैं उद्धतपणाका परके अपमानका कारण देनलेन विवाहादि व्यवहार कार्य नाहीं करैं हैं उद्धत होय अभिमानीपनाका चालना बैठना झांकना बोलना दूरहीतैं छांड़ै ताकै लोकमैं पूज्य मार्दवगुण होय है। धनपावना रूपपावना ज्ञानपावना विद्याकलाचतुराई-पावना ऐश्वर्यपावना बलपावना जातकुलादि उत्तमगुण जगन्मान्यता पावना जिनका सफल है जो उद्धततारहित अभिमानरहित नम्रतासहित विनयसहित प्रवर्तै है अपने मनमैं आपकूं सबतैं लघु मानता कर्मके परवस जानै है सो कैसै गर्व करै नाहीं करै है। भव्यजन हो सम्यग्दर्शनको अंग इस मार्दवअंगकूं जाणि चित्तकेविषै ध्यान करो स्तवन करो। ऐसैं मार्दव धर्मको वर्णन कीयो ॥ २ ॥

अब आर्जवधर्मकूं वर्णन करैं हैं—धर्मका श्रेष्ठ लक्षण आर्जव है आर्जव नाम सरलताका है मनवचनकायकी कुटिलताको अभाव सो आर्जव है। आर्जव धर्म है सो पापका खंडन करनेवाला है अर सुख उपजावनेवाला है। तातैं कुटिलता छांड़ि कर्मका क्षय करनेवाला आर्जवधर्म धारण करो। कुटिलता है सो अशुभकर्मका बंध करनेवाला है जगतमैं अतिनिंद्य है यातैं आत्माका हितका इच्छकनिकूं आर्जवधर्मका अवलंबन करना उचित है। जैसा आपका चित्तमैं चिंतवन करिये तैसा ही अन्यकूं कहना अर तैसा ही बाह्य कायकरि प्रवर्तन करिये सो सुखका संचय करनेवाला आर्जवधर्म कहिये है। मायाचाररूप शल्य मनतैं निकालो उज्वल पवित्र आर्जवधर्मका विचार करो मायाचारीका व्रत तप संयम समस्त निरर्थक है आर्जवधर्म निर्वाणके मार्गको सहाई है जहां कुटिलवचन नाहीं बोलै तहां आर्जवधर्म प्राप्त होय है। यो आर्जवधर्म है सो दर्शनज्ञानचारित्रको अखंडस्वरूप है अर अतींद्रियसुखका पिटारा है आर्जवधर्मका प्रभावकरि अतीन्द्रियका अविनाशी सुखकूं प्राप्त होय है संसाररूप समुद्रके तरनेकूं जिहाजरूप आर्जव ही है। मायाचार जान्या जाय तदि प्रीतिका भंग होय है। जैसैं कांजीतैं दुग्ध फटिजाय है अर मायाचारी अपना कपटकूं बहुत छिपावते हू प्रगट हुयां विना नाहीं रहै है। परजीवनिकी चुगली करै वा दोष प्रकाशै ते आप ही प्रगट हो जाय है मायाचार करना है सो अपनी प्रतीतिका बिगाड़ना

है धर्मका बिगाड़ना है मायाचारीका समस्त हित् विनाकिये वैरी होय हैं जो व्रती होय त्यागी तपस्वी होय अर जाका कपट एकवार किया हू प्रगट होजाय ताकूं समस्तलोक अधर्मीमानि कोऊ प्रतीति नाहीं करै है कपटीकी माता हू प्रतीति नाहीं करै है कपटी तो मित्रद्रोही स्वामिद्रोही धर्मद्रोही कृतघ्नी है अर यो जिनेन्द्रको धर्म तो कपटरहित छलरहित है जैसैं वांका म्यानमैं सूधो खड्ग प्रवेश नाहीं करै तैसैं कपटकरि वक्रपरिणामीका हृदयमैं जिनेन्द्रका आर्जव कहिये सरलधर्म प्रवेश नाहीं कर सकै है। कपटीका दोऊलोक नष्ट होजाय है यातैं जो यश चाहो हो धर्म चाहो हो प्रतीति चाहो हो तो मायाचारका त्यागकरि आर्जवधर्म धारण करो कपट रहितकी वैरी हू प्रशंसा करै है कपटरहित सरलचित्त जो अपराध भी किया होय तो दंड देने योग्य नाहीं होय है आर्जवधर्मका धारक तो परमात्माका अनुभवनमैं संकल्प करै है कषाय जीतनेका संतोष धारनेका संकल्प करै है जगतके छल-निका दूरहीतैं परिहार करै है आत्माकूं असहाय चैतन्यमात्र जानै है जो धनसंपदा कुटुंवादिककूं अपनावै सो ही कपट छलकरि ठिगाई करै तातैं जो आत्माकूं संसार परिभ्रमणतैं छुटाय परद्रव्यनितैं आपकूं भिन्न असहाय जानै सो धनजीवितव्यकेअर्थि कपट कदाचित् नाहीं करै तातैं जो आत्माकूं संसारपरि-भ्रमणतैं छुड़ाया चाहो हो तो मायाचारका परिहारकरि आर्जवधर्म धारण करो। ऐसैं आर्जवधर्मका वर्णन कीया ॥ ३ ॥

अब सत्यधर्मका वर्णन करैं हैं—जो सत्यवचन है सो ही धर्म है यो सत्यवचन, दयाधर्मको अब मूल कारण है अनेक दोषनिका निराकरण करनेवाला है इस भवमैं तथा परभवमैं सुखका करनेवाला है समस्तकै विश्वास करनेका कारण है समस्तधर्मके मध्य सत्यवचन प्रधान है सत्य है सो संसारसमुद्रके पार उतारनेकूं जहाज है समस्त विधाननिमैं सत्य है सो बड़ा विधान है समस्तसुखका कारण सत्य ही है सत्यतैंही मनुष्यजन्म भूषित होय है सत्यकरकै समस्त पुण्यकर्म उज्ज्वल होय है जे पुण्यके ऊंचे कार्य करिये हैं तिनकी उज्ज्वलता सत्यबिना नाहीं होय है सत्यकरि समस्तगुणनिका समूह महिमाकूं प्राप्त

होय है सत्यका प्रभावकरि देव हैं ते सेवा करैं हैं सत्यकरकैं ही अणुव्रत महाव्रत होय हैं सत्यविना व्रत संजम नष्ट होजाय हैं सत्यकरि समस्तआपदाको नाश होय है यातैं जो वचन वोलो सो अपना परका हितरूप कहो प्रमाणीक कहो कोऊकै दुःख उपजै ऐसावचन मति कहो परजीवनिकै वाधाकारी सत्य हू मति कहो गर्वरहित कहो, परमात्माका अस्तित्व कहनेवाला वचन कहो नास्तिकनिकैं वचन पापपुण्यका स्वर्गनरकका अभाव कहनेवाला वचन मति कहो। यहां ऐसा परमागमका उपदेश जानना यो जीव अनंतानंतकाल तो निगोदमैं ही रह्या तहां वचनरूप कर्मवर्गणा ही ग्रहण नाहीं करी क्योंकि पृथ्वीकाय अपकाय तेजकाय वायुकाय वनस्पतिकाय इनके मध्य अनंतकाल असंख्यात काल रह्यो तहां तो जिह्वा इंद्रिय ही नाहीं पाई वोलनेकी शक्ति ही नाहीं पाई अर जो विकल चतुष्कमैं उपज्या तथा पंचेन्द्रियतिर्यंचनमैं उपज्या तहां जिह्वा इंद्रिय पाई तो हू अक्षरस्वरूप शब्दउचारण करनेका सामर्थ्य नाहीं भया एक मनुष्यपनामैं वचन वोलनेकी शक्ति प्रगट होय है। ऐसा दुर्लभवचनकूं असत्य वोलि विगाड़िदेना सो वडा अनर्थ है मनुष्यजन्मकी महिमा तो एक वचनहीतैं है नेत्र कर्ण जिह्वा नाशिका तो ढोर तिर्यंचके हू होय है खावना पीवना कामभोगादिक पुण्यपापके अनुकूल ढोरनिकूं हू प्राप्त होय हैं आभरण वस्त्रादिक कूकरा वानरा गधा घोड़ा ऊंट वलध इत्यादिकनिकूं हू मिलै है परंतु वचनकहनेकी शक्ति श्रवण करनेकी शक्ति तथा उत्तरदेनेकी शक्ति तथा पढ़ने पढ़ावनेका कारण वचन तो मनुष्यजन्ममैं ही है अर मनुष्यजन्म पाय भी जो वचन विगाड़ि दिया सो समस्तजन्म विगाड़दिया। बहुरि मनुष्यजन्ममैं जो लेना देना कहना सुनना धीज प्रतीति धर्म कर्म प्रीत वैर इत्यादिक जे प्रवृत्तिरूप अर निवृत्तिरूप कार्य हैं ते वचनके आधीन हैं अर वचनकूं ही दूषितकर दिया तदि समस्त मनुष्यजन्मका व्यवहार विगाड़ दूषितकर दिया। तातैं प्राण जाते हू अपना वचनकूं दूषित मति करो। बहुरि परमागममैं कह्या जो च्यारप्रकारका असत्यवचन ताका त्याग करो जो विद्यमान अर्थका निषेध करना सो प्रथम असत्य है जैसैं कर्मभूमिका मनुष्य तिर्यंचका अकाल मृत्यु नाहीं होय ऐसा वचन असत्य है जातैं देव नारकी

तथा भोगभूमिका मनुष्यतिर्यंचका तो आयुकी स्थिति पूर्ण भयां ही मरण है बीच आयु नाहीं छिदै है
जितनी स्थिति बांधी तितनी भोगकरकै ही मरण करै हैं अर कर्मभूमिका मनुष्यतिर्यंचां
सो विषका भक्षणकरि तथा ताड़न मारण छेदन बंधनादिक वेदनाकरि तथा
तथा देहतैं रुधिरका नाश होनेकरि तथा दुष्टमनुष्य दुष्ट
वज्रपातादिकका स्वचक्र परच
अ ज

कदाचित मति कहो अपना
ही वचन बोलो इस जीवके जैसा सुख हितरूप अर्थसंयुक्त मिष्ट वचन करै है निराकुल
है तैसा सुखकारी आताप हरनेवाला चंद्रकांतिमणि जल चंदन मुक्ताफलादिक
है अर जहां अपने बोलनेतैं धर्मकी रक्षा होती होय प्राणीनिका उपकार होता होय
हू बोलना अर जहां आपका अन्यका हित नाहीं होय तहां मौन सहित ही रहना उचित
वचनतैं सकलविद्या सिद्ध होय हैं जहां विद्या देनेवाला सत्यवादी होय अर सीखनेवा-

गर्हितवचनका तीन भेद हैं गर्हित, सावद्य, अप्रिय तिनमैं पैशून्य, हास्य, कर्कश, असमंजस, प्रलपित इत्यादिक अन्य हू सूत्रविरुद्धवचन सो गर्हितवचन हैं तिनमैं जो परके विद्यमान तथा अविद्यमानदोषनिकूं पूठ पाछैं कहना तथा परका धनका विनाश जीविकाका विनाश प्राणनिका नाश जिसवचनतैं होजाय तथा जगतमैं निंद्य होजाय अपवाद होजाय ऐसा वचन कहना सो गर्हित नाम असत्यवचन है। बहुरि हास्य लीयां भंडवचन तथा श्रवणकरनेवालेनिकै अशुभराग उपजावनेवाले वचन सो हास्यनामा गर्हित वचन है। बहुरि अन्यकूं कहै तू ढांडा हैं तू मूर्ख है अज्ञानी है इत्यादिक कर्कस वचन है। बहुरि देश कालके योग्य नाहीं जातैं आपके अन्यकै महासंताप उपजै सो असमंजसवचन है। बहुरि प्रयोजनरहित धीठपनातैं वकवाद करना सो प्रलपित वचन है। बहुरि जिस वचन करि प्राणीनिका घात होजाय देशमैं उपद्रव होजाय देश लुटिजाय तथा देशका स्वामीनिकै महा वैर होजाय तथा ग्राममैं अग्नि लगजाय घर वलजाय वनमैं अग्नि लगजाय तथा कलह विसंवाद युद्ध प्रगट होजाय तथा विषादिकरि मरिजाय तथा मारिजाय वैर बंध जाय तथा छहकायके जीवनिके घातका आरंभ होजाय महाहिंसामैं प्रवृत्ति होजाय सो सावद्यवचन है तथा परकूं चोर कहना व्यभिचारी कहना सो समस्त सावद्यवचन दुर्गतिके कारण त्यागने योग्य है अब अप्रियवचन त्यागने योग्य प्राण जातैं हू नाहीं कहना अप्रियवचनके भेद ऐसे जानने–कर्कशा, कटुका, परुषा, निष्ठुरा, परकोपनी, मध्यकृशा, अभिमानिनी, अनयंकरी, छेदंकरी, भूतवधकरी ये महापापके करनेवाली महानिंद्य दश भाषा सत्यवादी त्याग करै है। तू मूर्ख है बलद है ढोर है रे मूर्ख तू कहा समझै इत्यादिक कर्कशा भाषा है बहुरि तू कुजाति है नीचजाति हैं अधर्मी महापापी है तू स्पर्शनकरने योग्य नाहीं तेरा मुख देख्यां बड़ा अनर्थ है इत्यादिक उद्वेग करनेवाली कटुकाभाषा है। तू आचारभ्रष्ट है भ्रष्टाचारी है महा दुष्ट है इत्यादिक मर्म छेदनेवाली परुषाभाषा है। तोकूं मारिनाखिस्यूं थारो नाक काटिस्यूं थारै डाह लगास्यूं थारो मस्तक काटिस्यूं तनै खायजास्यूं इत्यादिक निष्ठुरा भाषा है। रे निर्लज्ज वर्णसंकर तेरा

जाति कुल आचारका ठिकाना नाहीं तेरा कहा तप तू कुशील है तू हँसने योग्य है महानिंद्य है अभक्ष्यभक्षण करनेवाला है तेरा नामलीयां कुल लज्जित होय है इत्यादिक परकोपनी भाषा है । बहुरि जिस वचनके सुनते ही हाड़निकी शक्ति नष्ट होजाय सामर्थ्य नष्ट होजाय सो मध्यकृशा भाषा है। बहुरि लोकनिमैं आपना गुण प्रगट करना परके दोष कहना अपना कुल जाति रूप बल विज्ञानादिक मद लिये जो वचन बोलना सो अभिमानिनी भाषा है। बहुरि शीलखंडनकरनेवाली अर विद्वेष करनेवाली अनयंकरी भाषा है। बहुरि जो वीर्य शील गुणादिकनिके निर्मूल करनेवाली असत्यदोष प्रगट करनेवाली जगतमैं झूंठाकलंक प्रगट करनेवाली छेदंकरी भाषा है। जिस वचनकरि अशुभ वेदना प्रगट हो जाय वा प्राणनिका नाश करनेवाली भूतवधकरी भाषा है। ए दश प्रकार निंद्यवचन त्यागने योग्य हैं। बहुरि स्त्रीनिके हावभाव विलासविभ्रमरूप क्रीड़ा व्यभिचारादिकनिकी कथा कामके जगावनेवाली ब्रह्मचर्यका नाश करनेवाली स्त्रीनिका कथा तथा भोजनपानमैं राग करावनेवाली भोजनकी कथा तथा रौद्रकर्म करनेवाली राजकथा तथा चोरनिकी कथा तथा मिथ्यादृष्टी कुलिंगीनिकी कथा तथा धन उपार्जन करनेकी कथा तथा वैरीदुष्टनिके तिरस्कार करनेकी कथा तथा हिंसाकूं पुष्ट करनेवाली वेद स्मृति पुराणादिक कुशास्त्रनिकी कथा कहने योग्य नाहीं श्रवण करने योग्य नाहीं पापका आस्रवको कारण अप्रिय भाषा त्यागने योग्य है। भो ज्ञानी हो ये चारप्रकारकी निंद्यभाषा हास्यकरि क्रोधकरि लोभकरि मदकरि भयकरि द्वेषकरि कदाचित मति कहो अपना परका हितरूप ही वचन बोलो इस जीवकै जैसा सुख हितरूप अर्थसंयुक्त मिष्ट वचन करै है निराकुल करै है आताप हरै है तैसा सुखकारी आताप हरनेवाला चंद्रकांतिमणि जल चंदन मुक्ताफलादिक कोऊ पदार्थ नाहीं है अर जहां अपने बोलनेतैं धर्मकी रक्षा होनी होय प्राणीनिका उपकार होना होय तहां विना पूछे हू बोलना अर जहां आपका अन्यका हित नाहीं होय तहां मौन सहित ही रहना उचित है। बहुरि सत्य वचनतैं सकलविद्या सिद्ध होय हैं जहां विद्या देनेवाला सत्यवादी होय अर सीखनेवा-

ला हू सत्यवादी होय ताकै सकलविद्या सिद्ध होय कर्मकी निर्जरा होय सत्यका प्रभावतैं अग्नि जल विष सिंह सर्प दुष्ट देव मनुष्यादिक बाधा नाहीं कर सकैं हैं। सत्यका प्रभावतैं देवता वशीभूत होय हैं प्रीति प्रतीति दृढ़ होय है सत्यवादी मातासमान विश्वास करनेयोग्य होय है गुरुकी ज्यों पूज्य होय हैं मित्र ज्यों प्रिय होय है उज्ज्वल यशकूं प्राप्त होय हैं तपसंयमादि समस्त सत्यवचनतैं सोहैं हैं। जैसैं विष मिलनेकरि मिष्टभोजनका नाश होय अन्यायकरि धर्मका यशका नाश होय तैसैं असत्यवचनतैं अहिंसादि सकलगुणनिका नाश होय है तथा असत्य वचनतैं अप्रतीति, अकीर्ति, अपवाद, अपने वा अन्यके संक्लेश, अरति, कलह, वैर, शोक, बध, बंधन, मरण, जिह्वाछेद, सर्वस्वहरण, बंदीग्रहमैं प्रवेश, दुर्ध्यान, अपमृत्यु, व्रत तप शील संयमका नाश, नरकादिदुर्गतिमैं गमन, भगवानकी आज्ञाको भंग, परमागमतैं परान्मुखता, घोरपापका आस्रव इत्यादि हजारां दोष प्रगट होय हैं। यातैं भो ज्ञानीजन हो लोकमैं प्रिय हित मधुर वचन बहुत भरया है सुंदरशब्दनिकी कमी नाहीं फिर निंद्यवचन क्यों बोलो हो ? रे तू इत्यादिक नीचपुरुषनिके बोलनेके वचन प्राणजातैं हू मति कहो अधमपना अर उत्तमपना तो वचनहीनैं जाण्या जाय है नीचनिके बोलनेके निंद्यवचनकूं छांड़ि प्रिय हित मधुर पथ्य धर्मसहित वचन कहो जे अन्यकूं दुःखका देनेवाला वचन कहैं हैं तथा झूंठा कलंक लगावैं हैं तिनकै पापतैं इहांहि बुद्धि भ्रष्ट होय है जिह्वा गलिजाय है तालवा गलिजाय आंधा होजाय पग नष्ट होजाय दुर्ध्यानतैं मरि नरक-तिर्यंचादिकुगतिका पात्र होय है अर सत्यका प्रभावतैं इहां उज्ज्वलयश वचनकी सिद्धि द्वादशांगादि-श्रुतका ज्ञान पाय फिर इंद्रादिक महर्द्धिकदेव होय तीर्थंकरादि उत्तमपद पाय निर्वाण जाय है यातैं उत्तम सत्यधर्महीकूं धारण करो ऐसैं सत्यनामा धर्मका वर्णन कीया ॥ ४ ॥

अब शौचधर्मका स्वरूप वर्णन करिये हैं—शौच नाम पवित्रताका–उज्ज्वलताका है जो बहिरात्मा देहकी उज्ज्वलता स्नानादिक करनेकूं शौच कहैं हैं सो सप्त धातुमयको मलमूत्रको भरयो जलतैं धोया शुचिपनाकूं प्राप्त नाहीं होय है जैसैं मलका बनाया घट मलका भरया जलतैं शुद्ध नाहीं होय

तैसैं शरीर हू उज्ज्वल जलतैं शुद्ध नाहीं होय शुचि मानना वृथा है। बहुरि शौचधर्म तो आत्माकूं उज्ज्वल किये होय आत्मा लोभकरि हिंसाकरि अत्यंत मलिन होय रह्या है सो आत्माकै लोभमलका अभाव भये शुचिता होय है जो अपने आत्माकूं देहतैं भिन्न ज्ञानोपयोग दर्शनोपयोगमय अखंड अविनाशी जन्मजरामरणरहित तीन लोकवर्ती समस्तपदार्थनिका प्रकाशक सदा काल अनुभव करै है ध्यावै है ताकै शौचधर्म होय है। बहुरि मनकूं मायाचारलोभादिकरहित उज्ज्वल करना ताकै शौचधर्म होय है जाका मन कामलोभादिककरि मलीन होय ताकै शौचधर्म नाहीं होय है धनकी गृद्धिता जो अतिलंपटता ताका त्यागतैं शौचधर्म होय है। बहुरि परिग्रहकी ममताकूं छांड़ि इंद्रियनिका विषयनिको त्यागकरि तपश्चरणका मार्गमैं प्रवर्तन करना सो शौचधर्म है। बहुरि ब्रह्मचर्य धारण करना सो शौचधर्म है बहुरि अष्टमदकरिरहित विनयवानपना सो शौचधर्म है अभिमानी मदसहित होय सो महामलीन है ताकै शौचधर्म कैसैं होय। बहुरि वीतरागसर्वज्ञका परमागमका अनुभव करनेकरि अंतर्गत मिथ्यात्व कषायादिक मलका धोवना सो शौचधर्म है। उत्तमगुणानिकी अनुमोदनाकरि शौच धर्म होय है। परिणामनिमैं उत्तम पुरुषनिका गुणनिका चिंतवनकरि आत्मा उज्ज्वल होय है कषाय मलका अभावकरि उत्तम शौचधर्म होय है। आत्माकूं पापकरि लिप्त नाहीं होने देना सो शौचधर्म है जो समभाव संतोषभावरूप जलकरि तीव्र लोभरूप मलका पुंजकूं धोवै है अर भोजनमैं अति लंपटतारहित है ताकै निर्मल शौचधर्म होय है जातैं भोजनका लंपटी अति अधम है अर अखाद्यवस्तुकूं भी खाय है हीनाचारी होय है भोजनका लंपटीकै लज्जा नष्ट होजाय है जातैं संसारमैं जिह्वाइंद्रिय अर उपस्थइंद्रियके वशीभूत भये जीव आपा भूलि नरकके तिर्यंचगतिके कारण महानिंद्य परिणामनिकूं प्राप्त होय है। संसारमैं परधनकी वांछा परस्त्रीकी वांछा अर भोजनकी अतिलंपटता ही परिणामकूं मलीन करनेवाली है इनकी वांछातैंरहित होय अपने आत्माकूं संसारपतनतैं रक्षा करो। आत्माकी मलीनता तो जीवहिंसातैं अर परधन परस्त्रीकी वांछातैं है जे परस्त्री परधनका इच्छक अर जीवघातके

करनेवाले हैं ते कोटितीर्थनिमें स्नान करो समस्त तीर्थनिकी वंदना करो तथा कोटि दान करो कोटिवर्ष तप करो समस्त शास्त्रनिका पठन पाठन करो तो हू उनकै शुद्धता कदाचित नाहीं होय । अभक्ष्यभक्षण करनेवालेनिका अर अन्यायका विषय तथा धनके भोगनेवालेनिका परिणाम ऐसे मलीन होय हैं जो कोटिवार धर्मका उपदेश अर समस्तसिद्धांतनिकी शिक्षा बहुत वर्ष श्रवण करते हू कदाचित हृदयमें प्रवेश नाहीं करै है सो देखिये है जिनकूं पचासवरस शास्त्र श्रवणकरते भये हैं तो हू धर्मका स्वरूपका ज्ञान जिनकूं नाहीं है सो समस्त अन्याय धन अर अभक्ष्यभक्षणका फल है तातैं जो अपना आत्माका शौच चाहो हो तो अन्यायका धन मति ग्रहण करो अर अभक्ष्यभक्षण मतिकरो परकी स्त्रीकी अभिलाषा मति करो । बहुरि परमात्माके ध्यानतैं शौच है अहिंसा सत्य अचौर्य ब्रह्मचर्य और परिग्रहत्यागतैं शौचधर्म है । जे पंचपापनिमें प्रवर्तनवाले हैं ते सदाकाल मलीन हैं जे परके उपकारकूं लोपैं हैं ते कृतघ्नी सदा मलीन हैं जे गुरुद्रोही धर्मद्रोही स्वामिद्रोही मित्रद्रोही उपकारकूं लोपनेवाले हैं तिनकै पापका संतान असंख्यात भवनिमें कोटितीर्थनिमें स्नानकरि दान करि दूर नाहीं होय है विश्वासघाती सदा मलीन है यातैं भगवानके परमागमकी आज्ञा प्रमाण शुद्ध सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रकरि आत्माकूं शुचि करो क्रोधादि कषायका निग्रहकरि उत्तमक्षमादिगुण धारणकरि उज्ज्वल करो समस्तव्यवहार कपटरहित उज्ज्वल करो परका विभव ऐश्वर्य उज्ज्वलयश उत्तमविद्यादिकप्रभाव देखि अदेखसकाभावरूप मलीनता छांड़ि शौचधर्म अंगीकार करो परकापुण्यका उदय देखि विषादी मति होहू इस मनुष्यपर्यायकूं तथा इंद्रिय ज्ञान बल आयु संपदादिकनिकूं अनित्य क्षणभंगुर जानि एकाग्रचित्तकरि अपने स्वरूपमें दृष्टि धारि अशुभभावनिका अभावकरि आत्माकूं शुचि करो। शौच ही मोक्षका मार्ग है शौच ही मोक्षका दाता है । ऐसैं शौच नाम पंचमधर्मको वर्णन कियो ॥ ५ ॥

अथ संयम नाम धर्मका स्वरूप कहिये है—संयमका ऐसा लक्षण जानना जो अहिंसा कहिये हिंसाको त्याग दयारूप रहना हितमित पथ्य प्रिय सत्यवचन बोलना परके धनमें वांछाका अभाव करना

कुशीलका छांड़ना परिग्रहत्यागना ए पाच व्रत हैं तिनमैं पंचपापनिका एक देश त्याग सो अणुव्रत है सकलत्याग सो महाव्रत है इन पंचव्रतनिकूं दृढ़ धारण करना अर पंचसमितिका पालना तिनमैं गमनकी शुद्धता ईर्यासमिति है वचनकी शुद्धता सो भाषासमिति है निर्दोष शुद्धभोजन करना सो एषणासमिति है शरीरके उपकरणादिक नेत्रनितैं देखि सोधि उठावना धरना सो आदाननिक्षेपणा समिति है मलमूत्रकफादिक मलनिकूं अन्य जीवनकै ग्लानि दुःख बाधादिक नाहीं उपजै ऐसे क्षेत्रमैं क्षेपना सो प्रतिष्ठापनासमिति है इन पंचसमितिनिका पालना अर क्रोध मान माया लोभ इन च्यार कषायनिका निग्रह करना अर मनवचनकायकी अशुभप्रवृत्ति ए दंड हैं इन तीनदंडनिका त्याग करना अर विषयनिमैं दौड़ती पंचइंद्रियनिकूं वश करना—जीतना सो संयम है। भावार्थ—पंचव्रतनिका धारण पंच समितका पालन कषायनिका निग्रह दंडनिका त्याग इंद्रियनिका विजयकूं जिनेन्द्रके परमागममैं संयम कह्या है। सो संयम वहुत दुर्लभ है जिनके पूर्वके बांधे अशुभकर्मनिका अतिमंदपना होते मनुष्यजन्म उत्तमदेश उत्तमकुल उत्तमजाति इंद्रियपरिपूर्णता नीरोगता कषायनिकी मंदता होय अर उत्तमसंगति अर जिनेन्द्रका आगमनिका सेवन अर सांचे गुरुनिका संयोग सम्यग्दर्शनादि अनेक दुर्लभसामग्रीका संयोग होय तदि संसारदेहभोगनितैं अति विरक्तताके धारक मनुष्यकै अप्रत्याख्याना-वरणका क्षयोपशमतैं तो देशसंयम होय अर जाकै अप्रत्याख्यान अर प्रत्याख्यान दोऊकषायनिका क्षयोप-शम होय ताकै सकल संयम होय है तातैं संयम पावना महा दुर्लभ है। नरकगतिमैं तिर्यंचगतिमैं देवगतिमैं तो संयम होय नाहीं कोऊतिर्यंचकै देशव्रत अपनीपर्यायमाफिक कदाचित होय है अर मनुष्यप-र्यायमै भी नीचकुलादिकमैं अधदेशनिमैं इंद्रियविकल अज्ञानी रोगी दरिद्री अन्यायमार्गी विषयानुरागी तीव्रकषायी निंद्यकर्मी मिथ्यादृष्टीनिकै संयम कदाचित नाहीं होय है तातैं अतिदुर्लभ संयमका पावना है ऐसे दुर्लभसंयमकूं ह पाय कोऊ मूढ़बुद्धी विषयनिका लोलुपी होय छांड़ै है तो अनन्तकाल जन्म-मरण करता संसारमें परिभ्रमण करै है। संयमपाय छांड़ै है संयमकूं बिगाड़ै है ताकै अनंतकाल निगो-

द्मैं परिभ्रमण त्रसस्थावरनिमैं भ्रमण करना होय सुगत नाहीं होय संयम पाय विगाड़नेंसमान अन्य-अनर्थ नाहीं है विषयनिका लोभी होय करि जो संयमकूं विगाड़ै है सो एककौड़ीमैं चिंतामणिरत्न वेचै है तथा ईंधनकेअर्थि कल्पवृक्षकूं छेदै है विषयनिका सुख हैसो सुख नाहीं सुखाभास है क्षणभंगुर है नरकनिके घोरदुःखनिका कारण है किंपाकफल जैसैं जिह्वाका स्पर्शमात्र मिष्ट लागै है पाछै घोरदुःख महादाह संताप देय मरणकूं प्राप्त करै है तैसैं भोग किंचिन्मात्र काल तो अज्ञानी जीवनिकूं भ्रमतैं सुखसा भासै है फिर अनंतकाल अनंतभवनिमैं घोरदुःखका भोगना है यातैं संयमकी परमरक्षा करो पांच इंद्रियनिकूं विषयनिके संबंधतैं रोकनेतैं संयम होय है कषायनिका खंडनकरि संयम होय है दुर्द्धरतपका धारणकरि संयम होय है रसनिका त्यागकरि संयम होय है मनके प्रसरके रोकनेकरि संयम होय है महान कायक्लेशनिके सहनेकरि संयम होय है उपवासादिक अनशनतपकरि संयम होय है मनमैं परिग्रहकी लालसाका त्यागकरि संयम होय है त्रसस्थावरजीवनिकी रक्षा करना सो ही संयम है मनके विकल्पनिके रोकनेकरि तथा प्रमादतैं वचनकी प्रवृत्तिके रोकनेकरि संयम होय है। शरीरके अंगउपांगनिका प्रवर्त्तनकूं रोकनेकरि संयम होय है। बहुत गमनके रोकनेकरि संयम होय है। बहुरि दयारूप परिणामकरि संयम होय है परमार्थका विचारकरकैं तथा परमात्माका ध्यान करकैं संयम होय है संयमकरकैं ही सम्यग्दर्शन पुष्ट होय संयम ही मोक्षका मार्ग है संयमविना मनुष्यभव शून्य है गुणरहित है संयमविना यो जीव दुर्गतिनिकूं प्राप्त भया संयमविना देहका धारना बुद्धिका पावना ज्ञानका आराधन करना समस्त वृथा है संयमविना दीक्षा धारना व्रतधारना मुंड मुंडावना नग्न रहना भेषधारणा ये समस्त वृथा है जातैं संयम दोयप्रकार है इंद्रियसंयम अर प्राणसंयम जाकी इंद्रियां विषयनितैं नाहीं रुकी अर जाकै छहकायके जीवनिकी विराधना नाहीं टली ताकै बाह्य परीसह-सहना तपश्चरण करना दीक्षालेना वृथा है संसारमैं दुःखितजीवनिकूं संयमविना कोऊ अन्य शरण नाहीं है ज्ञानीजन तो ऐसी भावना भावैं हैं जो संयमविना मनुष्यजन्मकी एक घटिका हू मति जावो

संयमविना आयु निष्फल है यो संयम है सो इस भवमैं अर परभवमैं शरण है दुर्गतिरूप सरोवरके शोषण करनेकूं सूर्य है संयमकरकैं ही संसाररूप विषमवैरीका नाश होय संसारपरिभ्रमणका नाश संयम विना नाहीं होय ऐसा नियम है अर जो अंतरंगमैं तो कषायनिकरि आत्माकूं मलीन नाहीं होने देहै अर बाह्य यत्नाचारी हुआ प्रमादरहित प्रवर्तै है ताकै संयमहोय है ऐसैं संयमधर्मका वर्णन किया ॥ ६ ॥

अब तपधर्मका वर्णन करैं हैं,—इच्छाका निरोध करना सो तप है तप च्यार आराधनानिमैं प्रधान है जैसैं सुवर्णकूं तपावनेकरि सोलाताव लगै समस्त मल छांड़ि करकै शुद्ध होय है तैसैं आत्मा हू द्वादशप्रकार तपके प्रभावकरि कर्ममलरहित शुद्ध होय है अज्ञानी मिथ्यादृष्टि तो देहकूं पंचअग्निकरि तपावै है तथा अनेकप्रकार कायके क्लेशकूं तप कहैं हैं सो तप नाहीं है। कायकूं दग्धकिये अर मारलिये कहा होय। मिथ्यादृष्टि ज्ञानपूर्वक आत्माकूं कर्मबंधतैं छुड़ावना नाहीं जानैं हैं। कर्ममलकलंकरहित आत्मा तो भेदविज्ञानपूर्वक अपने आत्माका स्वभावकूं अर रागद्वेष मोहादिरूप भावकर्मरूप मैलकूं भिन्न देखै है जैसैं रागद्वेष मोहरूप मल भिन्न होजाय अर शुद्धज्ञान दर्शनमय आत्मा भिन्न होजाय सो तप है याहीतैं कहैं हैं मनुष्यभव पाय जो स्वपरतत्त्वकूं जाण्या है तो मनसहित पंच इंद्रियनिकूं रोकि विषयनितैं विरक्त होय समस्त परिग्रहकूं छांड़ि बंधका करनेवाली रागद्वेषमई प्रवृत्तिकूं छांड़ि पापका आलंबन छूटनेके अर्थि ममता नष्टकरनेकूं वनमैं जाय तप करिये। ऐसा तप धन्यपुरुषनिकै होय है संसारीजीवके ममतारूप बड़ी फांसी है सो ममतारूप जालमैं फंसाहुआ घोरकर्मकूं करता महापापका बंधकरि रोगादिककी तीव्रवेदना अर स्त्रीपुत्रादि समस्तकुटुंबका तथा परिग्रहका वियोगादिकतैं उपज्या तीव्र आर्तध्यानतैं मरण पाय दुर्गतिनिके घोर दुःखनिकूं जाय प्राप्त होय है। तपोवनकूं प्राप्त होना दुर्लभ है तप तो कोऊ महाभाग्य पुरुष पापनितैं विरक्त होय समस्त स्त्रीपुत्रधनादिकपरिग्रहतैं ममत्वछांड़ि परमधर्मके धारक वीतराग निर्ग्रंथ गुरुनिका चरणनिका शरण पावै है अर गुरुनिको पायकरि जाकै अशुभकर्मका उदय अति मंद होय सम्यक्त्वरूप

सूर्यका उदय प्रगट होय संसारविषयभोगनितैं विरक्तता जाकै उपजी होय सो तप संयम ग्रहण करै है अर जो ऐसा दुर्द्धरतपकूं धारण करके हू कोऊ पापी विषयनिकी बांछाकरि विगाड़ै है ताकै अनंतानंत कालमैं फिर तप नाहीं प्राप्त होय हैं यातैं मनुष्यभव पाय तत्वनिका स्वरूपजानि मनसहित पंच इंद्रियनिकूं रोकि वैराग्यरूप होय समस्तसंगकूं छांडि बनमैं एकाकी ध्यानमैं लीनहुआ तिष्ठै सो तप है। जहां परिग्रहमैं ममता नष्ट होय बांछारहित तिष्ठना तथा प्रचंड कामका खंडन करना सो बड़ा तप है। जहां नग्न दिगंबररूप धारि शीतकी पवनकी आतापकी वर्षाकी तथा डांस माछर मक्षिका मधुमक्षिका सर्प बिच्छू इत्यादिकतैं उपजी घोरवेदनाकूं कोरे अंगपरि सहना सो तप है अर जो निर्जनपर्वतनिकी निर्जनगुफानिमैं भयंकर पर्वतनिके दराड़ेनिमैं तथा सिंह व्याघ्र रींछ ल्याली चीता हस्तीनिकरि व्याप्त घोरबनमैं निवास करना सो तप है। तथा दुष्ट वैरी म्लेच्छ चोर शिकारी मनुष्य अर दुष्टव्यंतरादिक देवनिकृत घोरउपसर्गनितैं कंपायमान नाहीं होना धीरवीरपनातैं कायरता छांड़ि वैरविरोध छांड़ि समताभावतैं परमात्माका ध्यानमैं लीनहुआ सहना सो तप है। बहुरि समस्तजीवनिकूं उलझानेवाले रागद्वेषनिकूं जीतना नष्ट करना सो तप है। बहुरि यो याचनारहित भिक्षाके अवसरमैं श्रावकका घरमैं नवधाभक्तिकरि हस्तमैं धर्‌या खारा अलूणा कड़वा खाटा लूखा चीकना रस नीरस तिसमैं लोलुपता अर संक्लेशरहित निर्दोष प्रासुक आहार एकवार भक्षण करना सो तप है। बहुरि जो पंचसमितिका पालना अर मनवचनकायकूं चलायमान नाहीं करना अपना रागद्वेषरहित आत्मानुभव करना सो तप है। जो स्वपर तत्त्वकी कथनीका निर्णय करना च्यारअनुयोगका अभ्यासकरि धर्मसहित काल व्यतीतकरना सो तप है। बहुरि अभिमानछांड़ि विनयरूप प्रवर्तना कपटछांड़ि सरलपरिणाम धारना क्रोधछांड़ि क्षमा ग्रहणकरना लोभत्यागि निर्बांछक होना सो तप है। जाकरि कर्मका समूहका नाशकरि आत्मा स्वाधीन होजाय सो तप है। जो श्रुतका अर्थका प्रकाश करना व्याख्यान करना आप निरंतर अभ्यास करै अन्यकूं

अभ्यास करावै सो तप है। तपस्वीनका देवनिका इंद्र स्तवन करै भक्तिका प्रकाश करै तपकरि केवलज्ञान उत्पन्न होय है तपका अचिंत्य प्रभाव है तपकै मांहि परिणाम होना अतिदुर्लभ है। नरक तिर्यंचदेवनिमैं तपकी योग्यता ही नाहीं एक मनुष्यगतिमैं होय मनुष्यमैं हू उत्तम कुल जाति बल बुद्धि इंद्रियनिकी पूर्णता जाकै होय तथा रागादिकनिकी मंदता जाकै होय तथा विषयनिकी लालसा जाकै नष्ट भई होय ताकै होय है अर तप द्वादशप्रकार है जाकी जैसी शक्ति होय तिसप्रमाण धारण करो। बालक करो वृद्ध करो धनाढ्य करो निर्धन करो बलवान करो निर्बल करो सहायसहित होय सो करो सहायरहित होय सो करो भगवानको प्ररूप्यो तप किसीकै हू करनेकूं अशक्य नाहीं है। जैसैं वायुपित्तकफादिकनिका प्रकोप नाहीं होय रोगकी वृद्धि नाहीं होय जैसैं शरीर रत्नत्रयको सहकारी बन्यों रहै तैसैं अपना संहनन बल वीर्य देखि तप करो। तथा देशकालआहारकी योग्यता देखि तप करो। जैसैं तपमैं उत्साह बधतो रहै परिणामनिमैं उज्ज्वलता बधती जाय तैसैं तप करो तथा जो इच्छाका निरोधकरि विषयनिमैं राग घटावना सो तप है। तप ही जीवका कल्याण है तप ही कामकूं निद्राकूं प्रमादकूं नष्ट करनेवाला है यातैं मदछांड़ि बारहप्रकार तपमैं जैसा जैसा करनेकूं सामर्थ्य होय तैसा ही तप करो सो बारहप्रकार तपकूं आगैं न्यारो लिखैंगे। ऐसैं तपधर्मकूं वर्णन कीया॥७॥

अब त्यागधर्मका वर्णन करैं हैं। त्याग ऐसैं जानना जो धन संपदादि परिग्रहकूं कर्मका उदयजनित पराधीन अर विनाशीक अर अभिमानका उपजावनेवाला तृष्णाकूं बधावनेवाला रागद्वेषकी तीव्रता करनेवाला आरंभकी तीव्रता करनेवाला हिंसादिक पंचपापनिका मूल जानि उत्तमपुरुष याकूं अंगीकार ही नाहीं किया ते धन्य हैं। केई याकूं अंगीकार करि याकूं हलाहलविषसमान जानि जीर्णतृणकी ज्यों त्याग कीया तिनकी अचिंत्यमहिमा है। अर केई जीवनिकै तीव्ररागभाव मंदहुआ नाहीं यातैं सकलत्यागनेकूं समर्थ नाहीं अर सरागधर्ममैं रुचि धारैं हैं अर पापतैं भयभीत हैं ते इस धनकूं उत्तमपात्रनिके उपकारके अर्थि दानमैं लगावैं हैं अर जे धर्मके सेवन करनेवाला निर्धनजन हैं तिनके

अन्नवस्त्रादिककरि उपकार करनेमैं धन लगावैं हैं तथा धर्मके आयतन जिनमंदिरादिकमैं जिनसिद्धांत लिखायदेनेमैं तथा उपकरणनिमैं पूजनादिक प्रभावनामैं लगावैं हैं तथा दुःखित दरिद्री रोगीनिके उपकारमैं तन मन धन करुणावान होय लगावैं हैं ते धन जीतव्यकूं सफल करैं हैं। दान है सो धर्मको अंग है यातैं अपनी शक्तिप्रमान भक्तिकरि गुणानिके धारक उज्ज्वलपात्रनिको दानदेना है सो परलोककूं जावते महान सुखसामग्रीकूं लेजावैं है सो निर्विघ्न स्वर्गकूं तथा भोगभूमिकूं प्राप्त करनेवाला जानो। दानकी महिमा तो अज्ञानी बालगोपाल हू कहैं हैं जो पूर्वैं दान दीया है सो नानाप्रकार सुखसामग्री पाई है अर देगा सो पावैगा तातैं जो सुखसंपदाका अर्थी होय सो दानहीमैं अनुराग करो। अर जे दानकरनेमैं उद्यमी नाहीं केवल मरणपर्यंत धनका संचय करनेमैं उद्यमी हैं ते इहां हू तीव्रआर्तपरिणामतैं मरि सर्पादिक दुष्ट तिर्यंचगति पाय नरक निगोदकूं जाय प्राप्त होय हैं। धन कहा लार जायगा धन पावना तो दानहीतैं सफल है दानरहितका धन घोर दुःखनिकी परिपाटीका कारण है अर इहां हू कृपण घोरनिंदाकूं पावै है कृपणका नाम भी लोक नाहीं कहैं हैं कृपण सूमका नामकूं लोक अमंगल मानै है जामैं औगुण दोष हू होय तो दानीका दोष ढकि जाय है। दानीका दोष दूरि भागै है दानकरि ही निर्मलकीर्ति जगतमैं विख्यात होय है। देनेकरि वैरी हू चरननिमैं नमै है। दानदेनेतैं वैरी वैर छांड़ैं हैं अपना हित करनेवालामित्र होजाय हैं जगतमैं दान बड़ा है थोड़ासा दान हू सत्यार्थ भक्तिकरि करनेवाला भोगभूमिका तीनपल्यपर्यंत भोगभोगि देवलोकमैं जाय है देना ही जगतमैं ऊंचा है दान देना विनयसंयुक्त स्नेहका वचनकरिसहित होय देना अर दानी हैं ते ऐसा अभिमान नाहीं करैं हैं जो हम इसका उपकार करैं हैं। दानी तो पात्रकूं अपना महाउपकार करनेवाला मानै हैं जो लोभरूप अंधकूपमैं पड़नेका उपकार पात्रविना कौन करै पात्रविना लोभीनिका लोभ नाहीं छूटता अर पात्रविना संसारके उद्धारकरनेवाला दान कैसैं बणता। यातैं धर्मात्मा जननिके तो पात्रके मिलनेसमान अर दानके देनेसमान अन्यकोऊ आनंद नाहीं है बड़ापना धनाढ्यपना ज्ञानीपना पाया है

तो दानमैं ही उद्यम करो। छहकायके जीवनिकूं अभयदान देह अभक्ष्यका त्यागकरि वहुआरंभके घटावनेकरि देखि सोधि मेलना धरना यत्नाचारविना निर्दयी होय नाहीं प्रवर्तना किसी प्राणीमात्रकूं मनवचनकायतैं दुःखित मति करो। दुःखीनिकी करुणा ही करो यो ही गृहस्थकै अभयदान है यातैं संसारमैं जन्म मरण रोग शोक दरिद्र वियोगादिक संतापका पात्र नाहीं होओगे। वहुरि संसारके बधावनेवाले हिंसाकूं पुष्ट करनेवाले तथा मिथ्याधर्मकी प्ररूपणा करनेवाले तथा युद्धशास्त्र शृंगारशास्त्र मायाचारके शास्त्र वैद्यकशास्त्र रस रसायण मंत्र जंत्र मारण वशीकरणादिकशास्त्र महापापके प्ररूपक हैं इनकूं अति दूरितैं ही त्यागि भगवान वीतराग सर्वज्ञका कह्या दयाधर्मकूं प्ररूपणा करनेवाला स्याद्वादरूप अनेकांतका प्रकाश करनेवाले नयप्रमाणकरि तत्त्वार्थकी प्ररूपणा करनेवाले शास्त्रनिकूं अपने आत्माकूं पढ़नेपढ़ावनेकरि आत्माका उद्धारकेअर्थि अपनेअर्थि दान करो। अपनी संतानकूं ज्ञानदान करो तथा अन्यधर्मबुद्धि धर्मके रोचक इच्छक तिनकूं शास्त्रदान करो ज्ञानके इच्छक हैं ते ज्ञानदानके अर्थि पाठशाला स्थापन करैं हैं जातैं धर्मका स्थंभ ज्ञान ही है। जहां ज्ञानदान होयगा तहां धर्म रहैगा यातैं ज्ञानदानमैं प्रवर्तन करो। ज्ञानदानके प्रभावतैं निर्मल केवलज्ञानकूं पावै है। वहुरि रोगका नाश करनेवाला प्रासुक औषधिका दान करो औषधदान वड़ा उपकारक है अर रोगीकूं सीधी तयार औषध मिलै है ताका वड़ा आनंद है अर निरधन होय तथा जाकै टहल करनेवाला नाहीं होय ताकूं औषध जो करी हुई तय्यार मिल जाय तो निधानका लाभसमान मानै है औषध लेय नीरोग होय है सो समस्त व्रत तप संयम पालै है ज्ञानका अभ्यास करै है औषधदान है ताकै वात्सल्यगुण स्थितिकरणगुण निर्विचिकित्सागुण इत्यादिक अनेकगुण प्रगट होय हैं औषधदानके प्रभावतैं रोगरहित देवानिका वैक्रियक देह पावै है। वहुरि आहारदान समस्तदाननिमैं प्रधान है प्राणीका जीवन शक्ति वल बुद्धि ये समस्तगुण आहारविना नष्ट होजाय हैं आहार दिया सो प्राणीकूं जीवन बुद्धि शक्ति समस्त दीना। आहारदानतैं ही मुनि श्रावकका सकलधर्म प्रवर्तै है

आहारविना मार्ग भ्रष्ट होजाय आहार है हो सो समस्तरोगका नाश करनेवाला है जो आहारदान दे है सो मिथ्यादृष्टि हू भोगभूमिमैं कल्पवृक्षनिका दशांग भोगकूं असंख्यातकाल भोगै अर क्षुधातृषादिककी बाधारहित हुआ आंवलाप्रमाण तीनदिनके आंतरै भोजन करै। समस्तदुःखक्लेशरहित असंख्यातवर्ष सुखभोगि देवलोकनिमैं जायउपजै है। यातैं धनकूं पाय च्यारप्रकारके दान देनेमैं प्रवर्तन करो। अर जो निर्धन है सो हू अपना भोजनमैंतैं जेता बनै तेता दान करो आपकूं आधा भोजन मिलै तीमैंतैं हू ग्रास दोयग्रास दुःखित बुभुक्षित दीनदरिद्रीनिकेअर्थ देवो। बहुरि मिष्टवचन बोलनेका बड़ा दान है आदरसत्कार विनयकरना स्थानदेना कुशलपूछना ये महादान हैं। बहुरि दुष्टविकल्पनिका त्याग करो पापनिमैं प्रवृत्तिका त्याग करो चारकषायनिका त्याग करो विकथा करनेका त्याग करो परकेदोष सत्य असत्य कदाचित मति कहो। बहुरि अन्यायका धन ग्रहण करनेका दूरहीतैं त्याग करो भो ज्ञानी-जन हो जो अपना हितके इच्छक हो तो दुखितजननिकूं तो दान करो अर सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञानादि गुणनिके धारकनिका महाविनय सन्मान करो समस्तजीवनिमैं करुणा करो मिथ्यादर्शनका त्याग करो रागद्वेषमोहके धारक कुदेव अर आरंभपरिग्रहके धारक भेषधारी अर हिंसाके पोषक रागद्वेषकूं पुष्ट करनेवाले मिथ्यादृष्टिनिके शास्त्र इनकूं वंदना स्तवन प्रशंसा करनेका त्याग करो क्रोध मान माया लाभ इनके निग्रह करनेमैं बड़ा उद्यम करो क्लेश करनेके कारण अप्रियवचन गालीके वचन अपमानके वचन मदसहित वचन कदाचित मति कहो इत्यादिक जो परके दुःखके कारण तथा अपना यशकूं नष्ट करनेवाला धर्मकूं नष्ट करनेवाला मनवचनकायके प्रवर्तनिका त्याग करो ऐसैं त्यागधर्मका संक्षेप वर्णन किया ॥ ८ ॥

अब आकिंचन्यधर्मका स्वरूप कहिये है,—जो अपना ज्ञानदर्शनमय स्वरूपविना अन्य किंचिन्मात्र हू हमारा नाहीं है मैं किसी अन्यद्रव्यका नाहीं हूं मेरा कोऊ अन्यद्रव्य नाहीं है ऐसा अनुभवनिकूं आकिंचन्य कहिये है। भो आत्मन् अपना आत्माकूं देहतैं भिन्न अर ज्ञानमय अन्यद्रव्यकी उपमारहित अर स्पर्शरसगंधवर्णरहित अर अपना स्वाधीन ज्ञानानंदसुखकरि पूर्ण परमअतींद्रिय भयरहित ऐसा अनुभव करो। भावार्थ—

ये देह है सो मैं नाहीं देह तो रस रुधिर हाड़ मांस चाममय जड़ अचेतन है। मैं इसदेहतैं अत्यंत भिन्न हूं ये ब्राह्मण क्षत्रियादिकजातिकुल देहके हैं मेरे ये नाहीं है स्त्री पुरुष नपुंसकादिलिंग देहके हैं मेरे नाहीं यो गोरापना सांवलापना राजापना रंकपना स्वामीपना सेवकपना पंडितपना मूर्खपणा इत्यादि समस्त रचना कर्मका उदयजनित देहके हैं मैं तो ज्ञायक हूं ये देहका संबंधी मेरा स्वरूप नाहीं है मेरा स्वरूप अन्य द्रव्यकी उपमारहित है ताता ठंडा नरम कठोर लूखा चीकना हलका भारी अष्टप्रकार स्पर्श है ते हमारा रूप नाहीं पुद्गलके रूप हैं ये खाटा मीठा कड़वा कसायला चिरपरा पंचप्रकार रस अर सुगंध दुर्गंध दोयप्रकारका गंध अर काला पीला हरया स्वेत रक्त ये पंचवर्ण मेरा स्वरूप नाहीं पुद्गलका है मेरा स्वभाव तो सुखकरि परिपूर्ण है परंतु कर्मके आधीन दुखकरि व्याप्त होय रह्या हूं मेरा स्वरूप इंद्रियरहित अतींद्रिय है इंद्रियां पुद्गलमय कर्मकरि कीं हुई हैं मैं समस्त भयरहित अविनाशी अखंड आदिअंतरहित शुद्ध ज्ञानस्वभाव हूं परंतु अनादिकालतैं जैसैं सुवर्ण अर पाषाण मिल रह्या है तैसैं तथा क्षीरनीरज्यौं कर्मनिकरि अनादि कालतैं मिलरह्या हूं तिनमैं हू मिथ्यात्वनाम कर्मका उदयकरि अपना स्वरूपका ज्ञानरहित होय देहादिकपरद्रव्यनिकूं आपकास्वरूपजानि अनंतकालमैं परिभ्रमणकरया अब कोउ किंचित आवरणादिकके दूरहोनेतैं श्रीगुरुनिका उपदेश्या परमागमका प्रसादतैं अपना अर परका स्वरूपका ज्ञान भया है जैसैं रत्ननिका व्यौहारी जड़ेहुये पंचवर्णरत्ननिके आभरणनिमैं गुरुकी कृपातैं अर निरंतर अभ्यासतैं मिल्याहुवा हू डाकका रंग अर माणिक्यका रंगकूं अर तोलकूं अर मोलकूं भिन्न भिन्न जानै है तैसैं परमागमका निरंतर अभ्यासतैं मेरा ज्ञान स्वभावमैं मिल्या हुआ रागद्वेषमोह कामादिक मैलकूं भिन्न जाण्या है अर मेरा ज्ञायकस्वभावकूं भिन्न जाण्या है तातैं अब जैसैं रागद्वेषमोहादिकभाव कर्मनिमैं अर कर्मनिके उदयतैं उपजे विनाशीक शरीर परवार धन संपदादि परिग्रहमैं ममताबुद्धि मेरे जैसैं फिर अन्य जन्ममैं हू नाहीं उपजै तैसैं आकिंचन्य भाऊं या आकिंचन्य भावना अनादिकालतैं नाहीं उपजी समस्तपर्यायनिकूं अपना रूप मान्या तथा रागद्वेषमोहक्रोधकामादिकभाव कर्मकृत विकार थे तिनकूं आपरूप अनुभ-

वकरि विपरीतभावनितैं घोरकर्मबंधकूं कीया अब मैं आकिंचन्य भावनामैं विघ्नका नाश करनेवाला पंच परमगुरुनिका शरणतैं आकिंचन्य ही निर्विघ्न चाहूं हूं और त्रैलोक्यमैं कोऊ अन्यवस्तुकूं नाहीं वांछूं हूं। यो आकिंचन्यपणो ही संसारसमुद्रतैं तारणेकूं जिहाज होहू जो परिग्रहकूं महाबंध जानि छांडना सो आकिंचन्य है आकिंचन्यपणा जाकै होय है ताकै परिग्रहमैं वांछा रहै नाहीं है आत्मध्यानमैं लीनता होय है देहादिकनिमैं बाह्यभेषमैं आपो नाहीं रहै है अर अपना स्वरूप जो रत्नत्रय तामैं प्रवृत्ति होय है इंद्रियनिके विषयनिमैं दौड़ता मन रुकिजाय है देहतैं स्नेह छूटि जाय है सांसारिकदेवनिका सुख इंद्र अहमिंद्र चक्रवर्तीनिका सुख हू दुख दीखै है। इनमैं वांछा कैसैं करै? परिग्रह रत्न सुवर्ण राज्य ऐश्वर्य स्त्री पुत्रादिकनिकूं जीर्णतृणमैं जैसैं ममतारहित छांड़नेमैं विचार नाहीं तैसैं परिग्रह छांड़ै है। आकिंचन्य तो परम वीतरागपणा है जिनकै संसारको अंत आगयो तिनकै होय है जाकै आकिंचन्यपणा होय ताकै परमार्थ जो शुद्धआत्मा ताका विचारनेकी शक्ति प्रगट होय ही अर पंचपरमेष्ठीमैं भक्ति होय ही अर दुष्टविल्पनिका नाश होय ही अर इष्टअनिष्टभोजनमैं रागद्वेष नष्ट होजाय है केवल उदररूप खाड़ा भरना अन्य रसनीरसभोजनमैं विचार जाता रहै है समस्तधर्मनिमैं प्रधानधर्म आकिंचन्य ही मोक्षका निकट समागम करावनेवाला है अनादिकालतैं जेते सिद्ध भये हैं ते आकिंचन्यतैं ही भये हैं अर आगैं जो जो तीर्थंकरादि सिद्ध होयंगे ते आकिंचन्यपणाहीतैं होयगे। यद्यपि आकिंचन्यधर्म प्रधानकरि साधुजननिकै ही होय है तथापि एकदेश धर्मका धारक गृहस्थ उस धर्मके ग्रहणकरनेकी इच्छा करै है अर गृहचारामैं मंदरागी होय अतिविरक्त होय है प्रमाणीकपरिग्रह धारै है आगामीवांछारहित है अन्यायका धन परिग्रह कदाचित ग्रहण नाहीं करै है अल्पपरिग्रहमैं अतिसंतोषी होय रहै है परिग्रहकूं दुःखका देनेवाला अर अत्यंतअस्थिर मानै है ताकै ही आकिंचन्यभावना होय है। ऐसैं आकिंचन्यधर्मका वर्णन कीया ॥ ९ ॥

अब उत्तमब्रह्मचर्यका स्वरूप कहिए है—समस्त विषयनिमैं अनुराग छांड़करकै ब्रह्म जो ज्ञानकस्व-

भाव आत्मा तामैं जो चर्या कहिये प्रवृत्ति सो ब्रह्मचर्य है। भो ज्ञानीजन हो यो ब्रह्मचर्य नाम व्रत बड़ो दुर्द्धर है हरेक बापड़ा विषयनिके वस हुआ आत्मज्ञान रहित हैं ते याकूं धारवेकूं समर्थ नाहीं है जे मनुष्यनिमैं देवके समान हैं ते धारवेकूं समर्थ हैं अन्य रंक विषयनिकी लालसाके धारक ब्रह्मचर्य धारनेकूं समर्थ नाहीं हैं यो ब्रह्मचर्यव्रत महादुर्द्धर है जाकै ब्रह्मचर्य होय ताकै समस्त इंद्रिय अर कषायनिका जीतना सुलभ है। भो भव्य हो स्त्रीनिका सुखमैं रागी जो मनरूप मदोन्मत्तहस्ती ताकूं वैराग्यभावनामैं रोक करकैं अर विषयांकी आशाका अभाव करकैं दुर्द्धर ब्रह्मचर्य धारण करो। यो काम है सो चित्तरूपभूमिमैं उपजै है याकी पीड़ाकरि नाहीं करनेयोग्य ऐसे पाप करैं हैं जातैं यो काम मनकूं मथन करै है मनका ज्ञानकूं नष्ट करै है याहीतैं याकूं मनमथ कहिये है ज्ञान नष्ट होजाय तदि ही स्त्रीनिका महादुर्गंध निंद्यशरीरकूं रागी हुआ सेवै है अर कामकरि अंध होजाय तदि महाअनीतिकूं प्राप्त होय अपनी परकी नारिका विचार ही नाहीं करै है। जो इस अन्यायतैं मैं इहां ही मार्या जाऊंगा राजाका तीव्रदंड होयगा यश मलिन होयगा धर्मभ्रष्ट होजाऊंगा सत्यार्थबुद्धि नष्ट होजायगी मरणकरि नरकनिके घोरदुःख असंख्यातकाल पर्यंत भोगि फिर असंख्यात तिर्यंचनिके दुःखरूप अनेकभव पाय कुमानुषनिमैं अंधा लूला कूबड़ा दरिद्री इंद्रियविकल बहरा गूंगा चांडाल भील चमारनिके नीचकुलनिमैं उपजि फिर त्रसस्थावरनिमैं अनंतकाल परिभ्रमण करूंगा। ऐसा सत्यविचार कामीकै नाहीं उपजै है। इस कामके नाम ही जगतके जीवनिकूं प्रगट करैं हैं। कं कहिये मोदादर्प्प अर्थात् गर्व उपजावै तातैं कंदर्प कहिये है। अति कामना जो वांछा उपजाय दुःखित करै तातैं याकूं काम कहिये है। याकरि अनेक तिर्यंचनिके तथा मनुष्यनिके भवनिमैं लड़िलड़ि मरिये तातैं मार कहिये है। संवरको वैरी तातैं संवरारि कहिये। ब्रह्म जो तपसंयम तातैं सुचार्ति कहिये चलायमान करै तातैं ब्रह्मभू कहिये इत्यादिक अनेक दोषानिकूं नाम ही कहैं हैं या जानि मनवचनकायतैं अनुरागकरि ब्रह्मचर्य व्रत पालो। ब्रह्मचर्यकरिसहित ही संसारके पार जावोगे ब्रह्मचर्यविना व्रत तप समस्त असार हैं ब्रह्मचर्यविना सकल

कायक्लेश निष्फल हैं बाह्य जो स्पर्शनइंद्रियका सुखतैं विरक्त होय अभ्यंतर परमात्मस्वरूप आत्मा ताकी उज्ज्वलता देखहु। जैसैं अपना आत्मा कामके रागकरि मलीन नाहीं होय तैसैं यत्न करो। ब्रह्मचर्यकरि ही दोऊ लोक भूषित होय है। बहुरि जो शीलकी रक्षा चाहो हो अर उज्ज्वलयश चाहो हो अर धर्म चाहो हो अर अपनी प्रतिष्ठा चाहो हो तो चित्तमैं परमागमकी शिक्षा इसप्रकार धारण करो स्त्रीनिकी कथा मति श्रवण करो मति कहो स्त्रीनिका रागरंग कुतूहल चेष्टा मति देखो ये मेला देखना परिणाम बिगाड़े है। व्यभिचारी पुरुषनिके संगतिका त्याग करना भांग जरदा मादकवस्तु भक्षण नाहीं करना तांबूल तथा पुष्पमाला अत्तर फुलेलादि शीलभंग व्रतभंगके कारण दूरतैं टालो गीत नृत्यादिकामोद्दीपनके कारणनिका परिहार करो रात्रिभक्षण टालो विकार करनेका कारण लोकविरुद्ध वस्त्र आभरण मति पहरो एकांतमैं कोऊ ही स्त्रीमात्रका संसर्ग मति करो रसनाइंद्रियकी लंपटता छांड़ो जिव्हाकी लंपटताकी लार हजारां दोष आवैं हैं यातैं समस्त ऊंचापणो यश धर्म नष्ट होजाय है जिह्वाइंद्रियका लंपटीकै संतोष नष्ट होजाय समभावकूं स्वप्नमैं हू नाहीं जानै लोकव्यवहार भ्रष्ट होजाय ब्रह्मचर्य भंग होजाय यातैं आत्माके हितका इच्छक एक ब्रह्मचर्यकी ही रक्षा करो ऐसैं धर्मके दशलक्षण सर्वज्ञ भगवान कहै हैं। जाके ये दशचिह्न प्रगट होय ताके धर्म है उत्तमक्षमादिकानिके घातक धर्मके वेरी क्रोधादिक हैं तिनतैं अनेकदोष उपजैं हैं तिनकी भावना करो अर क्षमादिकनिमैं अनेक गुण हैं तिनकी भावना बारंबार सदैव भावो। जो क्षमा है सो अपना प्राणनिकी रक्षा है धनकी रक्षा है यशकी रक्षा है धर्मकी रक्षा है व्रतशीलसंयमसत्यकी रक्षा एक क्षमातैं ही है कलहके घोरदुःखतैं अपनी रक्षा एक क्षमा ही करै है समस्त उपद्रव तथा वैरतैं क्षमा ही रक्षा करै है। बहुरि क्रोध है सो धर्मअर्थकाममोक्षका मूलतैं नाश करै है अपना प्राणनिका नाश करै है क्रोधतैं प्रचंड रौद्रध्यान प्रगट होय है क्रोधी एकक्षणमात्रमैं आप मरिजाय है कूवामैं बावड़ीमैं तलावनदीसमुद्रमैं डूबि मरै है शस्त्रघात विषभक्षण झंपापातादि अनेक कुकर्मकरि आत्मघात करै है। अन्यकै मारनेकी क्रोधीकै दया नाहीं होय है क्रोधी

होय सो अपने पिताकूं पुत्रकूं भ्राताकूं मित्रकूं स्वामीकूं सेवककूं गुरुकूं एक क्षणमात्रमैं मारै है। क्रोधी घोरनरकका पात्र है क्रोधी महाभयंकर है समस्तधर्मका नाश करनेवाला है। क्रोधीकै सत्यवचन नाहीं होय है आपकूं अर धर्मकूं समभावकूं दग्ध करनेवाला कुवचनरूप अग्निकूं उगलै है क्रोधी होय सो धर्मात्मा संयमी शीलवान् मुनि अर श्रावकनिकूं चोरी अन्याईके झूंठे दोष कलंक लगाय दुषित करै है। क्रोधके प्रभावतैं ज्ञान कुज्ञान होय है आचरण विपरीत होजाय है श्रद्धान भ्रष्ट होजाय है अन्यायमैं प्रवृत्ति होजाय है नीतिका नाश होय है अति हठी होय विपरीतमार्गका प्रवर्तक होय है धर्म अधर्म उपकार अपकारका विचाररहित कृतघ्नी होय है यातैं वीतरागधर्मके अर्थी हो तो क्रोधभावकूं कदाचित प्राप्त मति होहु। बहुरि मार्दव जो कठोरतारहित कोमलपरिणामी जीवमैं गुरुनिका बड़ा अनुराग वर्तै है मार्दवपरिणामीकूं साधुपुरुष हू साधु मानै है तातैं कठोरतारहित पुरुष ही ज्ञानका पात्र होय है मानरहित कोमलपरिणामीकूं जैसा गुण ग्रहण कराया चाहै तथा जैसी कला सिखाया चाहै तैसी कला गुण प्राप्त होजाय है समस्तधर्मका मूल समस्त विद्याका मूल विनय हैं विनयवान् समस्तके प्रिय होय है अन्यगुण जामें नाहीं होय सो पुरुष हू विनयतैं मान्य होय है विनय परम आभूषण है कोमल परिणामिमैं ही दया वसै है मार्दवतैं स्वर्गलोककी अभ्युदयसंपदा निर्वाणकी अविनाशीक संपदा प्राप्त होय है अर कठोरपरिणामीकूं शिक्षा नाहीं लागै है साधुपुरुष हैं तिनका परिणाम हू अविनयी कठोरपरिणामीकूं दूरहीतैं त्याग्या चाहै है जैसैं पाषाणमैं जल नाहीं प्रवेश करै तैसैं सद्गुरुनिका उपदेश कठोरपुरुषका हृदयमैं प्रवेश नाहीं करै है जातैं जो पाषाणकाष्ठादिक हू नरमाई लियेहोय ताका जो बालबालमात्र हू जहां घड़्या चाहै छील्या चाहै तहां बालमात्र ही उतरि आवै तदि जैसी सूरत मूरत बनाया चाहै तैसैं ही बनै है अर कोमलतारहितमैं जहां टांची लगावै तहां चिड़क उतरि दूरि पड़ै शिल्पीका अभिप्रायमाफिक घड़ाईमैं नाहीं आवै तैसैं कठोरपरिणामीकूं यथावत शिक्षा नाहीं लागै अभिमानी कोऊकूं प्रिय नाहीं लागै अभिमानीका समस्तलोक विनाकिया वैरी

होय है अर परलोकमैं अतिनीच तिर्यंचमनुष्यनिमैं असंख्यातकाल नानातिरस्कारका पात्र होय है यातैं कठोरतात्यागि मार्दवभावना ही निरंतर धारण करो। बहुरि कपट समस्तअनर्थनिका मूल है प्रीति अर प्रतीतिका नाशकरनेवाला है कपटीमैं असत्य छल निर्दयता विश्वासघातादि समस्त दोष वसैं हैं कपटीमैं गुण नाहीं समस्तदोष ही दोष वास करैं हैं मायाचारी यहां अपयशकूं पाय तिर्यंचनरकादिकगतिनिमें असंख्यातकाल भ्रमण करै है मायाचाररहित आर्जवधर्मका धारकमैं समस्तुण वसैं हैं समस्तलोकनिकूं प्रीतिका अर अप्रतीतिका कारण है परलोकमैं देवनिकरि पूज्य इंद्र प्रतींद्रादिक होय हैं यातैं सरलपरिणाम ही आत्माका हित है। बहुरि सत्यवादीमैं समस्तगुण तिष्ठैं हैं सदाकाल कपटादिदोषरहित जगतमैं मान्यताकूं हु प्राप्त होय है अर परलोकमैं अनेकदेवमनुष्यादिक जाकी आज्ञा मस्तकऊपरि धारैं हैं अर असत्यवादी इहां ही अपवाद निंदा करनेयोग्य होय हैं। समस्तके अप्रतीतिका कारण है बांधवमित्रादिक हु अवज्ञाकरि छांडैं हैं राजानिकरि जिह्वाछेद सर्वस्वहरणादिक दंड पावैं हैं अर परलोकमैं तिर्यंचगतिमैं वचनरहित एकेन्द्रिय विकलत्रयादि असंख्यातपर्याय धारैं हैं यातैं सत्यधर्मका धारण ही श्रेष्ठ है। बहुरि जाका शुचिआचरण होय सो ही जगतमैं पूज्य है शुचि नाम पवित्रता उज्ज्वलताका है जाका आहारबिहारादिक समस्तप्रवृत्ति हिंसारहित हिंसाका भयतैं यत्नाचारसहित होय अर अन्यके धनमैं अन्यकी स्त्रीमैं कदाचित स्वप्नमैं बांछा नाहीं होय सो ही उज्ज्वलआचरणको धारक हैं तिसकूं ही जगत पूज्य मानैं हैं निर्लोभीका समस्तलोक विश्वास करै है सो ही लोकमैं उत्तम है ऊर्द्धलोकका पात्र है लोभरहितका बड़ा उज्ज्वल यश प्रगटै है लोभी महानलीन समस्तदोषनिका पात्र है निंद्यकर्ममैं लोभीकी प्रीति होय है लोभीके ग्राह्यअग्राह्य खाद्यअखाद्य कृत्यअकृत्यका विचार ही नाहीं होय है इहां हू लोकमैं निंदा धर्मतैं पराङ्मुखता निर्दयता प्रगट देखिये है लोभी धर्मअर्थकामकूं नष्टकरि कुमरणकरि दुर्गति जाय है लोभीका हृदयमैं गुण अवकाश नाहीं पावै है इसलोक परलोकमैं लोभीकूं अचिंत्यक्लेश दुःख प्राप्त होय है यातैं शौचधर्मका धारण ही श्रेष्ठ है। बहुरि संयम

ही आत्माको हित है इसलोकमैं संयमका धारक समस्तलोकनिकै वंदनेयोग्य होय है समस्तपापनिकरि नाहीं लिपै है याका इसलोकमैं परलोकमैं अचिंत्यमहिमा है अर असंयमी है सो प्राणनिका घात अर विषयनिमैं अनुरागकरि अशुभकर्मका बंध करै है यातैं संयमधर्म ही जीवका हित है। बहुरि तप है सो कर्मका संवरनिर्जरा करनेका प्रधान कारण है तप ही आत्माकूं कर्ममलरहित करै तपका प्रभावतैं यहां ही अनेक ऋद्धि प्रगट होय है तपका अचिंत्यप्रभाव है तपविना कामकूं निद्राकूं कौन मारै तपविना बांछाकूं कौन मारै इंद्रियनिके विषयनिका मारनेमैं तप ही समर्थ है आशारूप पिशाचणी तपहीतैं मारी जाय है कामका विजय तपहीतैं होय है तपका साधन करनेवाला परीसह उपसर्ग आवनै हू रत्नत्रयधर्मतैं नाहीं छूटै यातैं तपधर्म ही धारण करना उचित है तपविना संसारतैं छूटना नाहीं है जातैं चक्रीपनाका हू राज्यछांड़ि तप धारै सो त्रैलोक्यमैं वंदनेयोग्य पूज्य होय है अर तपकूं छांड़ि राज्य ग्रहण करै सो अतिनिंद्य थुथुकार करनेयोग्य होय तृणतैं हू लघु होय यातैं त्रैलोक्यमैं तपसमान महान् अन्य नाहीं। बहुरि परिग्रहसमान भार नाहीं जेते दुःख दुर्ध्यान क्लेश वैर वियोग शोक भय अपमान हैं ते समस्त परिग्रहके इच्छककै है जैसैं जैसैं परिग्रहतैं परिणाम निराला होय तैसैंतैसैं खेदरहित होय है जैसैं बड़ाभारकरि दुःखित पुरुष भाररहित होय तदि सुखित होय तैसैं परिग्रहकी वासना मिटै सुखित होय है समस्तदुःख अर समस्तपापनिका उपजावनेका स्थान ये परिग्रह हैं जैसैं नदीनिकरि समुद्र तृप्त नाहीं होय अर ईंधनकरि अग्नि तृप्त नाहीं होय है आशारूप खाड़ा बड़ा अगाध है जाका तलस्पर्श नाहीं दिनदिन यामैं धरो त्योंत्यों खाड़ा बधता जाय जो आशारूप खाड़ा निधिनितैं नाहीं भरै सो अन्यसंपदातैं कैसैं भरै अर ज्योंज्यों परिग्रहकी आशाका त्याग करो त्योंत्यों भरतो चल्यो जाय तातैं समस्तदुःख दूरि करनेकूं त्याग ही समर्थ है त्यागहीतैं अंतरंग बहिरंग बंधनरहित होय अनंतसुखके धारक होहुगे परिग्रहके बंधनमैं बँधेजीव परिग्रह त्यागतैं ही छूटि मुक्त होय तातैं त्यागधर्म धारण ही श्रेष्ठ है। बहुरि हे आत्मन् यो देह अर स्त्रीपुत्र धन धान्य राज्य ऐश्वर्यादिकनिमैं एक परमाणुमात्र हू

तुम्हारा नाहीं हैं ये पुद्गलद्रव्य हैं जड़ हैं विनाशीक हैं अचेतन हैं इन परद्रव्यनिमैं 'अहं' ऐसा संकल्प तीव्र दर्शनमोहकर्मका उदयविना कौन करावै इस परद्रव्यमैं आत्मसंकल्प मेरे कदाचित मति होहु मैं अकिंचन्य हूं। या आकिंचन्यभावनाके प्रभावतैं कर्मका लेपरहित यहां ही समस्त बंधरहित हुआ तिष्ठै है साक्षात् निर्वाणका कारण आकिंचन्यधर्म ही धारण करो। बहुरि कुशील महापाप है संसार-परिभ्रमणका बीज है ब्रह्मचर्यके पालनेवालेतैं हिंसादिक पापनिका प्रचार दूरि भागै है समस्तगुणनिकी संपदा यामैं बसै है जितेंद्रियता प्रगट होय है ब्रह्मचर्यतैं कुलजात्यादि भूषित होय है परलोकमें अनेक ऋद्धिका धारक महर्द्धिक देव होय है। ऐसैं भगवान अरहंत देवाधिदेवके मुखारविंदतैं प्रगटहुवा दशलक्षणधर्म आत्माका स्वभाव है परवस्तु नाहीं है क्रोधादिक कर्मजनित उपाधि दूरि होतैं स्वयमेव आत्माका स्वभाव प्रगट होय है क्रोधके अभावतैं क्षमागुण प्रगट होय है मानके अभावतैं मार्दवगुण प्रगट होय है मायाके अभावतैं आर्जवगुण प्रगट होय है लोभके अभावतैं शौचधर्म प्रगट होय है असत्यके अभावतैं सत्यधर्म प्रगट होय है कषायनिके अभावतैं संयमगुण प्रगट होय है इच्छाके अभावतैं तपगुण प्रगट होय है परमैं ममताके अभावतैं त्यागधर्म प्रगट होय है परद्रव्यनितैं भिन्न अपने आत्मानुभव न होनेतैं आकिंचन्यधर्म प्रगट होय है वेदनिके अभावतैं आत्मस्वरूपमैं प्रवृत्तितैं ब्रह्मचर्यधर्म प्रगट होय है यो दशप्रकारधर्म आत्माको स्वभाव है यो धर्म किसीतैं खोस्या खुसै नाहीं लुट्या लुटै नाहीं चोर चोरि सकै नाहीं राजका लूट्या लुटै नाहीं स्वदेशमैं परदेशमैं सदा याका स्वरूप छूटै नाहीं किसीका विगाड्या विगड़ै नाहीं धनकरि मोल आवै नाहीं आकाशमैं पातालमैं दिशामैं विदिशामैं पहाड़मैं जलमैं तीर्थमैं मंदिरमैं कहीं धरया नाहीं आत्माका निजस्वभाव है याका लाभ सम्यग्ज्ञानश्रद्धानतैं होय है अर ऐसा सुगम है जो बालक वृद्ध युवा धनवान निर्धन बलवान निर्बल सहायसहित असहाय रोगी निरोगी समस्तके धारण करनेमैं आवनेयोग्य स्वाधीन है धर्मके धारनेमैं कुछ खेद क्लेश अपमान भय विषाद कलह शोक दुःख कदाचित है नाहीं दुर्लभ है नाहीं बोझ ठावना नाहीं दूरदेश जावना नाहीं

क्षुधा तृषा शीत उष्णताकी वेदनाका आवना नाहीं किसीका विसंवाद झगड़ा है नाहीं अत्यंत सुगम समस्तक्लेश दुःखरहित स्वाधीन आत्माका ही सत्यपरिणमन है। यातैं समस्तसंसारपरिभ्रमणतैं छूटि अनंतज्ञान दर्शन सुख वीर्यका धारक सिद्धअवस्था याका फल है। ऐसैं दशलक्षणधर्मको संक्षेपकरि वर्णन कीयो ॥

अब शल्यनिका जाकै अभाव होय सो व्रती होय है शल्यसहितकै व्रत कदाचित नाहीं होय यातैं तीनशल्यका स्वरूप श्रावककूं हू जाणना चाहिए। निदानशल्य, मायाशल्य, मिथ्यादर्शनशल्य ये तीनों ही शल्य व्रतके घात करनेवाली हैं तिन तीनशल्यनिमैं निदान है सो तीनप्रकार है एक प्रशस्तनिदान, अप्रशस्तनिदान, भोगार्थनिदान ये तीनप्रकार ही निदान संसारका कारण है इहां निदाननाम आगामी वांछाका है तिनमैं जो संयम धारनेकेअर्थि उत्तमकुल उत्तमसंहनन बल वीर्य शुभसंगति तथा बंधुजननिकी धर्ममैं सहायता उज्ज्वलबुद्ध्यादिककूं चाहना सो प्रशस्तनिदान है। बहुरि अभिमानकेअर्थि उत्तमकुल जाति भलीबुद्धि प्रबलशक्ति तथा आचार्यपना गणधरपना तीर्थंकरपना इत्यादिक अपनीआज्ञा तथा आदर उच्चता प्रवर्तनेकेअर्थि चाह करना सो अप्रशस्तनिदान है तथा क्रोधी होय अन्यके मारनेकेअर्थि वांछा करना परके स्त्री पुत्र राज्य ऐश्वर्यका नाशकेअर्थि वांछा करना सो हू अप्रशस्तनिदान है। बहुरि जो संयमधारणकरि घोरतपश्चरणकरि ताका फल इंद्रियनिका विषय राज्य ऐश्वर्य तथा देवपना तथा अनेकअप्सरानिका स्वामीपना तथा जातिकुलमें उच्चपना तथा चक्रीपना चाहना सो भोगकेअर्थि निदान जानना सो यो निदान दीर्घकाल संसारपरिभ्रमण करावनेवाला जानना। संयमका प्रभावकरि समस्तकर्मका नाशकरि अतींद्रियअविनाशी निर्वाणका अनंतसुख पाईये है तिस संयमकूं पालि भोगनिकी वांछा करै है सो एककौड़ीमें चिंतामणिरत्नकूं बेचै है तथा अपनी रत्ननिकी भरी समुद्रमैं दौड़ती नावकूं ईंधनकेअर्थि तोड़ै है तथा मणिमय हारकूं सूतकेअर्थि तोड़ै है तथा गोशीर जो चंदन ताकूं भस्मके अर्थि दग्ध करै है जो वांछा करै है ताके पुण्य हू नष्ट होजाय पापका बंध होजाय है पुण्यका बंध तो निर्वांछक भावतैं

होय है सम्यग्दृष्टी तो भोगनिकी वांछारहित है सम्यग्दृष्टीकूं जो इंद्रअहमिंद्रलोकका सुख है सुखाभास विनाशीक पराधीनताकरि दुःखरूप दीखै है वाकूं तो आत्मीकस्वाधीन अतींद्रियसुखका अनुभव है यातैं इंद्रियजनित आतापनैं महाक्लेशका भरया तृष्णारूप आतापकूं बधावना विषयनिके आधीनहूं कैसैं सुख मानैं जैसैं जो अमृत आस्वादन किया सो कटुक महादुर्गंध आतापउपजावनेवाली कडवी खलिकूं कैसैं वांछा करै सम्यग्दृष्टीके तो ऐसी वांछा है।

दुक्खक्खयकम्मक्खयसमाहिमरणं च बोहिलाहो य। एयं पत्थे दव्वं ण पत्थणीयं तदो अण्णं ॥ १ ॥

अर्थ—हमारे शरीरधारणादिक जन्ममरण क्षुधातृषादिक दुःखनिको क्षय होहु आत्मगुणकूं नष्ट करनेवाला मोहनीय ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतराय कर्मको क्षय होहु तथा इस पर्यायमैं च्यार आराधनाका धारणसहित समाधि मरण होहु बोधि जो रत्नत्रय ताका लाभ होहु सम्यग्दृष्टीकै एती ही प्रार्थना करने योग्य है। इनतैं अन्य इसभवमैं परभवमैं प्रार्थना करने योग्य नाहीं है संसारमैं परिभ्रमण करता जीव उच्चकुल नीचकुल राज्य ऐश्वर्य धनाढ्यता निर्धनता दीनता रोगीपना नीरोगपना रूपवान-पना विरूपपना बलवानपना निर्बलपना पंडितपना मूर्खपना स्वामीपना सेवकपना राजापना रंकपना गुणवानपना निर्गुणपना अनंतानंत वार पाया है अर छांड्या है तातैं इस क्लेशरूप संयोगवि-योगरूप संसारमैं सम्यग्दृष्टी निदान कैसैं करै है इस संसारमैं अनंतपर्याय दुःखरूप पावै तदि एकपर्याय इंद्रियजनित सुखकी पावै फिर अनंतवार दुःखकी पावै सो ऐसैं परिवर्तन करते इंद्रियजनित सुख हू अनंतवार पाया अब सम्यग्दृष्टी इंद्रियनिके सुखकी कैसैं वांछा करै। इस संसारमैं स्वयंभूरमणसमुद्रका समस्तजलप्रमाण तो दुःख है अर एक बालकी अणीकै जल लागै ताका अनंतभाग करिये तिनमैं एकभाग प्रमाण इंद्रियजनित सुख है इसतैं कैसैं तृप्ति होयगी अर भोगनिका तथा इष्टसंपदाका संयो-गका जेता सुख है तिसतैं असंख्यातगुणा वियोगकालमैं दुःख है अर संयोगहोय ताका वियोग नियमसूं होयगा जैसैं सहतकरि लिप्त खड्गकी धाराकूं जो जिह्वाकरि चाटै ताकै स्पर्शमात्र मिष्टताका

सुख अर जिह्वा कटिपड़ै ताका महादुःख तैसैं विषयनिके संयोगका सुख जानो तथा जैसैं किंपाकफल दीखनेमैं सुंदर खावनेमैं मिष्ट पीछैं प्राणनिका नाश करैं है तथा जहरतैं मिल्या मोदक खातां तो मीठा परंतु परिपाककालमैं प्राणनिका माहादुखतैं नाश करनेवाला है तैसैं भोगजनित सुख जानहु। बहुरि जैसैं कोउ पुरुषकनैं बहुतधन होय अल्पमोल लीया चाहै तो बहुतधनके साटै थोरा धन मिलिजाय अर आपकनैं अल्पधन होय अर वाका मोल बहुत चाहै तो नाहीं मिलै तैसैं जो स्वर्गकी संपदा पावनेयोग्य पुण्यबंध कीया होय अर पाछै निदान करैं तो राज्यसंपदा मिलि जाय तथा व्यंतरादिकदेवनिमैं जाय उपजै निदान करनेतैं अपना अधिकपुण्य होय ताकूं घाति तुच्छसंपदा जाय पावै है पाछैं संसारपरिभ्रमण याका फल है। जैसैं सूतकी लांबी डोरी करि बंधा पक्षी दूरि उड़ि गया हू उसी स्थानकूं प्राप्त होय है जातैं दूरि उडिचल्या तो कहा पग तो सूतकी डोरितैं बंधा है जाय नाहीं सकैगा तैसैं निदान करनेवाला अतिदूरि स्वर्गादिकमैं महार्द्धिकदेव हुवा हू संसारहीमैं परिभ्रमण करैगा देवलोक जाय करके हू निदानके प्रभावतैं एकेंद्रिय तिर्यंचनिमैं तथा पंचेंद्रियतिर्यंचनिमैं तथा मनुष्यमैं आय पापसंचयकरि दीर्घकाल परिभ्रमण करै है अथवा जैसैं ऋणसहितपुरुष करारकरि बंदीगृहतैं छूटिकरि अपनेघरमैं सुखसूं आयवस्या तो हू करार पूर्णभये फिर बंदीगृहमैं जायबसै तैसैं निदानकरिसहित पुरुषहू तपसंमयतैं पुण्य उपजाय स्वर्गलोक जाय करकैं हू आयु पूर्ण भये स्वर्गतैं चय संसारहीमैं परिभ्रमण करै है यहां ऐसा जानना जो मुनिपनामैं वा श्रावकपनामैं मंदकषायके प्रभावतैं वा तपश्चरणके प्रभावतैं अहमिंद्रनिमैं तथा स्वर्गमैं उपजनेका पुण्य संचय कीया होय अर पाछै भोगनिका बांछादिरूप निदान करै तो भवनत्रिकादिक अशुभदेवनिमैं जाय उपजै जाकै पुण्य अधिक होय अर अल्पपुण्यकाफलके योग्य निदान करै तो अल्पपुण्यवाला देव मनुष्य जायउपजै अधिक पुण्यवाला देव मनुष्यनिमैं नाहीं उपजै जो निर्वाणका तथा स्वर्गादिकनिके सुखका देनेवाला मुनिश्रावकका उत्तमधर्म धारणकरि निदानतैं विगाड़ै है सो ईंधनके अर्थ कल्पवृक्षकूं छेदै है ऐसैं निदानशल्यका दोष

वर्णन कीया। अर मायाशल्यका दोष कौन वर्णन करिसकै। पूर्वे मायाचारके दोष कहे ही मायाचारीका व्रतशीलसंयम समस्त भ्रष्ट है जो भगवान जिनेंद्रका प्ररूप्या धर्म धारण करो हो अर आत्माकूं दुर्गतिनिके दुखनें रक्षा करी चाहो हो तो कोटिउपदेशनिका सार एक उपदेश यह है जो मायाशल्यकूं हृदयमैंसूं निकासो यश अर धर्म दोऊनिका नाश करनेवाला मायाचार त्यागि सरलता अंगीकार करो। बहुरि मिथ्यात्वका पूर्वे वर्णन कीया सो समस्त संसारपरिभ्रमणका बीज है मिथ्यात्वके प्रभावनैं अनंतानंत परिवर्तन कीया मिथ्यात्वविषकूं उगल्यांविना सत्यधर्म प्रवेश ही नाहीं करै मिथ्यात्वशल्य शीघ्र ही त्यागो। मायामिथ्यानिदान इन तीनशल्यका अभाव हुवाविना मुनिका श्रावकका धर्म कदाचित नाहीं होय निशल्य ही व्रती होय है। बहुरि दुष्टमनुष्यनिका संगम मतिकरो जिनकी संग तिनैं पापमैं ग्लानि जाती रहै पापमैं प्रवृत्ति होजाय तिनका प्रसंग कदाचित मति करो जुवारी चोर छली परस्त्रीलंपट जिह्वा इंद्रियका लोलुपी कुलके आचारतें भ्रष्ट विश्वासघाती मित्रद्रोही गुरुद्रोही धर्मद्रोही अपयशके भयरहित निर्लज्ज पापक्रियामैं निपुण व्यसनी असत्यवादी असंतोषी अतिलोभी अतिनिर्दयी कर्कशपरिणामी कलहप्रिय विसंवादी वा कुचाल प्रचंडपरिणामी अतिक्रोधी परलोकका अभाव कहनेवाला नास्तिक पापके भयरहित तीव्रमूर्छाका धारक अभक्षका भक्षक वेश्यासक्त मद्यपानी नीचकर्मी इत्यादिकनिकी संगति मति करो जो श्रावकधर्मकी रक्षा कीया चाहो हो जो अपना हित चाहो हो तो अग्निसमान विषसमान कुसंग जानि दूरतें ही छांडो जातें जैसाका संसर्ग करोगे तिसमैं ही प्रीति होयगी अर प्रीति जामैं होय ताका विश्वास होय विश्वासतें तन्मयता होय है तातें जैसी संगति करोगे तैसा हो जावोगे जातें अचेतनमृत्तिका हू संसर्गतें सुगंध दुर्गंध होय है तो चेतन मनुष्य संगतिकरि परके गुणरूप कैसें नाहीं परिणमैगा जो जैसेकी मित्रता करै है सो तैसा ही होय है दुर्जनकी संगतिकरि सज्जन हू अपनी सज्जनता छांडि दुर्जन होजाय है जैसें शीतल हू जल अग्निकी संगतितैं अपना शीतलस्वभाव छांडि तप्तताने प्राप्त होय है उत्तमपुरुष हू अधमकी संगतिपाय

अधमताकूं प्राप्त होय हैं जैसैं देवताके मस्तक चढ़नेवाली सुगंधपुष्पनिकी माला हू मृतकका हृदयका संसर्गकरि स्पर्शनेयोग्य नाहीं रहै है दुष्टकी संगतितैं त्यागीसंयमीपुरुष हू दोषसहित शंका करिये है जैसैं कलालका हस्तमैं दुग्धका घड़ा हू मदिराकी शंका उपजावै है तथा कलालका घरमैं दुग्धपान करता हू ब्राह्मण लोकनिकै मदिरापीवनेकी शंका उपजावै है लोक तो परके छिद्र देखनेवाले हैं परके दोष कहनेमैं आसक्त हैं जो तुम दुष्टनिकी दुराचारीनिकी संगति करोगे तो तुम लोकनिंदानै प्राप्त होय धर्मका अपवाद करावोगे तातैं कुसंग मति करो खोटेमनुष्यकी संगतितैं निर्दोष हू दोषसहित मिथ्या-मार्गी शीघ्र होय है जातैं मिथ्यात्वका अर कषायनिका परिचय तो अनादिकालका है अर वीतराग-भाव कदाचित कोई महाकष्टतैं उपज्या सो कुसंग पाय क्षणमात्रमैं जाता रहैगा अनादिकालका मोहकर्म बड़ा प्रबल है। याका उदयतैं विषयकषायनिमैं विनासिखाया स्वयमेव प्रवर्तै है फिर कुसंगतितैं तौ पवनकी संगतितैं अग्निकी ज्यों अतिप्रज्वलितहोय है यातैं कुसंगछांड़ि शुभसंगति करो सज्जननिकी संगतितैं दुष्ट हू अपना दोषकूं छांड़े हैं। बहुरि सतसंगतितैं निर्गुणपुरुष हु जगतकै मान्य होय है जैसैं निर्गंध हू पुष्प देवतानिकी संगतितैं लोक मस्तकविषैं चढ़ावै है यद्यपि कोऊकै धर्मैं प्रीति नाहीं है अर परीषह सहनेमैं अर इंद्रियनिके विषम त्यागनेमैं अतिपरान्मुखपना है तो हू संयमी त्यागी व्रती पुरुषनिकी संगतिरहनेके प्रभावतैं लज्जाकरि भयकरि अभिमानकरि अन्यायके विषयकषायतैं विरक्त होय ही है अर जो प्रकृतिकरि ही मंदकषायी धर्मानुरागी पापतैं भयभीत होय अर ताकूं उत्तमसंगति मिलै ताकै परमधर्मका ग्रहण होय संसारके पारकूं पावै ही है बहुरि जिनतैं सम्यक्धर्मकी प्रवृत्ति होय जिनकी संगतितैं अनेकजन विषयकषायतैं विरक्त होय त्यागसंयमतपमैं लीन होजाय ऐसा न्यायमार्गी धर्मचर्याका धारक धर्मात्मा एक पुरुषकरि ही जगत भूषित है कृतार्थ है धर्मरहित विषयी कषायी बहुतकरि कहा साध्य है। कल्पवृक्ष तो एक ही समस्त वेदनारहित करि वांछित सुख दे है अर विषके बहुत वृक्ष केवल मूर्छा संताप मरणके कारणकरि कहा साध्य है

इसलोकमैं जो अनर्थ पैदा होय सो कुसंगतैं होय है कुसंगविना ज्वारी चोर परस्त्रीलंपट वेश्यासक्त अभक्ष्यभक्षक मद्यपानी होय नाहीं बड़े बड़े अनर्थ दोष कुसंगतैं ही होय हैं यातैं दोऊलोकमैं अपनाहित चाहो हो तौ कुसंग मति करो। प्रत्यक्ष देखिये है जे उत्तमकुल उत्तमउज्ज्वलधर्म पाया है फिर हू कुदेव कुगुरु कुधर्म पाखंडीनिकी उपासना करैं हैं भांग पीवैं हैं जरदा खाय हैं अमल खाय हैं बहुरि हुक्का पीवैं हैं रात्रिभक्षण करैं हैं वेश्याकी उच्छिष्ट खाय हैं जुवा खेलैं हैं चोरी करैं हैं चुगली करैं हैं परधन परस्त्रीकी ओर तृष्णा करैं हैं जिह्वाइंद्रियके लोलपी हैं निर्दयपरिणामी कुवचन बोलनेमैं रक्त परविघ्नसंतोषी उत्तसंगतिबिना कुसंगतैं ही होय है महा पुण्याधिकारी मनुष्य होय सो इस विषम कलिकालमैं कुसंगछांड़ि शुभसंगति पावैं हैं अर जो जिनेन्द्रधर्म धारण किया है सो अपनी प्रशंसा अर परकी निंदा मति करो जो अपने मुखतैं अपना प्रशंसा करै है सो अपने यशका नाश करै है अतिमानी मदवान विना अपनी प्रशंसा अन्य नाहीं करै है अपनी प्रशंसा करता पुरुष तृणसमान लघु होय है अवज्ञायोग्य होय है विद्यमान हू गुण अपने मुखतैं कहि गुणरहित होय दोषनिकौ पात्र होय है जामैं और कछू हू दोष नाहीं होय ताकै बड़ाभारी दोष आपकी प्रशंसा करना है अपने मुखतैं अपनी प्रशंसा नाहीं करना सो बड़ागुण है अपना गुणकी प्रशंसा नाहीं करता पुरुषका विद्यमानगुण नाशकूं नाहीं प्राप्त होय है जैसैं अपना तेजकी नाहीं प्रशंसा करता सूर्यका तेज जगतमैं विख्यात होय है आपमैं गुण नाहीं अर आपकी प्रशंसा करता पुरुषकै गुणवानपना प्रगट नाहीं होय है जैसैं स्त्रीकी ज्यों हावभाव विलासविभ्रम शृंगार अंजन वस्त्रादिक धारण कर स्त्रीकी ज्यों आचरण करता नपुंसक स्त्री नाहीं होयगा नपुंसक ही रहैगा आपमैं गुण विद्यमान हू होय अर कोऊ कीर्तन करै प्रशंसा करै तदि उत्तम पुरुष तो अपनी कीर्ति श्रवणकरि लोकनिमैं लज्जाकूं प्राप्त होय हैं सत्पुरुषनकूं अपनी कीर्ति नाहीं रुचै हैं अपनी कीर्ति श्रवणकरि अतिलज्जित हुवा आत्मनिंदा करै है जो मैं संसारी अनेकदोषनिकरि भरया मेरी प्रशंसाकरि लोक मेरेऊपरि बडा भार आरोपण करैं हैं प्रशंसायोग्य

तो जे आत्माकी परमविशुद्धि ताके इच्छक होय मोह काम क्रोधादिकका विजयकूं प्राप्त भये हैं हम संसारी रागद्वेषकरि व्याप्त इंद्रियनिकै विषयनिकरितर्जित परिग्रहासक्त अतिनिंदनेयोग्य हैं जिनकै एक घड़ी हू प्रमादीपनातैं धर्मरहित व्यतीत होय है ते जगतमैं महामूढ़ हैं निंद्य हैं यो मनुष्यजन्म अतिदुर्लभ अर जामैं जिनधर्मका पावना अतिदुर्लभतर ऐसे अवसरमैं भी जे धर्मछांड़ि विषयनिमैं रचैं हैं ते अपने गृहमैं उपज्या कल्पवृक्षकूं काटि विषका वृक्ष लगावैं हैं तथा चिंतामणिरत्नकूं काक उड़ावनेकूं क्षेपैं हैं तथा चिंतामणिरत्नकूं कांचका खंडमैं बेचैं है इस मनुष्यजन्मकी एकएकघड़ी कोटिधनमैं दुर्लभ सो वृथा जाय है लोकनिकी कथामैं तथा लोकनकी रागद्वेषपरणति देखि मैं हू कषायसहित हुवा दुर्ध्यानतैं मनुष्यजन्म व्यतीत करूं हूं सो मुझसमान निंदनेयोग्य अन्य नाहीं इत्यादिक अपनी निंदा गर्हा करना उत्तमपुरुषकूं अपनी प्रशंसा कैसैं रुचै नाहीं रुचै आपकूं नीचा देखै है जो वचनकरि अपनी प्रशंसा करैं सो नीचगोत्रनामकर्मका बंध करैं हैं अर इहां लोकनिमैं महानिंद्य होय है सत्पुरुष अपनेगुण आप प्रगट नाहीं करैं तो हू उज्ज्वल आचारणकरि जगतमैं गुण विख्यात होय है जैसैं चंद्रमाका उद्योत अर शीतलपना अर आल्हादकपना विना कह्या जगतमैं विख्यात होय है। बहुरि परकी निंदा कदाचित मति करो परकी निंदा करनेसमान जगतमैं दोष नाहीं है परकी निंदा महाबैरका कारण है दुर्ध्यानका कारण है कलहका कारण है भयका कारण है दुःखका तथा पश्चात्तापका तथा शोकका तथा विसंवादका तथा अप्रतीतिका कारण है जगमैं निंदा होय है परकी निंदा करनेवाला अपना धर्म अर यश अर बड़ापनाका अत्यंत नाश करै है जे परके दोष प्रगटकरि आप निर्दोष बण्या चाहैं हैं सो परकूं औषधि भक्षणकरनेतैं अपना नीरोगपना चाहैं हैं कोटिदोषनिका शिरोमणि एक अन्यकी निंदा करना है यातैं जो जिनेन्द्रधर्म धारण करो हो तो परके दोष मति कहो सत्पुरुष तो परमैं दोषदेखि आप लज्जित होय हैं अर परका दोषकूं अपना सामर्थ्य प्रमाण ढांकैं हैं जैसैं अपना अपवादका भय करैं तैसैं परके अपवादहोनेका बड़ाभय करै है जो संसारीजीवनिकै ज्ञानावरण

दर्शनावरण कर्मका उदय प्रवल है जाकरि जीव अज्ञानकूं प्राप्त होय रहैं हैं अर मोहनीकर्मके उदयतैं रागी द्वेषी कामी क्रोधी लोभी मानी कपटी होयरहैं हैं भगवान शोकवान ग्लानिवान रतिके वश अरतिके वशीभूत होय नाना विकाररूप कुचेष्टा करैं हैं जैसैं मदिरा पीय परवस होय आपा भूलैं है तथा धतूरा खाय उन्मत्तचेष्टा करता परबश हुवा आपाभूलि निंद्यचेष्टा करैं है तथा जैसैं वातपित्तकरि उन्मत्त भया परवस बकवाद करैं हैं तैसैं संसारीजीव विषयकषायके बस होय निंद्यचेष्टा करैं हैं इनकी तो करुणाधारि दोषनितैं छुड़ाऊं निंदा अपवाद कैसैं करूं परका अपवादकरि अनेक निंद्यपर्याय दुर्गतिनिमैं तिरस्कार पाया है सम्यग्दृष्टी तो नित्य ही ऐसी प्रार्थना करैं हैं जो मेरे परके दोष कहनेमैं मौन हौ हू मेरा समस्तजीवनप्रति वचन ही प्रवर्तो जिनधर्मी तो गुणग्राही ही होय है मिथ्यादृष्टीनिके तीव्र कषायीनिके मिथ्या आचारण देखि वैरबुद्धि करि निंदा नाहीं करै है जो याका अपवाद होय तो अच्छा है ऐसा अभिप्राय नाहीं धारै है दोपनिकूं मिथ्यात्वकूं अनंतकाल दुखनिका देनेवाला जानि करुणाबुद्धितैं मंदकषायी जीवनिकूं गुण दोष हानिवृद्धिका स्वरूप दिखावै है। बहुरि निंद्रा आलस्य प्रमादका विजय करो निद्रा समस्तधर्मका अभाव करै है जाकै निद्राका विजय नाहीं हुवा ताकै छहआवश्यक स्वाध्याय ध्यान जाप्य समस्त उत्तमकार्य नष्ट होजाय हैं मुनीश्वरनिके तो तप ही निद्राका विजयके अर्थि है निद्रा है सो दर्शनावरणका उदयजनित सर्वघाती है आत्माकूं अचेतन करै है जो निद्राकूं नाहीं जीती ताकै समस्त हितरूप कार्य नष्ट होजायगा। शास्त्र पठन करैगा अथवा जिनसूत्रका श्रवण करैगा अर निद्रा ऊंग आजायगी तदि श्रवणकरना नाहीं होयगा जिनसूत्रके श्रवणपठनमैं अरुचि होजायगी ध्यानसामायिक करते निद्रा आजायगी तदि ध्यान जाप्य सामायिक आत्मध्यान भावना समस्त नष्ट होजायगा निद्रामैं एकन्द्रीसमान होय है समस्तज्ञानकूं निद्रा नष्टकरि दे है अबुद्धिपूर्वक अनेकविकल्प आत्मामैं उपजै है बुद्धिपूर्वक आत्माका हित होनेकी भावनाका अभाव होय है दिवसमैं निद्रातैं दर्शनावरणकर्मका आस्रव

होय है मुनीश्वर तो प्रहररात्रि गये पाछैं खेदप्रमादादि दूरिकरनेकूं मध्यमरात्रिके दोयप्रहरमैं शयन करैं सो अल्पनिद्रा लेय फिर जाग्रित हुआ द्वादशभावनादिक चिंतवन करैं हैं फिर क्षणमात्र निंद्रा आवै फिर जाग्रित होय धर्मध्यानमैं लीन होय हैं ऐसैं वीचली दोयप्रहरमैं हू अनेकवार जाग्रित होय धर्मध्यान करता रहैं हैं अर जो कदाचित मुहूर्तप्रमाण भी निद्रामैं अचेत होजाय तो निद्राके जीतनेकै अर्थि उपवास दोयउपवास तीन चार पांच इत्यादिक उपवास तथा रसपरित्यागादिक महान अनशनादिकतपकरि निद्राका अभाव करैं हैं निद्राके जीतनेकूं अर कामके जीतनेकी सावधानीकै अर्थि अनशनादितप निरंतर आचरैं हैं निद्रामैं तो समस्तपरिणामनिकी सावधानीको अर वचनकायकी सावधानीको अभाव होय है जाकूं उत्तममनुष्यजन्म अर उत्तमधर्मका नाशकरि एकेन्द्रीसमान होय मनुष्यआयुकूं पूर्ण करना होय तो बहुतनिद्रा ले है दिवसमैं निद्रा ले ताका तो व्रतसंयम ही गलि जाय है खेदआलस्यादिक दूरि करनेकूं रात्रिविषैं अल्पनिद्रा ग्रहण करैं हैं निद्राआलस्यादिक तो जीवका अंतर्गत महावैरी हैं निद्रामैं हेयउपादेय कार्यअकार्य हितअहित योग्य अयोग्यका विचार रहित होय है निद्रा जीते विना इसलोकहीके समस्तकार्य नष्ट होजाय तदि परमार्थरूप कार्य कैसैं वने यातैं जो विद्या विनय तप संयम स्वाध्याय ध्यान जाप्यकी सिद्धि चाहो हो तो निद्राकूं जीति खेद ग्लानिके दूरि करनेकूं अल्पनिद्रा ग्रहण करो।

अव अष्ट शुद्धि का वर्णन करैं हैं। यद्यपि ये अष्ट शुद्धता मुनीश्वर परमवीतरागी साधुनिकै होय है तथापि साधुपना धारण करनेका इच्छक अर साधुका धर्ममैं भावना भावनेका इच्छक जो गृहस्थ ताकूं अष्टशुद्धता जाननेयोग्य हैं। भावशुद्धि, कायशुद्धि, विनयशुद्धि, ईर्यापथशुद्धि, भिक्षाशुद्धि, प्रतिष्ठापनाशुद्धि, शयनासनशुद्धि, वाक्यशुद्धि ये अष्टप्रकार शुद्धि हैं तिनमैं मोहनीयकर्मका क्षयोपशमतैं उपजी जो मोक्षमार्गमैं रुचि ताकरि परिणामनिमैं ऐसी उज्ज्वलता होय जो रत्नत्रय ही मार्ग है अन्य है सो संसारमैं उलझावनेवाले कुमार्ग हैं आत्माका हित मोक्ष है सो मोक्ष कर्मके बंधनरहित है अर कर्मबंधनका

छूटना रत्नत्रयतैं ही है ऐसा दृढ़श्रद्धानज्ञानतैं उपजी संसारदेहभोगनितैं विरागतारूप समस्तरागद्वेषादि मलरहित उज्ज्वलता सो भावशुद्धि है। जातैं भावनिमैंतैं विषयनिकी इच्छा रागद्वेषादिउपद्रव मिथ्यात्वरूप महामल दूरि हुयाविना मुनिका आचार तथा श्रावकका आचार प्रकाशकूं प्राप्त नाहीं होय है जैसैं अतिशुद्ध भींतिऊपरि चित्राम उघड़ै है कर्दमादिकरि लिप्त भूमिऊपरि अतिचतुर हू चित्रकार सुंदर रंगावली नाहीं कर सकै है तैसैं मिथ्यात्वकषायादिकरि लिप्तपुरुषकै हू सम्यग्ज्ञानचारित्र नाहीं होय है ऐसैं भावशुद्धता कही। साधुनिकै कायशुद्धि कैसैं होय है। जाकै आचरण तो सूतके रेशमके सणके घासके रोमके चामके वृक्षनिके वक्कलके वस्त्रादिकआच्छादन तथा भस्मादिक लगावनेकरि रहित हैं बहुरि समस्तआभरणादिकरहित अर स्नानगंधलेपनादिसंस्काररहित जैसैं रेत धूल पशेव तृणादि शरीरउपरि आय चिपै तिनका संस्काररहित अर नाशिका नेत्र ललाट ओष्ठ भृकुटी मस्तक स्कंध हस्त अंगुली इत्यादिकनिका हलावने चलावनेके विकाररहित अर सर्वत्र क्रियामैं यत्नाचारसहित प्रशमसुखकूं मूर्तीक दिखावै ही है कहा मानूं ऐसा कायकूं होतेसंते आपके परतैं भय नाहीं होय है अर परके आपतैं भय नाहीं होय है ऐसी कायकी विशुद्धता साधुनिकै ही होय है अर श्रावक हु एकदेश शुद्धताका धारक जे वस्त्राभरण पहरैं हैं ते ऐसे पहरे जिनकरि आपके तथा परके काम नाहीं उपजै अभिमान नाहीं उपजै भय नाहीं उपजै लोकनिके मान्य अपना पदस्थके योग्य तथा अवस्थाके योग्य पहरणा तथा अंगकी चेष्टा नेत्रनिकरि अवलोकन वचनका कहना बैठना सोवना चालना रागादि अभिमानादि दोषरहित प्रवर्तन करना सो कायशुद्धि होय है। अब विनयशुद्धता ऐसी जानो अरहंतादिक परमगुरुनिकी यथायोग्य पूजामैं लीनता अर सम्यग्ज्ञानादिकमैं यथाविधि भक्तिकरि युक्तरहना अर सर्वकाल गुरुनिके अनुकूल प्रवर्तना अर प्रश्नकरनेमैं स्वाध्यायमैं वाचनामैं कथनीमैं वीनतीकरनेमैं निपुणपना तथा देशकालभावनिकूं जानि निपुणताकरी आचार्यादिकनिकै अनुकूल प्रवर्तना, आचरण करना सो विनयशुद्धता है। विनय है सो ही समस्त चारित्र संपदाको

मूल है विनय ही पुरुषका आभूषण है विनय ही संसारसमुद्र तिरनेकूं नाव है याहीतैं गृहस्थ है सो मनकरि वचनकरि कायकरि प्रत्यक्ष परोक्ष विनयहीकूं धारण करो सो आगैं तपके कथनमैं हू वर्णन करसी । अब साधुनिकै ईर्यापथशुद्धता ऐसी जान हू नानप्रकारके जीवनिके स्थान अर जीवनके उत्पत्तिरूप योनि अर जे जे जीवनिके रहनेके आश्रय तिनके जाननेकरि उपज्या यत्नाचार तातैं जीवांके पीड़ाकूं दूरहीतै त्यागकैं गमन करैं हैं बहुरि अपना ज्ञान अर सूर्यका प्रकाशकरि नेत्रादिक इंद्रियनिका प्रकाशकरि देखाहुवा मार्गमैं गमन करैं हैं अर मार्गमैं उतावला शीघ्रगमन अर विलंबकरता गमन अर संभ्रमकरि गमन विस्मयरूप आश्चर्यसहित गमन अर क्रीड़ाकरता गमन अर शरीरकूं विकारसहितकरता गमन अर दिशानिकुं अवलोकनकरता गमन यह गमनके दोष हैं इन दोषनिकरिरहित चारहस्तप्रमाण भूमिको अग्रभागविषैं देखी अनेकमनुष्य गाड़ा गाड़ी बलद गर्दभादिक अनेक जिसमार्गकरि गमन कीया होय अर प्रातःकालका पवन मार्गकूं स्पर्शन कीया होय तथा सूर्यकी किरणनिका संचार जिस मार्गमैं भया होय तिस मार्गमैं दिवसविषै गमन करैं तिस साधुकै ईर्यासमिति होय है । ईर्यासमितिकूं होते संतेही संयमप्रतिष्ठित होय है जैसैं सुनीति होतेही विभव होय है अर याहीका एकदेशधर्म अंगीकार करता गृहस्थकूं हू ईर्यापथकीशुद्धतारूप गमन करनेकी भावना राखणा अर अपनी शक्तिप्रमाण मार्गमैं कीड़ाकीड़ी हरित अंकुर घास दूब कर्दम नील इत्यदिककूं टालि दयापरिणामतैं गमन करना उचित है अर देखि शोधिकरि गमन करता गृहस्थकै हू इसलोकमैं हू खाड़ामैं पड़नेकी ठोकर लागनेकी सर्पादिक दुष्टजीवनिकी बाधा नाहीं होय है जिनेंद्रकी आज्ञाका पालन होय है । अब मुनीश्वरनिकै भिक्षा शुद्धता वर्णन करैं हैं-साधु जब वनतैं भिक्षा वास्तै नगरग्रामादिकमैं जाय तदि देशकी रीतितैं कालकूं जानि अर नगरग्रामादिककूं उपद्रवरहित जानकरि जाय हैं जो अग्निका उपद्रव तथा परचक्रका उपद्रव तथा राजादि महंतपुरुषनिकै मरणका उपद्रव होय तथा धर्ममैं उपद्रव जानै तो भिक्षाकूं नाहीं जाय है तथा महानहिंसा होती जानै तो नाहीं जाय जिस-

कालमें चाकीनिका मूसलनिका बहुतशब्द होतें मंद रहि जाय तथा अनेकभेषधारी भिक्षा लेय आवतें होय तिस कालमें मलमूत्रकी बाधा होय तो बाधा मेटि पाछैं पीछेतें अपना अंगका आगलापाछला भागकूं शोध करि कमंडलु पीछी लेय करकै गमन करैं। मार्गमें अतिशीघ्र गमन नाहीं करैं विलंब करते गमन नाहीं करैं किसीसूं मार्गमें वचनालाप नाहीं करैं मार्गमें वनकी भूमिकी नगरग्रामादिककी शोभा नाहीं देखैं जहां कलह विसंवाद कौतुक नृत्य गीतादिक होय तिनकूं दूरि छांड़ि गमन करैं मार्गमें दुष्टतिर्यंच दुष्टमनुष्य उन्मत्तमनुष्य तथा स्त्री तथा पत्र फल पुष्प बीज जल कर्दमादिक जिस भूमिमें होय ताकूं दूरिहीतें छांड़ि गमन करैं हैं आचारांगसूत्रमें कह्या देशकाल ताके जाननेमें निपुण अर मार्गमें गमन करता दातारका चिंतवन नाहीं करैं जो मोकूं कौन दातार भोजन देगा तथा मोकूं शीघ्र भोजन मिलै तो अच्छा है तथा मिष्टभोजनका लाभ वा लवणादिकका लाभ तथा उष्णभोजन शीतभोजन स्वादिष्ट वेस्वाद इत्यादिक भोजनका विकल्प नाहीं करैं हैं अंतरायकर्मके क्षयोपशमके आधीन लाभअलाभकूं जानि भोजनका लाभमें अलाभमें मानमें अपमानमें मनकी वृत्तिकूं समान करता धर्मध्यानरूप चिंतवन करता चार आराधनाका शरण सहित क्षुधातृषादिक वेदनाका चिंतवन नाहीं करता भिक्षाकेअर्थि गमन करैं हैं लोकनिंद्य कुलमें गमन नाहीं करैं हैं तथा ऐसे उत्तमकुलके गृहनिमें हू प्रवेश नाहीं करैं हैं जहां दानशाला होय जहां विवाहादिक होय मृतकका सूतक होय गानगीत हो रहे होंय नृत्यके वादित्र वजनेका समाज होरह्या होय रुदन होरह्या होय अनेक भिक्षाकेअर्थ भेले होरहे होंय कलह विसंवाद द्यूतक्रीड़ादि होरहे होंय किवाड़ जुड़े होंय जावतेकूं कोऊ मनै करता होंय घोड़ा हाथी ऊंट बलध इत्यादि मार्गमें खड़े होंय वा बंधि रहे होंय तथा अनेकमनुष्यनिका संघट होरह्या होंय तथा सांकड़ेमार्गमें बहुत लोकनिका सकड़ाईतें आवना जावना होंय तथा नाभितें अधिक नीचे द्वार होय करि जाना होंय अर गोड़ेनतें ऊंची भूमिका उल्लंघन होंय ऐसें गृहनिमें तो साधु भोजनके अर्थ प्रवेशहू नाहीं करैं हैं चन्द्रमाकी

जाय है दीन अनाथ निंद्यकर्मकरि जीविका करनेवाले
चांदनी ज्यों धनाढ्यनिर्धनादिक समस्तगृहनिमैं जाय है दीन अनाथ निंद्यकर्मकरि जीविका करनेवाले
इत्यादि अयोग्य गृहनिकूं छांड़ि भिक्षाकेअर्थ गृहनिमैं जहां ताईं अन्यभिक्षुकनिका तथा हरेक जनके
आवनेकी आड़ नाहीं तहांताईं जाय आशीर्वादादिक धर्मलाभादिक मुखतैं कहैं नाहीं हुंकारा भृकुटीका
समस्या करैं नाहीं उदरका कृशपना दिखावैं नाहीं हस्ततैं याचनाकी समस्या करैं नाहीं दातारके देखनेकूं
भोजनके देखनेकूं ऊंचा तथा दिशाविदिशामांहि अवलोकन करैं नाहीं खड़ा रहै नाहीं वीजलीके
चमत्कारवत् अर्द्ध अंगणेमैं जाय बाहुड़े है तिष्ठ तिष्ठ तिष्ठ ऐसैं आदरपूर्वक तीनवार उच्चारणकरि खड़ा
राखैं तो खड़ा रहैं एकवार निकसे पाछैं फिर उसगृहमैं प्रवेश करैं नाहीं फिर अन्यगृहमैं प्रवेश
करैं अंतराय हो जाय तो अन्यगृहमैं हू नाहीं जाँय पाछा वनहीकूं जांय है दानव्रतरहित याचनारहित
प्रासुक आहार आचारंगमैं कह्या तिसप्रमाण छियालीसदोष चौदहमल बत्तीसअंतरायरहित भोजन
अंगीकारकरि प्राणनिकी रक्षामात्र फल अंगीकार करता सुंदररसमैं नीरसमैं लाभमैं अलाभमैं समान
संतोषी होय सो भिक्षा है। इस भिक्षाकी शुद्धताकरि चारित्रकी उज्ज्वलसंपदा प्राप्त होय है जैसैं साधु-
पुरुषनिकी सेवा करि गुणनिकी संपदा होय है। अब या भिक्षा मुनीश्वरनिकै पंचप्रकार होय है।
गोचरोवृत्ति, अक्षम्रक्षणवृत्ति, उदराग्निप्रशमनवृत्ति, भ्रामरी वृत्ति, गर्तपूर्णवृत्ति ऐसैं पंचप्रकारकरि
आहारमैं साधुनिकी प्रवृत्ति जाननी। जैसैं लीला विकार वस्त्र आभरणादि सहित रूपयौवनकरियुक्त
स्त्रीका लाया घासकूं गऊ चरै है तिस स्त्रीका अंगनिका सौंदर्य तथा आभरणवस्त्रकूं नाहीं अवलोकन
करै है केवल घास चरनेका प्रयोजन है तैसैं साधु हू दातारका रूप आभरणादि सौंदर्यकूं नाहीं
अवलोकन करता नवधाभक्तिकरि प्रतिगृहपूर्वक हस्तमैं धारण कीया ग्रासकूं भक्षण करै है सो
गोचरीवृत्ति है। अथवा जैसैं गऊ बनके नाना स्थाननिमैं तिष्ठता तृणकूं जैसैं लाभ हो जाय तैसैं भक्षण
करै है बनकी शोभा वृक्षनिकी शोभा देखनेमैं परिणाम नाहीं धारै है तैसैं साधु हू गृहस्थनिके घरमैं
जाय तादि गृहस्थका महल मकान शय्या आसनादिकनिके देखनेमैं तथा सुवर्णके रूपाके कांसीके

पीतलके मृत्तिकाके पात्रादिकनिके देखनेमैं परिणाम नाहीं करैं हैं तथा अनेक भोजन भाजन परिवारके देखनेमैं परिणाम नाहीं लगावते केवल अपने हस्तमैं धरचा ग्रासकूं भक्षण करनेमैं दृष्टि राखैं हैं परिकरजननिके कोमल ललित रूप वेष विलासनिके देखनेमैं वांछारहित भये शुष्क तथा गीला आहार ताकूं नाहीं देखता गौकी ज्यों भोजन करैं तातैं गोचरीवृत्ति वा गवेषणा कहिये है। जैसैं बणिक् रत्ननिका भरचा गाड़ाकूं घृतादिकतैं वांगि धुरके घृत लगाय अपने वांछित देशांतरकूं लेजाय तैसैं साधु हू गुणरत्ननिकरि भरचा देहरूप गाड़ाकूं निर्दोष भिक्षाभोजन देय अपने वांछित समाधिरूप पत्तनकूं प्राप्त करैं हैं यातैं अक्षम्रक्षणवृत्ति कहिये है। बहुरि जैसैं अनेकवस्त्रआभरणादिकनिकरि भरचा भंडारविषै उठी अग्निकूं शुचि अशुचि जलतैं बुझाय अपनीवस्तुनिकी गृहस्थी रक्षा करै है तैसैं साधु हू उदररूप भंडारमैं उपजी क्षुधातृषादिरूपआग्निकूं सुंदरअसुंदरभोजनतैं बुझावना सो उदराग्निप्रशमनवृत्ति है। बहुरि जैसैं भ्रमर पुष्पकूं किंचित्मात्र बाधा नाहीं करता पुष्पका गंध हरै है तैसैं साधु हू दातारकै किंचित बाधा नाहीं होय तैसैं भोजन करैं सो भ्रमराहारवृत्ति है। बहुरि जैसैं गृहस्थका गृहमैं गर्त जो खाड़ा होगया तो ताकूं धूलिपाषाणादिकतैं पूर्ण करैं हैं तैसैं साधु हू उदररूप खाड़ाकूं रसनीरसभोजनकरि भरैं तातैं गर्तपूर्णवृत्ति कहिये है। ऐसैं पंचवृत्तिकरि भोजन करता साधुकै भिक्षाशुद्धि होय है। श्रावक हू अन्यायछांडि बहुत हिंसाके कारण व्यवहारछांडि कर्मके दीयेमैं संतोषधारणकरि अन्यके पीडादुःख नाहींकरि, न्यायके वित्तकूं मद विषाद दीनता रहित दानकूं विभागकरि भोगै है तथा अभक्ष्यादिक सदोषभोजनका परिहारकरि दिवसमैं भोगांतराय लाभांतरायका क्षयोपशम प्रमाण रसनीरस मिल्या तामैं कुटंबका विभाग तथा दानका विभागकरि भोजनादिक करै गृहस्थकै लालसा गृद्धतारहित ही भोजनकी शुद्धता है। बहुरि संयमी है सो अपना शरीरका नखकेशकफनाशिकामलमूत्रपुरीषादिकनिकूं देशकाल जानि विरोधरहित जीवनिकै बाधा नाहीं होय परके परिणाम मलीन नाहीं होय ऐसे क्षेत्रमैं खेपै ताकै प्रतिष्ठापनशुद्धि

होय है अर गृहस्थ है सो हू अपना देहका मल तथा जल कजोड़ा भस्म मृत्तिका पाषाण काष्ठादिक जतनतैं क्षेपै जैसैं छोटेबड़ेजीवनिका विराधना नाहीं होय किसीके साथ कलह विसंवाद नाहीं होय आपका अंगमैं बाधा नाहीं आवै अन्यजननिके ग्लानि नाहीं उपजै तैसैं क्षेपण करना। बहुरि शयनासनशुद्धता साधुका प्रधान आचरण है जहां स्त्री नपुंसक चोर मद्यपानी शिकारी इत्यादिक पापीजनांका आरजारस्थान (आनेजानेकास्थान) नाहीं होय जहां शृंगार शरीरविकार उज्ज्वलवस्त्र आभरण धारती स्त्री विचरै तथा वेश्यानिकी क्रीड़ा वन बाग गीतनृत्यवादित्रकरिव्याप्त ऐसे स्थानका दूरहीतैं परिहारकरि तिष्ठै हैं अकर्तृमपर्वतनिकी गुफा वृक्षांकाकोटर तिनमैं तथा कुत्रिमशून्यगृहादिक आपकेअर्थ नाहीं किया आरंभरहित ऐसे स्थानिमैं तथा शुद्धभूमिमैं शयन आसन करैं हैं। अर गृहस्थ भी विषयनिके विकाररहित स्त्री नपुंसक दुष्ट कलह विसंवाद विकथादि रहित परिणामनिकी उज्ज्वलता जहां नाहीं बिगडै ऐसे स्थानमैं शयन आसन करै स्थानके दोषतैं परिणाममें दुर्ध्यान रहै दुष्ट चिंतवन होय तातैं अपनी जीविकादिकका न्यायमार्गतैं साधन करकै अर स्थान शयन निराकुलस्थानहीमैं करै है। बहुरि साधु है सो पृथ्वीकायिकादिक जीवनिकी विराधनाकी प्रेरणारहित कठोर कटुकादि परपीड़ाका कारण वचनरहित व्रतशील संयमका उपदेशरूप वचन कहता हितमित मधुरमनोहर बचन कहै सो वाक्यशुद्धता है गृहस्थ भी जेता वाक्य कहै सो विवेकसहित कहै लोकविरूद्ध धर्मविरुद्ध हिंसाका प्रेरक असत्य कटुक कर्कशादिक कदाचित नाहीं कहैं हैं। ऐसैं अष्टप्रकार शुद्धता संयमीनिकी है गृहस्थ अष्टशुद्धताकूं चिंतवन करता रहै भावना राखै तो बहुतपापनितैं लिप्त नहीं होय धर्मभावनाकी वृद्धि होय।

अब तपभावना हू गृहस्थकूं भावने योग्य है। यद्यपि तपकी प्रधानता मुनीश्वरनिकै है तथापि गृहस्थ हू तपभावना भावता रहै तो रोगादिक कष्ट आये चलायमान नाहीं होय। इंद्रियनिका विकलताकूं जीतै वृद्धअवस्थामैं जराकरि बुद्धि चलित नाहीं होय खानपानमैं विकलताका अभाव होय संतोषवृत्ति प्रगट होय दीनताका अभाव होय लौकिकमैं यश उज्ज्वल होय परलोकमैं स्वर्गकी प्राप्ति

होय तातैं तप ही करना उचित है। सो तप दोयप्रकार है एक बाह्य एक अभ्यंतर तिनमैं बाह्य तपका छह भेद है अनशन, अवमोदर्य, वृत्तिपरिसंख्यान, रसपरित्याग, विविक्तशयनाशन, कायक्लेश ऐसे छहप्रकार बाह्यतप है। तिनमैं अनशन तपका स्वरूप कहिये है—अनशन जो भोजन ताका त्याग करिये सो अनशतप है जो दृष्टफलकी अपेक्षारहित होय करै सो अनशनतप है जो इहां यशकेवास्तै करै विख्यातता वास्तै करै जगतके लोकनितैं पूजा नमस्कारादिवास्तै वा मंत्रसाधनवास्तै करै ऋद्धि संपदा वैरीनिको घात परलोकमैं राज्यसंपदावास्तै करै कषायतैं वैरतैं करै दुःखितहुवा अपना-घातवास्तै करै सो अनशनतप सम्यक् नाहीं केवल संसारपरिभ्रमणका कारण है जो इंद्रियनिकी विषयनिमैं लालसा घटवानेकेअर्थ तथा छहकायके जीवनिकी दयाकेअर्थ रागभावके घटनेकेअर्थ निद्राके जीतनेकेअर्थ कर्मकी निर्जराकेअर्थ ध्यानकी सिद्धिकेअर्थ देहका सुखियापनाका मेटनेके अर्थ जो उपवासादि करै सो अनशनतप है। सो अनशनतप दोयप्रकारका है—एक तो कालकी मर्यादकरि है एक यावज्जीव है। एकदिनमैं दोयबार भोजन होय है तिनमैं एकवार भोजन करना एकवारका भोजनका त्याग करना सो अनशन है अर पहलेदिन एकबार भोजनकरि एकवारका त्याग अर दूसरेदिनके दोय भोजनका त्याग अर पारणाके दिन एकभोजनका त्यागकरि एकवार जीमना सो च्यारभोजनका त्यागरूप चतुर्थ है याहीकूं उपवास कहिये है अर छहभोजनका त्याग ताहि दोय उपवास कहिये है अष्टभोजनका त्यागकूं तेला दशभोजनका त्यागकूं चौला इत्यादि ऐसैं कालकी मर्यादरूप अनशनतप जानना। अर आयुका अंतमैं यावज्जीव भोजन त्यागना सो यावज्जीव अनशन है इंद्रियनिका उपशमकेअर्थ भगवान उपवास कह्या है तातैं इंद्रियनिकूं जीतनै-वाला मुनि भोजनकरता हू उपवासीक जानना अर जो उपवास करता इंद्रियनिकूं विषयनितैं नाहीं रोके है आरंभ करै है कषायरूप प्रवर्तै है ताका अनशनतप विष्फल होय है कर्मकी निर्जरा नाहीं करै है ऐसा अनशनतपका स्वरूप कह्या सो जैसैं बात पित्त कफादिक विकारकूं प्राप्त नाहीं होय

रोगका उपशम होय उत्साह वधता जाय तैसैं अपना परिणामकी विशुद्धताकी वृद्धि चाहता देशके अनुकूल कालके अनुकूल आहारपानकी योग्यताके अनुकूल कुटुंबादिकका सहायके अनुकूल संहननप्रमाण जैसैं देह नाहीं विगड़ै तैसैं श्रावकनिकूं हू शक्तिप्रमाण अनशनतप अंगीकार करना ही श्रेष्ठ है ॥ १ ॥

अब अवमोदर्यतपका स्वरूप ऐसा जानना अवम कहिये ऊन उदर जामैं होय सो अवमोदर्य कहिये जेता प्रमाणरूप ओदनादिकतैं उदर भरिये तितना प्रमाणतैं ऊनभोजन करिये सो अवमोदर्यतप है अवमोदर्यतपतैं इंद्रियनिका संयम होय है भोजनकी गृद्धिताका अभाव होय है अल्पआहार करनेतैं वातपित्तकफ प्रकोपकूं प्राप्त नाहीं होय है रोगनिका उपशम होय है निद्रा आलस्यका जीतना होय है स्वाध्यायमैं सामायिकमैं कायोत्सर्गमैं ध्यानमैं खेद नाहीं होय सुखकरि ध्यान स्वाध्याय आवश्यकादिक होय है अवमोदर्य करनेतैं उपवासका खेद गरमी नाहीं व्यापै है उपवास सुखसूं होय है जातैं बहुत भोजन करै तदि आवश्यक ध्यान कायोत्सर्ग सुखते नाहीं होय आलस्य निद्रा प्रबल होजाय तृषाका प्रकोप होय है गरमी आताप रोग वधै है यातैं इंद्रियांकी लालसादि घटनेकुं मनके रोकनेकूं ज्ञानीमुनि तो अर्द्धभोजन चतुर्थभागभोजन तथा एकग्रास वा दोयग्रास इत्यादिक एकग्रास घाटिपर्यंत अवमोदर्यतपका भेद करैहैं अर जो मिष्टभोजनका लाभके अर्थ वा कीर्ति प्रशंसा होनेके अर्थ अल्प भोजन करै सो अवमोदर्यतप नाहीं है अवमोदर्य तो भोजनमैं लालसाघटनेके अर्थ है गृहस्थश्रावककूं हू अंतरायकर्मका क्षयोपशमप्रमाण प्राप्त हुवा भोजनमैं संतोषकरि भोजनमैं लालसा छांड़ि इच्छाका निरोधके अर्थ अवमोदर्यतप करना श्रेष्ठ है।

अब वृत्तिपरिसंख्यान नाम तप मुनीश्वरनिकै होय है सो कहैं हैं। मुनीश्वर भोजनकूं जावतां प्रतिज्ञा करै जो आज एकघरमैं जावना वा दोय तीन पांच सात घरनिका प्रमाणकरि जाय तथा आज सूधे मार्गमैं ही मिलै तथा वक्रमार्गमैं ही तथा ऐसादातार ऐसाभोजन तथा ऐसापात्रमैं ऐसीविधतैं मिलै तो ग्रहण करना अन्यप्रकार नाहीं करना ऐसी कठिन २ प्रतिज्ञाकरि भोजनके अर्थ गमन करै

ताके वृत्तिपरिसंख्यान तप होय है यो दुर्द्धरतप मुनीश्वरनिनैं ही होय है अन्य गृहस्थ धारणकरनेकूं समर्थ नाहीं होय हैं अर गृहस्थ है सो हू वीतरागगुरुनिके प्रसादतैं ऐसी प्रतिज्ञा धारै है जो मैं जिनेंद्रधर्म पाय उज्ज्वलधर्मका घात जामैं नहीं होय ऐसी रीतिही जीविका करूं जामैं श्रद्धान ज्ञान व्रत नष्ट होजाय सो जीविका नाहीं करूं बहुतहिंसा झूंठ मायाचारकरिसहित ऐसी सेवा नाहीं करूं खोटे पापके बिणज व्यवहार नाहीं करूं उज्ज्वल बिणज बहुत आरंभरहित कपटरहित असत्यरहित जो जीविका होय सो ही मोकूं करना, अन्य नाहीं करना इत्यादि आजीविकामैं नियम करै तथा एताधन एतापरिग्रह एतावस्त्रतें भोगउपभोग करना तथा रोगादिक होजाय तो एती औषध ही भक्षण करूं इन औषधिनितैं अन्य भक्षण नाहीं करूं तथा आज मेरे गृहमैं तयारभोजन पावैगा सो ही भक्षण करूंगा मैं मुखसूं कहिकरि कराऊं नाहीं मंगाऊं नाहीं तथा आज मेरे गृहमैं मेरा घरका ग्रासलीये पहली एकबार जो पात्रमैं घालदेगा सो ही भोजन करूंगा फेर मांगू नाहीं इत्यादिक इच्छाका रोकनेके अर्थ गृहस्थ प्रतिज्ञा करै है।

अब रसपरित्यागतपका ऐसा स्वरूप है दुग्ध, दही, घृत, लवण, गुड़, तेल ए छहप्रकारके रस हैं तिनमैं जिह्वादिक इंद्रियनिकूं दमनेके अर्थ मनकी लोलुपता मेंटनेके अर्थ कामके जीतनेके अर्थ निद्राके घटावनेके अर्थ संयमके अर्थ रसनिका त्याग करना कदे एकरसका त्याग कदे दोयतीनका त्याग कदे छहूं रसनिका त्याग करना सो रसपरित्यागतप है संसारीजीव मिष्टरसादि भक्षणकरनेके लोलपी होय अभक्ष्यभक्षण करै हैं लज्जा छांड़ै हैं व्रततप विगाड़ै हैं भोजनकी लोलुपतातैं शुद्रादिकनिके अयोग्य कुलमैं भोजन करैं हैं दीनहुवा तरसैं हैं रसादिकभक्षण करनेकूं लडैं हैं मरैं हैं पड़ैं हैं बहुधाकरि रसनिके लोभी हुये भ्रष्ट होरहें हैं कोऊ धन्यपुरुषनिकै रसरूप भोजन करनेकी लालसा नाहीं रहै है उत्तम गृहस्थ है सो प्रथम ही नानाप्रकारके घृत मिष्ट रसादिकनिमैं लालसाका त्यागकरि जो अपने गृहमैं खारा अलूणा लूखा सचिक्कण इत्यादिक जो स्वाभाविक कर्म विधि मिलायदे ताकूं संतोषसहित

भक्षण करै है अर रसरूपभोजनकी कथा स्वप्नांमैं हू नाहीं करै है रसनिकी लंपटता दोऊलोकमैं भ्रष्ट करने वाली है तातैं लालसा छूटनेके अर्थ इंद्रियनिकूं वशीभूतकरनेके अर्थ परमसंवर अर निर्जराके अर्थ दीनताका अभावके अर्थ संतोष धारणके अर्थ रसपरित्याग नामा तप ही श्रेष्ठ है।

अब विविक्तशयनासन नामा तपका ऐसा स्वरूप जानना शूना गृह एकांतस्थान विकलत्र-यादि जीवनिकी बाधारहित स्त्रीनपुंनक असंयमीनिका आरजाररहित स्थानमैं वा पर्वतनिकी गुफा वनखंडादिकनिमैं ध्यान अध्ययन करना शयन आसन करना सो विविक्त शयनाशन नाम तप है। जातैं एकांतमैं तिष्ठता साधुकै हिंसाका अभाव ममत्वको अभाव विकथाको अभाव होय है कामको अभाव होय ध्यान अध्ययनकी सिद्धि होय है दूजाको प्रसंग होय तब वचनालाप होय वचनालाप होय तदि मनमैं संकल्प होय तदि ध्यानतैं चलायमानता होय रागभावकी वृद्धि होय तातैं संयमी एकांतमैं ही शयन आसन करै है अर गृहस्थ धर्मात्मा भी पापसूं भयभीत होय अपना गृहस्थचाराके आजीवकादि कार्य न्यायमार्गतैं अल्पआरंभादिकरूप पापकार्यतैं भयभीत हुवा तथा शरीरके स्नानभोजनादि कार्यकरकैं एकांतमकान अपने गृहमैं वा जिनमंदिरमैं वा धर्मशालामैं वा वनके चैत्यालयादिकनिमैं साधर्मीलोकनिकी संगतमैं धर्मचरचा करता स्वाध्याय करता जिनागमका पठनपाठन व्याख्यान करता जिनागमश्रवण करता पंचनमस्कारका स्मरण करता दिनरात्रि व्यतीत करै स्त्रीकथा राजकथा भोजनकथा देशकथा कदाचित हू नाहीं करता काल व्यतीत करै है तथा कामविकारका बधावनेवाला रागका उपजावनेवाला शय्याशनका परिहार करै गृहस्थकै हू विविक्तशयनाशन निर्जराको कारण है।

बहुरि मुनीश्वरनिकै कायक्लेश नामा बड़ा तप है जो एकआसनकरि बैठना एकपसवाड़ै शयनकरना मौन धारण करना तदा ग्रीष्मऋतुमैं पर्वतनिके शिखर शिलातलनि ऊपरि सूर्यके सन्मुख कायोत्सर्गादिकधारणकरि ग्रीष्मका घोरआताप तप्तपवनादिककी घोरवेदना होते हू धर्मध्यानमैं

धाराभावनाका चिंतवनमैं परिणामकूं स्थिरकरि परिणामकूं क्लेशरूप नाहीं होने दे है। तथा वर्षाऋतुमैं वृक्षके नीचे योगधारण करते घोरअंधकारकी भरी रात्रिमैं अखंड धाररूप वर्षतामेघकरि धरती आकाश जलमय होरह्या होय अर पर्वतनितैं पड़ती नदीनका घोर कोलाहल होरह्या होय अर वृक्षनिमैं एकट्ठा जल होय बहुतस्थूल धार पड़ती होय अर बिजुलीनिका झकझकाट अर घोरगर्जना अर वज्रपातनिका पड़ना तिस अवसरमैं धन्य मुनि आछादनरहित नग्नअंग ऊपरि घोरवेदना भोगते हू संक्लेशरहित धर्मध्यानशुक्लध्यानसूं जुड़ेहुये तिष्ठैं हैं सो समस्त वीतरागताकी महिमा है तथा शीतऋतुमें नदीके तीर वा चौहटे नग्नअंग ऊपरि बरफका पड़ना महान् घोरशीतलपवनका चलना तिसअवसरमें दुखरहित धर्मध्यानतैं शीतकालकी रात्रि व्यतीत करैं हैं तथा दुष्टजीवनिकरि किया घोरउपद्रवनिकूं भोगि समभाव रखना सो कायक्लेशतप है सो परवस दुख आये चलायमान नाहीं होनेके अर्थ तथा देहजनित सुखकी अभिलापाका अभावके अर्थ रोगनितैं चलायमान नाहीं होनेके अर्थ भयके जीतनेके अर्थ परीसह सहनेके अर्थ कर्मकी निर्जराके अर्थ कायक्लेशतप धारण करै है अर गृहस्थकै ये आतापनयोगादिक नाहीं होय यो तप तो दिगंबरसाधुनितैं ही होय गृहस्थ है सो आप तो चलायकरि कायक्लेश करै नहीं अर सामायिकादिकके अवसरमैं आयजाय तो चलायमान होय नाहीं अर कर्मके उदयतैं अपनी रक्षा करते हु शीतज्वर दाहज्वर वातशूलादिक आजाय वा दुष्टवैरी धर्मद्रोही म्लेच्छादिक आय उपद्रव करै वा बंदिगृहादिकमें रोकदे वा ताड़न मारन करै तो गृहस्थ है सो मुनीश्वरनिका कायक्लेशतपकी भावनाकरि समभावनिकरि सहै कायरता धारण नाहीं करै दारिद्र्यका दुःखजनित क्षुधातृषाशीतउष्णादिककी वेदना कर्मके उदयतैं आवै तहां कायर नाहीं होय धर्मके शरणतैं सहना सो ही कायक्लेश है मुनीश्वर तो ऐसा कायक्लेशतप उत्साहकरि धारण करैं हैं हम कायक्लेशतैं अतिदूरि बर्तें हैं तो हू असाताकर्मका उदयकरि दुःख आयगया तो भयवान हुवा कौन छांड़ैगा अब जो धैर्यधारणकरि सहूंगा तो कर्म रसदेय जरूर निर्जरैगा अर कायरता करूंगा क्लेश करूंगा तो हू भोगना पड़ैगा कर्मका उदयकै दया है नाहीं कायर होय दुख

करनेतैं उदयमैं आया सो भी भोगूंगा अर यातैं बहुतगुणां आगानैं बंध करूंगा तातैं जिनेन्द्रका वचनांको शरण ग्रहणकरकै कर्मका उदयमैं धैर्य धारण करना ही श्रेष्ठ है अर गृहस्थकै अंतरायकर्मका उदय आवै है तदि उदरभर भोजन हू पूरा नाहीं मिलै वा घृतादिक रस नाहीं मिलै अतिअल्प मिलै तदि जो अल्पमैं संतोपित रहै परका विभवदेखि वांछा नाहीं करै समभावरूप रहै तो सहज ही कायक्लेश तप होय है बड़ी निर्जरा करै है ऐसैं छहप्रकारका बाह्यतप कह्या। बाह्य अन्यकै प्रत्यक्ष जाननेमैं आवै वा बाह्य भोजनादिकके त्यागतैं होय वा अन्य गृहस्थ परमती हू धारलें तातैं याकूं बाह्य तप कह्या तथा जैसैं अग्नि बहुत संचय कीया तृणादिककूं दग्ध करै तैसैं पूर्वसंचितकर्मकूं दग्ध करै है तातैं तप कह्या तथा शरीर इंद्रियनिकूं संतापितकरि विषयादिकनिमैं मग्न नाहीं होने दे तातैं तप कहिये तथा जैसैं तपायाहुवा सुवर्णपाषाण है सो कीटिका छांड़ि शुद्ध सुवर्ण हो जाय है तैसैं आत्मा याकै प्रभावतैं कर्ममलरहित होजाय तातैं याकूं भगवान तप कह्या है।

अब छहप्रकार अभ्यंतरतप है सो कहिये है–प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग और ध्यान ऐसैं छहप्रकार हैं। तिनमैं प्रायश्चित्तका नव भेद अर संख्यात असंख्यात भेद हैं सो इहां-आलोचनादिकका कथन लिखे कथनी बहुत होजाय तातैं संक्षेप कहिए है जो धर्मात्मा है सो अपने व्रतधर्ममैं कदाचित दोषरूप आचरण नाहीं करै अन्यको सदोष आचरण नाहीं करावै दोषसहित आचरण करै ताकूं मनवचनकायकरि भला नाहीं कहै अर जो कदाचित प्रमादकरि भूलकरि दोष लगि-जाय तो निर्दोषसाधुके निकट जाय सरलपरिणामतैं दशदोषरहित आलोचना करकैं जो गुरुनिकरि दीया प्रायश्चित्ततादि परमश्रद्धातैं आदरपूर्वक ग्रहण करैं हृदयमैं ऐसी शंका नाहीं करै जो मोकूं बहुत प्रायश्चित्त दीया वा अल्पप्रायश्चित्त दीया प्रमादतैं एकवार दोष लगिगया ताकूं प्रायश्चित्त लेय दूरि कीया फिर ऐसी सावधानी राखै जो अपना शतखंड होजाय तो हू फिर दोष नाहीं लागने देवै ताकै प्रायश्चित्त लेना सफल होय है। बहुरि प्रायश्चित्त लेवै सो अनेकगुणनिका धारक सिद्धांतरहस्यका पार-

गामी प्रशांतमनका धारक अपरश्रावीगुणका धारक जैसैं तप्तलोहका गोला जल पीगया ताका फिर बाहिर प्रकाश नाहीं तैसें जो शिष्यकरि आलोचना कीया दोषकी कदाचित प्रकटता बाह्य नाहीं करनेवाला देशकालका ज्ञाता एकांतमैं तिष्ठता पूर्वै कह्या आचार्यनिके अनेक गुण तिनका धारक तिनकै निकट अंजुली जोड़ि महाविनयपूर्वक बालक ज्यों सरलचित्त होय आत्मनिंदा करतो आलोचना करै है। बहुरि जैसैं रुधिरसूं लिप्तवस्त्र रुधिरकरि नाहीं धुवै कर्दम कर्दमकरि नाहीं धुवै तैसें दोषनिकरिसहित साधु हू शिष्यकूं निर्दोष नाहीं करि सकै है जैसे मूढ़वैद्य रोगीका विपरीत इलाजकरि प्राणरहित करै तैसैं अज्ञानीगुरु हू शिष्यकूं संसारसमुद्रमैं डबोय दे है तातैं निर्दोषगुरु प्रायश्चित्त देय शुद्ध करै संयमी पुरुष तो एकगुरु एकशिष्य दोय ही एकांतमैं आलोचना करैं अर्यिकादिक प्रगत प्रकाशस्थानमैं एकगुरु दोयअर्यिका एकगणिनी होय एक दोष लाग्यो होय सो होय ऐसैं तीन होय जो लज्जातैं वा तिरस्कार वा प्रायश्चित्तका भयतैं वा अभिमानतैं दोषकूं शुद्ध नाहीं करै तो जैसैं लाभ अर खरचका ज्ञानरहित वणिककी ज्यों कर्मरूप ऋणवान होय भ्रष्ट होय है अथवा आलोचनाविना महान हू तप अंगीकार कीयाहुवा वांछितफल नाहीं देवै है अर आलोचना करकै हू गुरुका दीया प्रायश्चित नाहीं करै तो वैद्यका कह्या औषधकूं नाहीं भक्षण करता रोगीकी ज्यों शुद्ध नाहीं होय है वा हलादिककरि नाहीं सुधार्या क्षेत्रमैं धान्यवत महाफल नाहीं फलै है अथवा जैसें विना मंजन कीया दर्पणमैं रूपकी ज्यों चित्तकी शुद्धता विना आत्मामैं चारित्रकी उज्ज्वलता नाहीं भासै है। अब इस कलिकालके प्रभावकरि निर्दोषगुरु प्रायश्चित्त देनेवाले दीखै नाहीं जो आप ही अनेक पापनिकरि लिप्त सो अन्यकूं कैसैं शुद्ध करैं रुधिरसूं रुधिर कैसें धुवै सो ही आत्मानुशासनजीमैं कह्या है,—

कलौ दंडो नीतिः स च नृपतिभिस्ते नृपतयो नयन्त्यर्थार्थं तं न च धनमदोऽस्त्याश्रमवताम्।
नतानामाचार्या न हि नतिरताः साधुचरितास्तपस्तेषु श्रीमन्मणय इव जाताः प्रविरलाः ॥१४९॥

अर्थ—कोऊ शिष्य गुणभद्र स्वामीसूं पूछ्या जो हे स्वामिन् इस कालमैं तपस्वी मुनिनिविषै हू

सत्य आचरणके धारक अत्यंत विरले रहगये ताका कारण कहा है ताकूं उत्तर देनेरूप काव्य कह्या ताका अर्थ लिखिये है—इस कलिकालमैं नीतिमार्ग है सो तो दंड है दंडका भय विना न्यायमार्गमैं कोऊ स्वयं नाहीं प्रवर्तै है अर दंड है सो राजानिकरि दीयाजाय क्योंकि कलिकालमैं जोरावर विना अन्य साधर्मीनिकरि तथा वृद्धपुरुपनिकरि लोकनिकरि दीया दंड कोऊ ग्रहण करै नाहीं कोऊ कह्या मानै नाहीं तातैं बलवान राजाकरि दीया दंड ही ग्रहण करै अर इस कलिकालमैं राजा ऐसै होने लगे जातैं धन आवता देखि ताकूं दंड देवैं निर्धनिकूं दंड नाहीं देहैं अर आश्रमवान संयमी तिनकै कुछ धन नाहीं तातैं संयम लेयकरि कुमार्ग चालै तिनकैं राजाका दंड तो है नाहीं जातैं कुमार्गतैं रुकैं अर आचार्यनिका दंड हुवाचाहिये सो कलिकालमैं आचार्यनिका शिष्यनिमैं अनुराग होगया जो आपकूं नमिजाय ताकूं दंड दे नाहीं अपना संप्रदाय बधावनेका अर्थि जो आपकूं नमोऽस्तु नमस्कार करले ताकूं अपना जानि दंड देवैं नाहीं तदि दंडका भयरहित सूत्रविरुद्ध आचरण करने लगि जाय तातैं कलिकालविषै तपस्वी जननिमैं हू सत्यआचारके धारक अतिविरले देखिये हैं केवल भेषधारी ही बहुत दीखैं हैं। तातैं प्रायश्चित्त नाम ही कल्याणका कारण है तातैं गृहस्थनिकै प्रायश्चित्तकी प्रवृत्ति कैसैं होय तातैं परमेष्ठीका प्रतिबिंबके सन्मुख होय करकैं ही अपना अपराधकूं आलोचनाकरि ऐसा यत्न करना जो फेर अपराध स्वप्ननिमैं हू नाहीं बने।

अब विनय नामा दूजा अभ्यंतरतप है ताका पंच भेद है दर्शनविनय, ज्ञानविनय, चारित्रविनय, तपविनय, उपचारविनय। तहां जो पदार्थनिका श्रद्धानविषै शंकादिदोषरहित निःशंक रहना सो दर्शनविनय है। सम्यग्दर्शनपरिणाम होनेसैं हर्ष अर सम्यक्त्वकी विशुद्धतामैं उद्यमी रहना सम्यग्दृष्टीनिका संगम चाहना सम्यक्त्वके परिणामकी भावना भावना, मिथ्याधर्मकी प्रशंसा नाहीं करना मिथ्यादृष्टीनिका तप दान ज्ञानकी प्रशंसा नाहीं करना क्योंकि मिथ्यादृष्टीका आचरण है सो इसलोक परलोकमें यश विख्यातता विषयलुब्ध धन संपदाकी चाहपूर्वक आत्मज्ञानरहित है बंधको कारण है यातैं प्रमाण

नाहीं अर वीतराग सर्वज्ञने पदार्थनिका स्वरूप कह्या है सो प्रमाण है यो दर्शनविनय है। वहुरि ज्ञानविनय ऐसा है जो आलस्यरहित विक्षेपरहित विषयकषायमलरहित शुद्धमनकरकैं देशकालकी विशुद्धिताका विधानमैं विचक्षण पुरुष बहुत सन्मानतैं यथाशक्ति मोक्षका अर्थी हुवा वीतरागसर्वज्ञकरि प्ररूपणकीया परमागमका ज्ञान ग्रहण अभ्यास स्मरणादि करना सो ज्ञानविनय जानना। ज्ञानका अभ्यास ही जीवका हित है ज्ञानविना पशु समान है मनुष्य चार ही ज्ञानका सेवनतैं है कामसेवन भक्षणादिक इंद्रियविषय तो तिर्यंचकै हू होय है ज्ञानविनयका धारक निरंतर सम्यग्ज्ञानहीकी वांछा करै है ज्ञानहीके लाभकूं परमनिधानका लाभ माने है यो ज्ञानविनय महानिर्जराको कारण है जाकै ज्ञानविनय होय ताकै ज्ञानका धारकनिका विनय विशेषताकरि होय है। अब चारित्रविनयका स्वरूप कहैं हैं ज्ञानदर्शनवानपुरुषकै पंचाचारका श्रवणकरतां प्रमाण समस्तशरीरमैं रोमांच प्रगट होय अंतरंगमैं भक्तिका प्रकट होना अर कषायविषयनिका निग्रहरूप परमशांतभावके प्रसादतैं मस्तकऊपरि अंजुलिकरणादिकरि भावनितैं चारित्ररूपअपना होना सो चारित्रविनय है वहुरि जाकै भावनिमैं संसारका दुःख छेदनेवाला आत्माकूं वाधारहित सुखकूं प्राप्तकरनेवाला विषयकषाय रोगउपद्रवका जीतनेवाला एक तप ही परमशरण दीखै है ताकै तपभावना होय है ताहीकै तपका विनय होय है तपस्वीनिकूं उच्च सर्वोत्कृष्ट समझना तपस्वीनिकी सेवा भक्ति वैयावृत्त्य स्तुति करना सो तपविनय है शक्तिप्रमाण इंद्रियनिका निग्रहकरि देशकालकी योग्यताप्रमाण अनशनादितपमैं उद्यमी होय धारण करना सो समस्त तपविनय है। अब उपचारविनय ऐसा जानना जो आचार्यादिक पूज्यपुरुषनिकूं देखतप्रमाण उठि खड़ा होना सप्तपैंड सन्मुख जावना अंजुलि मस्तक चढ़ावना उनकूं आगैंकरि आप पाछैं गमनकरना गुरुनिकूं बैठतेसंते वैठना नमस्कारपूर्वक रत्नत्रयकी कुशल पूछना गुरुनिकी आज्ञाप्रमाण आचरण करना पठन पाठन तपश्चरण आतापनयोगादिक सिद्धांतका नवीन अभ्यासका ग्रहण विहारवंदनादिक समस्तकार्य गुरुनिको जणाय करना गुरुनिके होते ऊंचाआसन छांड़ना सो समस्त

उपचारविनय है। तथा आचार्यादिक परोक्ष होय तो मनवचनकायकी शुद्धतापूर्वक नमस्कार करना अंजुली करना गुणनिका स्मरण करना गुणनिका कीर्तन करना जो वाकी आज्ञा धारण करी ताका पालना सो समस्त उपचारविनय है विनयके प्रभावतैं सम्यग्ज्ञानका लाभ होय है अनेकविद्या सिद्ध होय हैं मदका अभाव होय है आचारकी उज्ज्वलता होय है सम्यक आराधना होय है यशकी उज्ज्वलता होय है कर्मकी निर्जरा होय है। बहुरि अन्य साधर्मीनिका शिष्यनिका मंदज्ञानकेधारकनिहूका यथायोग्य विनय करना मिथ्यादृष्टिनिका हू तिरस्कार नाहीं करना मिष्टवचन आदरपूर्वक वचन बोलना संतोष करनेवाला दुःख दूरकरनेवाला वचन कहना सो ही विनय है उद्धतचेष्टा दोऊलोक नष्ट करै है। बहुरि उपचारविनय मनवचनकायके मार्गकरि अनेक प्रकार होय है गुरुनिका तथा सम्यग्दर्शनादिगुणनिके धारकनिका शय्याका स्थान बैठनेका स्थान शोधना आसनतैं नीचा बैठना नीचास्थानमैं शयन करना अनुकूल पादस्पर्शन करना दुःखरोग आजाय तो शरीरकी टहल करकैं अपनाजन्म सफल मानना पूज्यपुरुषनिके निकट थूकना नाहीं आलस्य नाहीं लेना उवासी नाहीं लेना अंगुलादिक भंजन नाहीं करना हास्य नाहीं करना पांव नाहीं पसारणा हस्तताल नाहीं देना अंगका विकार भ्रुकुटीका विकार अंगका संस्कार नाहीं करना विनयवान है सो उच्चस्थानमैं स्थित रह वंदना नाहीं करै जठै जठै संयमी तिष्ठै, तठै तठै वंदना करै जो आवते संयमनिकूं देखि खड़ा होना आसन त्याग करना वंदना करना तिनकै ही विनय है जो गुरुनिकी आज्ञा हमकूं होय तिसप्रमाण अंगीकार करना तो हमारे समान कोऊ पुण्यवान विरले हैं विनयरहितके व्रत शील संयम विद्या समस्त निष्फल है विनयका प्रभावतैं क्रोध मानवैरादिक समस्तदोषनिका अभाव होय है विनयविना संसारसंबंधी लक्ष्मी सौभाग्य यश मित्रता गुणग्रहण सरलता मान्यता कृतज्ञता समस्त नष्ट होय है तातैं साधुनिकूं अर गृहस्थनिकूं समस्तधर्मका मूल विनय ही धारण करना श्रेष्ठ है।

अब वैयावृत्यतप हू जिनकै गुणनिमैं प्रीति धर्ममैं श्रद्धान धर्मात्मामैं वात्सल्य निर्विचिकित्सतादि-

गुण होंय तिनहीकै होय है कृतघ्नकै आचार्यादिकनिका वैयावृत्त्यमैं परिणाम नाहीं होय है दशप्रकारके साधुनिका वैयावृत्त्य आगममैं कह्या है । आचार्य, उपाध्याय, तपस्वी, शैक्ष्य, ग्लान, गण, कुल, संघ, साधु, मनोज्ञ इन साधुनका दशप्रकार वैयावृत्त्य कह्या है । तिनमैंतैं जिनके सम्यग्ज्ञानादिकगुणनिकूं तथा स्वर्गमोक्षके सुखरूप अमृतका बीज व्रत संयम अपना हितके अर्थ आचरण करते आचार्य हैं तिनका अपना कायकरि तथा अन्यक्षेत्र शय्या आसनादिककरि सेवा करिये सो आचार्यवैयावृत्त्य है । आचार्यनिका वैयावृत्त्य है सो समस्तसंघको वैयावृत्त्य है समस्तसंघ समस्तधर्म आचार्यनिके प्रभावतैं प्रवर्तै है । बहुरि जिनेन्द्रव्रतशीलके धारकनिका समीपकूं प्राप्त होय परमागमका अध्ययन पठन करिये सो उपाध्याय है। महान अनशनादितपमैं प्रवर्तन करै ते तपस्वी हैं । श्रुतज्ञानके शिक्षणमैं तथा व्रतशीलभावनामैं निरंतर तत्पर होय ते शैक्ष्य हैं । रोगादिककरि क्लेशित जिनका शरीर होय ते ग्लान हैं । वृद्ध मुनिनिकी संगति सो गण है । आपको दीक्षा देनेवाला आचार्यनिका शिष्य होय सो कुल कहिये है । च्यारप्रकारके मुनीश्वरनिका समुदाय सो संघ है । बहुतकालका दीक्षित होय सो साधु है । लोकमैं पंडितपणाकरि मान्य होय तथा वक्तृत्वगुणकरि मान्य होय महा कुलीनपनाकरि लोकनिमैं मान्य होय सो मनोज्ञ है जातैं प्रवचनका धर्मका गौरवपणा प्रगट होय है ऐसैं दशप्रकारके मुनीनिकै कदाचित शरीरमैं व्याधि प्रगट होय जाय तथा परीषह आजाय तथा मिथ्यात्वादिकनिका भावनिमैं उदय होजाय तो प्रासुक-औषधि भोजन पान वस्तिका संस्तरणादिकरि धर्मोपदेशकरि श्रद्धानकी दृढ़ता करावनेकरि पुस्तक-पिच्छिकाकमंडलादिधर्मोपकरणनिका दानकरि इलाज करना धर्ममैं दृढ़ता करावना संतोष धैर्यादि धारण करावना वीतरागताका बधावना सो वैयावृत्त्य है बाह्य औषधभोजनपानादिकद्रव्यका असंभव होतैं अपना कायकरि कफ नाशिकामल मूत्र पुरीषादिक दूर करना रात्रि जागरण करना सो वैयावृत्त्य तप परमनिर्जराका कारण है तिनमैं केतेक उपकार तो मुनीश्वरनिका मुनीश्वर ही करैं हैं उठावना बैठावना शयन करावना कलोटलिवावना हस्तपादादिकनिका पसारना समेटना उपदेश देना कफमलादि

दूर करना धैर्य धारण करावना मुनीश्वरानिका मुनीश्वर ही करैं हैं अर केतेक प्रासुकऔषधि आहार-पान उपकरणादिकनिकरि गृहस्थ धर्मात्माश्रावकतैं ही बनै है गृहस्थ है सो साधुनिका वैयावृत्य करै अर आर्जिकाका वैयावृत्त्य श्राविका हू करै जातैं गृहस्थ है सो गृहस्थधर्मात्माका वैयावृत्य करै तथा करुणाबुद्धिकरि दुःखित रोगी वेवारिस बाल वृद्ध पराधीन वंदिगृहमैं पड़ेनिका करुणाबुद्धितैं उपकार करै तथा माता पिता विद्यागुरु स्वामी मित्रादिकनिका उपकार स्मरणकरि कृतघ्नताछांड़ि सेवासनमानदान-प्रशंसादिकरी आदर सन्मानादिकरि सुख उत्पन्न करै दुःख होय ताकूं दूर करै अपनी शक्तिप्रमाण दानसन्मानकरि वैयावृत्त्य करै ताकै वैयावृत्त्यतप महानिर्जरा करै है। वैयावृत्त्यतैं ग्लानिको अभाव होय है प्रवचनमैं वात्सल्यता होय है आचार्यादिक अनेक वात्सल्यके स्थान हैं तिनमैं कोऊको भी वैयावृत्त्य बनिजाय ताहीकरि समस्त कल्याणकूं प्राप्त होजाय हैं।

अब स्वाध्याय नामा तपकूं वर्णन करैं हैं—स्वाध्याय पंच प्रकार है वाचना, पूछना, अनुप्रेक्षा, आम्नाय, धर्मोपदेश ऐसे पंच प्रकार स्वाध्याय है। निर्दोषग्रंथ कहिए पाठ तथा आगमका अर्थ तथा पाठ अर अर्थ दोऊ इनकूं पात्र मनुष्यनै पढ़ावना जनावना समझावना सो वाचनास्वाध्याय है जातैं परमागमको शब्द पढ़ावनेसमान अर्थसमझावनेसमान कोऊ अपना परका उपकार है नाहीं तथा परमागमको पढ़ाय योग्याशिष्यकूं प्रवीण करना है सो धर्मका स्थंभ खड़ा करना है जातैं जिनधर्म तो शास्त्रज्ञानतैं ही है प्रतिमा अर मंदिर तो मुखतैं बोलैं नाहीं साक्षातबोलता देवसमान हितमैं प्रेरणा करनेवाला अर अहिततैं रक्षा करनेवाला भगवान सर्वज्ञका परमागम ही है तातैं शास्त्रपढ़ावनेमैं पढ़नेमैं परम उद्यमी रहना। बहुरि अपनासंशयका नाशकेअर्थ बहुज्ञानीसूं विनयपूर्वक प्रश्न करना जातैं प्रश्नकरि संशय दूर कियेबिना ज्ञान सम्यक् प्रकट नाहीं होय यातैं पूछना है अथवा आप जो आगमका शब्द अर्थ समझ राख्या होय सो बहुज्ञानीनिके मुखतैं श्रवण करले तो बहुत ज्ञान दृढ़ होजाय ज्ञानकी शिथिलता दूर होजाय तातैं बहुज्ञानीनितैं प्रश्न करना अथवा आप संक्षेप समझ्या होय ताकूं विस्तारतैं

जाननेकेअर्थ बड़ा विनयतैं सम्यग्ज्ञानीनितैं प्रश्न करना अपनी उच्चता तथा अपना पंडितपना दिखावने-केअर्थ तथा परका तिरस्कार करनेकेअर्थ तथा परका हास्यकेअर्थ सम्यग्दृष्टी प्रश्न नाहीं करै है शब्दमैं हू प्रश्न करै अर्थमैं हू प्रश्न करै शब्दअर्थ दोऊनिकूं हू प्रश्नादिककरि निर्णय करना सो पृच्छनानामा स्वाध्याय है। बहुरि परमागमका जाण्या हुआ शब्दअर्थकूं अपना हृदयमैं धारणकरि बारंवार मनकरि अभ्यासकरना चिंतवनकरना तथा आगममैं आज मैं पठनश्रवण किया तिसमैं ये दोष मेरे त्यागनेयोग्य हैं ये गुण मेरे ग्रहणकरनेयोग्य हैं ये हमारे स्वरूपतैं अन्य द्रव्यलोकक्षेत्रादिक जाननेयोग्य ही हैं ऐसे मनकरि बारंवार चिंतवन करना सो अनुप्रेक्षा नाम स्वाध्याय है। यातैं अशुभभावनिका नाश होय है शुभधर्मध्यान प्रकट होय है। बहुरि अतिशीघ्रतातैं पढ़ना वा अतिविलंबतैं पढ़ना इत्यादिक वचनकै दोष टालि धैर्यसहित एकएकअक्षरकी स्पष्टतासहित अर्थका प्रकाशसहित पढ़ना पाठकरना मिष्टस्वरतैं उच्चारण करना तथा सिद्धांतकी परिपाटीतैं आगमतैं विरोधरहित लोकविरुद्धकारहित पढ़ना सो आम्नाय नामा स्वाध्याय है। बहुरि लौकिकप्रयोजनलाभपूजाअभिमानमदादिकनिकूं छांडि उन्मार्गके दूर करनेकूं सन्मार्ग दिखावनेकूं संशय निराकरणकरनेकूं अपूर्वपदार्थ प्रगटकरनेकूं धर्मका उद्योतहोनेकूं मोहअंधकार दूर करनेकूं संसारदेहभोगनेतैं लोकनिकूं विरक्त करनेकूं विषयानुराग तथा कषाय घटावनेकूं अज्ञान निराकरण करनेकूं भेदविज्ञान प्रगटकरनेकूं पापक्रियातैं भयभीत होनेकूं भव्यनिकूं धर्मकथनीका उपदेश करना सो धर्मोपदेश नाम स्वाध्याय है। जहां अनेक-भव्यजीवनिको धर्मका उपदेश देना होय है तहां मनवचनकाय समस्त धर्मके स्वरूपमैं लीन होजाय है अर ऐसा अभिप्राय उपदेशदाताका होय है जो कोऊरीति अनेकांतधर्मका यथावतस्वरूप श्रोता-निका हृदयमैं प्रवेश करै कोऊप्रकार संसारदेहभोगनिमैं राग घटै कोऊप्रकार भेद विज्ञान प्रगट होय ऐसा अभिप्राय जाका होय सो सत्यार्थधर्मका उपदेश करै है जाका आत्मा धर्ममैं रचि जायगा सो ही अन्यश्रोतानिकूं धर्ममैं रचावैगा। धर्मोपदेश देनेवालाके आत्मानुशासनमैं ऐसे गुण कहे हैं जाकी

बुद्धि त्रिकालविषया होय जो पाछली अनेकरीत परमागमतैं नाहीं जानै सो यथावत वस्तुका स्वरूप नाहीं कहि सकै है जाकूं वर्तमानवस्तुका स्वरूपको ज्ञान नाहीं होय सो विरुद्धकथनी करदे जाकूं आगानै परिपाकका ज्ञान नाहीं होय सो अयोग्य कह दे यातैं वक्ता होय सो बुद्धिका बलतैं आगमका बलतैं लौकिकरीति प्रत्यक्षदेखनेतैं त्रिकालकी रीति जानै। बहुरि समस्तशास्त्र जे च्यारअनुयोगके शास्त्र तिनका रहस्यका जाननेवाला होय जो च्यारअनुयोगनिका रहस्य नाहीं जानै अर वक्तापना करै तो श्रोतानिकूं यथावत् नाहीं समझाय सकै जातैं प्रमाणका कथन आजाय नयनिका तथा निक्षेपनिका तथा गुणस्थान मार्गणास्थानका तथा तीनलोकका तथा कर्मप्रकृतिनिका तथा आचारका कथन आजाय तो जाण्याविना यथावत् निःशंक संशयरहित नाहीं व्याख्यान करसकै। यातैं समस्तशास्त्रनिका रहस्यका ज्ञाता होय बहुरि लोकरीतका ज्ञाता होय जो लौकिकरचनामैं मूढ़ होय सो लोकविरुद्ध व्याख्यान करै बहुरि जाकै भोजन वस्त्र स्थान धन अभिमानकी आशा वांछा होय सो वक्ता यथार्थ व्याख्यान नाहीं करै लोकनिकूं रंजायमान किया चाहै लोभीकै सत्यार्थ वक्तापनो नाहीं होय है बहुरि जाकी बुद्धि तत्काल उत्तर देनेवाली होय जो वक्ताकूं तत्काल उत्तर नाहीं उपजे तो सभामैं क्षोभ होजाय वक्ताकी दृढ़प्रतीति सभानिवासीनिके नाहीं आवै बहुरि वक्ता होय सो मंदकषायी होय मंदकषायीविना लोभीका कपटीका क्रोधीका अभिमानीका दिया उपदेश कोऊ अंगीकार नाहीं करै है बहुरि वक्ता ऐसा होय जो श्रोतानिका प्रश्नहुआं पहले ही उत्तरकूं दिखावनेवाला होय जो थे या कहो तो या है अर या कहो तो या है। इसप्रकार व्याख्यान ही ऐसा करै जो श्रोतानिकूं प्रश्न नाहीं उपजिसकै अगाऊ ही प्रश्नका मार्ग मुद्रित करता व्याख्यान करै जो बहुत प्रश्न होजाय तो सभामैं क्षोभ मचिजाय बहुरि प्रबलप्रश्न हू कोऊ आय करै तो सहनशील होय क्रोधित नाहीं होय जो प्रश्न श्रवणकरि क्रोधित होजाय तो कोऊ प्रश्न नाहीं करसकै बहुरि जामैं प्रभुत्वगुण होय जातैं जाकूं आपतैं ऊंचा जानै ताहीकी शिक्षा ग्रहण करै दीनकी नीचकी शिक्षा कौन ग्रहण करै यातैं जामैं जगतके

मान्य प्रभुत्वगुण होय बहुरि परके मनका हरनेवाला होय जो समस्तकै प्रिय होय जो मनकूं अप्रिय होय ताकि शिक्षा ग्रहण नाहीं होय है। बहुरि जाकूं आप आछीरीति आगमतैं वा गुरुपरिपाटीतैं नीका समझलिया होय ताकूं ही व्याख्यान करै जाकूं आप ही पूरा नाहीं समझ्या होय सो अन्यकूं कैसैं समझावैगा जो आप ही अंधकाररूप होय सो पदार्थनिकूं कैसे प्रगट करैगा दीपक आप प्रकाशरूप है सो ही घटपटादिकनिकूं प्रकाशै है बहुरि जाकी प्रवृत्ति व्यवहारमैं परमार्थमैं धर्ममैं लेनेमैं देनेमैं वाणिज्यादिक जीविकामैं भोजनवस्त्रादिकनिमैं उज्ज्वल यशसहित होय सो ही वक्ता होय जाकी प्रवृत्ति मलीन होय ताकै वक्तापनो सोहै नाहीं मलीन होजाय सो जगतमैं मान्य नाहीं रहै। बहुरि जाकी अन्यलोकनिकै ज्ञान उपजावनेमैं परणति होय जाकी अन्यकै समझावनेमैं परणति नाहीं होय सो काहेकूं कहै। बहुरि रत्नत्रयमार्गका प्रवर्तावनेमैं जाकै उद्यम होय सो ही धर्मकथाका वक्ता होय इसमैं अन्यलौकिक प्रयोजन है ही नाहीं। बहुरि जाकी बड़ा ज्ञानीजन स्तुति करता होय क्योंकि बड़े बड़े ज्ञानी जाकी प्रशंसा करै ताका वचन जगतकै हृदयस्थानमैं आजाय है। बहुरि उद्धततारहित होय जातैं उद्धत होय सो समस्तकै अप्रिय होय है। बहुरि लोकरीति देश काल श्रोतानिकी मुग्धता दुष्टता प्रवीणता मूढता शक्तता अशक्ततादिक समस्त जानि ऐसा उपदेश करै जो समस्तजन बड़ा आदरतैं ग्रहण करैं लौकिकज्ञाताविना यथायोग्य उपदेश नाहीं होय। बहुरि कोमलतागुण जामैं होय कठोरपरिणामीका कठोरवचन आदरनेयोग्य नाहीं होय सो श्रोता श्रवणकरनेतैं पराङ्मुख होजाय है बहुरि जाकै वक्तापनाकरि धनभोगादिककी वांछा नाहीं होय बहुरि जाकामुखमैं अक्षर स्पष्ट उच्चारण होय स्पष्टअक्षर विना समझमैं आवै नाहीं बहुरि मिष्टअक्षर होय जामैं श्रोता जानै कि कर्णनिकै द्वार करि समस्तअंगनिकूं अमृतकरि सींचदिया बहुरि श्रोताजन जाका स्यामित्व समझै बहुरि सम्यग्दर्शनचारित्र वात्सल्यादि अनेकगुणनिका निधान होय ऐसे वक्तापनाके अनेकगुणनिकरि सहित होय सो धर्मकथाका वक्ता होय सो ऐसे गुणनिका धारक वक्ताको उपदेश कोऊ महाभाग्य पुण्यवानजननिकूं मिलै

है। सम्यग्देशनालब्धिका पावना अनंतकालमैं हू दुर्लभ है वहुरि धर्मोपदेश हू मिलै तो योग्य श्रोतापनाविना धर्मग्रहण नाहीं होय है जैसैं योग्यपात्रविना वस्तु ठहरै नाहीं अयोग्यपात्रमैं धरै तो पात्रका अर वस्तुका दोऊनिका नाश होय है तैसैं योग्यश्रोतापनाविना हू धर्मका उपदेश ठहरै नाहीं याहीतैं श्रोताका लक्षण हू संक्षेपतैं ऐसे जानना प्रथम तो भव्य होय जो उपदेश देते हू सम्यक्श्रद्धानादिक ग्रहण करनेयोग्य नाहीं होय ताकूं उपदेश देना वृथा है वहुरि मेरा कल्याण कहा है मेरा हित कहा है ऐसा जाकै सासता विचार होय जाकै अपना हितकी वांछा नाहीं सो विना प्रयोजन धर्मकथा काहेको श्रवण करै वेतो विषयका लाभ जातैं सधै ताकी वांछा करै हैं। वहुरि दुःखतैं अत्यन्त भयभीत होय जो मेरे अव नरकातिर्यंचादिक पर्यायका दुःख मति होहु ऐसैं जाकै भय नाहीं होय सो पापछोड़िवाका विषयकषायत्यागवाका शास्त्र काहेकूं श्रवण करै तातैं दुःखतैं भयभीत होय वहुरि सुखका इच्छक होय जाकै सुखकी चाह नाहीं होय सो धर्मका श्रवण नाहीं करै अर जाकै कर्णइंद्रिय होय कर्ण विगड़गयेहोय ते काहेतैं श्रवण करैं वहुरि जाकै धर्मकथा श्रवण करनेकी इच्छा होय इच्छाविना परिपूर्ण श्रवण होय नहीं अर इच्छा भी होय अर प्रमाद आलस कुसंगकरि श्रवण नाहीं करै तो इच्छा वृथा है अर जो श्रवण हु करै अर ये गुरु ऐसे कहैं हैं एती सावधानतारूप ग्रहणविना श्रवण वृथा है अर ग्रहण हु होय अर जो धारण नाहीं होय श्रवणकरते ही विस्मरण होजाय तो ग्रहणकरना वृथा है वहुरि जो विचारपूर्वक प्रश्नउत्तरकरि निर्णय नाहीं करै तो श्रवणमैं संशयादिक ही रहै तदि कैसैं आत्महितके सन्मुख होय। वहुरि श्रोता हैं सो ऐसा धर्मकूं श्रवण करै जो दयामय होय अर सुखका करनेवाला होय अर युक्तितैं प्रमाणनयतैं जामैं वाधा नाहीं आवै अर भगवानसर्वज्ञवीतरागके आगमतैं प्रवर्त्या होय ऐसा धर्मकूं श्रवणकरि वारंवार विचारकरि ग्रहण करै जो विचाररहित होय मिथ्यात्वरूप हिंसाका कारण धर्म ग्रहण करले तो दुःख करनेवाला नरकादिकमैं प्राप्त करै अर जामैं युक्तितैं तथा सर्वज्ञवीतरागके आगमतैं वाधा आजाय सो धर्म नाहीं है अधर्म है यातैं श्रवण करनेयोग्य

नाहीं बहुरि हठग्रहहादिकदोषरहित होय हठग्राहीकूं शिक्षा लगै नाहीं इत्यादिक अनेकगुणनिका धारक होय सो श्रोताधर्मका उपदेश श्रवणकरि आत्मकल्याण करै है। अब इहां प्रकरणपाय श्रोतानिकी केतीकजाति दृष्टांतकरि कहै हैं केतेक श्रोता मृत्तिकाका स्वभाव लिये है जैसें मृत्तिका पानी पड़ै जब तो नरम होजाय पाछै कठोर होय तैसें धर्मश्रवणकरतें भावनिमैं भीजजाय पाछैं कठोर होय है। केतेक चालनी जैसें कणछांड़ि तुष ग्रहण करैं तैसें धर्मकथामैं सारगुण तो छांड़दे अर औगुण ग्रहण करै है ते चालनीवत् जानना। बहुरि केतेक भैंसातुल्य श्रोता होय हैं जैसें उज्ज्वलजलका भरया सरोवरमैं भैंसा प्रवेशकरि समस्त सरोवरकूं कर्दममय करै तैसें समस्तसभाके लोकनिका परिणाम मलीन करै है। बहुरि केते हँसतुल्य श्रोता हैं जैसें हंस जलदुग्धकाभेदकरि दुग्ध ग्रहण करै तैसें निःसारछांड़ि आत्महित ग्रहण करै हैं। बहुरि केतेश्रोता सूवातुल्य हैं जिनकूं रामबुलावो तो राम बोलैं अर अन्य सिखावो तो अन्य बोलै जाकूं रामका हू ज्ञान नाहीं अर रहीमका हू ज्ञान नाहीं तैसें पापपुण्यका विचाररहित जो पढ़ावो सो ही ग्रहणकरैं विचाररहित आपनास्वरूप परस्वरूपका ज्ञानरहित सूवापक्षीसमान श्रोता होय हैं। बहुरि केतेक मार्जारसमान श्रोता हैं जैसें मार्जार सूता हू अपना शिकारकी तरफ जाग्रित रहै है तैसें कोऊ श्रोता अपनाविषयकषाय वाणीमैं छलग्रहण करता तिष्ठै है। बहुरि कोऊ बुगला जातिका श्रोता ध्यानीसा बन्या रहै अपना विषयकषायकूं ग्रहण करै है। बहुरि बहुरि कोऊ डांससमान श्रोता होय है वक्ताकूं वारंवार बाधा उपजावै है। बहुरि कोऊ बकराजातका श्रोता जैसें बकराकूं अतर फुलेल सुगंध पान करावतें हू दुर्गंध ही प्रगट करै है तैसें उज्ज्वलधर्म श्रवण करकै हू पापही उगलै है। बहुरि कोऊ जलौकासमान श्रोता है जैसे जोककूं स्तनऊपर लगावै तो हू मलिनरुधिर ही ग्रहण करै। कोऊ फूटाघटसमान श्रोता है धर्मश्रवणकरता हू चित्तमैं लेशमात्र भी धारण नाहीं करै है। कोऊ सर्प्पसमान श्रोता हैं जो दुग्धमिश्रीकूं पान करावतै हू प्रबलजहर बधै है। कोऊ गायसमान उत्तमश्रोता है जो तृणभक्षणकरि दुग्ध दे है। बहुरि कोऊ पाषाणकी

शिलासमान जाकूं बहुत धर्मोपदेशदेते हू हृदयमैं प्रवेश नाहीं करै है। कोऊ कसोटीसमान श्रोता परीक्षाप्रधानी हैं कोऊ ताखड़ीकी डांडी समान घाटबाध जानै हैं। ऐसे श्रोतानिका उत्तम मध्यम अधम अनेकजाति हैं जाका जैसा स्वभाव है तैसा धर्मका उपदेश परिणमैं है ऐसैं धर्मोपदेश नाम स्वाध्यायका प्रकरणमैं वक्ताश्रोताका लक्षण कह्या है। ऐसे पंचप्रकार स्वाध्याय वर्णन करी। स्वाध्याय करनेतैं बुद्धि तो अतिशयवान होय है अभिप्राय उज्ज्वल होय है जिनधर्मकी स्थिति दृढ़ होय है संशयका अभाव होय है परवादीकी शंकाको अभाव होय है परमधर्मानुराग होय है तपकी वृद्धि होय है आचारकी उज्ज्वलता होय है अतीचारको अभाव होय पापक्रियाका परिहार होय कुधर्ममैं रागका अभाव होय है परमेष्ठीमैं अतिशयरूप भक्ति होय सम्यग्दर्शन प्रकट होय है संसारदेहभोगनितैं विरागता होय कषायांकी मंदता होय दयाभावकी वृद्धि होय शुभध्यान होय आर्तरौद्रको अभाव होय जगतके मान्य होय उज्ज्वल यश प्रकट होय दुर्गतिका अभाव होय स्वर्गके उत्तम सुख तथा निर्वाणका अतींद्रियसुखकी प्राप्ति होय इत्यादि अनेकगुणनिका उत्पन्न करनेवाला जानि वीतरागसर्वज्ञका प्रकाश्या आगमका अभ्यास-विना मनुष्यजन्म व्यतीत मति करो। ऐसे स्वाध्यायनामा अंतरंगतपका पांचप्रकार स्वरूप कह्या।

अब कायोत्सर्ग नाम तपका स्वरूप कहिये है—जो बाह्यअभ्यंतर उपाधिको त्याग सो कायोत्सर्ग है बाह्य जो शरीरधनधान्यादिकको त्याग सो बाह्यउपाधित्याग है अर अभ्यंतरमिथ्यात्व क्रोध मान माया लोभ हास्य रति अरति शोक भय जुगुप्सा वेद परिणामनिका अभाव सो अभ्यंतर उपाधित्याग है। बहुरि बाह्यत्यागमैं आहारादिकका हू त्याग है संन्यासका अवसरमैं आयुकी पूर्णता होय तहां यावज्जीव त्याग है सो आगै क्रमतैं सल्लेखनामैं वर्णन करसी। तातैं इहां विशेष नाहीं लिख्या है।

अब ध्यान नामा तप छठा है ताकूं वर्णन करिये है—सो याका ऐसा स्वरूप जानना जो एक-पदार्थकै सन्मुख चिंतवनका रुकना सो ध्यान है सो ध्यान उत्तमसंहननवालेकै अंतर्मुहूर्त रहै है।

एकाग्रचिंतवनका रुकजाना अंतर्मुहूर्ततैं अधिक काल उत्तमसंहननवालेकै भी नाहीं रहै है। वज्रवृषभनाराचसंहनन, वज्रनाराचसंहनन, नाराचसंहनन ये तीन उत्तम संहनन हैं। उत्तमसंहननवालेकै ही मुख्यपनाकरि चित्तका रुकना होय है जो संसारमैं गमन भोजन शयन अध्ययनादिक अनेक क्रिया हैं तिनमैं नियमरहित वर्तै है तहां ध्यान नाहीं जानना जहां एककै सन्मुख होय चित्तका रुकना सो ध्यान है अर जहां एकाग्रता नाहीं तहां भावना है इहां प्रशस्तसंकल्पतैं तो शुभध्यान होय है अर अप्रशस्तकल्पनातैं अशुभध्यान है तिनमैं शुभध्यान दोयप्रकार है एकधर्म ध्यान एकशुक्लध्यान अर अशुभध्यान हू दोयप्रकार है एक आर्तध्यान दूजा रौद्रध्यान ऐसैं ध्यान च्यारप्रकार है। तिनमैं अशुभध्यान तो विनायत्नतैं ही जीवनिकै होय है जातैं अशुभध्यानका संस्कार तो जीवनिकै अनादिकालतैं चला आवै है कोऊ शास्त्र भी अशुभध्यान सिखावनेका नाहीं है विनाशिक्षा ही जीवनिकै होय है अशुभध्यानका अभाव भये शुभध्यान होय है तातैं अशुभध्यानका अभावकै अर्थ प्रथम च्यारप्रकारका आर्तध्यानकूं प्ररूपण करिये है—एक अनिष्टसंयोगज, दूजा इष्टवियोगज, रोगजनित, निदानजनित ए च्यारप्रकार आर्तध्यान है ऋत जो दुःख तामैं उपजै सो आर्तध्यान है। जो अनिष्टवस्तुका संयोगतैं महादुःख उपजै तिसअवसरमैं जो चिंतवन सो अनिष्टसंयोगज आर्तध्यान होय है। जो अपनाशरीरका नाशकरनेवाले तथा धनका नाश करनेवाले तथा आजीविकाकूं विगाड़नेवाले तथा अपने स्वजनमित्रादिकके नाशकरनेवाले ऐसे दुष्ट वैरी तथा दुष्टराजा तथा राजाका दुष्टअधिकारी तथा अपना दुष्टपड़ोसीनिका संयोग मिलना तथा रोगीशरीर घोरदरिद्र नीचजाति नीचकुलमैं जन्म निर्बलता असमर्थता अंगहीणता इत्यादिक पावना तथा सिंह व्याघ्र सर्प स्वान मूसा तथा अग्नि जलादिक तथा दुष्टराक्षसादिकनिका संयोग मिलना तथा दुष्टबांधव तथा दुष्टकलत्र पुत्रादिकनिका संयोग वड़ाअनिष्ट है इनका संयोगका दुःखमैं जो संक्लेशरूप परिणाम होय इनका वियोगकेअर्थ चिंतवन होना सो अनिष्टसंयोगज नाम आर्तध्यान है जातैं अतिशीत अतिउष्णता अतिवर्षा डांस मांछर कीडी

# श्रीरत्नकरंडश्रावकाचार समाप्त ।

मुद्रक—मूलचन्द किसनदास कापड़िया, " जैनविजय " प्रिन्टिंग प्रेस, खपाटियाचकला, लक्ष्मीनारायणकी वाड़ी–सूरत ।
प्रकाशक–उदयलाल विहारीलाल जैन, मालिक, हिन्दीजैनसाहित्यप्रसारककार्यालय, चंदावाड़ी, गिरगांव–बम्बई ।